शौनकीया

अथर्ववेद संहिता

(मूल पाठ मात्र)

शौनकीया

अथर्ववेद संहिता

(मूल पाठ मात्र)

सम्पादका:
शास्त्रार्थ महारथी श्री पं॰ माधवाचार्य शास्त्री
श्री श्रीकण्ठ शास्त्री एम॰ ए॰ व्याकरणाचार्यः
श्री डा॰ वीराचार्य शास्त्री एम॰ ए॰ पी॰ एच॰ डी॰ साहित्याचार्यः
विद्या बारिधिः श्री प्रेमाचार्य शास्त्री एम॰ ए॰

डा॰ विनोदवाला शर्मा पी॰ एच॰ डी॰
दीपचन्द शर्मा

With Compliments
From
Maharshi Sandipani Rashtriya
Veda Vidya Pratishthan, UJJAIN

प्रकाशक:

देव वाणी प्रकाशन

२३१-ए॰ जी॰ सी॰ आर॰ एनक्लेव, नई दिल्ली-११००९२

ATHARVA VEDA SAMHITA
(Text only)

Price-Rs 100 00
Out of India-U S s-14/-

Published By :
Vinod Bala Sharma
Deep Chand Sharma
Dev Vani Prakashan
A.G.C.R. Enclave
New DELHI-110092

Printed at :
Dev Vani Printing Press,
103-A, Kamla Nagar,
DELHI-110007.

आमुखम्

तद्दिव्यमव्ययं धाम सारस्वतमुपास्महे ।
यत्प्रकाशात्प्रलीयन्ते मोहान्धतमसश्छटाः ॥

वेद विश्ववाङ्मय की अमूल्य निधि । उससे प्राचीन, उससे पवित्र और उससे अधिक ज्ञान-विज्ञान एवं आध्यात्मिक रहस्यों से पूर्ण अन्य कोई ग्रन्थ आज संसार के पुस्तकालयों में ढूंढे से भी नहीं मिल सकता । वह ब्रह्म का निःश्वास[1] और महान् देव का सर्वांग सुन्दर अमर काव्य[2] ही नहीं किंतु इससे भी अधिक प्रत्यक्ष शब्द ब्रह्म है ।

वेद सृष्टि के कण-कण में भासमान विराट् सौन्दर्य के द्रष्टा क्रान्तदर्शी कवियों की वह दिव्यानुभूति है, जिसमें उन्होंने प्रकृति पुरुष की रहस्यमयी क्रीड़ाओं का अन्तश्चक्षुओं से साक्षात्कार किया है । इसलिए वेद सनातन हैं पूर्ण हैं, और निखिल ज्ञान विज्ञान के मधुमय उत्स हैं । भारतीय संस्कृति के तो वेद प्राण ही हैं । हमारा धर्म, दर्शन, अध्यात्म, कला, विज्ञान आचार-विचार, नीति रीति सभी कुछ वेदानुप्राणित है । यही क्यों, जीवन एवं साहित्य की कोई विधा—जिसे रूप और शिल्प की दृष्टि से आदर्श तथा नवीनातिनवीन कहकर पुकारते हैं—उसके बीज वैदिक वाङ्मय में न मिलें ऐसा हो नहीं सकता । संक्षेप में भारत के समस्त साहित्य, जन जीवन एवं सभ्यता की आधार भूमि यदि वेदों को ही कहा जाए तो कोई अत्युक्ति न होगी ।

वेदों की रचना कब हुई, किसने की, क्यों की- आदि प्रश्नों का उत्तर होगा कि मानव संविधान के आदिम निर्माता मनु महाराज के अनुसार वेद वाणी अनादि है, अनन्त है ।

अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयंभुवा—अर्थात्—वेद वाणी अनादि अनन्त है, सनातन है और ब्रह्माजी द्वारा उसे लोक कल्याण के लिए प्रकट किया गया है । मनु जी का यह मत उनकी अपनी सम्मति तो है ही, किन्तु अपने स्वरूप और उद्भव की परिचायक अन्तःसाक्षी रूप

---

[1] अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद् यद् ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरसः । (बृह० २।४।११)

[2] देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति (अथर्व १०।८।३२) ।

शतशः श्रुतियों पर आधारित भी है। इनमें से दिग्दर्शनार्थ कतिपय प्रमाण उद्धृत करना अप्रासंगिक न होगा, यथा—

(क) **तस्माद् यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे छन्दाँसि जज्ञिरे**
तस्माद्यजुस्तस्मादजायत। (ऋग् १०।९०।९)

(ख) **यज्ञेन वाचः पदवीयमायन् तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम्।**
(ऋग् १०।७०।३)

(ग) **यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै। तं ह**
देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये। (श्वेत० ६।१८)

(घ) **युगान्तेऽन्तर्हितान् वेदान् सेतिहासान् महर्षयः।**
लेभिरे तपसा पूर्वमनुज्ञाताः स्वयम्भुवा॥ (महा० वनपर्व)

अर्थात् (क) उस यज्ञपुरुष से ऋग्, साम अथर्व उत्पन्न हुए और उसी से यजुः उत्पन्न हुआ (ख) तपो यज्ञ के द्वारा वे वेदवाणी को ग्रहण करने के योग्य हुए और ऋषियों में स्थित हुई उस वाणी को उन्होंने ढूंढ़ लिया। (ग) जो पहले ब्रह्मा को उत्पन्न करता है और जो उसके लिये वेदों को भेजता है, मैं मुक्तिकामी उस देव की शरण ग्रहण करता हूं जो आत्मज्योति पुरुष है। (घ) युग के अन्त में इतिहासों समेत अन्तर्हित हुए वेदों को महर्षियों ने ब्रह्माजी की अनुज्ञा से अपने तपोबल द्वारा पुनः प्राप्त किया।

प्रसिद्ध निघण्टु-निरुक्तकार यास्कमुनि ने इसी बात को **साक्षात्कृतधर्माणो ऋषयो बभूवुस्ते अवरेभ्यः असाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मंत्रान् संप्रादुः'** (नि० १।६) इन शब्दों में कहकर ऋषियों को वेद ज्ञान का साक्षात्कार करने वाला प्रतिपादित किया है।

कुछ भी हो, वेद ईश्वरानुगृहीत प्रतिभात-चेता एवं शिव संकल्प मनीषी ऋषियों की उदात्त एवं मंगलमल दिव्य अनुभूतियों को उन्हीं की तपःपूत वैखरी वाणी के माध्यम से वहन करने वाली विभिन्न ज्ञानधाराओं का ऐसा पवित्र संगम है, कि जिसमें अवगाहन कर प्राणीमात्र अपनी ज्ञान-पिपासा को तृप्त करते हुए ऐहिकामुष्मिक कल्याण भाजन बन सकता है और परम आध्यात्मिक शान्ति लाभ कर सकता है।

वेद कितने हैं ?

बात यह है कि यों तो **'अनन्ता वै वेदाः'** (तैत्ति० ३।१०।११३) के अनुसार वेद का कोई अन्त नहीं ईश्वरीय ज्ञान की इयत्ता भला हो भी

कसे सकती है, परन्तु फिर भी चार वेद तो प्रसिद्ध हैं ही। इसीलिये संस्कृत साहित्य में वेद शब्द चार का पर्याय तक बन गया है। महाभाष्यकार ने **'चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्याः'** (महाभाष्य १) आदि शब्दों में वेदों का चतुष्टयत्व प्रतिपादन किया है। फिर जिन ऋग्वेद व ब्राह्मणादि ग्रन्थों के प्रमाण देकर कुछ विद्वान् वेदत्रयी का पक्ष उपन्यस्त करते हैं उन्हीं में वेदों का चतुष्टयत्व भी तो मुहुर्मुहु वर्णित है, यथा—

(क) **ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु।**
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां विममीत उ त्वः॥
(निरुक्त १।२)

(ख) **अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद् यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरसः।** (बृ० उ० २।४।१०)

(ग) **तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः।** (मुण्डकः १।१।५)

(घ) **चत्वारो वा इमे वेदा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो ब्रह्मवेदः।**
(गो० ब्रा० १।२।१६)

(ङ) **ऋचः सामानि जज्ञिरे छन्दाꣳसि जज्ञिरे। तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।** (यजु० ३१।७)

इन सब प्रमाणों में नाम निर्देश पूर्वक चारों वेदों की स्पष्ट चर्चा की गई है। प्रथम प्रमाण में किस-किस वेद से यज्ञ में किस कार्य का सम्पादन होता है यह भी स्पष्टतया बतलाया गया है। यास्क ने इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए लिखा है—

'इति ऋत्विक्कर्मणां विनियोगमाचष्टे' (नि० १।३)

अर्थात् इस मन्त्र में क्रमशः ऋग्वेदी होता, सामवेदी उद्गाता, अथर्ववेदी ब्रह्मा और यजुर्वेदी अध्वर्यु के कर्मों का विनियोग कहा गया है। इससे सिद्ध होता है कि ऋग्० यजु० सामवेद की भांति अथर्व भी वेद है और यह भी उतना ही प्राचीन है जितने कि ये। बल्कि यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि ब्रह्मवेद नाम्ना प्रसिद्ध यह वेद यज्ञादि के मुख्य संचालक 'ब्रह्मा' नामक ऋत्विज का वेद होने के कारण अन्य वेदों की अपेक्षा विशेष गौरव रखता है। **'ब्रह्मा सर्वविद्यः सर्वं वेदितुमर्हति। ब्रह्मा परिवृढः श्रुततः'** (निरुक्त १।३।३)—आदि शब्दों द्वारा यास्क ने इस तथ्य का प्रतिपादन किया है।

अथर्ववेद का महत्त्व

अथर्ववेद साम्रूप होने के कारण 'सिद्ध मन्त्र' कहा जाता है, अर्थात् इस के मन्त्र अभीष्ट सिद्धि प्रदान करने वाले हैं, यथा—

न तिथिर्न च नक्षत्रं, न ग्रहो न च चन्द्रमा ।
अथर्वमंत्रसंप्राप्त्या सर्वसिद्धिर्भविष्यति ।। (अ० परि० २।५।५)

स्कन्दपुराण कमलालय खण्ड में आथर्वण मन्त्रों के जपमात्र से ही अभिमत फल प्राप्ति कही गई है, यथा—

यस्तत्राथर्वणान् मन्त्रान्, जपेच्छ्रद्धासमन्वितः ।
तेषामर्थोद्भवं कृत्स्नं फल प्राप्नोति स ध्रुवम् ।।

अन्य वेदों में जिन यज्ञ यागादि अनुष्ठानों का प्रतिपादन किया गया है वे प्रायः परलोक में फल देने वाले हैं। उनसे प्राप्त होने वाला स्वर्ग देह त्याग के अनन्तर ही प्राप्त होता है, परन्तु अथर्ववेद इस लोक में आवश्यक शान्ति पुष्टि आदि अलभ्य सिद्धियों को प्रदान करके मानवजीवन को अधिक सुखमय बनाने में योग देता है—यह इसकी विशेषता है। इसी प्रकार राजा एवं राष्ट्र की सुख-समृद्धि के उपयुक्त कंटकोद्धरणादि अपरिमित फल देने वाले तुलापुरुषादि महादान, अथर्ववेद में ही प्रतिपादित हुए हैं। राजाओं का पौरोहित्य तो अथर्वविद् ही करते रहे हैं, क्योंकि राज्याभिषेकादि कर्मों का विस्तृत वर्णन इसी वेद में उपलब्ध होता है। एतद् विषयक अथर्व के महत्त्व को सभी मुक्त कण्ठ से स्वीकार करते हैं।

हमें हर्ष है कि 'देववाणी प्रकाशन' सम्पूर्ण वेदों के प्रामाणिक मूल-संस्करण प्रकाशित करने की योजना का सूत्रपात अथर्ववेद से प्रारंभ कर रहा है। वेद में स्वरों का बहुत महत्त्व है अतः यह संस्करण स्वरांकन सहित प्रकाशित किया जा रहा है। मूल पाठ उपलब्ध अनेक संस्करणों से शोधकर प्रस्तुत किया गया है, यह और भी प्रसन्नता का विषय है। आशा है कि यह संस्था दुर्लभ वैदिक-साहित्य को सुलभ और सुप्रचारित बनाकर वैदिक संस्कृति के प्रचार-प्रसार में सफल होगी। वेद प्रेमीजनों को इन ग्रन्थों को अपनाकर अपना अधिकाधिक सहयोग देना चाहिये। धन्यवाद

—श्रीकण्ठ शास्त्री एम० ए० व्याकरणाचार्य

* ॐ *

श्री गणेशाय नमः

(शौनकीया)

अथर्ववेद-संहिता

अथ प्रथमं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वाचस्पतिः ॥ छन्दः—१—३ अनुष्टुप्, ४ चतुष्पदा विराडुरोबृहती ॥ मंत्र ४ ।

ॐ ये त्रि॑ष॒प्ताः प॑रि॒यन्ति॒ विश्वा॑ रू॒पाणि॒ बिभ्र॑तः ।
वा॒चस्पति॒र्बला॒ तेषां॑ त॒न्वो॑ अ॒द्य द॑धातु मे ॥१॥

पुन॒रेहि॑ वाचस्पते दे॒वेन॒ मन॑सा स॒ह ।
वसो॑ष्पते॒ नि र॑मय॒ मय्ये॒वास्तु॒ मयि॑ श्रु॒तम् ॥२॥

इ॒हैवाभि वि त॑नू॒भे आर्त्नी॑ इव॒ ज्यया॑। वा॒चस्पति॒र्नि य॑च्छतु॒ मय्ये॒वास्तु॒ मयि॑ श्रु॒तम् ॥३॥

उप॑हूतो वा॒चस्पति॒रुपा॒स्मान् वा॒चस्पति॑र्ह्वयताम् । सं श्रु॒तेन॑ गमेमहि॒ मा श्रु॒तेन॒ वि रा॑धिषि ॥४॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता - पर्जन्यः ॥ छन्दः - १, २, ४ अनुष्टुप्, ३ त्रिपदा विराण्नाम गायत्री ॥ मंत्र ४ ।

वि॒द्मा श॒रस्य॑ पि॒तरं॑ प॒र्जन्यं॒ भूरि॑धायसम् । वि॒द्मो ष्व॑स्य मा॒तरं॑ पृथि॒वीं भूरि॑वर्पसम् ॥१॥

ज्या[के॒ परि॑ णो न॒माश्मा॑नं त॒न्वं॑] कृधि । वी॒डुर्व॑री॒योऽरा॑ती॒रप॒ द्वेषां॒स्या कृ॑धि ॥२॥

वृ॒क्षं यद्गावः॑ परि॒षस्व॑जा॒ना अ॑नुस्फु॒रं श॒रमर्च॑न्त्यृ॒भुम् । शरु॑म॒स्मद्या॑वय दि॒द्युमि॑न्द्र ॥३॥

यथ॒ द्यां च॑ पृथि॒वीं चा॒न्तस्तिष्ठ॑ति॒ तेज॑नम् । ए॒वा रोगं॑ चास्रा॒वं चा॒न्तस्ति॑ष्ठतु॒ मुञ्ज॒ इत् ॥४॥ [१।२]

सूत ३

ऋषिः—अथर्वा । देवता—पर्जन्यादयो मन्त्रोक्ताः । छन्दः—१—५ पथ्या पंक्तिः, ६—९ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ९ ।

वि॒द्मा श॒रस्य॑ पि॒तरं॑ प॒र्जन्यं॑ श॒तवृ॑ष्ण्यम् । तेना॑ ते त॒न्वे॒३ शं क॑रं पृथि॒व्यां ते॑ नि॒षेच॑नं ब॒हिष्टे॑ अस्तु॒ बालिति॑ ॥१॥

वि॒द्मा श॒रस्य॑ पि॒तरं॑ मि॒त्रं श॒तवृ॑ष्ण्यम् । तेना॑ ते त॒न्वे॒३ शं क॑रं पृथि॒व्यां ते॑ नि॒षेच॑नं ब॒हिष्टे॑ अस्तु॒ बालिति॑ ॥२॥

वि॒द्मा श॒रस्य॑ पि॒तरं॒ वरु॑णं श॒तवृ॑ष्ण्यम् । तेना॑ ते त॒न्वे॒३॒ शं क॑रं
पृथि॒व्यां॑ ते नि॒षेच॑नं ब॒हिष्टे॑ अस्तु॒ बालिति॑ ॥३॥
वि॒द्मा श॒रस्य॑ पि॒तरं॑ च॒न्द्रं श॒तवृ॑ष्ण्यम् । तेना॑ ते त॒न्वे॒३॒ शं क॑रं
पृथि॒व्यां॑ ते नि॒षेच॑नं ब॒हिष्टे॑ अस्तु॒ बालिति॑ ॥४॥
वि॒द्मा श॒रस्य॑ पि॒तरं॒ सूर्यं॑ श॒तवृ॑ष्ण्यम् । तेना॑ ते त॒न्वे॒३॒ शं क॑रं
पृथि॒व्यां॑ ते नि॒षेच॑नं ब॒हिष्टे॑ अस्तु॒ बालिति॑ ॥५॥
यदा॒न्त्रेषु॑ गवी॒न्योर्यद्व॒स्तावधि॒ संश्रि॑तम् । ए॒वा ते॒ मूत्रं॑ मुच्यतां
ब॒हिर्बालिति॑ सर्व॒कम् ॥६॥
प्र ते॑ भिनद्मि॒ मेह॑नं॒ वर्त्रं॑ वेश॒न्त्या॑इव । ए॒वा ते॒ मूत्रं॑ मुच्यतां
ब॒हिर्बालिति॑ सर्व॒कम् ॥७॥
विषि॑तं ते वस्तिबि॒लं स॑मु॒द्रस्यो॑द॒धेरि॑व । ए॒वा ते॒ मूत्रं॑ मुच्यतां
ब॒हिर्बालिति॑ सर्व॒कम् ॥८॥
यथे॑षु॒का परा॒पत॑दव॑सृ॒ष्टाधि॒ धन्व॑नः । ए॒वा ते॒ मूत्रं॑ मुच्यतां
ब॒हिर्बालिति॑ सर्व॒कम् ॥९॥ [१।३]

सूक्त ४

ऋषिः—सिन्धुद्वीपः कृतिर्वा ॥ देवता—आपः । छन्दः १–३ गायत्री, ४ पुरस्ताद् बृहती ॥ मंत्र ४ ।

अ॒म्बयो॑ य॒न्त्यध्व॑भिर्जा॒मयो॑ अध्वरीय॒ताम् । पृ॒ञ्च॒तीर्मधु॑ना॒ पयः॑ ॥१॥
अ॒मूर्या उप॒ सूर्ये॒ याभि॑र्वा॒ सूर्यः॑ स॒ह । ता नो॑ हिन्वन्त्वध्व॒रम् ॥२॥
अ॒पो दे॒वीरुप॑ ह्वये॒ यत्र॒ गाव॑ः पिब॑न्ति नः । सिन्धु॑भ्य॒ः कर्त्वं॑
ह॒विः ॥३॥

अ॒प्स्व१॒॑न्तर॒मृत॑म॒प्सु भे॑ष॒जम् । अ॒पामु॒त प्रश॑स्तिभि॒रश्वा॒ भव॑थ वा॒जिनो॒
गावो॑ भवथ वा॒जिनीः॑ ॥४॥ [१।४]

सूक्त ५

ऋषिः— सिन्धुद्वीपः कृतिर्वा ॥ देवता—आपः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मंत्र ४ ।

आपो॒ हि ष्ठा म॑यो॒भुव॒स्ता न॑ ऊ॒र्जे द॑धातन । म॒हे रणा॑य॒
चक्ष॑से ॥१॥

यो वः॑ शि॒वत॑मो॒ रस॒स्तस्य॑ भाजयते॒ह नः॑ । उ॒श॒तीरि॑व मा॒तरः॑ ॥२॥

तस्मा॒ अरँ॑ गमाम वो॒ यस्य॒ क्षया॑य॒ जिन्व॑थ । आपो॑ ज॒नय॑था
च नः ॥३॥

ईशा॑ना॒ वार्या॑णां॒ क्षय॑न्तीश्चर्षणी॒नाम् । अ॒पो या॑चामि भेष॒जम् ॥४॥

[१।५]

सूक्त ६

ऋषिः अथर्वा कृतिर्वा ॥ देवता—आपः ॥ छन्दः—१—३ गायत्री ४ पथ्या
पङ्क्तिः ॥ मंत्र ४ ।

शं नो॑ दे॒वीर॒भिष्ट॑य॒ आपो॑ भवन्तु पी॒तये॑ । शं योर॒भि
स्र॑वन्तु नः ॥१॥

अ॒प्सु मे॒ सोमो॑ अब्रवीद॒न्तर्विश्वा॑नि भेष॒जा । अ॒ग्निं च॑ वि॒श्वशं॑भुवम् ॥२॥

आपः॑ पृणी॒त भेष॒जं वरू॑थं त॒न्वे॒३॒॑ मम॑ । ज्योक् च॒ सूर्यँ॑ दृ॒शे ॥३॥

शं न॒ आपो॑ धन्व॒न्या॒३॒॑ः शमु॑ सन्त्वनू॒प्याः॑ । शं नः॑ खनि॒त्रिमा॒ आपः॒
शमु॒ याः कु॒म्भ आभृ॑ताः शि॒वा नः॑ सन्तु॒ वार्षि॑कीः ॥४॥ [१।६]

सूक्त ७

ऋषिः - चातनः ॥ देवता—अग्निः ३ इन्द्रश्च ॥ छन्दः--१-४, ६, ७ अनुष्टुप्,
५ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ७ ।

स्तु॒वा॒नम॑ग्न॒ आ व॑ह यातु॒धानं॑ किमी॒दिन॑म् । त्वं हि दे॑व वन्दि॒तो
ह॒न्ता दस्यो॑र्ब॒भूवि॑थ ॥१॥
आज्य॑स्य परमेष्ठि॒ञ् जात॑वेद॒स्तनू॑वशिन् । अग्ने॑ तौ॒लस्य॒ प्राशा॑न
यातु॒धाना॒न् वि ला॑पय ॥२॥
वि ल॑पन्तु यातु॒धाना॑ अ॒त्त्रिणो॒ ये कि॑मी॒दिनः॑ । अथे॒दम॑ग्ने नो
ह॒विरिन्द्र॑श्च॒ प्रति॑ हर्यतम् ॥३॥
अ॒ग्निः पूर्व॒ आ र॑भतां॒ प्रेन्द्रो॑ नुदतु बाहु॒मान् । ब्रवी॑तु॒ सर्वो॑
यातु॒मान॒यम॒स्मीत्येत्य॑ ॥४॥
पश्या॑म ते वी॒र्यं॑ जातवेदः॒ प्र णो॑ ब्रूहि यातु॒धाना॑न् नृचक्षः । त्वया॒
सर्वे॒ परि॑तप्ताः पु॒रस्ता॒त् त आ य॑न्तु प्रब्रु॒वा॒णा उपे॒दम् ॥५॥
आ र॑भस्व जातवेदो॒ऽस्माका॑र्थाय जज्ञिषे । दू॒तो नो॑ अग्ने भू॒त्वा
या॑तु॒धाना॒न् वि ला॑पय ॥६॥
त्वम॑ग्ने यातु॒धाना॒नुप॑बद्धाँ इ॒हा व॑ह । अथै॑षा॒मिन्द्रो॒ वज्रे॒णापि॑
शी॒र्षाणि॑ वृश्चतु ॥७॥　　[२।१]

सूक्त ८

ऋषिः - चातनः ॥ देवता १, २ बृहस्पतिरग्नीषोमौ च ३, ४ अग्निः । छन्द
— १-३ अनुष्टुप्, ४ बार्हतगर्भा त्रिष्टुप् ॥ मत्र ४ ।

इ॒दं ह॒विर्या॑तु॒धाना॑न् न॒दी फेन॑मि॒वा व॑हत् । य इ॒दं स्त्री पु॒मान॑करि॒ह स
स्तु॑वतां॒ जनः॑ ॥१॥

अ॒यं स्तु॑वा॒न आग॑मदि॒मं स्म॒ प्रति॑ हर्यत । बृह॑स्पते॒ वशे॑ ल॒ब्ध्वाग्नी॑षोमा॒ वि वि॑ध्यतम् ॥२॥

या॒तु॒धान॑स्य सोमप ज॒हि प्र॒जां नय॑स्व च । नि स्तु॑वा॒नस्य॑ पातय॒ पर॒मक्ष्यु॒ताव॑रम् ॥३॥

यत्रै॑षामग्ने॒ जनि॑मानि॒ वेत्थ॒ गुहा॑ स॒ताम॒त्त्रिणां॑ जातवेदः । तांस्त्वं ब्रह्म॑णा वावृधा॒नो ज॒ह्ये॑षां शत॒तर्ह॑मग्ने ॥४॥ [२।२]

सूक्त ९

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—१, २ वस्वादयो मन्त्रोक्ताः ३, ४ अग्निः । छन्दः—त्रिष्टुप् ।। मंत्र ४ ।

अ॒स्मिन् वसु॒ वस॑वो धारय॒न्त्विन्द्रः॑ पू॒षा वरु॑णो मि॒त्रो अ॒ग्निः । इ॒ममा॑दि॒त्या उ॒त विश्वे॑ च दे॒वा उत्त॑रस्मि॒ञ्ज्योति॑षि धारयन्तु ॥१॥

अ॒स्य दे॒वाः प्र॒दिशि॒ ज्योति॑रस्तु॒ सूर्यो॑ अ॒ग्निरु॒त वा॒ हिर॑ण्यम् । स॒पत्ना॑ अ॒स्मद॑धरे भवन्तूत्त॒मं नाक॒मधि॑ रोहये॒मम् ॥२॥

येनेन्द्रा॑य स॒मभ॑रः॒ पयां॑स्युत्त॒मेन॒ ब्रह्म॑णा जातवेदः । तेन॒ त्वम॑ग्न इ॒ह व॒र्धये॒मं स॑जा॒ताना॒ं श्रैष्ठ्य॒ आ धे॑ह्येनम् ॥३॥

ऐषां॑ य॒ज्ञमु॒त वर्चो॑ ददे॒ऽहं रा॒यस्पोष॑मु॒त चि॒त्तान्य॑ग्ने । स॒पत्ना॑ अ॒स्मद॑धरे भवन्तूत्त॒मं नाक॒मधि॑ रोहये॒मम् ॥४॥ [२।३]

सूक्त १०

ऋषिः—अथर्वा । देवता—१ असुरः २–४ वरुणः ।। छन्दः—१, २ त्रिष्टुप्, ३, ४ ककुम्मत्यनुष्टुप् ।। मंत्र ४ ।

अ॒यं दे॒वाना॒मसु॑रो॒ वि रा॑जति॒ वशा॒ हि स॒त्या वरु॑णस्य॒ राज्ञः॑ । तत॒स्परि॒ ब्रह्म॑णा॒ शाश॑दान उ॒ग्रस्य॑ म॒न्योरुदि॒मं न॑यामि ॥१॥

नम॑स्ते राजन् वरुणास्तु म॒न्यवे॒ विश्वं॒ ह्यु॑ग्र निचि॒केषि॑ द्रु॒ग्धम् ।
स॒हस्र॑म॒न्यान् प्र सु॑वामि सा॒कं श॒तं जी॑वाति श॒रद॒स्तवा॒यम् ॥२॥

यदु॒वक्थानृ॑तं जि॒ह्वया॑ वृजि॒नं ब॒हु । राज्ञ॑स्त्वा स॒त्यधर्म॑णो मु॒ञ्चामि॒
वरु॑णाद॒हम् ॥३॥

मु॒ञ्चामि॑ त्वा वैश्वान॒राद॑र्ण॒वान् म॑ह॒तस्परि॑ । स॒जा॒तानु॑ग्रे॒हा व॑द॒ ब्रह्म॒
चाप॑ चिकीहि नः ॥४॥ [२।४]

सूक्त ११

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवताः—पूषादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ पंक्ति २ अनुष्टुप् ३ चतुष्पदोष्णिग्गर्भा ककुम्मत्यनुष्टुप्, ४–६ पथ्या पंक्तिः ॥ मंत्र ६ ।

वष॑ट् ते पूषन्न॒स्मिन्त्सूता॑वर्य॒मा होता॑ कृणोतु वे॒धाः । सिस्र॑तां॒
नार्यृ॒तप्र॑जाता॒ वि पर्वा॑णि जिहतां॒ सूत॒वा उ॑ ॥१॥

चत॑स्रो दि॒वः प्र॒दिश॒श्चत॑स्रो॒ भूम्या॑ उ॒त । दे॒वा गर्भं॒ समै॑रय॒न् तं
व्यू॑र्णुवन्तु॒ सूत॑वे ॥२॥

सू॒षा व्यू॑र्णोतु॒ वि योनिं॑ हापयामसि । श्र॒थया॑ सूषणे॒ त्वमव॒ त्वं बि॑ष्कले
सृज ॥३॥

नेव॑ मां॒से न पीब॑सि॒ नेव॑ म॒ज्जस्वाह॑तम् । अवै॑तु॒ पृश्नि॒ शेव॑लं॒ शुने॑
ज॒राय्व॒त्तवेऽव॑ ज॒रायु॑ पद्यताम् ॥४॥

वि ते॑ भिनद्मि॒ मेह॑नं॒ वि योनि॒ वि ग॒वीनि॑के । वि मा॒तरं॑ च पु॒त्रं
च॒ वि कु॑मा॒रं ज॒रायु॒णाव॑ ज॒रायु॑ पद्यताम् ॥५॥

यथा॒ वातो॒ यथा॒ मनो॒ यथा॒ पत॑न्ति प॒क्षिणः॑ । ए॒वा त्वं द॑शमास्य
सा॒कं ज॒रायु॑णा प॒ताव॑ ज॒रायु॑ पद्यताम् ॥६॥ [२।५]

सूक्त १२

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—यक्ष्मनाशनम् ॥ छन्दः—१–३ जगती (२, ३ त्रिष्टुप्) ४ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

ज॒रा॒यु॒जः प्र॑थ॒म उ॒स्रियो॒ वृषा॒ वात॑भ्रजा स्त॒नय॑न्नेति वृ॒ष्ट्या । स नो॑
मृडा॑ति त॒न्व॑ ऋजु॒गो रु॒जन् य एक॒मोज॑स्त्रे॒धा वि॑चक्र॒मे ॥१॥
अङ्गे॑अङ्गे शो॒चिषा॑ शिश्रिया॒णं न॑म॒स्यन्त॑स्त्वा ह॒विषा॑ विधेम ।
अ॒ङ्कान्त्स॑म॒ङ्कान् ह॒विषा॑ विधेम॒ यो अग्र॑भी॒त् पर्वा॑स्या॒ ग्रभी॑ता ॥२॥
मु॒ञ्च शी॑र्ष॒क्त्या उ॒त का॒स ए॑नं॒ परु॑ष्परुरावि॒वेशा॒ यो अ॑स्य । यो
अ॑भ्र॒जा वा॑त॒जा यश्च॒ शुष्मो॒ वन॒स्पती॑न्त्सच॒तां॒ पर्व॑तांश्च ॥३॥
शं मे॒ पर॑स्मै॒ गात्रा॑य॒ शम॒स्त्ववरा॑य मे । शं मे॑ च॒तुर्भ्यो॒ अङ्गे॑भ्यः॒
शम॑स्तु त॒न्वे॒३॑ मम॑ ॥४॥ [३।१]

सूक्त १३

ऋषिः भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—विद्युत् ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्, ३ चतुष्पाद् विराड् जगती ४ त्रिष्टुप्परा बृहतीगर्भा पंक्तिः ॥ मंत्र ४ ।

नम॑स्ते अस्तु वि॒द्युते॒ नम॑स्ते स्तनयि॒त्नवे॑ । नम॑स्ते अ॒स्त्वश्म॑ने॒ येना॑
दूडा॒शे अस्य॑सि ॥१॥
नम॑स्ते प्र॒वतो॑ नपा॒द् यत॒स्तपः॑ स॒मूह॑सि । मृ॒डया॑ नस्त॒नूभ्यो॒ मय॑स्तो॒-
केभ्य॑स्कृधि ॥२॥
प्र॒वतो॑ नपा॒न्नम॑ ए॒वास्तु॒ तुभ्यं॒ नम॑स्ते हे॒तये॒ तपु॑षे च कृण्मः । वि॒द्म ते॒
धाम॑ पर॒मं गुहा॒ यत् स॑मु॒द्रे अ॒न्तर्नि॑हि॑तासि॒ नाभिः॑ ॥३॥
यां त्वा॑ दे॒वा अ॑सृजन्त॒ विश्व॒ इषुं॑ कृण्वा॒ना अस॑नाय धृ॒ष्णुम् । सा नो॑
मृ॒ड वि॒दथे॑ गृ॒णा॒ना तस्यै॑ ते॒ नमो॑ अस्तु देवि ॥४॥ [३।२]

सूक्त १४

ऋषिः भृग्वङ्गिराः ।। देवता — यमः ।। छन्दः — १ ककुम्मत्यनुष्टुप्, ३ चतुष्पदा २, ४ अनुष्टुभौ विराडनुष्टुप् ।। मंत्र ४ ।

भग॑मस्या॒ वर्च॒ आदि॒ष्यधि॑ वृ॒क्षादि॑व॒ स्रज॑म् । म॒हाबु॑ध्न इव॒ पर्व॑तो॒
ज्योक् पि॒तृष्वा॑स्ताम् ॥१॥

ए॒षा ते॑ राजन् क॒न्या॑ व॒धूर्नि॑ धू॑यतां यम । सा मा॒तुर्ब॑ध्यतां गृ॒हेऽथो॒
भ्रा॒तुरथो॑ पि॒तुः ॥२॥

ए॒षा ते॑ कुल॒पा रा॑जन् तामु॑ ते॒ परि॑ दद्मसि । ज्योक् पि॒तृष्वा॑साता॒ आ
शी॒र्ष्णः स॒मोप्या॑त् ॥३॥

असि॑तस्य ते॒ ब्रह्म॑णा क॒श्यप॑स्य॒ गय॑स्य च । अ॒न्तःको॒शमि॑व जा॒मयोऽपि॑
नह्यामि ते॒ भग॑म् ॥४॥ [३।३]

सूक्त १५

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता — सिन्ध्वादयो मन्त्रोक्ताः ।। छन्दः — १, भुरिग् बृहती, २ भुरिक् पथ्या पंक्तिः ३, ४ अनुष्टुप् ।। मंत्र ४ ।

सं सं स्र॑वन्तु॒ सिन्ध॑वः॒ सं वाताः॒ सं प॑त॒त्रिणः॑ । इ॒मं य॒ज्ञं प्र॒दिवो॑ मे
जुषन्तां संस्रा॒व्ये॑ण ह॒विषा॑ जुहोमि ॥१॥

इ॒हैव हव॒मा या॑त म इ॒ह सं॑स्रावणा उ॒तेमं व॑र्धयता गिरः । इ॒हैतु॒
सर्वो॒ यः प॒शुर॒स्मिन् ति॑ष्ठतु॒ या र॒यिः ॥२॥

ये न॒दीनां॑ सं॒स्रव॒न्त्युत्सा॑सः॒ सद॒मक्षि॑ताः । तेभि॑र्मे॒ सर्वैः॑ संस्रा॒वैर्धन॒ं सं
स्रा॑वयामसि ॥३॥

ये स॒र्पिषः॑ सं॒स्रव॑न्ति क्षी॒रस्य॑ चोद॒कस्य॑ च । तेभि॑र्मे॒ सर्वैः॑ संस्रा॒वैर्धनं॒
सं स्रा॑वयामसि ॥४॥ [३।४]

सूक्त १६

ऋषिः—चातनः ॥ देवता—१ अग्निः २ वरुणः, अग्निः, इन्द्रः, ३, ४ सीसम् ॥
छन्दः—१-३ अनुष्टुभः ४ ककुम्मत्यनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

ये[ऽमावा॒स्या॒ं॑३॒ रात्रि॑मु॒दस्थु॑र्व्रा॒जम॒त्त्रिण॑ः । अ॒ग्निस्तु॒रीयो॑ यातु॒हा
सो अ॒स्मभ्य॒मधि॑ ब्रवत् ॥१॥
सीसा॒याध्या॑ह॒ वरु॑ण॒ः सीसा॑या॒ग्निरुपा॑वति । सीसँ॑ म॒ इन्द्र॒ः प्राय॑च्छ॒त्
तद॒ङ्ग या॑तु॒चात॑नम् ॥२॥
इ॒दं विष्क॑न्धं सहत इ॒दं बा॑धते अ॒त्त्रिण॑ः । अ॒नेन॒ विश्वा॑ ससहे॒ या
जा॒तानि॑ पिशा॒च्याः ॥३॥
यदि॑ नो॒ गां हं॑सि॒ यद्यश्वं॒ यदि॒ पूरु॑षम् । तं त्वा॒ सीसे॑न विध्यामो॒
यथा॒ नोऽसो॒ अवी॑रहा ॥४॥ [३।५]

सूक्त १७

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—योषितो धमन्यश्च ॥ छन्दः—१ भुरिगनुष्टुप्
२, ३ अनुष्टुप् ४ त्रिपदार्षी गायत्री ॥ मंत्र ४ ।

अ॒मूर्या॑ यन्ति॑ यो॒षितो॑ हि॒रा लोहि॑तवाससः । अ॒भ्रात॑र इव
जा॒मय॒स्तिष्ठ॑न्तु ह॒तव॑र्चसः ॥१॥
तिष्ठा॑वरे॒ तिष्ठ॑ पर उ॒त त्वं ति॑ष्ठ मध्यमे । क॒नि॒ष्ठि॒का च॒ तिष्ठ॑ति॒
तिष्ठा॒दिद् ध॒मनि॑र्म॒ही ॥२॥
शतस्य॑ ध॒मनी॑नां स॒हस्र॑स्य हि॒राणा॑म् । अस्थु॒रिन्म॑ध्य॒मा इ॒माः सा॒कमन्ता॑
अरंसत ॥३॥
परि॑ व॒ः सिक॑तावती ध॒नूर्बृ॑ह॒त्य]क्रमीत् । तिष्ठ॑ते॒लय॑ता॒ सु क॑म् ॥४॥
[४।१]

सूक्त १८

ऋषिः – द्रविणोदाः ॥ देवता– सवित्रादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ उपरिष्ठाद् विराड् बृहती; २ निचृज्जगती, ३ विराडास्तारपंक्तिस्त्रिष्टुप् अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

निर्लक्ष्म्यं ललाम्यं१ निररातिं सुवामसि । अथ या भद्रा तानि नः
प्रजाया अरातिं नयामसि ॥१॥
निररणिं सविता साविषत् पदोर्निर्हस्तयोर्वरुणो मित्रो अर्यमा ।
निरस्मभ्यमनुमती रराणा प्रेमां देवा असाविषुः सौभगाय ॥२॥
यत्त आत्मनि तन्वां घोरमस्ति यद्वा केशेषु प्रतिचक्षणे वा । सर्वं तद्
वाचाप हन्मो वयं देवस्त्वा सविता सूदयतु ॥३॥
रिश्यपदीं वृषदतीं गोषेधां विधमामुत । विलीढ्यं ललाम्यं१ ता
अस्मन्नाशयामसि ॥४॥ [४।२]

सूक्त १९

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—१ इन्द्रः २ मनुष्येषवः, ३ रुद्रः ४ देवाः ॥ छन्दः—१, ४ अनुष्टुप् २ पुरस्ताद् बृहती ३ पथ्या पंक्तिः ॥ मंत्र ४ ।

मा नो विदन् विव्याधिनो मो अभिव्याधिनो विदन् । आराच्छरव्या
अस्मद्विषूचीरिन्द्र पातय ॥१॥
विष्वञ्चो अस्मच्छरवः पतन्तु ये अस्ता ये चास्याः । दैवीर्मनुष्येषवो
ममामित्रान् वि विध्यत ॥२॥
यो नः स्वो यो अरणः सजात उत निष्ट्यो यो अस्माँ अभिदासति ।
रुद्रः शरव्ययैतान् ममामित्रान् वि विध्यतु ॥३॥
यः सपत्नो योऽसपत्नो यश्च द्विषञ्छपाति नः । देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु
ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ॥४॥ [४।३]

सूक्त २०

ऋषिः — अथर्वा ॥ देवता — १ सोमः, मारुतः । २ मित्रावरुणौ, ३ वरुणः । ४ इन्द्रः ॥
छन्दः — १ त्रिष्टुप्, २--४ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

अदा॑रसृद् भवतु देव सोमा॒स्मिन् य॒ज्ञे म॑रुतो मृ॒डता॑ नः । मा नो॑
विददभि॒भा मो अश॑स्ति॒र्मा नो॑ विदद् वृजि॒ना द्वेष्या॒ या ॥१॥

यो॑ अ॒द्य सेन्यो॑ व॒धो॑ऽघा॒यूना॑मु॒दीर॑ते । यु॒वं तं मि॑त्रावरुणाव॒स्मद्
या॑वयतं॒ परि॑ ॥२॥

इ॒तश्च॒ यद॒मुत॑श्च॒ यद् व॒धं व॑रुण यावय । वि म॒हच्छर्म॑ यच्छ॒ वरी॑यो
यावया व॒धम् ॥३॥

शा॒स इ॒त्था म॒हाँ अ॑स्यमित्रसा॒हो अ॑स्तृ॒तः । न यस्य॑ ह॒न्यते॒ सखा॒
न जी॒यते॑ कु॒दाच॒न ॥४॥ [४।४]

सूक्त २१

ऋषिः अथर्वा ॥ देवता इन्द्रः ॥ छन्दः अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

स्व॒स्ति॒दा वि॒शां पति॑र्वृत्र॒हा वि॑मृ॒धो व॒शी । वृषेन्द्र॑ः पु॒र ए॑तु नः
सोम॒पा अ॑भयङ्क॒रः ॥१॥

वि न॑ इन्द्र॒ मृधो॑ जहि नी॒चा य॑च्छ पृतन्य॒तः । अ॒ध॒मं ग॑मया॒ तमो॒ यो
अ॒स्माँ अ॑भि॒दास॑ति ॥२॥

वि रक्षो॒ वि मृधो॑ जहि॒ वि वृ॒त्रस्य॒ हनू॑ रुज । वि म॒न्युमि॑न्द्र वृत्रहन्न॒मि॑त्रस्याभि॒दास॑तः ॥३॥

अपे॑न्द्र द्विष॒तो मनोऽप॒ जिज्या॑सतो व॒धम् । वि म॒हच्छर्म॑ यच्छ॒ वरी॑यो
यावया व॒धम् ॥४॥ [४।५]

सूक्त २२

ऋषिः — ब्रह्मा ॥ देवताः—सूर्यः हरिमा, हृद्‌रोगश्च ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

अनु॒ सूर्य॒मुद॑यतां हृद्द्यो॒तो ह॑रि॒मा च॑ ते । गो रोहि॑तस्य॒ वर्णे॑न॒ तेन॑ त्वा॒ परि॑ दध्मसि ॥१॥

परि॑ त्वा॒ रोहि॑तै॒र्वर्णै॑र्दीर्घायु॒त्वाय॑ दध्मसि । यथा॒यम॑र॒पा अस॒दथो॒ अह॑रितो॒ भुव॑त् ॥२॥

या रोहि॑णीर्दे॒वत्या॒३॒ गावो॒ या उ॒त रोहि॑णीः । रू॒पंरू॑पं॒ वयो॑वय॒स्ताभि॑ष्ट्वा॒ परि॑ दध्मसि ॥३॥

शुके॑षु ते हरि॒माणं॑ रोप॒णाका॑सु दध्मसि । अथो॒ हारि॑द्रवेषु ते हरि॒माणं॒ नि द॑ध्मसि ॥४॥ [५।१]

सूक्त २३

ऋषिः अथर्वा ॥ देवता - वनस्पतयः (रामा, कृष्णा, असिक्नी च) ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

न॒क्तं॒जा॒तास्यो॑षधे॒ रामे॒ कृष्णे॒ असि॑क्नि च । इ॒दं र॑जनि रजय कि॒लासं॑ पलि॒तं च॒ यत् ॥१॥

कि॒लासं॑ च पलि॒तं॑ च॒ निरि॒तो ना॑शया॒ पृष॑त् । आ त्वा॒ स्वो वि॑शतां॒ वर्णः॒ परा॑ शु॒क्लानि॑ पातय ॥२॥

असि॑तं ते प्र॒लय॑नमा॒स्थान॒मसि॑तं॒ तव॑ । असि॑क्न्यस्योषधे॒ निरि॒तो ना॑शया॒ पृष॑त् ॥३॥

अ॒स्थि॒जस्य॑ कि॒लास॑स्य तनू॒जस्य॑ च॒ यत् त्व॒चि । दू॒ष्या॑ कृ॒तस्य॒ ब्रह्म॑णा॒ लक्ष्म॑ श्वे॒तम॑नीनशम् ॥४॥ [५।२]

सूक्त २४

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आसुरी वनस्पतिः ॥ छन्दः—१, ३, ४ अनुष्टुप्, २ निचृत् पथ्या पंक्ति ॥ मंत्र ४ ।

सु॒प॒र्णो जा॒तः प्र॑थ॒मस्तस्य॒ त्वं पि॒त्तमा॑सिथ । तदा॑सु॒री यु॒धा जि॒ता रू॒पं
च॑क्रे॒ वन॒स्पती॑न् ॥१॥
आ॒सु॒री च॑क्रे प्रथ॒मेदं कि॑लासभेष॒जमि॒दं कि॑लास॒नाश॑नम् । अनी॑नशत्
कि॒लास॒ं सरू॑पामकर॒त् त्वच॑म् ॥२॥
सरू॑पा॒ नाम॑ ते मा॒ता सरू॑पो॒ नाम॑ ते पि॒ता । स॒रू॒प॒कृत् त्वमो॑षधे॒ सा
सरू॑पमि॒दं कृ॑धि ॥३॥
श्या॒मा स॑रूप॒ङ्कर॑णी पृथि॒व्या अध्युद्भृ॑ता । इ॒दमू॒ षु प्र सा॑धय॒ पुना॑
रू॒पाणि॑ कल्पय ॥४॥ [५।३]

सूक्त २५

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवताः यक्ष्मनाशनोऽग्निः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्. २, ३ विराड्गर्भा त्रिष्टुप्, ४ पुरोऽनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

यद॒ग्निरापो॒ अद॑हत् प्र॒विश्य॒ यत्राकृ॑ण्वन् धर्म॒धृतो॒ नमां॑सि । तत्र॑ त आहुः
पर॒मं ज॒नित्रं॒ स नः॑ सं॑वि॒द्वान् परि॑ वृङ्ग्धि तक्मन् ॥१॥
यद्य॒र्चिर्यदि॒ वासि॑ शो॒चिः श॑कल्ये॒षि यदि॑ वा ते ज॒नित्र॑म् । हुडु॒र्नामा॑सि
हरितस्य देव॒ स नः॑ सं॑वि॒द्वान् परि॑ वृङ्ग्धि तक्मन् ॥२॥
यदि॑ शो॒को यदि॑ वाभिशो॒को यदि॑ वा॒ राज्ञो॒ वरु॑ण॒स्यासि॑ पु॒त्रः ।
हुडु॒र्नामा॑सि हरितस्य देव॒ स नः॑ सं॑वि॒द्वान् परि॑ वृङ्ग्धि तक्मन् ॥३॥
नमः॑ शी॒ताय॑ त॒क्मने॒ नमो॑ रू॒राय॑ शो॒चिषे॑ कृणोमि । यो अ॑न्ये॒द्युरु॑भय॒-
द्युर॒भ्येति॑ तृ॒तीय॑काय॒ नमो॑ अस्तु त॒क्मने॑ ॥४॥ [५।४]

सूक्त २६

ऋषिः– ब्रह्मा । देवता– इन्द्रादयो मन्त्रोक्ताः ।। छन्दः—१, ३ गायत्री, २ त्रिपदा साम्नी त्रिष्टुप् (एकावसाना), ४ पादनिचृत् गायत्री (एकावसाना)।। मत्र ४ ।

आ॒रे॒ ३॒ साव॒स्मद॑स्तु हे॒तिर्दे॑वासो असत् । आ॒रे अश्मा॒ यमस्य॑थ ॥१॥
सखा॒साव॒स्मभ्य॑मस्तु रा॒तिः सखेन्द्रो॒ भग॑ः । सवि॒ता चि॒त्ररा॑धाः ॥२॥
यू॒यं॑ नः॑ प्रवतो नपा॒न्मरु॑त॒ः सूर्य॑त्वचसः । शर्म॑ यच्छाथ स॒प्रथा॑ः ॥३॥
सु॒षू॒दत॑ मृ॒डत॑ मृ॒डया॑ नस्त॒नूभ्यो॒ । मय॑स्तो॒केभ्य॑स्कृधि ॥४॥ [५।५]

सूक्त २७

ऋषिः—अथर्वा (स्वस्त्ययनकामः) । देवता– इन्द्राणी ।। छन्दः—१ पथ्या पंक्तिः २–४ अनुष्टुप् ।। मंत्र ४ ।

अ॒मूः पा॒रे पृ॑द॒ाक्वʃस्त्रिष॒प्ता निर्ज॑रायवः । तासां॑ ज॒रायु॑भिर्व॒यम॒क्ष्या॒३॒-
वपि॑ व्ययामस्यघा॒योः प॑रिप॒न्थिन॑ः ॥१॥
विषू॑च्येतु कृन्त॒ती पिना॑कमिव॒ बिभ्र॑ती । विष्व॑क् पुन॒र्भुवा॒ मनोऽस॑मृद्धा
अघा॒यव॑ः ॥२॥
न ब॒ह॒वः सम॑शक॒न् नार्भ॒का अ॒भि दा॑धृषुः । वे॒णोरद्गा॑ इवा॒भितोऽस॑मृद्धा
अघा॒यव॑ः ॥३॥
प्रेतं॑ पादौ॒ प्र स्फु॑रतं॒ वह॑तं पृण॒तो गृ॒हान् । इ॒न्द्रा॒ण्येʃतु प्रथ॒माजी॒ता-
मु॑षिता पु॒रः ॥४॥ [५।६]

सूक्त २८

ऋषि—चातनः ।। देवता—१, २ (पूर्वार्धस्य) अग्निः २ (उत्तरार्धात्)-४ यातुधान्यः ।। छन्दः—१, २ अनुष्टुप्, ३ विराट् पथ्या बृहती, ४ पथ्या पंक्तिः ।। मत्र ४ ।

उप॒ प्रागा॑द् दे॒वो अ॒ग्नी र॑क्षोहामी॑व॒चात॑नः । दह॒न्नप॑ द्वया॒विनो॑
यातु॒धाना॑न् किमी॒दिन॑ः ॥१॥

प्रति॑ दह यातु॒धाना॒न् प्रति देव किमी॒दिनः॑ । प्र॒तीचीः॑ कृष्णवर्तने॒ सं
द॑ह यातु॒धान्य॑ः ॥२॥

या श॒शाप॒ शप॑नेन॒ याघं॑ मूर॑माद॒धे । या रस॑स्य॒ हर॑णाय जा॒तमा॑र॒भे
तो॒कम॑त्तु॒ सा ॥३॥

पु॒त्रम॑त्तु यातु॒धानीः॑ स्वसा॑रमु॒त न॒प्त्य॑म् । अधा॑ मि॒थो वि॑के॒श्यो॒३॒ वि
घ्न॑तां यातु॒धान्यो॒३॒ वि तृ॑ह्यन्तामरा॒य्य॑ः ॥४॥ [५।७]

सूक्त २९

ऋषिः — वसिष्ठः ।। देवता ब्रह्मणस्पतिः अभीवर्तमणिः ।। छन्दः —अनुष्टुप् ।। मंत्र ६।

अ॒भी॒व॒र्तेन॑ म॒णिना॒ येनेन्द्रो॑ अभिवावृ॒धे । तेना॒स्मान् ब्रह्म॑णस्पते॒ऽभि
रा॒ष्ट्राय॑ वर्ध॑य ॥१॥

अ॒भि॒वृत्य॑ स॒पत्ना॑न॒भि या नो॒ अरा॑तयः । अ॒भि पृ॑त॒न्यन्तं॑ तिष्ठा॒भि
यो नो॑ दुर॒स्यति॑ ॥२॥

अ॒भि त्वा॑ दे॒वः स॑वि॒ताभि सोमो॑ अवीवृधत् । अ॒भि त्वा॒ विश्वा॑
भू॒तान्य॑भीव॒र्तो यथास॑सि ॥३॥

अ॒भी॒व॒र्तो अ॑भिभ॒वः स॑पत्न॒क्षय॑णो म॒णिः । रा॒ष्ट्राय॒ मह्यं॑ बध्यतां
स॒पत्ने॑भ्यः परा॒भुवे॑ ॥४॥

उद॒सौ सू॒र्यो॑ अगा॒दुदि॒दं मा॑म॒कं वच॑ः । यथा॒हं श॑त्रु॒होऽसा॑न्यसप॒त्नः
स॑पत्न॒हा ॥५॥

स॒प॒त्न॒क्षय॑णो॒ वृषा॒भिरा॑ष्ट्रो विषास॒हिः । यथा॒हमे॒षां वी॒राणां॑ वि॒राजा॑नि॒
जन॑स्य च ॥६॥ [६।१]

सूक्त ३०

ऋषिः—**अथर्वा (आयुष्कामः)** ।। देवता—**विश्वेदेवाः** ।। छन्दः—**१, २, ४ त्रिष्टुप्, शाक्वरगर्भा विराड् जगती** ।। मंत्र ४ ।

विश्वे॑ दे॒वा वस॑वो॒ रक्ष॑ते॒ममु॒तादि॑त्या जागृ॒त यू॒यम॒स्मिन् । मेमं सना॑-
भिरु॒त वा॒न्यना॑भि॒र्मेमं प्राप॒त् पौरु॑षेयो व॒धो यः ॥१॥
ये वो॑ दे॒वाः पि॒तरो॒ ये च॑ पु॒त्राः सचे॑तसो मे शृणु॒ते॒दमु॒क्तम् ।
सर्वे॑भ्यो व॒ः परि॑ ददाम्ये॒तं स्व॒स्त्ये॑नं ज॒रसे॑ वहाथ ॥२॥
ये दे॑वा दि॒वि ष्ठ ये पृ॑थि॒व्यां ये अ॒न्तरि॑क्ष॒ ओष॑धीषु प॒शुष्व॒प्स्व॑१॒न्तः ।
ते कृ॑णुत ज॒रस॒मायु॑र॒स्मै श॒तम॒न्यान् परि॑ वृणक्तु मृ॒त्यून् ॥३॥
येषां॑ प्रया॒जा उ॒त वा॑नुया॒जा हु॒तभा॑गा अहु॒ताद॑श्च दे॒वाः । येषां॑ व॒ः
पञ्च॑ प्र॒दिशो॒ विभ॑क्ता॒स्तान् वो॑ अ॒स्मै स॑त्र॒सद॑ः कृणोमि ॥४। [६।२]

सूक्त ३१

ऋषिः—**ब्रह्मा** ।। देवता—**आशापालाः (वास्तोष्पतयः)** ।। छन्दः—१, २, **अनुष्टुप् ३ विराट् त्रिष्टुप्, ४ परानुष्टुप् त्रिष्टुप्** ।। मंत्र ४ ।

आशा॑नामाशा॒पालेभ्य॑श्च॒तुर्भ्यो॑ अ॒मृते॑भ्यः । इ॒दं भू॒तस्याध्य॑क्षेभ्यो वि॒धेम॑
ह॒विषा॑ व॒यम् ॥१॥
य आशा॑नामाशापा॒लाश्च॒त्वार॒ स्थन॑ दे॒वाः । ते नो॒ निर्ऋ॑त्या॒ः पाशे॑भ्यो
मु॒ञ्चतांह॑सोअंहसः ॥२॥
अस्रा॑मस्त्वा ह॒विषा॑ यजा॒म्यश्लो॑णस्त्वा घृ॒तेन॑ जु॒होमि । य आशा॑ना-
माशापा॒लस्तु॒रीयो॑ दे॒वः स न॑ः सुभू॒तमेह व॑क्षत् ॥३॥
स्व॒स्ति मा॒त्र उ॒त पि॒त्रे नो॑ अस्तु स्व॒स्ति गोभ्यो॒ जग॑ते॒ पुरु॑षेभ्यः ।

विश्वँ॑ सुभू॒तं सु॑वि॒दत्रँ॑ नो अस्तु॒ ज्योगे॒व दृ॑शेम॒ सूर्यँ॑म् ॥४॥ [६।३]

सूक्त ३२

ऋषिः—**ब्रह्मा** ॥ देवता—**द्यावापृथिवी** ॥ छन्दः—१, ३, ४ **अनुष्टुप्**, २ **ककुम्मत्यनुष्टुप्** ॥ **मंत्र ४** ।

इ॒दं ज॑नासो वि॒दथ॑ म॒हद् ब्रह्म॑ वदिष्यति । न तत् पृ॑थि॒व्यां नो दि॒वि
येन॑ प्रा॒णन्ति वी॒रुध॑ः ॥१॥
अ॒न्तरि॑क्ष आ॒सां स्थाम॑ श्रान्त॒सदा॑मिव । आ॒स्थान॑म॒स्य भू॒तस्य॑
वि॒दुष्टद् वे॒ध॒सो॑ न वा॑ ॥२॥
यद् रोद॑सी॒ रेज॑माने॒ भूमि॑श्च नि॒रत॑क्षतम् । आ॒र्द्रँ॑ तद॒द्य स॑र्व॒दा
स॑मु॒द्रस्ये॑व स्रो॒त्याः ॥३॥
विश्व॑म॒न्याम॑भी॒वार॒ तद॒न्यस्या॒मधि॑ श्रि॒तम् । दि॒वे च॑ वि॒श्ववे॑दसे
पृथि॒व्यै चा॑कर॒ नम॑ः ॥४॥ [६।४]

सूक्त ३३

ऋषिः—**शन्तातिः** ॥ देवता—**आपः** ॥ छन्दः—**त्रिष्टुप्** ॥ **मंत्र ४** ।

हिर॑ण्यवर्णा॒ः शुच॑यः पाव॒का यासु॑ जा॒तः स॑वि॒ता यास्व॒ग्निः । या अ॒ग्निं
गर्भँ॑ दधि॒रे सु॒वर्णा॒स्ता न॒ आप॒ः शं स्यो॒ना भ॑वन्तु ॥१॥
यासा॒ं राजा॒ वरु॑णो॒ याति॒ मध्यँ॑ सत्यानृ॒ते अ॑व॒पश्य॒ञ्जना॑नाम् । या
अ॒ग्निं गर्भँ॑ दधि॒रे सु॒वर्णा॒स्ता न॒ आप॒ः शं स्यो॒ना भ॑वन्तु ॥२॥
यासाँ॑ दे॒वा दि॒वि कृ॒ण्वन्ति॑ भ॒क्षं या अ॒न्तरि॑क्षे बहु॒धा भव॑न्ति । या
अ॒ग्निं गर्भँ॑ दधि॒रे सु॒वर्णा॒स्ता न॒ आप॒ः शं स्यो॒ना भ॑वन्तु ॥३॥
शि॒वेन॑ मा॒ चक्षु॑षा पश्यतापः शि॒वया॑ त॒न्वोप॑ स्पृशत॒ त्वचँ॑ मे ।
घृ॒त॒श्चुत॒ः शुच॑यो॒ याः पा॑व॒कास्ता न॒ आप॒ः शं स्यो॒ना भ॑वन्तु ।४।[६।५]

सूक्त ३४

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—मधु वनस्पतिः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मंत्र ५ ।

इ॒यं वी॒रुन्मधु॑जाता॒ मधु॑ना त्वा खनामसि । मधो॒रधि॒ प्रजा॑तासि॒ सा नो॒ मधु॑मतस्कृधि ॥१॥

जि॒ह्वाया॒ अग्रे मधु॑ मे जिह्वामूले म॒धूल॑कम् । ममेदह॒ क्रता॒वसो॒ मम॑ चि॒त्तमु॒पाय॑सि ॥२॥

मधु॑मन्मे नि॒क्रम॑णं॒ मधु॑मन्मे प॒राय॑णम् । वा॒चा व॑दामि॒ मधु॑मद् भूयासं॒ मधु॑सन्दृशः ॥३॥

मधो॑रस्मि॒ मधु॑तरो म॒दुघा॒न्मधु॑मत्तरः । मामित् किल॒ त्वं वना॒ः शाखां॒ मधु॑मतीमिव ॥४॥

परि॑ त्वा परित॒त्नुने॒क्षुणा॑गा॒मवि॑द्विषे । यथा॒ मां का॒मिन्यसो॒ यथा॒ मन्नाप॑गा॒ असः॑ ॥५॥ [६।६]

सूक्त ३५

ऋषिः—अथर्वा (आयुष्कामः) ।। देवता—हिरण्यम् ।। छन्दः—१-२ जगती, ४ अनुष्टुब्गर्भा चतुष्पदा त्रिष्टुप् ।। मंत्र ४ ।

यदाब॑ध्नन् दाक्षाय॒णा हिर॑ण्यं श॒तानी॑काय सुमन॒स्यमा॑नाः । तत् ते॑ बध्ना॒म्यायु॑षे॒ वर्च॑से॒ बला॑य दीर्घायु॒त्वाय॑ श॒तशा॑रदाय ॥१॥

नैनं॒ रक्षां॑सि॒ न पि॑शा॒चाः स॑हन्ते दे॒वाना॒मोजः॑ प्रथम॒जं ह्ये॒३॒॑तत् । यो बिभ॑र्ति दाक्षाय॒णं हिर॑ण्यं॒ स जी॒वेषु॑ कृणुते दी॒र्घमायुः॑ ॥२॥

अ॒पां तेजो॒ ज्योति॒रोजो॒ बलं॑ च॒ वन॒स्पती॑नामु॒त वी॒र्या॑णि । इन्द्र॑ इवेन्द्रि॒याण्यधि॑ धारयामो अ॒स्मिन् तद् दक्ष॑माणो बिभ॒रद्धिर॑ण्यम् ॥३॥

समा॑नां॒ मा॒सामृ॒तुभि॑ष्ट्वा व॒यं सं॑वत्स॒रस्य॒ पय॑सा पिपर्मि । इन्द्रा॒ग्नी विश्वे॑ दे॒वास्तेऽनु॑ मन्यन्ता॒महृ॑णीयमानाः ॥४॥ [६।७]

।। इति प्रथमं काण्डं समाप्तम् ।।

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ द्वितीयं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—वेनः ॥ देवता—ब्रह्म, आत्मा ॥ छन्दः—१, २, ४, ५, त्रिष्टुप्, ३ जगती ॥ मन्त्र ५ ।

वे॒नस्तत् प॑श्यत् पर॒मं गुह॒ा यद् यत्र॒ विश्व॒ं भव॒त्येक॑रूपम् । इ॒दं पृश्नि॑रदुह॒ज्जाय॑मानाः स्व॒र्वि॑दो अ॒भ्य॑नूषत॒ व्राः ॥१॥

प्र तद् वो॑चेद॒मृत॑स्य वि॒द्वान् ग॑न्ध॒र्वो धाम॑ पर॒मं गुह॒ा यत् । त्रीणि॑ प॒दानि॒ निहि॑ता॒ गुहा॑स्य॒ यस्तानि॒ वेद॒ स पि॒तुष्पि॒तास॑त् ॥२॥

स नः॑ पि॒ता ज॑नि॒ता स उ॒त बन्धु॒र्धामा॑नि वेद॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑ । यो दे॒वानाँ॑ नाम॒ध एक॑ ए॒व तं सं॑प्र॒श्नं भुव॑ना यन्ति॒ सर्वा॑ ॥३॥

परि॒ द्यावा॑पृथि॒वी स॒द्य आय॑मुपा॑तिष्ठे प्रथम॒जामृ॒तस्य॑ । वाच॑मिव व॒क्तरि॑ भुवने॒ष्ठा धा॒स्युरे॒ष न॒न्वे॒३॒॑षो अ॒ग्निः ॥४॥

परि॒ विश्वा॒ भुव॑नान्यायमृ॒तस्य॒ तन्तु॑ वित॑तं दृशे कम् । यत्र॑ दे॒वा अ॒मृत॑मानशा॒नाः सं॑मा॒ने योना॒वध्यै॑रयन्त ॥५॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः—मातृनामा ॥ देवता—गन्धर्वाप्सरसः ॥ छन्दः—१, विराड् जगती, २, ३ त्रिष्टुप्, ४ त्रिपाद्विराण्नाम-गायत्री, ५ भुरिगनुष्टुप् ॥ मन्त्र ५ ।

दि॒व्यो ग॑न्ध॒र्वो भुव॑नस्य॒ यस्पति॒रेक॑ ए॒व न॑म॒स्यो॑ वि॒क्ष्वीड्यः॑ । तं त्वा॑ यौमि॒ ब्रह्म॑णा दिव्य देव॒ नम॑स्ते अस्तु दि॒वि ते॑ स॒धस्थ॑म् ॥१॥

दि॒वि स्पृ॒ष्टो य॑ज॒तः सूर्य॑त्वगवया॒ता हर॑सो॒ दैव्य॑स्य । मृ॒डाद् ग॑न्ध॒र्वो
भुव॑नस्य॒ यस्पति॒रेक॑ ए॒व न॑म॒स्य॑ः सु॒शेवा॑ः ॥२॥
अ॒न॒व॒द्याभि॒ः सम्॑ जग्म आभिरप्स॒रास्वपि॑ गन्ध॒र्व आ॑सीत् । स॒मु॒द्र
आ॑सा॒ं सद॑नं म आहु॒र्यत॑ः स॒द्य आ च॒ परा॑ च॒ यन्ति ॥३॥
अभ्रि॑ये॒ दि॒द्युन्नक्ष॑त्रिये॒ या वि॒श्वाव॑सुं गन्ध॒र्वं सच॑ध्वे । ताभ्यो॑ वो
देवी॒र्नम॒ इत् कृ॑णोमि ॥४॥
याः क्ल॒न्दास्तमि॑षीचयो॒ऽक्षका॑मा मनो॒मुह॑ः । ताभ्यो॑ गन्ध॒र्वप॑त्नीभ्योऽप्स॒राभ्यो॑ऽकरं॒ नम॑ः ॥५॥ [१।२]

सूक्त ३

ऋषिः—अङ्गिराः । देवता – (आस्राव) भेषजम् ॥ छन्दः—१—५ अनुष्टुप्
६ त्रिपदा स्वाराडुपरिष्टान्महाबृहती ॥ मंत्र ५ ।

अ॒दो यद॑व॒धाव॑त्यव॒त्कमधि॒ पर्व॑तात् । तत्ते॑ कृ॒णोमि भेष॒जं सुभे॑षज॒ं
यथास॑सि ॥१॥
आद॒ङ्गा कु॒विद॒ङ्गा श॒तं या भे॑ष॒जानि॑ ते । तेषा॑मसि॒ त्वमु॑त्त॒मम॑नास्रा॒वमरो॑गणम् ॥२॥
नी॒चैः खन॑न्त्यसु॑रा अरु॒ःस्राण॑मि॒दं म॒हत् । तदा॑स्रा॒वस्य॑ भेष॒जं तदु॒
रोग॑मनीनशत् ॥३॥
उ॒प॒जीका॒ उद्भ॑रन्ति समु॒द्रादधि॑ भेष॒जम् । तदा॑स्रा॒वस्य॑ भेष॒जं तदु॒
रोग॑मशीशमत् ॥४॥
अ॒रु॒ःस्राण॑मि॒दं म॒हत् पृ॑थि॒व्या अध्युद्भृ॑तम् । तदा॑स्रा॒वस्य॑ भेष॒जं तदु॒
रोग॑मनीनशत् ॥५॥

शं नो भवन्त्वप ओषधयः शिवाः । इन्द्रस्य वज्रो अप हन्तु रक्षस आराद् विसृष्टा इषवः पतन्तु रक्षसाम् ॥६॥ [१।३]

सूक्त ४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—जङ्गिडमणिः ॥ छन्दः—१ विराट् प्रस्तारपंक्ति, २-६ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

दीर्घायुत्वाय बृहते रणायारिष्यन्तो दक्षमाणाः सदैव । मणिं विष्कन्धदूषणं जङ्गिडं बिभृमो वयम् ॥१॥

जङ्गिडो जम्भाद् विशराद् विष्कन्धादभिशोचनात् । मणिः सहस्रवीर्यः परि णः पातु विश्वतः ॥२॥

अयं विष्कन्धं सहतेऽयं बाधते अत्त्रिणः । अयं नो विश्वभेषजो जङ्गिडः पात्वंहसः ॥३॥

देवैर्दत्तेन मणिना जङ्गिडेन मयोभुवा । विष्कन्धं सर्वा रक्षांसि व्यायामे सहामहे ॥४॥

शणश्च मा जङ्गिडश्च विष्कन्धादभि रक्षताम् । अरण्यादन्य आभृतः कृष्या अन्यो रसेभ्यः ॥५॥

कृत्यादूषिरयं मणिरथो अरातिदूषिः । अथो सहस्वाञ्जङ्गिडः प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥६॥ [१।४]

सूक्त ५

ऋषिः—भृगुराथर्वणः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ निचृदुपरिष्टाद्बृहती, २ विराडुपरिष्टाद्बृहती, ३ विराट् पथ्या बृहती, ४ जगतीपुरोविराट् त्रिष्टुप्, ५-७ त्रिष्टुप् ॥

इन्द्र जुषस्व प्र वहा याहि शूर हरिभ्याम् । पिबा सुतस्य मतेरिह मधोश्चकानश्चारुर्मदाय ॥१॥

इन्द्र॑ ज॒ठरं॑ न॒व्यो न पृ॒णस्व॒ मधो॑र्दि॒वो न । अ॒स्य सु॒तस्य॒ स्व१॒र्णोप॑
त्वा॒ मदा॑ः सु॒वाचो॑ अगुः ॥२॥
इन्द्र॑स्तुरा॒षाण्मि॒त्रो॑ वृ॒त्रं यो ज॒घान॑ य॒तीर्न॑ । बि॒भेद॑ व॒लं भृ॒गुर्न॑ स॑सहे॒
शत्रू॒न् मदे॒ सोम॑स्य ॥३॥
आ त्वा॑ विशन्तु सु॒तास॑ इन्द्र पृ॒णस्व॑ कु॒क्षी वि॒ड्ढि श॑क्र धि॒येह्या नः॑ ।
श्रु॒धी हवं॒ गिरो॑ मे जु॒षस्वेन्द्र॑ स्व॒युग्भि॒र्मत्स्वे॒ह म॒हे रणा॑य ॥४॥
इन्द्र॑स्य॒ नु प्र वो॑चं वी॒र्या॑|णि॒ यानि॑ च॒कार॑ प्रथ॒मानि॑ व॒ज्री ।
अ॒हन्न॒हि॒मन्व॒पस्त॑तर्द॒ प्र व॒क्षणा॑ अभिन॒त् पर्व॑तानाम् ॥५॥
अ॒हन्नहिं॒ पर्व॑ते शिश्रिया॒णं त्वष्टा॑स्मै॒ वज्रं॑ स्व॒र्यं॑|ततक्ष । वा॒श्रा इ॑व
धे॒नवः॑ स्यन्द॑माना॒ अञ्जः॑ समु॒द्रमव॑ जग्मु॒राप॑ः ॥६॥
वृ॒षा॒यमा॑णो अवृणीत॒ सोमं॒ त्रिक॑द्रुकेष्वपिबत् सु॒तस्य॑ । आ साय॑कं
म॒घवा॑दत्त॒ वज्र॒मह॑न्नेनं प्रथम॒जामही॑नाम् ॥७॥ [१।५]

सूक्त ६

ऋषिः—शौनकः (सम्पत्कामः) ।। देवताः—अग्निः ।। छन्दः—१-३ त्रिष्टुप्
४ चतुष्पदाऽऽर्षी पंक्तिः ५ विराट् प्रस्तारपंक्तिः ।। मंत्र ५ ।

समा॑स्त्वाग्न ऋ॒तवो॑ वर्धयन्तु संवत्स॒रा ऋष॑यो॒ यानि॑ स॒त्या । सं
दि॒व्येन॑ दीदिहि रोच॒नेन॒ विश्वा॒ आ भा॑हि प्र॒दिश॒श्चत॑स्रः ॥१॥
सं चेध्यस्वा॑ग्ने॒ प्र च॑ वर्धये॒ममु॒च्च॑ तिष्ठ मह॒ते सौभ॑गाय । मा ते॑
रिषन्नुपस॒त्तारो॑ अग्ने ब्र॒ह्माण॑स्ते य॒शस॑ः सन्तु॒ मान्ये ॥२॥
त्वाम॑ग्ने वृणते ब्राह्म॒णा इ॒मे शि॒वो अ॑ग्ने सं॒वर॑णे भवा नः । स॒पत्न॒हाग्ने॑
अभिमाति॒जिद् भ॑व॒ स्वे गये॑ जागृ॒ह्यप्र॑युच्छन् ॥३॥

क्ष॒त्रेणा॑ग्ने॒ स्वेन॒ सं र॑भस्व मि॒त्रेणा॑ग्ने मि॒त्र॒धा य॑तस्व । स॒जा॒ताना॑ं
मध्यमे॒ष्ठा राज्ञा॑मग्ने वि॒ह॒व्यो॑ दीदिही॒ह ॥४॥
अति॒ निहो॒ अति॒ स्रिधोऽत्यचि॑त्ती॒रति॒ द्विषः॑ । विश्वा॒ ह्य॑ग्ने दुरि॒ता तर॒
त्वमथा॒स्मभ्यँ॑ स॒हवी॑रं र॒यिं दाः॑ ॥५॥ [२।१]

सूक्त ७

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता — वनस्पतिः (दूर्वा) ।। छन्दः—१ भुरिगनुष्टुप् २, ३, ५ अनुष्टुप् ४ विराडुपरिष्टाद्बृहती ।। मन्त्र ५ ।

अ॒वद्वि॑ष्टा दे॒वजा॑ता वी॒रुच्छ॑पथ॒योप॑नी । आपो॒ मल॑मिव॒ प्राणै॑क्षी॒त्
सर्वा॒न् मच्छ॒पथाँ॒ अधि॑ ॥१॥
यश्च॑ साप॒त्नः श॒पथो॑ जा॒म्याः श॒पथ॑श्च॒ यः । ब्र॒ह्मा यन्म॑न्यु॒तः शपा॒त्
सर्वँ॒ तन्नो॑ अधस्प॒दम् ॥२॥
दि॒वो मूल॒मव॑ततं पृथि॒व्या अध्यु॑त्ततम् । तेन॑ स॒हस्र॑काण्डेन॒ परि॑ णः
पाहि वि॒श्वतः॑ ॥३॥
परि॒ मां परि॑ मे प्र॒जां परि॑ णः पाहि॒ यद् धन॑म् । अरा॑तिर्नो॒ मा
ता॑री॒न्मा न॑स्तारि॒षुर॒भिमा॑तयः ॥४॥
श॒प्तार॑मेतु श॒पथो॒ यः सु॒हार्त् तेन॑ नः स॒ह । चक्षु॑र्मन्त्रस्य दु॒र्हार्दः॑
पृ॒ष्टीरपि॑ शृणीमसि ॥५॥ [२।२]

सूक्त ८

ऋषिः - भृग्वङ्गिराः ।। देवता—क्षेत्रिय (यक्ष्मकुष्ठादि) नाशनम् ।। छन्द—१, २ अनुष्टुप् ३ पथ्या पंक्तिः ४ विराडनुष्टुप् ५ निचृत् पथ्या पंक्तिः ।। मंत्र ५ ।

उद॑गाता॒ं भग॑वती वि॒चृतौ॒ नाम॒ तार॑के । वि क्षे॑त्रि॒यस्य॑ मुञ्चतामध॒मं
पाश॑मुत्त॒मम् ॥१॥

अपे॒यं रात्र्यु॑च्छ॒त्वपो॑च्छन्त्वभि॒कृत्व॑रीः । वी॒रुत् क्षे॑त्रि॒यना॒श॒न्यप॑ क्षेत्रि॒यमु॑च्छतु ॥२॥

ब॒भ्रोरर्जु॑नकाण्डस्य॒ यव॑स्य ते पला॒ल्या तिल॑स्य तिलपि॒ञ्ज्या । वी॒रुत् क्षे॑त्रि॒यना॒श॒न्यप॑ क्षेत्रि॒यमु॑च्छतु ॥३॥

नम॑स्ते॒ लाङ्ग॑लेभ्यो॒ नम॑ ईषायु॒गेभ्यः॑ । वी॒रुत् क्षे॑त्रि॒यना॒श॒न्यप॑ क्षेत्रि॒यमु॑च्छतु ॥४॥

नमः॑ सनिस्र॒साक्षेभ्यो॒ नमः॑ संदे॒श्ये॑भ्यो॒ नम॒ः क्षेत्र॑स्य॒ पत॑ये । वी॒रुत्-क्षे॑त्रि॒यना॒श॒न्यप॑ क्षेत्रि॒यमु॑च्छतु ॥५॥ [२।३]

सूक्त ९

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवताः—वनस्पतिः ॥ छन्दः—१ विराट् प्रस्तारपंक्तिः; २—५ अनुष्टुप् ।मंत्र ५ ।

दश॑वृक्ष मु॒ञ्चेमं रक्ष॑सो॒ ग्राह्या॒ अधि॒ यैनं॑ ज॒ग्राह॒ पर्व॑सु । अथो॑ एनं वनस्पते जी॒वानां॑ लो॒कमुन्न॑य ॥१॥

आगा॒दुद॑गाद॒यं जी॒वानां॒ व्रात॒मप्य॑गात् । अभू॑दु पु॒त्राणां॑ पि॒ता नृ॒णां च॒ भग॑वत्तमः ॥२॥

अधी॑ती॒रध्य॑गाद॒यमधि॑ जीवपु॒रा अ॑गन् । श॒तं ह्य॑स्य भि॒षजः॑ स॒हस्र॑मु॒त वी॒रुधः॑ ॥३॥

दे॒वास्ते॑ ची॒तिम॑विदन् ब्र॒ह्माण॑ उ॒त वी॒रुधः॑ । ची॒तिं ते॒ विश्वे॑ दे॒वा अवि॑द॒न् भूम्या॒मधि॑ ॥४॥

यश्च॒कार॒ स निष्क॑र॒त् स ए॒व सुभिष॑क्तमः । स ए॒व तुभ्यं॑ भेष॒जानि॑ कृ॒णव॑द् भि॒षजा॒ शुचिः॑ ॥५॥ [२।४]

सूक्त १०

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—निर्ऋतिद्यावापृथिव्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ सप्तपदाष्टिः; ३—५, ७, ८ सप्तपदा धृतिः; ६ सप्तदापत्यष्टिः ॥ मंत्र ८ ।

क्षे॒त्रि॒यात् त्वा॒ निर्ऋ॑त्या जामिशं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑त् । अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म् ॥१॥

शं ते॑ अ॒ग्निः स॒हाद्भिर॑स्तु॒ शं सोम॑ः स॒हौष॑धीभिः । ए॒वाहं त्वा क्षेत्रि॒यान्निर्ऋ॑त्या जामिशं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑त् । अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म् ॥२॥

शं ते॒ वातो॑ अ॒न्तरि॑क्षे॒ वयो॑ धा॒च्छं ते॑ भवन्तु प्र॒दिश॒श्चत॑स्रः । ए॒वाहं त्वां क्षे॑त्रि॒यान्निर्ऋ॑त्या जामिशं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑त् । अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म् ॥३॥

इ॒मा या दे॒वीः प्र॒दिश॒श्चत॑स्रो॒ वात॑पत्नीर॒भि सूर्यो॑ वि॒चष्टे॑ । ए॒वाहं त्वां क्षे॑त्रि॒यान्निर्ऋ॑त्या जामिशं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑त् । अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म् ॥४॥

तास् त्वा॒न्तर्ज॒रस्या द॑धामि॒ प्र यक्ष्म॑ एतु॒ निर्ऋ॑तिः परा॒चैः । ए॒वाहं त्वां क्षे॑त्रि॒यान्निर्ऋ॑त्या जामिशं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑त् । अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म् ॥५॥

अमु॑क्था॒ यक्ष्मा॑द् दुरि॒ताद॑व॒द्याद् द्रु॒हः पा॒शाद् ग्राह्या॒श्चोद॑मुक्थाः ।
ए॒वाहं त्वां क्षे॑त्रि॒यान्निर्ऋ॑त्या जामि॑शं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒
पाशा॑त् । अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे
स्ता॑म् ॥६॥

अहा॒ अरा॑ति॒मवि॑दः स्यो॒नम॑प्य॑भूर्भ॒द्रे सु॑कृ॒तस्य॑ लो॒के । ए॒वाहं त्वां
क्षे॑त्रि॒यान्निर्ऋ॑त्या जामि॑शं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑त् ।
अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथिवी उ॒भे स्ताम् ॥७॥

सूर्य॑मृ॒तं तम॑सो॒ ग्राह्या॒ अधि॑ दे॒वा मु॒ञ्चतो॑ असृ॒जन्निरेण॑सः । ए॒वाहं
त्वां क्षे॑त्रि॒यान्निर्ऋ॑त्या जामि॑शं॒साद् द्रु॒हो मु॑ञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑त् ।
अ॒ना॒गसं॒ ब्रह्म॑णा त्वा कृणोमि शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म् ॥८॥

सूक्त ११

ऋषिः—शुक्रः ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ चतुष्पदा विराड् गायत्री;
२, ३, ५ त्रिपदा परोष्णिक्; ४ पिपिलिकमध्या निचृदुष्णिक् ॥ मंत्र ५ ।

दू॒ष्या॒ दू॒षि॑रसि हे॒त्या हे॒तिर॑सि मे॒न्या मे॒निर॑सि । आ॒प्नु॒हि श्रेयां॑स॒मति॑
स॒मं क्रा॑म ॥१॥

स्र॒क्त्यो॑ऽसि प्रतिस॒रो॑ऽसि प्रत्यभि॒चर॑णोऽसि । आ॒प्नु॒हि श्रेयां॑स॒मति॑
स॒मं क्रा॑म ॥२॥

प्रति॒ तम॒भि च॑र॒ यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । आ॒प्नु॒हि श्रेयां-
स॒मति॑ स॒मं क्रा॑म ॥३॥

सू॒रिर॑सि वर्चो॒धा अ॑सि तनू॒पानो॑ऽसि । आ॒प्नु॒हि श्रेयां॑स॒मति॑ स॒मं
क्रा॑म ॥४॥

शु॒क्रो॑ऽसि भ्रा॒जो॑ऽसि॒ स्व॑रसि॒ ज्योति॑रसि । आ॒प्नु॒हि श्रेयां॑स॒मति॑
स॒मं क्रा॑म ॥५॥ [३।१]

सूक्त १२

ऋषिः—भरद्वाजः ॥ देवता—१ द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं च; २ देवाः; ३ इन्द्रः; ४ आदित्यवस्वङ्गिरसः पितरः; ५ सोम्यासः पितरः; ७ यमसादनम्, ब्रह्म ८ अग्निः ॥ छन्दः—१, ३—६ त्रिष्टुप्; २ जगती; ७—८ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ८ ।

द्यावा॑पृथि॒वी उ॒र्व१॒॑न्तरि॑क्षं॒ क्षेत्र॑स्य॒ पत्न्यु॑रुगा॒यो॒ऽद्भु॑तः । उ॒तान्तरि॑क्षमु॒रु
वात॑गोपं॒ त इ॒ह त॑प्यन्तां॒ मयि॑ त॒प्यमा॑ने ॥१॥
इ॒दं दे॑वाः शृणु॒त ये य॒ज्ञिया॒ः स्थ भ॒रद्वा॑जो॒ मह्य॑मु॒क्थानि॑ शंसति ।
पाशे॒ स ब॒द्धो दु॑रि॒ते नि यु॑ज्यतां॒ यो अ॒स्माकं॒ मन॑ इ॒दं हि॒नस्ति॑ ॥२॥
इ॒दमि॑न्द्र शृणुहि सोमप॒ यत् त्वा॑ हृ॒दा शोच॑ता॒ जोह॑वीमि । वृ॒श्चामि॒
तं कु॑लि॒शेने॑व वृ॒क्षं यो अ॒स्माकं॒ मन॑ इ॒दं हि॒नस्ति॑ ॥३॥
अ॒शी॒तिभि॑स्ति॒सृभि॑ः साम॒गेभि॑रादि॒त्येभि॒र्वसु॑भि॒रङ्गि॑रोभिः । इ॒ष्टा॒पू॒र्त-
म॑वतु नः पि॒तॄणामामुं द॑दे॒ हर॑सा॒ दैव्ये॑न ॥४॥
द्यावा॑पृथिवी॒ अनु॒ मा दी॑धीथां॒ विश्वे॑ देवा॒सो अनु॒ मा र॑भध्वम् ।
अङ्गि॑रसः॒ पित॑रः॒ सोम्या॑सः पा॒पमार्छ॑त्वपका॒मस्य॑ क॒र्ता ॥५॥
अती॑व॒ यो म॑रुतो॒ मन्य॑ते नो॒ ब्रह्म॑ वा॒ यो निन्दि॑षत् क्रि॒यमा॑णम् ।
तपूँ॑षि॒ तस्मै॑ वृजि॒नानि॑ सन्तु ब्रह्म॒द्विषं॒ द्यौर॑भि॒संत॑पाति ॥६॥
स॒प्त प्रा॒णान॒ष्टौ म॒न्यस्ताँस्ते॑ वृश्चामि॒ ब्रह्म॑णा । अ॒या॑ य॒मस्य॒ साद॑नम॒-
ग्निदू॑तो॒ अर॑ङ्कृतः ॥७॥
आ द॑धामि ते प॒दं समि॑द्धे जा॒तवे॑दसि । अ॒ग्निः शरी॑रं वेवे॒ष्ट्वसुं॒
वागपि॑ गच्छतु ॥८॥ [३।२]

—:०:—

सूक्त १३

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः; २, ३ बृहस्पति ४, ५ विश्वेदेवाः ॥ छन्दः—१—३ त्रिष्टुप् ४ अनुष्टुप्; ५ विराड् जगती ॥ मंत्र ५ ।

आयुर्दा अग्ने जरसं वृणानो घृतप्रतीको घृतपृष्ठो अग्ने । घृतं पीत्वा
मधु चारु गव्यं पितेव पुत्रानभि रक्षतादिमम् ॥१॥
परि धत्त धत्त नो वर्चसेमं जरामृत्युं कृणुत दीर्घमायुः । बृहस्पतिः
प्रायच्छद् वास एतत् सोमाय राज्ञे परिधातवा उ ॥२॥
परीदं वासो अधिथाः स्वस्तयेऽभूर्गृष्टीनामभिशस्तिपा उ । शतं च
जीव शरदः पुरूची रायश्च पोषमुपसंव्ययस्व ॥३॥
एह्यश्मानमा तिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः । कृण्वन्तु विश्वे देवा आयुष्टे
शरदः शतम् ॥४॥
यस्य ते वासः प्रथमवास्यं१ हरामस्तं त्वा विश्वेऽवन्तु देवाः । तं त्वा
भ्रातरः सुवृधा वर्धमानमनु जायन्तां बहवः सुजातम् ॥५॥

सूक्त १४

ऋषिः—चातनः ॥ देवता—अग्निभूतपतीन्द्रा मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, ३, ५, ६ अनुष्टुप्; २ भुरिगनुष्टुप्; ४ उपरिष्टाद् विराड् बृहती ॥ मंत्र ६ ।

निःसालां धृष्णुं धिषणमेकवाद्यां जिघत्स्व१म् । सर्वाश्चण्डस्य नप्त्यो१
नाशयामः सदान्वाः ॥१॥
निर्वो गोष्ठादजामसि निरक्षान्निरुपानसात् । निर्वो मगुन्द्या दुहितरो
गृहेभ्यश्चातयामहे ॥२॥
असौ यो अधराद् गृहस्तत्र सन्त्वराय्य१ः । तत्र सेदिर्न्यु१च्यतु सर्वाश्च
यातुधान्य१ः ॥३॥

भू॒तप॑ति॒र्निर॑ज॒त्विन्द्र॑श्चे॒तः स॒दान्वाः॑ । गृ॒हस्य॑ बु॒ध्न आसी॑ना॒स्ता इन्द्रो॒ वज्रे॒णाधि॑ तिष्ठतु ॥४॥

यदि॒ स्थ क्षे॑त्रि॒याणां॒ यदि॑ वा॒ पुरु॑षेषिताः । यदि॒ स्थ दस्यु॑भ्यो जा॒ता नश्य॑ते॒तः सदा॑न्वाः ॥५॥

सूक्त १५

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—प्राणः ॥ छन्दः—त्रिपाद्गायत्री ॥ मन्त्र ६ ।

यथा॒ द्यौश्च॑ पृथि॒वी च॒ न बि॑भी॒तो न रिष्य॑तः । ए॒वा मे॑ प्राण॒ मा बि॑भेः ॥१॥

यथाह॑श्च॒ रात्री॑ च॒ न बि॑भी॒तो न रिष्य॑तः । ए॒वा मे॑ प्राण॒ मा बि॑भेः ॥२॥

यथा॒ सूर्य॑श्च च॒न्द्रश्च॒ न बि॑भी॒तो न रिष्य॑तः । ए॒वा मे॑ प्राण॒ मा बि॑भेः ॥३॥

यथा॒ ब्रह्म॑ च क्ष॒त्रं च॒ न बि॑भी॒तो न रिष्य॑तः । ए॒वा मे॑ प्राण॒ मा बि॑भेः ॥४॥

यथा॑ स॒त्यं चानृ॑तं च॒ न बि॑भी॒तो न रिष्य॑तः । ए॒वा मे॑ प्राण॒ मा बि॑भेः ॥५॥

यथा॑ भू॒तं च॒ भव्यं॑ च॒ न बि॑भी॒तो न रिष्य॑तः । ए॒वा मे॑ प्राण॒ मा बि॑भे. ॥६॥ (३।५)

सूक्त १६

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवताः—१ प्राणापानौ; २ द्यावापृथिवी; ३ सूर्यः; ४ अग्निः; ५ विश्वम्भरः ॥ छन्दः—१, ३ एकपदाऽऽसुरी त्रिष्टुप्; २ एकपदाऽऽसुर्युष्णिक्; ४, ५ द्विपदाऽऽसुरी गायत्री ॥ मंत्र ५ ।

प्राणा॑पानौ मृ॒त्योर्मा॑ पा॒तं स्वाहा॑ ॥१॥

द्यावा॑पृथि॒वी उप॑श्रुत्या मा पा॒तं स्वाहा॑ ॥२ ॥

सूर्य चक्षु॑षा मा पाहि॒ स्वाहा ॥३॥
अग्ने॑ वैश्वानर॒ विश्वै॑र्मा दे॒वैः पा॑हि॒ स्वाहा॑ ॥४॥
विश्वं॑भर॒ विश्वे॑न मा॒ भर॑सा पाहि॒ स्वाहा॑ ॥५॥ [३।६]

सूक्त १७

ऋषिः —ब्रह्मा ॥ देवता – ओजःप्रभृतीनि ॥ छन्दः—१—६ एकपदाऽऽसुरी त्रिष्टुप्; ७ आसुर्युष्णिक् ॥ मंत्र ७ ।

ओजो॒ऽस्योजो॑ मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥१॥
सहो॑ऽसि॒ सहो॑ मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥२॥
बल॑मसि॒ बलं॑ मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥३॥
आयु॑र॒स्यायु॑र्मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥४॥
श्रोत्र॑मसि॒ श्रोत्रं॑ मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥५॥
चक्षु॑रसि॒ चक्षु॑र्मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥६॥
प॒रि॒पाण॑मसि प॒रि॒पाणं॑ मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥७॥ (३।६)

सूक्त १८

ऋषिः —चातनः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—द्विपदा साम्नी बृहती ॥ मंत्र ५ ।

भ्रा॒तृ॒व्य॒क्षय॑णमसि भ्रातृव्य॒चात॑नं मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥१॥
स॒प॒त्न॒क्षय॑णमसि सपत्न॒चात॑नं मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥२॥
अ॒रा॒य॒क्षय॑णमस्यराय॒चात॑नं मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥३॥
पि॒शा॒च॒क्षय॑णमसि पिशाच॒चात॑नं मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥४॥
स॒दा॒न्वा॒क्षय॑णमसि सदान्वा॒चात॑नं मे दा॒ः स्वाहा॑ ॥५॥ (४।१)

सूक्त १९

ऋषिः – अथर्वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१—४ निचृद् विषमा त्रिपाद्गायत्री; भुरिग् विषमा त्रिपाद्गायत्री ॥ मंत्र ५ ।

अग्ने॒ यत् ते॒ तप॒स्तेन॒ तं प्रति॑ तप॒ यो॒३॒स्मान् द्वे॑ष्टि॒ यं व॒यं
द्वि॒ष्मः ॥१॥

अग्ने यत् ते हरस्तेन तं प्रति हर यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२॥

अग्ने यत् तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥३॥

अग्ने यत् ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥४॥

अग्ने यत् ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥५॥ (४।४)

सूक्त २०

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—वायुः ।। छन्दः—१—४ निचृद् विषमा त्रिपाद्गायत्री; ५ भुरिग् विषमा त्रिपाद्गायत्री ।। मंत्र ५ ।

वायो यत् ते तपस्तेन तं प्रति तप यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥१॥

वायो यत् ते हरस्तेन तं प्रति हर यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२॥

वायो यत् तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥३॥

वायो यत् ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥४॥

वायो यत् ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥५॥ (४।४)

सूक्त २१

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—सूर्यः ।। छन्दः—१—४ निचृद् विषमा त्रिपाद्गायत्री; भुरिग् विषमा त्रिपाद्गायत्री ।। मंत्र ५ ।

सूर्य यत् ते तपस्तेन तं प्रति तप यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥१॥

सूर्य यत् ते हरस्तेन तं प्रति हर यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२॥
सूर्य यत् तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥३॥
सूर्य यत् ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥४॥
सूर्य यत् ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥५॥ (४।४)

सूक्त २२

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—चन्द्रः ॥ छन्द—१–४ निचृद् विषमा त्रिपाद्गायत्री; ५ भुरिग् विषमा त्रिपाद्गायत्री ॥ मंत्र ५ ।

चन्द्र यत् ते तपस्तेन तं प्रति तप यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥१॥
चन्द्र यत् ते हरस्तेन तं प्रति हर यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२॥
चन्द्र यत् तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥३॥
चन्द्र यत् ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥४॥
चन्द्र यत् ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः॥५॥ (४।५)

सूक्त २३

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—आपः ॥ छन्दः—१–४ समविषमा त्रिपाद्गायत्री; ५ स्वराड् विषमा त्रिपाद्गायत्री ॥ मंत्र ५

आपो यद् वस्तपस्तेन तं प्रति तपत यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥१॥

आपो यद् वो हरस्तेन तं प्रति हरत यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं
द्विष्मः ॥२॥

आपो यद् वोऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्चत यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं
द्विष्मः ॥३॥

आपो यद् वः शोचिस्तेन तं प्रति शोचत यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं
द्विष्मः ॥४॥

आपो यद् वस्तेजस्तेन तमतेजसं कृणुत यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं
द्विष्म ॥५॥ [४।६]

सूक्त २४

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आयुः ॥ छन्दः—१, २, पुरउष्णिक् पंक्तिः; ३, ४ पुरोदेवत्या पंक्तिः; ५ चतुष्पदा बृहती; ६–८ भुरिक् चतुष्पदा बृहती । मंत्र ८ ।

शेरभक शेरभ पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः । यस्य स्थ
तमत्त यो वः प्राहैत् तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥१॥

शेवृधक शेवृध पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः । यस्य स्थ
तमत्त यो वः प्राहैत् तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२॥

म्रोकानुम्रोक पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः । यस्य स्थ
तमत्त यो वः प्राहैत् तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥३॥

सर्पानुसर्प पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः । यस्य स्थ
तमत्त यो वः प्राहैत् तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥४॥

जूर्णि पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनीः । यस्य स्थ तमत्त
यो वः प्राहैत् तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥५॥

उपब्दे पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनीः । यस्य स्थ तमत्त
यो वः प्राहैत तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥६॥

अर्जु॑नि॒ पुन॑र्वो यन्तु या॒तव॒ः पुन॑र्हे॒तिः कि॑मीदिनीः । यस्य॒ स्थ तम॑त्त॒ यो व॒ः प्राहै॒त् तम॑त्त॒ स्वा मा॒ंसान्य॑त्त ॥७॥

भरू॑जि॒ पुन॑र्वो यन्तु या॒तव॒ः पुन॑र्हे॒तिः कि॑मीदिनीः । यस्य॒ स्थ तम॑त्त॒ यो व॒ः प्राहै॒त् तम॑त्त॒ स्वा मा॒ंसान्य॑त्त ॥८॥ [४।७]

सूक्त २५

ऋषिः—चातनः ॥ देवता—पृश्निपर्णी ॥ छन्दः—१-३, ५ अनुष्टुप्; ४ भुरिगनुष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

शं नो॑ दे॒वी पृ॑श्निप॒र्ण्यशं॑ निर्ऋ॑त्या अकः । उ॒ग्रा हि क॑ण्व॒जम्भ॑नी॒ ताम॑भक्षि॒ सह॑स्वतीम् ॥१॥

सह॑माने॒यं प्र॑थ॒मा पृ॒श्निप॒र्ण्य॑जायत । तया॒हं दु॒र्णाम्नां॒ शिरो॑ वृ॒श्चामि श॒कुने॑रिव ॥२॥

अ॒राय॑मसृ॒क्पावा॑नं॒ यश्च॑ स्फा॒तिं जिही॑र्षति । ग॒र्भा॒दं कण्वं॑ नाशय॒ पृश्नि॑पर्णि॒ सह॑स्व च ॥३॥

गि॒रिमे॑नाँ॒ आ वे॑शय॒ कण्वा॑ञ्जीवित॒योप॑नान् । तांस्त्वं दे॑वि पृश्नि॑पर्ण्य॒ग्निरि॑वानु॒दह॑न्निहि ॥४॥

परा॑च एना॒न् प्र णु॑द॒ कण्वा॑ञ्जीवित॒योप॑नान् । तमां॑सि॒ यत्र॒ गच्छ॑न्ति॒ तत् क्र॒व्यादो॑ अजीगमम् ॥५॥ [४।८]

सूक्त २६

ऋषिः—सविता ॥ देवताः—पशवः ॥ छन्दः—१, २ त्रिष्टुप्; ३ उपरिष्टाद् विराड् बृहती; ४ भुरिगनुष्टुप्; ५ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

एह य॑न्तु प॒शवो॒ ये प॑रे॒युर्वा॒युर्येषां॑ सहचा॒रं जु॒जोष॑ । त्वष्टा॒ येषां॑ रूप॒धेया॑नि॒ वेदा॒स्मिन् तान् गो॒ष्ठे स॑वि॒ता नि य॑च्छतु ॥१॥

इ॒मं गो॒ष्ठं प॒शव॒ः सं स्र॑वन्तु॒ बृह॒स्पति॒रा न॑यतु प्रजा॒नन् । सि॒नी॒वा॒ली न॑य॒त्वाग्र॑मेषामाज॒ग्मुषो॑ अनुमते॒ नि य॑च्छ ॥२॥

सं सं स्र॑वन्तु प॒शव॒ः समश्वा॒ः सम॒ु पूरु॑षाः । सं धा॒न्य∫स्य॒ या स्फा॒तिः
सं᳚स्रा॒व्ये∫ण ह॒विषा॑ जुहो॑मि ॥३॥
सं सि॑ञ्चामि॒ गवां॑ क्षी॒रं समाज्ये॑न॒ बल॒ं रसं॑म् । संसि॑क्ता अ॒स्माकं᳚
वी॒रा ध्रु॒वा गावो॒ मयि॒ गोप॑तौ ॥४॥
आ ह॑रामि॒ गवां᳚ क्षी॒रमाहा॑र्षं धा॒न्य१॒ं रसं॑म् । आहृ॑ता अ॒स्माकं᳚ वी॒रा
आ पत्नी॑रि॒दमस्त॑कम् ॥५॥ [४।६]

सूक्त २७

ऋषिः—कपिञ्जलः । देवता—१–५ ओषधिः; ६ रुद्रः; ७ इन्द्र ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ७ ।

नेच्छत्रु॒ः प्राशं᳚ जया॑ति॒ सह॑माना॒भिभूर॑सि । प्राश॒ं प्रति॑प्राशो जह्यर॒सान्
कृ॑ण्वोषधे ॥१॥
सु॒प॒र्णस्त्वान्व॑विन्दत् सूक॒रस्त्वा॑खनन्न॒सा । प्राश॒ं प्रति॑प्राशो जह्यर॒सान्
कृ॑ण्वोषधे ॥२॥
इन्द्रो॑ ह चक्रे त्वा बा॒हावसु॑रेभ्य॒ स्तरी॑तवे । प्राश॒ं प्रति॑प्राशो जह्यर॒सान्
कृ॑ण्वोषधे ॥३॥
पा॒टामिन्द्रो॒ व्या∫श्ना॒दसु॑रेभ्य॒ स्तरी॑तवे । प्राश॒ं प्रति॑प्राशो जह्यर॒सान्
कृ॑ण्वोषधे ॥४॥
त॒याहं शत्रू॑न्त्साक्ष॒ इन्द्र॑ः सालावृ॒काँ इ॑व । प्राश॒ं प्रति॑प्राशो जह्यर॒सान्
कृ॑ण्वोषधे ॥५॥
रुद्र॒ जला॑षभेषज॒ नील॑शिखण्ड॒ कर्म॑कृत् । प्राश॒ं प्रति॑प्राशो जह्यर॒सान्
कृ॑ण्वोषधे ॥६॥
तस्य॒ प्राश॒ं त्वं ज॑हि॒ यो न॑ इन्द्राभि॒दास॑ति । अधि॑ नो ब्रूहि॒ शक्ति॑भिः
प्राशि मामुत्त॑रं कृधि ॥७॥ [५।१]

सूक्त २८

ऋषिः—शम्भुः ॥ देवता —१, ३ जरिमा, आयुः; २ मित्रावरुणौ; ४, ५ द्यावापृथिव्यादयः ॥ छन्दः—१ जगती; २-४ त्रिष्टुप्; ५ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

तुभ्य॑मे॒व ज॑रिमन् वर्ध॑ताम॒यं मेमम॒न्ये मृ॒त्यवो॑ हिंसिषुः श॒तं ये। मा॒तेव॑
पु॒त्रं प्रम॑ना उ॒पस्थे॑ मि॒त्र ए॑नं मि॒त्रिया॑त् पा॒त्वंह॑सः ॥१॥
मि॒त्र ए॑नं॒ वरु॑णो वा रि॒शादा॑ ज॒रामृ॑त्युं कृणुतां संविदा॒नौ। तद॒ग्निर्होता॑
व॒युना॑नि वि॒द्वान् विश्वा॑ दे॒वानां॒ जनि॑मा विवक्ति ॥२॥
त्वमी॑शिषे पशू॒नां पार्थि॑वानां॒ ये जा॒ता उ॒त वा॒ ये ज॒नित्रा॑ः। मेमं प्रा॒णो
हा॑सी॒न्मो अ॑पा॒नो मेमं मि॒त्रा व॑धिषु॒र्मो अ॒मित्रा॑ः ॥३॥
द्यौष्ट्वा॑ पि॒ता पृ॑थि॒वी मा॒ता ज॒रामृ॑त्युं कृणुतां संविदा॒ने। यथा॒ जीवा
अदि॑तेरु॒पस्थे॑ प्राणापा॒नाभ्या॑ं गु॑पि॒तः श॒तं हिमा॑ः ॥४॥
इ॒मम॑ग्न॒ आयु॑षे॒ वर्च॑से नय प्रि॒यं रेतो॑ वरुण मित्र राजन्। मा॒तेवा॑स्मा
अदिते॒ शर्म॑ यच्छ॒ विश्वे॑ देवा ज॒रद॑ष्टि॒र्यथास॑त् ॥५॥ [५।२]

सूक्त २९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१ अग्निः, सूर्यः, बृहस्पतिः; २ जातवेदाः, त्वष्टा, सविता; ३, ७ इन्द्रः, ४,५ द्यावापृथिवी, विश्वे देवाः, आपः, ६ अश्विनौ । छन्दः—१ अनुष्टुप्; २,३,५–७ त्रिष्टुप्; ४ पराबृहती निचृत्प्रस्तारपंक्तिः । मन्त्र ७ ।

पार्थि॑वस्य॒ रसे॑ देवा॒ भग॑स्य त॒न्वो॒३॒ बले॑। आ॒यु॒ष्य॑म॒स्मा अ॒ग्निः
सूर्यो॒ वर्च॒ आ धा॒द् बृह॒स्पति॑ः ॥१॥
आयु॑र॒स्मै धे॑हि जातवेदः प्र॒जां त्व॑ष्टरधि॒निधे॑ह्य॒स्मै। रा॒यस्पोष॑ं
सवित॒रा सु॑वा॒स्मै श॒तं जीवा॑ति श॒रद॒स्तवा॒यम् ॥२॥
आ॒शीर्ण॒ ऊर्ज॑मु॒त सौप्र॑जा॒स्त्वं दक्ष॑ं धत्तं॒ द्रवि॑णं॒ सचे॑तसौ। जय॒ं क्षेत्रा॑णि॒
सह॑सा॒यमि॑न्द्र कृ॒ण्वा॒नो अ॒न्यानध॑रान्त्स॒पत्ना॑न् ॥३॥

इन्द्रे॑ण द॒त्तो वरु॑णेन शि॒ष्टो म॒रुद्भि॑रु॒ग्रः प्रहि॑तो न॒ आग॑न् । ए॒ष वां॑
द्यावापृथिवी उ॒पस्थे॒ मा क्षु॑ध॒न्मा तृ॑षत् ॥४॥

ऊर्ज॑मस्मा ऊर्जस्वती ध॒त्तं पयो॑ अस्मै पयस्वती धत्ताम् । ऊर्ज॑म॒स्मै
द्यावा॑पृथि॒वी अ॑धाता॒ं विश्वे॑ दे॒वा म॒रुत॒ ऊर्ज॒माप॑ः ॥५॥

शि॒वाभि॑ष्टे॒ हृद॑यं त॒र्पया॑म्यनमी॒वो मो॑दिषीष्ठाः सु॒वर्चा॑ः । स॒वा॒सिनौ॑
पिबतां म॒न्थमे॒तम॒श्विनो॑ रू॒पं प॑रि॒धाय॑ मा॒याम् ॥६॥

इन्द्र॑ ए॒तां स॑सृजे वि॒द्धो अग्र॑ ऊ॒र्जां स्व॒धाम॒जरा॒ं सा त॑ ए॒षा । त॒या त्वं
जीव॑ श॒रद॑ः सु॒वर्चा॒ मा त॒ आ सु॑स्रोद् भि॒षज॑स्ते अक्रन् ॥७॥ [५।३]

सूक्त ३०

ऋषिः—प्रजापतिः ॥ देवता—१ मनः; २ अश्विनौ; ३, ४ औषधिः; ५ दम्पती ।
छन्दः—१ पथ्या पंक्तिः; २, ४, ५ अनुष्टुप्; ३ भुरिगनुष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

यथे॒दं भूम्या॒ अधि॒ तृण॒ं वातो॑ मथा॒यति॑ । ए॒वा म॑थ्नामि ते॒ मनो॒
यथा॒ मां का॒मिन्यसो॒ यथा॒ मन्नाप॑गा अस॑ः ॥१॥

सं चेन्नया॑थो अश्विना का॒मिना॒ सं च॒ वक्ष॑थः । सं वा॒ं भगा॑सो अग्मत॒
सं चि॒त्तानि॒ समु॑ व्र॒ता ॥२॥

यत् सु॑प॒र्णा वि॑व॒त्तवो॑ अनमी॒वा वि॑व॒त्ताव॑ः । तत्र॑ मे गच्छता॒द्धवं॑
श॒ल्यइ॑व॒ कुल्म॑ल॒ं यथा॑ ॥३॥

यद॒न्त॑र॒ं तद् बाह्य॒ं यद् बाह्य॒ं तद॒न्त॑रम् । क॒न्या॑नां वि॒श्वरू॑पाणा॒ं मनो॑
गृभायौषधे ॥४॥

एयम॑ग॒न् पति॑कामा॒ जनि॑कामो॒ऽहमाग॑मम् । अश्व॒ः कनि॑क्रद॒द् यथा॒
भगे॑ना॒हं स॒हाग॑मम् ॥५॥ [५।४]

सूक्त ३१

ऋषिः—काण्वः ।। देवताः—१ मही; २–५ क्रिमिजम्भनम् ।। छन्दः—१ अनुष्टुप्
२,४ उपरिष्टाद् विराड् बृहती; ३, ५ आर्षी त्रिष्टुप् ।। मंत्र ५ ।

इन्द्रस्य या मही दृषत् क्रिमेर्विश्वस्य तर्हणी । तया पिनष्मि सं क्रिमीन्
दृषदा खल्वाँ इव ।।१।।
दृष्टमदृष्टमतृहमथो कुरूरुमतृहम् । अल्गण्डून्त्सर्वाञ्छलुनान् क्रिमीन्
वचसा जम्भयामसि ।।२।।
अल्गण्डून् हन्मि महता वधेन दूना अदूना अरसा अभूवन् । शिष्टानशिष्टान् नि तिरामि वाचा यथा क्रिमीणां नकिरुच्छिषातै ।।३।।
अन्वान्त्र्यं शीर्षण्य१मथो पार्ष्टेयं क्रिमीन् । अवस्कवं व्यध्वरं क्रिमीन्
वचसा जम्भयामसि ।।४।।
ये क्रिमयः पर्वतेषु वनेष्वोषधीषु पशुष्वप्स्व१न्तः । ये अस्माकं
तन्व१माविविशुः सर्वं तद्धन्मि जनिम क्रिमीणाम् ।।५।। [५।५]

सूक्त ३२

ऋषिः—काण्वः ।। देवता—आदित्यः ।। छन्दः—१ त्रिपाद्भुरिग्गायत्री; २-५
अनुष्टुप्; ६ चतुष्पान्निचृदुष्णिक् ।। मंत्र ६ ।

उद्यन्नादित्यः क्रिमीन् हन्तु निम्रोचन् हन्तु रश्मिभिः । ये अन्तः
क्रिमयो गवि ।।१।।
विश्वरूपं चतुरक्षं क्रिमिं सारङ्गमर्जुनम् । शृणाम्यस्य पृष्टीरपि वृश्चामि
यच्छिरः ।।२।।
अत्रिवद् वः क्रिमयो हन्मि कण्ववज्जमदग्निवत् । अगस्त्यस्य ब्रह्मणा
सं पिनष्म्यहं क्रिमीन् ।।३।।
हतो राजा क्रिमीणामुतैषां स्थपतिर्हतः । हतो हतमाता क्रिमिर्हतभ्राता
हतस्वसा ।।४।।

ह॒तासो॑ अस्य वे॒शसो॑ ह॒तासः॒ परि॑वेशसः । अथो॒ ये क्षु॑ल्ल॒काइ॑व॒ सर्वे॒
ते क्रिम॑यो ह॒ताः ॥५॥
प्र ते॑ शृणामि॒ शृङ्गे॒ याभ्यां॑ वितु॒दायसि॑ । भि॒नद्मि॑ ते कु॒षुम्भं॒ यस्ते॑
विषधान॑ः ॥६॥ [६।१]

सूक्त ३३

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—यक्ष्मविवर्हणम् ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ ककुम्मत्यनुष्टुप् ४ चतुष्पदा भुरिगुष्णिक् ५ उपरिष्ठाद् विराड् बृहती; ६ उष्णिग्गर्भा निचृदनुष्टुप्; ७ पथ्या पंक्ति ॥ मंत्र ७ ।

अ॒क्षीभ्यां॑ ते॒ नासि॑काभ्यां॒ कर्णा॑भ्यां॒ छुबु॑का॒दधि॑ । यक्ष्मं॑ शीर्ष॒ण्यं॑
म॒स्तिष्का॑ज्जि॒ह्वाया॒ वि वृ॑हामि ते ॥१॥
ग्री॒वाभ्य॑स्त उ॒ष्णिहा॑भ्यः॒ कीक॑साभ्यो अनू॒क्या॑त् । यक्ष्मं॑ दोष॒ण्य१॒मंसा॑भ्यां बा॒हुभ्यां॒ वि वृ॑हामि ते ॥२॥
हृद॑यात् ते॒ परि॑ क्लो॒म्नो हली॑क्ष्णात् पा॒र्श्वाभ्या॑म् । यक्ष्मं॒ मत॑स्नाभ्यां
प्ली॒ह्नो य॒क्नस्ते॒ वि वृ॑हामसि ॥३॥
आ॒न्त्रेभ्य॑स्ते॒ गुदा॑भ्यो वनि॒ष्ठोरु॒द॒रादधि॑ । यक्ष्मं॑ कु॒क्षिभ्यां॑ प्ला॒शेर्नाभ्या॒
वि वृ॑हामि ते ॥४॥
ऊ॒रुभ्यां॑ ते अष्ठी॒वद्भ्यां॒ पार्ष्णि॑भ्यां॒ प्रप॑दाभ्याम् । यक्ष्मं॑ भस॒द्यं१॒
श्रोणि॑भ्यां भास॑दं॒ भंस॑सो॒ वि वृ॑हामि ते ॥५॥
अ॒स्थिभ्य॑स्ते म॒ज्जभ्यः॒ स्नाव॑भ्यो ध॒मनि॑भ्यः । यक्ष्मं॑ पा॒णिभ्या॑म॒ङ्गुलि॑भ्यो न॒खेभ्यो॒ वि वृ॑हामि ते ॥६॥
अङ्गे॑अङ्गे॒ लोम्नि॑लोम्नि॒ यस्ते॒ पर्व॑णिपर्वणि । यक्ष्मं॑ त्वच॒स्यं॑ ते व॒यं
क॒श्यप॑स्य वीव॒र्हेण॒ विष्व॑ञ्चं॒ वि वृ॑हामसि ॥७॥ [६।२]

सूक्त ३४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१ पशुपतिः; २ देवाः; ३ अग्निर्विश्वकर्मा; ४ वायुः प्रजापतिः; ५ आशीः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

य ईशे॑ पशु॒पतिः॑ पशू॒नां चतु॑ष्पदामु॒त यो द्वि॒पदा॑म् । निष्क्री॑तः॒ स
य॒ज्ञियं॑ भा॒गमे॑तु रा॒यस्पोषा॒ यज॑मानं सचन्ताम् ॥१॥
प्र॒मु॒ञ्चन्तो॒ भुव॑नस्य॒ रेतो॑ गा॒तुं ध॑त्त॒ यज॑मानाय दे॒वाः । उ॒पाकृ॑तं
शशमा॒नं यदस्था॑त् प्रि॒यं दे॒वाना॒मप्ये॑तु॒ पाथः॑ ॥२॥
ये व॒ध्यमा॑न॒मनु॒ दीध्या॑ना अ॒न्वैक्ष॑न्त॒ मन॑सा॒ चक्षु॑षा च । अ॒ग्निष्टानग्रे॒
प्र मु॑मोक्तु दे॒वो वि॒श्वक॑र्मा प्र॒जया॑ संररा॒णः ॥३॥
ये ग्रा॒म्याः प॒शवो॑ वि॒श्वरू॑पा॒ विरू॑पाः॒ सन्तो॑ बहु॒धैक॑रूपाः । वा॒युष्टानग्रे॒
प्र मु॑मोक्तु दे॒वः प्र॒जाप॑तिः प्र॒जया॑ संररा॒णः ॥४॥
प्र॒जा॒नन्तः॒ प्रति॑ गृह्णन्तु॒ पूर्वे॑ प्रा॒णमङ्गे॑भ्यः॒ पर्या॒चर॑न्तम् । दिवं॑ गच्छ॒
प्रति॑ तिष्ठा॒ शरी॑रैः स्व॒र्गं या॑हि प॒थिभि॑र्देव॒यानैः॑ ॥५॥ [६।३]

सूक्त ३५

ऋषिः—अङ्गिराः ॥ देवता—विश्वकर्मा ॥ छन्दः—१ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप्; २,३ त्रिष्टुप्; ४,५ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

ये भ॒क्षय॑न्तो॒ न वसू॑न्यानृ॒धुर्या॑न॒ग्नयो॑ अ॒न्वत॑प्यन्त॒ धिष्ण्याः॑ । या
तेषा॑मव॒या दुरि॑ष्टिः॒ स्वि॑ष्टिं न॒स्तां कृ॑णवद् वि॒श्वक॑र्मा ॥१॥
य॒ज्ञप॑ति॒मृष॑य॒ एन॑साहु॒र्निर्भ॑क्तं प्र॒जा अ॑नुत॒प्यमा॑नम् । म॒थ॒व्या॑न्त्स्तो॒-
कानप॒ यान् र॒राध॒ सं न॒ष्टेभिः॑ सृजतु वि॒श्वक॑र्मा ॥२॥
अ॒दान्यान्त्सो॑म॒पान् मन्य॑मानो य॒ज्ञस्य॑ वि॒द्वान्त्स॑म॒ये न धीरः॑ ।
यदेन॑श्चकृ॒वान् ब॒द्ध ए॒ष तं वि॑श्वकर्म॒न् प्र मु॑ञ्चा स्व॒स्तये॑ ॥३॥

अ॒दान्यान्त्सो॑मपा॒न् मन्य॑मानो य॒ज्ञस्य॑ वि॒द्वान्त्स॑म॒ये न धीरः॑
यदेन॑श्चकृ॒वन्ना ब॒द्ध ए॒ष तं वि॑श्वकर्म॒न् प्र मु॑ञ्चा स्व॒स्तये॑ ॥३॥
घो॒रा ऋष॑यो॒ नमो॑ अस्त्वेभ्य॒श्चक्षु॒र्यदे॑षां॒ मन॑सश्च स॒त्यम् । बृह॒स्पत॑ये
महि॑ष द्यु॒मन्नमो॒ विश्व॑कर्म॒न् नम॑स्ते पा॒ह्य१॒स्मान् ॥४॥
य॒ज्ञस्य॒ चक्षुः॒ प्रभृ॑ति॒र्मुखं॑ च वा॒चा श्रोत्रे॑ण॒ मन॑सा जुहोमि । इ॒मं य॒ज्ञं
वित॑तं वि॒श्वक॑र्मणा दे॒वा य॑न्तु सुमन॒स्यमा॑नाः ॥५॥ [६।४]

सूक्त ३६

ऋषिः—पतिवेदनः ॥ देवता—१ अग्निः, २ सोमः, अर्यमा, धाता; ३ अग्नीषोमौ; ४ इन्द्रः; ५ सूर्यः; ६ धनपतिः; ७ हिरण्यम्, भगः; ८ ओषधिः ॥ छन्दः—१ भुरिक् त्रिष्टुप्; २, ५-७ अनुष्टुप्; ३,४ त्रिष्टुप्; ८ निचृत् पुरउष्णिक् ॥ मंत्र ८ ।

आ नो॑ अग्ने सुम॒तिं सं॑भ॒लो ग॑मेदि॒मां कु॒मारीं स॒ह नो॒ भगे॑न ।
जु॒ष्टा व॒रेषु॒ सम॑नेषु व॒ल्गुरो॒षं पत्या॒ सौभ॑गमस्त्व॒स्यै ॥१॥
सोम॑जुष्टं ब्रह्म॑जुष्टमर्य॒म्णा संभृ॑त॒ं भग॑म् । धा॒तुर्दे॒वस्य॑ स॒त्येन॑ कृ॒णोमि॑
पति॒वेद॑नम् ॥२॥
इ॒यम॑ग्ने॒ नारी॒ पतिं॑ विदे॑ष्ट॒ सोमो॒ हि राजा॑ सु॒भगां॑ कृ॒णोति॑ । सु॒वा॑ना
पु॒त्रान् महि॑षी भवाति ग॒त्वा पतिं॑ सु॒भगा॒ वि रा॑जतु ॥३॥
यथा॑ख॒रो म॑घवं॒श्चारु॑रे॒ष प्रि॒यो मृ॒गाणां॑ सु॒षदा॑ ब॒भूव॑ । ए॒वा भग॑स्य
जु॒ष्टेयम॑स्तु॒ नारी॒ सम्प्रि॑या॒ पत्यावि॑राधयन्ती ॥४॥
भग॑स्य॒ नाव॒मा रो॑ह पू॒र्णामनु॑पदस्वतीम् । तयो॑प॒प्रता॑रय॒ यो व॒रः
प्र॑तिका॒म्य॑ः ॥५॥

आ क्रन्दय धनपते वरमामनसं कृणु । सर्वं प्रदक्षिणं कृणु यो वरः प्रतिकाम्यः ॥६॥

इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः । एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे ॥७॥

आ ते नयतु सविता नयतु पतिर्यः प्रतिकाम्यः । त्वमस्यै धेह्योषधे ॥८॥ [६।५]

॥ इति द्वितीयं काण्डम् समाप्तम् ॥

* ॐ *

अथर्ववेद-संहिता

अथ तृतीयं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१ अग्निः; २ मरुतः; ३—६ इन्द्रः ॥ छन्दः—१, ४ त्रिष्टुप्; २ विराड्गर्भा भुरिक् त्रिष्टुप्, ३, ६ अनुष्टुप्, ५ विराट् पुरउष्णिक् ।मंत्र ६ ।

अग्निर्नः शत्रून् प्रत्येतु विद्वान् प्रतिदहन्नभिशस्तिमरातिम् । स सेनां मोहयतु परेषां निर्हस्तांश्च कृणवज्जातवेदाः ॥१॥

यूयमुग्रा मरुत ईदृशे स्थाभि प्रेत मृणत सहध्वम् । अमीमृणन् वसवो नाथिता इमे अग्निर्ह्येषां दूतः प्रत्येतु विद्वान् ॥२॥

अमित्रसेनां मघवन्नस्माञ्छत्रूयतीमभि । युवं तानिन्द्र वृत्रहन्नग्निश्च दहतं प्रति ॥३॥

प्रसूत इन्द्र प्रवता हरिभ्यां प्र ते वज्रः प्रमृणन्नेतु शत्रून् । जहि प्रतीचो अनूचः पराचो विष्वक् सत्यं कृणुहि चित्तमेषाम् ॥४॥

इन्द्र सेनां मोहयामित्राणाम् । अग्नेर्वातस्य ध्राज्या तान् विषूचो वि नाशय ॥५॥

इन्द्रः सेनां मोहयतु मरुतो घ्नन्त्वोजसा । चक्षूंष्यग्निरा दत्तां पुनरेतु पराजिता ॥६॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१, २ अग्निः, ३, ४ इन्द्रः, ५ द्यौः, ६ मरुतः ॥ छन्दः—१, ५, ६ त्रिष्टुप्, २–४ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

अग्निर्नो दूतः प्रत्येतु विद्वान् प्रतिदहन्नभिशस्तिमरातिम् । स चित्तानि मोहयतु परेषां निर्हस्तांश्च कृणवज्जातवेदाः ॥१॥

अ॒यम॒ग्निर॑मूमुह॒द् यानि॑ चि॒त्तानि॑ वो हृ॒दि । वि वो॑ धम॒त्वोक॑सः॒ प्र वो॑ धमतु स॒र्वत॑ः ॥२॥

इन्द्र॑ चि॒त्तानि॑ मो॒हय॑न्न॒र्वाङाकू॑त्या चर । अ॒ग्नेर्वात॑स्य॒ ध्राज्या॒ तान् विषू॑चो॒ वि ना॑शय ॥३॥

व्या॑कूतय एषामि॒ताथो॑ चि॒त्तानि॑ मुह्यत । अथो॒ यद॒द्यैषां॑ हृ॒दि तदे॑षां॒ परि॒ निर्ज॑हि ॥४॥

अ॒मीषां॑ चि॒त्तानि॑ प्रतिमो॒हय॑न्ती गृहा॒णाङ्गा॑न्यप्वे॒ परे॑हि । अ॒भि प्रेहि॒ निर्द॑ह हृ॒त्सु शोकै॒र्ग्राह्या॒मित्रां॒स्तम॑सा विध्य॒ शत्रू॑न् ॥५॥

अ॒सौ या सेना॑ मरुतः॒ परे॑षाम॒स्मानैत्य॒भ्योज॑सा॒ स्पर्ध॑माना । तां वि॑ध्यत॒ तम॒साप॑व्रतेन॒ यथै॑षाम॒न्यो अ॒न्यं न जा॒नात् ॥६॥ [१।२]

सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ।। छन्दः—१, २, ४ त्रिष्टुप्;
३ चतुष्पदा भुरिक् पंक्तिः, ५, ६ अनुष्टुप् ।। मंत्र ६ ।

अ॒चि॑क्रदत् स्व॒पा इ॒ह भु॑वदग्ने॒ व्य॑चस्व॒ रोद॑सी उरू॒ची । यु॒ञ्जन्तु॑ त्वा म॒रुतो॑ वि॒श्ववे॑दस॒ आमुं न॑य॒ नम॑सा रा॒तह॑व्यम् ॥१॥

दू॒रे चि॒त् सन्त॑मरु॒षास॒ इन्द्र॒मा च्या॑वयन्तु स॒ख्याय॒ विप्र॑म् । यद् गा॑य॒त्रीं बृ॑ह॒तीम॒र्कम॑स्मै सौत्राम॒ण्या दधृ॑षन्त दे॒वाः ॥२॥

अ॒द्भ्यस्त्वा॒ राजा॒ वरु॑णो ह्वयतु॒ सोम॑स्त्वा ह्वयतु॒ पर्व॑तेभ्यः । इन्द्र॑स्त्वा ह्वयतु वि॒ड्भ्य आभ्यः॑ श्ये॒नो भू॒त्वा विश॒ आ प॑ते॒माः ॥३॥

श्ये॒नो ह॒व्यं न॑य॒त्वा पर॑स्मादन्यक्षे॒त्रे अप॑रुद्धं॒ चर॑न्तम् । अ॒श्विना॒ पन्थां॑ कृणुतां सु॒ग त॑ इ॒मं स॑जाता अभि॒संवि॑शध्वम् ॥४॥

ह्वय॑न्तु त्वा प्रतिज॒नाः प्रति॑ मि॒त्रा अ॑वृषत । इ॒न्द्रा॒ग्नी विश्वे॑ दे॒वास्ते॑ वि॒शि क्षेम॑मदीधरन् ॥५॥

यस्ते॒ हवं॑ वि॒वद॑त् सजा॒तो यश्च॒ निष्ट्य॑ः। अपा॑ञ्चमिन्द्र॒ तं
कृत्वाथे॒ममि॒हाव॑ गमय ॥६॥ [१।३]

सूक्त ४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ जगती; २, ३, ६, ७ त्रिष्टुप्, ४, ५ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ७ ॥

आ त्वा॑ गन् रा॒ष्ट्रं स॒ह वर्च॒सोदि॑हि॒ प्राङ् वि॒शां पति॑रेक॒राट् त्वं वि
रा॑ज। सर्वा॑स्त्वा राजन् प्र॒दिशो॑ ह्वयन्तूप॒सद्यो॑ नम॒स्यो॑ऽभवे॒ह ॥१॥
त्वां विशो॑ वृणतां रा॒ज्या॑ऽय॒ त्वामि॒माः प्र॒दिशः॒ पञ्च॑ दे॒वीः। वर्ष्म॑न्
रा॒ष्ट्रस्य॑ क॒कुदि॑ श्रयस्व॒ ततो॑ न उ॒ग्रो वि भ॑जा॒ वसू॑नि ॥२॥
अच्छ॑ त्वा यन्तु ह॒विनः॑ सजा॒ता अ॒ग्निर्दू॒तो अ॑जि॒रः सं च॑रातै।
जा॒याः पु॒त्राः सु॒मन॑सो भवन्तु ब॒हुं ब॒लिं प्रति॑ पश्यासा उ॒ग्रः ॥३॥
अ॒श्विना॒ त्वाग्रे॑ मि॒त्रावरु॑णो॒भा विश्वे॑ दे॒वा म॒रुत॑स्त्वा ह्वयन्तु। अधा॒
मनो॑ वसु॒देया॑य कृणुष्व॒ ततो॑ न उ॒ग्रो वि भ॑जा॒ वसू॑नि ॥४॥
आ प्र द्र॑व पर॒मस्याः॑ परा॒वतः॑ शि॒वे ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म्।
तद॒यं राजा॒ वरु॑ण॒स्तथा॑ह॒ स त्वा॒यम॑ह्व॒त् स उपे॒दमेहि॑ ॥५॥
इन्द्रे॑न्द्र मनु॒ष्या॒३ः परे॑हि॒ सं ह्यज्ञा॑स्था॒ वरु॑णैः संवि॑दा॒नः। स त्वा॒यम॑ह्व॒त्
स्वे स॒धस्थे॒ स दे॒वान् य॑क्ष॒त् स उ॑ कल्पया॒द् विशः॑ ॥६॥
प॒थ्या॒ऽ रे॒वती॑र्बहु॒धा विरू॑पाः सर्वाः॑ स॒ङ्गत्य॒ वरी॑यस्ते अक्रन्। तास्त्वा॒
सर्वाः॑ संविदा॒ना ह्व॑यन्तु दश॒मीमु॒ग्रः सु॒मना॑ वशे॒ह ॥७॥ [१।४]

सूक्त ५

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सोमः, पर्णमणिः ॥ छन्दः—१ पुरोऽनुष्टुप्त्रिष्टुप्; २, ३, ५-७ अनुष्टुप्, ४ त्रिष्टुप्, ८ विराडुरोबृहती ॥ मंत्र ८ ।

आयम॑गन् प॒र्णम॒णिर्ब॒ली बले॑न प्रमृ॒णन्त्स॒पत्ना॑न्। ओजो॑ दे॒वानां॒ पय॒
ओष॑धीनां॒ वर्च॑सा मा जिन्वत्व॒प्रया॑वन् ॥१॥

मयि॑ क्ष॒त्रं प॑र्णमणे॒ मयि॑ धारयताद् र॒यिम् । अ॒हं रा॒ष्ट्रस्या॑भीव॒र्गे
नि॒जो भू॑यासमुत्त॒मः ॥२॥

यं नि॑द॒धुर्व॑न॒स्पतौ॒ गुह्यं॑ दे॒वाः प्रि॒यं म॒णिम् । तम॒स्मभ्यं॑ स॒हायु॑षा दे॒वा
द॑दतु॒ भर्त॑वे ॥३॥

सोम॑स्य प॒र्णः सह॑ उ॒ग्रमाग॒न्निन्द्रे॑ण द॒त्तो वरु॑णेन शि॒ष्टः । तं प्रि॑यासं
ब॒हु रोच॑मानो दीर्घायु॒त्वाय॑ श॒तशा॑रदाय ॥४॥

आ मा॑रुक्षत् पर्णम॒णिर्म॒ह्या अ॑रि॒ष्टता॑तये । यथा॒हमु॑त्त॒रोऽसा॑न्यर्य॒म्ण
उ॒त सं॒विद॑ः ॥५॥

ये धीवा॑नो रथका॒राः क॒र्मारा॒ ये म॑नी॒षिण॑ः । उ॒प॒स्तीन् प॑र्ण॒ मह्यं॒ त्वं
सर्वा॑न् कृण्व॒भितो॒ जना॑न् ॥६॥

ये राजा॑नो राज॒कृत॑ः सू॒ता ग्रा॑म॒ण्य᳚श्च॒ ये । उ॒प॒स्तीन् प॑र्ण॒ मह्यं॒ त्वं
सर्वा॑न् कृण्व॒भितो॒ जना॑न् ॥७॥

प॒र्णो᳚ऽसि तनू॒पान॒ः सयो॑निर्वी॒रो वी॒रेण॒ मया॑ । सं॒व॒त्स॒रस्य॒ तेज॑सा॒ तेन॑
बध्नामि त्वा मणे ॥८॥ [१।५]

सूक्त ६

ऋषिः—जगद्बीजं पुरुषः ॥ देवता—अश्वत्थः । छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ८ ॥

पुमा॑न् पुं॒सः परि॑जातोऽश्व॒त्थः ख॑दि॒राद॑धि । स ह॑न्तु॒ शत्रू॑न् माम॒कान्
या॒नहं द्वेष्मि॒ ये च॒ माम् ॥१॥

ताना॑श्वत्थ॒ निः शृ॑णीहि॒ शत्रू॑न् वैबाध॒ दोध॑तः । इन्द्रे॑ण वृत्र॒घ्ना मे॒दी
मि॒त्रेण॒ वरु॑णेन च ॥२॥

यथा॑श्वत्थ नि॒रभ॑नो॒ऽन्तर्म॑ह॒त्य᳚र्ण॒वे । ए॒वा तान्त्सर्वा॒न्निर्भ॑ङ्ग्धि॒ या॒नहं
द्वेष्मि॒ ये च॒ माम् ॥३॥

यः सहमानश्चरसि सासहान इव ऋषभः । तेनाश्वत्थ त्वया वयं
सपत्नान्त्सहिषीमहि ॥४॥
सिनात्वेनान् निर्ऋतिर्मृत्योः पाशैरमोक्यैः । अश्वत्थ शत्रून् मामकान्
यानहं द्वेष्मि ये च माम् ॥५॥
यथाश्वत्थ वानस्पत्यानारोहन् कृणुषेऽधरान् । एवा मे शत्रोर्मूर्धानं
विष्वग् भिन्द्धि सहस्व च ॥६॥
तेऽधराञ्चः प्र प्लवन्तां छिन्ना नौरिव बन्धनात् । न वैबाधप्रणुत्तानां
पुनरस्ति निवर्त्तनम् ॥७॥
प्रैणान् नुदे मनसा प्र चित्तेनोत ब्रह्मणा । प्रैणान् वृक्षस्य
शाखयाश्वत्थस्य नुदामहे ॥८॥ [२।१]

सूक्त ७

ऋषिः भृग्वङ्गिराः ॥ देवता---१--३ हरिणः, ४ विचृतौ तारके, ५ आपः, ६, ७ यक्ष्मनाशनम् ॥ छन्दः---१--५, ७ अनुष्टुप्, ६ भुरिगनुष्टुप् ॥ मंत्र ७ ॥

हरिणस्य रघुष्यदोऽधि शीर्षणि भेषजम् । स क्षेत्रियं विषाणया
विषूचीनमनीनशत् ॥१॥
अनु त्वा हरिणो वृषा पद्भिश्चतुर्भिरक्रमीत् । विषाणे वि ष्य गुष्पितं
यदस्य क्षेत्रियं हृदि ॥२॥
अदो यदवरोचते चतुष्पक्षमिव च्छदिः । तेना ते सर्वं क्षेत्रियमङ्गेभ्यो
नाशयामसि ॥३॥
अमू ये दिवि सुभगे विचृतौ नाम तारके । वि क्षेत्रियस्य मुञ्चतामधमं
पाशमुत्तमम् ॥४॥
आप इद् वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः । आपो विश्वस्य
भेषजीस्तास्त्वा मुञ्चन्तु क्षेत्रियात् ॥५॥

यदा॑सु॒तेः क्रि॒यमा॑णायाः क्षेत्रि॒यं त्वा॑ व्यान॒शे । वेदा॒हं तस्य॑ भेष॒जं
क्षे॑त्रि॒यं ना॑शयामि॒ त्वत् ॥६॥
अ॒प॒वा॒से नक्ष॑त्राणामपवा॒स उ॒षसा॑मु॒त । अपा॒स्मत् सर्वं॑ दुर्भू॒तमप॑
क्षेत्रि॒यमु॑च्छतु ॥७॥ [२।२]

सूक्त ८

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—१—४ मित्रादयो विश्वेदेवाः, ५, ६ मनः ।।
छन्दः--- १, ३ त्रिष्टुप्, २,६ जगती, ४ विराड् बृहतीगर्भा चतुष्पदा त्रिष्टुप्, ५ अनुष्टुप् ।। मंत्र ६ ।।

आ या॑तु मि॒त्र ऋ॒तुभि॒ः कल्प॑मानः संवे॒शय॑न् पृथि॒वीमु॒स्रिया॑भिः ।
अथा॒स्मभ्यं॒ वरु॑णो वा॒युर॒ग्निर्बृ॒हद् रा॒ष्ट्रं सं॑वे॒श्यं॑ दधातु ॥१॥
धा॒ता रा॒तिः स॑वि॒तेदं जु॑षन्ता॒मिन्द्र॒स्त्वष्टा॒ प्रति॑ हर्यन्तु मे॒ वच॑ः । हु॒वे
दे॒वीमदि॑तिं॒ शूर॑पुत्रां सजा॒ताना॑ँ मध्यमे॒ष्ठा यथासा॑नि ॥२॥
हु॒वे सोम॑ँ सवि॒तारं॒ नमो॑भि॒र्विश्वा॑नादि॒त्याँ अ॒हमु॑त्तर॒त्वे ।
अ॒यम॒ग्निर्दी॑दायद् दी॒र्घमे॒व स॑जा॒तैरि॒द्धोऽप्र॑तिब्रुवद्भिः ॥३॥
इ॒हेद॑साथ॒ न प॒रो ग॑मा॒थेर्यो॑ गो॒पाः पु॑ष्ट॒पति॑र्व॒ आज॑त् । अ॒स्मै कामा॒योप॑
का॒मिनी॒र्विश्वे॑ वो दे॒वा उप॒॑संय॑न्तु ॥४॥
सं वो॒ मना॑ँसि॒ सं व्र॒ता समाकू॑ती॒र्नमामसि । अ॒मी ये विव्र॑ता॒ स्थन॒
तान् व॒ः सं न॑मयामसि ॥५॥
अ॒हं गृ॑भ्णामि॒ मन॑सा॒ मना॑ँसि॒ मम॑ चि॒त्तमनु॑ चि॒त्तेभि॒रेत॑ । मम॒ वशे॑षु॒
हृद॑यानि वः कृणोमि॒ मम॑ या॒तमनु॑वर्त्मान॒ एत॑ ॥६॥ [२।३]

सूक्त ९

ऋषिः—वामदेवः ।। देवता—द्यावापृथिव्यौ, विश्वेदेवाः ।। छन्दः—१--३--५, अनुष्टुप्, ४ चतुष्पान्निचृद्बृहती, ६ भुरिगनुष्टुप् ।। मंत्र ६ ।

क॒र्शफ॑स्य विश॒फस्य॒ द्यौष्पि॒ता पृ॑थि॒वी मा॒ता । यथा॑भिच॒क्र
दे॒वास्तथाप॑ कृणुता॒ पुन॑ः ॥१॥

अश्लेष्माणो अधारयन् तथा तन्मनुना कृतम् । कृणोमि वध्रि विष्कन्धं
मुष्काबर्हो गवामिव ॥२॥
पिशङ्गे सूत्रे खृगलं तदा बध्नन्ति वेधसः । श्रवस्युं शुष्मं काबवं वध्रिं
कृण्वन्तु बन्धुरः ॥३॥
येना श्रवस्यवश्चरथ देवा इवासुरमायया । शुनां कपिरिव दूषणो
बन्धुरा काबवस्य च ॥४॥
दुष्ट्यै हि त्वा भत्स्यामि दूषयिष्यामि काबवम् । उदाशवो रथा इव
शपथेभिः सरिष्यथ ॥५॥
एकशतं विष्कन्धानि विष्ठिता पृथिवीमनु । तेषां त्वामग्र उज्जहरुर्मणिं
विष्कन्धदूषणम् ॥६॥ [२।४]

सूक्त १०

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता - अष्टका ।। छन्दः—१--३, ८--११, १३ अनुष्टुप्, ४--६, १२ त्रिष्टुप्, ७ षट्पदा विराड्गर्भातिजगती ।। मंत्र १३ ।।

प्रथमा ह व्युवास सा धेनुरभवद् यमे । सा नः पयस्वती
दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥१॥
यां देवाः प्रतिनन्दन्ति रात्रिं धेनुमुपायतीम् । संवत्सरस्य या पत्नी
सा नो अस्तु सुमङ्गली ॥२॥
संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्र्युपास्महे । सा न आयुष्मतीं प्रजां
रायस्पोषेण सं सृज ॥३॥
इयमेव सा या प्रथमा व्यौच्छदास्वितरासु चरति प्रविष्टा । महान्तो
अस्यां महिमानो अन्तर्वधूर्जिगाय नवगज्जनित्री ॥४॥
वानस्पत्या ग्रावाणो घोषमक्रत हविष्कृण्वन्तः परिवत्सरीणम् ।
एकाष्टके सुप्रजसः सुवीरा वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥५॥
इडायास्पदं घृतवत् सरीसृपं जातवेदः प्रति हव्या गृभाय । ये ग्राम्याः
पशवो विश्वरूपास्तेषां सप्तानां मयि रन्तिरस्तु ॥६॥

आ मा॑ पु॒ष्टे च॒ पोषे॑ च॒ रात्रि॑ दे॒वानां॑ सुम॒तौ स्या॑म । पू॒र्णा॑ द॒र्वे॑ परा॑
पत॒ सु॒पू॑र्णा॒ पु॒न॒रा प॑त । सर्वा॑न् य॒ज्ञान्त्सं॑भु॒ञ्जतीष॒मूर्जं॑ न॒ आ भ॑र ॥७॥
आयम॑गन्त्संवत्स॒रः पति॑रेकाष्टके॒ तव॑ । सा न॒ आयु॑ष्मतीं प्र॒जां
रा॒यस्पोषे॑ण॒ सं सृ॑ज ॥८॥
ऋ॒तून् य॑ज ऋ॒तुप॑तीनार्त॒वानु॒त हा॑य॒नान् । समाः॑ संवत्स॒रान् मासा॑न्
भू॒तस्य॒ पत॑ये यजे ॥९॥
ऋ॒तुभ्य॑ष्ट्वार्त॒वेभ्यो॑ मा॒द्भ्यः सं॑वत्स॒रेभ्यः॑ । धा॒त्रे वि॑धा॒त्रे स॒मृधे॑ भू॒तस्य॒
पत॑ये यजे ॥१०॥
इड॑या॒ जुह्व॑तो व॒यं दे॒वान् घृ॒तव॑ता यजे । गृ॒हानलु॑भ्यतो व॒यं सं
वि॑शे॒मोप॒ गोम॑तः ॥११॥
ए॒का॒ष्ट॒का तप॑सा त॒प्यमा॑ना ज॒जान॒ गर्भं॑ महि॒मान॒मिन्द्र॑म् । तेन॑ दे॒वा
व्य॑सहन्त॒ शत्रू॑न् ह॒न्ता दस्यू॑नामभव॒च्छची॒पतिः॑ ॥१२॥
इन्द्र॑पुत्रे॒ सोम॑पुत्रे दुहि॒तासि॑ प्र॒जाप॑तेः । कामा॑न॒स्माकं॑ पूरय॒ प्रति॑
गृ॒ह्णाहि नो ह॒विः ॥१३॥　　[२।५]

सूक्त ११

ऋषिः—ब्रह्मा, भृग्वङ्गिराश्च ॥ देवता—इन्द्राग्नी, आयुः, यक्ष्मनाशनम् ॥ छन्दः—१-३ त्रिष्टुप्, ४ शक्वरीगर्भा जगती, ५, ६ अनुष्टुप्, ७ उष्णिग्बृहतीगर्भा पथ्यापङ्क्तिः, ८ षट्पदा बृहतीगर्भा जगती ॥ मंत्र ८ ।

मु॒ञ्चामि॑ त्वा ह॒विषा॒ जीव॑नाय॒ कम॑ज्ञातय॒क्ष्मादु॒त रा॑जय॒क्ष्मात् ।
ग्राहि॑र्ज॒ग्राह॒ यद्ये॒तदे॑नं॒ तस्या॑ इन्द्रा॒ग्नी प्र मु॑मुक्तमेनम् ॥१॥
यदि॑ क्षि॒तायु॒र्यदि॑ वा॒ परे॑तो॒ यदि॑ मृ॒त्योर॑न्ति॒कं नी॑त ए॒व । तमा
ह॑रामि॒ निरृ॑तेरु॒पस्था॒दस्पा॑र्षमेनं श॒तशा॑रदाय ॥२॥
स॒ह॒स्रा॒क्षेण॑ श॒तवी॑र्येण श॒तायु॑षा ह॒विषाहा॑र्षमेनम् । इन्द्रो॒ यथै॑नं श॒रदो॒
नया॒त्यति॒ विश्व॑स्य दुरि॒तस्य॑ पा॒रम् ॥३॥

श॒तं जी॑व श॒रदो॒ वर्ध॑मानः श॒तं हे॑म॒न्ताञ्छ॒तमु॑ वस॒न्तान् । श॒तं त॒ इन्द्रो॑ अ॒ग्निः स॑वि॒ता बृह॒स्पतिः॑ श॒तायु॑षा ह॒विषाहा॑र्षमेनम् ॥४॥

प्र वि॑शतं प्राणापानावन॒ड्वाहा॑विव व्र॒जम् । व्य१॒न्ये य॑न्तु मृ॒त्यवो॒ याना॒हुरित॑राञ्छ॒तम् ॥५॥

इ॒हैव स्तं॑ प्राणापा॒नौ माप॑ गातमि॒तो यु॒वम् । शरी॑रम॒स्याङ्गा॑नि ज॒रसे॑ वहतं॒ पुनः॑ ॥६॥

ज॒रायै॑ त्वा॒ परि॑ ददामि ज॒रायै॒ नि धु॑वामि त्वा । ज॒रा त्वा॑ भ॒द्रा ने॑ष्ट॒ व्य१॒ ये य॑न्तु मृ॒त्यवो॒ याना॒हुरित॑राञ्छ॒तम् ॥७॥

अ॒भि त्वा॑ जरि॒माहि॑त॒ गामु॒क्षण॑मिव॒ रज्ज्वा॑ । यस्त्वा॑ मृ॒त्युर॒भ्यध॑त्त॒ जाय॑मानं सुपा॒शया॑ । तं ते॑ स॒त्यस्य॒ हस्ता॑भ्या॒मुद॑मुञ्च॒द् बृह॒स्पतिः॑ ॥८॥

[३।१]

सूक्त १२

ऋषिः— ब्रह्मा ।। देवता—शाला, वास्तोष्पतिः ।। छन्दः—१, ४, ५, त्रिष्टुप्, २ विराड् जगती, ३ बृहती, ६ शक्वरीगर्भा जगती, ७ आर्ष्यनुष्टुप् ८ भुरिक् ९ अनुष्टुप् ।। मंत्र ९ ।

इ॒हैव ध्रु॒वां नि मि॑नोमि॒ शालां॒ क्षेमे॑ तिष्ठाति घृ॒तमु॒क्षमा॑णा । तां त्वा॑ शाले॒ सर्व॑वीराः सु॒वीरा॒ अरि॑ष्टवीरा॒ उप॒ सं च॑रेम ॥१॥

इ॒हैव ध्रु॒वा प्रति॑ तिष्ठ शा॒लेऽश्वा॑वती॒ गोम॑ती सू॒नृता॑वती । ऊर्ज॑स्वती घृ॒तव॑ती॒ पय॑स्वत्युच्छ्र॑यस्व मह॒ते सौभ॑गाय ॥२॥

ध॒रुण्य॑सि शाले बृ॒हच्छ॑न्दाः॒ पूति॑धान्या । आ त्वा॑ व॒त्सो ग॑मे॒दा कु॑मा॒र आ धे॒नवः॑ सा॒यमा॒स्यन्द॑मानाः ॥३॥

इ॒मां शालां॑ सवि॒ता वा॒युरिन्द्रो॒ बृह॒स्पति॒र्नि मि॑नोतु प्रजा॒नन् । उ॒क्षन्तू॒द्ना म॒रुतो॑ घृ॒तेन॒ भगो॑ नो॒ राजा॒ नि कृ॒षिं त॑नोतु ॥४॥

मान॑स्य पत्नि श॒र॒णा स्यो॒ना दे॒वी दे॒वेभि॒र्नि॑मि॑ता॒स्यग्रे॑ । तृणं॒ वसा॑ना
सु॒मना॑ अस॒स्त्वमथा॒स्मभ्यं॑ स॒हवी॑रं र॒यिं दा॑ः ॥५॥
ऋ॒तेन॒ स्थूणा॒मधि॑ रोह वं॒शो॒ग्रो वि॒राज॒न्नप॑ वृङ्क्ष्व॒ शत्रू॑न् । मा ते॑
रिष॒न्नुपस॒त्तारो॑ गृ॒हाणां॑ शाले श॒तं जी॑वेम श॒रद॒ः सर्व॑बीराः ॥६॥
एमां कु॑मा॒रस्त॑रु॒ण आ व॒त्सो जग॑ता स॒ह । एमां प॑रि॒स्रुत॑ः कु॒म्भ आ
द॒ध्नः क॒लशै॑रगुः ॥७॥
पू॒र्णं ना॑रि॒ प्र भ॑र कु॒म्भमे॒तं घृ॒तस्य॒ धारा॑म॒मृते॑न॒ संभृ॑ताम् । इ॒मां
पा॒त्रीम॒मृते॑ना॒ सम॑ङ्ग्धीष्टापू॒र्तम॒भि र॑क्षात्येनाम् ॥८॥
इ॒मा आप॒ः प्र भ॑राम्यय॒क्ष्मा य॑क्ष्म॒नाश॑नीः । गृ॒हानुप॒ प्र सी॑दाम्य॒मृते॑न
स॒हाग्निना॑ ॥९॥ [३।२]

सूक्त १३

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—सिन्धुः, आपः, वरुणः ॥ छन्दः— १, निचृदनुष्टुप्, २-४, ७ अनुष्टुप्. ५ विराड् जगती, ६ निचृदनुष्टुप् ॥ मन्त्र७ ।

यद॒दः संप्र॒य॒तीरहा॒वन॑दता ह॒ते । तस्मा॒दा न॒द्यो॒३ नाम॑ स्थ॒ ता वो॒
नामा॑नि सिन्धवः ॥१॥
यत् प्रेषि॑ता॒ वरु॑णे॒नाच्छीभं॑ स॒मव॑ल्गत । तदा॑प्नो॒दिन्द्रो॑ वो
य॒तीस्तस्मा॑दापो॒ अनु॒ ष्ठन ॥२॥
अ॒प॒का॒मं स्यन्द॑माना॒ अवी॑वरत वो॒ हिक॑म् । इन्द्रो॑ व॒ः
शक्ति॑भिर्दे॒वीस्तस्म॒ाद् वार्नाम॑ वो हि॒तम् ॥३॥
एको॑ वो दे॒वोऽप्य॑तिष्ठ॒त् स्यन्द॑माना यथाव॒शम् । उदा॑निषुर्म॒हीरिति॒
तस्मा॑दुद॒कमु॑च्यते ॥४॥
आपो॑ भ॒द्रा घृ॒तमिदाप॑ आसन्न॒ग्नीषोमौ॑ बिभ्र॒त्याप इत् ताः । ती॒व्रो
रसो॑ मधु॒पृचा॑मरंग॒म आ मा॑ प्रा॒णेन॑ स॒ह वर्च॑सा गमेत् ॥५॥
आदि॒त् प॑श्याम्यु॒त वा॑ शृणो॒म्या मा॒ घोषो॑ गच्छति॒ वाङ् मा॑साम् ।
मन्ये॑ भेजा॒नो अ॒मृत॑स्य त॒र्हि हिर॑ण्यवर्णा॒ अतृ॑पं य॒दा व॑ः ॥६॥

इ॒दं व॑ आपो॒ हृद॑यम॒यं व॒त्स ऋ॑तावरीः । इ॒हेत्थमेत॑ शक्वरी॒र्यत्रे॒दं
वे॒शया॑मि व॑ः ॥७॥ [३।३]

सूक्त १४

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—गोष्ठः, अर्यमादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१--५ अनुष्टुप्
६ आर्षी त्रिष्टुप्, ॥ मंत्र ६ ।

सं वो॑ गो॒ष्ठेन॑ सु॒षदा॒ सं र॒य्या सं सुभू॑त्या । अह॑र्जातस्य॒ यन्नाम॒ तेना॑
व॒ः सं सृ॑जामसि ॥१॥
सं व॑ः सृजत्वर्य॒मा सं पू॒षा सं बृह॒स्पति॑ः । स॑मिन्द्रो॒ यो ध॑नञ्ज॒यो
मयि॑ पुष्यत॒ यद् वसु॑ ॥२॥
सं॒ज॒ग्मा॒ना अवि॑भ्युषोर॒स्मिन् गो॒ष्ठे क॑री॒षिणीः । बिभ्र॑तीः सो॒म्यं
मध्व॑नमी॒वा उ॒पेत॑न ॥३॥
इ॒हैव गा॑व॒ एत॑ने॒हो शके॑व पुष्यत । इ॒हैवोत प्र जा॑यध्व॒ं मयि॑
संज्ञान॑मस्तु वः ॥४॥
शि॒वो वो॑ गो॒ष्ठो भ॑वतु शारि॒शाके॑व पुष्यत । इ॒हैवोत प्र जा॑यध्व॒ं मया॑
व॒ः सं सृ॑जामसि ॥५॥
मया॑ गावो॒ गोप॑तिना सचध्वम॒यं वो॑ गो॒ष्ठ इ॒ह पो॑षयि॒ष्णुः ।
रा॒यस्पोषे॑ण बहु॒ला भव॑न्तीर्जी॒वा जीव॑न्ती॒रुप॑ वः सदेम ॥६॥ [३।४]

सूक्त १५

ऋषिः—अथर्वा (पण्यकामः) ॥ देवता—१ इन्द्रः, २ पन्थानः, ३ अग्निः, ४ प्रपणः
विक्रयश्च ५ देवाः, अग्निः, ६ देवाः, इन्द्रः, प्रजापतिः, सविता, सोमः, अग्निः,
७ वैश्वानरः, ८ जातवेदाः । छन्दः—१ भुरिक् त्रिष्टुप्, २, ३, ६ त्रिष्टुप्, ४ षट्पदा
बृहतीगर्भा विराडत्यष्टिः, ५ विराड् जगती, ७ अनुष्टुप्, ८ निचृत् त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ८ ।

इन्द्र॑म॒हं व॒णिजं॑ चोदयामि॒ स न॒ ऐतु॑ पुरए॒ता नो॑ अस्तु । नु॒दन्नरा॑तिं
परिप॒न्थिनं॑ मृ॒गं स ईशा॑नो धन॒दा अ॑स्तु मह्य॑म् ॥१॥
ये पन्था॑नो ब॒हवो॑ देव॒याना॑ अन्त॒रा द्यावा॑पृथि॒वी सं॒चर॑न्ति । ते मा॑
जुषन्तां॒ पय॑सा घृ॒तेन॒ यथा॑ क्री॒त्वा धन॑मा॒हरा॑णि ॥२॥

इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तरसे बलाय । यावदीशे
ब्रह्मणा वन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम् ॥३॥

इमामग्ने शरणिं मीमृषो नो यमध्वानमगाम दूरम् । शुनं नो अस्तु
प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु । इदं हव्यं संविदानौ
जुषेथां शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च ॥४॥

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः । तन्मे भूयो भवतु मा
कनीयोऽग्ने सातघ्नो देवान् हविषा नि षेध ॥५॥

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः । तस्मिन् म
इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः ॥६॥

उप त्वा नमसा वयं होतर्वैश्वानर स्तुमः । स नः प्रजास्वात्मसु गोषु
प्राणेषु जागृहि ॥७॥

विश्वाहा ते सदमिद्भरेमाश्वायेव तिष्ठते जातवेदः । रायस्पोषेण समिषा
मदन्तो मा ते अग्ने प्रतिवेशा रिषाम ॥८॥ [३।५]

सूक्त १६

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—१ अग्नीन्द्रादयो मन्त्रोक्ताः, २--६ भगः, ७ उषाः ।।
छन्दः—१ आर्षी जगती, २, ३, ५--७ त्रिष्टुप्, ४ भुरिक् पङ्क्तिः ।। मन्त्र ७ ।

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना । प्रातर्भगं
पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हवामहे ॥१॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हवामहे वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता । आध्रश्चिद् यं
मन्यमानस्तुरश्चिद् राजा चिद् यं भगं भक्षीत्याह ॥२॥

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः । भग प्र णो जनय
गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३॥

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् । उतोदितौ
मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥४॥

भग एव भगवाँ अस्तु देवस्तेना वयं भगवन्तः स्याम । तं त्वा भग
सर्व इज्जोहवीमि स नो भग पुरएता भवेह ॥५॥

समध्वरायोषसो नमन्तः दधिक्रावेव शुचये पदाय । अर्वाचीनं वसुविदं
भगं मे रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ॥६॥

अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः । घृतं दुहाना
विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥ [४।१]

सूक्त १७

ऋषिः—विश्वामित्रः ।। देवता—सीता ।। छन्दः—१ आर्षी गायत्री, २, ५, ९ त्रिष्टुप् ३ पथ्या पङ्क्तिः, ४, ६ अनुष्टुप्, ७ विराट् पुरउष्णिक्, ८ निचृदनुष्टुप् ।। मंत्र ९ ।

सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक् । धीरा देवेषु
सुम्नयौ ॥१॥

युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम् । विराजः
श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत् सृण्यः पक्वमा यवन् ॥२॥

लाङ्गलं पवीरवत् सुशीमं सोमसत्सरु । उदिद् वपतु गामविं प्रस्थावद्
रथवाहनं पीबरीं च प्रफर्व्यम् ॥३॥

इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु । सा नः पयस्वती
दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥४॥

शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान् ।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै ॥५॥

शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम् । शुनं वरत्रा बध्यन्तां
शुनमष्ट्रामुदिङ्गय ॥६॥

शुनसीरेहस्म मे जुषेथाम् । यद् दिवि चक्रथः पयस्तेनेमामुप
सिञ्चतम् ॥७॥

सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव । यथा नः सुमना असो यथा नः
सुफला भुवः ॥८॥

घृ॒तेन॒ सीता॒ मधु॑ना॒ सम॑क्ता॒ विश्वै॑र्दे॒वैरनु॑मता म॒रुद्भिः॑ । सा नः॑ सीते॒
पय॑सा॒भ्याव॑वृ॒त्स्वोर्ज॑स्वती घृ॒तव॒त् पिन्व॑माना ॥९॥ [४।२]

सूक्त १८

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—वनस्पतिः (वाणपर्णी) ।। छन्दः—१--३, ५ अनुष्टुप्, ४ अनुष्टुब्गर्भा चतुष्पादुष्णिक्, ६ उष्णिग्गर्भा पथ्या पङ्क्तिः ।। मन्त्र ६ ।

इ॒मां ख॑ना॒म्योष॑धिं वी॒रुधां॒ बल॑वत्तमाम् । यया॑ स॒पत्नीं॒ बाध॑ते॒ यया॑
संवि॒न्द॒ते॒ पति॑म् ॥१॥

उत्ता॑नपर्णे॒ सुभ॑गे॒ देव॑जूते॒ सह॑स्वति । स॒पत्नीं॑ मे॒ परा॑ णुद॒ पतिं॑ मे॒
केव॑लं कृधि ॥२॥

न॒हि ते॒ नाम॑ ज॒ग्राह॒ नो अ॒स्मिन् र॑मसे॒ पतौ॑ । परा॑मे॒व प॑रा॒वतं॑ स॒पत्नीं॑
गमयामसि ॥३॥

उत्त॑रा॒हमु॑त्तर॒ उत्त॒रेदुत्त॑राभ्यः । अ॒धः स॒पत्नी॒ या ममाध॑रा॒
साध॑राभ्यः ॥४॥

अ॒हम॑स्मि॒ सह॑मा॒नाथो॒ त्वम॑सि सास॒हिः । उ॒भे सह॑स्वती भू॒त्वा
स॒पत्नीं॑ मे सहावहै ॥५॥

अ॒भि ते॑ऽधां॒ सह॑माना॒मुप॑ तेऽधां॒ सही॑यसीम् । माम॑नु॒ प्र ते॒ मनो॑ व॒त्सं
गौरि॑व धावतु प॒था वारि॑व धावतु ॥६॥ [४।३]

सूक्त १९

ऋषिः— वसिष्ठः ।। देवता—विश्वे देवाः, इन्द्रः । छन्दः—१ पथ्या बृहती, २, ४ अनुष्टुप्, ३ भुरिग्-बृहती, ५ त्रिष्टुप् ६ षट्पदा त्रिष्टुप् ककुम्मतीगर्भाऽतिजगती, ७ विराडास्तारपङ्क्तिः, ८ पथ्या पङ्क्तिः ।। मन्त्र ८ ।

संशि॑तं म इ॒दं ब्रह्म॒ संशि॑तं वी॒र्य॑१॒ बल॑म् । संशि॑तं क्ष॒त्रम॒जर॑मस्तु
जि॒ष्णु येषा॑मस्मि पु॒रोहि॑तः ॥१॥

सम॒हमे॒षां रा॒ष्ट्रं स्या॑मि॒ समोजो॑ वी॒र्य॑१॒ बल॑म् । वृ॒श्चामि॒ शत्रू॑णां
बा॒हून॒नेन॑ ह॒विषा॒हम् ॥२॥

नीचैः पद्यन्तामधरे भवन्तु ये नः सूरिं मघवानं पृतन्यान् । क्षिणामि
ब्रह्मणामित्रानुन्नयामि स्वानहम् ॥३॥

तीक्ष्णीयांसः परशोरग्नेस्तीक्ष्णतरा उत । इन्द्रस्य वज्रात् तीक्ष्णीयांसो
येषामस्मि पुरोहितः ॥४॥

एषामहमायुधा सं स्याम्येषां राष्ट्रं सुवीरं वर्धयामि । एषां
क्षत्रमजरमस्तु जिष्ण्वे३षां चित्तं विश्वेऽवन्तु देवाः ॥५॥

उद्धर्षन्तां मघवन् वाजिनान्युद् वीराणां जयतामेतु घोषः । पृथग् घोषा
उलुलयः केतुमन्त उदीरताम् । देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो यन्तु
सेनया ॥६॥

प्रेता जयता नर उग्रा वः सन्तु बाहवः । तीक्ष्णेषवोऽबलधन्वनो
हतोग्रायुधा अबलानुग्रबाहवः ॥७॥

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते । जयामित्रान् प्र पद्यस्व जह्येषां
वरंवरं मामीषां मोचि कश्चन ॥८॥ [४।४]

सूक्त २०

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—१, २, ५ अग्निः, ३ अर्यमा, भगः, बृहस्पतिः, देवीः, ४ सोमः, अग्निः, आदित्यः, विष्णुः, ब्रह्मा, बृहस्पतिः, ६ इन्द्रवायू ७ अर्यमा बृहस्पतिः, इन्द्रः, वातः, विष्णुः, सरस्वती, सविता, वाजी, ८ विश्वानि भुवनानि, ९ पञ्च प्रदिशः, १० वायुः, त्वष्टा ॥ छन्दः – १—५, ७, ९, १० अनुष्टुप्; ६ पथ्या पंक्तिः, ८ विराड् जगती ॥ मंत्र १० ।

अयं ते योनिरृत्वियो यतो जातो अरोचथाः । तं जानन्नग्न आ
रोहाधा नो वर्धया रयिम् ॥१॥

अग्ने अच्छा वदेह नः प्रत्यङ् नः सुमना भव । प्र णो यच्छ विशां
पते धनदा असि नस्त्वम् ॥२॥

प्र णो यच्छत्वर्यमा प्र भगः प्र बृहस्पतिः । प्र देवीः प्रोत सूनृता रयिं
देवी दधातु मे ॥३॥

सोमं॒ राजा॑नम॒व॑से॒ऽग्निं गी॒र्भिर्ह॑वामहे । आ॒दि॒त्यं विष्णुं॒ सूर्यं॑ ब्र॒ह्माणं॑
च॒ बृह॒स्पति॑म् ॥४॥

त्वं नो॑ अग्ने अ॒ग्निभि॒र्ब्रह्म॑ य॒ज्ञं च॑ वर्धय । त्वं नो॑ दे॒व दात॑वे र॒यिं
दाना॑य चोदय ॥५॥

इ॒न्द्र॒वा॒यू उ॒भावि॒ह सु॒ह॒वेह ह॑वामहे । यथा॑ न॒ः सर्व॒ इज्जन॒ः संग॑त्या
सु॒मना॒ अस॒द् दान॑कामश्च नो॒ भुव॑त् ॥६॥

अ॒र्य॒मणं॒ बृह॒स्पति॒मिन्द्रं॒ दाना॑य चोदय । वातं॒ विष्णुं॒ सर॑स्वतीं
स॒वि॒तारं॑ च वा॒जिन॑म् ॥७॥

वाज॑स्य॒ नु प्र॑स॒वे सं ब॑भूवि॒मेमा च॒ विश्वा॒ भुव॑नान्य॒न्तः । उ॒ताद‍ि॑त्सन्तं
दापयतु प्रजा॒नन् र॒यिं च॑ न॒ः सर्व॑वीरं॒ नि य॑च्छ ॥८॥

दु॒ह्रां मे॒ पञ्च॑ प्र॒दिशो॑ दु॒ह्रामु॒र्वीर्य॑थाब॒लम् । प्रापे॑यं॒ सर्वा॒ आकू॑तीर्मन॑सा॒
हृद॑येन च ॥९॥

गो॒सनिं॒ वाच॑मुदेयं॒ वर्च॑सा मा॒भ्युदि॑हि । आ रु॑न्धां स॒र्वतो॑ वा॒युस्त्वष्टा॒
पोषं॑ दधातु मे ॥१०॥   [४।५]

सूक्त २१

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—१—७ अग्निः, ८—११ सवित्रादयो मन्त्रोक्ताः ॥
छन्दः—१ पुरोऽनुष्टुप् त्रिष्टुप्; २, ३, ८ भुरिक् त्रिष्टुप्, ४ त्रिष्टुप्, ५ जगती,
६ उपरिष्टाद् विराड् बृहती, ७ विराड्-गर्भा त्रिष्टुप्, ९ निचृदनुष्टुप्,
१० अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १० ।

ये अ॒ग्नयो॑ अ॒प्स्व१॒न्तर्ये वृ॒त्रे ये पुरु॑षे॒ ये अश्म॑सु । य आ॑वि॒वेशौष॑धी॒र्यो
वन॒स्पती॒ंस्तेभ्यो॑ अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत् ॥१॥

यः सोमे॑ अ॒न्तर्यो गोष्व॒न्तर्य आवि॑ष्टो॒ वयः॑सु॒ यो मृ॒गेषु॑ । य आ॑वि॒वेश॑
द्वि॒पदो॒ यश्चतु॑ष्पद॒स्तेभ्यो॑ अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत् ॥२॥

य इन्द्रे॑ण स॒रथं॒ याति॑ दे॒वो वै॑श्वान॒र उ॒त वि॑श्वदा॒व्य१ः । यं जोह॑वीमि॒
पृत॑नासु सास॒हिं तेभ्यो॑ अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत् ॥३॥

यो दे॒वो वि॒श्वाद् यमु॒ काम॑मा॒हुर्यँ दा॒तारँ॑ प्रतिगृ॒ह्णन्त॑मा॒हुः । यो धीरः॑
श॒क्रः प॑रि॒भूरदा॑भ्य॒स्तेभ्यो॑ अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत् ॥४॥
यं त्वा॒ होता॑रं॒ मन॑सा॒भि सँवि॒दुस्त्रयो॑दश भौव॒नाः पञ्च॑ मान॒वाः ।
व॒र्चो॒धसे॑ य॒शसे॑ सू॒नृता॑वते॒ तेभ्यो॑ अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत् ॥५॥
उ॒क्षान्ना॑य व॒शान्ना॑य॒ सोम॑पृष्ठाय वे॒धसे॑ । वै॒श्वा॒न॒रज्ये॑ष्ठेभ्य॒स्तेभ्यो॑
अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत् ॥६॥
दिवँ॑ पृथि॒वीमन्व॒न्तरि॑क्षं॒ ये वि॒द्युत॑मनुसं॒चर॑न्ति । ये दि॒क्ष्व१॒न्तर्ये॑ वाते॑
अ॒न्तस्तेभ्यो॑ अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत् ॥७॥
हिर॑ण्यपाणिं सवि॒तार॒मिन्द्रं॒ बृह॒स्पतिं॒ वरु॑णं मि॒त्रम॒ग्निम् । विश्वा॑न्
दे॒वानङ्गि॑रसो हवामह इ॒मं क्र॒व्यादँ॑ शमयन्त्व॒ग्निम् ॥८॥
शा॒न्तो अ॒ग्निः क्र॒व्याच्छा॒न्तः पु॑रुष॒रेष॑णः । अथो॒ यो वि॑श्वदा॒व्य१॒स्तं
क्र॒व्याद॑मशीशमम् ॥९॥
ये पर्व॑ता॒ः सोम॑पृष्ठा॒ आप॑ उत्तान॒शीव॑रीः । वात॑ः प॒र्जन्य॒ आद॒ग्निस्ते
क्र॒व्याद॑मशीशमन् ॥१०॥ [५।१]

सूक्त २२

ऋषिः—वसिष्ठः ।। देवता—विश्वेदेवाः, बृहस्पतिः, वर्चः । छन्दः—१ विराट् त्रिष्टुप्; २, ५, ६ अनुष्टुप्; ३ पञ्चपदा परानुष्टुप् विराडतिजगती, ४ षट्पदा जगती ।। मन्त्र ६ ।

ह॒स्ति॒वर्च॒सं प्र॑थतां बृ॒हद् यशो॒ अदि॑त्या॒ यत् त॒न्व॑ः संब॒भूव॑ । तत् सर्वे॒
सम॑दु॒र्मह्य॑मे॒तद् विश्वे॑ दे॒वा अदि॑तिः स॒जोषा॑ः ॥१॥
मि॒त्रश्च॒ वरु॑णश्चे॒न्द्रो रु॒द्रश्च॑ चेततु । दे॒वासो॑ वि॒श्वधा॑यस॒स्ते मा॑ञ्जन्तु॒
वर्च॑सा ॥२॥
येन॑ ह॒स्ती वर्च॑सा संब॒भूव॒ येन॒ राजा॑ मनु॒ष्ये॑ष्व॒प्स्व१॒न्तः । येन॑ दे॒वा
दे॒वता॒मग्र॒ आय॒न् तेन॒ माम॒द्य वर्च॒साग्ने॑ वर्च॒स्विनं॑ कृणु ॥३॥

यत् ते॒ वर्चो᳚ जातवेदो बृ॒हद् भ॑व॒त्याहु॑तेः । याव॒त् सूर्य᳚स्य॒ वर्च᳚ आसु॒रस्य॑ च ह॒स्तिन॑ः । ताव॑न्मे अ॒श्विना॒ वर्च॒ आ ध॑त्तां॒ पुष्क॑रस्रजा ॥४॥

याव॒च्चत॑स्रः प्र॒दिश॒श्चक्षु॒र्याव॑त् सम॒श्नु॒ते । ताव॑त् स॒मैत्वि॑न्द्रि॒यं मयि॒ तद्ध॑स्तिवर्च॒सम् ॥५॥

ह॒स्ती मृ॒गाणां᳚ सषदा॑मति॒ष्ठावा॑न् ब॒भूव॒ हि । तस्य॒ भगे᳚न॒ वर्च᳚सा॒ऽभि षि॑ञ्चामि॒ माम॒हम् ॥६॥ [५।२]

सूक्त २३

ऋषिः — ब्रह्मा ॥ देवता — योनिः ॥ छन्दः — १--४ अनुष्टुप्, ५ उपरिष्टाद् भुरिग् बृहती ६ स्कन्धोग्रीवा बृहती ॥ मन्त्र ६ ।

येन॑ वे॒हद् ब॒भूवि॑थ ना॒शया॑मसि॒ तत् त्वत् । इ॒दं तद॒न्यत्र॒ त्वदप॑ दू॒रे नि द॑ध्मसि ॥१॥

आ ते॒ योनिं॒ गर्भ᳚ एतु॒ पुमा॒न् बाण॑ इवेषु॒धिम् । आ वी॒रोऽत्र॑ जायतां पु॒त्रस्ते॒ दश॑मास्यः ॥२॥

पुमां॑सं पु॒त्रं ज॑नय॒ तं पुमा॒ननु॑ जायताम् । भवा॑सि पु॒त्राणां᳚ मा॒ता जा॒ताना᳚ं ज॒नया॑श्च॒ यान् ॥३॥

यानि॑ भ॒द्राणि॒ बीजा॑न्यृ॒ष॒भा ज॒नय॑न्ति च । तै॑स्त्वं पु॒त्रं वि॑न्दस्व॒ सा प्र॒सूर्धेनु॑का भव ॥४॥

कृ॒णोमि॑ ते प्राजाप॒त्यमा योनिं॒ गर्भ᳚ एतु ते । वि॒न्दस्व॒ त्वं पु॒त्रं ना॑रि॒ यस्तुभ्य॒ं शमस॒च्छमु॒ तस्मै॒ त्वं भव॑ ॥५॥

यासा॒ं द्यौष्पि॒ता पृ॑थि॒वी मा॒ता स॑मु॒द्रो मूल᳚ं वी॒रुधा॑ं ब॒भूव॑ । तास्त्वा॑ पु॒त्रविद्या॑य दैवी॒ः प्राव॒न्त्वोष॑धयः ॥६॥ [५।३]

सूक्त २४

ऋषिः—भृगुः ।। देवताः—वनस्पतिः, प्रजापतिः ।। छन्दः—१, ३–७ अनुष्टुप्; २ निचृत् पथ्या पङ्क्तिः ।। मंत्र ७ ।

पय॑स्वती॒रोष॑धयः॒ पय॑स्वन्माम॒कं वचः॑। अथो॒ पय॑स्वतीना॒मा भ॑रे॒ऽहं स॑हस्र॒शः ॥१॥

वेदा॒हं पय॑स्वन्तं च॒कार॑ धा॒न्य॑[ब॒हु। स॒म्भृत्वा॒ नाम॒ यो दे॒वस्तं व॒यं ह॑वामहे॒ योयो॒ अय॑ज्वनो गृ॒हे ॥२॥

इ॒मा याः पञ्च॑ प्र॒दिशो॒᳚ मान॒वीः पञ्च॑ कृ॒ष्टयः॑। वृ॒ष्टे शाप॑᳚ न॒दीरि॑वे॒ह स्फा॒तिं स॒मा॑वहान् ॥३॥

उदुत्सं᳚ श॒तधा॑रं स॒हस्र॑धार॒मक्षि॑तम्। ए॒वास्माके॒दं धा॒न्य॑[स॒हस्र॑धार॒मक्षि॑तम् ॥४॥

शत॑हस्त स॒माह॑र॒ सह॑स्रहस्त॒ सं कि॑र। कृ॒तस्य॑ का॒र्य॑[स्य चे॒ह स्फा॒तिं स॒मा॑वह ॥५॥

ति॒स्रो मात्रा॑ गन्ध॒र्वाणां॑ चत॑स्रो गृ॒हप॑त्न्याः। तासां॑ या स्फा॑ति॒मत्त॑मा॒ तया॑ त्वा॒भि मृ॑शामसि ॥६॥

उ॒पो॒हश्च॑ समू॒हश्च॑ क्ष॒त्तारौ॑ ते प्रजापते। तावि॒हा व॑हतां स्फा॒तिं ब॒हुं भू॒मान॒मक्षि॑तम् ॥७॥ [५।४]

सूक्त २५

ऋषिः— भृगुः ।। देवता— कामेषुः; मित्रावरुणौ ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र ६ ।

उ॒त्तु॒दस्त्वोत् तु॑दतु॒ मा धृ॑था॒ः शय॑ने॒ स्वे। इषु॒ः काम॑स्य॒ या भी॒मा तया॑ विध्यामि त्वा हृदि ॥१॥

आ॒धीप॑र्णां॒ काम॑शल्या॒मिषुं॑ सङ्क॒ल्पकु॑ल्मलाम् । तां सुस॑न्नतां कृ॒त्वा
कामो॑ विध्यतु त्वा हृ॒दि ॥२॥
या प्ली॒हानं॑ शो॒षय॑ति॒ काम॒स्येषुः॒ सुस॑न्नता । प्रा॒चीन॑पक्षा॒
व्योऽषा॒ तया॑ विध्यामि त्वा हृ॒दि ॥३॥
शु॒चा वि॒द्धा व्योऽषया॒ शुष्का॑स्या॒भि स॑र्प मा । मृ॒दुर्निम॑न्युः॒ केव॑ली
प्रियवा॒दिन्यनु॑व्रता ॥४॥
आजा॑मि॒ त्वाज॑न्या॒ परि॑ मा॒तुरथो॑ पि॒तुः । यथा॒ मम॒ क्रता॒वसो॒ मम॑
चि॒त्तमु॒पाय॑सि ॥५॥
व्यऽस्यै मित्रावरुणौ हृ॒दश्चि॒त्तान्य॑स्यतम् । अथै॑नामक्र॒तुं कृ॒त्वा ममै॒व
कृ॑णुतं॒ वशे॑ ॥६॥ [५।५]

सूक्त २६

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१ साग्नयो हेतयः, २ सकामा अविष्यव; ३ अब्युक्ता वैराजः; ४ सवाताः प्रविध्यन्तः; ५ सौषधिका निलिम्पाः; बृहस्पतियुक्ता अवस्वन्तः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २, ५, ६ जगती; ३, ४ भुरिक् त्रिष्टुप्; सर्वाः (१–६) पञ्चपदा विपरीतपादलक्षाः ॥ मन्त्र ६ ।

विनियोगः—संग्राम कर्म में, व सर्पादि का भय दूर करने में सूक्ताभिमन्त्रित अपामार्ग का प्रयोग करे (कौ० ५०।३-५)

ये॒३॑स्यां स्थ प्राच्यां॑ दि॒शि हे॒तयो॒ नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ वो अ॒ग्निरिष॑वः ।
ते नो॑ मृडत॒ ते नोऽधि॑ ब्रूत॒ तेभ्यो॑ वो॒ नम॒स्तेभ्यो॑ वः॒ स्वाहा॑ ॥१॥
ये॒३॑स्यां स्थ दक्षि॑णायां दि॒श्यऽवि॒ष्यवो॒ नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ वः॒ काम॒
इष॑वः । ते नो॑ मृडत॒ ते नोऽधि॑ ब्रूत॒ तेभ्यो॑ वो॒ नम॒स्तेभ्यो॑ वः॒
स्वाहा॑ ॥२॥

ये३॒स्यां स्थ प्र॒तीच्यां॑ दि॒शि वै॑रा॒जा नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ व॒ आप॒ इष॑वः ।
ते नो॑ मृडत ते नोऽधि॑ ब्रू॒त तेभ्यो॑ वो॒ नम॒स्तेभ्यो॑ व॒ः स्वाहा॑ ॥३॥
ये॒॑३॒स्यां स्थोदी॑च्यां दि॒शि प्र॒विध्य॑न्तो॒ नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ वो॒ वात॒ इष॑वः ।
ते नो॑ मृडत॒ ते नोऽधि॑ ब्रू॒त तेभ्यो॑ वो॒ नम॒स्तेभ्यो॑ व॒ः स्वाहा॑ ॥४॥
ये॒॑३॒स्यां स्थ ध्रु॒वायां॑ दि॒शि नि॑लि॒म्पा नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ व॒ ओष॑धी॒रिष॑वः ।
नो॑ मृडत॒ ते नोऽधि॑ ब्रू॒त तेभ्यो॑ वो॒ नम॒स्तेभ्यो॑ व॒ः स्वाहा॑ ॥५॥
ये॒॑३॒स्यां स्थोर्ध्वायां॑ दि॒श्यव॑स्वन्तो॒ नाम॑ दे॒वास्तेषां॑ वो॒ बृह॒स्पति॒रिष॑वः ।
ते नो॑ मृडत॒ ते नोऽधि॑ ब्रू॒त तेभ्यो॑ वो॒ नम॒स्तेभ्यो॑ व॒ः स्वाहा॑ ॥६॥
[६।१]

सूक्त २७

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—१ प्राची, अग्निः, असितः, आदित्याः; २ दक्षिणा, इन्द्रः, तिरश्चिराजिः, पितरः, ३ प्रतीची, वरुणः, पृदाकुः, अन्नम्; ४ उदीची, सोमः, स्वजः, अशनिः, ५ ध्रुवा, विष्णुः, कल्माषग्रीवः, वीरुधः; ६ ऊर्ध्वा, बृहस्पतिः, श्वित्रः, वर्षम् ।। छन्दः—१, ३, ४, ६ अष्टिः; २ अत्यष्टिः; ५ भुरिगष्टिः; सर्वाः (१–६) पञ्चपदाः ।। मन्त्र ६ ।

प्राची॒ दिग॒ग्निरधि॑पतिरसि॒तो र॑क्षि॒तादि॒त्या इष॑वः । तेभ्यो॒ नमोऽधि॑
पतिभ्यो नमो॑ रक्षि॒तृभ्यो॒ नम॒ इषु॑भ्यो॒ नम॑ एभ्यो अस्तु । यो॒॑३॒स्मान्
द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं वो॒ जम्भे॑ दध्मः ॥१॥
दक्षि॑णा॒ दिगिन्द्रोऽधि॑पति॒स्तिर॑श्चिराजी रक्षि॒ता पि॒तर॒ इष॑वः । तेभ्यो॒
नमोऽधि॑पतिभ्यो॒ नमो॑ रक्षि॒तृभ्यो॒ नम॒ इषु॑भ्यो॒ नम॑ एभ्यो अस्तु ।
यो॒॑३॒स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं वो॒ जम्भे॑ दध्मः ॥२॥
प्र॒ती॒ची॒ दिग् वरु॒णोऽधि॑पति॒ः पृदा॑कू रक्षि॒तान्न॒मिष॑वः । तेभ्यो॒ नमोऽधि॑पतिभ्यो॒
नमो॑ रक्षि॒तृभ्यो॒ नम॒ इषु॑भ्यो॒ नम॑ एभ्यो अस्तु । यो॒॑३॒स्मान्
द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं वो॒ जम्भे॑ दध्मः ॥३॥

उदी॑ची॒ दिक् सोमो॒ऽधि॑पतिः स्व॒जो र॑क्षि॒ताशनि॒रिष॑वः । तेभ्यो॒
नमोऽधि॑पतिभ्यो॒ नमो॑ रक्षि॒तृभ्यो॒ नम॒ इषु॑भ्यो॒ नम॑ एभ्यो अस्तु ।
यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं वो॒ जम्भे॑ दध्मः ॥४॥
ध्रु॒वा दिग् विष्णु॒रधि॑पतिः क॒ल्माष॑ग्रीवो रक्षि॒ता वी॒रुध॒ इष॑वः । तेभ्यो॒
नमोऽधि॑पतिभ्यो॒ नमो॑ रक्षि॒तृभ्यो॒ नम॒ इषु॑भ्यो॒ नम॑ एभ्यो अस्तु ।
यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं वो॒ जम्भे॑ दध्मः ॥५॥
ऊ॒र्ध्वा दिग् बृह॒स्पति॒रधि॑पतिः श्वि॒त्रो र॑क्षि॒ता व॒र्षमिष॑वः । तेभ्यो॒
नमोऽधि॑पतिभ्यो॒ नमो॑ रक्षि॒तृभ्यो॒ नम॒ इषु॑भ्यो॒ नम॑ एभ्यो अस्तु ।
यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मस्तं–वो॒ जम्भे॑ दध्मः ॥६॥ [६।२]

सूक्त २८

ऋषिः—**ब्रह्मा** ॥ देवता—**यमिनी** ॥ छन्दः—**१ अतिशाक्वरीगर्भा चतुष्पदातिजगती; २. ३ अनुष्टुप्; ४ यवमध्या विराट्; ककुप्; ५ त्रिष्टुप् ६ विराड्गर्भा प्रस्तारपङ्-**
मन्त्र ६ ।

एकै॑कयै॒षा सृ॒ष्ट्या सं ब॑भूव॒ यत्र॒ गा असृ॑जन्त भू॒तकृ॑तो वि॒श्वरू॑पाः
यत्र॑ वि॒जाय॑ते य॒मिन्य॑प॒र्तुः सा प॒शून् क्षि॑णाति रिफ॒ती रुश॑ती ॥१॥
ए॒षा प॒शून्त्सं क्षि॑णाति क्र॒व्याद् भू॒त्वा व्यद्व॑री । उ॒तैनां॑ ब्र॒ह्मणे॑ दद्या॒त्
तथा॑ स्यो॒ना शि॒वा स्या॑त् ॥२॥
शि॒वा भ॑व॒ पुरु॑षेभ्यो॒ गोभ्यो॒ अश्वे॑भ्यः शि॒वा । शि॒वास्मै सर्व॑स्मै॒
क्षेत्रा॑य शि॒वा न॑ इ॒हैधि॑ ॥३॥
इ॒ह पुष्टि॑रि॒ह रस॑ इ॒ह स॒हस्र॑सातमा भव । प॒शून् य॑मिनि
पोषय ॥४॥

यत्रा॑सु॒हार्द᳚ः सु॒कृ॒तो नद॑न्ति वि॒हाय॒ रोग᳚ं त॒न्व१॒ः स्वाया॑ः । तं लो॒क
य॒स्मिन्न॑भि॒सं॑ब॒भूव॒ सा नो॒ मा हिं॑सी॒त् पुरु॑षान् प॒शूंश्च॑ ॥५॥
यत्रा॑ सु॒हार्दां᳚ सु॒कृता॑मग्निहोत्र॒हुता॑ यत्र॑ लो॒कः । तं लो॒कं य॒स्मिन्न॑
भि॒सं॑ब॒भूव॒ सा नो॒ मा हिं॑सी॒त् पुरु॑षान् प॒शूंश्च॑ ॥६॥ [६।३]

सूक्त २९

ऋषिः—उद्दालकः ॥ देवता—१–६ शितिपाद् अविः; ७ कामः; ८ भूमिः ।
छन्दः—१, ३ पथ्या पङ्क्तिः; २, ४–६ अनुष्टुप्, ७ षट्पदा उपरिष्टाद्दैवीबृहती ककुम्मतीगर्भा विराड् जगती; ८ उपरिष्टाद्बृहती ॥ मन्त्र ८ ।

विनियोगः—ग्रह यज्ञ में होम (शान्तिकल्प १५)

यद् राजा॑नो वि॒भज॑न्त इष्टापू॒र्तस्य॑ षो॒ड॒शं य॒मस्या॒मी स॑भा॒सद॑ः
अवि॒स्तस्मा॒त् प्र मु॑ञ्चति द॒त्तः शि॑ति॒पात् स्व॒धा ॥१॥
सर्वा॒न् कामा॑न् पूरयत्या॒भव॑न् प्र॒भव॒न् भव॑न् । आकू॒ति॒प्रोऽवि॑र्द॒त्तः
शि॑ति॒पान्नोप॑ दस्यति ॥२॥
यो ददा॑ति शिति॒पाद॒मविं॑ लो॒केन॒ संमि॑तम् । स नाक॑म॒भ्यारो॑हति॒ यत्र॑
शु॒ल्को न क्रि॒यते॑ अब॒लेन॒ बली॑यसे ॥३॥
पञ्चा॑पूपं शिति॒पाद॒मविं॑ लो॒केन॒ संमि॑तम् । प्र॒दा॒तोप॑ जीवति पि॑तॄ॒णां
लो॒केऽक्षि॑तम् ॥४॥
पञ्चा॑पूपं शिति॒पाद॒मविं॑ लो॒केन॒ संमि॑तम् । प्र॒दा॒तोप॑ जीवति
सू॒र्या॒मा॒सयो॒रक्षि॑तम् ॥५॥
इरे॑व॒ नोप॑ दस्यति समु॒द्र इ॑व॒ पयो॑ म॒हत् । दे॒वौ स॑वा॒सिना॑विव
शि॑ति॒पान्नोप॑ दस्यति ॥६॥

क इ॒दं कस्मा॑ अदा॒त् काम॒ः कामा॑यादात् । कामो॑ दा॒ता काम॑ः प्रतिग्रही॒ता काम॑ः समु॒द्रमावि॑वेश । कामे॑न त्वा॒ प्रति॑ गृह्णामि॒ कामै॒तत् ते॑ ॥७॥

भूमि॑ष्ट्वा॒ प्रति गृह्णात्व॒न्तरि॑क्षमि॒दं म॒हत् । माहं प्रा॒णेन॒ मात्मना॒ मा प्र॒जया॑ प्रति॒गृह्य॒ वि रा॑धिषि ॥८॥ [६।४]

सूक्त ३०

ऋषिः — अथर्वा ।। देवता —सांमनस्यम् ।। छन्दः—१--४ अनुष्टुप् ५ विराड् जगती, ६ प्रस्तारपङ्क्तिः, ७ त्रिष्टुप् । मंत्र ७ ।

विनियोगः— हृदयों को परस्पर मिलाने में (कौ० १२।५)

सहृ॑दयं सांम॑न॒स्यमवि॑द्वेषं कृणो॑मि वः । अ॒न्यो अ॒न्यम॒भि ह॑र्यत व॒त्सं जा॒तमि॑वा॒घ्न्या ॥१॥

अनु॑व्रतः पि॒तुः पु॒त्रो मा॒त्रा भ॑वतु॒ संम॑नाः । जा॒या पत्ये॒ मधु॑मतीं॒ वाचं॑ वदतु शन्ति॒वाम् ॥२॥

मा भ्राता॒ भ्रात॑रं द्विक्ष॒न्मा स्वसा॑रमु॒त स्वसा॑ । स॒म्यञ्च॒ः सव्र॑ता भू॒त्वा वाचं॑ वदत भ॒द्रया॑ ॥३॥

येन॑ दे॒वा न त्रि॒यन्ति॒ नो च॑ विद्वि॒षते॑ मि॒थः । तत् कृ॑ण्मो॒ ब्रह्म॑ वो गृ॒हे संज्ञा॑नं॒ पुरु॑षेभ्यः ॥४॥

ज्याय॑स्वन्तश्चि॒त्तिनो॒ मा वि यौ॑ष्ट संरा॒धय॑न्तः॒ सधु॑रा॒श्चर॑न्तः । अ॒न्यो अ॒न्यस्मै॑ व॒ल्गु वद॑न्त॒ एत॑ सध्री॒चीना॑न् व॒ः संम॑नसस्कृणोमि ॥५॥

स॒मानो प्र॒पा स॒ह वो॑ऽन्नभा॒गः स॑मा॒ने योक्त्रे॑ स॒ह वो॑ युनज्मि । स॒म्यञ्चो॒ऽग्निं स॑पर्यता॒रा नाभि॑मिवा॒भितः॑ ॥६॥

स॒ध्रीचीना॑न् व॒ः संम॑नसस्कृणो॒म्येक॑श्नुष्टीन्त्सं॒वन॑नेन॒ सर्वा॑न् । दे॒वा इ॑वा॒मृतं॒ रक्ष॑माणाः सा॒यंप्रा॑तः सौमन॒सो वो॑ अस्तु ॥७॥ [६।५]

सूक्त ३१

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अग्न्यादयः पाप्महनो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१–३, ६-११ अनुष्टुप् भुरिगनुष्टुप, ५ विराड् प्रस्तारपङ्क्तिः ॥ मन्त्र ११ ।

विनियोगः—उपनयन के बाद ब्रह्मचारी की दीर्घ आयु के लिये इससे उसके शरीर को अभिमंत्रित करे (कौ० ५८।३)

वि॒दे॒वा ज॒रसा॑वृत॒न् वि त्वम॑ग्ने॒ अरा॑त्या । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥१॥

व्यार्त्या॒ पव॑माना॒े वि श॒क्रः पा॑पकृ॒त्यया॑ । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥२॥

वि ग्रा॒म्याः प॒शव॑ आर॒ण्यैर्व्या॑प॒स्तृष्ण॑यासरन् । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥३॥

वी॒३॒॑मे द्यावा॑पृथि॒वी इ॒तो वि पन्था॑नो॒ दिशं॑दिशम् । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥४॥

त्वष्टा॑ दुहि॒त्रे व॑ह॒तुं यु॑न॒क्तीती॒दं विश्वं॒ भुव॑नं॒ वि या॑ति । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥५॥

अ॒ग्निः प्रा॒णान्त्सं द॑धाति च॒न्द्रः प्रा॒णेन॒ संहि॑तः । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥६॥

प्रा॒णेन॑ वि॒श्वतो॑वीर्यं दे॒वाः सूर्यं॒ समै॑रयन् । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥७॥

आयु॑ष्मतामायु॒ष्कृतां॑ प्रा॒णेन॑ जीव॒ मा मृ॑थाः । व्य१॒॑हं सर्वे॑ण पा॒प्मना॒ वि यक्ष्मे॑ण॒ समायु॑षा ॥८॥

प्राणेन प्राणतां प्राणेहैव भव मा मृथाः । व्य१ हं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥९॥

उदायुषा समायुषोदोषधीनां रसेन । व्य१ हं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥१०॥

आ पर्जन्यस्य वृष्ट्योदस्थामामृता वयम् । व्य१ हं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥११॥ [६।६]

॥ इति तृतीयं काण्डं समाप्तम् ॥

* ॐ *

अथर्ववेद-संहिता

अथ चतुर्थं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—वेनः ॥ देवता—बृहस्पतिः, आदित्यः ॥ छन्दः—१, ३, ४; ६; ७ त्रिष्टुप
२, ५ पुरोऽनुष्टुप् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

ब्रह्म॑ जज्ञा॒नं प्र॑थ॒मं पु॒रस्ता॒द् वि सी॑म॒तः सु॒रुचो॑ वे॒न आ॑वः ।
स बु॒ध्न्या॑ उप॒मा अ॑स्य वि॒ष्ठाः स॒तश्च॒ योनि॒मस॑तश्च॒ वि व॑ः ॥१॥
इ॒यं पित्र्या॒ रा॒ष्ट्र्ये॒त्वग्रे॑ प्रथ॒माय॑ ज॒नुषे॑ भुवने॒ष्ठाः । तस्मा॑ ए॒तं सु॒रुचं॑
ह्वा॒रम॑ह्यं घ॒र्मं श्री॑णन्तु प्रथ॒माय॑ धा॒स्यवे॑ ॥२॥
प्र यो ज॒ज्ञे वि॒द्वान॑स्य॒ बन्धु॒र्विश्वा॑ दे॒वानां॒ जनि॑मा विवक्ति । ब्र॒ह्म
ब्रह्म॑ण॒ उज्ज॑भार॒ मध्या॑न्नी॒चैरु॒च्चैः स्व॒धा अ॒भि प्र त॑स्थौ ॥३॥
स हि दि॒वः स पृ॑थि॒व्या ऋ॑त॒स्था म॒ही क्षेम॒ं रोद॑सी अस्कभायत् ।
म॒हान् म॒ही अ॑स्कभाय॒द् वि जा॒तो द्यां सद्म॒ पार्थि॑वं च॒ रज॑ः ॥४॥
स बु॒ध्न्या॑दाष्ट्र ज॒नुषो॒ऽभ्यग्रं॒ बृह॒स्पति॑र्दे॒वता॒ तस्य॑ स॒म्राट् । अह॒र्य-
च्छु॒क्रं ज्योति॑षो॒ जनि॒ष्टाथ॑ द्यु॒मन्तो॒ वि व॑सन्तु॒ विप्रा॑ः ॥५॥
नू॒नं तद॑स्य का॒व्यो हि॑नोति म॒हो दे॒वस्य॑ पू॒र्व्यस्य॒ धाम॑ । ए॒ष ज॑ज्ञे
ब॒हु॑भिः सा॒कमि॒त्था पूर्वे॒ अर्धे॒ विषि॑ते स॒सन् नु ॥६॥
योऽथ॑र्वाणं पि॒तरं॑ दे॒वब॑न्धुं॒ बृह॒स्पतिं॒ नम॒साव॑ च॒ गच्छा॑त् । त्वं विश्वे॑षां
ज॒नि॒ता यथा॑सः क॒विर्दे॒वो न दभा॑यत् स्व॒धावा॑न् ॥७॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः—वेनः ।। देवता—आत्मा ।। छन्दः—१–५, ८ त्रिष्टुप्, ६ पुरोऽनुष्टुप् त्रिष्टुप्, ७ उपरिष्टाज्ज्योतिस्त्रिष्टुप् ।। मन्त्र ८ ।

य आ॑त्म॒दा ब॑ल॒दा यस्य॒ विश्व॑ उ॒पास॑ते प्र॒शिष॒ं यस्य॑ दे॒वाः। यो॒३॒ऽस्येशे॑
द्वि॒पदो॒ यश्चतु॑ष्पद॒ः कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥१॥
यः प्रा॑ण॒तो नि॑मिष॒तो म॑हि॒त्वैको॒ राजा॒ जग॑तो ब॒भूव॑। यस्य॑ च्छा॒या-
मृत॒ं यस्य॑ मृ॒त्युः कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥२॥
यं क्रन्द॑सी॒ अव॑तश्चस्कभा॒ने भि॒यसा॑ने॒ रोद॑सी॒ अह्व॑येताम् । यस्या॒सौ
पन्था॒ रज॑सो वि॒मान॒ः कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥३॥
यस्य॒ द्यौरु॒र्वी पृ॑थि॒वी च॑ म॒ही यस्या॒द उ॒र्व१॒न्तरि॑क्षम्। यस्या॒सौ सूरो॒
वित॑तो महि॒त्वा कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥४॥
यस्य॒ विश्वे॑ हि॒मव॑न्तो महि॒त्वा स॑मु॒द्रे यस्य॑ र॒सामि॒दाहुः॑। इ॒माश्च॑
प्र॒दिशो॒ यस्य॑ बा॒हू कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥५॥
आपो॒ अग्रे॒ विश्व॑माव॒न् गर्भ॒ं दधा॑ना अ॒मृता॑ ऋत॒ज्ञाः। यासु॑ दे॒वीष्वधि॑
दे॒व आसी॒त् कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥६॥
हि॒र॒ण्य॒ग॒र्भः सम॑वर्त॒ताग्रे॑ भू॒तस्य॑ जा॒तः पति॒रेक॑ आसीत्। स दा॑धार
पृथि॒वीमु॒त द्यां कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥७॥
आपो॑ व॒त्सं ज॒नय॑न्ती॒र्गर्भ॒मग्रे॒ समैर॑यन्। तस्यो॒त जाय॑मान॒स्योल्ब॑
आसीद्धिर॒ण्यय॒ः कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ॥८॥ [१।२]

सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—व्याघ्रः ।। छन्दः—१ पथ्यापंक्तिः; २, ४—६ अनुष्टुप्
३ गायत्री; ७ ककुम्मती-गर्भोपरिष्टाद्बृहती ।। मत्र ७ ।

उदि॒तस्त्रयो॑ अक्रमन् व्या॒घ्रः पुरु॑षो॒ वृकः॑। हिरु॒ग्घि यन्ति॒ सिन्ध॑वो॒
हिरु॑ग् दे॒वो वन॒स्पति॒र्हिरु॑ङ् नमन्तु॒ शत्र॑वः ॥१॥

परे॑णैतु प॒था वृक॑ः पर॒मेणो॒त तस्क॑रः । परे॑ण द॒त्वती॒ रज्जः परे॑णाघा॒-
युर॑र्षतु ॥२॥

अ॒क्ष्यौ॑ च ते॒ मुखं॑ च ते व्याघ्र जम्भयामसि । आत् सर्वा॑न् विंश॒तिं
न॒खान् ॥३॥

व्या॒घ्रं द॒त्वतां॑ व॒यं प्र॑थ॒मं जम्भ॑यामसि । आदु॑ ष्टे॒नमथो॒ अहिं॑
यातु॒धान॒मथो॒ वृक॑म् ॥४॥

यो अ॒द्य स्ते॒न आय॑ति॒ स संपि॑ष्टो॒ अपा॑यति । प॒थाम॑पध्वं॒सेनै॒त्विन्द्रो॒
वज्रे॑ण हन्तु॒ तम् ॥५॥

मू॒र्णा मृ॒गस्य॒ दन्ता॒ अपि॑शीर्णा उ पृ॒ष्टयः॑ । नि॒म्रुक् ते॑ गो॒धा भ॑वतु
नी॒चाय॑च्छश॒युर्मृ॒गः ॥६॥

यत् सं॒यमो॒ न वि य॑मो॒ वि य॑मो॒ यन्न सं॒यमः॑ । इ॒न्द्र॒जाः सो॑म॒जा
आ॑थर्व॒णम॑सि व्याघ्र॒जम्भ॑नम् ॥७॥ [१।३]

सूक्त ४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वनस्पतिः (उच्छुष्मौषधिः); ६ अग्निः, सविता, सरस्वती, ब्रह्मणस्पतिः ॥ छन्दः—१--३; ५, ८ अनुष्टुप्; ४ पुरउष्णिक्; ६, ७ भुरिगनुष्टुप् ॥ मन्त्र ८ ।

यां त्वा॑ गन्ध॒र्वो अख॑नद् वरु॑णाय मृ॒तभ्र॑जे । तां त्वा॑ व॒यं ख॑नाम॒-
स्योष॑धिं शेप॒हर्ष॑णीम् ॥१॥

उदु॒षा उदु॒ सूर्य॒ उदि॒दं माम॒कं वचः॑ । उदे॑जतु प्र॒जाप॑ति॒र्वृषा॒ शुष्मे॑ण
वा॒जिना॑ ॥२॥

यथा॑ स्म ते वि॒रोह॑तो॒ऽभित॑प्तमि॒वान॑ति । तत॑स्ते॒ शुष्म॑वत्तरमि॒यं
कृ॑णो॒त्वोष॑धिः ॥३॥

उच्छुष्मौष॑धीना॒ं सार॑ ऋष॒भाणा॑म् । सं पु॒ंसामि॑न्द्र॒ वृष्ण्य॑म॒स्मिन्
धे॑हि तनूवशिन् ॥४॥

अ॒पां रस॑ः प्रथम॒जोऽथो॒ वन॒स्पती॑नाम् । उ॒त सोम॑स्य॒ भ्राता॑स्यु॒तार्श॑-
म॑सि॒ वृष्ण्य॑म् ॥५॥

अ॒द्याग्ने॑ अ॒द्य स॑वितर॒द्य दे॑वि सरस्वति । अ॒द्यास्य ब्र॑ह्मणस्पते॒ धनु॑रि॒वा
ता॑नया॒ पस॑ः ॥६॥

आह॒ं त॑नोमि ते॒ पसो॒ अधि॒ ज्यामि॑व॒ धन्व॑नि । क्रम॒स्वर्श॑ इव रो॒हित॒
मन॑वग्लायता॒ सदा॑ ॥७॥

अश्व॑स्याश्वत॒रस्या॒जस्य॒ पेत्व॑स्य च । अथ॑ ऋष॒भस्य॒ ये वा॒जास्तान॒—
स्मिन् धे॑हि तनूवशिन् ॥८॥ [११४]

सूक्त ५

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—वृषभः, स्वापनम् ॥ छन्दः—१, ३–६ अनुष्टुप्;
२भुरिगनुष्टुप्; ७ पुरस्ताज्ज्योतिस्त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

विनियोगः—प्रेयसी के समीपस्थ जनों को निद्राभिभूत करना (कौ० ३६ । १-४)

स॒हस्र॑शृङ्गो वृष॒भो यः स॑मु॒द्रादु॒दाच॑रत् । तेना॑ सह॒स्ये॑ना व॒यं॑ नि
जना॑न्त्स्वापयामसि ॥१॥

न भूमि॒ं वातो॒ अति॑ वाति॒ नाति॑ पश्यति॒ कश्च॒न । स्त्रिय॑श्च॒ सर्वाः॑
स्वा॒पय॒ शुन॒श्चेन्द्र॑सखा॒ चर॑न् ॥ २ ॥

प्रो॒ष्ठे॒श॒यास्त॑ल्पेश॒या नारी॒र्या व॑ह्यशीव॑रीः । स्त्रियो॒ याः पुण्य॑गन्ध-
य॒स्ताः सर्वाः॑ स्वापयामसि ॥ ३ ॥

एज॑देजदजग्रभं॒ चक्षुः॑ प्रा॒णम॑जग्रभम् । अङ्गा॑न्यजग्रभं॒ सर्वा॒ रात्री॑णा-
मतिशर्व॒रे ॥ ४ ॥

य आस्ते॒ यश्चर॑ति॒ यश्च॒ तिष्ठ॑न् वि॒पश्य॑ति । तेषां॒ सं द॑ध्मो॒ अक्षी॑णि॒
यथे॒दं ह॒र्म्यं तथा॑ ॥ ५ ॥

स्वप्तु॑ मा॒ता स्वप्तु॑ पि॒ता स्वप्तु॒ श्वा स्वप्तु॑ वि॒श्पतिः॑ । स्वप॑न्त्वस्यै
ज्ञा॒तयः॒ स्वप्त्व॒यम॒भितो॒ जनः॑ ॥ ६ ॥

स्व॑प्नं स्वप्नाभि॒कर॑णेन॒ सर्वं॒ नि ष्वा॑पया॒ जन॑म् । ओत्सू॒र्य॑म॒न्यान्त्स्वा॒-
पया॑व्यु॒षं जा॑गृताद॒हमिन्द्र॑इ॒वारि॑ष्टो॒ अक्षि॑तः ॥७॥ [११५]

सूक्त ६

ऋषिः—गरुत्मान् ।। देवता—१ ब्राह्मणः, २ द्यावापृथिवी, सप्त सिन्धवः, ३ सुपर्णः, ४—८ विषम् छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र ८ ।

विनियोगः – विष दूरी करण (कौ० २८ । १)

ब्रा॒ह्म॒णो ज॑ज्ञे प्रथ॒मो दश॑शीर्षो॒ दशा॑स्यः । स सोम॑ं प्रथ॒मः प॑पौ॒ स
च॑कारार॒सं वि॒षम् ॥ १ ॥

याव॑ती॒ द्यावा॑पृथि॒वी व॑रि॒म्णा याव॑त् स॒प्त सिन्ध॑वो वितष्ठि॒रे । वाचं॑
वि॒षस्य॒ दूष॑णीं॒ तामि॒तो निर॑वादिषम् ॥२॥

सु॒प॒र्णस्त्वा॑ ग॒रुत्मा॒न् विषं॑ प्रथ॒मामा॑वयत् । नामी॑मदो॒ नारू॑रुप उ॒तास्मा॑
अभवः पि॒तुः ॥ ३ ॥

यस्त॒ आस्य॒त् पञ्चा॑ङ्गुरिर्व॒क्राचि॒दधि॒ धन्व॑नः । अ॒प॒स्क॒म्भस्य॑ श॒ल्या-
न्निर॑वोचम॒हं वि॒षम् ॥ ४ ॥

शल्याद् विषं निरवोचं प्राञ्जनादुत पर्णधेः । अपाष्ठाच्छृङ्गात्
कुल्मलान्निरवोचमहं विषम् ॥५॥

अरसस्त इषो शल्योऽथो ते अरसं विषम् । उतारसस्य वृक्षस्य धनुष्टे
अरसारसम् ॥६॥

ये अपीषन् ये अदिहन् य आस्यन् ये अवासृजन् । सर्वे ते वध्रयः
कृता वध्रिर्विषगिरिः कृतः ॥७॥

वध्रयस्ते खनितारो वध्रिस्त्वमस्योषधे । वध्रिः स पर्वतो गिरिर्यतो
जातमिदं विषम् ॥८॥ [२।१]

सूक्त ७

ऋषिः—गरुत्मान् ॥ देवता—वनस्पतिः; ॥ छन्दः—१-३, ५-७ अनुष्टुप्; ४ स्वराडनुष्टुप् ॥ मंत्र ७ ।

विनियोग—विष परिहरण (सायण)

वारिदं वारयातै वरणावत्यामधि । तत्रामृतस्यासिक्तं तेना ते वारये
विषम् ॥१॥

अरसं प्राच्यं विषमरसं यदुदीच्यम् । अथेदमधराच्यं करम्भेण वि
कल्पते ॥२॥

करम्भं कृत्वा तिर्यं पीबस्पाकमुदारथिम् । क्षुधा किल त्वा दुष्टनो
जक्षिवान्त्स न रूरुपः ॥३॥

वि ते मदं मदावति शरमिव पातयामसि । प्र त्वा चरुमिव येषन्तं
वचसा स्थापयामसि ॥४॥

परि ग्राममिवाचितं वचसा स्थापयामसि । तिष्ठा वृक्ष इव स्थाम्न्य-
भ्रिखाते न रूरुपः ॥५॥

पवस्तैस्त्वा पर्यक्रीणन् दूर्शेभिरजिनैरुत । प्रक्रीरसि त्वमोषधेऽभ्रिखाते
न रूरुपः ॥६॥

अनाप्ता ये वः प्रथमा यानि कर्माणि चक्रिरे । वीरान् नो अत्र मा
दभन् तद् व एतत् पुरो दधे ॥७॥ [२।२]

सूक्त ८

ऋषिः—**अथर्वाङ्गिराः** ॥ देवता—**राज्याभिषेकः; आपः, (मन्त्रोक्ता राजादयः)** ॥ छन्दः—१, ७ भुरिक् त्रिष्टुप्; २, ४, ६ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप्, ५ विराड् प्रस्तारपङ्क्तिः ॥ मन्त्र ७ ।

विनियोग—राज्यारोहण काल में अभिषेक व जप ?

भूतो भूतेषु पय आ दधाति स भूतानामधिपतिर्बभूव । तस्य
मृत्युश्चरति राजसूयं स राजा राज्यमनु मन्यतामिदम् ॥१॥

अभि प्रेहि माप वेन उग्रश्चेत्ता सपत्नहा । आ तिष्ठ मित्रवर्धन तुभ्यं
देवा अधि ब्रुवन् ॥२॥

आतिष्ठन्तं परि विश्वे अभूषञ्छ्रियं वसानश्चरति स्वरोचिः । महत् तद्
वृष्णो असुरस्य नामा विश्वरूपो अमृतानि तस्थौ ॥३॥

व्याघ्रो अधि वैयाघ्रे वि क्रमस्व दिशो महीः । विशस्त्वा सर्वा
वाञ्छन्त्वापो दिव्याः पयस्वतीः ॥४॥

या आपो दिव्याः पयसा मदन्त्यन्तरिक्ष उत वा पृथिव्याम् । तासां
त्वा सर्वासामपामभि षिञ्चामि वर्चसा ॥५॥

अभि त्वा वर्चसासिचन्नापो दिव्याः पयस्वतीः । यथासो मित्रवर्धन-
स्तथा त्वा सविता करत् ॥६॥
एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः सिंहं हिन्वन्ति महते सौभगाय । समुद्रं
न सुभुवस्तस्थिवांसं मर्मृज्यन्ते द्वीपिनमप्स्व१न्तः ॥ ७ ॥ [२।३]

सूक्त ९

ऋषिः — भृगुः ॥ देवता — त्रैककुदाञ्जनम् ॥ छन्दः — १, ४--१० अनुष्टुप्;
२ ककुम्मत्यनुष्टुप्; ३ पथ्या पङ्क्तिः ॥ मन्त्र १० ।

एहि जीवं त्रायमाणं पर्वतस्यास्यक्ष्यम् । विश्वेभिर्देवैर्दत्तं परिधिर्जीवनाय
कम् ॥ १ ॥
परिपाणं पुरुषाणां परिपाणं गवामसि । अश्वानामर्वतां परिपाणाय
तस्थिषे ॥२॥
उतासि परिपाणं यातुजम्भनमाञ्जन । उतामृतस्य त्वं वेत्थाथो असि
जीवभोजनमथो हरितभेषजम् ॥३॥
यस्याञ्जन प्रसर्पस्यङ्गमङ्गं परुष्परुः । ततो यक्ष्मं वि बाधस उग्रो
मध्यमशीरिव ॥४॥
नैनं प्राप्नोति शपथो न कृत्या नाभिशोचनम् । नैनं विष्कन्धमश्नुते
यस्त्वा बिभर्त्याञ्जन ॥५॥
असन्मन्त्राद् दुःष्वप्न्याद् दुष्कृताच्छमलादुत । दुर्हार्दश्चक्षुषो घोरात्
तस्मान्नः पाह्याञ्जन ॥६॥
इदं विद्वानाञ्जन सत्यं वक्ष्यामि नानृतम् । सनेयमश्वं गामहमात्मानं
तव पूरुष ॥७॥

त्रयो॑ दा॒सा आञ्ज॑नस्य त॒क्मा ब॒लास॒ आदहि॑ः । वर्षि॑ष्ठः॒ पर्व॑तानां॑ त्रिक॒कुन्नाम॑ ते पि॒ता ॥ ८ ॥

यदाञ्ज॑नं त्रैककु॒दं जा॒तं हि॒मव॑त॒स्परि॑ । या॒तूंश्च॒ सर्वा॑ञ्ज॒म्भय॑त् सर्वा॑श्च यातुधा॒न्य॑ः ॥ ९ ॥

यदि॒ वासि॑ त्रैककु॒दं यदि॑ यामु॒नमु॒च्यसे॑ । उ॒भे ते॑ भ॒द्रे नाम्नी॒ ताभ्यां॑ नः पाह्याञ्जन ॥ १० ॥ [२।४]

सूक्त १०

ऋषिः — अथर्वा ॥ देवता — शङ्खमणिः, कृशनः ॥ छन्दः — १–५ अनुष्टुप्; ६ पथ्या पंक्तिः ७ पञ्चपदा परानुष्टुप्शाक्वरी ॥ मन्त्र ७ ।

वाता॑ज्जा॒तो अ॒न्तरि॑क्षाद् वि॒द्युतो॒ ज्योति॑ष॒स्परि॑ । स नो॑ हिरण्य॒जाः श॒ङ्खः कृश॑नः पा॒त्वंह॑सः ॥ १ ॥

यो अ॑ग्र॒तो रो॑च॒नानां॑ समु॒द्रादधि॑ जज्ञि॒षे । श॒ङ्खेन॑ ह॒त्वा रक्षां॑स्य॒त्त्रिणो॒ वि ष॑हामहे ॥२॥

श॒ङ्खेना॑मी॒वामम॑तिं श॒ङ्खेनो॒त स॒दान्वाः॑ । श॒ङ्खो नो॑ वि॒श्वभे॑षजः॒ कृश॑नः पा॒त्वंह॑सः ॥३॥

दि॒वि जा॒तः स॑मुद्र॒जः सिन्धु॒तस्पर्याभृ॑तः । स नो॑ हिरण्य॒जाः श॒ङ्ख आ॑युष्प्र॒तर॑णो म॒णिः ॥४॥

स॒मु॒द्राज्जा॒तो म॒णिर्वृ॒त्राज्जा॒तो दि॑वाक॒रः । सो अ॒स्मान्त्स॒र्वतः॑ पातु हे॒त्या दे॑वासु॒रेभ्यः॑ ॥५॥

हिर॑ण्यानामेको॑ऽसि॒ सोमा॒त् त्वमधि॑ जज्ञिषे । रथे॒ त्वम॑सि दर्श॒त इ॑षु॒धौ रो॑च॒नस्त्वं प्र ण॒ आयूं॑षि तारिषत् ॥६॥

देवानामस्थि कृशनं बभूव तदात्मन्वच्चरत्यप्स्व१न्तः । तत् ते
बध्नाम्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय शतशारदाय कार्शनस्त्वाभि
रक्षतु ॥७॥ [२।५]

सूक्त ११

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—अनड्वान् इन्द्ररूपः ॥ छन्दः—१, ४ जगती; २ भुरिक् त्रिष्टुप्; ३, ५, ६ त्रिष्टुप्; ७ षट्पदाऽनुष्टुब्गर्भोपरिष्टाज्जगती निचृच्छक्वरी; ८–१२ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १२ ।

अनड्वान् दाधार पृथिवीमुत द्यामनड्वान् दाधारोर्व१न्तरिक्षम् ।
अनड्वान् दाधार प्रदिशः षडुर्वीरनड्वान् विश्वं भुवनमा विवेश ॥१॥
अनड्वानिन्द्रः स पशुभ्यो वि चष्टे त्रयाञ्छक्रो वि मिमीते अध्वनः ।
भूतं भविष्यद् भुवना दुहानः सर्वा देवानां चरति व्रतानि ॥२॥
इन्द्रो जातो मनुष्येष्वन्तर्घर्मस्तप्तश्चरति शोशुचानः । सुप्रजाः सन्त्स
उदारे न सर्षद् यो नाश्नीयादनडुहो विजानन् ॥३॥
अनड्वान् दुहे सुकृतस्य लोक ऐनं प्याययति पवमानः पुरस्तात् ।
पर्जन्यो धारा मरुत ऊधो अस्य यज्ञः पयो दक्षिणा दोहो अस्य ॥४॥
यस्य नेशे यज्ञपतिर्न यज्ञो नास्य दातेशे न प्रतिग्रहीता । यो विश्वजिद् विश्वभृद् विश्वकर्मा घर्मं नो ब्रूत यतमश्चतुष्पात् ॥५॥
येन देवाः स्वरारुरुहुर्हित्वा शरीरममृतस्य नाभिम् । तेन गेष्म
सुकृतस्य लोकं घर्मस्य व्रतेन तपसा यशस्यवः ॥६॥
इन्द्रो रूपेणाग्निर्वहेन प्रजापतिः परमेष्ठी विराट् । विश्वानरे अक्रमत
वैश्वानरे अक्रमतानडुह्यक्रमत । सोऽदृंहयत सोऽधारयत ॥७॥

म॒ध्य॑मे॒तद॑न॒डुहो॒ यत्रै॒। वह॒ आहि॑तः। ए॒ताव॑द॒स्य प्रा॒चीन॒ं यावा॑न्
प्र॒त्यङ् स॒माहि॑तः ॥८॥
यो वेदा॑न॒डुहो॒ दोहा॑न्त्स॒प्तानु॑पदस्वतः। प्र॒जां च॑ लो॒कं चा॑प्नोति॒ तथा॑
स॒प्तऋ॒षयो᳚ विदुः ॥९॥
प॒द्भिः से॒दिम॑व॒क्राम॒न्निरां॒ जङ्घा॑भिरुत्खि॒दन्। श्रमे᳚णान॒ड्वान्
की॒लालं᳚ की॒नाश॑श्चा॒भि गच्छ॑तः ॥१०॥
द्वाद॑श॒ वा ए॒ता रात्री॒र्व्रत्या॑ आहुः प्र॒जाप॑तेः। तत्रोप॒ ब्रह्म॒ यो वेद॒
तद् वा अ॑न॒डुहो᳚ व्र॒तम् ॥११॥
दु॒हे सा॒यं दु॒हे प्रा॒तर्दु॒हे म॒ध्यन्दि॑नं॒ परि॑। दोहा॒ ये अ॑स्य सं॒यन्ति॒
तान् वि॒द्मानु॑पदस्वतः ॥१२॥ [३।१]

सूक्त १२

ऋषि—ऋभुः ॥ देवता–रोहिणी वनस्पतिः ॥ छन्दः—१ त्रिपदा गायत्री, २-५ अनुष्टुप्, ६ त्रिपदा यवमध्या भुरिग्गायत्री,' बृहती। मन्त्र १२ ॥

विनि०—शस्त्रादि से छिन्न होने पर बहते खून को रोकने और क्षतांग को स्वस्थ करने के लिये प्रातःकाल इस सूक्त से अभिमंत्रित करके क्वथित लाक्षोदक से अवसेचन करे और लाक्षौषध लेपन करे। मन्त्राभिमंत्रित दूध पिलाये (कौ० २८।५-६)

रोह॑ण्यसि॒ रोह॑ण्य॒स्थ्नश्छि॒न्नस्य॒ रोह॑णी। रो॒हये॒दम॑रुन्धति ॥१॥

यत् ते᳚ रि॒ष्टं॑ यत् ते᳚ द्यु॒त्तमस्ति॒ पेष्ट्रं᳚ त आ॒त्मनि॑। धा॒ता तद् भ॒द्रया॒
पुन॒ः सं द॑ध॒त् परु॑षा॒ परुः॑ ॥२॥
सं ते᳚ म॒ज्जा म॒ज्ज्ञा भ॑वतु॒ समु॑ ते॒ परु॑षा॒ परुः॑। सं ते᳚ मा॒ंसस्य॒
विस्र॑स्तं॒ सम॒स्थ्यपि॑ रोहतु ॥३॥

मज्जा मज्ज्ञा सं धीयतां चर्मणा चर्म रोहतु । असृक् ते अस्थि रोहतु
मांसं मांसेन रोहतु ॥४॥
लोम लोम्ना सं कल्पया त्वचा सं कल्पया त्वचम् । असृक् ते अस्थि
रोहतु च्छिन्नं सं धेह्योषधे ॥५॥
स उत् तिष्ठ प्रेहि प्र द्रव रथः सुचक्रः सुपविः सुनाभिः । प्रति
तिष्ठोर्ध्वः ॥६॥
यदि कर्तं पतित्वा संशश्रे यदि वाश्मा प्रहृतो जघान । ऋभू
रथस्येवाङ्गानि सं दधत् परुषा परुः ॥७॥ [३।२]

सूक्त १३

ऋषिः—शंतातिः ॥ देवता—**विश्वेदेवाः** ॥ छन्दः—**अनुष्टुप्** । **मन्त्र ७** ॥

विनियोग—उपनयन के बाद आचार्य आयुर्वृद्ध्यर्थं माणवक को स्पर्श करे । यज्ञ में रोगी यजमान को स्वस्थ करने में भी काम आता है (कौ० ५८।३।११)

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः । उतागश्चक्रुषं देवा देवा
जीवयथा पुनः ॥१॥
द्वाविमौ वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः । दक्षं ते अन्य आवातु
व्य१न्यो वातु यद् रपः ॥२॥
आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः । त्वं हि विश्वभेषज
देवानां दूत ईयसे ॥३॥
त्रायन्तामिमं देवास्त्रायन्तां मरुतां गणाः । त्रायन्तां विश्वा भूतानि
यथायमरपा असत् ॥४॥
आ त्वागमं शन्तातिभिरथो अरिष्टतातिभिः । दक्षं त उग्रमाभारिषं
परा यक्ष्मं सुवामि ते ॥५॥

अ॒यं मे॒ हस्तो॒ भग॑वान॒यं मे॒ भग॑वत्तरः । अ॒यं मे॑ वि॒श्वभे॑षजो॒ऽयं शि॒वाभि॑मर्शनः ॥६॥

हस्ता॑भ्यां॒ दश॑शाखाभ्यां जि॒ह्वा वा॒चः पु॑रोग॒वी । अ॒ना॒म॒यि॒त्नुभ्या॑ हस्ता॑भ्यां॒ ताभ्यां॑ त्वा॒भि मृ॑शामसि ॥७॥ [३।३]

सूक्त १४

ऋषिः—भृगुः ॥ देवताः—अग्निः, आज्यम् ॥ छन्दः—१,५,६ त्रिष्टुप्; २, ४ अनुष्टुप्; ३ प्रस्तार पङ्क्तिः; ७,९ जगती; ८ पञ्चपदाऽतिशक्वरी ॥ मन्त्र ९ ।

अ॒जो ह्य१॒ग्नेरज॑निष्ट॒ शोका॒त् सो अ॑पश्यज्जनि॒तार॒मग्रे॑ । तेन॑ दे॒वा दे॒वता॒मग्र॑ आय॒न् तेन॒ रोहा॑न् रुरुहु॒र्मेध्या॑सः ॥१॥

क्रम॑ध्वम॒ग्निना॒ नाक॒मुख्या॑न् हस्ते॑षु॒ बिभ्र॑तः । दि॒वस्पृ॒ष्ठं स्व॑र्ग॒त्वा मि॒श्रा दे॒वेभि॑राद्ध्वम् ॥२॥

पृ॒ष्ठात् पृ॑थि॒व्या अ॒हम॒न्तरि॑क्ष॒मारु॑हम॒न्तरि॑क्षा॒द् दिव॒मारु॑हम् । दि॒वो नाक॑स्य पृ॒ष्ठात् स्व१॒र्ज्योति॑रगाम॒हम् ॥३॥

स्व१॒र्यन्तो॒ नापे॑क्षन्त॒ आ द्यां रो॑हन्ति॒ रोद॑सी । य॒ज्ञं ये वि॒श्वतो॑धारं॒ सुवि॑द्वांसो विते॑नि॒रे ॥४॥

अग्ने॒ प्रेहि॑ प्रथ॒मो दे॒वता॑नां॒ चक्षु॑र्दे॒वाना॑मु॒त मानु॑षाणाम् । इय॑क्षमाणा॒ भृगु॑भिः स॒जोषाः॒ स्व१॒र्यन्तु॒ यज॑मानाः स्व॒स्ति ॥५॥

अ॒जम॑नज्मि॒ पय॑सा घृ॒तेन॑ दि॒व्यं सु॑प॒र्णं प॑य॒सं बृ॒हन्त॑म् । तेन॑ गेष्म सु॒कृत॑स्य लो॒कं स्व॑रा॒रोह॑न्तो अ॒भि नाक॑मुत्त॒मम् ॥६॥

पञ्चौ॑दनं प॒ञ्चभि॑रङ्गु॒लिभि॒र्दर्व्योद्ध॑र पञ्च॒धैत॒मोद॒नम् । प्राच्यां॑ दि॒शि शिरो॑ अ॒जस्य॑ धेहि॒ दक्षि॑णायां दि॒शि दक्षि॑णं धेहि॒ पार्श्व॑म् ॥७॥

प्र॒तीच्यां॑ दि॒शि भ॒सद॑मस्य धे॒ह्युत्त॑रस्यां दि॒श्युत्त॑रं धेहि पा॒र्श्वम् ।
ऊ॒र्ध्वायां॑ दि॒श्य१॒॑जस्यानू॑कं धेहि दि॒शि ध्रु॒वायां॑ धेहि पाज॒स्य॑
म॒न्तरि॑क्षे म॒ध्य॒तो मध्य॑मस्य ॥८॥
शृ॒तम॒जं शृ॒तया॒ प्रोर्णु॑हि त्व॒चा सर्वै॒ रङ्गैः॒ सम्भृ॑तं वि॒श्वरू॑पम् । स उत्
ति॑ष्ठे॒तो अ॒भि नाक॑मुत्त॒मं प॒द्भिश्च॒तुर्भिः॒ प्रति॑ तिष्ठ दि॒क्षु ॥९॥ [३।४]

सूक्त १५

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१ दिशः; २, ३ वीरुधः; ४ मारुतपर्जन्यौ; ५-१० मरुतः, ११ प्रजापतिः, स्तनयित्नुः, १२ वरुणः, १३-१५ मण्डूकाः, (१५ पितरः) १६ वातः ॥ छन्दः—१, २, ५ विराड् जगती; ३, ६, ८, ११, १४, १६ त्रिष्टुप् ४ विराट् पुरस्ताद्बृहती; ७, १३ अनुष्टुप्; ९ पथ्या पङ्क्तिः; १० भुरिक् त्रिष्टुप् १२ पञ्चपदाऽनुष्टुब्गर्भा भुरिक् त्रिष्टुप्; १५ शङ्कुमत्यनुष्टुप् ॥ मंत्र १६ ।

विनि०---वृष्टि के लिये होमादि कर्मानुष्ठान

स॒मुत्प॑तन्तु प्र॒दिशो॒ नभ॑स्वतीः॒ सम॒भ्राणि॒ वात॑जूतानि यन्तु ।
म॒ह॒ऋ॒ष॒भस्य॒ नद॑तो॒ नभ॑स्वतो वा॒श्रा आप॑ः पृथि॒वीं त॑र्पयन्तु ॥१॥
समी॑क्षयन्तु तवि॒षाः सु॒दान॑वो॒ऽपां रसा॒ ओष॑धीभिः सचन्ताम् ।
व॒र्षस्य॒ सर्गा॑ महयन्तु॒ भूमिं॒ पृथ॑ग्जायन्ता॒मोष॑धयो वि॒श्वरू॑पाः ॥२॥
समी॑क्षयस्व॒ गाय॑तो॒ नभां॑स्य॒पां वेगा॑सः॒ पृथ॒गुद्वि॑जन्ताम् । व॒र्षस्य॒
सर्गा॑ महयन्तु॒ भूमिं॒ पृथ॑ग्जायन्तां वी॒रुधो॑ वि॒श्वरू॑पाः ॥३॥
ग॒णास्त्वोप॑ गायन्तु॒ मारु॑ताः प॒र्जन्य॑ घो॒षिणः॒ पृथ॑क् । सर्गा॑
व॒र्षस्य॒ वर्ष॑तो॒ वर्ष॑न्तु पृथि॒वीमनु॑ ॥४॥
उदी॑रयत मरुतः समु॒द्रतस्त्वे॒षो अ॒र्को नभ॒ उत्पा॑तयाथ । म॒ह॒ऋ॒ष॒भस्य॒
नद॑तो॒ नभ॑स्वतो वा॒श्रा आप॑ः पृथि॒वीं त॑र्पयन्तु ॥५॥

अभि क्रन्द स्तनयार्दयोदधिं भूमिं पर्जन्य पयसा समङ्ग्धि ।
त्वया सृष्टं बहुलमैतु वर्षमाशारैषी कृशगुरेत्वस्तम् ॥६॥

सं वोऽवन्तु सुदानव उत्सा अजगरा उत । मरुद्भिः प्रच्युता मेघा
वर्षन्तु पृथिवीमनु ॥७॥

आशामाशां वि द्योततां वाता वान्तु दिशोदिशः । मरुद्भिः प्रच्युता
मेघाः सं यन्तु पृथिवीमनु ॥८॥

आपो विद्युदभ्रं वर्षं सं वोऽवन्तु सुदानव उत्सा अजगरा उत ।
मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः प्रावन्तु पृथिवीमनु ॥९॥

अपामग्निस्तनूभिः संविदानो य ओषधीनामधिपा बभूव । स नो
वर्षं वनुतां जातवेदाः प्राणं प्रजाभ्यो अमृतं दिवस्परि ॥१०॥

प्रजापतिः सलिलादा समुद्रादाप ईरयन्नुदधिमर्दयाति । प्र प्यायतां
वृष्णो अश्वस्य रेतोऽर्वाङेतेन स्तनयित्नुनेहि ॥११॥

अपो निषिञ्चन्नसुरः पिता नः श्वसन्तु गर्गरा अपां वरुणाव नीचीरपः
सृज । वदन्तु पृश्निबाहवो मण्डूका इरिणानु ॥१२॥

संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः । वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र
मण्डूका अवादिषुः ॥१३॥

उपप्रवद मण्डूकि वर्षमा वद तादुरि । मध्ये ह्रदस्य प्लवस्व विगृह्य
चतुरः पदः ॥१४॥

खण्वखा३इ खैमखा३इ मध्ये तदुरि । वर्षं वनुध्वं पितरो मरुतां
मन इच्छत ॥१५॥

महान्तं कोशमुदचाभि षिञ्च सविद्युतं भवतु वातु वातः । तन्वतां
यज्ञं बहुधा विसृष्टा आनन्दिनीरोषधयो भवन्तु ॥१६॥ [३।५]

सूक्त १६

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—वरुणः, सत्यानृतान्वीक्षणम् ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २-४ ६ त्रिष्टुप्; ५ भुरिक् त्रिष्टुप्; ७ जगती; ८ त्रिपान्महाबृहती; ९ विराण्नाम त्रिपाद् गायत्री ॥ मंत्र ९ ।

बृहन्नेषामधिष्ठाता अन्तिकादिव पश्यति । य स्तायन्मन्यते
चरन्त्सर्वं देवा इदं विदुः ॥१॥

यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति यो निलायं चरति यः प्रतङ्कम् । द्वौ
संनिषद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद् वेद वरुणस्तृतीयः ॥२॥

उतेयं भूमिर्वरुणस्य राज्ञ उतासौ द्यौर्बृहती दूरेअन्ता । उतो समुद्रौ
वरुणस्य कुक्षी उतास्मिन्नल्प उदके निलीनः ॥३॥

उत यो द्यामतिसर्पात् परस्तान्न स मुच्यातै वरुणस्य राज्ञः । दिव
स्पशः प्र चरन्तीदमस्य सहस्राक्षा अति पश्यन्ति भूमिम् ॥४॥

सर्वं तद् राजा वरुणो वि चष्टे यदन्तरा रोदसी यत् परस्तात् । संख्याता
अस्य निमिषो जनानामक्षानिव श्वघ्नी नि मिनोति तानि ॥५॥

ये ते पाशा वरुण सप्तसप्त त्रेधा तिष्ठन्ति विषिता रुशन्तः । छिनन्तु
सर्वे अनृतं वदन्तं यः सत्यवाद्यति तं सृजन्तु ॥६॥

शतेन पाशैरभि धेहि वरुणैनं मा ते मोच्यनृतवाङ् नृचक्षः । आस्तां
जाल्म उदरं स्रंसयित्वा कोशइवाबन्धः परिकृत्यमानः ॥७॥

यः संमाम्यो३ वरुणो यो व्याम्यो३ यः संदेश्यो३ वरुणो यो विदेश्यः । यो दैवो वरुणो यश्च मानुषः ॥८॥

तैस्त्वा सर्वैरभि ष्यामि पाशैरसावामुष्यायणामुष्याः पुत्र । तानु ते सर्वाननुसंदिशामि ॥९॥ [४।१]

सूक्त १७

ऋषिः—शुक्रः ॥ देवता:—अपामार्गो वनस्पतिः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् । मन्त्र ८ ॥

ईशानां त्वा भेषजानामुज्जेष आ रभामहे । चक्रे सहस्रवीर्यं सर्वस्मा ओषधे त्वा ॥१॥

सत्यजितं शपथयावनीं सहमानां पुनःसराम् । सर्वाः समह्वयोषधीरितो नः पारयादिति ॥२॥

या शशाप शपनेन याघं मूरमादधे । या रसस्य हरणाय जातमारेभे तोकमत्तु सा ॥३॥

यां ते चक्रुरामे पात्रे यां चक्रुर्नीललोहिते । आमे मांसे कृत्यां यां चक्रुस्तया कृत्याकृतो जहि ॥४॥

दौःष्वप्न्यं दौर्जीवित्यं रक्षो अभ्वमराय्यः । दुर्णाम्नीः सर्वा दुर्वाचस्ता अस्मन्नाशयामसि ॥५॥

क्षुधामारं तृष्णामारमगोतामनपत्यताम् । अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदप मृज्महे ॥६॥

तृष्णामारं क्षुधामारमथो अक्षपराजयम् । अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदप मृज्महे ॥७॥

अपामार्ग ओषधीनां सर्वासामेक इद् वशी । तेनं ते मृज्म आस्थितमथ
त्वमगदश्चर ॥८॥

सूक्त १८

ऋषिः—शुक्रः ॥ देवता—अपामार्गो वनस्पतिः ॥ छन्दः—१-५, ७, ८ अनुष्टुप्, ६ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप् । मन्त्र ८ ॥

समं ज्योतिः सूर्येणाह्ना रात्री समावती । कृणोमि सत्यमूतयेऽरसाः
सन्तु कृत्वरीः ॥१॥

यो देवाः कृत्यां कृत्वा हरादविदुषो गृहम् । वत्सो धारुरिव मातरं तं
प्रत्यगुप पद्यताम् ॥२॥

अमा कृत्वा पाप्मानं यस्तेनान्यं जिघांसति । अश्मानस्तस्यां दग्धायां
बहुलाः फट् करिक्रति ॥३॥

सहस्रधामन् विशिखान् विग्रीवाञ्छायया त्वम् । प्रति स्म चक्रुषे
कृत्यां प्रियां प्रियावते हर ॥४॥

अनयाहमोषध्या सर्वाः कृत्या अदूदुषम् । यां क्षेत्रे चक्रुर्यां गोषु
यां वा ते पुरुषेषु ॥५॥

यश्चकार न शशाक कर्तुं शश्रे पादमङ्गुरिम् । चकार भद्रमस्मभ्यमा-
त्मने तपनं तु सः ॥६॥

अपामार्गोऽप मार्ष्टु क्षेत्रियं शपथश्च यः । अपाह यातुधानीरप
सर्वा अराय्यः ॥७॥

अपमृज्य यातुधानानप सर्वा अराय्यः । अपामार्ग त्वया वयं
सर्वं तदप मृज्महे ॥८॥ [४।३]

सूक्त १९

ऋषिः शुक्रः ।। देवता — **अपामार्गो वनस्पतिः** ।। छन्दः १, ३–८ **अनुष्टुप्**; २ **पथ्या पङ्क्तिः ।। मंत्र ९ ।**

उ॒तो अ॒स्यब॑न्धुकृदु॒तो अ॑सि॒ नु जा॑मिकृ॒त् । उ॒तो कृ॑त्या॒कृतः॑ प्र॒जां
न॒डमि॒वा च्छि॑न्धि॒ वार्षि॑कम् ॥१॥

ब्रा॒ह्म॒णेन॒ पर्यु॑क्तासि॒ कण्व॑न नार्षु॒दे॑न॑ । सेनै॑वैषि॒ त्विषी॑मती॒ न तत्र॑
भ॒यम॑स्ति॒ यत्र॑ प्रा॒प्नोष्यौ॑षधे ॥२॥

अग्र॑मे॒ष्योष॑धीना॒ं ज्योति॑षेवाभिदी॒पय॑न् । उ॒त त्रा॒तासि॒ पाक॒स्याथो॑
ह॒न्तासि॑ र॒क्षसः॑ ॥३॥

यद॒दो दे॒वा असु॑रां॒स्त्वया॒ग्रे नि॒रकु॑र्वत । तत॒स्त्वमध्यो॑षधेऽपामा॒र्गो
अ॑जायथाः ॥४॥

वि॒भि॒न्द॒ती श॒तशा॑खा वि॒भि॒न्दन् नाम॑ ते पि॒ता । प्र॒त्यग् वि भि॑न्धि॒
त्वं तं यो अ॒स्माँ अ॑भि॒दास॑ति ॥५॥

अस॒द् भूम्याः॒ सम॑भव॒त् तद् द्यामे॑ति म॒हद् व्यचः॑ । तद् वै ततो॑
विधू॒पाय॑त् प्र॒त्यक् क॒र्तार॑मृच्छतु ॥६॥

प्र॒त्यङ् हि स॑म्बभू॒विथ॑ प्रती॒चीन॑फ॒लस्त्वम् । सर्वा॒न् मच्छ॒पथाँ॒ अधि॒
वरी॑यो यावया व॒धम् ॥७॥

श॒तेन॑ मा॒ परि॑ पाहि स॒हस्रे॑णा॒भि र॑क्ष मा । इन्द्र॑स्ते वीरुधां पत उ॒ग्र
ओ॒ज्मान॒मा द॑धत् ॥८॥ [४।४]

सूक्त २०

ऋषिः—मातृनामा ॥ देवता—औषधिः ॥ छन्दः—१ स्वराडनुष्टुप्; २-८ अनुष्टुप्; ९ भुरिगनुष्टुप् ॥ मंत्र ९ ।

आ पश्यति प्रति पश्यति परा पश्यति पश्यति । दिवमन्तरिक्षमाद्
भूमिं सर्वं तद् देवि पश्यति ॥१॥

तिस्रो दिवस्तिस्रः पृथिवीः षट् चेमाः प्रदिशः पृथक् । त्वयाहं सर्वा
भूतानि पश्यानि देव्योषधे ॥२॥

दिव्यस्य सुपर्णस्य तस्य हासि कनीनिका । सा भूमिमा रुरोहिथ
वह्यं श्रान्ता वधूरिव ॥३॥

तां मे सहस्राक्षो देवो दक्षिणे हस्त आदधत् । तयाहं सर्वं पश्यामि
यश्च शूद्र उतार्यः ॥४॥

आविष्कृणुष्व रूपाणि मात्मानमप गूहथाः । अथो सहस्रचक्षो त्वं
प्रति पश्याः किमीदिनः ॥५॥

दर्शय मा यातुधानान् दर्शय यातुधान्यः । पिशाचान्त्सर्वान्
दर्शयेति त्वा रभ ओषधे ॥६॥

कश्यपस्य चक्षुरसि शुन्याश्च चतुरक्ष्याः । वीध्रे सूर्यमिव सर्पन्तं मा
पिशाचं तिरस्करः ॥७॥

उदग्रभं परिपाणाद् यातुधानं किमीदिनम् । तेनाहं सर्वं पश्याम्युत
शूद्रमुतार्यम् ॥८॥

यो अ॒न्तरि॑क्षेण॒ पत॑ति॒ दिवं॒ यश्चा॑ति॒सर्प॑ति । भूमिं॒ यो मन्य॑ते ना॒थं तं पि॑शा॒चं प्र द॑र्शय ॥९॥ [४।५]

सूक्त २१

ऋषिः ब्रह्मा ॥ देवता—गावः ॥ छन्दः १. ५-७ त्रिष्टुप्, २-४ जगती । मंत्र ७

आ गावो॑ अग्मन्नु॒त भ॒द्रम॑क्र॒न्त्सीद॑न्तु गो॒ष्ठे र॒णय॑न्त्व॒स्मे । प्र॒जाव॑तीः पु॒रुरू॑पा इ॒ह स्यु॒रिन्द्रा॑य पू॒र्वीरु॒षसो॒ दुहा॑नाः ॥१॥

इन्द्रो॒ यज्व॑ने गृण॒ते च॒ शिक्ष॑त॒ उपेद् द॑दाति॒ न स्वं मु॑षायति । भूयो॑भूयो र॒यिमिद॑स्य व॒र्धय॑न्नभि॒न्ने खि॒ल्ये नि द॑धाति देव॒युम् ॥२॥

न ता न॑शन्ति॒ न द॑भाति॒ तस्क॑रो॒ नासा॑मामि॒त्रो व्य॒थिरा द॑धर्षति । दे॒वांश्च॒ याभि॒र्यज॑ते॒ ददा॑ति च॒ ज्योगित् ताभिः॑ सचते॒ गोप॑तिः स॒ह ॥३॥

न ता अर्वा॑ रे॒णुक॑काटोऽश्नुते॒ न सं॑स्कृत॒त्रमुप॑ यन्ति॒ ता अ॒भि । उ॒रु॒गा॒यमभ॑यं॒ तस्य॒ ता अनु॒ गावो॒ मर्त॑स्य॒ वि च॑रन्ति॒ यज्व॑नः ॥४॥

गावो॒ भगो॒ गाव॒ इन्द्रो॑ म इच्छा॒द् गावः॒ सोम॑स्य प्रथ॒मस्य॑ भ॒क्षः । इ॒मा या गावः॒ स जना॑स॒ इन्द्र॑ इ॒च्छामि॑ हृ॒दा मन॑सा चि॒दिन्द्र॑म् ॥५॥

यू॒यं गा॑वो मेदयथा कृ॒शं चि॑दश्री॒रं चि॑त् कृणुथा सु॒प्रती॑कम् । भ॒द्रं गृ॒हं कृ॑णुथ भद्रवाचो बृ॒हद् वो॒ वय॑ उच्यते स॒भासु॑ ॥६॥

प्र॒जाव॑तीः सू॒यव॑से रु॒शन्तीः॑ शु॒द्धा अ॒पः सु॑प्रपा॒णे पिब॑न्तीः । मा व॑ स्ते॒न ई॑शत॒ माघशं॑सः॒ परि॑ वो रु॒द्रस्य॑ हे॒तिर्वृ॑णक्तु ॥७॥ [५।१]

सूक्त २२

ऋषिः वसिष्ठः, अथर्वा वा ॥ देवता इन्द्रः, क्षत्रियो राजा ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ७ ।

इ॒ममि॑न्द्र वर्धय क्ष॒त्रियँ॑ म इ॒मं वि॒शामे॑कवृ॒षं कृ॑णु॒ त्वम् । निर॒मित्रा॑न-
क्ष्णुह्यस्य॒ सर्वाँ॒स्तान् र॑न्धयास्मा अहमुत्त॒रेषु॑ ॥१॥

एमं भ॑ज॒ ग्रामे॒ अश्वे॑षु॒ गोषु॒ निष्टं भ॑ज॒ यो अ॒मित्रो॑ अ॒स्य । वर्ष्म॑
क्ष॒त्राणा॑म॒यम॑स्तु॒ राजे॑न्द्र॒ शत्रुँ॑ रन्धय॒ सर्व॑म॒स्मै ॥२॥

अ॒यम॑स्तु धन॑पति॒र्धना॑नाम॒यं वि॒शां वि॒श्पति॑रस्तु॒ राजा॑ । अ॒स्मिन्नि॑न्द्र॒
महि॒ वर्चाँ॑सि धेह्यव॒र्चसँ॑ कृणुहि॒ शत्रु॑मस्य ॥३॥

अ॒स्मै द्यावा॑पृथि॒वी भूरि॑ वा॒मं दु॑हाथां घ॒र्मदु॑घे इव धे॒नू । अ॒यं राजा॑
प्रि॒य इन्द्र॑स्य भूयात् वि॒यो गवा॒मोष॑धीनां प॒शूना॑म् ॥४॥

यु॒नज्मि॑ त उत्त॒राव॑न्त॒मिन्द्रं॒ येन॒ जय॑न्ति॒ न प॑रा॒जय॑न्ते । यस्त्वा॒
कर॑देकवृ॒षं जना॑नामु॒त राज्ञा॑मुत्त॒मं मा॑न॒वाना॑म् ॥५॥

उत्त॑र॒स्त्वमध॑रे ते स॒पत्ना॒ ये के च॑ राज॒न् प्रति॑शत्रवस्ते । ए॒क॒वृ॒ष
इन्द्र॑सखा जिगी॒वाञ्छ॑त्रूय॒तामा भ॑रा भोज॑नानि ॥६॥

सिं॒हप्र॑तीको॒ विशो॑ अद्धि॒ सर्वा॑ व्या॒घ्रप्र॑ती॒कोऽव॑ बाधस्व॒ शत्रू॑न् ।
ए॒क॒वृ॒ष इन्द्र॑सखा जिगी॒वाञ्छ॑त्रूय॒तामा खि॑दा॒ भोज॑नानि ॥७॥ [५।२]

—:०:—

सूक्त २३

ऋषिः—मृगारः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१, २, ५, ७ त्रिष्टुप्, ३ पुरस्ताज्ज्योतिष्मती त्रिष्टुप्, ४ अनुष्टुप्, ६ प्रस्तारपंक्तिः ॥ मन्त्र ७ ।

अ॒ग्नेर्म॑न्वे प्रथ॒मस्य॒ प्रचे॑तसः॒ पाञ्च॑जन्यस्य बहु॒धा यमि॒न्धते॑ ।
विशो॑विशः प्रविशि॒वांस॑मीमहे॒ स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥१॥

यथा॑ ह॒व्यं वह॑सि जातवेदो॒ यथा॑ य॒ज्ञं क॒ल्पय॑सि प्रजा॒नन् । ए॒वा
दे॒वेभ्यः॑ सुम॒तिं न॒ आ व॑ह॒ स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥२॥

याम॑न्याम॒न्नुप॑युक्तं॒ वहि॑ष्ठं॒ कर्म॑न्कर्म॒न्नाभ॑गम् । अ॒ग्निमी॑डे र॒क्षोहणं॑
य॒ज्ञवृधं॑ घृ॒ताहु॑तं॒ स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ३ ॥

सु॒जातं॑ जा॒तवे॑दसम॒ग्निं वै॑श्वान॒रं वि॒भुम् । ह॒व्य॒वाहं॑ हवामहे॒ स नो॑
मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ४ ॥

येन॒ ऋष॑यो ब॒लमद्यो॑तयन् यु॒जा येनासु॑राणा॒मयु॑वन्त मा॒याः । येना॒ग्निना॑
प॒णीनिन्द्रो॑ जि॒गाय॒ स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ५ ॥

येन॑ दे॒वा अ॒मृत॑म॒न्वविन्द॒न् येनौष॑धी॒र्मधु॑मती॒रकृ॑ण्वन् । येन॑ दे॒वाः
स्व१॒राभ॑र॒न्त्स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥६॥

यस्ये॒दं प्र॒दिशि॒ यद् वि॒रोच॑ते॒ यज्जा॒तं ज॑नित॒व्यं॑ च॒ केव॑लम् ।
स्तौम्य॒ग्निं ना॑थि॒तो जो॑हवीमि॒ स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ७ ॥ [५।३]

—:०:—

सूक्त २४

ऋषिः—मृगारः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ शक्वरीगर्भा पुरःशक्वरी २–७ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

इन्द्र॑स्य मन्महे॒ शश्व॒दिद॑स्य मन्महे वृत्र॒घ्न स्तोमा॒ उप॑ मे॒म आगु॑ः ।
यो दा॒शुष॑ः सु॒कृतो॒ हव॒मेति॒ स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥१॥

य उ॒ग्रीणा॑मु॒ग्रबा॑हुर्य॒युर्यो दा॑न॒वाना॒ं बल॑मारु॒रोज॑ । येन॑ जि॒ताः
सिन्ध॑वो॒ येन॒ गाव॒ः स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ २ ॥

यश्च॑र्ष॒णि॒प्रो वृ॑ष॒भः स्व॒र्विद् यस्मै॒ ग्रावा॑णः प्र॒वद॑न्ति नृ॒म्णम् । यस्या॑ध्व॒रः
स॒प्तहो॑ता॒ मदि॑ष्ठ॒ः स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ३ ॥

यस्य॑ व॒शास॑ ऋष॒भास॑ उ॒क्षणो॒ यस्मै॑ मी॒यन्ते॒ स्वर॑वः स्व॒र्विदे॑ । यस्मै॑
शु॒क्रः पव॑ते॒ ब्रह्म॑शुम्भित॒ः स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ४ ॥

यस्य॒ जुष्टिं॑ सो॒मिन॑ः का॒मय॑न्ते॒ यं हव॑न्त॒ इषु॑मन्तं॒ गवि॑ष्टौ । यस्मि॑न्न॒र्कः
शि॑श्रि॒ये यस्मि॒न्नोज॒ः स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ५ ॥

यः प्र॑थ॒मः कर्म॒कृत्या॑य ज॒ज्ञे यस्य॑ वी॒र्यं॑ प्रथ॒मस्यानु॑बद्धम् । येनो॑द्य॒तो
वज्रो॒ऽभ्याय॑ता॒हिं स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ६ ॥

यः स॑ङ्ग्रा॒मान् नय॑ति॒ सं यु॒धे व॒शी यः पु॒ष्टानि॑ संसृ॒जति॑ द्व॒यानि॑ ।
स्तौमीन्द्रं॑ नाथि॒तो जो॑हवीमि॒ स नो॑ मुञ्च॒त्वंह॑सः ॥ ७ ॥ [५।४]

—:०:—

सूक्त २५

ऋषिः—मृगारः ॥ देवता—वायुसवितारौ ॥ छन्दः—१, २, ४–६ त्रिष्टुप्, ३ अतिशक्वरी, ७ पथ्याबृहती ॥ मन्त्र ७ ॥

वा॒योः स॑वि॒तुर्वि॒दथा॑नि मन्महे॒ यावा॑त्म॒न्वद् वि॒शथो॒ यौ च॒ रक्ष॑थः ।
यौ विश्व॑स्य परि॒भू ब॑भू॒वथु॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ १ ॥
य॒योः सङ्ख्या॑ता॒ वरि॑मा॒ पार्थि॑वानि॒ याभ्यां॒ रजो॑ युपि॒तम॒न्तरि॑क्षे ।
ययो॑ः प्रा॒यं नान्वा॑न॒शे कश्च॒न तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ २ ॥
तव॑ व्र॒ते नि वि॑शन्ते॒ जना॑स॒स्त्वय्यु॒दि॑ते॒ प्रेर॑ते चित्रभानो । यु॒वं वा॑यो
सवि॒ता च॒ भुव॑नानि रक्षथ॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ३ ॥
अपे॒तो वा॑यो सवि॒ता च॑ दु॒ष्कृ॒तमप॒ रक्षां॑सि॒ शिमि॑दां च सेधतम् । सं
ह्यू॒र्जया॑ सृ॒जथः॒ सं बले॑न॒ तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ४ ॥
र॒यिं मे॒ पोषं॑ सवि॒तोत वा॒युस्त॒नू दक्ष॒मा सु॑वतां सु॒शेव॑म् । अय॒क्ष्मता॑तिं॒
मह॑ इ॒ह ध॑त्तं॒ तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥५॥
प्र सु॑म॒तिं स॑वितर्वा॑य ऊ॒तये॒ मह॑स्वन्तं मत्स॒रं मा॑दयाथः । अ॒र्वाग्
वा॒मस्य॑ प्र॒वतो॒ नि य॑च्छतं॒ तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ६ ॥
उप॒ श्रेष्ठा॑ न आ॒शिषो॑ दे॒वयो॒र्धाम॑न्नस्थिरन् । स्तौमि॑ दे॒वं स॑वि॒तारं॑
च वा॒युं तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ७ ॥ [५।५]

—:०:—

सूक्त २६

ऋषिः—मृगारः । देवता—द्यावापृथिवी । छन्दः—१—पुरोऽष्टिजंगती, २–६ त्रिष्टुप्
७ शाक्वरगर्भा मध्येज्योतिस्त्रिष्टुप् । मन्त्र ७ ।

म॒न्वे वाँ॑ द्यावापृथिवी सुभोजसौ॒ सचे॑तसौ॒ ये अप्र॑थेथा॒म मि॑ता॒
योज॑नानि । प्र॒ति॒ष्ठे ह्यभ॑वत॒ं वसू॑ना॒ं ते नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ १ ॥

प्र॒ति॒ष्ठे ह्यभ॑वत॒ं वसू॑ना॒ं प्रवृ॑द्धे देवी सुभगे उरूची । द्यावा॑पृथिवि॒ भव॑तं
मे स्यो॒ने ते नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ २ ॥

अ॒स॒न्ता॒पे सु॒तप॑सौ हु॒वे॒ऽहमु॒र्वी गम्भी॒रे क॒विभि॑र्नम॒स्ये⌋ । द्यावा॑पृथिवि॒
भव॑तं मे स्यो॒ने ते नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ३ ॥

ये अ॒मृतं॑ बिभृ॒थो ये ह॒वींषि॒ ये स्रो॒त्या बि॑भृ॒थो ये म॑नु॒ष्या⌋न् ।
द्यावा॑पृथिवि॒ भव॑तं मे स्यो॒ने ते नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ४ ॥

ये उ॒स्रिया॑ बिभृ॒थो ये वन॒स्पती॒न् ययो॑र्वां॒ विश्वा॒ भुव॑नान्य॒न्तः ।
द्यावा॑पृथिवि॒ भव॑तं मे स्यो॒ने ते नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ५ ॥

ये की॒लाले॑न त॒र्पय॑थो॒ ये घृ॒तेन॒ याभ्या॑मृ॒ते न किं च॒न श॑क्नु॒वन्ति॑ ।
द्यावा॑पृथिवि॒ भव॑तं मे स्यो॒ने ते नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ६ ॥

यन्मे॒दम॑भि॒शोच॑ति॒ येन॑ येन वा कृ॒तं पौरु॑षेया॒न्न दैवा॑त् । स्तौमि॒
द्यावा॑पृथिवी॒ ना॑थि॒तो जो॑हवीमि॒ ते नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ७ ॥ [६।१]

—:o:—

सूक्त २७

ऋषिः—मृगारः । देवता—मरुतः । छन्दः—त्रिष्टुप् । मन्त्र ७ ।

म॒रुतां॑ मन्वे॒ अधि॑ मे ब्रुवन्त॒ प्रेमं॑ वाजं॒ वाज॑साते अवन्तु। आ॒शूनि॑व
सु॒यमा॑नह्व ऊ॒तये॒ ते नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥१॥

उत्स॒मक्षि॑तं॒ व्यच॑न्ति॒ ये स॒दा य आ॑सि॒ञ्चन्ति॒ रस॒मोष॑धीषु। पु॒रो
द॑धे म॒रुत॒ः पृश्नि॑मातॄं॑स्ते नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ २ ॥

पयो॑ धनू॒नां रस॒मोष॑धीनां ज॒वमर्व॑तां कवयो॒ य इन्व॑थ। श॒ग्मा भ॑वन्तु
म॒रुतो॑ नः स्यो॒नास्ते नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ ३ ॥

अ॒पः स॑मु॒द्राद् दिव॒मुद् व॑हन्ति दि॒वस्पृ॑थि॒वीम॒भि ये सृ॒जन्ति॑। ये
अ॒द्भिरीशा॑ना म॒रुत॒श्चर॑न्ति॒ ते नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ ४ ॥

ये की॒लाले॑न त॒र्पय॑न्ति॒ ये घृ॒तेन॒ ये वा॒ वयो॒ मेद॑सा संसृजन्ति॑। ये
अ॒द्भिरीशा॑ना म॒रुतो॑ व॒र्षय॑न्ति॒ ते नो॑ मु॒ञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥५॥

यदीदि॒दं म॑रु॒तो मारु॑तेन॒ यदि॑ देवा॒ दैव्ये॑ने॒दृगार॑। यू॒यमी॑शिध्वे
वसव॒स्तस्य॒ निष्कृ॑ते॒स्ते नो॑ मुञ्चन्त्वंह॑सः ॥ ६ ॥

ति॒ग्ममनी॑कं विदि॒तं सह॑स्वन् मारु॑तं॒ शर्धः॒ पृत॑नासू॒ग्रम्। स्तौमि॑ म॒रुतो॑
नाथि॒तो जो॑हवीमि॒ ते नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ ७ ॥ [६।२]

—:o:—

सूक्त २८

ऋषिः - मृगारः ॥ देवताः—भवाशर्वौ ॥ छन्दः—१ अतिजागतगर्भाभुरिक् त्रिष्टुप् २--७ त्रिष्टुप् । मंत्र ७ ।

भवा॑शर्वौ म॒न्वे वां॒ तस्य॑ वित्तं॒ ययो॑र्वामि॒दं प्र॒दिशि॒ यद् वि॒रोच॑ते ।
याव॒स्येशा॑थे द्वि॒पदो॒ यौ चतु॑ष्पद॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ १ ॥
ययो॑रभ्य॒ध्व उ॒त यद् दू॒रे चि॒द् यौ वि॑दि॒तावि॑षु॒भृता॒मसि॑ष्ठौ ।
याव॒स्येशा॑थे द्वि॒पदो॒ यौ चतु॑ष्पद॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ २ ॥
स॒ह॒स्रा॒क्षौ वृ॑त्र॒हणा॑ हु॒वेऽहं दू॒रेग॑व्यूती स्तु॒वन्ने॑म्यु॒ग्रौ । याव॒स्येशा॑थे
द्वि॒पदो॒ यौ चतु॑ष्पद॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ३ ॥
यावा॑र॒भाथे॑ ब॒हु सा॒कमग्रे॒ प्र चेद॑स्राष्ट्रमभि॒भां जने॑षु । याव॒स्येशा॑थे
द्वि॒पदो॒ यौ चतु॑ष्पद॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ४ ॥
ययो॑र्व॒धान्नाप॒पद्य॑ते॒ कश्च॒नान्त॑र्दे॒वेषू॒त मानु॑षेषु । याव॒स्येशा॑थे द्वि॒पदो॒
यौ चतु॑ष्पद॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ५ ॥
यः कृ॑त्या॒कृन्मू॑ल॒कृद् या॑तुधा॒नो नि तस्मि॑न् धत्तं॒ वज्र॑मु॒ग्रौ ।
याव॒स्येशा॑थे द्वि॒पदो॒ यौ चतु॑ष्पद॒स्तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ६ ॥
अधि॑ नो ब्रूतं॒ पृत॑नासू॒ग्रौ सं वज्रे॑ण सृजतं॒ यः कि॑मी॒दी । स्तौमि॑
भवा॒शर्वौ॑ ना॑थि॒तो जो॑हवीमि॒ तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ७ ॥ [६।३]

—:०:—

सूक्त २९

ऋषिः—मृगारः ॥ देवता—मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—१–६ त्रिष्टुप्, ७ शक्वरीगर्भाऽतिजगती ॥ मन्त्र ७ ।

म॒न्वे वां॑ मित्रावरुणावृतावृधौ॒ सचे॑तसौ॒ द्रुह्व॑णो॒ यौ नु॒देथे॑ ।
प्र स॒त्यावा॑न॒मव॑थो॒ भरे॑षु॒ तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ १ ॥

सचे॑तसौ॒ द्रुह्व॑णो॒ यौ नु॒देथे॒ प्र स॒त्यावा॑न॒मव॑थो॒ भरे॑षु । यौ गच्छ॑थो
नृ॒चक्ष॑सौ ब॒भ्रुणा॑ सु॒तं तौ नो॑ मुञ्चतमंह॑सः ॥ २ ॥

याव॑ङ्गिर॒सम॑वथो॒ याव॒गस्ति॑ मि॒त्रा॑वरुणा ज॒मद॑ग्नि॒मत्रि॑म् । यौ
क॒श्यप॒मव॑थो॒ यौ वसि॑ष्ठ॒ं तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ३ ॥

यौ श्या॒वाश्व॒मव॑थो वध्र्य॒श्वं मि॒त्रा॑वरुणा पुरु॒मी॒ढमत्रि॑म् । यौ वि॑म॒दमव॑थ
स॒प्तव॑ध्रिं तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ४ ॥

यौ भ॒रद्वा॑ज॒मव॑थो॒ यौ॒ गवि॑ष्ठिरं वि॒श्वामि॑त्रं वरुण मित्र॒ कुत्स॑म् । यौ
क॒क्षीव॑न्त॒मव॑थः प्रोत कण्व॒ं तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ५ ॥

यौ मेधा॑तिथि॒मव॑थो॒ यौ त्रि॒शोक॒ं मि॒त्रा॑वरुणावु॒शनां॑ का॒व्यं यौ । यौ
गोत॑म॒मव॑थः प्रोत मु॒द्ग॑लं॒ तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ६ ॥

ययो॒ रथ॑ः स॒त्यव॑र्त्म॒र्जुर॑श्मिर्मिथु॒या चर॑न्तमभि॒याति॑ दू॒षय॑न् । स्तौमि॑
मि॒त्रावरु॑णौ नाथि॒तो जोहवीमि॒ तौ नो॑ मुञ्चत॒मंह॑सः ॥ ७ ॥ [६।४]

सूक्त ३०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सर्वरूपा सर्वात्मिका सर्वदेवमयी वाक् । छन्दः—१–५,
७, ८ त्रिष्टुप्; ६ जगती । मन्त्र ८ ।

अ॒हं रु॒द्रेभि॒र्वसु॑भिश्चराम्य॒हमा॑दि॒त्यैरु॒त वि॒श्वदे॑वैः । अ॒हं मि॒त्रावरु॑णो॒भा बि॑भर्म्य॒हमि॑न्द्रा॒ग्नी अ॒हम॒श्विनो॒भा ॥ १ ॥

अ॒हं राष्ट्री॑ स॒ङ्गम॑नी॒ वसू॑नां चिकि॒तुषी॑ प्रथ॒मा य॒ज्ञिया॑नाम् । तां मा॑
दे॒वा व्य॑दधुः पुरु॒त्रा भूरि॑स्था॒त्रां भूर्या॑वे॒शय॑न्तः ॥ २ ॥

अ॒हमे॒व स्व॒यमि॒दं व॑दामि॒ जुष्टं᳚ दे॒वाना॑मु॒त मानु॑षाणाम् । यं का॒मये॒
तंत॑मु॒ग्रं कृ॑णोमि॒ तं ब्र॒ह्माणं॒ तमृषिं॒ तं सु॑मे॒धाम् ॥ ३ ॥

म॒या सोऽन्न॑मत्ति॒ यो वि॒पश्य॑ति॒ यः प्रा॒णति॒ य ईं᳚ शृ॒णोत्यु॒क्तम् ।
अ॒म॒न्तवो॒ मां त उप॑ क्षियन्ति श्रु॒धि श्रु॑त श्र॒द्धेयं᳚ ते वदा॑मि ॥ ४ ॥

अ॒हं रु॒द्राय॒ धनु॒रा त॑नोमि ब्रह्म॒द्विषे॒ शर॑वे॒ हन्त॒वा उ॑ । अ॒हं जना॑य
स॒मदं᳚ कृणोम्य॒हं द्यावा॑पृथि॒वी आ वि॑वेश ॥५॥

अ॒हं सोम॑माह॒नसं᳚ बिभर्म्य॒हं त्वष्टा॑रमु॒त पू॒षणं॒ भग॑म् । अ॒हं द॑धामि॒
द्रवि॑णा ह॒विष्म॑ते सुप्रा॒व्या॒३॑ यज॑मानाय सुन्व॒ते ॥६॥

अ॒हं सु॑वे पि॒तर॑मस्य मू॒र्धन्मम॒ योनि॑र॒प्स्व१॒॑न्तः स॑मु॒द्रे । ततो॒ वि
ति॑ष्ठे॒ भुव॑नानि॒ विश्वो॒तामूं॑ द्यां॑ व॒र्ष्मणोप॑ स्पृशामि ॥ ७ ॥

अ॒हमे॒व वात॑ इव॒ प्र वा॑म्या॒रभ॑माणा॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑ । प॒रो दि॒वा
प॒र ए॒ना पृ॑थि॒व्यैताव॑ती महि॒म्ना सं ब॑भूव ॥ ८ ॥   [६।५]

सूक्त ३१

ऋषिः—ब्रह्मास्कन्दः ॥ देवता—मन्युः ॥ छन्दः—१, ३ त्रिष्टुप्, २, ४ भुरिक् त्रिष्टुप्, ५-७ जगती ॥ मन्त्र ७ ।

त्वया॑ मन्यो स॒रथ॑मारु॒जन्तो॒ हर्ष᳚माणा हृषि॒तासो॑ मरुत्वन् । ति॒ग्मेष॑व॒ आयु॑धा सं॒शिशा॑ना॒ उप॒ प्र य॑न्तु॒ नरो॑ अ॒ग्निरू॑पाः ॥ १ ॥

अ॒ग्निरि॑व मन्यो त्विषि॒तः स॑हस्व सेना॒नीर्न᳚ः सहुरे हू॒त ए॑धि । ह॒त्वाय॒ शत्रू॒न् वि भ॑जस्व॒ वेद॒ ओजो॒ मिमा॑नो॒ वि मृधो॑ नुदस्व ॥ २ ॥

स॑हस्व मन्यो अ॒भिमा॑तिम॒स्मै रु॒जन् मृ॒णन् प्र॑मृ॒णन् प्रेहि॒ शत्रू॑न् । उ॒ग्रं ते॒ पाजो॑ न॒न्वा रु॑रुध्रे व॒शी वशं᳚ नयासा एकज॒ त्वम् ॥ ३ ॥

एको॑ ब॒हूना॑मसि मन्य ईडि॒ता विशं᳚विशं यु॒द्धाय॒ सं शि॑शाधि । अकृ॑त्तरु॒क्त्वया॑ यु॒जा व॒यं द्यु॒मन्तं॒ घोषं᳚ विज॒याय॑ कृण्मसि ॥ ४ ॥

वि॒जे॒ष॒कृदिन्द्र॑ इवानवब्र॒वो॒३॒॑स्माकं᳚ मन्यो अधि॒पा भ॑वे॒ह । प्रि॒यं ते॒ नाम॑ सहुरे गृणीमसि वि॒द्मा तमुत्सं॒ यत॑ आब॒भूथ॑ ॥ ५ ॥

आभू॑त्या सह॒जा व॑ज्र सायक॒ सहो॑ बिभर्षि सहभूत॒ उत्त॑रम् । क्रत्वा॑ नो मन्यो स॒ह मे॒द्ये॑धि महाध॒नस्य॑ पुरुहूत सं॒सृजि॑ ॥ ६ ॥

संसृ॑ष्टं॒ धन॑मु॒भयं᳚ स॒माकृ॑तम॒स्मभ्यं᳚ धत्तां॒ वरु॑णश्च म॒न्युः । भियो॒ दधा॑ना॒ हृद॑येषु॒ शत्र॑वः॒ परा॑जितासो॒ अप॒ नि ल॑यन्ताम् ॥ ७ ॥ [७।१]

—:०:—

सूक्त ३२

ऋषिः—ब्रह्मास्कन्दः ।। देवता—मन्युः ।। छन्दः—१ जगती: २—७ त्रिष्टुप् ।
मन्त्र ७ ।

यस्ते मन्योऽविधद् वज्र सायक सह ओजः पुष्यति विश्वमानुषक् ।
साह्याम दासमार्यं त्वया युजा वयं सहस्कृतेन सहसा सहस्वता ॥१॥

मन्युरिन्द्रो मन्युरेवास देवो मन्युर्होता वरुणो जातवेदाः । मन्युं विश
ईडते मानुषीर्याः पाहि नो मन्यो तपसा सजोषाः ॥ २ ॥

अभी⌡ हि मन्यो तवसस्तवीयान् तपसा युजा वि जहि शत्रून् । अमित्रहा
वृत्रहा दस्युहा च विश्वा वसून्या भरा त्वं नः ॥ ३ ॥

त्वं हि मन्यो अभिभूत्योजाः स्वयंभूर्भामो अभिमातिषाहः । विश्वचर्षणिः
सहुरिः सहीयानस्मास्वोजः पृतनासु धेहि ॥ ४ ॥

अभागः सन्नप परेतो अस्मि तव क्रत्वा तविषस्य प्रचेतः । तं त्वा
मन्यो अक्रतुर्जिहीडाहं स्वा तनूर्बलदावा न एहि ॥ ५ ॥

अयं ते अस्म्युप न एह्यर्वाङ् प्रतीचीनः सहुरे विश्वदावन् । मन्यो
वज्रिन्नभि न आ ववृत्स्व हनाव दस्यूँ रुत बोध्यापेः ॥६॥

अभि प्रेहि दक्षिणतो भवा नोऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि । जुहोमि
ते धरुणं मध्वो अग्रमुभावुपांशु प्रथमा पिबाव ॥ ७ ॥ [७।२]

—:०:—

सूक्त ३३

ऋषिः—ब्रह्मा । देवता—अग्निः । छन्दः—गायत्री । मन्त्र ८ ।

अप॑ नः॒ शोशु॑चद॒घमग्ने॑ शुशु॒ग्ध्या र॒यिम् । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥ १ ॥

सु॒क्षे॒त्रि॒या सु॑गातु॒या व॑सू॒या च॑ यजामहे । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥ २ ॥

प्र॒ यद् भन्दि॑ष्ठ एषा॒ं॑ प्रा॒स्माका॑सश्च सू॒रयः॑ । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥३॥

प्र यत् ते॑ अग्ने सू॒रयो॒ जाये॑महि॒ प्र ते॑ व॒यम् । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥ ४ ॥

प्र यद॒ग्नेः सह॑स्वतो वि॒श्वतो॒ यन्ति॑ भा॒नवः॑ । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥ ५ ॥

त्वं हि वि॑श्वतोमुख वि॒श्वतः॑ परि॒भूरसि । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥ ६ ॥

द्विषो॑ नो विश्वतोमु॒खाति॑ ना॒वेव॑ पारय । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥ ७ ॥

स नः॒ सिन्धु॑मिव ना॒वाति॑ पर्षा॑ स्व॒स्तये॑ । अप॑ नः॒
शोशु॑चद॒घम् ॥ ८ ॥ [७।३]

सूक्त ३४

ऋषिः—अथर्वा । देवता—ब्रह्मौदनम् । छन्दः—१-३ त्रिष्टुप्, ४ भुरिक् त्रिष्टुप्, ५ सप्तपदा कृतिः ६ पञ्चपदाऽतिशक्वरी, ७ पञ्चपदा भुरिक् शक्वरी, ८ जगती । मंत्र ८ ।

ब्रह्मा॑स्य शी॒र्षँ बृ॒हद॑स्य पृ॒ष्ठं वा॑मदे॒व्यमु॒दर॑मोद॒नस्य॑ । छन्दाँ॑सि प॒क्षौ
मुख॑मस्य स॒त्यं वि॑ष्टा॒री जा॒तस्तप॒सोऽधि॑ य॒ज्ञः ॥ १ ॥

अ॒न॒स्थाः पू॒ताः पव॑नेन शु॒द्धाः शुच॑य॒ः शुचि॒मपि॑ यन्ति
लो॒कम् । नैषाँ शि॒श्नं प्र द॑हति जा॒तवे॑दाः स्व॒र्गे लो॒के ब॒हु
स्त्रैण॑मेषाम् ॥ २ ॥

वि॒ष्टा॒रिण॑मोद॒नं ये पच॑न्ति॒ नैना॒नव॑र्तिः सचते क॒दा च॒न । आस्ते॑ य॒म
उप॑ याति दे॒वान्त्सं ग॑न्ध॒र्वैर्म॑दते सो॒म्येभि॑ः ॥ ३ ॥

वि॒ष्टा॒रिण॑मोद॒नं ये पच॑न्ति॒ नैना॑न् य॒मः परि॑ मुष्णाति॒ रेत॑ः । रथी ह॑
भू॒त्वा र॑थ॒यान॑ ईयते प॒क्षी ह॑ भू॒त्वाति॒ दिव॒ः समे॑ति ॥ ४ ॥

ए॒ष य॒ज्ञाना॒ं वित॑तो॒ वहि॑ष्ठो वि॑ष्टा॒रिणँ॑ प॒क्त्वा दि॒वमा वि॑वेश ।
आ॒ण्डीक॒ं कुमु॑द॒ं सं त॑नोति॒ बिसँ॑ शा॒लूकं॑ शफ॑को मुला॒ली । ए॒तास्त्वा॒
धारा॒ उप॑ यन्तु॒ सर्वाः॑ स्व॒र्गे लो॒के मधु॑म॒त् पिन्व॑माना॒ उप॑ त्वा तिष्टन्तु
पुष्क॒रिणी॒ः सम॑न्ताः ॥ ५ ॥

घृ॒तह्र॑दा॒ मधु॑कूला॒ः सुरो॑दकाः क्षी॒रेण॑ पू॒र्णा उ॑द॒केन॑ द॒ध्ना । ए॒तास्त्वा॒
धारा॒ उप॑ यन्तु॒ सर्वाः॑ स्व॒र्गे लो॒के मधु॑म॒त् पिन्व॑माना॒ उप॑ त्वा तिष्ठन्तु
पुष्क॒रिणी॒ः सम॑न्ताः ॥ ६ ॥

चतुरः कुम्भांश्चतुर्धा ददामि क्षीरेण पूर्णा उदकेन दध्ना । एतास्त्वा
धारा उप यन्तु सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत् पिन्वमाना उप त्वा तिष्ठन्तु
पुष्करिणीः समन्ताः ॥ ७ ॥

इममोदनं नि दधे ब्राह्मणेषु विष्टारिणं लोकजितं स्वर्गम् ।
स मे मा क्षेष्ट स्वधया पिन्वमानो विश्वरूपा धेनुः कामदुघा
मे अस्तु ॥ ८ ॥ [७१४]

सूक्त ३५

ऋषिः -- प्रजापतिः । देवता—अतिमृत्युः । छन्दः---१, २, ४–७ त्रिष्टुप् ३ भुरिग्जगती । मंत्र ७ ।

यमोदनं प्रथमजा ऋतस्य प्रजापतिस्तपसा ब्रह्मणेऽपचत् । यो लोकानां
विधृतिर्नाभिरेषात् तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥ १ ॥

येनातरन् भूतकृतोऽति मृत्युं यमन्वविन्दन् तपसा श्रमेण । यं पपाच
ब्रह्मणे ब्रह्म पूर्वं तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥ २ ॥

यो दाधार पृथिवीं विश्वभोजसं यो अन्तरिक्षमापृणाद् रसेन । यो
अस्तभ्नाद् दिवमूर्ध्वो महिम्ना तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥ ३ ॥

यस्मान्मासा निर्मितास्त्रिंशदराः संवत्सरो यस्मान्निर्मितो द्वादशारः ।
अहोरात्रा यं परियन्तो नापुस्तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥ ४ ॥

यः प्राणदः प्राणदवान् बभूव यस्मै लोका घृतवन्तः क्षरन्ति ।
ज्योतिष्मतीः प्रदिशो यस्य सर्वास्तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥५॥

यस्मा॑त् प॒क्वाद॒मृतं॑ सम्ब॒भूव॒ यो गा॑य॒त्र्या अधि॑पतिर्ब॒भूव॑ । यस्मि॒न्
वेदा॒ निहि॑ता वि॒श्वरू॑पा॒स्तेनौ॑द॒नेनाति॑ तराणि मृ॒त्युम् ॥६॥
अवं॑ बाधे द्वि॒षन्तं॑ देवपी॒युं स॒पत्ना॒ ये मेऽप॒ ते भ॑वन्तु । ब्र॒ह्मौद॒नं
वि॑श्व॒जितं॑ पचामि शृ॒ण्वन्तु॑ मे श्र॒द्दधा॑नस्य दे॒वाः ॥७॥ [७।५]

सूक्त ३६

ऋषिः—चातनः ॥ देवता—सत्यौजा अग्निः ॥ छन्दः—१-८, १० अनुष्टुप्; ९ भुरिगनुष्टुप् ॥ मन्त्र १०।

तान्त्स॒त्यौजाः॒ प्र द॑हत्व॒ग्निर्वै॑श्वान॒रो वृषा॑ । यो नो॑ दुर॒स्याद्
दिप्सा॒च्चाथो॒ यो नो॑ अराति॒यात् ॥१॥
यो नो॒ दिप्सा॒ददि॑प्सतो॒ दिप्स॑तो॒ यश्च॒ दिप्स॑ति । वै॒श्वा॒न॒रस्य॒
दंष्ट्र॑योर॒ग्नेरपि॑ दधामि॒ तम् ॥२॥
य आ॑ग॒रे मृ॒गय॑न्ते प्रतिक्रो॒शे॑ऽमावा॒स्ये॑ । क्र॒व्यादो॑ अ॒न्यान्
दिप्स॑तः सर्वा॒स्तान्त्सह॑सा सहे ॥३॥
सहे॑ पिशा॒चान्त्सह॒सैषां॒ द्रवि॑णं ददे । सर्वा॑न् दुरस्य॒तो ह॑न्मि॒ सं म॒
आकू॑तिर्ऋध्यताम् ॥४॥
ये दे॒वास्तेन॒ हास॑न्ते॒ सूर्ये॑ण मिमते ज॒वम् । न॒दीषु॒ पर्व॑तेषु॒ ये सं तैः
प॒शुभि॑र्विदे ॥५॥
तप॑नो अस्मि पिशा॒चानां॑ व्या॒घ्रो गोम॑तामिव । श्वानः॑ सिं॒हमि॑व
दृ॒ष्ट्वा ते न वि॑न्दन्ते॒ न्य॑ञ्चनम् ॥६॥

न पि॑शा॒चैः सं श॑क्नोमि॒ न स्ते॒नैर्न व॑न॒र्गुभिः॑ । पि॒शा॒चास्तस्मा॑न्नश्यन्ति॒ यम॒हं ग्राम॑मावि॒शे ॥७॥

यं ग्राम॑मावि॒शत॑ इ॒दमु॒ग्रं सहो॒ मम॑ । पि॒शा॒चास्तस्मा॑न्नश्यन्ति॒ न पा॒पमुप॑ जानते ॥८॥

ये मा॑ क्रो॒धय॑न्ति लपि॒ता ह॒स्तिनं॑ मशका॑ इव । तान॒हं म॑न्ये॒ दुर्हि॑ता॒ञ्जने॒ अल्प॑शयूनिव ॥९॥

अ॒भि तं निर्ऋ॑तिर्धत्ता॒मश्व॑मिवाश्वाभि॒धान्या॑ । म॒ल्वो यो मह्यं॒ क्रुध्य॑ति॒ स उ॒ पाशा॒न्न मु॑च्यते ॥१०॥ [८।१]

सूक्त ३७

ऋषिः—बादरायणिः ।। देवता—१, २, ६, १० ओषधिः (अजशृङ्गी), ३-५ अप्सरसः, ७-९, ११, १२ गन्धर्वाप्सरसः ।। छन्द—१, २, ४, ६, ८-१० अनुष्टुप्; ३ षट्पदा त्रिष्टुप्. ५ प्रस्तार-पंक्तिः; ७ परोष्णिक्; ११ षट्पदा जगती, १२ निचृदनुष्टुप् । मंत्र १२ ।

त्वया॒ पूर्व॒मथ॑र्वाणो ज॒घ्नू रक्षां॑स्योषधे । त्वया॑ जघान क॒श्यप॒स्त्वया॒ कण्वो॑ अ॒गस्त्यः॑ ॥१॥

त्वया॑ व॒यम॑प्स॒रसो॑ गन्ध॒र्वांश्चा॑तयामहे । अज॑शृङ्ग्यज॒ रक्षः॒ सर्वा॑न् ग॒न्धेन॑ नाशय ॥२॥

न॒दीं य॑न्त्वप्स॒रसो॒ऽपां ता॒रम॑वश्व॒सम् । गु॒ल्गु॒लूः पीला॑ नल॒द्यौ॒३॒॑क्षग॑न्धिः प्रमन्द॒नी । तत् परे॑ताप्सरसः॒ प्रति॑बुद्धा अभूतन ॥३॥

यत्र वः प्रेङ्खा हरिता अर्जुना उत यत्राघाटाः कर्कर्यः संवदन्ति ।
तत् परेताप्सरसः प्रतिबुद्धा अभूतन ॥५॥
एयमगन्नोषधीनां वीरुधां वीर्यावती । अजशृङ्ग्यराटकी तीक्ष्णशृङ्गी
व्यृषतु ॥६॥
आनृत्यतः शिखण्डिनो गन्धर्वस्याप्सरापतेः । भिनद्मि मुष्कावपि
यामि शेपः ॥७॥
भीमा इन्द्रस्य हेतयः शतमृष्टीरयस्मयीः । ताभिर्हविरदान्
गन्धर्वानवकादान् व्यृषतु ॥८॥
भीमा इन्द्रस्य हेतयः शतमृष्टीर्हिरण्ययीः । ताभिर्हविरदान्
गन्धर्वानवकादान् व्यृषतु ॥९॥
अवकादानभिशोचानप्सु ज्योतय मामकान् । पिशाचान् सर्वानोषधे
प्र मृणीहि सहस्व च ॥१०॥
श्ववकः कपिरिवैकः कुमारः सर्वकेशकः । प्रियो दृशइव भूत्वा गन्धर्वः
सचते स्त्रियस्तमितो नाशयामसि ब्रह्मणा वीर्यावता ॥११॥
जाया इद् वो अप्सरसो गन्धर्वाः पतयो यूयम् । अप धावतामर्त्या
मर्त्यान् मा सचध्वम् ॥१२।८[२]॥

सूक्त ३८

ऋषिः—बादरायणिः ॥ देवता १-४ अप्सराः; ५-७ वाजिनीवान् ऋषभः ॥ छन्दः—१, २, ४ अनुष्टुप्; ३ षट्पदा जगती; ५ भुरिगत्यष्टिः; ६ त्रिष्टुप्, पञ्चपदानुष्टुब्गर्भा पुरउपरिष्टाज्ज्योतिष्मती जगती ॥ मंत्र ७ ।

उद्भिन्दतीं सञ्जयन्तीमप्सरां साधुदेविनीम् । ग्लहे कृतानि
कृण्वानामप्सरां तामिह हुवे ॥१॥

वि॒चि॒न्व॒तीमा॑कि॒रन्ती॑मप्स॒रां सा॑धुदे॒विनी॑म् । ग्लहे॑ कृ॒तानि॑
गृ॒ह्णा॒नाम॑प्स॒रां तामि॒ह हु॑वे ॥२॥
यायैः॑ परि॒नृत्य॑त्या॒ददा॑ना कृ॒तं ग्लहा॑त् । सा नः॑ कृ॒तानि॑ सीष॒ती
प्रहामा॑प्नोतु मा॒यया॑ । सा न॒ः पय॑स्व॒त्यै॒तु मा नो॑ जैषुरि॒दं धन॑म् ॥३॥
या अ॒क्षेषु॑ प्र॒मोद॑न्ते॒ शुचं॒ क्रोधं॑ च॒ बिभ्र॑ती । आ॒न॒न्दिनीं॑
प्रमो॒दिनी॑मप्स॒रां तामि॒ह हु॑वे ॥४॥
सूर्य॑स्य र॒श्मीननु॒ याः सं॒चर॑न्ति॒ मरी॑चीर्वा॒ या अ॑नुसं॒चर॑न्ति ।
यासा॑मृष॒भो दू॑र॒तो वा॒जिनी॑वान्त्स॒द्यः सर्वा॑न् लो॒कान् प॒र्यैति॒ रक्ष॑न् । स
न॒ ऐतु॒ होम॑मि॒मं जु॑षा॒णो॒३॑न्तरि॑क्षेण स॒ह वा॒जिनी॑वान् ॥५॥
अ॒न्तरि॑क्षेण स॒ह वा॑जिनीवन् क॒र्की व॒त्सामि॒ह र॑क्ष वाजिन् । इ॒मे ते॑
स्तो॒का ब॑हुला एह्य॒र्वाङ्ङि॒यं ते॑ क॒र्कीह ते॒ मनो॑ऽस्तु ॥६॥
अ॒न्तरि॑क्षेण स॒ह वा॑जिनीवन् क॒र्की व॒त्सामि॒ह र॑क्ष वाजिन् । अ॒यं
घा॒सो अ॒यं व्र॒ज इ॒ह व॒त्सां नि ब॑ध्नीमः । य॒था॒ना॒म व॑ ईश्महे॒ स्वाहा॑
॥७॥ [८।३]

सूक्त ३९

ऋषिः—१-८ अङ्गिराः; ९, १० ब्रह्मा ॥ देवताः—१, २ पृथिव्यग्नी; ३, ४ वाय्वन्तरिक्षे; ५, ६ दिवादित्यौ; ७, ८ दिक्चन्द्रमसौ; ९, १० जातवेदसोऽग्निः ॥ छन्दः—१, ३, ५, ७, त्रिपदा महाबृहती; २, ४, ६, ८ संस्तारपंक्तिः; ९, १० त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १० ।

पृ॒थि॒व्याम॒ग्नये॒ सम॑नम॒न्त्स आ॑र्ध्नोत् । यथा॑ पृथि॒व्याम॒ग्नये॑
स॒मन॑मन्ने॒वा मह्यं॑ सं॒नम॒ः सं न॑मन्तु ॥१॥

पृथिवी धेनुस्तस्या अग्निर्वत्सः । सा मेऽग्निना वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम् । आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा ॥२॥

अन्तरिक्षे वायवे समनमन्त्स आर्ध्नोत् । यथान्तरिक्षे वायवे समनमन्नेवा मह्यं संनमः सं नमन्तु ॥३॥

अन्तरिक्षं धेनुस्तस्या वायुर्वत्सः । सा मे वायुना वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम् । आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा ॥४॥

दिव्यादित्याय समनमन्त्स आर्ध्नोत् । यथा दिव्यादित्याय समनमन्नेवा मह्यं संनमः सं नमन्तु ॥५॥

द्यौर्धेनुस्तस्या आदित्यो वत्सः । सा म आदित्येन वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम् । आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा ॥६॥

दिक्षु चन्द्राय समनमन्त्स आर्ध्नोत् । यथा दिक्षु चन्द्राय समनमन्नेवा मह्यं संनमः सं नमन्तु ॥७॥

दिशो धेनवस्तासां चन्द्रो वत्सः । ता मे चन्द्रेण वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम् । आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा ॥८॥

अग्नावग्निश्चरति प्रविष्ट ऋषीणां पुत्रो अभिशस्तिपा उ । नमस्कारेण नमसा ते जुहोमि मा देवानां मिथुया कर्म भागम् ॥९॥

हृदा पूतं मनसा जातवेदो विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । सप्तस्यानि तव जातवेदस्तेभ्यो जुहोमि स जुषस्व हव्यम् ॥१०॥ [८।४]

सूक्त ४०

ऋषिः—शुक्रः ।। देवता:—जातवेदः; १ अग्नि; २ यमः; ३ वरुणः; ४ सोमः; ५ भूमिः; ६ वायुः; ७ सूर्यः; ८ ब्रह्म; ।। छन्दः—१, ३-७ त्रिष्टुप्; २ जगती; ८ पुरोऽतिशक्वरीपादयुग् जगती ।। मन्त्र ८ ।

ये पुरस्ताज्जुह्वति जातवेदः प्राच्या दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
अग्निमृत्व ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ॥१॥
ये दक्षिणतो जुह्वति जातवेदो दक्षिणाया दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
यममृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ॥२॥
ये पश्चाज्जुह्वति जातवेदः प्रतीच्या दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् । वरुणमृत्वा
ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ॥३॥
य उत्तरतो जुह्वति जातवेद उदीच्या दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
सोममृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ॥४॥
ये३ऽधस्ताज्जुह्वति जातवेदो ध्रुवाया दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
भूमिमृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ॥५॥
ये३ऽन्तरिक्षाज्जुह्वति जातवेदो व्यध्वाया दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
वायुमृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ॥६॥
य उपरिष्टाज्जुह्वति जातवेद ऊर्ध्वाया दिशोऽभिदासन्त्यस्मान्
सूर्यमृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ॥७॥

ये दि॒शाम॑न्तर्दे॒शेभ्यो॒ जु॒ह्व॑ति जातवे॒दः सर्वा॑भ्यो दि॒ग्भ्यो॑ऽभि॒दास॑न्त्य॒स्मान् । ब्रह्म॒त्वा॑ ते परा॑ञ्चो व्यथन्तां प्र॒त्यगे॑नान् प्रतिस॒रेण॑ हन्मि ॥८॥ [८।५]

इति चतुर्थं काण्डं समाप्तम्

* ॐ *

अथर्ववेद–संहिता

अथ पञ्चमं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—बृहद्दिवोऽथर्वा ॥ देवता—वरुणः ॥ छन्दः—१ पराबृहती त्रिष्टुप्; २-६, ८ त्रिष्टुप्; ७ विराट् त्रिष्टुप्; ९ षट्पदाऽत्यष्टिः ॥ मंत्र ९ ।

ऋध॑ङ्मन्त्रो॒ योनिं॒ य आ॑ ब॒भूवा॒मृता॑सु॒र्वर्ध॑मानः सु॒जन्मा॑ ।
अद॑ब्धासु॒र्भ्राज॑मा॒नोऽहे॑व त्रि॒तो ध॒र्ता दा॑धार॒ त्रीणि॑ ॥ १ ॥
आ यो धर्मा॑णि प्रथ॒मः स॒साद॒ ततो॒ वपूं॑षि कृणुषे पु॒रूणि॑ । धा॒स्युर्योनिं॑
प्रथ॒म आ वि॑वे॒शा यो वाच॒मनु॑दितां चि॒केत॑ ॥ २ ॥
यस्ते॒ शोका॑य त॒न्वं॑] रि॒रेच॒ क्षर॒द्धिर॑ण्यं॒ शुच॒योऽनु॒ स्वाः । अत्रा॑ दधेते
अ॒मृता॑नि॒ नामा॒स्मे वस्त्रा॑णि॒ विश॒ एर॑यन्ताम् ॥ ३ ॥
प्र यदे॒ते प्र॑त॒रं पू॒र्व्यं गुः सदः॑सद आ॒तिष्ठ॑न्तो अजु॒र्यम् । क॒विः शु॒षस्य॑
मा॒तरा॑ रिहा॒णे जा॒म्यै धुर्यं॒ पति॒मेर॑येथाम् ॥ ४ ॥

तद्॒ षु ते॑ म॒हत् पृ॑थुज्म॒न् नमः॑ क॒विः काव्ये॑ना कृणोमि । यत्
सम्यञ्चा॑व॒भियन्ता॑व॒भि क्षाम॒त्रा॑ म॒ही रोध॑चक्रे वावृ॒धेते॑ ॥ ५ ॥

स॒प्त म॒र्यादाः॑ क॒वय॑स्ततक्षु॒स्तासा॒मिदेका॑म॒भ्यं॑हु॒रो गा॑त् । आ॒योर्ह॑
स्क॒म्भ उ॑प॒मस्य॑ नी॒डे प॒थां वि॑स॒र्गे ध॒रुणे॑षु तस्थौ ॥ ६ ॥

उ॒तामृता॑सु॒र्व्रत॑ एमि कृ॒ण्वन्नसु॑रा॒त्मा त॒न्व॒स्तत् सु॒मद्गुः॑ ।
उ॒त वा॑ श॒क्रो रत्नं॒ दधा॑त्यू॒र्जया॑ वा॒ यत् सच॑ते हवि॒र्दाः॑ ॥ ७ ॥

उ॒त पु॒त्रः पि॒तरं॑ क्ष॒त्रमी॑डे ज्ये॒ष्ठं म॒र्याद॑मह्वयन्त्स्व॒स्तये॑ । दर्श॒न् नु
ता व॑रुण॒ यास्ते॑ वि॒ष्ठा आ॒वर्व्र॑ततः कृ॒णवो॒ वपूं॑षि ॥ ८ ॥

अ॒र्धम॒र्धेन॒ पय॑सा पृण॒क्ष्य॒र्धेन॑ शुष्म वर्धसे अमुर । अवि॑वृधाम श॒ग्मियं॒
सखा॑यं॒ वरु॑णं पु॒त्रमदि॑त्या इषि॒रम् । क॒वि॒श॒स्तान्य॑स्मै॒ वपूं॑ष्यवोचाम॒
रोद॑सी स॒त्यवाचा॑ ॥ ९ ॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः—बृहद्दिवोऽथर्वा ।। देवता—वरुणः ।। छन्दः—१-८ त्रिष्टुप्; ९ भुरिक परातिजागता त्रिष्टुप् ।। मंत्र ९ ।

तदिदा॑स॒ भुव॑नेषु॒ ज्येष्ठं॒ यतो॑ ज॒ज्ञ उ॒ग्रस्त्वे॒षनृ॑म्णः । स॒द्यो ज॑ज्ञा॒नो
नि रि॑णाति॒ शत्रू॒ननु॒ यदे॑नं॒ मद॑न्ति॒ विश्व॒ ऊमाः॑ ॥ १ ॥
(ऋ० १० । १२० । १)

वा॒वृ॒धा॒नः शव॑सा॒ भूयो॑जाः॒ शत्रु॑र्दा॒साय॑ भि॒यसं॑ दधाति । अव्य॑नच्च
व्य॒नच्च॒ सस्नि॒ सं ते॑ नवन्त॒ प्रभृ॑ता॒ मदे॑षु ॥ २ ॥

त्वे क्रतु॒मपि॑ पृञ्चन्ति॒ भूरि॒ द्विर्यदे॒ते त्रिर्भव॒न्त्यूमाः॑ । स्वा॒दोः
स्वादी॑यः स्वा॒दुना॑ सृजा॒ सम॒दः सु मधु॒ मधु॑ना॒भि योधीः॑ ॥ ३ ॥

यदि॑ चि॒न्नु त्वा॒ धना॒ जय॑न्तं॒ रणे॑रणे अनु॒मद॑न्ति॒ विप्राः॑ । ओजी॑यः
शुष्मिन्त्स्थ॒रमा त॑नुष्व॒ मा त्वा॑ दभन् दु॒रेवा॑सः क॒शोकाः॑ ॥ ४ ॥
त्वया॑ व॒यं शा॑शद्महे॒ रणे॑षु प्र॒पश्य॑न्तो यु॒धेन्या॑नि॒ भूरि॑ । चो॒दया॑मि
त॒ आयु॑धा॒ वचो॑भिः॒ सं ते॑ शिशामि॒ ब्रह्म॑णा॒ वयां॑सि ॥ ५ ॥
नि तद् द॑धि॒षेऽव॑रे॒ परे॑ च॒ यस्मि॒न्नावि॒थाव॑सा दु॒रोणे॑ । आ स्था॑पयत
मा॒तरं॑ जिग॒त्नुमत॑ इन्वत॒ कर्व॑राणि॒ भूरि॑ ॥ ६ ॥
स्तु॒ष्व व॑र्ष्मन् पुरु॒वर्त्मा॑नं॒ समृ॑भ्वाणमि॒नत॑ममा॒प्त्यमा॒प्त्याना॑म् । आ
द॑र्शति॒ शव॑सा॒ भूर्यो॑जाः॒ प्र स॑क्षति प्रति॒मानं॑ पृथि॒व्याः ॥ ७ ॥
इ॒मा ब्रह्म॑ बृ॒हद्दि॑वः कृणव॒दिन्द्रा॑य शू॒षम॑ग्रि॒यः स्व॒र्षाः । म॒हो गो॒त्रस्य॑
क्षय॑ति स्व॒राजा॒ तुर॑श्चि॒द् विश्व॑मर्णव॒त् तप॑स्वान् ॥ ८ ॥
ए॒वा म॒हान् बृ॒हद्दि॑वो॒ अथ॒र्वावो॑च॒त् स्वां त॒न्व॒१मिन्द्र॑मे॒व । स्वसा॑रौ
मात॒रिभ्व॑री अरि॒प्रे हि॒न्वन्ति॑ चैने॒ शव॑सा व॒र्धय॑न्ति च ॥ ९ ॥ [१।२]

सूक्त ३

ऋषिः—बृहद्दिवोऽथर्वा । देवता—१, २ अग्निः, ३, ४, देवाः; ५, द्रविणोदादयः; ६, ९, १० विश्वेदेवाः; ७ सोमाः; ८. ११ इन्द्रः ॥ छन्दः—१, ३-९, ११ त्रिष्टुप्; २ भुरिक् त्रिष्टुप्; १० विराड् जगती ॥ मंत्र ११ ।

ममा॑ग्ने॒ वर्चो॑ विह॒वेष्व॑स्तु व॒यं त्वेन्धा॑नास्त॒न्वं॑ पुषेम । मह्यं॑ नमन्तां
प्र॒दिश॒श्चत॑स्र॒स्त्वयाध्य॑क्षेण॒ पृत॑ना जयेम ॥ १ ॥
अग्ने॑ म॒न्युं प्र॑तिनु॒दन् परे॑षां॒ त्वं नो॑ गो॒पाः परि॑ पाहि वि॒श्वतः॑ ।
अपा॑ञ्चो यन्तु नि॒वता॑ दुर॒स्यवो॒ऽमैषां॑ चि॒त्तं प्र॒बुधां॒ वि ने॑शत् ॥ २ ॥

मम॑ दे॒वा वि॑ह॒वे स॑न्तु॒ सर्व॒ इन्द्र॑वन्तो म॒रुतो॒ विष्णु॑र॒ग्निः । ममा॒न्तरि॑क्षमु॒-
रुलो॑कमस्तु॒ मह्यं॒ वात॑ः पवतां॒ कामा॑या॒स्मै ॥ ३ ॥

मह्यं॑ यजन्तां॒ मम॒ यानी॒ष्टाकू॑तिः स॒त्या मन॑सो मे अस्तु । एनो॒ मा
नि गां॑ कत॒मच्च॒नाहं विश्वे॑ दे॒वा अ॒भि र॑क्षन्तु मे॒ह ॥ ४ ॥

मयि॑ दे॒वा द्रवि॑ण॒मा य॑जन्तां॒ मय्या॒शीर॑स्तु॒ मयि॑ दे॒वहू॑तिः । दैव्या॒
होता॑रः सनिषन् न ए॒तदरि॑ष्टाः स्याम त॒न्वा॑ सु॒वीरा॑ः ॥ ५ ॥

दैवी॑ः षडुर्वी॑रु॒रु न॑ः कृणोत॒ विश्वे॑ देवास इ॒ह मा॑दयध्वम् । मा नो॑
विद॑दभि॒भा मो अश॑स्ति॒र्मा नो॑ विदद् वृजि॒ना द्वेष्या॒ या ॥ ६ ॥

तिस्रो॑ देवी॒र्महि॑ न॒ः शर्म॑ यच्छत प्र॒जायै॑ नस्त॒न्वे॒३॒॑ यच्च॑ पु॒ष्टम् ।
मा हा॑स्महि प्र॒जया॒ मा त॒नूभि॒र्मा र॑धाम द्विष॒ते सो॑म राजन् ॥ ७ ॥

उ॒रु॒व्यचा॑ नो महि॒षः शर्म॑ यच्छत्व॒स्मिन् हवे॑ पुरुहू॒तः पु॑रु॒क्षु । स न॑ः
प्र॒जायै॑ हर्यश्व मृडेन्द्र॒ मा नो॑ रीरिषो॒ मा परा॑ दाः ॥ ८ ॥

धा॒ता वि॑धा॒ता भुव॑नस्य॒ यस्पति॑र्दे॒वः स॑वि॒ताभि॑माति॒षाहः॑ । आ॒दि॒त्या
रु॒द्रा अ॒श्विनो॒भा दे॒वाः पा॑न्तु॒ यज॑मानं निरृ॒थात् ॥ ९ ॥

ये न॑ः स॒पत्ना॒ अप॒ ते भ॑वन्त्विन्द्रा॒ग्निभ्या॒मव॑ बाधामह एनान् ।
आ॒दि॒त्या रु॒द्रा उ॑परि॒स्पृशो॑ न उ॒ग्रं चे॒त्तार॑मधिरा॒जम॑क्रत ॥ १० ॥

अ॒र्वाञ्च॒मिन्द्र॑म॒मुतो॑ हवामहे॒ यो गो॒जिद् धन॒जिद॑श्व॒जिद् यः । इ॒मं
नो॑ य॒ज्ञं वि॑ह॒वे शृ॑णोत्व॒स्माक॑मभूर्हर्यश्व मे॒दी ॥ ११ ॥ [१।३]

सूक्त ४

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—कुष्ठस्तक्मनाशनः ॥ छन्दः—१-४, ७-९ अनुष्टुप्
५ भुरिगनुष्टुप्; ६ गायत्री; १० उष्णिग्गर्भा निचृदनुष्टुप् ॥

यो गि॒रिष्वजा॑यथा वी॒रुधां॒ बल॑वत्तमः। कुष्ठेहि॑ तक्मनाशन त॒क्मानं॑
ना॒शय॑न्नि॒तः ॥ १ ॥

सु॒प॒र्ण॒सुव॑ने गि॒रौ जा॒तं हि॒मव॑त॒स्परि॑। धनै॑र॒भि श्रु॒त्वा य॑न्ति वि॒दुर्हि॑
तक्म॒नाश॑नम् ॥ २ ॥

अ॒श्व॒त्थो दे॑व॒सद॑नस्तृ॒तीय॑स्यामि॒तो दि॒वि। तत्रा॒मृत॑स्य॒ चक्ष॑णं दे॒वाः
कुष्ठ॑मवन्वत ॥ ३ ॥

हि॒र॒ण्ययी॒ नौर॑चर॒द्धिर॑ण्यबन्धना दि॒वि। तत्रा॒मृत॑स्य॒ पुष्पं॑ दे॒वाः
कुष्ठ॑मवन्वत ॥ ४ ॥

हि॒र॒ण्यया॒ः पन्था॑न आसन्न॒रित्रा॑णि हिर॑ण्यया॑। नावो॑ हिर॒ण्ययी॑रास॒न्
याभि॒ः कुष्ठं॑ नि॒राव॑हन् ॥ ५ ॥

इ॒मं मे॑ कुष्ठ॒ पूरु॑षं॒ तमा व॑ह॒ तं निष्कु॑रु। तमु॑ मे अग॒दं कृ॑धि ॥ ६ ॥

दे॒वेभ्यो॒ अधि॑ जा॒तो॑ऽसि॒ सोम॑स्यासि॒ सखा॑ हि॒तः। स प्रा॒णाय॑
व्या॒नाय॒ चक्षु॑षे मे अ॒स्मै मृ॑ड ॥ ७ ॥

उद॑ङ् जा॒तो हि॒मव॑त॒ः स प्रा॒च्यां नी॑यसे॒ जन॑म्। तत्र॒ कुष्ठ॑स्य॒ नामा॑-
न्युत्त॒मानि॒ वि भे॑जिरे ॥ ८ ॥

उ॒त्त॒मो नाम॑ कुष्ठास्युत्त॒मो नाम॑ ते पि॒ता । यक्ष्मं᳚ च॒ सर्वं᳚ ना॒शय॑
त॒क्मानं᳚ चार॒सं कृ॑धि ॥ ९ ॥
शी॒र्षा॒म॒यमु॑पह॒त्याम॒क्ष्योस्त॒न्वो॒३ रप॑ः । कुष्ठ॒स्तत् सर्वं॒ निष्क॑र॒द् दैवं᳚ समह॒
वृष्ण्य॑म् ॥ १० ॥ [१।४]

सूक्त ५

ऋषिः—अथर्वा । देवता—लाक्षा ॥ छन्दः—अनुष्टप् ॥ मंत्र ९ ।

रात्री॑ मा॒ता नभ॑ः पि॒तार्य॒मा ते॑ पिताम॒हः । सि॒ला॒ची नाम॒ वा अ॑सि॒
सा दे॒वाना॑मसि॒ स्वसा॑ ॥ ।१ ।
यस्त्वा॒ पिब॑ति॒ जीव॑ति॒ त्राय॑से॒ पुरु॑षं॒ त्वम् । भ॒र्त्री हि शश्व॑ता॒मसि॒
जना॑नां च॒ न्यञ्च॑नी ॥ २ ॥
वृ॒क्षंवृ॑क्ष॒मा रोह॑सि वृष॒ण्यन्ती॑व क॒न्यला॑ । जय॑न्ती प्रत्या॒तिष्ठ॑न्ती॒
स्पर॑णी॒ नाम॒ वा अ॑सि ॥ ३ ॥
यद् द॒ण्डेन॒ यदिष्वा॒ यद् वा॒रुह॑रसा कृ॒तम् । तस्य॒ त्वम॑सि॒ निष्कृ॑ति॒ः
सेमं निष्कृ॑धि॒ पूरु॑षम् ॥ ४ ॥
भ॒द्रात् प्ल॒क्षान्निस्ति॑ष्ठस्यश्व॒त्थात् ख॑दि॒राद् ध॒वात् । भ॒द्रान्न्य॒ग्रोधा॑त्
प॒र्णात् सा न॒ एह्य॑रुन्धति ॥ ५ ॥
हिर॑ण्यवर्णे॒ सुभ॑गे॒ सूर्य॑वर्णे॒ वपु॑ष्टमे । रु॒तं ग॑च्छासि निष्कृते॒
निष्कृ॑ति॒र्नाम॒ वा अ॑सि ॥ ६ ॥
हिर॑ण्यवर्णे॒ सुभ॑गे॒ शुष्मे॒ लोम॑शवक्षणे । अ॒पाम॑सि॒ स्वसा॑ लाक्षे॒ वातो॑
हा॒त्मा ब॑भूव ते ॥ ७ ॥

सिलाची नाम कानीनोऽजबभ्रु पिता तव । अश्वो यमस्य यः
श्यावस्तस्य हास्नास्युक्षिता ॥ ८ ॥
अश्वस्यास्नः सम्पतिता सा वृक्षाँ अभि सिष्यदे । सरा पतत्रिणी भूत्वा
सा न एह्यरुन्धति ॥ ९ ॥ [११५]

सूक्त ६

ऋषि:—अथर्वा ।। देवता—१ ब्रह्म, आदित्य:, २ कर्माणि; ३, ४ रुद्रगणा:; ५-८ सोमारुद्रौ; ९ हेति:; १० अग्नि:; ११—१४ सर्वात्मको रुद्रः (?) ।। छन्द:—१,९ त्रिष्टुप्; २ अनुष्टुप्; ३ जगती; ४ अनुष्टुबुष्णिक्त्रिष्टुब्गर्भा पञ्चपदा जगती; ५-७ त्रिपदा विराण्नामगायत्री; ८ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप्; १० प्रस्तारपङ्क्ति:; ११-१२ पङ्क्ति:; १४ स्वराड्पङ्क्तिः ।।

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः । स
बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः ॥ १ ॥
अनाप्ता ये वः प्रथमा यानि कर्माणि चक्रिरे । वीरान् नो अत्र मा
दभन् तद् व एतत् पुरो दधे ॥ २ ॥
सहस्रधार एव ते समस्वरन् दिवो नाके मधुजिह्वा असश्चतः । तस्य
स्पशो न नि मिषन्ति भूर्णयः पदेपदे पाशिनः सन्ति सेतवे ॥ ३ ॥
पर्यू षु प्र धन्वा वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः । द्विषस्तद-
ध्यर्णवेनेयसे सनिस्रसो नामासि त्रयोदशो मास इन्द्रस्य गृहः ॥ ४ ॥
न्वे३ तेनारात्सीरसौ स्वाहा । तिग्मायुधौ तिग्महेती सुशेवौ सोमा-
रुद्राविह सु मृडतं नः ॥ ५ ॥

अवै॒तेना॑रात्सीरसौ॒ स्वाहा॑ । ति॒ग्मायु॑धौ ति॒ग्महे॑ती सु॒शेवौ॒ सोमा॑रुद्रावि॒ह सु मृ॑डतं नः ॥ ६ ॥

अपै॒तेना॑रात्सीरसौ॒ स्वाहा॑ । ति॒ग्मायु॑धौ ति॒ग्महे॑ती सु॒शेवौ॒ सोमा॑रुद्रावि॒ह सु मृ॑डतं नः ॥ ७ ॥

मु॒मु॒क्तम॒स्मान्दु॑रि॒ताद॑व॒द्याज्जु॒षेथां॑ य॒ज्ञम॒मृत॑म॒स्मासु॑ धत्तम् ॥ ८ ॥

चक्षु॑षो हेते॒ मन॑सो हेते॒ ब्रह्म॑णो हेते॒ तप॑सश्च हेते । मे॒न्या मे॒निर॑स्यमे॒नय॒स्ते स॑न्तु॒ ये॒३॒॑स्माँ अ॑भ्यघा॒यन्ति ॥ ९ ॥

यो॒३॒॑स्मांश्चक्षु॑षा॒ मन॑सा॒ चित्त्याकू॑त्या च॒ यो अ॑घा॒युर॑भि॒दासा॑त् । त्वं तान॑ग्ने मे॒न्यामे॒नीन् कृ॑णु॒ स्वाहा॑ ॥ १० ॥

इन्द्र॑स्य गृ॒होऽसि । तं त्वा॒ प्र प॑द्ये॒ तं त्वा॒ प्र वि॑शामि॒ सर्व॑गुः । सर्व॑पूरुषः॒ सर्वा॑त्मा॒ सर्व॑तनूः स॒ह यन्मेऽस्ति॒ तेन॑ ॥ ११ ॥

इन्द्र॑स्य॒ शर्मा॑सि । तं त्वा॒ प्र प॑द्ये॒ तं त्वा॒ प्र वि॑शामि॒ सर्व॑गुः । सर्व॑पूरुषः॒ सर्वा॑त्मा॒ सर्व॑तनूः स॒ह यन्मेऽस्ति॒ तेन॑ ॥ १२ ॥

इन्द्र॑स्य॒ वर्मा॑सि । तं त्वा॒ प्र प॑द्ये॒ तं त्वा॒ प्र वि॑शामि॒ सर्व॑गुः इणसर्व॑पूरुषः॒ सर्वा॑त्मा॒ सर्व॑तनूः स॒ह यन्मेऽस्ति॒ तेन॑ ॥ १३ ॥

इन्द्र॑स्य॒ वरू॑थमसि । तं त्वा॒ प्र प॑द्ये॒ तं त्वा॒ प्र वि॑शामि॒ सर्व॑गुः सर्व॑पूरुषः॒ सर्वा॑त्मा॒ सर्व॑तनूः स॒ह यन्मेऽस्ति॒ तेन॑ ॥ १४ ॥ [२।१]

सूक्त ७

ऋषिः—**अथर्वा** ॥ देवता—१-३, ६-१० अरातयः; ४,५ सरस्वती ॥ छन्दः—१ विराड्गर्भा प्रस्तारपङ्क्तिः; २, ३, ५, ७-१० अनुष्टुप्; ४ पथ्या बृहती; ६ प्रस्तारपङ्क्तिः ॥

आ नो॑ भर॒ मा परि॑ ष्ठा अराते॒ मा नो॑ रक्षी॒र्दक्षि॑णां नी॒यमा॑नाम् ।
नमो॑ वी॒त्सा॑या॒ अस॑मृद्धये॒ नमो॑ अ॒स्त्वरा॑तये ॥ १ ॥

यम॑राते पुरो॒धत्से॒ पुरु॑षं परिरा॒पिण॑म् । नम॑स्ते॒ तस्मै॑ कृण्मो॒ मा व॒निं
व्य॑थयी॒र्मम॑ ॥ २ ॥

प्र णो॑ व॒निर्दे॒वकृ॑ता॒ दि॒वा नक्तँ॑ च कल्पताम् । अरा॑तिमनु॒प्रेमो॑ व॒यं
नमो॑ अ॒स्त्वरा॑तये ॥ ३ ॥

सर॑स्वती॒मनु॑मतिं॒ भगं॒ यन्तो॑ हवामहे । वाचँ॑ जु॒ष्टां मधु॑मतीमवादिषं
दे॒वानाँ॑ दे॒वहू॑तिषु ॥ ४ ॥

यं याचा॑म्य॒हं वा॒चा सर॑स्वत्या मनो॒युजा॑ । श्र॒द्धा तम॒द्य विन्दतु द॒त्ता
सोमे॑न ब॒भ्रुणा॑ ॥ ५ ॥

मा व॒निं मा वाचँ॑ नो॒ वीत्सीँ॑रु॒भावि॑न्द्रा॒ग्नी आ भ॑रतां नो॒ वसू॑नि ।
सर्वेँ॑ नो अ॒द्य दित्स॒न्तोऽरा॑तिं॒ प्रति॑ हर्यत ॥ ६ ॥

प॒रोऽपे॑ह्यसमृद्धे॒ वि ते॑ हे॒तिं नया॑मसि । वेद॑ त्वा॒हं नि॒मीव॑न्तीं
नितु॒दन्ती॑मराते ॥ ७ ॥

उ॒त न॒ग्ना बोभु॑वती स्वप्न॒या सं॑चसे॒ जन॑म्। अरा॑ते चि॒त्तं वीर्त्स॒न्त्याकू॑तिं॒ पुरु॑षस्य च ॥ ८ ॥

या म॑ह॒ती म॒होन्मा॑ना॒ विश्वा॒ आशा॑ व्यान॒शे। तस्यै॑ हिरण्यके॒श्यै निर्ऋ॑त्या अक॑रं नमः॑ ॥ ९ ॥

हिर॑ण्यवर्णा सु॒भगा॒ हिर॑ण्यकशिपुर्म॒ही। त॒स्यै॒ हिर॑ण्यद्राप॒येऽरा॑त्या अक॒रं नमः॑ ॥ १० ॥ [२।२]

सूक्त ८

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१, २, अग्निः; ३ विश्वे देवाः; ४-९ इन्द्रः ॥ छन्दः—१, ५, ८ अनुष्टुप्; २ षट्पदा जगती; ३, ४ भुरिक् पथ्यापंक्तिः; ६ आस्तारपङ्क्तिः; ७ द्व्युष्णिग्गर्भा पथ्या पङ्क्तिः; ९ षट्पदा द्व्यनुष्टुब्गर्भा जगती ॥

वै॒क॒ङ्क॒तेने॒ध्मेन॑ दे॒वेभ्य॒ आज्यं॑ वह। अग्ने॒ ताँ इ॒ह मा॑दय॒ सर्व॒ आ य॑न्तु मे॒ हव॑म् ॥ १ ॥

इन्द्रा या॑हि मे॒ हव॑मि॒दं क॑रिष्यामि॒ तच्छृ॑णु। इ॒म ऐ॒न्द्रा अ॑तिस॒रा आकू॑तिं॒ सं न॑मन्तु मे। तेभिः॑ शकेम वी॒र्यं१॒॑ जात॑वेद॒स्तनू॑वशिन् ॥ २ ॥

यद॒साव॒मुतो॑ देवा अ॑दे॒वः संश्चिकी॑र्षति। मा तस्या॒ग्निर्ह॒व्यं वा॑क्षी॒द्धवं॑ दे॒वा अ॑स्य॒ मोप॑ गु॒र्ममै॒व हव॒मेत॑न ॥ ३ ॥

अति॑ धावतातिस॒रा इन्द्र॑स्य॒ वच॑सा हत। अवि॒ वृक॑ इव मथ्नीत॒ स वो॒ जीव॒न् मा मो॑चि प्रा॒णम॒स्यापि॑ नह्यत ॥ ४ ॥

यम॒मी पु॑रोदधि॒रे ब्र॒ह्माण॒मप॑भूतये । इन्द्र॒ स ते॑ अधस्प॒दं तं प्रत्य॑स्यामि
मृ॒त्यवे॑ ॥ ५ ॥

यदि॑ प्रे॒युर्दे॑वपु॒रा ब्रह्म॒ वर्मा॑णि चक्रि॒रे । त॒नूपानं॑ परि॒पाणं॑ कृण्वा॒ना
यदु॑पोचि॒रे सर्वं॒ तद॑र॒सं कृ॑धि ॥ ६ ॥

यान॒साव॑तिस॒रांश्च॒कार॑ कृ॒णव॑च्च॒ यान् । त्वं तानि॑न्द्र वृत्रहन् प्र॒तीचः॒
पुन॒रा कृ॑धि॒ यथा॒मुं तृ॒णहां॒ जन॑म् ॥ ७ ॥

यथेन्द्र॑ उ॒द्वाच॑नं ल॒ब्ध्वा च॒क्रे अ॑धस्प॒दम् । कृ॒ण्वे॒३॑ हमध॑रा॒ंस्तथा॒मूञ्छ॑श्व॒तीभ्यः॒ समा॑भ्यः ॥ ८ ॥

अत्रै॑नानिन्द्र वृत्रहन्नु॒ग्रो मर्म॑णि विध्य । अत्रै॒वैना॑न॒भि ति॒ष्ठेन्द्र॑
मे॒द्य१॒॑हं तव॑ अनु॑ त्वे॒न्द्रा र॑भामहे॒ स्याम॑ सुम॒तौ तव॑ ॥ ९ ॥ [२।३]

सूक्त ९

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—वास्तोष्पतिः ॥ छन्दः—१, ५, दैवी बृहती, २, ६ दैवी त्रिष्टुप्, ३, ४ दैवी जगती; ७ विराडुष्णिग्बृहतीगर्भा पञ्चपदा जगती; ८ पुरस्कृतित्रिष्टुब्बृहतीगर्भा चतुष्पदा (?, पञ्चपदा)ऽतिजगती । मंत्र ८ ।

दि॒वे स्वाहा॑ ॥१॥ पृ॒थि॒व्यै स्वाहा॑ ॥२॥ अ॒न्तरि॑क्षाय॒ स्वाहा॑ ॥३॥
अ॒न्तरि॑क्षाय॒ स्वाहा॑ ॥४॥ दि॒वे स्वाहा॑ ॥५॥ पृ॒थि॒व्यै स्वाहा॑ ॥६॥

सूर्यो॑ मे॒ चक्षु॒र्वातः॑ प्रा॒णो॒३॑न्तरि॑क्षमा॒त्मा पृ॑थि॒वी शरी॑रम् । अ॒स्तृ॒तो
नामा॒हम॒यम॑स्मि॒ स आ॒त्मानं॒ नि द॑धे॒ द्यावा॑पृथि॒वीभ्यां॑ गोपी॒थाय॑ ।
॥ ७ ॥

उदायुरुद् बलमुत् कृतमुत् कृत्यामुन्मनीषामुदिन्द्रियम्। आयुष्कृदायुष्पत्नी स्वधावन्तौ गोपा मे स्तं गोपायतं मा। आत्मसदौ मे स्तं मा मा हिंसिष्टम् ॥ ८ ॥ [२।४]

सूक्त १०

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—वास्तोष्पतिः ॥ छन्दः—१-६ यवमध्या त्रिपदा गायत्री; ७ यवमध्या ककुप्, ८ पुरोधृत्यनुष्टुब्गर्भा पराष्टिश्चतुष्पदाऽतिजगती। मंत्र ८।

अश्मवर्म मेऽसि यो मा प्राच्या दिशोऽघायुरभिदासात्। एतत् स ऋच्छात्॥ १ ॥

अश्मवर्म मेऽसि यो मा दक्षिणाया दिशोऽघायुरभिदासात्। एतत् स ऋच्छात्॥ २ ॥

अश्मवर्म मेऽसि यो मा प्रतीच्या दिशोऽघायुरभिदासात्। एतत् स ऋच्छात् ॥ ३ ॥

अश्मवर्म मेऽसि यो मोदीच्या दिशोऽघायुरभिदासात्। एतत् स ऋच्छात्॥ ४ ॥

अश्मवर्म मेऽसि यो मा ध्रुवाया दिशोऽघायुरभिदासात्। एतत् स ऋच्छात् ॥ ५ ॥

अश्मवर्म मेऽसि यो मोर्ध्वाया दिशोऽघायुरभिदासात्। एतत् स ऋच्छात् ॥ ६ ॥

अश्मवर्म मेऽसि यो मा दिशामन्तर्देशेभ्योऽघायुरभिदासात्। एतत् स ऋच्छात्॥ ७॥

बृ॒ह॒ता मन॒ उप॑ ह्वये मात॒रिश्व॑ना प्राणापा॒नौ । सूर्या॒च्चक्षु॑र॒न्तरि॑क्षा॒च्छ्रोत्रं॑
पृथि॒व्याः शरी॑रम् । सर॑स्वत्या॒ वाच॒मुप॑ ह्वयामहे मनो॒युजा॑ ॥८॥ [२।५]

सूक्त ११

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वरुणः ॥ छन्दः—१ भुरिक् त्रिष्टुप्; २, ४, ५, ७-१० त्रिष्टुप; ३ पङ्क्तिः; ६ पञ्चपदाऽतिशक्वरी; ११ षट्पदाऽत्यष्टिः । मंत्र ११ ।

क॒थं म॒हे असु॑रायाब्रवीरि॒ह क॒थं पि॒त्रे हर॑ये त्वे॒षनृ॑म्णः । पृश्निं॑ वरुण॒
दक्षि॑णां दद॒ावान् पुन॑र्मघ॒ त्वं मन॑साचिकित्सीः ॥१॥
न कामे॑न॒ पुन॑र्मघो भवामि॒ सं च॑क्षे॒ कं पृश्नि॑मे॒तामुपा॑जे । केन॒ नु
त्वम॑थर्व॒न् काव्ये॑न॒ केन॑ जा॒तेना॑सि जा॒तवे॑दाः ॥ २ ॥
स॒त्यम॒हं ग॑भी॒रः काव्ये॑न स॒त्यं जा॒तेना॑स्मि जा॒तवे॑दाः । न मे दा॒सो
नार्यो॑ महि॒त्वा व्र॒तं मी॑माय॒ यद॒हं ध॑रि॒ष्ये ॥ ३ ॥
न त्वद॒न्यः क॒वित॑रो॒ न मे॒धया॒ धीर॑तरो वरुण स्वधावन् । त्वं ता
विश्वा॒ भुव॑नानि वेत्थ॒ स चि॒न्नु त्वज्जनो॑ मा॒यी बि॑भाय ॥ ४ ॥
त्वं ह्य॒१ङ्ग व॑रुण स्वधाव॒न् विश्वा॒ वेत्थ॒ जनि॑मा सुप्रणीते । किं रज॑स
ए॒ना प॒रो अ॒न्यद॑स्त्ये॒ना किं परे॒णाव॑रममुर ॥ ५ ॥
एकं॒ रज॑स ए॒ना प॒रो अ॒न्यद॑स्त्ये॒ना प॒र एके॑न दु॒र्णशं॑ चिद॒र्वाक् ।
तत् ते॑ वि॒द्वान् व॑रुण॒ प्र ब्र॑वीम्य॒धोव॑चसः प॒णयो॑ भवन्तु नी॒चैर्दा॒सा
उप॑ सर्पन्तु॒ भूमि॑म् ॥ ६ ॥
त्वं ह्य॒१ङ्ग व॑रुण॒ ब्रवी॑षि॒ पुन॑र्मघेष्ववद्यानि॒ भूरि॑ । मो षु प॒णीँर॒भ्ये॒३तावतो॑ भून्मा त्वा॑ वोचन्नरा॒धसं॒ जना॑सः ॥ ७ ॥

मा मा वोचन्नराधसं जनासः पुनस्ते पृश्निं जरितर्ददामि । स्तोत्रं मे
विश्वमा याहि शचीभिरन्तर्विश्वासु मानुषीषु दिक्षु ॥ ८ ॥
आ ते स्तोत्राण्युद्यतानि यन्त्वन्तर्विश्वासु मानुषीषु दिक्षु । देहि नु
मे यन्मे अदत्तो असि युज्यो मे सप्तपदः सखासि ॥९॥
समा नौ बन्धुर्वरुण समा जा वेदाह तद्यन्नावेषा समा जा । ददामि
तद् यत् ते अदत्तो अस्मि युज्यस्ते सप्तपदः सखास्मि ॥ १० ॥
देवो देवाय गृणते वयोधा विप्रो विप्राय स्तुवते सुमेधाः । अजीजनो
हि वरुण स्वधावन्नथर्वाणं पितरं देवबन्धुम् । तस्मा उ राधः कृणुहि
सुप्रशस्तं सखा नो असि परमं च बन्धुः ॥ ११ ॥ [३।१]

सूक्त १२

ऋषि—अङ्गिराः ॥ देतवा—अग्निः ॥ छन्दः–१, २, ४-११ त्रिष्टुप्; ३ पङ्क्तिः ॥

समिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान् यजसि जातवेदः । आ च
वह मित्रमहश्चिकित्वान् त्वं दूतः कविरसि प्रचेताः ॥ १ ॥
तनूनपात् पथ ऋतस्य यानान् मध्वा समञ्जन्त्स्वदया सुजिह्व ।
मन्मानि धीभिरुत यज्ञमृन्धन् देवत्रा च कृणुह्यध्वरं नः ॥ २ ॥
आजुह्वान ईड्यो वन्द्यश्चा याह्यग्ने वसुभिः सजोषाः । त्वं देवानामसि
यह्व होता स एनान् यक्षीषितो यजीयान् ॥ ३ ॥
प्राचीनं बर्हिः प्रदिशा पृथिव्या वस्तोरस्या वृज्यते अग्रे अह्नाम् ।
व्यु प्रथते वितरं वरीयो देवेभ्यो अदितये स्योनम् ॥ ४ ॥

व्यच॑स्वतीरुर्वि॒या वि श्र॑यन्तां॒ पति॑भ्यो॒ न जन॑यः॒ शुम्भ॑मानाः ।
दे॒वीर्द्वा॑रो बृहतीर्वि॑श्वमिन्वा दे॒वेभ्यो॑ भवत सुप्राय॒णाः ॥ ५ ॥
आ सु॒ष्वय॑न्ती यज॒ते उ॒पाके॑ उ॒षासा॒नक्ता॑ सद॒तां नि योनौ॑ । दि॒व्ये
योष॑णे बृह॒ती सु॑रु॒क्मे अधि॒ श्रियं॑ शुक्र॒पिशं॒ दधा॑ने ॥ ६ ॥
दैव्या॒ होता॑रा प्रथ॒मा सु॒वाचा॒ मिमा॑ना य॒ज्ञं मनु॑षो॒ यज॑ध्यै । प्र॒चो॒द-
य॑न्ता वि॒दथे॑षु का॒रू प्रा॒चीनं॒ ज्योतिः॑ प्र॒दिशा॑ दि॒शन्ता॑ ॥ ७ ॥
आ नो॑ य॒ज्ञं भार॑ती॒ तूय॑मे॒त्विडा॑ मनु॒ष्वदि॒ह चे॒तय॑न्ती । ति॒स्रो
दे॒वीर्ब॒र्हिरे॑दं स्यो॒नं सर॑स्वती॒ः स्वप॑सः सदन्ताम् ॥ ८ ॥
य इ॒मे द्यावा॑पृथि॒वी जनि॑त्री रू॒पैरपिं॑श॒द् भुव॑नानि॒ विश्वा॑ । तम॒द्य
होत॑रिषि॒तो यजी॑यान् दे॒वं त्वष्टा॑रमि॒ह य॑क्षि वि॒द्वान् ॥ ९ ॥
उ॒पाव॑सृज॒ त्मन्या॑ सम॒ञ्जन् दे॒वानां॒ पाथ॑ ऋतु॒था ह॒वींषि॑ । वन॒स्पतिः॑
श॒मिता दे॒वो अ॒ग्निः स्वद॑न्तु ह॒व्यं मधु॑ना घृ॒तेन॑ ॥१०॥
स॒द्यो जा॒तो व्य॑मिमीत य॒ज्ञम॒ग्निर्दे॒वाना॑मभवत् पुरो॒गाः । अ॒स्य
होतुः॑ प्र॒शिष्यृ॒तस्य॑ वा॒चि स्वाहा॑कृतं ह॒विर॑दन्तु दे॒वाः ॥ ११ ॥ [३।२]

सूक्त १३

ऋषिः—गरुत्मान् ॥ देवता—तक्षकः ॥ छन्दः—१, ३ जगती; २ आस्तारपंक्तिः; ४; ७, ८, अनुष्टुप् ५, त्रिष्टुप्; ६ पथ्या पंक्तिः; ९ भुरिग्जगती; १०,११ निचृद्गायत्री ॥ मंत्र ११ ।

द॒दिर्हि मह्यं॒ वरु॑णो दि॒वः क॒विर्वचो॑भिरु॒ग्रैर्नि रि॑णामि ते वि॒षम् ।
खा॒तमखा॑तमु॒त स॒क्तम॑ग्रभ॒मिरे॑व धन्व॒न्नि ज॑जास ते वि॒षम् ॥ १ ॥

यत् ते॒ अपो॑दकं वि॒षं तत् त॑ ए॒तास्व॑ग्रभम्। गृ॒ह्णामि॑ ते मध्य॒ममु॑त्त॒मं
रस॑मु॒ताव॒मं भि॒यसा॑ नेश॒दादु॑ ते ॥ २ ॥
वृषा॑ मे॒ रवो॒ नभ॑सा॒ न त॑न्य॒तुरु॒ग्रेण॑ ते॒ वच॑सा बाध॒ आदु॑ ते। अ॒हं
तम॑स्य॒ नृभि॑रग्रभं॒ रसं॒ तम॑सइव॒ ज्योति॒रुदे॑तु॒ सूर्यः॑ ॥ ३ ॥
चक्षु॑षा ते॒ चक्षु॑र्हन्मि वि॒षेण॑ हन्मि ते वि॒षम्। अहे॑ म्रि॒यस्व॒ मा जी॑वीः
प्र॒त्यग॒भ्ये[तु त्वा वि॒षम् ॥ ४ ॥
कैरा॑त॒ पृश्न॒ उप॑तृण्य॒ बभ्र॒ आ मे॑ शृणुतासि॑ता॒ अली॑काः। मा मे॒
सख्युः॑ स्ता॒मान॒मपि॑ ष्ठाता॒श्राव॒यन्तो॒ नि वि॒षे र॑मध्वम् ॥ ५ ॥
अ॒सि॒तस्य॑ तैमा॒तस्य॑ ब॒भ्रोरपो॑दकस्य च। सा॒त्रा॒सा॒हस्या॒हं म॒न्योरव॒
ज्यामि॑व॒ धन्व॑नो॒ वि मु॑ञ्चामि॒ रथाँ॑इव ॥ ६ ॥
आ॒लिगी॑ च॒ विलि॑गी च पि॒ता च॑ मा॒ता च॑। वि॒द्म वः॑ स॒र्वतो॒
बन्ध्वर॑साः॒ किं क॑रिष्यथ ॥ ७ ॥
उ॒रु॒गूला॑या दुहि॒ता जा॒ता दा॒स्यसि॑क्न्या। प्र॒तङ्कं॑ द॒द्रुषी॑णां॒ सर्वा॑सा-
मर॒सं वि॒षम् ॥ ८ ॥
क॒र्णा श्वा॒वित् तद॑ब्रवीद् गि॒रेर॑वचरन्ति॒का। याः काश्चे॒माः ख॑नि॒त्रि-
मा॒स्तासा॑मर॒सत॑मं वि॒षम् ॥ ९ ॥
ता॒बु॒वं न ता॒बु॒वं न घेत् त्वम॑सि ता॒बु॒वम्। ता॒बु॒वेना॑र॒सं वि॒षम् ॥१०॥
त॒स्तु॒वं न त॒स्तु॒वं न घेत् त्वम॑सि त॒स्तु॒वम्। त॒स्तु॒वेना॑र॒सं वि॒षम्।
॥ ११ ॥ [३।३]

सूक्त १४

ऋषिः—शुक्रः ॥ देवता—वनस्पतिः ॥ छन्दः—१, २, ४, ६, ७, ९, अनुष्टुप्; ३, ५, १२ भुरिगनुष्टुप्; ८ त्रिपदा विराडनुष्टुप्; १० निचृद् बृहती; ११ त्रिपदा साम्नी त्रिष्टुप्; १३ स्वराडनुष्टुप् ॥ मंत्र १३ ।

सु॒प॒र्णस्त्वान्व॑विन्दत् सूक॒रस्त्वा॑खनन्न॒सा । दिप्सौ॑षधे॒ त्वं दिप्स॑न्त॒मव॑
कृत्या॒कृतं॑ जहि ॥ १ ॥

अव॑ जहि यातु॒धाना॒नव॑ कृत्या॒कृतं॑ जहि । अथो॒ यो अ॒स्मान्
दिप्स॑ति॒ तमु॒ त्वं ज॑ह्योषधे ॥ २ ॥

रिश्य॑स्येव परीशा॒सं प॑रि॒कृत्य॒ परि॑ त्व॒चः । कृ॒त्यां कृ॑त्या॒कृते॑ दे॒वा
नि॒ष्कमि॑व॒ प्रति॑ मुञ्चत ॥ ३ ॥

पुनः॑ कृ॒त्यां कृ॑त्या॒कृते॑ हस्त॒गृह्य॒ परा॑ णय । स॒म॒क्षम॑स्मा॒ आ धे॑हि॒
यथा॑ कृत्या॒कृतं॒ हन॑त् ॥ ४ ॥

कृ॒त्याः स॑न्तु कृत्या॒कृते॑ श॒पथः॑ शपथीय॒ते । सखो॒ रथ॑ इव वर्ततां कृ॒त्या
कृ॑त्या॒कृतं॒ पुनः॑ ॥ ५ ॥

यदि॒ स्त्री यदि॑ वा॒ पुमा॑न् कृ॒त्यां च॒कार॑ पा॒प्मने॑ । तामु॒ तस्मै॑
नयाम॒स्यश्व॑मिवाश्वाभि॒धान्या॑ ॥ ६ ॥

यदि॒ वासि॑ दे॒वकृ॑ता॒ यदि॑ वा॒ पुरु॑षैः कृ॒ता । तां त्वा॒ पुन॑र्णयाम॒सीन्द्रे॑ण
स॒युजा॑ व॒यम् ॥ ७ ॥

अग्ने॑ पृतनाषा॒ट् पृत॑नाः सहस्व । पुनः॑ कृ॒त्यां कृ॑त्या॒कृते॑ प्रति॒हर॑णेन
हरामसि ॥ ८ ॥

कृत॑व्यधनि॒ विध्य॒ तं यश्च॒कार॒ तमिज्ज॑हि। न त्वामच॑क्रुषे व॒यं
व॒धाय॒ सं शि॑शीमहि ॥ ९ ॥

पु॒त्र इ॑व पि॒तरं॑ गच्छ स्वज इ॑वा॒भिष्ठि॑तो दश। ब॒न्धमि॑वावक्रा॒मी
ग॑च्छ॒ कृत्यै॑ कृत्या॒कृत॒ं पुन॑ः ॥ १० ॥

उदे॒णीव॑ वार॒ण्य[भि॒स्कन्दँ॑ मृ॒गीव॑। कृ॒त्या क॒र्तार॑मृच्छतु ॥ ११ ॥

इष्वा॒ ऋजी॑यः पततु॒ द्यावा॑पृथि॒वी तं प्रति॑। सा तं मृ॒गमि॑व गृह्णातु
कृ॒त्या कृ॑त्या॒कृत॒ं पुन॑ः ॥ १२ ॥

अ॒ग्निरि॑वैतु प्रति॒कूल॑मनु॒कूल॑मिवोद॒कम्। सु॒खो रथ॑ इव वर्त॑तां
कृ॒त्या कृ॑त्या॒कृत॒ं पुन॑ः ॥ १३ ॥ [३।४]

सूक्त १५

ऋषि—विश्वामित्रः ।। देवता—मधुला ओषधिः ।। छन्दः—१-३, १०, ११ अनुष्टुप्;
४ पुरस्ताद् बृहती; ५, ७-८ भुरिगनुष्टुप् ।।

एका॑ च मे दश॑ च मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे। ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः

द्वे च॑ मे विंश॒तिश्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे। ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥ २ ॥

ति॒स्रश्च॑ मे त्रि॒ंशच्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे। ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥ ३ ॥

चत॑स्रश्च मे चत्वारि॒ंशच्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे। ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒
मधु॑ मे मधु॒ला क॑रः ॥ ४ ॥

प॒ञ्च च॑ मे पञ्चा॒शच्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे। ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒
मधु॑ मे मधु॒ला क॑रः ॥ ५ ॥

ष॒ट् च॑ मे ष॒ष्टिश्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे । ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥६ ॥

स॒प्त च॑ मे स॒प्त॒तिश्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे । ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥ ७ ॥

अ॒ष्ट च॑ मेऽशी॒तिश्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे । ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥ ८ ॥

नव॑ च मे नव॒तिश्च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे । ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥ ९ ॥

दश॑ च मे श॒तं च॑ मेऽपव॒क्तार॑ ओषधे । ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥ १० ॥

श॒तं च॑ मे स॒हस्रं॑ चापव॒क्तार॑ ओषधे । ऋत॑जात॒ ऋता॑वरि॒ मधु॑ मे
मधु॒ला क॑रः ॥ ११ ॥ [३।५]

सूक्त १६

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—एकवृषः ॥ छन्दः—१, ४, ५, ७—१० द्विपदा साम्न्युष्णिक्; २, ३, ६ द्विपदाऽऽसुर्यनुष्टुप्; ११ द्विपदाऽऽसुरी गायत्री ॥ मंत्र ११ ।

यद्ये॑कवृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ १ ॥
यदि॑ द्विवृ॒षोऽसि सृ॒जार॒सोऽसि ॥ २ ॥

यदि॑ त्रिवृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ ३ ॥
यदि॑ चतुर्वृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥४ ॥
यदि॑ पन्चवृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ ५ ॥
यदि॑ षड्वृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ ६ ॥
यदि॑ सप्तवृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ ७ ॥
यद्य॑ष्टवृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ ८ ॥
यदि॑ नववृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ ९ ॥
यदि॑ दशवृ॒षोऽसि॑ सृ॒जार॒सोऽसि ॥ १० ॥
यद्ये॑काद॒शोऽसि॒ सोऽपो॑दकोऽसि ॥ ११ ॥ [४।१]

सूक्त १७

ऋषिः — मयोभूः। देवता—ब्रह्मजाया।। छन्दः-१-६ त्रिष्टुप्, ७-१८अनुष्टुप्। मंत्र १८।

तेऽवद॑न् प्रथ॒मा ब्र॑ह्मकिल्बि॒षेऽकू॑पारः सलि॒लो मा॑त॒रिश्वा॑। वी॒डुह॑रा॒स्तप॑
उ॒ग्रं म॑यो॒भूरापो॑ दे॒वीः प्र॑थम॒जा ऋ॒तस्य॑ ॥ १ ॥
सोमो॒ राजा॑ प्रथ॒मो ब्र॑ह्मजा॒यां पुनः॒ प्राय॑च्छ॒दहृ॑णीयमानः। अ॒न्व॒र्ति॒ता
वरु॑णो मि॒त्र आ॑सीद॒ग्निर्होता॑ हस्त॒गृह्या नि॑नाय ॥ २ ॥
हस्ते॑नैव ग्रा॒ह्य॑ आ॒धिर॑स्या ब्रह्मजा॒येति॒ चेदवो॑चत्। न दू॒ताय॑ प्र॒हेया॑
तस्थ ए॒षा तथा॑ रा॒ष्ट्रं गु॑पि॒तं क्ष॒त्रिय॑स्य ॥ ३ ॥
यामा॒हुस्तार॑कैषा वि॑के॒शीति॑ दु॒च्छुनां॒ ग्राम॑मव॒पद्य॑मानाम्। सा ब्र॑ह्मजा॒या
वि दु॑नोति रा॒ष्ट्रं यत्र॒ प्रापा॑दि श॒श उ॑ल्कु॒षीमा॑न् ॥ ४ ॥

ब्रह्मचारी चरति वेविषद् विषः स देवानां भवत्येकमङ्गम्। तेन
जायामन्वविन्दद् बृहस्पतिः सोमेन नीतां जुह्वं१ न देवाः ॥ ५ ॥
देवा वा एतस्यामवदन्त पूर्वे सप्तऋषयस्तपसा ये निषेदुः। भीमा
जाया ब्राह्मणस्योपनीता दुर्धां दधाति परमे व्योऽमन् ॥ ६ ॥
ये गर्भा अवपद्यन्ते जगद् यच्चापलुप्यते। वीरा ये तृह्यन्ते मिथो
ब्रह्मजाया हिनस्ति तान् ॥ ७ ॥
उत यत् पतयो दश स्त्रियाः पूर्वे अब्राह्मणाः। ब्रह्मा चेद्धस्तमग्रहीत्
स एव पतिरेकधा ॥ ८ ॥
ब्राह्मण एव पतिर्न राजन्यो३ न वैश्यः। तत् सूर्यः प्रब्रुवन्नेति
पञ्चभ्यो मानवेभ्यः ॥ ९ ॥
पुनर्वै देवा अददुः पुनर्मनुष्याऽअददुः। राजानः सत्यं गृह्णाना
ब्रह्मजायां पुनर्ददुः ॥ १० ॥
पुनर्दाय ब्रह्मजायां कृत्वा देवैर्निकिल्बिषम्। ऊर्जं पृथिव्या भक्त्वोरुगायमुपासते ॥ ११ ॥
नास्य जाया शतवाही कल्याणी तल्पमा शये। यस्मिन् राष्ट्रे
निरुध्यते ब्रह्मजायाचित्या ॥ १२ ॥
न विकर्णः पृथुशिरास्तस्मिन् वेश्मनि जायते। यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते
ब्रह्मजायाचित्त्या ॥ १३ ॥
नास्य क्षत्ता निष्कग्रीवः सूनानामेत्यग्रतः। यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते
ब्रह्मजायाचित्त्या ॥ १४ ॥

नास्य॑ श्वे॒तः कृ॑ष्ण॒कर्णो॑ धु॒रि यु॒क्तो म॑हीयते । यस्मि॑न् रा॒ष्ट्रे नि॑रु॒ध्यते॑ ब्रह्मजा॒याचि॑त्त्या ॥ १५ ॥

नास्य॒ क्षेत्रे॑ पुष्क॒रि॒णी नाण्डीकं॑ जायते॒ बिसं॑म् । यस्मि॑न् रा॒ष्ट्रे नि॑रु॒ध्यते॑ ब्रह्मजा॒याचि॑त्त्या ॥ १६ ॥

नास्मै॒ पृश्नि॒ वि दु॑हन्ति॒ ये॑ऽस्या॒ दोह॑मु॒पास॑ते । यस्मि॑न् रा॒ष्ट्रे नि॑रु॒ध्यते॑ ब्रह्मजा॒याचि॑त्त्या ॥ १७ ॥

नास्य॑ धे॒नुः क॑ल्या॒णी नान॒ड्वान्त्स॑हते॒ धुर॑म् । वि॒जानि॒र्यत्र॑ ब्राह्म॒णो रात्रि॒ वस॑ति पा॒पया॑ ॥ १८ ॥ [४।२]

सूक्त १८

ऋषिः—मयोभूः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—१–३, ६, ७, १०-१२, १४, १५ अनुष्टुप्; ४ भुरिक् त्रिष्टुप्, ५, ८, ९, १३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १५ ।

नैतां ते॑ दे॒वा अ॑ददु॒स्तुभ्यं॑ नृपते॒ अत्त॑वे । मा ब्रा॑ह्म॒णस्य॑ राजन्य॒ गां जि॑घत्सो अ॒नाद्याम् ॥ १ ॥

अ॒क्षद्रु॑ग्धो राज॒न्यः॑ पा॒प आ॑त्मपराजि॒तः । स ब्रा॑ह्म॒णस्य॒ गाम॑द्याद॒द्य जीवा॑नि॒ मा श्वः ॥ २ ॥

आवि॑ष्टि॒ताघवि॑षा पृदा॒कूरि॑व॒ चर्म॑णा । सा ब्रा॑ह्म॒णस्य॑ राजन्य तृ॒ष्टैषा गौर॑ना॒द्या ॥ ३ ॥

निर्वै॑ क्ष॒त्रं नय॑ति॒ हन्ति॒ वर्चो॒ऽग्निरि॒वार॑ब्धो॒ वि दु॑नोति॒ सर्व॑म् । यो ब्रा॑ह्म॒णं मन्य॑ते॒ अन्न॑मे॒व स वि॒षस्य॑ पिबति तैमा॒तस्य॑ ॥ ४ ॥

य ए॑नं॒ हन्ति॑ मृ॒दुं मन्य॑मानो देवपी॒युर्धन॑कामो॒ न चि॒त्तात् । सं
तस्येन्द्रो॒ हृद॑ये॒ऽग्निमि॑न्ध उ॒भे ए॑नं द्वि॒ष्टो नभ॑सी॒ चर॑न्तम् ॥ ५ ॥
न ब्रा॑ह्म॒णो हिं॑सित॒व्यो॒३॑ग्निः प्रि॒यत॑नोरिव । सोमो॒ ह्य॑स्य दाया॒द
इन्द्रो॑ अस्याभिशस्ति॒पाः ॥ ६ ॥
श॒तापा॑ष्ठां॒ नि गि॑रति॒ तां न श॑क्नोति नि॒ःखिद॑न् । अन्नं॒ यो
ब्र॒ह्मणां॑ म॒ल्वः स्वा॒द्व१॑द्मीति॒ मन्य॑ते ॥ ७ ॥
जि॒ह्वा ज्या भव॑ति॒ कुल्म॑लं॒ वाङ्ना॑डी॒का दन्ता॒स्तप॑सा॒भिदि॑ग्धाः ।
तेभि॑र्ब्र॒ह्मा वि॑ध्यति देवपी॒यून् हृ॑द्ब॒लैर्धनु॑र्भिर्दे॒वजू॑तैः ॥ ८ ॥
ती॒क्ष्णेष॑वो ब्राह्म॒णा हे॑ति॒मन्तो॒ याम॒स्य॑न्ति शर॒व्या॒३॑ न सा मृषा॑ ।
अ॒नु॒हाय॒ तप॑सा म॒न्युना॑ चो॒त दू॒राद॑व भिन्दन्त्येनम् ॥ ९ ॥
ये स॒हस्र॒मरा॑ज॒न्नास॑न् दशश॒ता उ॒त । ते ब्रा॑ह्म॒णस्य॒ गां जग्ध्वा
वैतह॒व्याः परा॑भवन् ॥ १० ॥
गौरे॒व तान् ह॒न्यमा॑ना वैतह॒व्याँ अवा॑तिरत् । ये केस॑रप्राबन्धाया-
श्चर॒माजा॒मपे॑चिरन् ॥ ११ ॥
एक॑शतं॒ ता ज॒नता॒ या भूमि॒र्व्य॑धूनुत । प्र॒जां हिं॑सि॒त्वा ब्राह्म॑णीम-
संभ॒व्यं परा॑भवन् ॥ १२ ॥
दे॒व॒पी॒युश्च॑रति॒ मर्त्ये॑षु गर॒गी॒र्णो॑ भव॒त्यस्थि॑भूयान् । यो ब्रा॑ह्म॒णं
दे॒वब॑न्धुं हि॒नस्ति॒ न स पि॑तृ॒याण॒मप्ये॑ति लो॒कम् ॥ १३ ॥
अ॒ग्निर्वै॑ नः॑ पद॒वायः॒ सोमो॑ दाया॒द उ॑च्यते । ह॒न्ताभिश॒स्तेन्द्र॒स्तथा॒
तद् वे॒धसो॑ विदुः ॥ १४ ॥

इषुरिव दिग्धा नृपते पृदाकूरिव गोपते । सा ब्राह्मणस्येषुर्घोरा तया
विध्यति पीयतः ॥ १५ ॥ [४।३]

सूक्त १९

ऋषिः—मयोभूः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—१, ३-६, ८-१५ अनुष्टुप्; २ विराट् पुरस्ताद्बृहती:; ७, विराडुपरिष्टाद्बृहती ॥ मंत्र १५ ।

अतिमात्रमवर्धन्त नोदिव दिवमस्पृशन् । भृगुं हिंसित्वा सृञ्जया
वैतहव्याः पराभवन् ॥ १ ॥

ये बृहत्सामानमाङ्गिरसमार्पयन् ब्राह्मणं जनाः । पेत्वस्तेषामुभयाद-
मविस्तोकान्यावयत् ॥ २ ॥

ये ब्राह्मणं प्रत्यष्ठीवन् ये वास्मिञ्छुल्कमीषिरे । अस्नस्ते मध्ये
कुल्यायाः केशान् खादन्त आसते ॥ ३ ॥

ब्रह्मगवी पच्यमाना यावत् साभि विजङ्गहे । तेजो राष्ट्रस्य निर्हन्ति
न वीरो जायते वृषा ॥ ४ ॥

क्रूरमस्या आशसनं तृष्टं पिशितमस्यते । क्षीरं यदस्याः पीयते
तद् वै पितृषु किल्बिषम् ॥ ५ ॥

उग्रो राजा मन्यमानो ब्राह्मणं यो जिघत्सति । परा तत् सिच्यते
राष्ट्रं ब्राह्मणो यत्र जीयते ॥ ६ ॥

अष्टापदी चतुरक्षी चतुःश्रोत्रा चतुर्हनुः । द्व्यास्या द्विजिह्वा भूत्वा
सा राष्ट्रमव धूनुते ब्रह्मज्यस्य ॥ ७ ॥

तद् वै रा॒ष्ट्रमा स्र॑वति॒ नावँ भि॒न्नामि॑वोद॒कम्। ब्र॒ह्माणं॒ यत्र॒ हिंस॑न्ति॒
तद् रा॒ष्ट्रं ह॑न्ति दु॒च्छुना॑ ॥ ८ ॥
तं वृ॒क्षा अप॑ सेधन्ति च्छा॒यां नो॒ मोप॑ गा॒ इति॑। यो ब्रा॑ह्म॒णस्य
सद्धन॑म॒भि ना॑रद॒ मन्य॑ते ॥ ९ ॥
वि॒षमे॒तद् दे॒वकृ॑तं॒ राजा॒ वरु॑णोऽब्रवीत्। न ब्रा॑ह्म॒णस्य॒ गां ज॒ग्ध्वा
रा॒ष्ट्रे जा॑गार॒ कश्च॒न ॥ १० ॥
नवै॒व ता न॑व॒तयो॒ या भूमि॒र्व्य॑धूनुत। प्र॒जां हिंसि॒त्वा ब्राह्म॑णीम-
संभ॒व्यं परा॑भवन् ॥ ११ ॥
यां मृ॒ताया॑नुब॒ध्नन्ति॑ कू॒द्यं॑ पद॒योप॑नीम्। तद् वै ब्र॑ह्मज्य ते दे॒वा
उ॑प॒स्तर॑णमब्रुवन् ॥ १२ ॥
अ॒श्रूणि॒ कृप॑माणस्य॒ यानि॑ जी॒तस्य॑ वावृ॒तुः। तं वै ब्र॑ह्मज्य ते
दे॒वा अ॒पां भा॒गम॑धारयन् ॥ १३ ॥
येन॑ मृ॒तं स्न॒पय॑न्ति॒ श्मश्रू॑णि॒ येनो॒न्दते॑। तं वै ब्र॑ह्मज्य ते दे॒वा
अ॒पां भा॒गम॑धारयन् ॥ १४ ॥
न व॒र्षं मै॑त्रावरु॒णं ब्र॑ह्म॒ज्यम॒भि व॑र्षति। नास्मै॒ समि॑तिः कल्पते॒ [४।४]
न मि॒त्रं न॑यते॒ वश॑म् ॥ १५ ॥

सूक्त २०

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—वानस्पत्यो दुन्दुभिः । छन्दः—१ जगती; २-१२ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १२ ।

उ॒च्चैर्घो॑षो दु॒न्दु॒भिः स॑त्वना॒यन् वा॑नस्प॒त्यः संभृ॑त उ॒स्रिया॑भिः।
वाचँ क्षुणु॒वानो द॒मय॑न्त्स॒पत्ना॑न्त्सिं॒ह इ॑व जे॒ष्यन्न॒भि तँस्तनीहि । ॥ १ ॥

सिं॒ह इ॑वास्तानीद् द्रु॒वयो॒ विब॑द्धोऽभि॒क्रन्द॑न्नृष॒भो वा॑सि॒तामि॑व ।
वृषा॒ त्वं॑ वध्र॑यस्ते स॒पत्ना॑ ऐ॒न्द्रस्ते॒ शुष्मो॑ अभिमातिषा॒हः ॥ २ ॥
वृषे॑व यू॒थे सह॑सा विदा॒नो ग॒व्यन्न॒भि रु॑व सं॑धनाजित् ।
शु॒चा वि॑ध्य॒ हृद॑यं॒ परे॑षां हि॒त्वा ग्रामा॒न् प्रच्यु॑ता यन्तु॒ शत्र॑वः ॥३॥
सं॒जय॒न् पृत॑ना ऊ॒र्ध्वमा॑यु॒र्गृह्या॑ गृह्णा॒नो ब॑हु॒धा वि च॑क्ष्व ।
दैवीं॒ वाचं॑ दुन्दुभ॒ आ गु॑रस्व वे॒धाः शत्रू॑णा॒मुप॑ भरस्व॒ वेद॑ः । ॥ ४ ॥
दु॒न्दु॒भेर्वाचं॒ प्रय॑तां॒ वद॑न्तीमाशृण्व॒ती ना॑थि॒ता घोष॑बुद्धा ।
नारी॑ पु॒त्रं धा॑वतु हस्त॒गृह्या॑मि॒त्री भी॒ता स॑म॒रे व॒धाना॑म् । ॥ ५ ॥
पूर्वो॑ दुन्दुभे॒ प्र व॑दासि॒ वाचं॒ भूम्या॑ः पृ॒ष्ठे व॑द॒ रोच॑मानः ।
अ॒मि॒त्र॒से॒नाम॑भि॒जञ्ज॑भानो द्यु॒मद् व॑द दुन्दुभे सू॒नृता॑वत् ॥ ६ ॥
अ॒न्त॒रेमे नभ॑सी॒ घोषो॑ अस्तु॒ पृथ॑क् ते ध्व॒नयो॑ यन्तु॒ शीभ॑म् ।
अ॒भि क्र॑न्द स्त॒नयो॒त्पिपा॑नः श्लोक॒कृन्मि॑त्र॒तूर्या॑य स्व॒र्धी ॥ ७ ॥
धी॒भिः कृ॒तः प्र व॑दाति॒ वाच॒मुद्धर्ष॑य॒ सत्व॑ना॒मायु॑धानि ।
इन्द्र॑मेदी॒ सत्व॑नो॒ नि ह्व॑यस्व मि॒त्रैर॒मित्राँ॒ अव॑ जङ्घनीहि ॥ ८ ॥
सं॒क्रन्द॑नः प्रव॒दो धृ॒ष्णुषे॑णः प्रवेद॒कृद् ब॑हु॒धा ग्रा॑मघो॒षी ।
श्रेयो॑ वन्वा॒नो व॒युना॑नि वि॒द्वान् की॒र्तिं ब॒हुभ्यो॒ वि ह॑र द्विरा॒जे ॥ ९ ॥
श्रेय॑ः केतो वसु॒जित् सही॑यान्त्संग्राम॒जित् संशि॑तो॒ ब्रह्म॑णासि ।
अ॒ंशूनि॑व॒ ग्रावा॑धि॒षव॑णे॒ अद्रि॑र्ग॒व्यन् दुन्दु॒भेऽधि॑ नृत्य॒ वेद॑ः ॥१०॥
श॒त्रूषाण्नी॒षाड॑भिमातिषा॒हो ग॒वेष॑णः॒ सह॑मान उ॒द्भित् । वा॒ग्वी॒व मन्त्रं॒
प्र भ॑रस्व॒ वाचं॒ सांग्रा॑मजित्या॒येष॒मुद् व॑दे॒ह ॥ ११ ॥

अ॒च्यु॒त॒च्युत् स॒मदो॑ गमि॑ष्ठो॒ मृधो॒ जेता॑ पुरए॒तायो॒ध्यः इन्द्रे॑ण गु॒प्तो
वि॒दथा॑ नि॒चिक्य॑द्धृ॒द्द्योत॑नो द्वि॒षतां॑ या॑हि॒ शीभ॑म् ॥१२॥ [४१५]

सूक्त २१

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता – वानस्पत्यो दुन्दुभिः; १०-१२ आदित्यादयः ।। छन्दः—१
४, ५ पथ्या पङ्क्तिः; २, ३, ७-१० अनुष्टुप्; ६ जगती; ११ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप्;
१२ त्रिपदा यवमध्या गायत्री ।। मन्त्र १२ ।

वि॒हृ॑दयं वैमन॒स्यं वदा॒मित्रे॑षु दुन्दुभे । वि॒द्वे॒षं कश्म॑शं भ॒यम॒मित्रे॑षु॒ नि
द॑ध्म॒स्यवै॑नान् दुन्दुभे जहि ॥१॥
उ॒द्वेप॑माना॒ मन॑सा॒ चक्षु॑षा॒ हृद॑येन च । धाव॑न्तु॒ बिभ्य॑तो॒ऽमित्राः॑
प्र॒त्रा॒सेना॒ज्ये॑ हु॒ते ॥ २ ॥
वा॒न॒स्प॒त्यः संभृ॑त उ॒स्रिया॑भिर्वि॒श्वगो॑त्र्यः । प्र॒त्रा॒सम॒मित्रे॑भ्यो
व॒दाज्ये॑ना॒भिघा॑रितः ॥ ३ ॥
यथा॑ मृ॒गाः सं॑वि॒जन्त॑ आर॒ण्याः पुरु॑षा॒दधि॑ । ए॒वा त्वं दु॑न्दुभे॒ऽमित्रा॑न॒भि
क्र॑न्द॒ प्र त्रा॑स॒याथो॑ चि॒त्तानि॑ मोहय ॥ ४ ॥
यथा॒ वृका॑दजा॒वयो॒ धाव॑न्ति ब॒हु बिभ्य॑तीः । ए॒वा त्वं दु॑न्दुभे॒ऽमित्रा॑न॒भि
क्र॑न्द॒ प्र त्रा॑स॒याथो॑ चि॒त्तानि मोहय ॥ ५ ॥
यथा॑ श्ये॒नात् प॑त॒त्रिणः॑ सं॑वि॒जन्ते॒ अह॑र्दिवि सिं॒हस्य॑ स्त॒नथो॒र्यथा॑ ।
ए॒वा त्वं दु॑न्दुभे॒ऽमित्रा॑न॒भि क्र॑न्द॒ प्र त्रा॑स॒याथो॑ चि॒त्तानि मोहय ॥६॥
प॒रामित्रा॑न् दु॒न्दु॒भिना॑ हरि॒णस्या॒जिने॑न च । सर्वे॑ दे॒वा अ॑तित्रस॒न् ये
सं॑ग्राम॒स्येश॑ते ॥ ७ ॥

यैरिन्द्र॑ः प्र॒क्रीड॑ते प॒द्घोषैश्छा॒यया॑ स॒ह । तैर॒मित्रा॑स्त्रसन्तु नो॒ऽमी ये यन्त्य॑नीक॒शः ॥ ८ ॥

ज्या॒घो॒षा दु॑न्दु॒भयो॒ऽभि क्रो॑शन्तु॒ या दिश॑ः । सेना॒ः परा॑जिता यतीर॒मित्रा॑णामनीक॒शः ॥ ९ ॥

आदि॑त्य॒ चक्षु॒रा द॑त्स्व॒ मरी॑च॒योऽनु॑ धावत । प॒त्स॒ङ्गिनी॒रा सं॑जन्तु॒ विग॑ते बाहुवी॒र्ये॑ ॥१०॥

यू॒यमु॒ग्रा म॑रुतः पृश्निमातर॒ इन्द्रे॑ण यु॒जा प्र मृ॑णीत॒ शत्रू॑न् । सोमो॒ राजा॒ वरु॑णो॒ राजा॑ महादे॒व उ॒त मृ॒त्युरिन्द्र॑ः ॥ ११ ॥

ए॒ता दे॑वसे॒नाः सूर्य॑केतव॒ः सचे॑तसः । अ॒मित्रा॑न् नो जयन्तु॒ स्वाहा॑ ॥ १२ ॥ [४ । ६]

सूक्त २२

ऋषि- भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—तक्मनाशनः ॥ छन्दः—१ भुरिक् त्रिष्टुप्; २ त्रिष्टुप्; ३, ४, ६-१४ अनुष्टुप्; ५ विराट् पथ्या बृहती ॥

अ॒ग्निस्त॒क्मान॒मप॑ बाधतामि॒तः सोमो॒ ग्रावा॒ वरु॑णः पू॒तद॑क्षाः । वेदि॑र्ब॒र्हिः स॒मिध॒ः शोशु॑चाना॒ अप॒ द्वेषां॑स्यमु॒या भ॑वन्तु ॥ १ ॥

अ॒यं यो विश्वा॑न् हरि॑तान् कृ॒णोष्यु॑च्छो॒चय॑न्न॒ग्निरि॑वाभिदु॒न्वन् । अधा॒ हि त॑क्मन्नर॒सो हि भू॒या अधा॒ न्य॑ङ्ङध॒राङ् वा॒ परे॑हि ॥ २ ॥

यः प॑रु॒षः पा॑रुषे॒योऽवध्वं॒स इ॑वारु॒णः । त॒क्मानं॑ विश्वधावीर्याध॒राञ्चं॒ परा॑ सुवा ॥ ३ ॥

अ॒ध॒राञ्चं॒ प्र हि॑णोमि॒ नमः॑ कृ॒त्वा त॒क्मने॑ । श॒क॒म्भ॒रस्य॑ मुष्टि॒हा
पुन॑रेतु महावृ॒षान् ॥ ४ ॥

ओको॑ अस्य॒ मूज॑वन्त॒ ओको॑ अस्य महावृ॒षाः । याव॑ज्जा॒तस्त॑क्मं॒स्ता-
वा॑नसि॒ बल्हि॑केषु न्योच॒रः ॥ ५ ॥

तक्म॒न् व्या॑ल॒ वि गद॒ व्य॑ङ्ग॒ भूरि॑ यावय । दा॒सीं॑ नि॒ष्टक्व॑रीमिच्छ॒
तां वज्रे॑ण॒ सम॑र्पय ॥ ६ ॥

तक्म॒न् मूज॑वतो गच्छ॒ बल्हि॑कान् वा परस्त॒राम् । शू॒द्रामि॑च्छ
प्रफ॒र्व्यं॑१॒ तां त॑क्म॒न् वी॑व धूनुहि ॥ ७ ॥

म॒हा॒वृ॒षान् मूज॑वतो॒ बन्ध्व॑द्धि प॒रेत्य॑ । प्रैतानि॑ तक्मने॑ ब्रूमो अन्य-
क्षे॒त्राणि॒ वा इ॒मा ॥ ८ ॥

अ॒न्य॒क्षे॒त्रे न र॑मसे व॒शी सन् मृ॑डयासि नः । अभू॑दु॒ प्रार्थ॑स्त॒क्मा स
ग॑मिष्यति॒ बल्हि॑कान् ॥ ९ ॥

यत् त्वं शी॒तोऽथो॑ रू॒रः स॒ह का॒सावे॑पयः । भी॒मास्ते॑ तक्मन् हे॒तय॒-
स्ताभिः॑ स्म॒ परि॑ वृङ्ग्धि नः ॥ १० ॥

मा स्मै॒तान्त्सखी॑न् कुरुथा ब॒लासं॑ का॒समु॑द्यु॒गम् । मा स्मा॒तो॒ऽर्वाङैः॑
पुन॒स्तत् त्वा॑ तक्म॒न्नुप॑ ब्रुवे ॥ ११ ॥

तक्म॒न् भ्रात्रा॑ ब॒लासे॑न॒ स्वस्रा॒ कासि॑कया स॒ह । पा॒प्मा भ्रातृ॑व्येण
स॒ह गच्छा॒मुमर॑णं॒ जन॑म् ॥ १२ ॥

तृती॑यकं वितृ॒ती॑यं स॑दु॒न्दिमु॒त शा॑र॒दम् । त॒क्मानँ॑ शी॒तं रू॒रं ग्रैष्मँ॑
नाश॑य॒ वार्षि॑कम् ॥ १३ ॥

ग॒न्धारि॑भ्यो॒ मूज॑व॒द्भ्योऽङ्गेँ॑भ्यो म॒गधे॑भ्यः । प्रै॒ष्यन् जन॑मिव शेव॒धिं
त॒क्मानं॒ परि दद्मसि ॥ १४ ॥ [५।१]

सूक्त २३

ऋषिः—काण्वः ॥ देवता —इन्द्रादयः ॥ छन्दः—१-१२ अनुष्टुप्; १३विराडनुष्टुप् ॥ मंत्र १३ ।

ओते॑ भे॒ द्यावा॑पृथि॒वी ओता॑ दे॒वी सर॑स्वती । ओतौ॑ म॒ इन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॒
क्रिमिं॑ जम्भयता॒मिति॑ ॥ १ ॥

अ॒स्येन्द्र॑ कुमा॒रस्य॒ क्रिमी॑न् धनपते जहि । ह॒ता विश्वा॒ अरा॑तय
उ॒ग्रेण॒ वच॑सा॒ मम॑ ॥ २ ॥

यो अ॒क्ष्यौ॑ परि॒सर्प॑ति॒ यो नासे॑ परि॒सर्प॑ति । द॒तां॑ यो मध्यं॒ गच्छ॑ति॒
तं क्रिमिं॑ जम्भयामसि ॥ ३ ॥

सरू॑पौ॒ द्वौ विरू॑पौ॒ द्वौ कृ॒ष्णौ द्वौ रोहि॑तौ॒ द्वौ । ब॒भ्रुश्च॑ ब॒भ्रुक॑र्णश्च॒
गृध्रः॒ कोक॑श्च॒ ते ह॒ताः ॥ ४ ॥

ये क्रिम॑यः शिति॒कक्षा॒ ये कृ॒ष्णाः शिति॒बाह॑वः । ये के च॑ वि॒श्वरू॑पा॒-
स्तान् क्रिमी॑न् जम्भयामसि ॥ ५ ॥

उत् पु॒रस्ता॒त् सूर्य॑ एति वि॒श्वदृ॑ष्टो अदृष्ट॒हा । दृ॒ष्टांश्च॒ घ्नन्न॒दृष्टांश्च॒
सर्वां॑श्च प्रमृ॒णन् क्रिमी॑न् ॥ ६ ॥

येवा॑षास॒ः कष्क॑षास एज॒त्काः शि॑पवित्नु॒काः । दृ॒ष्टश्च॑ ह॒न्यता॒ं
क्रिमि॑रु॒तादृष्ट॑श्च हन्यताम् ॥ ७ ॥

ह॒तो येवा॑ष॒ः क्रिमी॑णां ह॒तो न॑दनि॒मोत । सर्वा॒न् नि म॑ष्म॒षाक॑रं
दृ॒षदा॒ खल्वाँ॑ इव ॥ ८ ॥

त्रि॒शी॒र्षाणं॑ त्रि॒क॒कुदं॒ क्रिमिं॑ सा॒रङ्ग॒मर्जु॑नम् । शृ॒णाम्य॑स्य पृ॒ष्ठीरपि॑
वृश्चामि॒ यच्छिर॑ः ॥ ९ ॥

अ॒त्रि॒वद् व॑ः क्रिमयो हन्मि कण्व॒वज्ज॑मदग्नि॒वत् । अ॒गस्त्य॑स्य॒
ब्रह्म॑णा॒ सं पि॑नष्म्य॒हं क्रिमी॑न् ॥ १० ॥

ह॒तो रा॒जा क्रिमी॑णामु॒तैषां॑ स्थ॒पति॑र्ह॒तः । ह॒तो ह॒तमा॑ता॒ क्रिमि॑र्ह॒त-
भ्रा॑ता ह॒तस्व॑सा ॥ ११ ॥

ह॒तासो॑ अस्य वे॒शसो॑ ह॒तास॒ः परि॑वेशसः । अथो॒ ये क्षु॑ल्ल॒काइ॑व॒
सर्वे॒ ते क्रिम॑यो ह॒ताः ॥ १२ ॥

सर्वे॑षां च॒ क्रिमी॑णा॒ं सर्वा॑सां च क्रि॒मीणा॑म् । भि॒नद्म्यश्म॑ना॒ शिरो॒
दहा॑म्य॒ग्निना॒ मुख॑म् ॥ १३ ॥ [५।२]

सूक्त २४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवताः—१ सविता; २ अग्निः; द्यावापृथिवी; ४ वरुणः; ५ मित्रावरुणौ; ६ मरुतः; ७ सोमः; ८ वायुः ९ सूर्यः; १० चन्द्रमाः; ११ इन्द्रः; १२ मरुतां पिता; १३ मृत्युः; १४ यमः; १५ पितरः; १६ तताः; १७ ततामहाः ॥ छन्दः—१-१०, १२-१४ अतिशक्वरी; ११ शक्वरी; १५, १६ त्रिपदा (?) भुरिग्जगती; १७ त्रिपदा (?) विराट् शक्वरी ॥ मंत्र १७ ।

स॒वि॒ता प्र॑स॒वाना॒मधि॑पति॒ः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ं स्वाहा॑ ॥ १ ॥

अ॒ग्निर्व॑न॒स्पती॑ना॒मधि॑पति॒ः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ं स्वाहा॑ ॥ २ ॥

द्यावा॑पृथि॒वी दा॑तॄणामधि॑पत्नी॒ ते मा॑वताम् । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ं स्वाहा॑ ॥ ३ ॥

वरु॑णो॒ऽपामधि॑पतिः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ं स्वाहा॑ ॥ ४ ॥

मि॒त्रावरु॑णौ वृ॒ष्ट्या अधि॑पती॒ तौ मा॑वताम् । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ं स्वाहा॑ ॥ ५ ॥

म॒रुत॒ः पर्व॑ताना॒मधि॑पतय॒स्ते मा॑वन्तु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ं स्वाहा॑ ॥ ६ ॥

सोमो॑ वी॒रुधा॒मधि॑पति॒ः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन्
कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्या-
म॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्यां॒ स्वाहा॑ ॥ ७ ॥

वा॒युर॒न्तरि॑क्ष॒स्याधि॑पति॒ः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन्
कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम-
स्याम॒ाशिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्यां॒ स्वाहा॑ ॥ ८ ॥

सूर्य॒श्चक्षु॑षा॒मधि॑पति॒ः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां
पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑मस्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒-
स्यां दे॒वहू॑त्यां॒ स्वाहा॑ ॥ ९ ॥

च॒न्द्रमा॒ नक्ष॑त्राणा॒मधि॑पति॒ः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒-
स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒-
शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्यां॒ स्वाहा॑ ॥ १० ॥

इन्द्रो॑ दि॒वोऽधि॑पति॒ः स मा॑व॒तु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां
पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒-
शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्यां॒ स्वाहा॑ ॥ ११ ॥

म॒रुतां॑ पि॒ता प॑शूनामधि॑पति॒ः स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन्
कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चित्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्या-
म॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्यां॒ स्वाहा॑ ॥ १२ ॥

मृ॒त्युः प्र॒जाना॒मधि॑पतिः॒ स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चि॒त्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॑स्यां दे॒वहू॑त्या॒ स्वाहा॑ ॥ १३ ॥

य॒मः पि॑तॄ॒णामधि॑पतिः॒ स मा॑वतु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चि॒त्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ स्वाहा॑ ॥ १४ ॥

पि॒तरः॒ परे॒ ते मा॑वन्तु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चि॒त्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ स्वाहा॑ ॥ १५ ॥

त॒ता अव॑रे॒ ते मा॑वन्तु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चि॒त्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ स्वाहा॑ ॥ १६ ॥

त॒त॑स्तताम॒हास्ते मा॑वन्तु । अ॒स्मिन् ब्रह्म॑ण्य॒स्मिन् कर्म॑ण्य॒स्यां पु॑रो॒धाया॑म॒स्यां प्र॑ति॒ष्ठाया॑म॒स्यां चि॒त्त्या॑म॒स्यामाकू॑त्याम॒स्यामा॒शिष्य॒स्यां दे॒वहू॑त्या॒ स्वाहा॑ ॥ १७ ॥ [५।३]

सूक्त २५

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—योनिः, गर्भः, पृथिव्यादयः ॥ छन्दः—१-१२ अनुष्टुप्, १३ विराट् पुरस्ताद्बृहती ॥ मन्त्र १३ ।

पर्व॑ताद् दि॒वो योने॒रंगा॑दंगात् स॒माभृ॑तम् । शेपो॒ गर्भ॑स्य रेतो॒धाः सरौ॑ प॒र्णमि॒वा द॑धत् ॥ १ ॥

य॒थेयं पृ॑थि॒वी म॒ही भू॒ताना॒ं गर्भ॑मादधे । ए॒वा द॑धामि ते॒ गर्भं॒
तस्मै॒ त्वामव॑से हुवे ॥ २ ॥
गर्भं॑ धेहि सिनीवालि॒ गर्भं॑ धेहि सरस्वति । गर्भं॑ ते अ॒श्विनो॒भा
ध॑त्तां॒ पुष्क॑रस्रजा ॥ ३ ॥
गर्भं॑ ते मि॒त्रावरु॑णौ॒ गर्भं॑ दे॒वो बृह॒स्पतिः॑ । गर्भं॑ त॒ इन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॒ गर्भं॑
धा॒ता द॑धातु ते ॥ ४ ॥
विष्णु॒र्योनिं॑ कल्पयतु॒ त्वष्टा॑ रू॒पाणि॑ पिंशतु । आ सि॑ञ्चतु प्र॒जाप॑तिर्धा॒ता
गर्भं॑ दधातु ते ॥ ५ ॥
यद् वेद॒ राजा॒ वरु॑णो॒ यद् वा॑ दे॒वी सर॑स्वती । यदिन्द्रो॑ वृत्र॒हा वेद॒
तद् ग॑र्भ॒कर॑णं पिब ॥ ६ ॥
गर्भो॑ अ॒स्योष॑धीनां॒ गर्भो॒ वन॒स्पती॑नाम् । गर्भो॒ विश्व॑स्य भू॒तस्य॒ सो
अ॑ग्ने॒ गर्भ॒मेह धाः॑ ॥ ७ ॥
अधि॑ स्कन्द वी॒रय॑स्व॒ गर्भ॒मा धे॑हि॒ योन्या॑म् । वृषा॑सि वृष्ण्यावन्
प्र॒जायै॒ त्वा न॑यामसि ॥ ८ ॥
वि जि॑हीष्व बार्हत्सामे॒ गर्भ॑स्ते॒ योनि॒मा श॑याम् । अदु॑ष्टे दे॒वाः पु॒त्रं
सो॑म॒पा उ॑भया॒विन॑म् ॥ ९ ॥
धात॒ः श्रेष्ठे॑न रू॒पेणा॒स्या नार्या॑ ग॒वीन्योः॑ । पुमां॑सं पु॒त्रमा धे॑हि
दश॒मे मा॒सि सूत॑वे ॥ १० ॥
त्वष्टः॒ श्रेष्ठे॑न रू॒पेणा॒स्या नार्या॑ ग॒वीन्योः॑ । पुमां॑सं पु॒त्रमा धे॑हि
दश॒मे मा॒सि सूत॑वे ॥ ११ ॥

सवि॑त॒ः श्रेष्ठे॑न रू॒पेणा॒स्या नार्या॑ गवी॒न्योः । पुमां॑सं पु॒त्रमा धे॑हि
दश॒मे मा॒सि सूत॑वे ॥ १२ ॥
प्रजा॑पते॒ श्रेष्ठे॑न रू॒पेणा॒स्या नार्या॑ गवी॒न्योः । पुमां॑सं पु॒त्रमा धे॑हि
दश॒मे मा॒सि सूत॑वे ॥ १३ ॥ [५। ४]

सूक्त २६

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता – १ अग्निः; २ सविता; ३; ११ इन्द्रः; ४ निविदः; ५ मरुतः; ६ अदितिः; ७ विष्णुः; ८ त्वष्टा; ९ भगः; १० सोमः; १२ अश्विनौ, बृहस्पतिः ।। छन्दः - १, ५ द्विपदाऽऽर्च्युष्णिक्; २, ४, ६-८, १०, ११ द्विपदा प्रजापत्या बृहती; ३ त्रिपदा विराड् गायत्री; ९ त्रिपदा पिपीलिकमध्या पुरउष्णिक्; १२ परातिशक्वरी चतुष्पदा जगती ।। मन्त्र १२।

यजूँषि य॒ज्ञे स॒मिध॒ः स्वाहा॒ग्निः प्र॑वि॒द्वानि॒ह वो॑ युनक्तु ॥ १ ॥
यु॒नक्तु॑ दे॒वः स॑वि॒ता प्र॑जा॒नन्न॒स्मिन् य॒ज्ञे म॑हि॒षः स्वाहा॑ ॥ २ ॥
इन्द्र॑ उक्थम॒दान्य॒स्मिन् य॒ज्ञे प्र॑वि॒द्वान् यु॑नक्तु सु॒युज॒ः स्वाहा॑ ॥ ३ ॥
प्रै॒षा य॒ज्ञे नि॒विद॒ः स्वाहा॑ शि॒ष्टाः पत्नी॑भिर्वहते॒ह यु॒क्ताः ॥ ४ ॥
छन्दाँसि य॒ज्ञे म॒रुत॒ः स्वाहा॑ मा॒तेव॑ पु॒त्रं पि॑पृते॒ह यु॒क्ताः ॥ ५ ॥
एय॑मगन् ब॒र्हिषा॒ प्रोक्ष॑णीभिर्य॒ज्ञं त॑न्वा॒नादि॑ति॒ः स्वाहा॑ ॥ ६ ॥
विष्णु॑र्युनक्तु बहु॒धा तपां॑स्य॒स्मिन् य॒ज्ञे सु॒युज॒ः स्वाहा॑ ॥ ७ ॥
त्वष्टा॑ युनक्तु बहु॒धा नु रू॒पा अ॒स्मिन् य॒ज्ञे सु॒युज॒ः स्वाहा॑ ॥ ८ ॥
भगो॑ युनक्त्वा॒शिषो॒ न्व॑१॒स्मा अ॒स्मिन् य॒ज्ञे प्र॑वि॒द्वान् यु॑नक्तु सु॒युज॒ः
स्वाहा॑ ॥ ९ ॥

सोमो युनक्तु बहुधा पयांस्यस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा ॥ १० ॥
इन्द्रो युनक्तु बहुधा वीर्याण्यस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा ॥ ११ ॥
अश्विना ब्रह्मणा यातमर्वाञ्चौ वषट्कारेण यज्ञं वर्धयन्तौ ।
बृहस्पते ब्रह्मणा याह्यर्वाङ् यज्ञो अयं स्वरिदं यजमानाय स्वाहा ॥ १२ ॥ [५।५]

सूक्त २७

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप्; २ द्विपदा साम्नी भुरिगनुष्टुप्; ३ द्विपदाऽऽर्ची बृहती; ४ द्विपदा साम्नी भुरिग्बृहती; ५ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप् ६ द्विपदा विराण्-नामगायत्री; ७ द्विपदा साम्नी बृहती; ८ संस्तारपङ्क्तिः; ९ षट्पदाऽनुष्टुब्गर्भा परातिजगती; १०-१२ पुरउष्णिक्। मन्त्र १२।

ऊर्ध्वा अस्य समिधो भवन्त्यूर्ध्वा शुक्रा शोचींष्यग्नेः । द्युमत्तमा सुप्रतीकः ससूनुस्तनूनपादसुरो भूरिपाणिः ॥ १ ॥
देवो देवेषु देवः पथो अनक्ति मध्वा घृतेन ॥२॥
मध्वा यज्ञं नक्षति प्रैणानो नराशंसो अग्निः । सुकृद् देवः सविता विश्ववारः ॥ ३ ॥
अच्छायमेति शवसा घृता चिदीडानो वह्निर्नमसा ॥ ४ ॥
अग्निः स्रुचो अध्वरेषु प्रयक्षु स यक्षदस्य महिमानमग्नेः ॥ ५ ॥
तरी मन्द्रासु प्रयक्षु वसवश्चातिष्ठन् वसुधातरश्च ॥ ६ ॥
द्वारो देवीरन्वस्य विश्वे व्रतं रक्षन्ति विश्वहा ॥ ७ ॥
उरुव्यचसाग्नेर्धाम्ना पत्यमाने । आ सुष्वयन्ती यजते उपाके उषासानक्तेमं यज्ञमवतामध्वरं नः ॥ ८ ॥

दैवा होतार ऊर्ध्वमध्वरं नोऽग्नेर्जिह्वयाभि गृणत गृणता नः स्विष्टये।
तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तामिडा सरस्वती मही भारती गृणाना ॥ ९ ॥
तन्नस्तुरीपमद्भुतं पुरुक्षु। देव त्वष्टा रायस्पोषं त्रि ष्य नाभिमस्य ।१०।
वनस्पतेऽव सृजा रराणः। त्मना देवेभ्यो अग्निर्हव्यं शमिता
स्वदयतु ॥ ११ ॥
अग्ने स्वाहा कृणुहि जातवेदः। इन्द्राय यज्ञं विश्वे देवा हविरिदं
जुषन्ताम् ॥ १२ ॥ [६।१]

सूक्त २८

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता— त्रिवृत्, अग्न्यादयः ।। छन्दः—१-५, ८, ११, १४ त्रिष्टुप्; ६ पञ्चपदाऽतिशक्वरी; ७, ९, १०, १२ ककुम्मत्यनुष्टुप्; १३ पुरउष्णिक् ।। मंत्र १४ ।

नव प्राणान्नवभिः सं मिमीते दीर्घायुत्वाय शतशारदाय। हरिते त्रीणि
रजते त्रीण्ययसि त्रीणि तपसाविष्ठितानि ॥ १ ॥
अग्निः सूर्यश्चन्द्रमा भूमिरापो द्यौरन्तरिक्षं प्रदिशो दिशश्च।
आर्तवा ऋतुभिः संविदाना अनेन मा त्रिवृता पारयन्तु ॥ २ ॥
त्रयः पोषास्त्रिवृति श्रयन्तामनक्तु पूषा पयसा घृतेन।
अन्नस्य भूमा पुरुषस्य भूमा भूमा पशूनां त इह श्रयन्ताम् ॥ ३ ॥
इममादित्या वसुना समुक्षतेममग्ने वर्धय वावृधानः। इममिन्द्र सं सृज
वीर्येणास्मिन् त्रिवृच्छ्रयतां पोषयिष्णु ॥ ४ ॥
भूमिष्ट्वा पातु हरितेन विश्वभृदग्निः पिपर्त्वयसा सजोषाः। वीरुद्भिष्टे
अर्जुनं संविदानं दक्षं दधातु सुमनस्यमानम् ॥ ५ ॥

त्रे॒धा जा॒तं जन्म॑ने॒दं हिर॑ण्यम॒ग्नेरेकं॑ प्रि॒यत॑मं बभूव॒ सोम॒स्यैकं॑ हिं॑सि॒तस्य॒ परा॑पतत् । अ॒पामेकं॑ वे॒धसां॑ रेत॑ आ॒हुस्तत् ते॒ हिर॑ण्यं त्रि॒वृद॒स्त्वायु॑षे ।६।

त्र्या॒यु॒षं ज॒मद॑ग्नेः क॒श्यप॑स्य त्र्यायु॒षम् । त्रे॒धामृत॑स्य॒ चक्ष॑णं॒ त्रीण्यायूं॑षि तेऽकरम् ॥ ७ ॥

त्रयः॑ सु॒प॒र्णास्त्रि॒वृता॒ यदाय॑न्नेकाक्ष॒रम॑भिसं॒भूय॑ श॒क्राः ।
प्रत्यौ॑हन्मृ॒त्युम॒मृते॑न सा॒कम॑न्त॒र्दधा॑ना दुरि॒तानि॒ विश्वा॑ ॥ ८ ॥

दि॒वस्त्वा॑ पातु॒ हरि॑तं॒ मध्या॑त् त्वा पा॒त्वर्जु॑नम् । भूम्या॑ अय॒स्मयं॑ पातु॒ प्रागा॑द् दे॒वपु॒रा अ॒यम् ॥ ९ ॥

इ॒मास्ति॒स्रो दे॑वपु॒रास्तास्त्वा॑ रक्षन्तु स॒र्वतः॑ । तास्त्वं बि॑भ्र॒द् वर्च॑स्व्युत्तरो द्विष॒तां भ॑व ॥ १० ॥

पुरं॑ दे॒वाना॑म॒मृतं॒ हिर॑ण्यं॒ य आ॑बे॒धे प्र॑थ॒मो दे॒वो अग्रे॑ । तस्मै॒ नमो॒ दश॒ प्राचीः॑ कृणो॒म्यनु॑ मन्यतां त्रि॒वृदा॒बधे॑ मे ॥ ११ ॥

आ त्वा॑ चृतत्वर्य॒मा पूषा बृह॒स्पतिः॑ । अह॑र्जातस्य॒ यन्नाम॒ तेन॒ त्वाति चृतामसि ॥ १२ ॥

ऋ॒तुभि॑ष्ट्वार्त॒वैरायु॑षे॒ वर्च॑से त्वा । सं॒व॒त्स॒रस्य॒ तेज॑सा॒ तेन॒ संह॑नु कृण्मसि ॥ १३ ॥

घृ॒तादुल्लु॑प्तं॒ मधु॑ना॒ सम॑क्तं भू॒मि॒दृं॒हमच्यु॑तं पारयि॒ष्णु । भि॒न्दत् स॒पत्ना॑नध॑रांश्च कृ॒ण्वदा मा॑ रोह मह॒ते सौभ॑गाय ॥ १४ ॥ [६।२]

सूक्त २९

ऋषिः—चातनः ॥ देवताः—जातवेदाः, मन्त्रोक्ताश्च ॥ छन्द—१, २, ४, ६—११ त्रिष्टुप्; ३ त्रिपदाविराण्नामगायत्री; ५ पुरोऽतिजगती बिराड्जगती; १२ भुरिगनुष्टुप्; १३, १६ अनुष्टुप्; १४ चतुष्पदा पराबृहती ककुम्मत्यनुष्टुप् ॥ मंत्र १५ ।

पु॒रस्ता॑द् यु॒क्तो व॑ह जातवे॒दोऽग्ने॑ वि॒द्धि क्रि॒यमा॑ण॒ं य॒थेदम् ॥ त्वं
भि॒षग् भे॑ष॒जस्या॑सि क॒र्ता त्वया॒ गामश्व॒ं पुरु॑षं सनेम ॥ १ ॥

तथा॒ तद॑ग्ने कृणु जातवे॒दो विश्वे॑भिर्दे॒वैः स॒ह सं॑विदा॒नः । यो नो॑ दि॒देव॑
य॒तमो॑ ज॒घास॒ यथा॒ सो अ॒स्य प॑रि॒धिष्पता॑ति ॥ २ ॥

यथा॒ सो अ॒स्य प॑रि॒धिष्पता॑ति॒ तथा॒ तद॑ग्ने कृणु जातवेदः । विश्वे॑भिर्दे॒वैः स॒ह सं॑विदा॒नः ॥ ३ ॥

अ॒च्यौ॒३॑ नि विध्य॒ हृद॑यं॒ नि वि॑ध्य जि॒ह्वां नि तृ॑न्द्धि॒ प्र द॒तो
मृ॑णीहि । पि॒शा॒चो अ॒स्य य॑त॒मो ज॒घासाग्ने॑ यविष्ठ॒ प्रति॒ तं शृ॑णीहि ।
॥ ४ ॥

यद॑स्य हृ॒तं विहृ॑तं॒ यत् परा॑भृतमा॒त्मनो॑ ज॒ग्धं य॑त॒मत् पि॑शा॒चैः ।
तद॑ग्ने वि॒द्वान् पुन॒रा भ॑र॒ त्वं शरी॑रे मां॒समसु॒मेर॑यामः ॥ ५ ॥

आ॒मे सुप॑क्वे श॒बले॒ विप॑क्वे॒ यो मा॑ पिशा॒चो अश॑ने द॒दम्भ॑ ।
तदा॒त्मना॑ प्र॒जया॑ पिशा॒चा वि या॑तयन्तामग॒दो॒३॑यम॑स्तु ॥ ६ ॥

क्षी॒रे मा॑ म॒न्थे य॑त॒मो द॒दम्भा॑कृष्टप॒च्ये अश॑ने धा॒न्ये॒३॑ यः । तदा॒त्मना॑
प्र॒जया॑ पिशा॒चा वि या॑तयन्तामग॒दो॒३॑यम॑स्तु ॥ ७ ॥

अ॒पां॑ मा॒ पाने॑ यत॒मो द॒दम्भ॑ क्र॒व्याद् यातू॒नां॑ शय॑ने॒ शया॑नम् ।
तदा॒त्मना॑ प्र॒जया॑ पिशा॒चा वि या॑तयन्तामग॒दो॒३॑यम॑स्तु ॥ ८ ॥

दि॒वा॑ मा॒ नक्तं॑ यत॒मो द॒दम्भ॑ क्र॒व्याद् यातू॒नां॑ शय॑ने॒ शया॑नम् ।
तदा॒त्मना॑ प्र॒जया॑ पिशा॒चा वि या॑तयन्तामग॒दो॒३॑यम॑स्तु ॥ ९ ॥

क्र॒व्याद॑मग्ने रुधि॒रं पि॑शा॒चं म॑नो॒हनं॑ जहि जातवेदः । तमिन्द्रो॑ वा॒जी
वज्रे॑ण हन्तु च्छि॒नत्तु॒ सोमः॒ शिरो॑ अस्य धृ॒ष्णुः ॥१० ॥

स॒नाद॑ग्ने मृणसि यातु॒धाना॒न् न त्वा॒ रक्षां॑सि॒ पृत॑नासु जिग्युः । स॒हमू॑रा॒ननु॑ दह क्र॒व्यादो॒ मा ते॑ हे॒त्या मु॑क्षत॒ दैव्या॑याः ॥ ११ ॥

स॒मा॑हर जातवेदो॒ यद्धृ॒तं यत् परा॑भृतम् । गात्रा॑ण्यस्य वर्धन्तामं॒शुरि॒वा
प्या॑यताम॒यम् ॥ १२ ॥

सोम॑स्येव जातवेदो अं॒शुरा प्या॑यताम॒यम् । अग्ने॑ विर॒प्शिनं॒ मेध्य॑मय॒क्ष्मं कृ॑णु॒ जीव॑तु । १३ ॥

ए॒तास्ते॑ अग्ने स॒मिधः॑ पिशाच॒जम्भ॑नीः । तास्त्वं जु॑षस्व॒ प्रति॑
चैना गृहाण जातवेदः ॥ १४ ॥

ता॒र्ष्टा॒घीर॑ग्ने स॒मिधः॒ प्रति॑ गृह्णाह्य॒र्चिषा॑ । जहा॑तु क्र॒व्याद्रू॒पं यो अ॑स्य
मां॒सं जिहीर्ष॑ति ॥ १५ ॥ [६।३]

सूक्त ३०

ऋषिः उन्मोचनः (आयुष्यकामः) ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः, आयुः ॥ छन्दः—१ पथ्यापङ्क्तिः; २-८, १०, ११, १३, १५, १६ अनुष्टुप; ९ भुरिगनुष्टुप १२ चतुष्पदा विराड्जगती; १४ विराट्प्रस्तारपङ्क्तिः; १७ षट्पदा जगती ॥ मन्त्र १७ ।

आ॒व॒त॑स्त आ॒व॒तः॑ प॒रा॒व॒त॑स्त आ॒व॒तः॑ । इ॒हैव भ॑व॒ मा नु गा॒ मा
पूर्वा॒ननु॑ गाः पि॒तॄनसुं॑ बध्नामि ते दृ॒ढम् ॥ १ ॥
यत् त्वा॑भिचे॒रुः पुरु॑षः॒ स्वो यदर॑णो॒ जनः॑ । उ॒न्मो॒च॒न॒प्र॒मो॒च॒ने उ॒भे
वा॒चा व॑दामि ते ॥ २ ॥
यद् दु॒द्रोहि॑थ शेपि॒षे स्त्रि॒यै पुं॒से अचि॑त्त्या । उ॒न्मो॒च॒न॒प्र॒मो॒च॒ने उ॒भे
वा॒चा व॑दामि ते ॥ ३॥
यदेन॑सो मा॒तृकृ॑ता॒च्छेषे॑ पि॒तृकृ॑ताच्च॒ यत् । उ॒न्मो॒च॒न॒प्र॒मो॒च॒ने उ॒भे
वा॒चा व॑दामि ते ॥ ४ ॥
यत् ते॑ मा॒ता यत् ते॑ पि॒ता जा॒मिर्भ्राता॑ च॒ सर्ज॑तः । प्र॒त्यक् से॑वस्व
भेष॒जं ज॒रद॑ष्टिं कृणोमि त्वा ॥ ५ ॥
इ॒हैधि॑ पुरुष॒ सर्वे॑ण॒ मन॑सा स॒ह । दू॒तौ य॒मस्य॒ मानु॑ गा॒ अधि॑ जीवपु॒रा
इ॑हि ॥ ६ ॥
अनु॑हूतः॒ पुन॒रेहि॑ वि॒द्वानु॒दय॑नं प॒थः । आ॒रोह॑णमा॒क्रम॑णं॒ जीव॑तो-
जीव॒तोऽय॑नम् ॥ ७ ॥
मा बि॑भे॒र्न म॑रिष्यसि ज॒रद॑ष्टिं कृणोमि त्वा । निर॑वोचम॒हं यक्ष्म॒-
मङ्गे॑भ्यो अङ्गज्व॒रं तव॑ ॥ ८ ॥
अ॒ङ्ग॒भे॒दो अ॑ङ्गज्व॒रो यश्च॑ ते हृदयाम॒यः । यक्ष्मः॑ श्ये॒नइ॑व॒ प्राप॑प्तद्
वा॒चा सा॒ढः प॒रस्त॒राम् ॥ ९ ॥
ऋषी॑ बोधप्रतीबो॒धाव॑स्व॒प्नो यश्च॒ जागृ॑विः । तौ ते॑ प्रा॒णस्य॑ गो॒प्तारौ॒
दिवा॒ नक्तं॑ च जागृताम् ॥ १० ॥

अयमग्निरुपसद्य इह सूर्य उदेतु ते । उदेहि मृत्योर्गम्भीरात् कृष्णाच्चित्
तमसस्परि ॥ ११ ॥

नमो यमाय नमो अस्तु मृत्यवे नमः पितृभ्य उत ये नयन्ति ।
उत्पारणस्य यो वेद तमग्निं पुरो दधेऽस्मा अरिष्टतातये ॥ १२ ॥

ऐतु प्राण ऐतु मन ऐतु चक्षुरथो बलम् । शरीरमस्य सं विदां तत्
पद्भ्यां प्रति तिष्ठतु ॥ १३ ॥

प्राणेनाग्ने चक्षुषा सं सृजेमं समीरय तन्वा३ सं बलेन । वेत्थामृतस्य
मा नु गान्मा नु भूमिगृहो भुवत् ॥ १४ ॥

मा ते प्राण उप दसन्मो अपानोऽपि धायि ते । सूर्यस्त्वाधिपतिर्मृत्योरुदायच्छतु रश्मिभिः ॥ १५ ॥

इयमन्तर्वदति जिह्वा बद्धा पनिष्पदा । त्वया यक्ष्मं निरवोचं शतं
रोपीश्च तक्मनः ॥ १६ ॥

अयं लोकः प्रियतमो देवानामपराजितः । यस्मै त्वमिह मृत्यवे दिष्टः
पुरुष जज्ञिषे । स च त्वानु ह्वयामसि मा पुरा जरसो मृथाः ॥ १७ ॥
[६।४]

सूक्त ३१

ऋषिः—शुक्रः । देवता—कृत्याप्रतिहरणम् ॥ छन्दः—१—१० अनुष्टुप्; ११ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप्; १२ पथ्या बृहती ॥ मन्त्र १२ ।

यां ते चक्रुरामे पात्रे यां चक्रुर्मिश्रधान्ये । आमे मांसे कृत्यां यां
चक्रुः पुनः प्रति हरामि ताम् ॥ १ ॥

यां ते॑ च॒क्रुः कृ॑क॒वाकां॑व॒जे वा॒ यां कु॑री॒रिणि॑ । अव्यां॑ ते कृ॒त्यां यां
च॒क्रुः पुनः॒ प्रति॑ हरामि॒ ताम् ॥ २ ॥
यां ते॑ च॒क्रुरेक॑शफे पशू॒नामु॑भ॒याद॑ति । ग॒र्द॒भे कृ॒त्यां यां च॒क्रुः पुन॒ः
प्रति॑ हरामि॒ ताम् ॥ ३ ॥
यां ते॑ च॒क्रुर॑मलायां॑ व॒लगं वा॑ न॒राच्याम् । क्षेत्रे॑ ते कृ॒त्यां यां च॒क्रुः
पुन॒ः प्रति॑ हरामि॒ ताम् ॥ ४ ॥
यां ते॑ च॒क्रुर्गार्ह॑पत्ये पूर्वा॒ग्नावु॒त दु॒श्चित॑ः । शाला॑यां कृ॒त्यां यां च॒क्रुः
पुन॒ः प्रति॑ हरामि॒ ताम् ॥ ५ ॥
यां ते॑ च॒क्रुः स॒भाया॒ं यां च॒क्रुर॑धि॒देव॑ने । अ॒क्षेषु॑ कृ॒त्यां यां च॒क्रुः पुन॒ः
प्रति॑ हरा॒मि ताम् ॥ ६ ॥
यां ते॑ च॒क्रुः सेना॑या॒ं यां च॒क्रुरि॑ष्वायु॒धे । दु॒न्दु॒भौ॑ कृ॒त्यां यां च॒क्रुः
पुन॒ः प्रति॑ हरा॒मि ताम् ॥ ७ ॥
यां ते॑ कृ॒त्यां कू॒पे॑ऽवद॒धुः श्म॑शा॒ने वा॑ नि॒चख्नुः । सद्म॑नि कृ॒त्यां यां
च॒क्रुः पुन॒ः प्रति॑ हरा॒मि ताम् ॥ ८ ॥
यां ते॑ च॒क्रुः पु॑रु॒षास्थे अ॒ग्नौ सं॑कसुके च॒ याम् । म्रो॒कं नि॑र्दा॒हं क्र॒व्याद॒ं
पुन॒ः प्रति॑ हरा॒मि ताम् ॥ ९ ॥
अप॑थे॒ना जं॑भारै॒णां तां प॒थेतः प्र हि॑ण्मसि । अधी॑रो म॒र्याधी॑रेभ्य॒ः सं
जं॑भा॒राचि॑त्त्या ॥ १० ॥

य॒श्च॒कार॒ न श॒शाक॒ कर्तुँ॑ श॒श्रे पाद॑म॒ङ्गुरि॑म् । च॒कार॑ भ॒द्रम॒स्मभ्य॑म॒-
भ॒गो भग॑वद्भ्यः ॥ ११ ॥

कृ॒त्या॒कृतँ॑ व॒लगिनँ॑ मू॒लिनँ॑ शपथे॒य्य॑म् । इन्द्र॒स्तं ह॑न्तु मह॒ता
व॒धेना॒ग्निर्वि॑ध्यत्व॒स्तया॑ ॥ १२ ॥ [६।५]

॥ इति पञ्चमं काण्डम् समाप्तम् ॥

* * *

अथ षष्ठं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सविता ॥ छन्दः—१ त्रिपदा पिपीलिकामध्या साम्नी जगती; २, ३ पिपीलिकामध्या पुरउष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

दो॒षो गा॑य बृ॒हद् गा॑य द्यु॒मद्धे॑ह्याथ॑र्वण । स्तु॒हि दे॒वं स॑वि॒तार॑म् ॥ १ ॥
तमु॑ ष्टुहि॒ यो अ॒न्तः सिन्धौ॑ सू॒नुः स॒त्यस्य॒ युवा॑न॒म् । अद्रो॑घवाचं सु॒शेव॑म् ॥ २ ॥
स घा॑ नो दे॒वः स॑वि॒ता सा॑विष॒दमृता॑नि॒ भूरि॑ । उ॒भे सु॑ष्टु॒तो सु॒गात॑वे ॥ ३ ॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सोमो वनस्पतिः ॥ छन्दः—१—३ परोष्णिक् ॥ मंत्र ३ ।

इन्द्रा॑य॒ सोम॑मृत्विजः सु॒नोता॑ च॑ धावत । स्तो॒तुर्यो॑ वचः॑ शृ॒णव॒द्धवं॑ च मे ॥ १ ॥
आ यं वि॒शन्ती॒न्द॑वो॒ वयो॒ न वृ॒क्षमन्ध॑सः । विर॑प्शि॒न् वि मृधो॑ जहि रक्ष॒स्विनीः॑ ॥ २ ॥
ुनोता॑ सोम॒पाव्ने॒ सोम॒मिन्द्रा॑य व॒ज्रिणे॑ । युवा॒ जेतेशा॑नः॒ स रुष्टुतः ॥ ३ ॥ [१।२]

सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वा (स्वस्त्ययनकामः) ।। देवता—इन्द्रपूषादयः ।। छन्दः—१ पथ्या बृहती; २, ३ जगती ।। मंत्र ३ ।

पातं न इन्द्रापूषणादितिः पान्तु मरुतः। अपां नपात् सिन्धवः सप्त
पातन पातु नो विष्णुरुत द्यौः ॥ १ ॥
पातां नो द्यावापृथिवी अभिष्टये पातु ग्रावा पातु सोमो नो अंहसः।
पातु नो देवी सुभगा सरस्वती पात्वग्निः शिवा ये अस्य पायवः ॥२॥
पातां नो देवाश्विना शुभस्पती उषासानक्तोत न उरु यताम्। अपां
नपादभिहुती गयस्य चिद् देव त्वष्टर्वर्धय सर्वतातये ॥ ३ ॥ [१३]

सूक्त ४

ऋषिः— अथर्वा (स्वस्त्ययनकामः) ।। देवता—त्वष्ट्रादयः ।। छन्दः—१ पथ्या बृहती; २ संस्तारपङ्क्तिः; ३ त्रिपदा विराड्गायत्री ।। मंत्र ३ ।

त्वष्टा मे दैव्यं वचः पर्जन्यो ब्रह्मणस्पतिः। पुत्रैर्भ्रातृभिरदितिर्नु पातु
नो दुष्टरं त्रायमाणं सहः ॥ १ ॥
अंशो भगो वरुणो मित्रो अर्यमादितिः पान्तु मरुतः। अप तस्य द्वेषो
गमेदभिहुतो यावयच्छत्रुमन्तितम् ॥ २ ॥
धिये समश्विना प्रावतं न उरुष्या ण उरुज्मन्नप्रयुच्छन्। द्यौ३ष्पितर्यावय
दुच्छुना या ॥ ३ ॥ [१४]

सूक्त ५

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—१, ३ अग्निः; २ इन्द्रः ।। छन्दः—१, ३ अनुष्टुप्; २ भुरिगनुष्टुप् ।। मंत्र ३ ।

उदेनमुत्तरं नयाग्ने घृतेनाहुत । समेनं वर्चसा सृज प्रजया च बहुं
कृधि ॥ १ ॥
इन्द्रेमं प्रतरं कृधि सजातानामसद् वशो । रायस्पोषण सं सृज जीवातवे
जरसे नय ॥ २ ॥
यस्य कृण्मो हविर्गृहे तमग्ने वर्धया त्वम् । तस्मै सोमो अधि ब्रवदयं
च ब्रह्मणस्पतिः ॥ ३ ॥ [१।५]

सूक्त ६

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—१ ब्रह्मणस्पतिः; २, ३ सोमः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।।
मंत्र ३ ।

यो३स्मान् ब्रह्मणस्पतेऽदेवो अभिमन्यते । सर्वं तं रन्धयासि मे
यजमानाय सुन्वते ॥ १ ॥
यो नः सोम सुशंसिनो दुःशंस आदिदेशति । वज्रेणास्य मुखे जहि
स संपिष्टो अपायति ॥ २ ॥
यो नः सोमाभिदासति सनाभिर्यश्च निष्ट्यः । अप तस्य बलं तिर
महीव द्यौर्वधत्मना ॥ ३ ॥ [१।६]

सूक्त ७

ऋषिः— अथर्वा ।। देवता—१, २ सोमः; ३ विश्वेदेवाः ।। छन्दः—१ निचृद्गायत्री;
२, ३ गायत्री ।। मंत्र ३ ।

येन सोमादितिः पथा मित्रा वा यन्त्यद्रुहः । तेना नोऽवसा गहि ॥ १ ॥
येन सोम साहन्त्यासुरान् रन्धयासि नः । तेना नो अधि वोचत ॥ २ ॥
येन देवा असुराणामोजांस्यवृणीध्वम् । तेना नः शर्म यच्छत ॥३ ॥
[१।७]

सूक्त ८

ऋषिः—जमदग्निः ।। देवता—कामात्मा ।। छन्दः—१—३ पथ्या पङ्क्तिः ।। मंत्र ३ ।

यथा॑ वृ॒क्षं लिबु॑जा सम॒न्तं प॑रिषस्व॒जे । ए॒वा परि॑ ष्वजस्व॒ मां यथा॒
मां का॒मिन्यसो॒ यथा॒ मन्नाप॑गा॒ अस॑ः ॥ १ ॥
यथा॑ सुप॒र्णः प्र॒पत॑न् प॒क्षौ नि॒हन्ति॒ भूम्या॑म् । ए॒वा नि ह॑न्मि ते॒ मनो॒
यथा॒ मां का॒मिन्यसो॒ यथा॒ मन्नाप॑गा॒ अस॑ः ॥ २ ॥
यथे॒मे द्यावा॑पृथि॒वी स॒द्यः प॒र्येति॒ सूर्य॑ः । ए॒वा पर्यै॑मि ते॒ मनो॒ यथा॒
मां का॒मिन्यसो॒ यथा॒ मन्नाप॑गा॒ अस॑ः ॥ ३ ॥ [१।८

सूक्त ९

ऋषिः—जमदग्निः ।। देवता—कामात्मा ।। छन्दः - अनुष्टुप् ।। मंत्र ३ ।

वा॑ञ्छ मे त॒न्व॑१॒ पादौ॒ वाञ्छा॒क्ष्यौ॒३॑ वाञ्छ॑ स॒क्थ्यौ⌡ । अ॒क्ष्यौ⌡
वृष॒ण्यन्त्या॒ः केशा॒ मां त॒ कामे॑न शुष्यन्तु ॥ १ ॥
मम॑ त्वा दोषणि॒श्रिषं॑ कृ॒णोमि॑ हृदय॒श्रिष॑म् । यथा॒ मम॒ क्रता॒वसो॒
मम॑ चि॒त्तमु॒पाय॑सि ॥ २ ॥
यासा॒ नाभि॑रा॒रेह॑णं हृदि संव॑ननं कृ॒तम् । गावो॑ घृ॒तस्य॑ मा॒तरो॒ऽमूं
सं वा॑नयन्तु मे ॥ ३ ॥

सूक्त १०

ऋषिः—शन्तातिः ।। देवता—१ अग्निः २ वायुः; ३ सूर्यः ।। छन्दः—१ साम्नी त्रिष्टुप्; २ प्राजापत्या बृहती; ३ साम्नी बृहती ।। मंत्र ३ ।

पृ॒थि॒व्यै श्रोत्रा॑य॒ वन॒स्पति॑भ्योऽग्नयेऽधि॑पतय॒ स्वाहा॑ ॥ १ ॥

प्रा॒णाया॒न्तरि॑क्षाय॒ वयो॑भ्यो वा॒यवेऽधि॑पतये॒ स्वाहा॑ ॥ २ ॥
दि॒वे चक्षु॑षे॒ नक्ष॑त्रेभ्यः॒ सूर्या॒याधि॑पतये॒ स्वाहा॑ ॥ ३ ॥ [१।१०]

सूक्त ११

ऋषिः—प्रजापतिः ।। देवता – १, २ रेतः; ३ मन्त्रोक्ताः ।। छन्दः—अनुष्टुप ; ।। मंत्र ३ ।

श॒मीम॑श्व॒त्थ आरू॑ढ॒स्तत्र॑ पुं॒सुव॑नं कृ॒तम् । तद् वै पु॒त्रस्य॒ वेद॑नं॒ तत्
स्त्री॒ष्वा भ॑रामसि ॥ १ ॥
पुं॑सि वै रेतो॑ भवति॒ तत् स्त्रि॒यामनु॑ षिच्यते । तद् वै पु॒त्रस्य॒ वेद॑नं॒
तत् प्र॒जाप॑तिरब्रवीत् ॥ २ ॥
प्र॒जाप॑ति॒रनु॑मतिः सिनीवा॒ल्य॑चीक्लृपत् । स्त्रैषू॑यम॒न्यत्र॒ दध॒त् पुमां॑समु
दधदि॒ह ॥ ३ ॥ [२।१]

सूक्त १२

ऋषिः—गरुत्मान् ।। देवता—विषनिवारणम् ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मंत्र ३ ।

परि॒ द्यामि॑व॒ सूर्यो॑ऽही॑नां॒ जनि॑मागमम् । रात्री॒ जग॑दिवा॒न्यद्धं॒सात्
तेना॑ ते वारये त्रि॒षम् ॥ १ ॥
यद् ब्र॒ह्मभि॒र्यदृषि॑भि॒र्यद् दे॒वैर्वि॑दि॒तं पु॒रा । यद् भू॒तं भव्य॑मास॒न्वत्
तेना॑ ते वारये वि॒षम् ॥ २ ॥
मध्वा॑ पृञ्चे न॒द्य॒१ः पर्व॑ता गि॒रयो॒ मधु॑ । मधु॒ परु॑ष्णी॒ शीपा॑ला॒ शमा॒स्ने
अ॑स्तु॒ शं हृ॒दे ॥ ३ ॥ [२।२]

सूक्त १३

ऋषिः—अथर्वा (स्वस्त्ययनकामः) । देवता — मृत्युः ।। छन्दः— अनुष्टुप् । मंत्र ३ ।

नमो॑ देवव॒धेभ्यो॒ नमो॑ राजव॒धेभ्यः॑। अथो॒ ये विश्या॑नां व॒धास्तेभ्यो॑
मृत्यो॒ नमो॑ऽस्तु ते ॥ १ ॥
नम॑स्ते अधिवा॒काय॑ परावा॒काय॑ ते॒ नमः॑। सु॒म॒त्यै॑ मृ॑त्यो ते॒ नमो॑
दु॒र्म॒त्यै॑ त॑ इ॒दं नमः॑ ॥ २ ॥
नम॑स्ते यातु॒धाने॑भ्यो॒ नम॑स्ते भेष॒जेभ्यः॑। नम॑स्ते मृत्यो॒ मूले॑भ्यो
ब्राह्म॒णेभ्य॑ इ॒दं नमः॑ ॥ ३ ॥ [२।३]

सूक्त १४

ऋषिः—बभ्रुपिङ्गलः ॥ देवता—बलासः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

अ॒स्थि॒स्रं॒सं प॑रुस्रं॒समास्थि॑तं हृदया॒मयम्। ब॒ला॒सं॒ सर्वं॑ नाशयाङ्गे॒ष्ठा
यश्च॒ पर्व॑सु ॥ १ ॥
निर्ब॒लासं॑ बला॒सिनः॑ क्षि॒णोमि॑ मु॒ष्क॒रं यथा॑। छि॒नद्म्य॑स्य॒ बन्ध॑नं॒
मूल॑मुर्वा॒र्वा॑ इ॑व ॥ २ ॥
निर्ब॑लासे॒तः प्र प॑ताशु॒ङ्गः शि॑शु॒को य॑था। अथो॒ इट॑ इव हाय॒नोऽप॑
द्रा॒ह्यवी॑रहा ॥ ३ ॥ [२।४]

सूक्त १५

ऋषिः—उद्दालकः ॥ देवता—वनस्पतिः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

उ॒त्त॒मो अ॒स्योष॑धीनां॒ तव॑ वृ॒क्षा उप॑स्तयः। उ॒प॒स्तिर॑स्तु॒ सो॒३॒॑स्माकं॒
यो अ॒स्माँ अ॑भि॒दास॑ति ॥ १ ॥
सब॑न्धुश्चास॑बन्धुश्च॒ यो अ॒स्माँ अ॑भि॒दास॑ति। ते॒षां सा वृ॒क्षाणा॑मिवा॒हं
भूया॑समुत्त॒मः ॥ २ ॥
यथा॒ सोम॒ ओष॑धीनामुत्त॒मो ह॒विषां॑ कृ॒तः। त॒ला॒शा वृ॒क्षाणा॑मिवा॒हं
भूया॑समुत्त॒मः ॥ ३ ॥ [२।५]

सूक्त १६

ऋषिः—शौनकः ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ निचृत् त्रिपदागायत्री; २ अनुष्टुप्; ३ बृहतीगर्भा ककुम्मत्यनुष्टुप्; ४ त्रिपदा प्रतिष्ठा गायत्री ॥ मंत्र ४ ।

आब॑यो॒ अना॑बयो॒ रस॑स्त उ॒ग्र आ॑बयो । आ ते॑ कर॒म्भम॑द्मसि ॥ १ ॥
वि॒ह॒ल्हो नाम॑ ते पि॒ता म॒दाव॑ती॒ नाम॑ ते मा॒ता । स हि॑न॒ त्वम॑सि॒
यस्त्वमा॒त्मान॒माव॑यः ॥ २ ॥
तौवि॑लि॒केऽवे॑ल॒यावा॒यमै॑ल॒ब ऐ॑लयीत् । ब॒भ्रुश्च॑ ब॒भ्रुक॑र्णश्चापे॑हि॒
निरा॑ल ॥ ३ ॥
अ॒ल॒साला॑सि॒ पूर्वा॑ सि॒ला॒ञ्जा॑ला॒स्युत्त॑रा । नी॒ला॒ग॒ल॒साला॑ ॥ ४ ॥
[२।६]

सूक्त १७

ऋषिः- अथर्वा ॥ देवता—गर्भदृंहणम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

यथे॒यं पृ॑थि॒वी म॒ही भू॒ताना॒ं गर्भ॑माद॒धे । ए॒वा ते॑ ध्रियता॒ं गर्भो॒ अनु॒
सूतुं॒ सवि॑तवे ॥ १ ॥
यथे॒यं पृ॑थि॒वी म॒ही दा॒धारे॒मान् वन॒स्पती॑न् । ए॒वा ते॑ ध्रियता॒ं गर्भो॒
अनु॒ सूतुं॒ सवि॑तवे ॥ २ ॥
यथे॒यं पृ॑थि॒वी म॒ही दा॒धार॒ पर्व॑तान् गि॒रीन् । ए॒वा ते॑ ध्रियता॒ं गर्भो॒
अनु॒ सूतुं॒ सवि॑तवे ॥ ३ ॥
यथे॒यं पृ॑थि॒वी म॒ही दा॒धार॒ विष्ठि॑तं॒ जग॑त् । ए॒वा ते॑ ध्रियता॒ं गर्भो॒
अनु॒ सूतुं॒ सवि॑तवे ॥ ४ ॥
[२।७]

सूक्त १८

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—ईर्ष्याविनाशनम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

ई॒र्ष्याया॑ ध्राजिं॑ प्रथ॒मां प्र॑थ॒मस्या॑ उ॒ताप॑राम्। अ॒ग्नि हृ॑द॒य्यं॑१॒ शोकं॒
तं ते॒ निर्वा॑पयामसि ॥ १ ॥
यथा॒ भूमि॑र्मृ॒तम॑ना मृ॒तान्मृ॒तम॑नस्तरा। यथो॒त म॒म्रुषो॒ मन॑ ए॒वेर्ष्यो॑र्मृ॒तं
मनः॑ ॥ २ ॥
अ॒दो यत् ते॑ हृ॒दि श्रि॒तं म॑न॒स्कं प॑तयिष्णु॒कम्। तत॑स्त ई॒र्ष्यां मु॑ञ्चामि॒
निरू॒ष्माणं॒ दृते॑रिव ॥ ३ ॥ [२।८]

सूक्त १९

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—अनुष्टुप्; २, ३ गायत्री ॥
मंत्र ३ ।

पु॒नन्तु॑ मा देवज॒नाः पु॒नन्तु॒ मन॑वो धि॒या। पु॒नन्तु॒ विश्वा॑ भू॒तानि॒
पव॑मानः पुनातु मा ॥ १ ॥
पव॑मानः पुनातु मा॒ क्रत्वे॒ दक्षा॑य जी॒वसे॑। अथो॑ अरि॒ष्टता॑तये ॥ २ ॥
उ॒भाभ्यां॑ देव सवितः प॒वित्रे॑ण स॒वेन॑ च। अ॒स्मान् पु॑नीहि॒
चक्ष॑से ॥ ३ ॥ [२।९]

सूक्त २०

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—यक्ष्मनाशनम् ॥ छन्दः—१ अतिजगती;
२ ककुम्मती प्रस्तारपङ्क्तिः; ३ सत.पङ्क्तिः ॥ मंत्र ३ ।

अ॒ग्नेरि॑वास्य॒ दह॑त एति शु॒ष्मिण॑ उ॒तेव॑ म॒त्तो वि॒लप॒न्नपा॑यति।
अ॒न्यम॒स्मदि॑च्छतु॒ कं चि॑दव्र॒तस्तपु॑र्वधाय॒ नमो॑ अस्तु त॒क्मने॑ ॥ १ ॥
नमो॑ रु॒द्राय॒ नमो॑ अस्तु त॒क्मने॒ नमो॒ राज्ञे॒ वरु॑णाय॒ त्विषी॑मते।
नमो॑ दि॒वे नमः॑ पृथि॒व्यै नम॒ ओष॑धीभ्यः ॥ २ ॥

अयं यो अभिशोचयिष्णुर्विश्वा रूपाणि हरिता कृणोषि । तस्मै तेऽरुणाय बभ्रवे नमः कृणोमि वन्याय तक्मने ॥ ३ ॥ [२।१०]

सूक्त २१

ऋषिः—शन्तातिः ।। देवता—चन्द्रमाः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मंत्र ३ ।

इमा यास्तिस्रः पृथिवीस्तासां ह भूमिरुत्तमा । तासामधि त्वचो अहं भेषजं समु जग्रभम् ॥ १ ॥

श्रेष्ठमसि भेषजानां वसिष्ठं वीरुधानाम् । सोमो भग इव यामेषु देवेषु वरुणो यथा ॥ २ ॥

रेवतीरनाधृषः सिषासवः सिषासथ । उत स्थ केशदृंहणीरथो ह केशवर्धनीः ॥ ३ ॥ [३।१]

सूक्त २२

ऋषिः—शन्तातिः ।। देवता—१ आदित्यरश्मिः; २, ३ मरुतः ।। छन्दः—१, ३ त्रिष्टुप्; २ चतुष्पदा भुरिग्जगती ।। मंत्र ३ ।

कृष्णं नियानं हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत् पतन्ति । त आववृत्रन्त्सदनादृतस्यादिद् घृतेन पृथिवीं व्यूदुः ॥ १ ॥

पयस्वतीः कृणुथाप ओषधीः शिवा यदेजथा मरुतो रुक्मवक्षसः । ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत यत्रा नरो मरुतः सिञ्चथा मधु ॥ २ ॥

उदप्रुतो मरुतस्ताँ इयर्त वृष्टिर्या विश्वा निवतस्पृणाति । एजाति ग्लहा कन्येव तुन्नैरुं तुन्दाना पत्येव जाया ॥ ३ ॥ [३।२]

सूक्त २३

ऋषिः—शन्तातिः ।। देवता—आपः ।। छन्दः—१ अनुष्टुप्, २ त्रिपदा गायत्री; ३ परोष्णिक् ।। मंत्र ३ ।

सस्रुषीस्तदपसो दिवा नक्तं च सस्रुषीः । वरेण्यक्रतुरहमपो देवीरुप
ह्वये ॥ १ ॥

ओता आपः कर्मण्या मुञ्चन्त्वितः प्रणीतये । सद्यः कृण्वन्त्वेतवे ॥ २॥

देवस्य सवितुः सवे कर्म कृण्वन्तु मानुषाः । शं नो भवन्त्वप ओषधीः
शिवाः ॥ ३ ॥ [३।३]

सूक्त २४

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—आपः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

हिमवतः प्र स्रवन्ति सिन्धौ समह सङ्गमः । आपो ह मह्यं तद्
देवीर्ददन् हृद्द्योतभेषजम् ॥ १ ॥

यन्मे अक्ष्योरादिद्योत पार्ष्ण्योः प्रपदोश्च यत् । आपस्तत् सर्वं
निष्करन् भिषजां सुभिषक्तमाः ॥ २ ॥

सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वा या नद्य१ स्थन । दत्त नस्तस्य भेषजं
तेना वो भुनजामहै ॥ ३ ॥ [३।४]

सूक्त २५

ऋषिः—शुनःशेपः ॥ देवता—मन्याविनाशनम् ॥ छन्दः अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

पञ्च च याः पञ्चाशच्च संयन्ति मन्या अभि । इतस्ताः सर्वा नश्यन्तु
वाका अपचितामिव ॥ १ ॥

सप्त च याः सप्ततिश्च संयन्ति ग्रैव्या अभि । इतस्ताः सर्वा नश्यन्तु
वाका अपचितामिव ॥ २ ॥

नव च या नवतिश्च संयन्ति स्कन्ध्या अभि । इतस्ताः सर्वा नश्यन्तु
वाका अपचितामिव ॥ ३ ॥ [३।५]

सूक्त २६

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—पाप्मा ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

अव॑ मा पाप्मन्त्सृज व॒शी सन् मृ॑डयासि नः । आ मा॑ भ॒द्रस्य॑ लो॒के
पा॑प्मन् धे॒ह्यवि॑ह्रुतम् ॥ १ ॥
यो न॑ः पाप्म॒न् न जहा॑सि॒ तमु॑ त्वा जहिमो व॒यम् । प॒थाम॑नु
व्या॒वर्त॑ने॒ऽन्यं पा॒प्मानु॑ पद्यताम् ॥ २ ॥
अ॒न्यत्रा॒स्मन्न्यु॑च्यतु सहस्रा॒क्षो अम॑र्त्यः । यं द्वेषा॑म॒ तमृ॑च्छतु॒ यमु॑
द्वि॒ष्मस्तमिज्ज॑हि ॥ ३ ॥ [३।६]

सूक्त २७

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—यमः; निर्ऋतिः ॥ छन्दः—१, ३ जगती; २ त्रिष्टुप् ॥
मंत्र ३ ।

दे॒वा॑ः क॒पोत॑ इषि॒तो यदि॒च्छन् दू॒तो निर्ऋ॑त्या इ॒दमा॑ज॒गाम॑ । तस्मा॑
अर्चा॑म कृ॒णवा॑म॒ निष्कृ॑तिं॒ शं नो॑ अस्तु द्वि॒पदे॒ शं चतु॑ष्पदे ॥ १ ॥
शि॒वः क॒पोत॑ इषि॒तो नो॑ अस्त्वना॒गा दे॑वाः शकु॒नो गृ॒हं न॑ः । अ॒ग्निर्हि॑
विप्रो॑ जु॒षतां॑ ह॒विर्नः॒ परि॑ हे॒तिः प॒क्षिणी॑ नो वृ॒णक्तु ॥ २ ॥
हे॒तिः प॒क्षिणी॒ न द॑भात्य॒स्मा॒नाष्ट्री प॒दं कृ॑णुते अग्नि॒धाने॑ । शि॒वो
गोभ्य॑ उ॒त पुरु॑षेभ्यो नो अस्तु॒ मा नो॑ देवा इ॒ह हिं॑सीत् क॒पोत॑ः ॥ ३ ॥
[३।७]

सूक्त २८

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—यमः; निर्ऋतिः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ अनुष्टुप्;
३ जगती ॥ मंत्र ३ ।

ऋ॒चा क॒पोतं॑ नुदत प्र॒णोद॒मिषं॒ मद॑न्तः॒ परि॒ गां न॑यामः । सं॒ लो॒भय॑न्तो
दु॑रि॒ता प॒दानि॑ हि॒त्वा न॒ ऊर्जं॒ प्र प॑दा॒त् पथि॑ष्ठः ॥ १ ॥

परीमे३ग्निमर्षत परीमे गामनेषत । देवेष्वक्रत श्रवः क इमाँ आ दधर्षति ॥ २ ॥

यः प्रथमः प्रवतमाससाद बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानः । यो३स्येशे द्विपदो यश्चतुष्पदस्तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे ॥ ३ ॥ [३।८]

सूक्त २९

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—यमः; निर्ऋतिः ॥ छन्दः—१, २ त्रिपदा विराण्नामगायत्री; ३ सप्तपदा विराडष्टिः ॥ मन्त्र ३ ।

अमून् हेतिः पतत्रिणी न्येतु यदुलूको वदति मोघमेतत् । यद् वा कपोतः पदमग्नौ कृणोति ॥ १ ॥

यौ ते दूतौ निर्ऋत इदमेतोऽप्रहितौ प्रहितौ वा गृहं नः । कपोतोलूकाभ्यामपदं तदस्तु ॥ २ ॥

अवैरहत्यायेदमा पपत्यात् सुवीरताया इदमा ससद्यात् । पराङेव परा वद पराचीमनु संवतम् । यथा यमस्य त्वा गृहेऽरसं प्रतिचाकशानाभूकं प्रतिचाकशान् ॥ ३ ॥ [३।९]

सूक्त ३०

ऋषिः—उपरिबभ्रवः ॥ देवता—शमी ॥ छन्दः—१ जगती; २ त्रिष्टुप् ३ चतुष्पदा शङ्कुमत्यनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

देवा इमं मधुना संयुतं यवं सरस्वत्यामधि मणावचर्कृषुः । इन्द्र आसीत् सीरपतिः शतक्रतुः कीनाशा आसन् मरुतः सदानवः ॥ १ ॥

यस्ते मदोऽवकेशो विकेशो येनाभिहस्यं पुरुषं कृणोषि । आरात् त्वदन्या वनानि वृक्षि त्वं शमि शतवल्शा वि रोह ॥ २ ॥

बृहत्पलाशे सुभगे वर्षवृद्ध ऋतावरि । मातेव पुत्रेभ्यो मृड केशेभ्यः शमि ॥ ३ ॥ [३।१०]

सूक्त ३१

ऋषिः—उपरिबभ्रवः ॥ देवता—गौः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मंत्र ३ ।

आयं गौः पृश्नि॑रक्रमी॒दस॑दन्मा॒तरँ᳚ पु॒रः । पि॒तरँ᳚ च प्र॒यन्त्स्व॑ः ॥ १ ॥
अ॒न्तश्च॑रति रोच॒ना अ॒स्य प्रा॒णाद॑पान॒तः । व्य॑ख्यन्महि॒षः स्व॑ः ॥२॥
त्रिं॒शद् धामा॒ वि रा॑जति॒ वाक् प॑त॒ङ्गो अ॑शिश्रियत् । प्रति॒ वस्तो॒रह॒र्द्युभि॑ः ॥ ३ ॥ [३।११]

सूक्त ३२

ऋषिः—१, २ चातनः; ३ अथर्वा ॥ देवता—१ अग्निः; २ रुद्रः; ३ मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—१, ३ त्रिष्टुप् २ प्रस्तारपङ्क्तिः ॥ मंत्र ३ ।

अ॒न्त॒र्दा॒वे जु॑हुता॒ स्वे॒३॑तद् या॑तुधान॒क्षय॑णं घृ॒तेन॑ । आराद् रक्षाँ॑सि॒ प्रति॑ दह॒ त्वम॑ग्ने॒ न नो॑ गृ॒हाणा॒मुप॑ तीतपासि ॥ १ ॥
रु॒द्रो वो॑ ग्री॒वा अश॑रैत् पिशाचाः पृ॒ष्टीर्वो॑ऽपि॑ शृणातु यातुधानाः । वी॒रुद् वो॑ वि॒श्वतो॑वीर्या य॒मेन॒ सम॑जीगमत् ॥ २ ॥
अभ॑यं मित्रावरुणावि॒हास्तु॑ नो॒ऽर्चिषा॒त्त्रिणो॑ नुदतं प्र॒तीच॑ः । मा ज्ञा॒तार॒ं मा प्र॑ति॒ष्ठां वि॑दन्त मि॒थो वि॑घ्ना॒ना उप॑ यन्तु मृ॒त्युम् ॥ ३ ॥
[४।१]

सूक्त ३३

ऋषिः—जाटिकायनः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, ३ गायत्री; २ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

यस्ये॒दमा रजो॒ युज॑स्तु॒जे जना॒ वनं॒ स्व॑ः । इन्द्र॑स्य॒ रन्त्यँ᳚ बृ॒हत् ॥ १ ॥
नाधृ॑ष॒ आ द॑धृषते धृषा॒णो धृ॑षि॒तः शव॑ः । पु॒रा यथा॑ व्य॒थिः श्रव॒ इन्द्र॑स्य॒ नाधृ॑षे॒ शव॑ः ॥ २ ॥

स नो॑ द॒दातु॒ तां र॒यिमु॒रुं पि॒शङ्ग॑संदृशम् । इन्द्र॒ः पति॑स्तविष्ट॑मो॒ जने॒ष्वा ॥ ३ ॥ [४।२]

सूक्त ३४

ऋषिः—**चातनः** ॥ देवता—**अग्निः** ॥ छन्दः—**गायत्री** ॥ मंत्र ५ ।

प्राग्नये॒ वाच॑मीरय वृष॒भाय॑ क्षिती॒नाम् । स नः॑ पर्ष॒दति॒ द्विषः॑ ॥ १ ॥
यो रक्षां॑सि नि॒जूर्व॑त्य॒ग्निस्ति॒ग्मेन॑ शो॒चिषा॑ । स नः॑ पर्ष॒दति॒ द्विषः॑ ॥ २ ॥
यः पर॑स्याः प॒राव॑तस्ति॒रो धन्वा॑ति॒रोच॑ते । स नः॑ पर्ष॒दति॒ द्विषः॑ ॥३॥
यो विश्वा॒भि वि॒पश्य॑ति॒ भुव॑ना॒ सं च॒ पश्य॑ति । स नः॑ पर्ष॒दति॒ द्विषः॑ ॥ ४ ॥
यो अ॒स्य पा॒रे रज॑सः शु॒क्रो अ॒ग्नि जा॑यत । स नः॑ पर्ष॒दति॒ द्विषः॑ ॥५॥ [४।३]

सूक्त ३५

ऋषिः—**कौशिकः** ॥ देवता—**वैश्वानरः** ॥ छन्दः—**गायत्री** ॥ मंत्र ३ ।

वै॒श्वा॒न॒रो न॑ ऊ॒तय॒ आ प्र या॑तु प॒राव॑तः । अ॒ग्निर्नः॑ सुष्टु॒तीरुप॑ ॥१॥
वै॒श्वा॒न॒रो न॒ आग॑मदि॒मं य॒ज्ञं स॒जूरुप॑ । अ॒ग्निरु॒क्थेष्वंह॑सु ॥ २ ॥
वै॒श्वा॒न॒रोऽङ्गि॑रसां॒ स्तोम॑मु॒क्थं च॑ चाक्लृपत् । ऐषु॑ द्यु॒म्नं स्व१॑र्यमत् ॥३॥ [४।४]

सूक्त ३६

ऋषिः—**अथर्वा** ॥ (**स्वस्त्ययनकामः**) देवता—**अग्निः** ॥ छन्दः—**गायत्री** ॥ मंत्र ३ ।

ऋ॒तावा॑नं वैश्वान॒रमृ॒तस्य॒ ज्योति॑ष॒स्पति॑म् । अज॑स्रं घ॒र्ममी॑महे ॥ १ ॥
स विश्वा॒ प्रति॑ चाक्लृप ऋ॒तूंरुत सृ॑जते व॒शी । य॒ज्ञस्य॒ वय॑ उ॒त्तिर॑न् ॥ २ ॥

अ॒ग्निः परे॑षु॒ धाम॑सु॒ कामो॑ भू॒तस्य॒ भव्य॑स्य । स॒म्राडेको॑ वि
रा॑जति ॥ ३ ॥ [४।५]

सूक्त ३७

ऋषिः—अथर्वा (स्वस्त्ययनकामः) ॥ देवता—चन्द्रमाः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

उप॒ प्रागा॑त् स॒हस्रा॒क्षो यु॒क्त्वा श॒पथो॒ रथ॑म् । श॒प्तार॑मन्वि॒च्छन् मम॒
वृक॑ इ॒वावि॑मतो गृ॒हम् ॥ १ ॥
परि॑ णो वृङ्ग्धि शपथ ह्र॒दम॒ग्निरि॑वा॒ दह॑न् । श॒प्तार॒मत्र॑ नो जहि
दि॒वो वृ॒क्षमि॑व॒ाशनिः॑ ॥ २ ॥
यो न॒ः शपा॒दश॑पतः॒ शप॑तो॒ यश्च॑ न॒ः शपा॑त् । शुने॒ पेष्ट्र॑मि॒वाव॑क्षामं॒
तं प्रत्य॑स्यामि मृ॒त्यवे॑ ॥ ३ ॥ [४।६]

सूक्त ३८

ऋषिः—अथर्वा (वर्चस्कामः) ॥ देवता—त्विषिः; बृहस्पतिः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥
मन्त्र ४ ॥

सिं॒हे व्या॒घ्र उ॒त या पृदा॑कौ॒ त्विषि॑र॒ग्नौ ब्रा॑ह्म॒णे सूर्ये॒ या । इन्द्रं॒ या
दे॒वी सु॒भगा॑ ज॒जान॒ सा न॒ ऐतु॒ वर्च॑सा संवि॒दाना ॥ १ ॥
या ह॒स्तिनि॑ द्वी॒पिनि॒ या हिर॑ण्ये॒ त्विषि॑र॒प्सु गोषु॒ या पुरु॑षेषु । इन्द्रं॒
या दे॒वी सु॒भगा॑ ज॒जान॒ सा न॒ ऐतु॒ वर्च॑सा संवि॒दाना ॥ २ ॥
रथे॑ अ॒क्षेष्वृ॑ष॒भस्य॒ वाजे॒ वाते॑ प॒र्जन्ये॒ वरु॑णस्य॒ शुष्मे॑ । इन्द्रं॒ या दे॒वी
सु॒भगा॑ ज॒जान॒ सा न॒ ऐतु॒ वर्च॑सा संवि॒दाना ॥ ३ ॥
रा॒ज॒न्ये॑ दुन्दु॒भावाय॑ताया॒मश्व॑स्य॒ वाजे॒ पुरु॑षस्य मा॒यौ । इन्द्रं॒ या दे॒वी
सु॒भगा॑ ज॒जान॒ सा न॒ ऐत॒ वर्च॑सा संवि॒दाना ॥ ४ ॥ [४।७]

सूक्त ३९

ऋषि:—अथर्वा (वर्चस्कामः) ॥ देवता—बृहस्पतिः ॥ छन्दः—१ जगती; २ त्रिष्टुप्; ३ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

यशो॑ ह॒विर्व॑र्धता॒मिन्द्र॑जूतं स॒हस्र॑वीर्यं सु॒भृ॑तं॒ सह॑स्कृतम् । प्र॒सर्स्रा॑ण॒मनु॑ दी॒र्घाय॒ चक्ष॑से ह॒विष्म॑न्तं मा व॑र्धय ज्ये॒ष्ठता॑तये ॥ १ ॥

अच्छा॑ न॒ इन्द्रं॑ य॒शसं॒ यशो॑भिर्यश॒स्विनं॑ नमसा॒ना वि॑धेम । स नो॑ रास्व रा॒ष्ट्रमिन्द्र॑जूतं॒ तस्य॑ ते रा॒तौ य॒शसः॑ स्याम ॥ २ ॥

य॒शा इन्द्रो॑ य॒शा अ॒ग्निर्य॒शाः सोमो॑ अजायत । य॒शा विश्व॑स्य भू॒तस्या॒हम॑स्मि य॒शस्त॑मः ॥ ३ ॥ [४।८]

सूक्त ४०

ऋषि:—१, २ अथर्वा (अभयकामः); ३ अथर्वा (स्वस्त्ययनकामः) ॥ देवता—१, २ मन्त्रोक्ताः; ३ इन्द्रः ॥ छन्दः १, २ जगती; ३ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ॥

अभ॑यं द्यावापृथिवी इ॒हास्तु॒ नोऽभ॑यं॒ सोमः॑ सवि॒ता नः॑ कृणोतु । अभ॑यं नोऽस्तू॒र्व॑१॒न्तरि॑क्षं सप्तऋ॒षीणां॑ च॑ ह॒विषाभ॑यं नो अस्तु ॥ १ ॥

अ॒स्मै ग्रामा॑य प्र॒दिश॒श्चत॑स्र॒ ऊर्जं॑ सुभू॒तं स्व॒स्ति स॑वि॒ता नः॑ कृणोतु । अ॒श॒त्र्विन्द्रो॒ अभ॑य नः कृणोत्व॒न्यत्र॒ राज्ञा॑म॒भि या॑तु म॒न्युः ॥ २ ॥

अ॒न॒मि॒त्रं नो॑ अध॒राद॑नमि॒त्रं न॑ उत्त॒रात् । इन्द्रा॑नमि॒त्रं नः॑ प॒श्चाद॑नमि॒त्रं पु॒रस्कृ॑धि ॥ ३ ॥ [४।९]

सूक्त ४१

ऋषि:—ब्रह्मा ॥ देवता—मन आदयो दैव्या ऋषयः ॥ छन्दः—१ भुरिगनुष्टुप्; २ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ॥

मन॑से॒ चेत॑से धि॒य आकू॑तय उ॒त चित्त॑ये । म॒त्यै श्रु॒ताय॒ चक्ष॑से वि॒धेम॑
ह॒विषा॑ व॒यम् ॥ १ ॥

अ॒पा॒नाय॑ व्या॒नाय॑ प्रा॒णाय॒ भूरि॑धायसे । सर॑स्वत्या उरु॒व्यचे॑ वि॒धेम॑
ह॒विषा॑ व॒यम् ॥ २ ॥

मा नो॑ हासिषु॒र्ऋष॑यो॒ दैव्या॒ ये त॑नू॒पा ये न॑स्त॒न्व॑स्तनू॒जाः । अम॑र्त्या॒
मर्त्याँ॑ अ॒भि न॑ः सचध्व॒मायु॑र्धत्त प्र॒तरं॑ जी॒वसे॑ नः ॥ ३ ॥ [४।१०]

सूक्त ४२

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः (परस्परं चित्तैकीकरणकामः) ॥ देवता—मन्युः ॥ छन्दः—१, २ भुरिगनुष्टुप्; ३ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ॥

अव॒ ज्यामि॑व॒ धन्व॑नो म॒न्युं त॑नोमि ते हृ॒दः । यथा॒ संम॑नसौ भू॒त्वा
सखा॑याविव॒ सचा॑वहै ॥ १ ॥

सखा॑याविव सचावहा॒ अव॑ म॒न्युं त॑नोमि ते । अ॒धस्ते॒ अश्म॑नो
मन्युमुपा॑स्यामसि॒ यो गु॒रुः ॥ २ ॥

अ॒भि ति॑ष्ठामि ते म॒न्युं पाष्ण्या॒ प्रप॑देन च । यथा॑व॒शो न वादि॑षो॒
मम॑ चि॒त्तमु॒पाय॑सि ॥ ३ ॥ [५।१]

सूक्त ४३

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः (परस्परं चित्तैकीकरणकामः) ॥ देवता—मन्युशमनम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ॥

अ॒यं द॒र्भो विम॑न्युकः॒ स्वाय॒ चार॑णाय च । म॒न्योर्विम॑न्युकस्या॒यं
म॑न्यु॒शम॑न उच्यते ॥ १ ॥

अ॒यं यो भूरि॑मूलः समु॒द्रम॑व॒तिष्ठ॑ति । द॒र्भः पृ॑थि॒व्या उत्थि॑तो
मन्यु॒श॑मन उच्यते ॥ २ ॥
वि तें हन॒व्यां॑ श॒रणिं॒ वि ते॒ मुख्यां॑ नयामसि । यथा॑व॒शो न वादि॑षो॒
मम॑ चि॒त्तमु॒पाय॑सि ॥ ३ ॥ [५।२]

सुक्त ४४

ऋषिः – विश्वामित्रः ॥ देवता – मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः – १, २ अनुष्टुप्; ३ त्रिपदा महाबृहती ॥ मंत्र ३ ।

अस्था॒द् द्यौरस्था॑त् पृथि॒व्यस्था॒द् विश्व॑मि॒दं जग॑त् । अस्थु॑र्वृ॒क्षा
ऊ॒र्ध्वस्व॑प्ना॒स्तिष्ठा॒द् रोगो॑ अ॒यं तव॑ ॥ १ ॥
श॒तं या भे॑ष॒जानि॑ ते स॒हस्रं॒ संग॑तानि च । श्रेष्ठ॑मास्रावभेष॒जं वसि॑ष्ठं
रोग॒नाश॑नम् ॥ २ ॥
रु॒द्रस्य॒ मूत्र॑मस्य॒मृत॑स्य॒ नाभिः । वि॒षा॒णका नाम॒ वा अ॑सि पितॄ॒णां
मूला॒दुत्थि॑ता वातीकृ॒तनाश॑नी ॥ ३ ॥ [५।३]

सूक्त ४५

ऋषिः—अङ्गिराः; प्रचेताः; यमश्च ॥ देवता—दुःस्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—१ पथ्या पङ्क्तिः; २ भुरिक्त्रिष्टुप्; ३ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

प॒रोऽपे॑हि मनस्पाप॒ किमश॑स्तानि शंससि । परे॑हि॒ न त्वा॑ कामये
वृ॒क्षां वना॑नि॒ सं च॑र गृ॒हेषु॒ गोषु॑ मे॒ मनः॑ ॥ १ ॥
अ॒व॒शसा॑ नि॒ःश॒सा यत् प॑रा॒शसो॑पारि॒म जाग्र॑तो॒ यत् स्व॒पन्तः॑ ।
अ॒ग्निर्विश्वा॒न्यप॑ दुष्कृ॒तान्यजु॑ष्टान्या॒रे अ॒स्मद् द॑धातु ॥ २ ॥

यदि॑न्द्र ब्रह्मणस्प॒ते॒ऽपि॒ मृषा॒ चरा॑मसि । प्रचे॑ता न आङ्गिर॒सो दु॑रि॒तात् पा॒त्वंह॑सः ॥ ३ ॥ [५।४]

सूक्त ४६

ऋषिः—अङ्गिराः; प्रचेताः; यमश्च ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—१ विष्टारपङ्क्तिः; २ शक्वरीगर्भा पञ्चपदा जगती; ३ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

यो न जी॒वो॑ऽसि॒ न मृ॒तो दे॒वाना॑ममृतग॒र्भो॑ऽसि स्वप्न । व॒रु॒णा॒नी त मा॒ता य॒मः पि॒तार॑रु॒र्नामा॑सि ॥ १ ॥

वि॒द्म ते॑ स्वप्न ज॒नित्रं॑ देवजामी॒नां पु॒त्रो॑ऽसि य॒मस्य॒ कर॑णः । अन्त॑कोऽसि मृ॒त्युर॑सि । तं त्वा॑ स्वप्न॒ तथा॒ सं वि॑द्म॒ स नः॑ स्वप्न दु॒ःष्वप्न्या॑त् पाहि ॥ २ ॥

यथा॑ क॒लां यथा॑ श॒फं यथ॒र्णं सं॒नय॑न्ति । ए॒वा दु॒ःष्वप्न्यं॒ सर्वं॑ द्वि॒षते सं न॑यामसि ॥ ३ ॥ [५।५।]

सूक्त ४७

ऋषिः—अङ्गिराः; प्रचेताः; यमश्च ॥ देवता—१ अग्निः; २ विश्वेदेवाः; ३ सुधन्वा ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒ग्निः प्रा॑तःसव॒ने पा॑त्व॒स्मान् वै॑श्वान॒रो वि॑श्व॒कृद् वि॒श्वशं॑भूः । स नः॑ पाव॒को द्रवि॑णे द॒धात्वायु॑ष्मन्तः स॒हभ॑क्षाः स्याम ॥ १ ॥

विश्वे॑ दे॒वा म॒रुत॒ इन्द्रो॑ अ॒स्मान॒स्मिन् द्वि॒तीये॒ सव॑ने॒ न ज॑ह्युः । आयु॑ष्मन्तः प्रि॒यमे॑षां॒ वद॑न्तो व॒यं दे॒वानां॑ सुम॒तौ स्या॑म ॥ २ ॥

इ॒दं तृ॒तीयं॒ सव॑नं क॒वी॒नामृ॒तेन॒ ये च॑म॒समैर॑यन्त । ते सौ॑धन्व॒नाः स्व॑रानशा॒नाः स्वि॑ष्टिं नो अ॒भि वस्यो॑ नयन्तु ॥ ३ ॥ [५।६]

सूक्त ४८

ऋषिः—अङ्गिराः; प्रचेताः; यमश्च ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

श्ये॒नोऽसि गा॒य॒त्रच्छ॑न्दा॒ अनु॒ त्वा र॑भे । स्व॒स्ति मा॒ सं व॑हा॒स्य य॒ज्ञस्यो॒दृचि॒ स्वाहा॑ ॥ १ ॥
ऋ॒भुर॑सि॒ जग॑च्छन्दा॒ अनु॒ त्वा र॑भे । स्व॒स्ति मा॒ सं व॑हा॒स्य य॒ज्ञस्यो॒दृचि॒ स्वाहा॑ ॥ २ ॥
वृषा॑सि त्रि॒ष्टुप्छ॑न्दा॒ अनु॒ त्वा र॑भे । स्व॒स्ति मा॒ सं व॑हा॒स्य य॒ज्ञस्यो॒दृचि॒ स्वाहा॑ ॥ ३ ॥ [५।७]

सूक्त ४९

ऋषिः—गार्ग्यः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २ जगती; ३ निचृज्जगती ॥ मन्त्र ३ ।

न॒हि ते॑ अग्ने त॒न्वऽः क्रू॒रमा॒नंश॒ मर्त्य॑ः । क॒पिर्ब॑भस्ति॒ तेज॑नं॒ स्वं ज॒रायु॒ गौरि॑व ॥ १ ॥
मे॒ष इ॑व॒ वै सं च॒ वि चो॒र्वऽच्यसे॒ यदु॑त्तर॒द्रावुप॑रश्च॒ खाद॑तः । शी॒र्ष्णा शिरोऽप्स॒साप्सो॑ अ॒र्दय॑न्नं॒शून् ब॑भस्ति॒ हरि॑तेभिरा॒सभि॑ः ॥ २ ॥
सु॒प॒र्णा वाच॑मक्र॒तोप॒ द्यव्या॑ख॒रे कृष्णा॑ इषि॒रा अ॑नर्तिषुः । नि॒ यन्नि॒यन्त्युप॑रस्य॒ निष्कृ॑तिं पु॒रू रेतो॑ दधिरे सूर्य॒श्रित॑ः ॥ ३ ॥ [५।८]

सूक्त ५०

ऋषिः—अथर्वा (अभयकामः) ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—१ विराड्जगती; २, ३ पथ्या पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ३ ।

ह॒तं त॒र्दं स॑म॒ङ्कमा॒खुम॑श्विना छि॒न्तं शिरो॒ अपि॑ पृ॒ष्टीः शृ॑णीतम् ।
यवा॒न्नेद॒दानपि॑ नह्यतं॒ मुख॒मथाभ॑यं कृणुतं धा॒न्याऽय ॥ १ ॥

तर्द॒ है पत॑ङ्ग॒ है जभ्य॒ हा उप॑क्वस । ब्र॒ह्मेवासँ॑स्थितं ह॒विरन॑दन्त इ॒मान् यवा॒नहिं॑सन्तो अ॒पोदि॑त ॥ २ ॥

तर्दा॑पते॒ वघा॑पते॒ तृष्ट॑जम्भा॒ आ शृ॑णोत मे । य आ॑र॒ण्या व्य∫द्व॒रा ये के च॒ स्थ व्य∫द्व॒रास्तान्त्सर्वा॑ञ्जम्भयामसि ॥ ३ ॥ [५।९]

सूक्त ५१

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—१ सोमः; २ आपः; ३ वरुणः ॥ छन्दः—१ गायत्री; २ त्रिष्टुप् ३ जगती ॥ मन्त्र ३ ।

वा॒योः पू॒तः प॒वित्रे॑ण प्र॒त्यङ् सोमो॒ अति॑ द्रु॒तः । इन्द्र॑स्य॒ युज्य॒ः सखा॑ ॥ १ ॥

आपो॑ अ॒स्मान् मा॒तरः॑ सूदयन्तु घृ॒तेन॑ नो घृत॒प्व∫ः पुनन्तु । विश्व॒ं हि रि॒प्रं प्र॒वह॑न्ति दे॒वीरुदिदा॑भ्य॒ः शुचि॒रा पू॒त ए॑मि ॥ २ ॥

यत् किं चे॒दं व॑रुण॒ दैव्ये॒ जने॑ऽभिद्रो॒हं म॑नु॒ष्या॒३॒श्चर॑न्ति । अचि॑त्त्या॒ चेत् तव॒ धर्मा॑ युयोपि॒म मा न॒स्तस्मा॒देन॑सो दे॒व रीरिषः ॥ ३ ॥ [५।१०]

सूक्त ५२

ऋषिः—भागलिः ॥ देवता—१ सूर्यः; २ गावः; ३ भेषजम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

उत् सूर्यो॑ दि॒व ए॑ति पु॒रो रक्षां॑सि नि॒जूर्व॑न् । आ॒दि॒त्यः पर्व॑तेभ्यो वि॒श्वदृ॑ष्टो अदृष्ट॒हा ॥ १ ॥

नि गावो॑ गो॒ष्ठे अ॑सद॒न् नि मृ॒गासो॑ अविक्षत । न्यू॒३॒र्मयो॑ न॒दीना॒ं न्य१॒दृष्टा॑ अलिप्सत ॥ २ ॥

आ॒यु॒र्दद॑ं वि॒प॒श्चितं॑ श्रु॒तां कण्व॑स्य वी॒रुध॑म् । आभा॑रिषं वि॒श्वभे॑षजीम॒स्यादृष्टा॒न् नि शं॑मयत् ॥ ३ ॥ [६।१]

सूक्त ५३

ऋषिः—बृहच्छुक्रः ॥ देवता—पृथिव्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ जगती; २, ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

द्यौश्च॑ म इ॒दं पृ॑थि॒वी च॒ प्रचे॑तसौ शु॒क्रो बृ॒हन् दक्षि॑णया पिपर्तु॑ । अनु॑
स्व॒धा चि॑कि॒तां सोमो॑ अ॒ग्निर्वा॒युर्नः॑ पातु सवि॒ता भग॑श्च ॥ १ ॥
पुनः॑ प्रा॒णः पुन॑रा॒त्मा न॒ ऐतु॒ पुन॒श्चक्षु॒ः पुन॒रसु॑र्न॒ ऐतु॑ । वै॒श्वा॒न॒रो नो॒
अद॑ब्धस्तनू॒पा अ॒न्तस्ति॑ष्ठाति दुरि॒तानि॒ विश्वा॑ ॥ २ ॥
सं वर्च॑सा॒ पय॑सा॒ सं त॒नूभि॒रग॑न्महि॒ मन॑सा॒ सं शि॒वेन॑ । त्वष्टा॑ नो॒
अत्र॒ वरी॑यः कृ॒णो॒त्वनु॑ नो मार्ष्टु त॒न्वो॑३॒ यद् विरि॑ष्टम् ॥ ३ ॥ [६।२]

सूक्त ५४

ऋषि—ब्रह्मा ॥ देवता - अग्नीषोमौ ॥ छन्दः— अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

इ॒दं तद् यु॒ज उत्त॑र॒मिन्द्रं॑ शुम्भा॒म्यष्ट॑ये । अ॒स्य क्ष॒त्रं श्रियं॑ म॒हीं
वृ॒ष्टिरि॑व वर्ध॑या॒ तृण॑म् ॥ १ ॥
अ॒स्मै क्ष॒त्रम॑ग्नीषोमाव॒स्मै धा॑रयतं र॒यिम् । इ॒मं रा॒ष्ट्रस्या॑भीव॒र्गे कृ॑णु॒तं
यु॒ज उत्त॑रम् ॥ २ ॥
सब॑न्धुश्चा॒सब॑न्धुश्च॒ यो अ॒स्माँ अ॑भि॒दास॑ति । सर्वं॒ तं र॑न्धयासि मे॒
यज॑मानाय सुन्व॒ते ॥ ३ ॥ [६।३]

सूक्त ५५

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता – १ विश्वेदेवाः; २, ३ रुद्रः ॥ छन्दः—१, ३ जगती; २ त्रिष्टुप् ? ॥ मंत्र ३ ।

ये पन्था॑नो ब॒हवो॑ दे॒वयाना॑ अ॒न्तरा॒ द्यावा॑पृथि॒वी सं॒चर॑न्ति । तेषा॒-
मज्या॑निं यत॒मो वहा॑ति॒ तस्मै॑ मा दे॒वाः परि॑ धत्ते॒ह सर्वे॑ ॥ १ ॥

ग्री॒ष्मो हे॑म॒न्तः शिशि॑रो वस॒न्तः श॒रद् व॒र्षाः स्वि॒ते नो॑ दधात । आ
नो॒ गोषु॒ भज॒ता प्र॒जायां॑ निवा॒त इद् वः॑ शर॒णे स्या॑म ॥ २ ॥
इ॒दा॒व॒त्स॒राय॑ परिवत्स॒राय॑ संवत्स॒राय॑ कृणुता बृ॒हन्नमः॑ । तेषां॑ व॒यं
सु॑म॒तौ य॒ज्ञियां॑ना॒मपि॑ भ॒द्रे सौमन॒से स्या॑म ॥ ३ ॥ [६।४)

सूक्त ५६

ऋषि:—शन्तातिः ।। देवताः —१ विश्वेदेवाः; २, ३ रुद्रः; ।। छन्दः—१ उष्णिग्-गर्भा पथ्या पङ्क्तिः; २ निचृदनुष्टुप्; ३ विराडनुष्टुप् ।। मन्त्र ३ ।

मा नो॑ दे॒वा अहि॑र्वधी॒त् सतो॑कान्त्स॒हपू॑रुषान् । संय॑तं॒ न वि ष्प॑रद्
व्यात्तं॒ न सं य॑म॒न्नमो॑ देवज॒नेभ्यः॑ ॥ १ ॥
नमो॑ऽस्त्वसि॒ताय॒ नम॒स्तिर॑श्चिराजये । स्व॒जाय॑ ब॒भ्रवे॒ नमो॒ नमो॑ देवज॒नेभ्यः॑ ॥ २ ॥
सं ते॑ हन्मि द॒ता द॒तः समु॑ ते॒ हन्वा॒ हनू॑ । सं ते॑ जि॒ह्वया॑ जि॒ह्वां
सम्वा॒स्नाह॑ आ॒स्य॒म् ॥ ३ ॥ [६।५]

सूक्त ५७

ऋषि:— शन्तातिः ।। देवता – १. २ रुद्रः; ३ [भेषजम्] ।। छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ पथ्या बृहती ।। मन्त्र ३ ।

इ॒दमिद् वा उ॑ भेष॒जमि॒दं रु॒द्रस्य॑ भेष॒जम् । येनेषु॒मेक॑तेजनां श॒तशल्या॑मप॒ब्रव॑त् ॥ ॥
जा॒ला॒षेणा॒भि षि॑ञ्चत जाला॒षेणोप॑ सिञ्चत । जा॒ला॒षमु॒ग्रं भे॑ष॒जं तेन॑
नो मृड जी॒वसे॑ ॥ २ ॥
शं च॑ नो॒ मय॑श्च नो॒ मा च॑ नः॒ किं च॒नाम॑मत् । क्ष॒मा रपो॒ विश्वं॑ नो
अस्तु भेष॒जं सर्वं॑ नो अस्तु भेष॒जम् ॥ ३ ॥ [६।६]

सूक्त ५८

ऋषिः—अथर्वा (यशस्कामः) ॥ देवता—इन्द्रादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ जगती; २ प्रस्तारपङ्क्ति : ३ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

य॒श॒सं मेन्द्रो॑ म॒घवा॑न् कृणोतु य॒श॒सं द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे इ॒मे । य॒शसं॑
मा दे॒वः स॑वि॒ता कृ॑णोतु प्रि॒यो दा॒तुर्दक्षि॑णाया इ॒ह स्या॑म् ॥ १ ॥
यथेन्द्रो॒ द्यावा॑पृथि॒व्योर्यश॑स्वा॒न् यथाप॒ ओष॑धीषु॒ यश॑स्वतीः । ए॒वा
विश्वे॑षु दे॒वेषु॑ व॒यं सर्वे॑षु य॒शसः॑ स्याम ॥ २ ॥
य॒शा इन्द्रो॑ य॒शा अ॒ग्निर्य॒शाः सोमो॑ अजायत । य॒शा विश्व॑स्य
भू॒तस्या॒हम॑स्मि य॒शस्त॑मः ॥ ३ ॥ [६।७]

सूक्त ५९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१ अरुन्धत्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒न॒डुद्भ्य॒स्त्वं प्र॑थ॒मं धे॑नुभ्य॒स्त्वम॑रुन्धति । अधे॑नवे॒ वय॑से॒ शर्म॑ यच्छ॒
चतु॑ष्पदे ॥ १ ॥
शर्म॑ यच्छ॒त्वोष॑धिः स॒ह दे॒वीर॑रुन्ध॒ती । कर॒त् पय॑स्वन्तं गो॒ष्ठम॑य॒क्ष्माँ
उ॒त पूरु॑षान् ॥ २ ॥
वि॒श्वरू॑पां सु॒भगा॑म॒च्छाव॑दामि जीव॒लाम् । सा नो॑ रु॒द्रस्या॒स्तां हे॒तिं
दू॒रं न॑यतु॒ गोभ्यः॑ ॥ ३ ॥ [६।८]

सूक्त ६०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अर्यमा ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒यमा या॑त्यर्य॒मा पु॒रस्ता॒द् विषि॑तस्तुपः । अ॒स्या इ॒च्छन्न॒ग्रुवै॒ पति॑मु॒त
जा॒याम॒जान॑ये ॥ १ ॥

अश्र॑मदि॒यम॑र्यमन्न॒न्यासां॒ सम॑नं य॒ती । अ॒ङ्गो न्व॑र्यमन्न॒स्या अ॒न्याः
सम॑न॒माय॑ति ॥ २ ॥
धा॒ता दा॑धार पृथि॒वीं धा॒ता द्यामु॒त सूर्य॑म् । धा॒तास्या अ॒ग्रुवै॒ पतिं॒
दधा॑तु प्रतिका॒म्य॑म् ॥ ३ ॥ [६।२]

सूक्त ६१

ऋषिः— अथर्वा ॥ देवता—रुद्रः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २, ३ भुरिक् त्रिष्टुप्। मंत्र ३।

मह्य॒मापो॒ मधु॑मदेर॑यन्तां॒ मह्यं॒ सूरो॑ अभर॒ज्ज्योति॑षे॒ कम् । मह्यं॑ दे॒वा
उ॒त विश्वे॑ तपो॒जा मह्यं॑ दे॒वः स॑वि॒ता व्यचो॑ धात् ॥ १ ॥
अ॒हं वि॑वेच पृथि॒वीमु॒त द्याम॒हमृ॒तूंर॑जनयं स॒प्त सा॒कम् । अ॒हं स॒त्यमनृ॑तं॒
यद् वदा॒म्यहं दैवीं॒ परि॒ वाचं॒ विश॑श्च ॥ २ ॥
अ॒हं ज॑जान पृथि॒वीमु॒त द्याम॒हमृ॒तूंर॑जनयं स॒प्त सिन्धू॑न् । अ॒हं स॒त्य-
मनृ॑तं॒ यद् वदा॑मि॒ यो अ॑ग्नीषो॒मावजु॑षे॒ सखा॑या ॥ ३ ॥ [६।१०]

सूक्त ६२

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता – वैश्वानरादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः —त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३।

वै॒श्वा॒न॒रो र॒श्मिभि॑र्नः पुनातु॒ वातः॑ प्रा॒णेने॑षि॒रो नभो॑भिः । द्यावा॑पृथि॒वी
पय॑सा॒ पय॑स्वती ऋ॒ताव॑री य॒ज्ञिये॑ नः पुनीताम् ॥ १ ॥
वै॒श्वा॒न॒रीं सू॒नृता॒मा र॑भध्वं॒ यस्या॒ आशा॑स्त॒न्वो॑ वी॒तपृ॑ष्ठाः । तया॑
गृ॒णन्तः॑ सध॒मादे॑षु व॒यं स्या॑म॒ पत॑यो र॒यीणा॑म् ॥ २ ॥
वै॒श्वा॒न॒रीं वर्च॑स॒ आ र॑भध्वं शु॒द्धा भव॑न्त॒ः शुच॑यः पाव॒काः । इ॒हेड॑या
सध॒मादं॒ मद॑न्तो॒ ज्योक् प॑श्येम॒ सूर्य॑मु॒च्चर॑न्तम् ॥ ३ ॥ [७।१]

सूक्त ६३

ऋषिः—द्रुह्वणः (१—३ आयुर्वर्चोबलकामः) देवता—१ निर्ऋतिः; २ यमः; ३ मृत्युः; ४ अग्निः ॥ छन्दः—१—३ जगती (? त्रिष्टुप्); ४ अनुष्टुप् । मंत्र ४ ।

यत् ते॑ दे॒वी निर्ऋ॑तिराब॒बन्ध॒ दाम॑ ग्री॒वास्व॑वि॒मोक्यं॒ यत् । तत् ते॒ वि
ष्या॒म्यायु॑षे॒ वर्च॑से॒ बला॑यादोम॒दमन्न॑मद्धि॒ प्रसू॑तः ॥ १ ॥

नमो॑ऽस्तु ते निर्ऋते तिग्मतेजोऽय॒स्मया॒न् वि चृ॑ता बन्धपा॒शान् । य॒मो
मह्यं॒ पुन॒रित् त्वां द॑दाति॒ तस्मै॑ य॒माय॒ नमो॑ अस्तु मृ॒त्यवे॑ ॥ २ ॥

अ॒य॒स्मये॑ द्रु॒प॒दे बे॑धिष इ॒हाभिहि॑तो मृ॒त्युभि॒र्ये स॒हस्र॑म् । य॒मेन॒ त्वं
पि॒तृभिः॑ संवि॒दा॒न उ॑त्त॒मं नाक॒म धि॑ रोहये॒मम् ॥ ३ ॥

संस॒मिद् यु॑वसे वृष॒न्नग्ने॒ विश्वा॑न्य॒र्य आ । इ॒डस्प॒दे समि॑ध्यसे॒ स नो॒
वसू॒न्या भ॑र ॥ ४ ॥ [७।२]

सूक्त ६४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सांमनस्यम् ॥ छन्दः—१, ३ अनुष्टुप्, २ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

सं जा॑नीध्वं॒ सं पृ॑च्यध्वं॒ सं वो॒ मनां॑सि जानताम् । दे॒वा भा॒गं यथा॒
पूर्वे॑ संजाना॒ना उ॒पास॑ते ॥ १ ॥

स॒मा॒नो मन्त्रः॒ समि॑तिः स॒मा॒नी स॑मा॒नं व्र॒तं स॒ह चि॒त्तमे॑षाम् । स॒मा॒नेन॑
वो ह॒विषा॑ जुहोमि स॒मा॒नं चेतो॑ अभि॒संवि॑शध्वम् ॥ २ ॥

स॒मा॒नी व॒ आकू॑तिः समा॒ना हृद॑यानि वः । स॒मा॒नम॑स्तु वो॒ मनो॒ यथा॑
वः॒ सुस॒हास॑ति ॥ ३ ॥ [७।३]

सूक्त ६५

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—पराशरः; इन्द्रः ॥ छन्दः—१ पथ्या पङ्क्तिः; २, ३ अनुष्टुप्; ॥ मंत्र ३ ।

अव॑ म॒न्युरवा॑य॒ताव॑ बा॒हू म॑नो॒युजा॑ । परा॑शर॒ त्वं तेषां॒ परा॑ञ्चं॒ शुष्म॑मर्द॒याधा॑ नो र॒यिमा कृ॑धि ॥ १ ॥

निर्ह॑स्तेभ्यो नैर्ह॒स्तं यं दे॑वा॒ः शरु॒मस्य॑थ । वृ॒श्चामि॒ शत्रू॑णां बा॒हून॒नेन॑ ह॒विषा॒हम् ॥ २ ॥

इन्द्र॑श्चकार प्रथ॒मं नै॑र्ह॒स्तमसु॑रेभ्यः । जय॑न्तु॒ सत्वा॑नो॒ मम॑ स्थि॒रेणेन्द्रे॑ण मे॒दिना॑ ॥ ३ ॥ [७१४]

सूक्त ६६

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २, ३ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

निर्ह॑स्त॒ः शत्रु॑रभि॒दास॑न्नस्तु॒ ये सेना॑भि॒र्युध॑मा॒यन्त्य॒स्मान् । सम॑र्पयेन्द्र मह॒ता व॒धेन॒ द्रात्वे॑षामवह॒ रो विवि॑द्धः ॥ १ ॥

आ॒तन्वा॒ना आ॒यच्छ॒न्तोऽस्य॑न्तो॒ ये च॒ धाव॑थ । निर्ह॑स्ताः शत्रवः स्थ॒नेन्द्रो॑ वो॒ऽद्य परा॑शरीत् ॥ २ ॥

निर्ह॑स्ताः सन्तु॒ शत्र॒वोऽङ्गै॑षां म्लापयामसि । अथै॑षामिन्द्र॒ वेदाँ॑सि श॒तशो॒ वि भ॑जामहै ॥ ३ ॥ [७१५]

सूक्त ६७

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

परि॒ वर्त्मा॑नि स॒र्वत॒ इन्द्र॑ः पू॒षा च॑ सस्रतुः । मुह्य॑न्त्व॒द्यामूः सेना॑ अ॒मित्रा॑णां परस्त॒राम् ॥ १ ॥

मूढा अ॒मित्रा॑श्चरताशी॒र्षाण॑ इ॒वाह॑यः । तेषां॑ वो अ॒ग्निमू॑ढाना॒मिन्द्रो॑
हन्तु॒ वरं॑वरम् ॥ २ ॥
ऐ॑षु नह्य॒ वृषा॒जिनं॑ हरि॒णस्या॒ भियं॑ कृधि । परा॑ङ॒मित्र॒ एष॑त्व॒र्वाची॒
गौरु॑पेषतु ॥ ३ ॥ [७।६]

सूक्त ६८

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सवित्रादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ पुरोविराडतिशक्वरी-गर्भा चतुष्पदा जगती; २ अनुष्टुप्; ३ अतिजगतीगर्भा त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

आय॑मगन्त्सवि॒ता क्षु॒रेणो॒ष्णेन॑ वाय उद॒केनेहि॑ । आ॒दि॒त्या रु॒द्रा वस॑व
उन्दन्तु॒ सचे॑तसः॒ सोम॑स्य॒ राज्ञो॑ वपत॒ प्रचे॑तसः ॥ १ ॥
अदि॑ति॒ः श्मश्रु॑ वप॒त्वाप॑ उन्दन्तु॒ वर्च॑सा । चिकि॑त्सतु प्र॒जाप॑तिर्दीर्घायु॒त्वाय॒
चक्ष॑से ॥ २ ॥
येनाव॑पत् सवि॒ता क्षु॒रेण॒ सोम॑स्य॒ राज्ञो॒ वरु॑णस्य वि॒द्वान् । तेन॑ ब्रह्माणो
वपते॒दम॒स्य गोमा॒नश्व॑वा॒नय॑मस्तु प्र॒जावा॑न् ॥ ३ ॥ [७।७]

सूक्त ६९

ऋषिः—अथर्वा (वर्चस्कामो यशस्कामश्च) ॥ देवता—बृहस्पतिः; अश्विनौ ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

गि॒राव॑र॒गरा॑टेषु॒ हिर॑ण्ये॒ गोषु॒ यद् यश॑ः । सुरा॑यां सि॒च्यमा॑नायां
कीला॒ले मधु॒ तन्मयि॑ ॥ १ ॥
अश्वि॑ना सार॒घेण॑ मा॒ मधु॑नाङ्क्तं शुभस्पती । यथा॒ भर्ग॑स्वतीं॒ वाच॑मा॒
वदा॑नि॒ जना॒ँ अनु॑ ॥ २ ॥
मयि॒ वर्चो॒ अथो॒ यशोऽथो॑ य॒ज्ञस्य॒ यत् पय॑ः । तन्मयि॑ प्र॒जाप॑तिर्दि॒वि
द्यामि॑व दृंहतु ॥ ३ ॥ [७।८]

सूक्त ७०

ऋषिः—काङ्कायनः ॥ देवता—अघ्न्या ॥ छन्दः—जगती ॥ मन्त्र ३ ।

यथा॑ मां॒सं यथा॒ सुरा॒ यथाक्षा अ॑धि॒देव॑ने । यथा॑ पुं॒सो वृ॑षण्य॒तः स्त्रि॒यां
नि॑ह॒न्यते॒ मन॑ः । ए॒वा ते॑ अघ्न्ये॒ मनोऽधि॑ व॒त्से नि ह॑न्यताम् ॥ १ ॥
यथा॑ ह॒स्ती ह॑स्ति॒न्याः प॒देन॑ प॒दमु॑द्यु॒जे । यथा॑ पुं॒सो वृ॑षण्य॒त स्त्रि॒यां
नि॑ह॒न्यते॒ मन॑ः । ए॒वा ते॑ अघ्न्ये॒ मनोऽधि॑ व॒त्से नि ह॑न्यताम् ॥ २ ॥
यथा॑ प्र॒धिर्यथो॑प॒धिर्यथा॒ नभ्यं॑ प्र॒धावधि॑ । यथा॑ पुं॒सो वृ॑षण्य॒त स्त्रि॒यां
नि॑हन्यते॒ मन॑ः । ए॒वा ते॑ अघ्न्ये॒ मनोऽधि॑ व॒त्से नि ह॑न्यताम् ॥ ३ ॥
[७।६]

सूक्त ७१

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—१, २ अग्निः, ३ विश्वे देवाः ॥ छन्दः—१, २ जगती; ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३

यद॒न्नमद्मि॑ बहु॒धा विरू॑पं॒ हिर॑ण्य॒मश्व॑मु॒त गाम॒जाम॒विम् । यदे॒व किं च॑
प्रतिज॒ग्रहा॒हम॒ग्निष्टद्धोता॒ सुहु॑तं कृणोतु ॥ १ ॥
यन्मा॑ हु॒तमहु॑तमाज॒गाम॑ द॒त्तं पि॒तृभि॒रनु॑मतं मनु॒ष्यैं[ः । यस्मा॑न्मे॒ मन॒
उदि॑व॒ रार॑जीत्य॒ग्निष्टद्धोता॒ सुहु॑तं कृणोतु ॥ २ ॥
यद॒न्नमद्म्यनृ॑तेन दे॒वा दा॒स्यन्नदा॑स्यन्नु॒त सं॑गृ॒णामि॑ । वै॒श्वा॒न॒रस्य॑ मह॒तो
म॑हि॒म्ना शि॒वं मह्यं॒ मधु॑मद॒स्त्वन्न॑म् ॥ ३ ॥　[७।१०]

सूक्त ७२

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—शेपोऽर्कः ॥ छन्दः—१ जगती; २ अनुष्टुप्; ३ भुरिगनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

यथा॑सि॒तः प्र॒थय॑ते॒ वशाँ॒ अनु॒ वपूं॑षि कृ॒ण्वन्नसु॑रस्य मा॒यया॑ । ए॒वा
ते॒ शेप॒ः सह॑सा॒यम॒र्कोऽङ्गे॒नाङ्गं॒ संस॑मकं कृणोतु ॥ १ ॥

यथा॒ पस॑स्तायाद॒रं वाते॑न स्थूल॒भं कृ॒तम्। याव॒त् पर॑स्वतः॒ पस॒स्ताव॑त्
ते वर्ध॑तां॒ पस॑ः ॥ २ ॥

याव॒दङ्गी॑नं॒ पार॑स्वतं॒ हास्ति॑नं॒ गार्द॑भं च॒ यत्। याव॒दश्व॑स्य वा॒जिन॒-
स्ताव॑त् ते वर्ध॑तां॒ पस॑ः ॥ ३ ॥ [७।११]

सूक्त ७३

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वरुणादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः— १, ३ भुरिक् २ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

एह या॑तु॒ वरु॑णः॒ सोमो॑ अ॒ग्निर्बृह॒स्पति॒र्वसु॑भि॒रेह या॑तु। अ॒स्य श्रिय॑-
मुप॒संया॑त॒ सर्व॑ उ॒ग्रस्य॑ चे॒त्तुः संम॑नसः सजाताः ॥ १ ॥

यो व॒ः शुष्मो॒ हृद॑येष्व॒न्तराकू॑ति॒र्या वो॒ मन॑सि॒ प्रवि॑ष्टा। तान्त्सी॑-
वयामि ह॒विषा॑ घृ॒तेन॒ मयि॑ सजाता र॒मति॑र्वो अस्तु ॥ २ ॥

इ॒हैव स्त॒ माप॑ याता॒ध्यस्मत् पू॒षा प॒रस्ता॒दप॑थं वः कृणोतु। वास्तो॒ष्पति॒-
रनु॑ वो जोहवीतु॒ मयि॑ सजाता र॒मति॑र्वो अस्तु ॥ ३ ॥ [८।१]

सूक्त ७४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—ब्रह्मणस्पत्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्;
३ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

सं वः॑ पृच्यन्तां त॒न्व१ः सं मना॑सि॒ समु॑ व्र॒ता। सं वो॒ऽयं ब्रह्म॑ण॒स्पति॒-
र्भग॒ः सं वो॑ अजीगमत् ॥ १ ॥

सं॒ज्ञप॑नं वो॒ मन॒सोऽथो॑ सं॒ज्ञप॑नं हृ॒दः। अथो॒ भग॑स्य॒ यच्छ्रान्तं तेन॒
संज्ञ॑पयामि वः ॥ २ ॥

यथा॑दि॒त्या वसु॑भिः संबभू॒वुर्म॒रुद्भि॑रु॒ग्रा अहृ॑णीयमानाः। ए॒वा त्रि॑णाम-
न्नहृ॑णीयमान इ॒माञ्जना॒न्त्संम॑नसस्कृधी॒ह ॥ ३ ॥ [८।२]

सूक्त ७५

ऋषिः—कबन्धः (सपत्नक्षयकामः) ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ षट्पदा जगती ॥ मंत्र ३ ।

निर॒मुं नु॑द॒ ओक॑सः स॒पत्नो॒ यः पृ॑त॒न्यति॑ । नै॒र्बा॒ध्ये᳡न ह॒विषेन्द्र॑ ए॒नं परा॑शरीत् ॥ १ ॥

प॒र॒मां तं प॑रा॒वत॒मिन्द्रो॑ नुदतु वृत्र॒हा । यतो॒ न पुन॒राय॑ति शश्व॒तीभ्यः॒ समा॑भ्यः ॥ २ ॥

एतु॑ ति॒स्रः प॑रा॒वत॒ एतु॒ पञ्च॒ जना॒ँ अति॑ । एतु॑ ति॒स्रोऽति॑ रोच॒ना यतो॒ न पुन॒राय॑ति । शश्व॒तीभ्यः॒ समा॑भ्यो॒ याव॒त् सूर्यो॒ अस॑द् दि॒वि ॥ ३ ॥
[८।३]

सूक्त ७६

ऋषिः—कबन्धः ॥ देवता—सान्तपनाग्निः ॥ छन्दः—१, २, ४ अनुष्टुप्; ३ ककुम्मत्यनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

य ए॒नं प॑रि॒षीद॑न्ति समा॒दध॑ति॒ चक्ष॑से । सं॒प्रेद्धो॑ अ॒ग्निर्जि॒ह्वाभि॒रुद॑तु॒ हृद॑या॒दधि॑ ॥ १ ॥

अ॒ग्नेः सां॑तप॒नस्या॒हमायु॑षे प॒दमा र॑भे । अ॒द्धा॒तिर्यस्य॒ पश्य॑ति धू॒ममु॒द्यन्त॑मास्य॒तः ॥ २ ॥

यो अ॒स्य स॒मिधं॒ वेद॑ क्ष॒त्रियेण॒ स॒माहि॑ताम् । ना॒भि॒ह्वा॒रे प॒दं नि द॑धाति॒ स मृ॒त्यवे॑ ॥ ३ ॥

नैनं॑ घ्नन्ति पर्या॒यिणो॒ न स॒न्नाँ अव॑ गच्छति । अ॒ग्नेर्यः क्ष॒त्रियो॑ वि॒द्वान्नाम॑ गृ॒ह्णात्यायु॑षे ॥ ४ ॥
[८।४]

सूक्त ७७

ऋषिः—**कबन्धः** ।। देवता—**जातवेदाः** ।। छन्दः—**अनुष्टुप्** ।। **मंत्र** ३ ।

अस्था॒द् द्यौरस्था॑त् पृथि॒व्यस्था॒द् विश्व॑मि॒दं जग॑त्। आ॒स्थाने॒ पर्व॑᳚ता
अस्थु॒ः स्थाम्न्यश्वाँ᳚ अतिष्ठिपम् ॥ १ ॥
य उ॒दान॑ट् प॒राय॑णं॒ य उ॒दान॒ण्न्याय॑नम्। आ॒वर्त॑᳚नं नि॒वर्त॑᳚नं॒ यो गो॒पा
अपि॒ तं॑ हु॑वे । २ ॥
जात॑वेदो॒ नि व॑र्तय श॒तं ते᳚ सन्त्वा॒वृत॑ः। स॒हस्र॑᳚ त उपा॒वृत॒स्ताभि॑र्न॒ः
पुन॒रा कृ॑धि ॥ ३ ॥ [८।५]

सूक्त ७८

ऋषिः—**अथर्वा** ।। देवता—**१, २ चन्द्रमाः; ३ त्वष्टा** ।। छन्दः—**अनुष्टुप्** ।।
मंत्र ३ ।

तेन॑ भू॒तेन॑ ह॒विषा॒यमा प्या॑यतां॒ पुन॑ः। जा॒यां याम॑स्मा॒ आवा॑क्षु॒स्तां
रसे᳚ना॒भि व॑र्धताम् ॥ १ ॥
अ॒भि व॑र्धतां॒ पय॑सा॒भि रा॒ष्ट्रेण॑ वर्धताम्। र॒य्या स॒हस्र॑वर्चसे॒मौ
स्ता॒मनु॑पक्षितौ ॥ २ ॥
त्वष्टा॑ जा॒याम॑जनय॒त् त्वष्टा॑स्यै॒ त्वां पति॑म्। त्वष्टा॑ स॒हस्र॒मायूं᳚षि
दी॒र्घमायु॑ष्कृणोतु वाम् ॥ ३ ॥ [८।६]

सूक्त ७९

ऋषिः - **अथर्वा** ।। देवता—**संस्फानम्** ।। छन्दः—**१, २ गायत्री; ३ त्रिपदा प्रजापत्या**
गायत्री ।। **मंत्र** ३ ।

अ॒यं नो॒ नभ॑स॒स्पति॑ः सं॒स्फानो॑ अ॒भि र॑क्षतु। अस॑माति॑ गृ॒हेषु॑ नः ॥१॥
त्वं नो॑ नभसस्पत॒ ऊर्जँ᳚ गृ॒हेषु॑ धारय। आ पु॒ष्टमे॒त्वा वसु॑ ॥ २ ॥

देव॑ संस्फान सहस्रपो॒षस्ये॑शिषे। तस्य॑ नो रास्व॒ तस्य॑ नो धेहि॒ तस्य॑
ते भक्ति॒वांस॑ः स्याम ॥ ३ ॥ [८।७]

सूक्त ८०

ऋषिः अथर्वा ॥ देवता—चन्द्रमाः ॥ छन्दः – १ भुरिगनुष्टुप्; २ अनुष्टुप्;
३ प्रस्तारपङ्क्तिः ॥ मंत्र ३ ।

अ॒न्तरि॑क्षेण पतति॒ विश्वा॑ भू॒ताव॒चाक॑शत् । शुनो॑ दि॒व्यस्य॒ यन्मह॒स्तेना॑
ते ह॒विषा॑ विधेम ॥ १ ॥
ये त्रय॑ः कालका॒ञ्जा दि॒वि दे॒वा इ॑व श्रि॒ताः । तान्त्सर्वा॑नह्व ऊ॒तये॒ऽस्मा
अ॑रि॒ष्टता॑तये ॥ २ ॥
अ॒प्सु ते॒ जन्म॑ दि॒वि ते॑ स॒धस्थँ॑ समु॒द्रे अ॒न्तर्म॑हि॒मा ते॑ पृथि॒व्याम् ।
शुनो॑ दि॒व्यस्य॒ यन्मह॒स्तेना॑ ते ह॒विषा॑ विधेम ॥ ३ ॥ [८।८]

सूक्त ८१

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—आदित्याः । छन्दः– अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

य॒न्तासि॒ यच्छ॑से॒ हस्ता॒वप॒ रक्षाँ॑सि सेधसि । प्र॒जां धनँ॑ च गृह्णा॒नः
परि॑ह॒स्तो अ॑भूद॒यम् ॥ १ ॥
परि॑हस्त॒ वि धा॑रय॒ योनि॒ गर्भा॑य॒ धात॑वे । मर्या॑दे पु॒त्रमा धे॑हि॒ तं त्वमा
ग॑मयागमे ॥ २ ॥
यं परि॑ह॒स्तमबि॑भ॒रदि॑तिः पुत्रका॒म्या । त्वष्टा॒ तम॑स्या॒ आ ब॑ध्ना॒द् यथा॑
पु॒त्रं जना॒दिति॑ ॥ ३ ॥ [८।९]

सूक्त ८२

ऋषिः—भगः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

आ॒गच्छ॑त॒ आग॑तस्य॒ नाम॑ गृह्णाम्याय॒तः । इन्द्र॑स्य वृत्र॒घ्नो व॑न्वे
वास॒वस्य॑ श॒तक्र॑तोः ॥ १ ॥

येन॑ सू॒र्यां॑ सा॑वि॒त्रीम॒श्विनो॒हतुः॑ प॒था । तेन॒ माम॑ब्रवी॒द् भगो॑ जा॒यामा
व॑हता॒दिति॑ ॥ २ ॥
यस्ते॑ऽङ्कु॒शो व॑सु॒दानो॑ बृ॒हन्नि॑न्द्र हिर॒ण्यय॑ः । तेना॑ जनीय॒ते जा॒यां मह्यं॑
धेहि शचीपते ॥ ३ ॥ [८।१०]

सूक्त ८३

ऋषिः—**भगः** ।। देवता—**सूर्यादयः** ।। छन्दः—१–३ **अनुष्टुप्**; ४ **द्विपदा निचृदार्च्यनुष्टुप्** ।। मन्त्र ४ ।

अप॑चित॒ः प्र प॑तत सुप॒र्णो व॑स॒तेरि॑व । सूर्य॑ः कृ॒णोतु॑ भेष॒जं च॒न्द्रमा॒
वोऽपो॑च्छतु ॥ १ ॥
एन्येका॒ श्येन्येका॑ कृ॒ष्णैका॒ रोहि॑णी॒ द्वे । सर्वा॑सामग्र॒भं नामावी॑रघ्नी॒रपे॑-
तन ॥ २ ॥
अ॒सूति॑का रामाय॒ण्य॑प॒चित् प्र प॑तिष्यति । ग्लौरि॒तः प्र प॑तिष्यति॒ स
ग॑लु॒न्तो न॑शिष्यति ॥ ३ ॥
वी॒हि स्वामाहु॑तिं जुषा॒णो मन॑सा॒ स्वाहा॒ मन॑सा॒ यदि॒दं जु॒होमि॑ ॥ ४ ॥
[९।१]

सूक्त ८४

ऋषिः—**भगः** ।। देवता—**निर्ऋतिः** ।। छन्दः—१ **भुरिग् जगती; त्रिपदाऽऽर्ची बृहती;** ३ **जगती;** ४ **भुरिग् त्रिष्टुप्;** ।। मन्त्र ४ ।

यस्या॑स्त आ॒सनि॑ घो॒रे जु॒होम्ये॒षां ब॒द्धाना॑मव॒सर्ज॑नाय॒ कम् । भूमि॒रिति॑
त्वाभि॒प्रम॑न्वते॒ जना॒ निर्ऋ॑ति॒रिति॑ त्वा॒हं परि॑ वेद स॒र्वत॑ः ॥ १ ॥
भूते॑ ह॒विष्म॑ती भवै॒ष ते॑ भा॒गो यो अ॒स्मासु॑ । मु॒ञ्चेमान॒मूनेन॑स॒ः
स्वाहा॑ ॥ २ ॥

एवो ष्व१स्मन्निर्ऋतेऽनेहा त्वमयस्मयान् वि चृता बन्धपाशान् । यमो
मह्यं पुनरित् त्वां ददाति तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे ॥ ३ ॥
अयस्मये द्रुपदे बेधिष इहाभिहितो मृत्युभिर्ये सहस्रम् । यमेन त्वं
पितृभिः संविदान उत्तमं नाकमधि रोहयेमम् ॥ ४ ॥ [६।२]

सूक्त ८५

ऋषिः—अथर्वा (यक्ष्मनाशनकामः) ।। देवता—वनस्पतिः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।।
मंत्र ३ ।

वरणो वारयाता अयं देवो वनस्पतिः । यक्ष्मा यो अस्मिन्नाविष्टस्तमु
देवा अवीवरन् ॥ १ ॥
इन्द्रस्य वचसा वयं मित्रस्य वरुणस्य च । देवानां सर्वेषां वाचा यक्ष्मं
ते वारयामहे ॥ २ ॥
यथा वृत्र इमा आपस्तस्तम्भ विश्वधा यतीः । एवा ते अग्निना यक्ष्मं
वैश्वानरेण वारये ॥ ३ ॥ [६।३]

सूक्त ८६

ऋषिः—अथर्वा (वृषकाम.) ।। देवता—एकवृषः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र ३ ।

वृषेन्द्रस्य वृषा दिवो वृषा पृथिव्या अयम् । वृषा विश्वस्य भूतस्य
त्वमेकवृषो भव ॥ १ ॥
समुद्र ईशे स्रवतामग्निः पृथिव्या वशी । चन्द्रमा नक्षत्राणामीशे
त्वमेकवृषो भव ॥ २ ॥
सम्राडस्यसुराणां ककुन्मनुष्याणाम् । देवानामर्धभागसि त्वमेकवृषो
भव ॥ ३ ॥ [६।४]

सूक्त ८७

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—ध्रुवः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

आ त्वा॑हार्षम॒न्तर॑भूर्ध्रु॒वस्ति॒ष्ठावि॑चाचलत् । विश॑स्त्वा॒ सर्वा॑ वाञ्छन्तु॒ मा त्वद्रा॒ष्ट्रमधि॑ अशत ॥ १ ॥
इ॒हैवैधि॒ माप॑ च्योष्ठा॒ः पर्व॑त इ॒वावि॑चाचलत् । इन्द्र॒ इ॒वेह ध्रु॒वस्ति॑ष्ठे॒ह रा॒ष्ट्रमु॑ धारय ॥ २ ॥
इन्द्र॑ ए॒तम॑दीधरद् ध्रु॒वं ध्रु॒वेण॑ ह॒विषा॑ । तस्मै॒ सोमो॒ अधि॑ ब्रवद॒यं च॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॑ः ॥ ३ ॥ [६।५]

सूक्त ८८

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—ध्रुवः ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

ध्रु॒वा द्यौर्ध्रु॒वा पृ॑थि॒वी ध्रु॒वं विश्व॑मि॒दं जग॑त् । ध्रु॒वास॒ः पर्व॑ता इ॒मे ध्रु॒वो राजा॑ वि॒शाम॒यम् ॥ १ ॥
ध्रु॒वं ते॒ राजा॒ वरु॑णो ध्रु॒वं दे॒वो बृह॒स्पति॑ः । ध्रु॒वं त॒ इन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॑ रा॒ष्ट्रं धा॑रयतां ध्रु॒वम् ॥ २ ॥
ध्रु॒वोऽच्यु॑त॒ः प्र मृ॑णोहि॒ शत्रू॑ञ्छत्रूय॒तोऽध॑रान् पादयस्व । सर्वा॒ दिश॒ः संम॑नसः स॒ध्रीचीर्ध्रु॒वाय॑ ते॒ समि॑तिः कल्पतामि॒ह ॥ ३ ॥ [६।६]

सूक्त ८९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

इ॒दं यत्प्रे॒ण्यः शिरो॑ द॒त्तं सोमे॑न॒ वृष्ण्य॑म् । तत॒ः परि॒ प्रजा॑तेन॒ हार्दि॑ ते शोचयामसि ॥ १ ॥
शो॒चया॑मसि ते॒ हार्दिं॑ शो॒चया॑मसि ते॒ मन॑ः । वातं॑ धू॒म इ॑व स॒ध्र्य॑१॒ङ् मामे॒वान्वे॑तु ते॒ मन॑ः ॥ २ ॥

मह्यं त्वा मित्रावरुणौ मह्यं देवी सरस्वती । मह्यं त्वा मध्यं भूम्या उभावन्तौ समस्यताम् ॥ ३ ॥ [९।७]

सूक्त ९०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—रुद्रः ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ आर्ची भुरिगुष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

यां ते रुद्र इषुमास्यदङ्गेभ्यो हृदयाय च । इदं तामद्य त्वद् वयं विषूचीं वि वृहामसि ॥ १ ॥

यास्ते शतं धमनयोऽङ्गान्यनु विष्ठिताः । तासां ते सर्वासां वयं निर्विषाणि ह्वयामसि ॥ २ ॥

नमस्ते रुद्रास्यते नमः प्रतिहितायै । नमो विसृज्यमानायै नमो निपतितायै ॥ ३ ॥ [९।८]

सूक्त ९१

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—१, २ यक्ष्मनाशनम्; ३ आपः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

इमं यवमष्टायोगैः षड्योगेभिरचर्कृषुः । तेना ते तन्वो३ रपोऽपाचीनमप व्यये ॥ १ ॥

न्यग् वातो वाति न्यक् तपति सूर्यः । नीचीनमघ्न्या दुहे न्यग् भवतु ते रपः ॥ २ ॥

आप इद् वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः । आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥ ३ ॥ [९।९]

सूक्त ९२

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वाजी ॥ छन्दः—१ जगती; २, ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

वात॑रंहा भव वाजिन् यु॒ज्यमा॑न॒ इन्द्र॑स्य याहि प्रस॒वे मनो॑जवाः ।
यु॒ञ्जन्तु॑ त्वा म॒रुतो॑ वि॒श्ववे॑दस॒ आ ते॒ त्वष्टा॑ प॒त्सु ज॒वं द॑धातु ॥ १ ॥
ज॒वस्ते॑ अर्व॒न् निहि॑तो॒ गुहा॒ यः श्ये॒ने वात॑ उ॒त योऽच॑र॒त् परी॑त्तः ।
तेन॒ त्वं वा॑जि॒न् बल॑वा॒न् बले॑ना॒जिं जय॒ सम॑ने पारयि॒ष्णुः ॥ २ ॥
त॒नूष्टे॑ वाजिन् त॒न्वं॑१॒ नय॑न्ती वा॒मम॒स्मभ्यं॒ धाव॑तु॒ शर्म॒ तुभ्य॑म् ।
अह्रु॑तो म॒हो ध॒रुणा॑य दे॒वो दि॒वी᳚व॒ ज्योति॒ः स्वमा मि॑मीयात् ॥ ३ ॥
[६।१०]

सूक्त ६३

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—यमादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

य॒मो मृ॒त्युर॑घमा॒रो निर्ऋ॑थो ब॒भ्रुः श॒र्वोऽस्ता॒ नील॑शिखण्डः । दे॒व॒ज॒नाः
सेन॑योत्तस्थि॒वांस॒स्ते अ॒स्माकं॒ परि॑ वृञ्जन्तु वी॒रान् ॥ १ ॥
मन॑सा॒ हो॒मैर्हर॑सा घृ॒तेन॑ श॒र्वाया॑स्त्र उ॒त राज्ञे॑ भ॒वाय॑ । न॒म॒स्ये᳚भ्यो॒ नम॑
एभ्यः कृणोम्य॒न्यत्रा॒स्मद॒घविषा नयन्तु ॥ २ ॥
त्राय॑ध्वं नो अ॒घविषाभ्यो व॒धाद् विश्वे॑ देवा मरुतो विश्ववेदसः ।
अ॒ग्नीषो॒मा॑ वरु॑णः पू॒तद॑क्षा वातापर्ज॒न्ययोः॑ सुम॒तौ स्या॑म ॥३॥ [१०।१]

सूक्त ६४

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—सरस्वती ॥ छन्दः—१, ३ अनुष्टुप्; २ विराड्जगती ॥ मन्त्र ३ ।

सं वो॒ मना॑सि॒ सं व्र॒ता समाकू॑तीर्नमामसि । अ॒मी ये विव्र॑ता॒ स्थन॒
तान् व॒ः सं न॑मयामसि ॥ १ ॥
अ॒हं गृ॑भ्णामि॒ मन॑सा॒ मना॑सि॒ मम॑ चि॒त्तमनु॑ चि॒त्तेभि॒रेत॑ । म॒म वशे॑षु॒
हृद॑यानि वः कृणोमि॒ मम॑ या॒तमनु॑वर्त्मान॒ एत॑ ॥ २ ॥

ओते॑ मे॒ द्यावा॑पृथि॒वी ओता॑ दे॒वी सर॑स्वती । ओतौ॑ म॒ इन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॒र्ध्या॑स्मे॒दं सर॑स्वति ॥ ३ ॥ [१०१२]

सूक्त ९५

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—वनस्पतिः (कुष्ठः) ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒श्व॒त्थो दे॑व॒सद॑नस्तृ॒तीय॑स्यामि॒तो दि॒वि । तत्रा॒मृत॑स्य॒ चक्ष॑णं दे॒वाः कुष्ठ॑मवन्वत ॥ १ ॥

हि॒र॒ण्ययी॒ नौर॑चर॒द्धिर॑ण्यबन्धना दि॒वि । तत्रा॒मृत॑स्य॒ पुष्पँ॑ दे॒वाः कुष्ठ॑मवन्वत ॥ २ ॥

गर्भो॑ अ॒स्योष॑धीनां॒ गर्भो॑ हि॒मव॑तामु॒त । गर्भो॑ विश्व॑स्य भू॒तस्ये॒मं मे॑ अग॒दं कृ॑धि ॥ ३ ॥ [१०१३]

सूक्त ९६

ऋषिः—भृग्वंगिराः ॥ देवता—१, २ वनस्पतिः; सोमः ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ विराण्नामगायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

या ओष॑धयः॒ सोम॑राज्ञीर्ब॒ह्वीः श॒तवि॑चक्षणाः । बृह॒स्पति॑प्रसूता॒स्ता नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १ ॥

मु॒ञ्चन्तु॑ मा शप॒थ्या॒३॒॑दथो॑ वरु॒ण्या॑दु॒त । अथो॑ य॒मस्य॒ पड्वी॑शा॒द् विश्व॑स्माद् देवकिल्बि॒षात् ॥ २ ॥

यच्चक्षु॑षा॒ मन॑सा॒ यच्च॑ वा॒चोपा॑रि॒म जाग्र॑तो॒ यत् स्व॒पन्तः॑ । सोम॒स्तानि॑ स्व॒धया॑ नः पुनातु ॥ ३ ॥ [१०१३]

सूक्त ९७

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१, ३ देवः; मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ जगती; ३ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒भि॒भूर्य॒ज्ञो अ॑भि॒भूर॒ग्निर॑भि॒भूः सोमो॑ अ॒भि॒भूरिन्द्रः॑ । अ॒भ्य१॒हं विश्वाः॒
पृत॑ना॒ यथासा॑न्ये॒वा वि॑धेमा॒ग्निहो॑त्रा इ॒दं ह॒विः ॥ १ ॥
स्व॒धास्तु॑ मित्रावरुणा विपश्चिता प्र॒जाव॑त् क्ष॒त्रं मधु॑ने॒ह पि॑न्वतम् ।
बाधे॑थां दू॒रं निरृ॑तिं परा॒चैः कृ॒तं चि॒देनः॒ प्र मु॑मुक्तम॒स्मत् ॥ २ ॥
इ॒मं वी॒रमनु॑ हर्षध्वमु॒ग्रमिन्द्रं॑ सखायो॒ अनु॒ सं र॑भध्वम् । ग्रा॒म॒जितं॑
गो॒जितं॒ वज्र॑बाहुं॒ जय॑न्त॒मज्म॑ प्रमृ॒णन्त॒मोज॑सा ॥ ३ ॥ [१०१५]

सूक्त ९८

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, ३ त्रिष्टुप्; २ बृहतीगर्भास्तार-पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ३ ।

इन्द्रो॑ जयाति॒ न परा॑ जयाता अधिरा॒जो राज॑सु राजयातै । च॒र्कृत्य॒
ईड्यो॒ वन्द्य॑श्चोप॒सद्यो॑ नम॒स्यो॑ऽ भवे॒ह ॥ १ ॥
त्वमि॑न्द्राधिरा॒जः श्र॑व॒स्युस्त्व भू॒रभिभू॑ति॒र्जना॑नाम् । त्वं दै॒वीर्विश॑ इ॒मा
वि रा॒जायु॑ष्मत् क्ष॒त्रम॒जरं॑ ते अस्तु ॥ २ ॥
प्राच्या॑ दि॒शस्त्वमि॑न्द्रासि॒ रा॒जोतोदी॑च्या दि॒शो वृ॑त्रहञ्छत्रु॒हो॑ऽसि ।
यत्र॒ यन्ति॑ स्रो॒त्यास्तज्जि॒तं ते॑ दक्षिण॒तो वृ॑ष॒भ ए॑षि॒ हव्यः॑ ॥ ३ ॥
[१०१६]

सूक्त ९९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१, २ इन्द्रः; ३ इन्द्रः; सोमः; सविता च ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ भुरिग् बृहती ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒भि त्वे॑न्द्र॒ वरि॑मतः पु॒रा त्वा॑हूर॒णाद्धु॑वे । ह्वया॑म्यु॒ग्रं चे॒त्तारं॑ पु॒रुणा॑-
मानमेक॒जम् ॥ १ ॥

यो अ॒द्य सेन्यो॑ व॒धो जिघां॑सन् न उ॒दीर॑ते । इन्द्र॑स्य॒ तत्र॑ बा॒हू स॑म॒न्तं परि॑ दद्मः ॥ २ ॥

परि॑ दद्म॒ इन्द्र॑स्य बा॒हू स॑म॒न्तं त्रा॒तुस्त्राय॑तां नः । देव॑ सवि॒तः सोम॑ राजन्त्सु॒मन॑सं मा कृणु स्व॒स्तये॑ ॥ ३ ॥ [१०१७]

सूक्त १००

ऋषिः—गरुत्मान् ।। देवता—वनस्पतिः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र ३ ।

दे॒वा अ॑दुः सूर्यो॑ अदा॒द् द्यौर॑दात् पृथि॒व्य॑दात् । ति॒स्रः सर॑स्वतीरदु॒ः सचि॑त्ता विष॒दूष॑णम् ॥ १ ॥

यद् वो॑ दे॒वा उ॑पजीका आसि॑ञ्च॒न् धन्व॑न्युद॒कम् । तेन॑ दे॒वप्र॑सूतेने॒दं दू॑षयता वि॒षम् ॥ २ ॥

असु॑राणां दुहि॒तासि॒ सा दे॒वाना॑मसि॒ स्वसा॑ । दि॒वस्पृ॑थि॒व्याः संभू॑ता॒ सा च॑कर्थार॒सं वि॒षम् ॥ ३ ॥ [१०१८]

सूक्त १०१

ऋषिः—अथर्वाङ्गिरः ।। देवता—ब्रह्मणस्पतिः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र ३ ।

आ वृ॑षायस्व श्वसि॒हि वर्ध॑स्व प्र॒थय॑स्व च । य॒थाङ्गं॑ वर्ध॑ता॒ं शेप॒स्तेन॑ यो॒षित॒मिज्ज॑हि ॥ १ ॥

येन॑ कृ॒शं वा॒जय॑न्ति॒ येन॑ हि॒न्वन्त्यातु॑रम् । तेना॒स्य ब्रह्मणस्पते॒ धनु॑रि॒वा ता॑नया॒ पस॑ः ॥ २ ॥

आहं त॑नोमि॒ ते पसो॒ अधि॒ ज्यामि॑व॒ धन्व॑नि । क्रम॒स्वर्श॑ इव॒ रोहि॒तमन॑वग्लायता॒ सदा॑ ॥ ३ ॥] [१०१९]

सूक्त १०२

ऋषिः—**जमदग्निः** ॥ देवता—**अश्विनौ** ॥ छन्दः—**अनुष्टुप्** ॥ मन्त्र ३ ।

यथा॒यं वा॒हो अ॑श्विना स॒मैति॒ सं च॒ वर्त॑ते । ए॒वा माम॒भि ते॒ मन॑ः
स॒मैतु॒ सं च॑ वर्तताम् ॥ १ ॥

आहं खि॑दामि ते॒ मनो॑ राजा॒श्वः पृ॒ष्ट्यामिव । रे॒ष्मच्छि॑न्नं यथा॒ तृण॒ं
मयि॑ ते वेष्ट॒तां॑ मन॑ः ॥ २ ॥

आ॒ञ्ज॑नस्य म॒दुघ॑स्य॒ कुष्ठ॑स्य॒ नल॑दस्य च । तु॒रो भग॑स्य॒ हस्ता॑भ्यामनु॒-
रोध॑न॒मुद्ध॑रे ॥ ३ ॥ [१०।१०]

सूक्त १०३

ऋषिः—**उच्छोचनः** ॥ देवता—**बृहस्पत्यादयो मन्त्रोक्ताः** ॥ छन्दः—**अनुष्टुप्** ॥
मंत्र ३ ।

सं॒दानं॑ वो॒ बृह॒स्पतिः॑ सं॒दानं॑ सवि॒ता क॑रत् । सं॒दानं॑ मि॒त्रो अ॑र्य॒मा
सं॒दानं॑ भगो॑ अ॒श्विना॑ ॥ १ ॥

सं प॑र॒मान्त्सम॑व॒मानथो॒ सं द्या॑मि मध्य॒मान् । इन्द्र॒स्तान् पर्य॑हा॒र्दाम्ना॒
तान॑ग्ने॒ सं द्या॒ त्वम् ॥ २ ॥

अ॒मी ये युध॑मा॒यन्ति॑ के॒तून् कृ॒त्वानी॑क॒शः । इन्द्र॒स्तान् पर्य॑हा॒र्दाम्ना॒
तान॑ग्ने॒ सं द्या॒ त्वम् ॥ ३ ॥ [११।१]

सूक्त १०४

ऋषिः—**प्रशोचनः** ॥ देवता—**१, २ इन्द्राग्नी; ३ इन्द्राग्नी, सोमः, इन्द्रश्च;** ॥ छन्दः
—**अनुष्टुप्** ॥ मन्त्र ३ ।

आ॒दाने॑न सं॒दाने॑ना॒मित्रा॒ना द्या॑मसि । अ॒पाना ये चै॑षां प्रा॒णा असु॒ना-
सू॒न्त्सम॑च्छिदन् ॥ १ ॥

इ॒दमा॒दान॑मकरं॒ त॒पसेन्द्रे॑ण॒ संशि॑तम्। अ॒मित्रा॒ ये॑ऽत्र॑ न॒ः सन्ति॒ तान॑ग्न॒
आ द्या॒ त्वम्॥ २॥
ऐना॑न् द्यतामिन्द्रा॒ग्नी सोमो॒ राजा॑ च मे॒दिनौ॑। इन्द्रो॑ म॒रुत्वा॑ना॒दान॑म॒-
मि॒त्रेभ्यः कृणोत नः॥ ३॥ [११।२]

सूक्त १०५

ऋषिः— उन्मोचनः॥ देवता— कासा॥ छन्दः—अनुष्टुप्॥ मन्त्र ३।

यथा॒ मनो॑ मनस्के॒तैः प॑रा॒पत॑त्याशु॒मत्। ए॒वा त्वं का॑से॒ प्र प॑त॒
मन॒सोऽनु॑ प्रवा॒य्य॑म्॥ १॥
यथा॒ बाण॒ सुसँ॑शितः परा॒पत॑त्याशु॒मत्। ए॒वा त्वं का॑से॒ प्र प॑त पृथि॒व्या
अनु॑ सं॒वत॑म्॥ २॥
यथा॒ सूर्य॑स्य र॒श्मय॑ः परा॒पत॑न्त्याशु॒मत्। ए॒वा त्वं का॑से॒ प्र प॑त
समु॒द्रस्यानु॑ विक्ष॒रम्॥ ३॥ [११।३]

सूक्त १०६

ऋषिः—प्रमोचनः॥ देवता – दूर्वा, शाला॥ छन्दः—अनुष्टुप्॥ मंत्र ३।

आय॑ने ते प॒राय॑णे॒ दूर्वा॑ रोहतु पु॒ष्पिणी॑। उत्सो॑ वा॒ तत्र॒ जाय॑तां ह्र॒दो
वा॑ पु॒ण्डरी॑कवान्॥ १॥
अ॒पामि॒दं न्यय॑नं समु॒द्रस्य॑ नि॒वेश॑नम्। मध्ये॑ ह्र॒दस्य॑ नो गृ॒हाः प॑रा॒-
चीना॒ मुखा॑ कृधि॥ २॥
हि॒मस्य॑ त्वा ज॒रायु॑णा॒ शाले॒ परि॑ व्ययामसि। शी॒तह्र॑दा॒ हि नो॒
भु॒वो॒ऽग्निष्कृ॑णोतु भेष॒जम्॥ ३॥ [११।४]

सूक्त १०७

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—विश्वजित् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

विश्वजित् त्रायमाणायै मा परि देहि । त्रायमाणे द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष
चतुष्पाद् यच्च नः स्वम् ॥ १ ॥
त्रायमाणे विश्वजिते मा परि देहि । विश्वजिद् द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष
चतुष्पाद् यच्च नः स्वम् ॥ २ ॥
विश्वजित् कल्याण्यै मा परि देहि । कल्याणि द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष
चतुष्पाद् यच्च नः स्वम् ॥ ३ ॥
कल्याणि सर्वविदे मा परि देहि । सर्वविद् द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष
चतुष्पाद् यच्च नः स्वम् ॥ ४ ॥ [११५]

सूक्त १०८

ऋषिः—शौनकः ॥ देवता—१—३, ५ मेधा; ४ अग्निः ॥ छन्दः—१, ४, ५ अनुष्टुप्; २ उरोबृहती; ३ पथ्या बृहती ॥ मंत्र ५ ।

त्वं नो मेधे प्रथमा गोभिरश्वेभिरा गहि । त्वं सूर्यस्य रश्मिभिस्त्वं नो
असि यज्ञिया ॥ १ ॥
मेधामहं प्रथमां ब्रह्मण्वतीं ब्रह्मजूतामृषिष्टुताम् । प्रपीतां ब्रह्मचारिभि
र्देवानामवसे हुवे ॥ २ ॥
यां मेधामृभवो विदुर्यां मेधामसुरा विदुः । ऋषयो भद्रां मेधां यां
विदुस्तां मय्या वेशयामसि ॥ ३ ॥
यामृषयो भूतकृतो मेधां मेधाविनो विदुः । तया मामद्य मेधयाग्ने
मेधाविनं कृणु ॥ ४ ॥

मेधां सायं मेधां प्रातर्मेधां मध्यन्दिनं परि । मेधां सूर्यस्य रश्मिभिर्वचसा वेशयामहे ॥ ५ ॥ [१११६]

सूक्त १०९

ऋषिः — अथर्वा ॥ देवता — पिप्पली ॥ छन्दः — अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

पिप्पली क्षिप्तभेषज्यु३तातिविद्धभेषजी । तां देवाः समकल्पयन्नियं जीवितवा अलम् ॥ १ ॥

पिप्पल्यः समवदन्तायतीर्जननादधि । यं जीवमश्नवामहै न स रिष्याति पूरुषः ॥ २ ॥

असुरास्त्वा न्यखनन् देवास्त्वोदवपन् पुनः । वातीकृतस्य भेषजीमथो क्षिप्तस्य भेषजीम् ॥ ३ ॥ [१११७]

सूक्त ११०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ पङ्क्तिः; २, ३ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

प्रत्नो हि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच्च होता नव्यश्च सत्सि । स्वां चाग्ने तन्वं पिप्रायस्वास्मभ्यं च सौभगमा यजस्व ॥ १ ॥

ज्येष्ठघ्न्यां जातो विचृतोर्यमस्य मूलबर्हणात् परि पाह्येनम् । अत्येनं नेषद् दुरितानि विश्वा दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥ २ ॥

व्याघ्रेऽह्न्यजनिष्ट वीरो नक्षत्रजा जायमानः सुवीरः । स मा वधीत् पितरं वर्धमानो मा मातरं प्र मिनीज्जनित्रीम् ॥ ३ ॥ [१११८]

सूक्त १११

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ परानुष्टुप् त्रिष्टुप् २—४ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

इ॒मं मे॑ अग्ने॒ पुरु॑षं मुमुग्ध्य॒यं यो ब॒द्धः सुय॑तो॒ लाल॑पीति । अतोऽधि॑
ते कृणवद् भाग॒धेयं॑ य॒दानु॑न्मा॑दि॒तोऽस॑ति ॥ १ ॥
अ॒ग्निष्टे॒ नि श॑मयतु॒ यदि॑ ते॒ मन॒ उद्यु॑तम् । कृ॒णोमि॑ वि॒द्वान् भे॑ष॒जं
यथानु॑न्मदि॒तोऽस॑सि ॥ २ ॥
दे॒वै॒न॒सादुन्म॑दित॒मुन्म॑त्तं॒ रक्ष॑स॒स्परि॑ । कृ॒णोमि॑ वि॒द्वान् भे॑ष॒जं य॒दानु॑न्म-
दि॒तोऽस॑ति ॥ ३ ॥
पुन॑स्त्वा दुरप्स॒रसः॒ पुन॒रिन्द्रः॒ पुन॒र्भगः॑ । पुन॑स्त्वा दु॒र्विश्वे॑ दे॒वा
यथानु॑न्मदि॒तोऽस॑सि ॥ ४ ॥ [११।६]

सूक्त ११२

ऋषिः — अथर्वा ॥ देवता — अग्निः ॥ छन्दः त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

मा ज्ये॒ष्ठं व॑धीद॒यम॑ग्न ए॒षां मू॑ल॒बर्ह॑णा॒त् परि॑ पाह्येनम् । स ग्राह्याः
पाशा॒न् वि चृ॑त प्रजा॒नन् तुभ्यं॑ दे॒वा अनु॑ जानन्तु॒ विश्वे॑ ॥ १ ॥
उन्मु॑ञ्च॒ पाशा॒ंस्त्वम॑ग्न ए॒षां त्रय॑स्त्रि॒भिरुत्सि॑ता॒ येभि॒रास॑न् । स ग्राह्या॒ः
पाशा॒न् वि चृ॑त प्रजा॒नन् पि॑तापु॒त्रौ मा॒तरं॑ मुञ्च॒ सर्वा॑न् ॥ २ ॥
येभिः॒ पाशैः॒ परि॑वित्तो॒ विब॒द्धोऽङ्गे॑अङ्ग॒ आर्पि॑त॒ उत्सि॑तश्च । वि ते मु॑च्यन्तां
वि॒मुचो॒ हि सन्ति॑ भ्रूण॒घ्नि पू॑षन् दुरि॒तानि॑ मृक्ष्व ॥ ३ ॥ [११।१०]

सूक्त ११३

ऋषिः - अथर्वा ॥ देवता—पूषा ॥ छन्दः—१, २ त्रिष्टुप्; ३ पङ्क्तिः ॥ मंत्र ३ ।

त्रि॒ते दे॒वा अ॑मृजतै॒तदेन॑स्त्रि॒त ए॑नन्मनु॒ष्ये॑षु ममृजे । त॒तो यदि॑ त्वा॒
ग्राहि॑रान॒शे तां ते॑ दे॒वा ब्रह्म॑णा नाशयन्तु ॥ १ ॥
मरी॑चीर्धू॒मान् प्र वि॒शानु॑ पाप्मन्नुदा॒रान् गच्छो॒त वा॑ नीहा॒रान् ।
न॒दीनां॑ फेना॒ँ अनु॒ तान् वि न॑श्य भ्रूण॒घ्नि पू॑षन् दुरि॒तानि॑ मृक्ष्व ॥२॥

द्वादशधा निहितं त्रितस्यापमृष्टं मनुष्यैनसानि। ततो यदि त्वा
ग्राहिरानशे तां ते देवा ब्रह्मणा नाशयन्तु ॥ ३ ॥ [११।११]

सूक्त ११४

ऋषिः—ब्रह्मा—देवता—विश्वे देवाः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मंत्र ३ ।

यद् देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मान्नो
यूयमृतस्यर्तेन मुञ्चत ॥ १ ॥
ऋतस्यर्तेनादित्या यजत्रा मुञ्चतेह नः। यज्ञं यद् यज्ञवाहसः शिक्षन्तो
नोपशेकिम ॥ २ ॥
मेदस्वता यजमानाः स्रुचाज्यानि जुह्वतः। अकामा विश्वे वो देवाः
शिक्षन्तो नोप शेकिम ॥ ३ ॥ [१२।१]

सूक्त ११५

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता विश्वे देवाः छन्दः अनुष्टुप् ।। मंत्र ३ ।

यद् विद्वांसो यदविद्वांस एनांसि चकृमा वयम्। यूयं नस्तस्मान्मुञ्चत
विश्वे देवाः सजोषसः ॥ १ ॥
यदि जाग्रद् यदि स्वपन्नेन एनस्योऽकरम्। भूतं मा तस्माद् भव्यं च
द्रुपदादिव मुञ्चताम् ॥ २ ॥
द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नात्वा मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाज्यं
विश्वे शुम्भन्तु मैनसः ॥ ३ ॥ [१२।२]

सूक्त ११६

ऋषिः—जाटिकायनः ।। देवता— विवस्वान् ।। छन्दः— १, ३ जगती; २ त्रिष्टुप् ।।
मत्र ३ ।

यद् यामं चक्रुर्निखनन्तो अग्रे कार्षीवणा अन्नविदो न विद्यया।
वैवस्वते राजनि तज्जुहोम्यथ यज्ञियं मधुमदस्तु नोऽन्नम् ॥ १ ॥

वै॒व॒स्व॒तः कृ॑णवद् भाग॒धेयं॒ मधु॑भागो॒ मधु॑ना॒ सं सृ॑जाति । मा॒तुर्यदेन॑
इ॒षि॒तं न॒ आग॒न् यद् वा॑ पि॒ताप॑राद्धो जिही॒डे ॥ २ ॥
यदी॒दं॑ मा॒तुर्यदि॑ वा पि॒तुर्नः॒ परि॒ भ्रातुः॑ पु॒त्राच्चेत॑स॒ एन॒ आग॑न् ।
याव॑न्तो अ॒स्मान् पि॒तरः॒ सच॑न्ते॒ तेषां॒ सर्वे᳚षां शि॒वो अ॑स्तु म॒न्युः ॥३॥
[१२।३]

सूक्त ११७

ऋषिः—कौशिकः (अनृणकामः) ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

अ॒प॒मि॒त्य॒मप्र॑तीत्तं॒ यदस्मि॑ य॒मस्य॒ येन॑ ब॒लिना॒ चरा॑मि । इ॒दं तद॑ग्ने
अनृ॒णो भ॑वामि॒ त्वं पाशा॑न् वि॒चृतं᳚ वेत्थ॒ सर्वा॑न् ॥ १ ॥
इ॒हैव॑ सन्तः॒ प्रति॑ दद्म एनज्जी॒वा जी॒वेभ्यो॒ नि ह॑राम एनत् । अ॒प॒मित्यं॑
धा॒न्यं॑१॒ यज्ज॒घसा॒हमि॒दं तद॑ग्ने अनृ॒णो भ॑वामि ॥ २ ॥
अ॒नृ॒णा अ॒स्मिन्न॑नृ॒णाः पर॑स्मिन् तृ॒तीये᳚ लो॒के अ॑नृ॒णाः स्या॑म । ये
दे॑व॒याना॑ः पितृ॒याणा॑श्च लो॒काः सर्वा॑न् प॒थो अ॑नृ॒णा आ क्षि॑येम ॥३॥
[१२।४]

सूक्त ११८

ऋषिः—कौशिकः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

यद्धस्ता॑भ्यां चकृ॒म किल्बि॑षाण्य॒क्षाणां᳚ ग॒त्नुमु॑प॒लिप्स॑मानाः । उ॒ग्रं॑प॒श्ये
उ॑ग्र॒जितौ॒ तद॒द्याप्स॒रसा॒वनु॑ दत्तामृ॒णं न॑ः ॥ १ ॥
उग्रं᳚पश्ये॒ राष्ट्र॑भृ॒त् किल्बि॑षाणि॒ यद॒क्षवृ॑त्त॒मनु॑ दत्तं न ए॒तत् । ऋ॒णान्नो॒
नर्ण᳚मेत्स᳚मानो य॒मस्य॑ लो॒के॑ अधि॑रज्जु॒राय॑त् ॥ २ ॥
यस्मा॑ ऋ॒णं यस्य॑ जा॒याम॒ुपै॑मि॒ यं याच॑मानो अ॒भ्यैमि᳚ देवाः । ते
वाचं᳚ वादिषु॒र्मो॑त्त॑रां मद्दे॑वपत्नी॒ अप्स॑रसा॒वधी॑तम् ॥ ३ ॥ [१२।५]

सूक्त ११९

ऋषिः—कौशिकः ॥ देवता—वैश्वानरोऽग्निः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

यद्दी॑व्यन्नृ॒णम॒हं कृ॒णोम्यदा॑स्यन्नग्न उ॒त सँ॑गृ॒णामि॑ । वै॒श्वा॒न॒रो नो॑
अधि॒पा वसि॑ष्ठ॒ उदिन्न॑याति सुकृ॒तस्य॑ लो॒कम् ॥ १ ॥
वै॒श्वा॒न॒राय॒ प्रति॑ वेदयामि॒ यद्यृ॒णं सँ॑ग॒रो दे॒वता॑सु । स ए॒तान् पाशा॑न्
वि॒चृतँ॑ वेद॒ सर्वा॒नथ॑ प॒क्वेन॑ स॒ह सं भ॑वेम ॥ २ ॥
वै॒श्वा॒न॒रः प॑वि॒ता मा॑ पुनातु॒ यत् सँ॑ग॒रम॑भि॒धावा॑म्या॒शाम् । अना॑जान॒न्
मन॑सा॒ याच॑मानो॒ यत् तत्रै॑नो॒ अप॒ तत् सु॑वामि ॥ ३ ॥ [१२।६]

सूक्त १२०

ऋषिः—कौशिकः ॥ देवता—अन्तरिक्षादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ जगती;
२ पङ्क्तिः; ३ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

यद॒न्तरि॑क्षं पृथि॒वीमु॒त द्यां यन्मा॒तरँ॑ पि॒तरँ॑ वा जिहिंसि॒म । अ॒यं तस्मा॒द्
गार्ह॑पत्यो नो अ॒ग्निरुदिन्न॑याति सुकृ॒तस्य॑ लो॒कम् ॥ १ ॥
भूमि॑र्मा॒तादि॑तिर्नो ज॒नित्रं॒ भ्रा॒तान्तरि॑क्षम॒भिश॑स्त्या नः । द्यौर्नः॑ पि॒ता
पि॒त्र्याच्छं भ॑वाति जा॒मिमृ॒त्वा माव॑ पत्सि लो॒कात् ॥ २ ॥
यत्रा॑ सु॒हार्दः॑ सु॒कृतो॒ मद॑न्ति वि॒हाय॒ रोगँ॑ त॒न्व॒ः स्वायाः॑ । अश्लो॑णा॒
अङ्गै॒रह्रु॑ताः स्व॒र्गे तत्र॑ पश्येम पि॒तरौ॑ च पु॒त्रान् ॥ ३ ॥ [१२।७]

सूक्त १२१

ऋषिः—कौशिकः ॥ देवता—अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः १, २ त्रिष्टुप् ३, ४
अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

वि॒षाणा॒ पाशा॒न् वि ष्याध्य॒स्मद् य उ॑त्त॒मा अ॑ध॒मा वा॑रु॒णा ये ।
दुः॒ष्वप्न्यँ॑ दुरि॒तं नि ष्वा॒स्मदथ॑ गच्छेम सुकृ॒तस्य॑ लो॒कम् ॥ १ ॥

यद् दारु॑णि ब॒ध्यसे॒ यच्च॒ रज्ज्वां॒ यद् भूम्यां᳚ ब॒ध्यसे॒ यच्च॑ वा॒चा ।
अ॒यं तस्मा॒द् गार्ह᳚पत्यो नो अ॒ग्निरुदि॑न्नयाति सुकृ॒तस्य॑ लो॒कम् ॥ २ ॥
उद॑गातां॒ भग॑वती वि॒चृतौ॒ नाम॒ तार॑के । प्रेहामृत॑स्य यच्छतां॒ प्रैतु॒
बद्धक॒मोच॑नम् ॥ ३ ॥
वि जि॑हीष्व लो॒कं कृ॑णु ब॒न्धान्मु॑ञ्चासि॒ बद्ध॑कम् । योन्या॑ इव॒ प्रच्यु॑तो॒
गर्भ᳚ः प॒थः सर्वा॒ँ अनु॑ क्षिय ॥ ४ ॥ [१२।८]

सूक्त १२२

ऋषिः—भृगुः ।। देवता—विश्वकर्मा ।। छन्दः—१—३ त्रिष्टुप्; ४, ५ जगती ।।
मंत्र ५ ।

ए॒तं भा॒गं परि॑ ददामि वि॒द्वान् विश्व॑कर्मन् प्रथम॒जा ऋ॒तस्य॑ ।
अ॒स्माभि॑र्द॒त्तं ज॒रसः॑ प॒रस्ता॒दच्छि॑न्नं॒ तन्तु॒मनु॒ सं त॑रेम ॥ १ ॥
त॒तं तन्तु॒मन्वेके॑ तरन्ति॒ येषां᳚ द॒त्तं पित्र्य॒माय॑नेन । अ॒ब॒न्ध्वेके॒ दद॑तः
प्र॒यच्छ॑न्तो॒ दातुं॒ चेच्छिक्षा॒न्त्स स्व॒र्ग ए॒व ॥ २ ॥
अ॒न्वार॑भेथामनु॒संर॑भेथामे॒तं लो॒कं श्र॒द्दधा॑नाः सचन्ते । यद् वां᳚ प॒क्वं
परि॑विष्टम॒ग्नौ तस्य॒ गुप्त॑ये दम्पती॒ सं श्र॑येथाम् ॥ ३ ॥
य॒ज्ञं यन्तं॒ मन॑सा बृ॒हन्त॑म॒न्वारो॑हामि॒ तप॑सा॒ सयो॑निः । उप॑हूता अग्ने
ज॒रसः॑ प॒रस्ता॑त् तृ॒तीये॒ नाके॑ सध॒मादं᳚ मदेम ॥ ४ ॥
शु॒द्धाः पू॒ता यो॒षितो॑ य॒ज्ञिया॑ इ॒मा ब्र॒ह्मणां॒ हस्ते॑षु प्रपृ॒थक् सा॑दयामि ।
यत्का॑म इ॒दम॑भिषि॒ञ्चामि॑ वो॒ऽहमिन्द्रो॑ म॒रुत्वा॒न्त्स द॑दातु॒ तन्मे॑ ॥५॥
[११।९]

सूक्त १२३

ऋषिः – भृगुः ॥ देवता विश्वे देवाः ॥ छन्दः – १, २ त्रिष्टुप्; ३ द्विपदा साम्न्यनुष्टुप्; ४ द्विपदा प्राजापत्या भुरिगनुष्टुप् (एकावसाना); ५ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

ए॒तं स॑धस्थाः॒ परि॑ वो ददामि॒ यं शे॑व॒धिमा॒वहा॑ज्जा॒तवे॑दाः । अ॒न्वा॒ग॒न्ता यज॑मानः स्व॒स्ति तं स्म॑ जानीत प॒रमे व्यो॑मन् ॥ १ ॥

जा॒नी॒त स्मै॑नं प॒रमे व्यो॑म॒न् दे॒वाः सध॑स्था वि॒द लो॒कमत्र॑ । अ॒न्वा॒ग॒न्ता यज॑मानः स्व॒स्तीष्टापू॒र्तं स्म॑ कृणुता॒विर॑स्मै ॥ २ ॥

दे॒वाः पित॑रः॒ पित॑रो॒ दे॒वाः । यो अ॒स्मि॒ सो अ॑स्मि ॥ ३ ॥

स प॑चामि॒ स द॑दामि॒ स य॑जे॒ स द॒त्तान्मा यू॑षम् ॥ ४ ॥

नाके॑ राज॒न् प्रति॑ तिष्ठ॒ तत्रै॒तत् प्रति॑ तिष्ठतु । वि॒द्धि पू॒र्तस्य॑ नो राज॒न्त्स दे॑व सु॒मना॑ भव ॥ ५ ॥　[१२ १०]

सूक्त १२४

ऋषिः – अथर्वा ॥ देवता — दिव्या आपः ॥ छन्दः — त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

दि॒वो नु मां बृ॑ह॒तो अ॒न्तरि॑क्षाद॒पां स्तो॒को अ॒भ्य॑पप्त॒द् रसे॑न । समि॑न्द्रि॒येण॒ पय॑सा॒हम॑ग्ने॒ छन्दो॑भिर्य॒ज्ञैः सु॒कृतां॑ कृ॒तेन॑ ॥ १ ॥

यदि॑ वृ॒क्षाद॒भ्यप॑प्त॒त् फ॒लं तद् य॒द्य॒न्तरि॑क्षा॒त् स उ॑ वा॒यु॒रे॒व । यत्रास्पृ॑क्षत् त॒न्वो॒३॒॑ यच्च॒ वास॑स॒ आपो॑ नुदन्तु॒ निरृ॑तिं प॒राचैः ॥ २ ॥

अ॒भ्यञ्ज॑नं सु॒र॒भि सा समृ॑द्धि॒र्हिर॑ण्यं॒ वर्च॒स्तदु॑ पू॒त्रिम॑मे॒व । सर्वा॑ प॒वित्रा॑ वित॒ताध्य॒स्मत् तन्मा ता॑री॒न्निरृ॑ति॒र्मो अरा॑तिः ॥ ३ ॥　[१२।११]

सूक्त १२५

ऋषिः — अथर्वा ॥ देवता — वनस्पतिः ॥ छन्दः-- १, ३ त्रिष्टुप्; २ जगती ॥ मंत्र ३ ।

वन॑स्पते वी॒ड्व॑ङ्गो॒ हि भू॒या अ॒स्मत्स॑खा प्र॒तर॑णः सु॒वीरः॑ । गोभि॒ः संन॑द्धो असि वी॒डय॑स्वास्था॒ता ते॑ जयतु॒ जेत्वा॑नि ॥ १ ॥

दि॒वस्पृ॑थि॒व्याः पर्योज॒ उद्भृ॑तं॒ वन॒स्पति॑भ्य॒ः पर्याभृ॑तं॒ सहः॑ । अ॒पामो॒ज्मानं॒ परि॒ गोभि॒रावृ॑त॒मिन्द्र॑स्य॒ वज्रं॑ ह॒विषा॒ रथं॑ यज ॥ २ ॥

इन्द्र॒स्यौजो॑ म॒रुता॒मनी॑कं मि॒त्रस्य॒ गर्भो॒ वरु॑णस्य॒ नाभिः॑ । स इ॒मां नो॑ ह॒व्यदा॑तिं जुषा॒णो देव॑ रथ॒ प्रति॑ ह॒व्या गृ॑भाय ॥ ३ ॥ [१३।१]

सूक्त १२६

ऋषिः—**अथर्वा** ।। देवता—**दुन्दुभिः** ।। छन्दः—**१, २ भुरिक् त्रिष्टुप्; ३ पुरोबृहतीगर्भा त्रिष्टुप्** ।। मंत्र ३ ।

उप॑ श्वासय पृथि॒वीमु॒त द्यां पु॑रु॒त्रा ते॑ वन्वतां॒ विष्ठि॑तं॒ जग॑त् । स दु॑न्दुभे स॒जूरिन्द्रे॑ण दे॒वैर्दू॒राद् द॒वीयो॒ अप॑ सेध॒ शत्रू॑न् ॥ १ ॥

आ क्र॑न्दय॒ बल॒मोजो॑ न॒ आ धा॑ अ॒भि ष्ट॑न दुरि॒ता बाध॑मानः । अप॑ सेध दुन्दुभे दु॒च्छुना॑मि॒त इन्द्र॑स्य मु॒ष्टिर॑सि वी॒डय॑स्व ॥ २ ॥

प्रामूं ज॑या॒भी॒३मे ज॑यन्तु के॒तुमद् दु॑न्दुभिर्वा॑वदीतु । सम॑श्वप॑र्णाः पतन्तु नो॒ नरो॒ऽस्माक॑मिन्द्र र॒थिनो॑ जयन्तु ॥ ३ ॥ [१३।२]

सूक्त १२७

ऋषिः—**भृग्वङ्गिराः** ।। देवता—**वनस्पतिः; यक्ष्मनाशनम्** ।। छन्दः—**१, २ अनुष्टुप्; ३ षट्पदा जगती** ।। मंत्र ३ ।

वि॒द्र॒धस्य॑ ब॒लास॑स्य॒ लोहि॑तस्य वनस्पते । वि॒सल्प॑कस्योषधे॒ मोच्छि॑षः पिशि॒तं च॒न ॥ १ ॥

यौ ते॑ बलास॒ तिष्ठ॑तः॒ कक्षे॑ मु॒ष्कावप॑श्रितौ । वेदा॒हं तस्य॑ भेष॒जं ची॒पुद्रु॑रभि॒चक्ष॑णम् ॥ २ ॥

यो अङ्ग्यो यः कर्ण्यो यो अक्ष्योर्विसल्पकः । वि बृहामो विसल्पकं विद्रधं हृदयामयम् । परा तमज्ञातं यक्ष्ममधराञ्चं सुवामसि ॥३॥[१३।३]

सूक्त १२८

ऋषिः—अङ्गिराः ॥ देवता—शकधूमः; सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

शकधूमं नक्षत्राणि यद् राजानमकुर्वत । भद्राहमस्मै प्रायच्छन्निदं राष्ट्रमसादिति ॥ १ ॥

भद्राहं नो मध्यंदिने भद्राहं सायमस्तु नः । भद्राहं नो अह्नां प्राता रात्री भद्राहमस्तु नः ॥ २ ॥

अहोरात्राभ्यां नक्षत्रेभ्यः सूर्याचन्द्रमसाभ्याम् । भद्राहमस्मभ्यं राजन्छकधूम त्वं कृधि ॥ ३ ॥

यो नो भद्राहमकरः सायं नक्तमथो दिवा । तस्मै ते नक्षत्रराज शकधूम सदा नमः ॥ ४ ॥ [१३।४]

सूक्त १२९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—भगः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

भगेन मा शांशपेन साकमिन्द्रेण मेदिना । कृणोमि भगिनं माप द्रान्त्वरातयः ॥ १ ॥

येन वृक्षाँ अभ्यभवो भगेन वर्चसा सह । तेन मा भगिनं कृण्वप द्रान्त्वरातयः ॥ २ ॥

यो अन्धो यः पुनःसरो भगो वृक्षेष्वाहितः । तेन मा भगिनं कृण्वप द्रान्त्वरातयः ॥ ३ ॥

सूक्त १३०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—स्मरः ॥ छन्दः—१ विराट् पुरस्ताद्बृहती; २—४ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

र॒थ॒जितां॑ राथजिते॒यीना॑मप्स॒रसा॑म॒यं स्म॒रः । दे॒वाः प्र हि॑णुत स्म॒रम॒सौ
मामनु॑ शोचतु ॥ १ ॥
अ॒सौ मे॑ स्मरता॒दिति॑ प्रि॒यो मे॑ स्मरता॒दिति॑ । दे॒वाः प्र हि॑णुत स्म॒रम॒सौ
मामनु॑ शोचतु ॥ २ ॥
य॒था मम॒ स्मरा॑द॒सौ नामुष्या॒हं कु॒दा च॒न । दे॒वाः प्र हि॑णुत स्म॒रम॒सौ
मामनु॑ शोचतु ॥ ३ ॥
उन्मा॑दयत मरुत॒ उद॑न्तरिक्ष मादय । अग्न॒ उन्मा॑दया॒ त्वम॒सौ मामनु॑
शोचतु ॥ ४ ॥ [१३।६]

सूक्त १३१

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—स्मरः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

नि शीर्ष॒तो नि प॑त्त॒त आ॒ध्यो॒३॒ नि ति॑रामि ते । दे॒वाः प्र हि॑णुत
स्म॒रम॒सौ मामनु॑ शोचतु ॥ १ ॥
अनु॑म॒तेऽन्वि॒दं म॑न्य॒स्वाकू॑ते॒ समि॒दं नमः॑ । दे॒वाः प्र हि॑णुत स्म॒रम॒सौ
मामनु॑ शोचतु ॥ २ ॥
यद् धाव॑सि त्रियोज॒नं प॑ञ्चयोज॒नमाश्वि॑नम् । तत॒स्त्वं पुन॒राय॑सि
पु॒त्राणां॑ नो असः पि॒ता ॥ ३ ॥ [१३।७]

सूक्त १३२

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—स्मरः ॥ छन्दः—१ त्रिपादनुष्टुप्; २, ४, ५ (महा)
बृहती; ३ भुरिगनुष्टुप् ॥ मंत्र ५ ।

यं दे॒वाः स्म॒रमसि॑ञ्चन्न॒प्स्व१॒न्तः शोशु॑चानं स॒हाध्या । तं ते॑ तपामि॒
वरु॑णस्य॒ धर्म॑णा ॥ १ ॥
यं विश्वे॑ दे॒वाः स्म॒रमसि॑ञ्चन्न॒प्स्व१॒न्तः शोशु॑चानं स॒हाध्या । तं ते॑
तपामि॒ वरु॑णस्य॒ धर्म॑णा ॥ २ ॥

यमि॑न्द्रा॒णी स्म॒रमसि॑ञ्चद॒प्स्व१॒न्तः शोशु॑चानं स॒हाध्या । तं ते॑ तपामि॒ वरु॑णस्य॒ धर्म॑णा ॥ ३ ॥

यमि॑न्द्रा॒ग्नी स्म॒रमसि॑ञ्चताम॒प्स्व१॒न्तः शोशु॑चानं स॒हाध्या । तं ते॑ तपामि॒ वरु॑णस्य॒ धर्म॑णा ॥ ४ ॥

यं मि॒त्रावरु॑णौ स्म॒रमसि॑ञ्चताम॒प्स्व१॒न्तः शोशु॑चानं स॒हाध्या । तं ते॑ तपामि॒ वरु॑णस्य॒ धर्म॑णा ॥ ५ ॥ [१३।८]

सूक्त १३३

ऋषिः—अगस्त्यः ॥ देवता मेखला ॥ छन्दः—१ भुरिक् त्रिष्टुप्; २, ५ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप्; ४ जगती ॥ मंत्र ५ ।

य इ॒मां दे॒वो मेख॑लामाब॒बन्ध॒ यः सं॑न॒नाह॒ य उ॑ नो यु॒योज॑ । यस्य॑ दे॒वस्य॑ प्र॒शिषा॒ चरा॑म॒ः स पा॒रमि॑च्छा॒त् स उ॑ नो॒ वि मु॑ञ्चात् ॥ १ ॥

आहु॑तास्य॒भिहु॑त॒ ऋषी॑णाम॒स्यायु॑धम् । पूर्वा॑ व्र॒तस्य॑ प्राश्न॒ती वी॑र॒घ्नी भ॑व मेखले ॥ २ ॥

मृ॒त्योर॒हं ब्र॑ह्मचा॒री यद॒स्मि नि॒र्याच॑न् भू॒तात् पुरु॑षं य॒माय॑ । तम॒हं ब्रह्म॑णा॒ तप॑सा॒ श्रमे॑णा॒नयै॑नं॒ मेख॑लया सिनामि ॥ ३ ॥

श्र॒द्धाया॑ दुहि॒ता तप॒सोधि॑ जा॒ता स्वस॒ ऋषी॑णां भू॒तकृ॑तां ब॒भूव॑ । सा नो॑ मेखले म॒तिमा धे॑हि मे॒धामथो॑ नो धेहि॒ तप॑ इन्द्रि॒यं च॑ ॥ ४ ॥

यां त्वा॒ पूर्वे॑ भूत॒कृत॒ ऋष॑यः परिबेधि॒रे । सा त्वं परि॑ ष्वजस्व॒ मां दी॑र्घायु॒त्वाय॑ मेखले ॥ ५ ॥ [१३।९]

सूक्त १३४

ऋषिः—शुक्रः ॥ देवता—वज्रः ॥ छन्दः—१ परानुष्टुप् त्रिष्टुप्; २ भुरिक् त्रिपदा गायत्री; ३ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

अ॒यं वज्र॑स्तर्पयतामृ॒तस्यावा॑स्य रा॒ष्ट्रमप॑ हन्तु जीवि॒तम्। शृ॒णातु॑ ग्री॒वाः
प्र शृ॑णातू॒ष्णिहा॑ वृ॒त्रस्ये॑व॒ शची॒पति॑ः ॥ १ ॥

अध॑रोऽधर॒ उत्त॑रेभ्यो गू॒ढः पृ॑थि॒व्या मोत्सृ॑पत्। वज्रे॒णाव॑हतः
शयाम् ॥ २ ॥

यो जि॒नाति॒ तमन्वि॑च्छ॒ यो जि॒नाति॒ तमिज्ज॑हि। जि॒न॒तो व॑ज्र॒ त्वं
सी॒मन्त॑म॒न्वञ्च॒मनु॑ पातय ॥ ३ ॥ [१३।१०]

सूक्त १३५

ऋषिः — शुक्रः ॥ देवता वज्रः ॥ छन्दः — अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

यद॒श्नामि॒ बलं॑ कुर्व॑ इ॒त्थं वज्र॒मा द॑दे। स्क॒न्धान॒मुष्य॑ शा॒तय॑न् वृ॒त्रस्ये॑व॒
शची॒पति॑ः ॥ १ ॥

यत् पिबा॑मि॒ सं पि॑बामि समु॒द्र इ॑व संपि॒बः। प्रा॒णान॒मुष्य॑ सं॒पाय॒ सं
पि॑बामो अ॒मुं व॒यम् ॥ २ ॥

यद् गिरा॑मि॒ सं गि॑रामि समु॒द्र इ॑व सगि॒रः। प्रा॒णान॒मुष्य॑ सं॒गीर्य॒ सं
गि॑रामो अ॒मुं व॒यम् ॥ ३ ॥ [१३।११]

सूक्त १३६

ऋषिः — वीतहव्यः (केशवर्धनकामः) ॥ देवता — नितत्नी वनस्पति ॥ छन्दः — १, ३ अनुष्टुप्; २ द्विपदा साम्नी बृहती (एकावसाना) ॥ मन्त्र ३ ।

दे॒वी दे॒व्यामधि॑ जा॒ता पृ॑थि॒व्याम॑स्योषधे। तां त्वा॑ नितत्नि॒ केशे॑भ्यो॒
दृंह॑णाय खनामसि ॥ १ ॥

दृंह॑ प्र॒त्नाञ्ज॒नयाजा॑ताञ्जा॒तानु॒ वर्षी॑यसस्कृधि ॥ २ ॥

यस्ते॒ केशो॑ऽव॒पद्य॑ते॒ समू॑लो॒ यश्च॑ वृ॒श्चते॑। इ॒दं तं वि॒श्वभे॑षज्या॒भि
षि॑ञ्चामि वी॒रुधा॑ ॥ ३ ॥ [१३।१२]

सूक्त १३७

ऋषिः--वीतहव्यः(केशवर्धनकामः)।। देवता— नितत्नी वनस्पतिः । छन्दः-अनुष्टुप् ।। मन्त्र ३ ।।

यां ज॒मद॑ग्नि॒रख॑नद् दुहि॒त्रे के॑श॒वर्ध॑नीम् । तां वी॒तह॑व्य आभ॑र॒दसि॑तस्य गृ॒हेभ्यः॑ ॥ १ ॥
अ॒भीशु॑ना॒ मेया॑ आसन् व्या॒मेना॑नु॒मेयाः॑ । केशा॑ न॒डा इ॑व वर्धन्तां शी॒र्ष्णस्ते॑ असि॒ताः परि॑ ॥ २ ॥
दृंह॒ मूल॒माग्रँ॑ यच्छ॒ वि मध्यँ॑ यामयौषधे । केशा॑ न॒डा इ॑व वर्धन्तां शी॒र्ष्णस्ते॑ असि॒ताः परि॑ ॥ ३ ॥ [१३।१३]

सूक्त १३८

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता —वनस्पतिः ।। छन्दः —१, २, ४, ५ अनुष्टुप्; ३ पथ्या पङ्क्तिः ।। मंत्र ५ ।

त्वं वी॒रुधां॒ श्रेष्ठ॑तमाभिश्रु॒तास्यो॑षधे । इ॒मं मे॑ अ॒द्य पूरु॑षं क्ली॒बमो॑प॒शिनँ॑ कृधि ॥ १ ॥
क्ली॒बं कृ॑ध्योप॒शिन॒मथो॑ कुरी॒रिणं॑ कृधि । अथा॒स्येन्द्रो॒ ग्राव॑भ्यामु॒भे भि॑नत्त्वा॒ण्ड्यौ॑ ॥ २ ॥
क्ली॑ब॒ क्ली॒बं त्वा॑करं॒ वध्रे॒ वध्रिं॑ त्वाकर॒मर॑सार॒सं त्वा॑करम् । कुरी॑रमस्य शी॒र्षणि॒ कुम्बँ॑ चाधि॒निद॑ध्मसि ॥ ३ ॥
ये ते॑ ना॒ड्यौ॑ दे॒वकृ॑ते॒ ययो॒स्तिष्ठ॑ति॒ वृष्ण्य॑म् । ते ते॑ भिनद्मि॒ शम्य॑या॒मुष्या॒ अधि॑ मु॒ष्कयोः॑ ॥ ४ ॥
यथा॑ न॒डं क॒शिपु॑ने॒ स्त्रियो॑ भि॒न्दन्त्यश्म॑ना । ए॒वा भि॑नद्मि ते॒ शेपो॒ऽमुष्या॒ अधि॑ मु॒ष्कयोः॑ ॥ ५ ॥ [१३।१४]

सूक्त १३९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वनस्पतिः ॥ छन्दः—१ षट्पदा विराड्जगती; २—५ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ५ ।

न्य॒स्ति॒का रु॑रोहिथ सुभगं॒कर॑णी॒ मम॑ । श॒तं तव॑ प्रता॒नास्त्रय॑स्त्रिंशन्नि॒तानाः । तया॑ सहस्रप॒र्ण्या हृद॑यं शोषयामि ते ॥ १ ॥

शुष्य॑तु॒ मयि॑ ते॒ हृद॑य॒मथो॑ शुष्यत्वा॒स्य[म् । अथो॒ नि शु॑ष्य॒ मां कामे॒नाथो॒ शुष्का॑स्या चर ॥ २ ॥

सं॒वन॑नी समुष्प॒ला बभ्रु॒ कल्या॑णि॒ सं नु॑द । अमूं च॒ मां च॒ सं नु॑द समा॒नं हृद॑यं कृधि ॥ ३ ॥

यथो॑दु॒कमप॑पुषो॒ऽप॒शुष्य॑त्या॒स्य[म् । ए॒वा नि शु॑ष्य॒ मां कामे॒नाथो॒ शुष्का॑स्या चर ॥ ४ ॥

यथा॑ नकु॒लो वि॒च्छिद्य॑ सं॒दधा॒त्यहिं॒ पुनः॑ । ए॒वा काम॑स्य॒ विच्छि॑न्नं॒ सं धे॑हि वीर्या॑वति ॥ ५ ॥ [१३।१५]

सूक्त १४०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—ब्रह्मणस्पतिः; दन्ताः ॥ छन्दः—१ उरोबृहती; २ उपरिष्टाज्ज्योतिष्मती त्रिष्टुप्; ३ आस्तारपङ्क्तिः ॥ मन्त्र ३ ।

यौ व्या॒घ्रावव॑रूढौ॒ जिघ॑त्सतः पि॒तरँ मा॒तरँ च । तौ दन्तौ॑ ब्रह्मणस्पते शि॒वौ कृ॑णु जातवेदः ॥ १ ॥

व्री॒हिम॑त्तं॒ यव॑मत्त॒मथो॒ माष॒मथो॒ तिल॑म् । ए॒ष वां॑ भा॒गो निहि॑तो रत्न॒धेया॑य दन्तौ॒ मा हिं॑सिष्टं पि॒तरँ मा॒तरँ च ॥ २ ॥

उप॑हूतौ स॒युजौ॑ स्यो॒नौ दन्तौ॑ सुम॒ङ्गलौ॑ । अ॒न्यत्र॑ वां घो॒रं त॒न्व१ः परै॑तु दन्तौ॒ मा हिं॑सिष्टं पि॒तरँ मा॒तरँ च ॥ ३ ॥ [१३।१६]

सूक्त १४१

ऋषि: — विश्वामित्रः ॥ देवता — अश्विनौ ॥ छन्दः — अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

वायुरे॑नाः स॒माक॑र॒त् त्वष्टा॒ पोषा॑य ध्रियताम्। इन्द्र॑ आ॒भ्यो॒ अधि॑
ब्रवद् रु॒द्रो भू॒म्ने चि॑कित्सतु ॥ १ ॥

लोहि॑तेन॒ स्वधि॑तिना मिथु॒नं कर्ण॑योः कृधि। अक॑र्ताम॒श्विना॒ लक्ष्म॒
तद॑स्तु प्र॒जया॑ बहु ॥ २ ॥

यथा॑ च॒क्रुर्दे॑वासु॒रा यथा॑ मनु॒ष्या॑ उ॒त। एवा स॑हस्रपो॒षाय॑ कृणु॒तं
लक्ष्मा॑श्विना ॥ ३ ॥ [१३।१७]

सूक्त १४२

ऋषि: — विश्वामित्रः ॥ देवता — वायुः ॥ छन्दः — अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

उच्छ्र॑यस्व ब॒हुर्भ॑व॒ स्वेन॒ मह॑सा यव। मृ॒णी॒हि विश्वा॒ पात्रा॑णि॒ मा त्वा॑
दि॒व्याशनि॑र्वधीत् ॥ १ ॥

आ॒शृ॒ण्वन्तं॒ यवं॑ दे॒वं यत्र॑ त्वाच्छा॒वदा॑मसि। तदुच्छ्र॑यस्व॒ द्यौरि॑व समु॒द्र-
इ॑वै॒ध्यक्षि॑तः ॥ २ ॥

अक्षि॑तास्त उप॒सदोऽक्षि॑ताः सन्तु रा॒शय॑ः। पृ॒णन्तो॒ अक्षि॑ताः सन्त्व॒त्तार॑ः
स॒न्त्वक्षि॑ताः ॥ ३ ॥ [१३।१८]

॥ इति षष्ठं काण्डम् समाप्तम् ॥

* * *

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ सप्तमं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा (ब्रह्मवर्चस्कामः) ।। देवता—आत्मा ।। छन्दः—१ त्रिष्टुप् २ विराड्जगती ।। मन्त्र २ ।

धी॒ती वा॒ ये अन॑यन् वा॒चो अग्र॒ं मन॑सा वा॒ येऽव॑दन्नृ॒तानि । तृ॒तीये॑न॒
ब्रह्म॑णा वावृधा॒नास्तु॒रीये॑णामन्वत॒ नाम॑ धे॒नोः ॥ १ ॥
स वे॑द पु॒त्रः पि॒तर॒ं स मा॒तर॒ं स सू॒नुर्भु॑व॒त् स भु॑व॒त् पुन॑र्मघः । स
द्यामौर्णो॑द॒न्तरि॑क्ष॒ं स्व१॒ः स इ॒दं विश्व॑मभव॒त् स आभ॑वत् ॥२॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ।। (ब्रह्मवर्चस्कामः) ।। देवता आत्मा ।। छन्दः-त्रिष्टुप् ।। मंत्र १ ।

अथ॑र्वाणं पि॒तरँ॑ दे॒वब॑न्धुं मा॒तुर्गर्भँ॑ पि॒तुर॒सुं युवा॑नम् । य इ॒मं य॒ज्ञं
मन॑सा चि॒केत॒ प्र णो॑ वोच॒स्तमि॒हेह ब्र॑वः ॥ १ ॥ [१।२]

सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वा ।। (ब्रह्मवर्चस्कामः) ।। देवता – वायुः ।। छन्दः—त्रिष्टुप् ।। मन्त्र १ ।

अ॒या वि॒ष्ठा ज॒नय॒न् कर्व॑राणि॒ स हि घृणि॑रु॒रुर्वरा॑य गा॒तुः । स प्र॒त्युदै॑द्
ध॒रुण॒ं मध्वो॒ अग्र॒ं स्वयां॑ त॒न्वा⌋ त॒न्व⌋मैरयत ॥ १ ॥ [१।३]

सूक्त ४

ऋषिः—अथर्वा (ब्रह्मवर्चस्कामः) ।। देवता—वायुः ।। छन्दः – त्रिष्टुप् ।। मन्त्र १ ।

एक॑या च द॒शभि॑श्चा सुहुते॒ द्वाभ्या॑मि॒ष्टये॑ विंश॒त्या च॑। ति॒सृभि॑श्च॒ वह॑से
त्रिं॒शता॑ च वि॒युग्भि॑र्वाय इ॒ह ता वि मु॑ञ्च ॥ १ ॥ [१।४]

सूक्त ५

ऋषिः—अथर्वा (ब्रह्मवर्चस्कामः) ॥ देवता—आत्मा ॥ छन्दः—१, २, ५ त्रिष्टुप्; ३ पङ्क्तिः; ४ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ५ ।

य॒ज्ञेन॑ य॒ज्ञम॑यजन्त दे॒वास्तानि॒ धर्मा॑णि प्रथ॒मान्या॑सन् । ते ह॒ नाकं॑
महि॒मान॑: सचन्त॒ यत्र॒ पूर्वे॑ सा॒ध्याः सन्ति दे॒वाः ॥ १ ॥
य॒ज्ञो ब॑भूव॒ स आ ब॑भूव॒ स प्र ज॑ज्ञे॒ स उ॑ वावृधे॒ पुन॑: । स दे॒वाना॒म-
धि॑पतिर्बभूव॒ सो अ॒स्मासु॒ द्रवि॑ण॒मा द॑धातु ॥ २ ॥
यद् दे॒वा दे॒वान् ह॒विषाय॑ज॒न्ताम॑र्त्या॒न् मन॒साम॑र्त्येन । मदे॑म॒ तत्र॑ पर॒मे
व्यो॑म॒न् पश्ये॑म॒ तदुदि॑तौ॒ सूर्य॑स्य ॥ ३ ॥
यत् पुरु॑षेण ह॒विषा॑ य॒ज्ञं दे॒वा अत॑न्वत । अस्ति॒ नु तस्मा॒दोजी॑यो॒ यद्
वि॒हव्ये॑नेजि॒रे ॥ ४ ॥
मु॒ग्धा दे॒वा उ॒त शुनाय॑जन्तो॒त गोरङ्गैः॑ पुरु॒धाय॑जन्त । य इ॒मं य॒ज्ञं
मन॑सा चि॒केत॒ प्र णो॑ वोच॒स्तमि॒हेह ब्र॑वः ॥ ५ ॥ [१।५]

सूक्त ६ (७)

ऋषिः—अथर्वा (ब्रह्मवर्चस्कामः) ॥ देवता—अदितिः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ भुरिक् त्रिष्टुप्; ३, ४ विराड् जगती ॥ मन्त्र ४ ।

अदि॑ति॒र्द्यौरदि॑तिर॒न्तरि॑क्ष॒मदि॑तिर्मा॒ता स पि॒ता स पु॒त्रः । विश्वे॑ दे॒वा
अदि॑तिः॒ पञ्च॒ जना॒ अदि॑तिर्जा॒तमदि॑ति॒र्जनि॑त्वम् ॥ १ ॥
म॒हीमू॒ षु मा॒तरं॑ सुव्र॒ताना॑मृ॒तस्य॒ पत्नी॒मव॑से हवामहे । तु॒वि॒क्ष॒त्राम॒-
जर॑न्तीमुरू॒चीं सु॒शर्मा॑ण॒मदि॑तिं सु॒प्रणी॑तिम् ॥ २ ॥

सु॒त्रामा॑णं पृथि॒वीं द्याम॑ने॒हसं॑ सु॒शर्मा॑ण॒मदि॑तिं सु॒प्रणी॑तिम् । दैवीं॒ नाव॑ं
स्व॒रि॒त्राम॑नागसो॒ अस्र॑वन्ती॒मा रु॑हेमा स्व॒स्तये॑ ॥ ३ ॥
वाज॑स्य॒ नु प्र॑स॒वे मा॒तरं॑ म॒हीमदि॑ति॒ नाम॒ वच॑सा करामहे । यस्या॑
उ॒पस्थ॑ उ॒र्व॑१॒न्तरि॑क्षं॒ सा नः॒ शर्म॑ त्रि॒वरू॑थं॒ नि य॑च्छात् ॥ ४ ॥ [१।६]

सूक्त ७ (८)

ऋषिः—अथर्वा (ब्रह्मवर्चस्कामः) ॥ देवता—अदितिः ॥ छन्दः—आर्षी जगती ॥
मन्त्र १ ।

दितेः॑ पु॒त्राणा॒मदि॑तेरकार्ष॒मव॑ दे॒वानां॑ बृह॒ताम॑न॒र्मणा॑म् । तेषां॒ हि धाम॑
ग॒भि॒षक् स॑मु॒द्रियं॒ नैना॒न् नम॑सा प॒रो अ॑स्ति॒ कश्च॒न ॥ १ ॥ [१।७]

सूक्त ८ (९)

ऋषिः—उपरिबभ्रवः ॥ देवता—बृहस्पतिः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

भ॒द्राद॒धि श्रेयः॒ प्रेहि॒ बृह॒स्पतिः॑ पुरए॒ता ते॑ अस्तु । अथे॒मम॒स्या वर॒
आ पृ॑थि॒व्या आ॒रेश॑त्रुं कृणुहि॒ सर्व॑वीरम् ॥ १ ॥ [१।८]

सूक्त ९ (१०)

ऋषिः—उपरिबभ्रवः ॥ देवता—पूषा ॥ छन्दः—१, २ त्रिष्टुप्; ३ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; ४ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ४ ।

प्रप॑थे प॒थाम॑जनिष्ट पू॒षा प्रप॑थे दि॒वः प्रप॑थे पृथि॒व्याः । उ॒भे अ॒भि
प्रि॒यत॑मे स॒धस्थे॒ आ च॒ परा॑ च चरति प्रजा॒नन् ॥ १ ॥
पू॒षेमा आशा॒ अनु॑ वेद॒ सर्वाः॒ सो अ॒स्माँ अभ॑यतमेन नेषत । स्व॒स्ति॒दा
आघृ॑णिः॒ सर्व॑वी॒रोऽप्र॑युच्छन् पु॒र ए॑तु प्रजा॒नन् ॥ २ ॥
पूष॒न् तव॑ व्र॒ते व॒यं न रि॑ष्येम क॒दा च॒न । स्तो॒तार॑स्त इ॒ह स्म॑सि ॥३॥
परि॑ पू॒षा प॒रस्ता॒द्धस्तं॑ दधातु॒ दक्षि॑णम् । पुन॑र्नो न॒ष्टमाज॑तु सं न॒ष्टेन॑
गमेमहि ॥ ४ ॥ [१।९]

सूक्त १० (११)

ऋषिः—शौनकः ॥ देवता—सरस्वती ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

यस्ते॒ स्तनः॑ शश॒युर्यो॑ म॑यो॒भूर्यः॑ सु॑म्न॒युः सु॒हवो॒ यः सु॒दत्रः॑। येन॒ विश्वा॒ पुष्य॑सि॒ वार्या॑णि॒ सर॑स्वति॒ तमि॒ह धात॑वे कः ॥ १ ॥ [१।१०]

सूक्त ११ (१२)

ऋषिः—शौनकः ॥ देवता—सरस्वती ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

यस्ते॑ पृ॒थु स्त॑नयि॒त्नुर्य ऋ॒ष्वो दैवः॑ के॒तुर्विश्व॑मा॒भूष॑ती॒दम्। मा नो॑ वधीर्वि॒द्युता॑ देव स॒स्यं मोत व॑धी र॒श्मिभिः॒ सूर्य॑स्य ॥ १ ॥ [१।११]

सूक्त १२ (१३)

ऋषिः—शौनकः ॥ देवता—१ सभा, समितिः, पितरश्च; २ सभा; ३ इन्द्रः; ४ मनः ॥ छन्दः—१ भुरिक् त्रिष्टुप्; २—४ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ४ ।

स॒भा च॑ मा॒ समि॑तिश्चावतां प्र॒जाप॑तेर्दुहि॒तरौ॑ संवि॒दाने। येना॑ सं॒गच्छा॒ उप॑ मा॒ स शि॑क्षा॒च्चारु॑ वदानि पितरः॒ सङ्ग॑तेषु ॥ १ ॥

वि॒द्म ते॑ सभे॒ नाम॑ न॒रिष्टा॒ नाम॒ वा अ॑सि। ये ते॒ के च॑ स॒भास॑द॒स्ते मे॑ सन्तु॒ सवा॑चसः ॥ २ ॥

ए॒षाम॒हं स॒मासी॑नानां॒ वर्चो॑ वि॒ज्ञान॒मा द॑दे। अ॒स्याः सर्व॑स्याः सं॒सदो॒ मामि॑न्द्र भ॒गिनं॑ कृणु ॥ ३ ॥

यद् वो॒ मनः॒ परा॑गतं॒ यद् ब॒द्धमि॒ह वे॒ह वा॑। तद् व॒ आ व॑र्तयामसि॒ मयि॑ वो रमतां॒ मनः॑ ॥ ४ ॥ [१।१२]

सूक्त १३ (१४)

ऋषिः—अथर्वा (द्विषो वर्चोहर्तुकामः) ॥ देवता—सूर्यः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र २।

यथा॒ सूर्यो॒ नक्ष॑त्राणामु॒द्यंस्तेजां॑स्याद॒दे। ए॒वा स्त्री॒णां च॑ पुं॒सां च॑ द्विष॒तां वर्च॒ आ द॑दे ॥ १ ॥

यावन्तो मा सपत्नानामायन्तं प्रतिपश्यथ । उद्यन्त्सूर्य इव सुप्तानां
द्विषतां वर्च आ ददे ॥ २ ॥ [१।१३]

सूक्त १४ (१५)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सविता ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप्;
४ जगती ॥ मन्त्र ४ ।

अभि त्यं देवं सवितारमोण्योः कविक्रतुम् । अर्चामि सत्यसवं रत्न-
धामभि प्रियं मतिम् ॥ १ ॥
ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भा अदिद्युतत् सवीमनि । हिरण्यपाणिरमिमीत
सुक्रतुः कृपात् स्वः ॥ २ ॥
सावीर्हि देव प्रथमाय पित्रे वर्ष्माणमस्मै वरिमाणमस्मै । अथास्मभ्यं
सवितर्वार्याणि दिवोदिव आ सुवा भूरि पश्वः ॥ ३ ॥
दमूना देवः सविता वरेण्यो दधद् रत्नं दक्षं पितृभ्य आयूंषि । पिबात्
सोमं ममददेनमिष्टे परिज्मा चित् क्रमते अस्य धर्मणि ॥४॥ [२।१]

सूक्त १५ (१६)

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—सविता ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

तां सवितः सत्यसवां सुचित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्ववाराम् । यामस्य
कण्वो अदुहत् प्रपीनां सहस्रधारां महिषो भगाय ॥ १ ॥ [२।२]

सूक्त १६ (१७)

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—सविता ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

बृहस्पते सवितर्वर्धयैनं ज्योतयैनं महते सौभगाय । संशितं चित्
संतरं सं शिशाधि विश्व एनमनु मदन्तु देवाः ॥ १ ॥ [२।३]

सूक्त १७ (१८)

ऋषिः—भृगुः ।। देवता – धात्रादयो मन्त्रोक्ताः ।। छन्दः—१ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; २ अनुष्टुप्; ३, ४ त्रिष्टुप् ।। मन्त्र ४ ।

धा॒ता द॑धातु नो र॒यिमीशा॑नो॒ जग॑त॒स्पतिः॑ । स नः॑ पू॒र्णेन॑ यच्छतु ॥१॥

धा॒ता द॑धातु दा॒शुषे॒ प्राचीं॑ जी॒वातु॒मक्षि॑ताम् । व॒यं दे॒वस्य॑ धीमहि सु॒मतिं॑ वि॒श्वरा॑धसः ॥ २ ॥

धा॒ता विश्वा॒ वार्या॑ दधातु प्र॒जाका॑माय दा॒शुषे॑ दु॒रो॒णे । तस्मै॑ दे॒वा अ॒मृतं॒ सं व्य॑यन्तु॒ विश्वे॑ दे॒वा अदि॑तिः स॒जोषाः॑ ॥ ३ ॥

धा॒ता रा॒तिः स॑वि॒तेदं जु॑षन्तां प्र॒जाप॑तिर्नि॒धिप॑तिर्नो अ॒ग्निः । त्वष्टा॒ विष्णुः॑ प्र॒जया॑ संररा॒णो यज॑मानाय॒ द्रवि॑णं दधातु ॥ ४ ॥ [२।४]

सूक्त १८ (१९)

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता – पृथिवी, पर्जन्यः ।। छन्दः—१ चतुष्पाद्भुरिगुष्णिक्; २ त्रिष्टुप् ।। मन्त्र १ ।

प्र न॑भस्व पृथिवि भि॒न्द्धी३॒॑दं दि॒व्यं नभः॑ । उ॒द्नो दि॒व्यस्य॑ नो धात॒रीशा॑नो॒ वि ष्या॒ दृति॑म् ॥ १ ॥

न घ्रंस्त॑ताप॒ न हि॒मो ज॑घान॒ प्र न॑भतां पृथि॒वी जी॒रदा॑नुः । आप॑श्चिदस्मै घृ॒तमित् क्ष॑रन्ति॒ यत्र॒ सोमः॒ सद॒मित् तत्र॑ भ॒द्रम् ॥ २ ॥ [२।५]

सूक्त १९ (२०)

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता—प्रजापतिः, धाता ।। छन्दः—जगती ।। मन्त्र १ ।

प्र॒जाप॑तिर्जनयति प्र॒जा इ॒मा धा॒ता द॑धातु सुमन॒स्यमा॑नः । सं॒जा॒ना॒नाः संम॑नसः॒ सयो॑नयो॒ मयि॑ पु॒ष्टं पु॑ष्ट॒पति॑र्दधातु ॥ १ ॥ [२।६]

सूक्त २० (२१)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अनुमतिः ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३त्रिष्टुप्; ४ भुरिक् त्रिष्टुप्; ५ जगती; ६ अतिशक्वरगर्भा जगती ॥ मन्त्र ६ ।

अन्व॒द्य नोऽनु॑मतिर्य॒ज्ञं दे॒वेषु॑ मन्यताम् । अ॒ग्निश्च॑ हव्य॒वाह॑नो॒ भव॑तां
दा॒शुषे॒ मम॑ ॥ १ ॥
अन्विद॑नुमते॒ त्वं मंस॑से॒ शं च॑ नस्कृधि । जु॒षस्व॑ ह॒व्यमाहु॑तं प्र॒जां दे॑वि
ररास्व नः ॥ २ ॥
अनु॑ मन्यतामनु॒मन्य॑मानः प्र॒जाव॑न्तं र॒यिमक्षी॑यमाणम् । तस्य॑ व॒यं
हेड॑सि॒ मापि॑ भूम सुमृडी॒के अ॑स्य सुम॒तौ स्या॑म ॥ ३ ॥
यत् ते॒ नाम॑ सुह॒वं॑ सुप्रणी॒तेऽनु॑मते॒ अनु॑मतं सु॒दानु॑ । तेना॑ नो य॒ज्ञं
पि॑पृहि विश्ववारे र॒यिं नो॑ धेहि सुभगे सु॒वीर॑म् ॥ ४ ॥
एमं य॒ज्ञमनु॑मतिर्जगाम सुक्षे॒त्रता॑यै सुवी॒रता॑यै॒ सुजा॑तम् । भ॒द्रा ह्य॑स्याः
प्रम॑तिर्ब॒भूव॒ सेमं य॒ज्ञम॑वतु दे॒वगो॑पा ॥ ५ ॥
अनु॑मतिः॒ सर्व॑मि॒दं ब॑भूव॒ यत् तिष्ठ॑ति॒ चर॑ति॒ यदु॑ च॒ विश्व॒मेज॑ति ।
तस्या॑स्ते देवि सुम॒तौ स्या॒मानु॑मते॒ अनु॒ हि मंस॑से नः ॥६॥ [२।७]

सूक्त २२ (२१)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आत्मा ॥ छन्दः—शक्वरीविराड्गर्भा जगती ॥ मन्त्र १ ।

स॒मेत॒ विश्वे॒ वच॑सा॒ पतिं॑ दि॒व एको॑ वि॒भूरति॑थि॒र्जना॑नाम् । स पू॒र्व्यो
नूत॑नमा॒विवा॑स॒त् तं व॑र्त॒निरनु॑ वावृत॒ एक॒मित् पु॒रु ॥ १ ॥ [२।८]

सूक्त २२ (२३)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—लिङ्गोक्ताः; (ब्रध्नः) ॥ छन्दः—१ द्विपदा विराड्गायत्री (एकावसाना) २ त्रिपदाऽनुष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

अयं सहस्रमा नो दृशे कवीनां मतिर्ज्योतिर्विधर्मणि ॥ १ ॥

ब्रध्नः समीचीरुषसः समैरयन् । अरेपसः सचेतसः स्वसरे मन्युमत्तमाश्चिते गोः ॥ २ ॥ [२।६]

सूक्त २३ (२४)

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

दौष्वप्न्यं दौर्जीवित्यं रक्षो अभ्वमराय्यः । दुर्णाम्नीः सर्वा दुर्वाचस्ता अस्मन्नाशयामसि ॥ १ ॥ [३।१]

सूक्त २४ (२५)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—सविता ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

यन्न इन्द्रो अखनद् यदग्निर्विश्वे देवा मरुतो यत् स्वर्काः । तदस्मभ्यं सविता सत्यधर्मा प्रजापतिरनुमतिर्नि यच्छात् ॥ १ ॥ [३।२]

सूक्त २५ (२६)

ऋषिः—मेधातिथिः ॥ देवता—विष्णुः वरुणश्च ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

ययोरोजसा स्कभिता रजांसि यौ वीर्यैर्वीरतमा शविष्ठा । यौ पत्येते अप्रतीतौ सहोभिर्विष्णुमगन् वरुणं पूर्वहूतिः ॥ १ ॥

यस्येदं प्रदिशि यद् विरोचते प्र चानति वि च चष्टे शचीभिः । पुरा देवस्य धर्मणा सहोभिर्विष्णुमगन् वरुणं पूर्वहूतिः ॥ २ ॥ [३।३]

सूक्त २६ (२७)

ऋषिः—मेधातिथिः ॥ देवता—विष्णुः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ त्रिपदा विराड्गायत्री; ३ षट्पदा विराड्शक्वरी; ४—७ गायत्री; ८ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ८ ।

विष्णोर्नु कं प्रा वोचं वीर्याणि यः पार्थिवानि विममे रजाँसि । यो
अस्कभायदुत्तरं सधस्थँ विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः ॥ १ ॥
प्र तद् विष्णुः स्तवते वीर्याणि मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः ।
परावत आ जगम्यात् परस्याः ॥ २ ॥
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा । उरु विष्णो
वि क्रमस्वोरु क्षयाय नस्कृधि । घृतं घृतयोने पिब प्रप्र यज्ञपतिं तिर ।३।
इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदा । समूढमस्य पांसुरे ॥ ४ ॥
त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । इतो धर्माणि
धारयन् ॥५॥
विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः
सखा ॥ ६ ॥
तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ॥७॥
दिवो विष्ण उत वा पृथिव्या महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात् । हस्तौ
पृणस्व बहुभिर्वसव्यैराप्रयच्छ दक्षिणादोत सव्यात् ॥ ८ ॥ [३।४]

सूक्त २७ (२८)

ऋषिः— मेधातिथिः ॥ देवता —इडा ॥ छन्दः— त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

इडैवास्माँ अनु वस्तां व्रतेन यस्याः पदे पुनते देवयन्तः । घृतपदी
शक्वरी सोमपृष्ठोप यज्ञमस्थित वैश्वदेवी ॥ १ ॥ [३।५]

सूक्त २८ (२९)

ऋषिः— मेधातिथिः ॥ देवता— वेदः ॥ छन्दः— त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

वे॒दः स्व॒स्तिर्द्रु॑घ॒णः स्व॒स्तिः प॑र॒शुर्वेदि॑ः पर॒शुर्न॑ः स्व॒स्ति । ह॒वि॒ष्कृतो॑
य॒ज्ञिया॑ य॒ज्ञका॑मा॒स्ते दे॒वासो॑ य॒ज्ञमि॒मं जु॑षन्ताम् ॥ १ ॥ [३।६]

सूक्त २९ (३०)

ऋषिः—मेधातिथिः ॥ देवता—अग्नाविष्णू ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

अग्ना॑विष्णू॒ म॒हि॒ तद् वां॑ महि॒त्वं पा॒थो घृ॒तस्य॒ गुह्य॑स्य॒ नाम॑ । दमे॑दमे
स॒प्त रत्ना॒ दधा॑नौ॒ प्रति॑ वां जि॒ह्वा घृ॒तमा च॑रण्यात् ॥ १ ॥

अग्ना॑विष्णू॒ महि॒ धाम॑ प्रि॒यं वां॑ वी॒थो घृ॒तस्य॒ गुह्या॑ जुषा॒णौ । दमे॑दमे
सुष्टु॒त्या वा॑वृधा॒नौ प्रति॑ वां जि॒ह्वा घृ॒तमुच्च॑रण्यात् ॥ २ ॥ [३।७]

सूक्त (३१)

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—द्यावापृथिवी, मित्रः; ब्रह्मणस्पतिः सविता च ॥
छन्दः—बृहती ॥ मन्त्र १ ।

स्वाक्तँ॑ मे॒ द्यावा॑पृथि॒वी स्वाक्तँ॑ मि॒त्रो अ॑कर॒यम् । स्वाक्तँ॑ मे॒
ब्रह्म॑ण॒स्पति॒ः स्वाक्तँ॑ सवि॒ता क॑रत् ॥ १ ॥ [३।८]

सूक्त (३२)

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः । देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ।

इन्द्रो॒तिभि॑र्बहु॒लाभि॑र्नो अ॒द्य या॑वच्छ्रे॒ष्ठाभि॑र्मघवञ्छूर जिन्व । यो नो॒
द्वेष्ट्यध॑र॒ः सस्प॑दीष्ट॒ यमु॑ द्वि॒ष्मस्तमु॑ प्रा॒णो ज॑हातु ॥ १ ॥ [३।९]

सूक्त ३२ (३३)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आयुः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

उप॑ प्रि॒यं पनि॑प्नतं॒ युवा॑नमाहुती॒वृध॑म् । अग॑न्म॒ बिभ्र॑तो॒ नमो॑ दी॒र्घमायु॑ः कृणोतु मे ॥ १ ॥ [३।१०]

सूक्त ३३ (३४)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—मरुतः, पूषा, बृहस्पतिः, अग्निश्च ॥ छन्दः—पथ्या पङ्क्तिः ॥ मंत्र १ ।

सं मा॑ सिञ्चन्तु म॒रुत॒ः सं पू॒षा सं बृह॒स्पति॑ः । सं मा॒यम॒ग्निः सि॑ञ्चतु
प्र॒जया॑ च॒ धने॑न च दी॒र्घमायु॑ः कृणोतु मे ॥ १ ॥ [३।११]

सूक्त ३४ (३५)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—जातवेदाः ॥ छन्दः—जगती ॥ मंत्र १ ।

अग्ने॒ जा॒तान् प्र णु॑दा मे स॒पत्ना॒न् प्रत्यजा॑तान् जातवेदो नुदस्व ।
अ॒ध॒स्प॒दं कृ॑णुष्व॒ ये पृ॑त॒न्यवोऽना॑गस॒स्ते व॒यमदि॑तये स्याम ॥ १ ॥
[३ १२]

सूक्त ३५ (३६)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—जातवेदाः ॥ छन्दः—१, ३ त्रिष्टुप्; २ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

प्रान्यान्त्स॒पत्ना॒न्त्सह॑सा सह॑स्व॒ प्रत्यजा॑तान् जातवेदो नुदस्व । इ॒दं
राष्ट्रं॑ पि॑पृहि सौभ॑गाय॒ विश्वे॑ एन॒मनु॑ मदन्तु दे॒वाः ॥ १ ॥
इ॒मा यास्ते॑ श॒तं हि॒राः स॒हस्रं॑ ध॒मनी॑रु॒त । तासां॑ ते॒ सर्वा॑साम॒हमश्म॑ना॒
वि॒लमप्य॑धाम् ॥ २ ॥
परं॒ योने॒रव॑रं ते कृणोमि॒ मा त्वा॑ प्र॒जाभि भून्मोत सू॒नुः । अ॒स्वं॒१॒
त्वाप्र॑जसं कृणो॒म्यश्मा॑नं ते अपि॒धानं॑ कृणोमि ॥ ३ ॥ [३।१३]

सूक्त ३६ (३७)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अक्षि, मनः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

अक्ष्यौ॒ ३ नौ॑ मधु॑संकाशे॒ अनी॑कं नौ स॒मञ्ज॑नम् । अ॒न्तः कृ॑णुष्व॒ मां हृ॒दि
मन॒ इन्नौ॑ स॒हास॑ति ॥ १ ॥ [३।१४]

सूक्त ३७ (३८)

ऋषिः - अथर्वा ।। देवता—वासः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र १ ।

अभि त्वा मनुजातेन दधामि मम वाससा । यथासो मम केवलो
नान्यासां कीर्तयाश्चन ॥ १ ॥ [३।१५]

सूक्त ३८ (३९)

ऋषिः — अथर्वा ।। देवता—वनस्पतिः (आसुरी) ।। छन्दः— १, २, ४, ५ अनुष्टुप्; ३ चतुष्पदा उष्णिक् ।। मन्त्र ५ ।

इदं खनामि भेषजं मांपश्यमभिरोरुदम् । परायतो निवर्तनमायतः
प्रतिनन्दनम् ॥ १ ॥
येना निचक्र आसुरीन्द्रं देवेभ्यस्परि । तेना नि कुर्वे त्वामहं यथा
तेऽसानि सुप्रिया ॥ २ ॥
प्रतीची सोममसि प्रतीच्युत सूर्यम् । प्रतीची विश्वान् देवान् तां
त्वाच्छावदामसि ॥ ३ ॥
अहं वदामि नेत् त्वं सभायामह त्वं वद । ममेदसस्त्वं केवलो
नान्यासां कीर्तयाश्चन ॥ ४ ॥
यदि वासि तिरोजनं यदि वा नद्यस्तिरः । इयं ह मह्यं त्वामोषधि-
र्बद्ध्वेव न्यानयत् ॥ ५ ॥ [३।१६]

सूक्त ३९ (४०)

ऋषिः—प्रस्कण्वः ।। देवता—मन्त्रोक्ता ।। छन्दः—त्रिष्टुप् ।। मन्त्र १ ।

दिव्यं सुपर्णं पयसं बृहन्तमपां गर्भं वृषभमोषधीनाम् । अभीपतो वृष्ट्या
तर्पयन्तमा नो गोष्ठे रयिष्ठां स्थापयाति ॥ १ ॥ [४।१]

सूक्त ४० (४१)

ऋषिः—प्रस्कण्वः ॥ देवता—सरस्वान् ॥ छन्दः—१ भुरिक् त्रिष्टुप्; २ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

यस्य॑ व्र॒तं प॒शवो॒ यन्ति॒ सर्वे॒ यस्य॑ व्र॒त उ॑प॒तिष्ठ॑न्त॒ आप॑ः । यस्य॑ व्र॒ते
पु॑ष्ट॒पति॒र्निवि॑ष्ट॒स्तं सर॑स्वन्त॒मव॑से हवामहे ॥ १ ॥
आ प्र॒त्यञ्चं॑ दा॒शुषे॑ दा॒श्वंसं॒ सर॑स्वन्तं पुष्ट॒पतिं॑ रयि॒ष्ठाम् । रा॒यस्पोषं॑
श्रव॒स्युं॑ वसा॑ना इ॒ह हु॑वेम॒ सद॑नं रयी॒णाम् ॥ २ ॥ [४।२]

सूक्त ४१ (४२)

ऋषिः—प्रस्कण्वः ॥ देवता—श्येनः ॥ छन्दः—१ जगती; २ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

अति॒ धन्वा॒न्यत्य॒पस्त॑तर्द श्ये॒नो नृ॒चक्षा॑ अवसान॒दर्शः॑ । तर॒न्
विश्वा॒न्यव॑रा रजां॒सीन्द्रे॑ण॒ सख्या॑ शि॒व आ ज॑गम्यात् ॥ १ ॥
श्ये॒नो नृ॒चक्षा॑ दि॒व्यः सु॑प॒र्णः स॒हस्र॑पाच्छ॒तयो॑निर्वयो॒धाः । स नो॒ नि
य॑च्छा॒द् वसु॒ यत् परा॑भृतम॒स्माक॑मस्तु पि॒तृषु॑ स्व॒धाव॑त् ॥२॥ [४।३]

सूक्त ४२ (४३)

ऋषिः—प्रस्कण्वः ॥ देवता—सोमारुद्रौ ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

सोमा॑रुद्रा॒ वि वृ॑हतं॒ विषू॑ची॒ममी॑वा॒ या नो॒ गय॑मावि॒वेश॑ । बाधे॑थां दू॒रं
निर्ऋ॑तिं परा॒चैः कृ॒तं चि॒देनः॒ प्र मु॑मुक्तम॒स्मत् ॥ १ ॥
सोमा॑रुद्रा यु॒वमे॒तान्य॒स्मद् विश्वा॑ त॒नूषु॑ भेष॒जानि॑ धत्तम् । अव॑ स्यतं
मु॒ञ्चतं॒ यन्नो॒ अस॑त् त॒नूषु॑ ब॒द्धं कृ॒तमेनो॑ अ॒स्मत् ॥ २ ॥ [४।४]

सूक्त ४३ (४४)

ऋषिः—प्रस्कण्वः ॥ देवता—वाक् ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

शि॒वास्त॒ एका॒ अशि॑वास्त॒ एकाः॒ सर्वा॑ बिभर्षि सुमन॒स्यमा॑नः । ति॒स्रो
वाचो॒ निहि॑ता अ॒न्तर॒स्मिन् तासा॒मेका॒ वि प॑पाता॒नु घोष॑म् ॥ १ ॥
[४।५]

सूक्त ४४ (४५)

ऋषिः—प्रस्कण्वः ॥ देवता—इन्द्रः, विष्णुः ॥ छन्दः—भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

उ॒भा जि॑ग्यथु॒र्न परा॑ जयेथे॒ न परा॑ जिग्ये कत॒रश्च॒नैन॑योः । इन्द्र॑श्च विष्णो॒ यदप॑स्पृधेथां त्रे॒धा स॒हस्रं॒ वि तदै॑रयेथाम् ॥ १ ॥ [४।६]

सूक्त ४५ (४६)

ऋषिः—प्रस्कण्वः ॥ देवता—ईर्ष्यापनयनम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

जना॑द् विश्वज॒नीना॑त् सिन्धु॒तस्पर्याभृ॑तम् । दू॒रात् त्वा॑ मन्य॒ उद्भृ॑तमी॒र्ष्याया॒ नाम॑ भेष॒जम् ॥ १ ॥

सूक्त ४५ (४७)

अ॒ग्नेरि॑वास्य॒ दह॑तो दा॒वस्य॒ दह॑तः॒ पृथ॑क् । ए॒तामे॒तस्ये॒र्ष्यामु॒द्नाग्निमि॑व शमय ॥ २ ॥ [४।७]

सूक्त ४६ (४८)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सिनीवाली ॥ छन्दः—१, २ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

सिनी॑वालि॒ पृथु॑ष्टुके॒ या दे॒वाना॒मसि॒ स्वसा॑ । जु॒षस्व॑ ह॒व्यमाहु॑तं प्र॒जां दे॑वि दिदिड्ढि नः ॥ १ ॥

या सु॑बा॒हुः स्व॑ङ्गु॒रिः सु॒षूमा॑ बहु॒सूव॑री । तस्यै॑ वि॒श्पत्न्यै॑ ह॒विः सि॑नीवा॒ल्यै जु॑होतन ॥ २ ॥

या वि॒श्पत्नीन्द्र॒मसि॑ प्र॒तोची॑ स॒हस्र॑स्तुकाभि॒यन्ती॑ दे॒वी । विष्णोः॑ पत्नि॒ तुभ्यँ॑ रा॒ता ह॒वींषि॒ पतिं॑ देवि॒ राध॑से चोदयस्व ॥ ३ ॥ [४।८]

सूक्त ४७ (४९)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—कुहूः ॥ छन्दः—१ जगती; २ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

कु॒हूं दे॒वीं सु॒कृतँ॑ वि॒द्मनाप॑सम॒स्मिन् य॒ज्ञे सु॒हवा॑ जोहवीमि । सा नो॑ र॒यिं वि॒श्ववा॑रं॒ नि य॑च्छा॒द् ददा॑तु वी॒रं श॒तदा॑यमु॒क्थ्य॑म् ॥ १ ॥

कु॒हूर्दे॒वाना॑म॒मृत॑स्य॒ पत्नी॒ हव्या॑ नो अ॒स्य ह॒विषो॑ जुषेत । शृ॒णोतु॑ य॒ज्ञमु॑श॒ती नो॑ अ॒द्य रा॒यस्पोषं॑ चिकि॒तुषी॑ दधातु ॥ २ ॥ [४।९]

सूक्त ४८ (५०)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—राका ॥ छन्दः—जगती ॥ मन्त्र २ ।

रा॒काम॒हं सु॒हवां॑ सुष्टु॒ती हु॑वे शृ॒णोतु॑ नः सु॒भगा॒ बोध॑तु॒ त्मना॑ । सीव्य॒त्वपः॑ सू॒च्याच्छिद्य॑मानया॒ ददा॑तु वी॒रं श॒तदा॑यमु॒क्थ्य॑म् ॥ १ ॥

यास्ते॑ राके सुम॒तयः॑ सु॒पेश॑सो॒ याभि॒र्ददा॑सि दा॒शुषे॒ वसू॑नि । ताभि॑र्नो अ॒द्य सु॒मना॑ उ॒पाग॑हि सहस्रापो॒षं सु॑भगे॒ ररा॑णा ॥ २ ॥ [४।१०]

सूक्त ४९ (५१)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—देवपत्न्यः । छन्द—१ आर्षी जगती; २ चतुष्पदा पङ्क्तिः ॥ मन्त्र २ ।

दे॒वानां॒ पत्नी॑रुश॒तीर॑वन्तु नः॒ प्राव॑न्तु नस्तु॒जये॒ वाज॑सातये । याः पार्थि॑वासो॒ या अ॒पामपि॑ व्र॒ते ता नो॑ देवीः सु॒हवाः॒ शर्म॑ यच्छन्तु ॥१॥

उ॒त ग्ना व्य॑न्तु दे॒वप॑त्नीरिन्द्रा॒ण्य॒ग्नाय्य॒श्विनी॒ राट् । आ रोद॑सी वरुणा॒नी शृ॑णोतु॒ व्यन्तु॑ दे॒वीर्य ऋ॒तुर्जनी॑नाम् ॥ २ ॥ [४।११]

सूक्त ५० (५२)

ऋषिः—अङ्गिराः (कितवबधकामः) ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, २, ५, ८, ९ अनुष्टुप्; ३, ७ त्रिष्टुप्; ४ जगती; ६ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ९ ।

य॒था वृ॒क्षम॒शनि॑र्वि॒श्वाहा॒ हन्त्य॑प्र॒ति । ए॒वाहम॒द्य कि॑त॒वान॒क्षैर्ब॑ध्यासमप्र॒ति ॥ १ ॥

तु॒राणा॒मतु॑राणां वि॒शामव॑र्जुषीणाम् । स॒मैतु॑ वि॒श्वतो॒ भगो॑ अन्तर्ह॒स्तं कृ॒तं मम॑ ॥ २ ॥

ईडे॑ अ॒ग्निं स्वाव॑सुं॒ नमो॑भिरि॒ह प्र॑स॒क्तो वि च॑यत् कृ॒तं नः॑ । रथै॑रिव
प्र भ॑रे वा॒जय॑द्भिः प्रदक्षि॒णं म॒रु॒तां स्तोम॑मृध्याम् ॥ ३ ॥
व॒यं ज॑येम॒ त्वया॑ यु॒जा वृत॑म॒स्माक॒मंश॒मुद॑वा॒ भरे॑भरे । अ॒स्मभ्य॑मिन्द्र
वरी॑यः सु॒गं कृ॑धि॒ प्र शत्रू॑णां मघव॒न् वृष्ण्या॑ रुज ॥ ४ ॥
अजै॑षं त्वा॒ संलि॑खितमजै॑षमु॒त संरु॑धम् । अवि॒ं वृको॒ यथा॒ मथ॑दे॒वा
म॑थ्नामि ते कृ॒तम् ॥ ५ ॥
उ॒त प्र॒हामति॑दीवा जयति कृ॒तमि॑व श्व॒घ्नी वि चि॑नोति का॒ले । यो दे॒व-
का॑मो॒ न धनं॑ रु॒णद्धि॒ समित् तं रा॒यः सृ॑जति स्व॒धाभिः॑ ॥ ६ ॥
गोभि॑ष्टरे॒मामतिं॑ दुरे॒वां यवे॑न वा॒ क्षुधं॑ पुरुहूत॒ विश्वे॑ । व॒यं राज॑सु प्रथ॒मा
धना॒न्यरि॑ष्टासो वृज॒नीभि॑र्जयेम ॥ ७ ॥
कृ॒तं मे॒ दक्षि॑णे॒ हस्ते॑ ज॒यो मे॑ स॒व्य आहि॑तः । गो॒जिद् भू॑यासमश्व॒जिद्
ध॑नंज॒यो हि॑रण्य॒जित् ॥ ८ ॥
अक्षाः॒ फल॑वतीं॒ द्युवं॑ द॒त्त गां क्षी॒रिणी॑मिव । सं मा॑ कृ॒तस्य॒ धार॑या॒
धनुः॒ स्नाव्ने॑व नह्यत ॥ ९ ॥ [४।१२]

सूक्त ५१ (५३)

ऋषिः—अङ्गिराः ॥ देवता—इन्द्राबृहस्पतिः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

बृह॒स्पति॑र्नः॒ परि॑ पातु प॒श्चादु॒तोत्त॑रस्मा॒दध॑रादघा॒योः । इन्द्रः॑ पु॒रस्ता॑दु॒त
म॑ध्य॒तो नः॒ सखा॒ सखि॑भ्यो॒ वरी॑यः कृणोतु ॥ १ ॥ [४।१३]

सूक्त ५२ (५४)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सांमनस्यम्, अश्विनौ ॥ छन्दः—१ ककुम्मत्यनुष्टुप्; २ जगती ॥ मन्त्र २ ।

संज्ञानं नः स्वेभिः संज्ञानमरणेभिः । संज्ञानमश्विना युवमिहास्मासु नि यच्छतम् ॥ १ ॥
सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा मा युष्महि मनसा दैव्येन । मा घोषा उत्स्थुर्बहुले विनिर्हते मेषुः पप्तदिन्द्रस्याहन्यागते ॥ २ ॥ [५।१]

सूक्त ५३ (५५)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आयुः, बृहस्पतिः, अश्विनौ च ॥ छन्दः—१, २ त्रिष्टुप्; ३ भुरिक् त्रिष्टुप्; ४ उष्णिग्गर्भार्षी पङ्क्तिः; ५—७ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

अमुत्रभूयादधि यद् यमस्य बृहस्पते अभिशस्तेरमुञ्चः । प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्मद् देवानामग्ने भिषजा शचीभिः ॥ १ ॥
सं क्रामतं मा जहीतं शरीरं प्राणापानौ ते सयुजाविह स्ताम् । शतं जीव शरदो वर्धमानोऽग्निष्टे गोपा अधिपा वसिष्ठः ॥ २ ॥
आयुर्यत् ते अतिहितं पराचैरपानः प्राणः पुनरा ताविताम् । अग्निष्टदाहार्निर्ऋतेरुपस्थात् तदात्मनि पुनरा वेशयामि ते ॥ ३ ॥
मेमं प्राणो हासीन्मो अपानोऽवहाय परा गात् । सप्तर्षिभ्य एनं परि ददामि त एनं स्वस्ति जरसे वहन्तु ॥ ४ ॥
प्र विशतं प्राणापानावनड्वाहाविव व्रजम् । अयं जरिम्णः शेवधिररिष्ट इह वर्धताम् ॥ ५ ॥
आ ते प्राणं सुवामसि परा यक्ष्मं सुवामि ते । आयुर्नो विश्वतो दधदयमग्निर्वरेण्यः ॥ ६ ॥
उद् वयं तमसस्परि रोहन्तो नाकमुत्तमम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ ७ ॥ [२.७]

सूक्त ५४ (५६)

ऋषिः—१ ब्रह्मा; भृगुः ॥ देवता—ऋक्सामनी; २ इन्द्रश्च ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

ऋचं॒ साम॑ यजामहे॒ याभ्या॒ं कर्मा॑णि कु॒र्वते॑ । ए॒ते सद॑सि राजतो य॒ज्ञं दे॒वेषु॑ यच्छतः ॥ १ ॥

ऋचं॒ साम॒ यदप्रा॑क्षं ह॒विरोजो॒ यजु॒र्बल॑म् । ए॒ष मा॒ तस्मा॒न्मा हिं॑सी॒द् वेदः॑ पृ॒ष्टः श॑चीपते ॥ २ ॥ [५।३]

सूक्त ५५ (५७)

ऋषिः—भृगुः । देवता—इन्द्र. ॥ छन्दः—विराट् परोष्णिक् ॥ मन्त्र १ ।

ये ते॒ पन्था॒नोव॑ दि॒वो येभि॒र्विश्व॒मैर॑यः । तेभिः॑ सुम्न॒या धे॑हि नो वसो ॥ १ ॥ [५।४]

सूक्त ५६ (५८)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वृश्चिकादयः; २ वनस्पतिः; ४ ब्रह्मणस्पतिः (विषभैषज्यम्) ॥ छन्दः—१—३. ५—८ अनुष्टुप्; ४ विराट् प्रस्तारपङ्क्तिः ॥ मन्त्र ८ ।

तिर॑श्चिराजेरसि॒तात् पृदा॑को॒ः परि॒ संभृ॑तम् । तत् क॒ङ्कप॑र्वणो वि॒षमि॒यं वी॒रुद॑नीनशत् ॥ १ ॥

इ॒यं वी॒रुन्मधु॑जाता मधु॒श्चुन्म॑धु॒ला म॒धूः । सा विह्रु॑तस्य भेष॒ज्यथो॑ मशक॒जम्भ॑नी ॥ २ ॥

यतो॑ द॒ष्टं यतो॑ धी॒तं तत॑स्ते॒ निर्ह्व॑यामसि । अ॒र्भस्य॑ तृप्र॒दंशि॑नो म॒शक॑स्यार॒सं वि॒षम् ॥ ३ ॥

अ॒यं यो व॒क्रो विप॑रु॒र्व्य॑ङ्गो॒ मुखा॑नि व॒क्रा वृ॑जि॒ना कृ॒णोषि॑ । तानि॒ त्वं ब्र॑ह्मणस्पत इ॒षीका॑मिव॒ सं न॑मः ॥ ४ ॥

अ॒र॒सस्य॑ श॒र्कोट॑स्य नी॒चीन॑स्योप॒सर्प॑तः । वि॒षं ह्य॑१॒स्यादि॒ष्यथो॑
एनमजीजभम् ॥ ५ ॥

न ते॑ बा॒ह्वोर्बल॑मस्ति॒ न शी॒र्षे नोत म॑ध्य॒तः । अथ॒ किं पा॒पया॑मु॒या
पुच्छे॑ बिभर्ष्यर्भ॒कम् ॥ ६ ॥

अ॒दन्ति॑ त्वा पि॒पीलि॑का॒ वि वृ॑श्चन्ति मयू॒र्य॑]ः । सर्वे॑ भल ब्रवाथ॒
शार्कोट॑मर॒सं वि॒षम् ॥ ७ ॥

य उ॒भाभ्यां॑ प्र॒हर॑सि॒ पुच्छे॑न चा॒स्ये॑]न च । आ॒स्ये॒३ न ते॑ विषं किमु॑
ते पुच्छ॒धाव॑सत् ॥ ८ ॥ [५।५]

सूक्त ५७ (५९)

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—सरस्वती ॥ छन्दः—जगती ॥ मन्त्र २ ।

यदा॒शसा॒ वद॑तो मे विचुत्तु॒भे यद् या॒च॑मानस्य॒ चर॑तो॒ जना॒ँ अनु॑ ।
यदा॒त्मनि॑ त॒न्वो॑] मे॒ विरि॑ष्टं॒ सर॑स्वती॒ तदा पृ॑णद् घृ॒तेन॑ ॥ १ ॥
स॒प्त क्ष॑रन्ति॒ शिश॑वे म॒रुत्व॑ते पि॒त्रे पु॒त्रासो॒ अप्य॑वीवृतन्नृ॒तानि॑ । उ॒भे
इद॑स्यो॒भे अ॑स्य राजत उ॒भे य॑तेते उ॒भे अ॑स्य पुष्यतः ॥ २ ॥ [५।६]

सूक्त ५८ (६०)

ऋषिः—कौरुपथिः ॥ देवता—इन्द्रावरुणौ ॥ छन्दः—१ जगती; २ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

इन्द्रा॑वरुणा सुतपात्रि॒मं सु॒तं सोमं॑ पिब॒तं मद्यं॑ धृतव्रतौ । यु॒वो रथो॑
अध्व॒रो दे॒ववी॑तये॒ प्रति॒ स्व॑सर॒मुप॑ यातु पी॒तये॑ ॥ १ ॥

इन्द्रा॑वरुणा॒ मधु॑मत्तमस्य॒ वृष्णः॒ सोम॑स्य वृष॒णा वृषे॑थाम् । इ॒दं
वा॒मन्धः॒ परि॑षिक्तमा॒सद्या॒स्मिन् ब॒र्हिषि॑ मादयेथाम् ॥ २ ॥ [५।७]

सूक्त ५९ (६१)

ऋषिः—बादरायणिः ॥ देवता—अरिनाशनम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

यो न॒ः शपा॒दश॑पत॒ः शप॑तो॒ऽयश्च॑ न॒ः शपा॑त् । वृक्ष इ॑व वि॒द्युता॑ ह॒त आ
मूला॒दनु॑ शुष्यतु ॥ १ ॥ [५।८]

सूक्त ६० (६२)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—गृहाः; वास्तोष्पतिः ॥ छन्दः—१, परानुष्टुप्; त्रिष्टुप्;
२—७ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ७ ।

ऊर्ज॒ं बिभ्र॑द् वसु॒वनि॑ः सुमे॒धा अघो॑रेण॒ चक्षु॑षा मि॒त्रिये॑ण । गृहानैमि
सुमना॒ वन्द॑मानो॒ रमध्व॒ं मा बिभीत॒ मत् ॥ १ ॥

इ॒मे गृहा म॑यो॒भुव॒ ऊर्ज॑स्वन्त॒ः पय॑स्वन्तः । पूर्णा वा॒मेन॒ तिष्ठ॑न्त॒स्ते नो॑
जानन्त्वाय॒तः ॥ २ ॥

येषा॑म॒ध्येति॑ प्र॒वस॒न् येषु॑ सौमन॒सो ब॒हुः । गृहानुप॑ ह्वयामहे॒ ते नो॑
जानन्त्वाय॒तः ॥ ३ ॥

उप॑हूता॒ भूरि॑धना॒ः सखा॑यः स्वा॒दुसं॑मुदः । अ॒क्षुध्या अ॑तृष्या स्त॒ गृहा॒
मास्मद् बि॑भीतन ॥ ४ ॥

उप॑हूता इ॒ह गाव॒ उप॑हूता अजा॒वय॑ः । अथो॒ अन्न॑स्य की॒लाल॒ उप॑हूतो
गृहेषु॑ नः ॥ ५ ॥

सूनृता॑वन्तः सु॒भगा॒ इरा॑वन्तो हसामु॒दाः । अ॒तृष्या अ॑क्षु॒ध्या स्त॒ गृहा॒
मास्मद् बि॑भीतन ॥ ६ ॥

इ॒हैव स्त॒ मानु॑ गात॒ विश्वा॑ रू॒पाणि॑ पुष्यत । ऐष्या॑मि भ॒द्रेणा॑ स॒ह
भूयांसो भवता॒ मया॑ ॥ ७ ॥ [६।१]

सूक्त ६१ (६३)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

यद॑ग्ने॒ तप॑सा॒ तप॑ उपत॒प्याम॑हे॒ तपः॑ । प्रि॒याः श्रु॒तस्य॑ भूया॒स्मायु॑ष्मन्तः
सुमे॒धसः॑ ॥ १ ॥

अग्ने॒ तप॑स्तप्यामह॒ उप॑ तप्यामहे॒ तपः॑ । श्रु॒तानि॑ शृ॒ण्वन्तो॑ व॒यमायु॑ष्मन्तः
सुमे॒धसः॑ ॥ २ ॥ [६।२]

सूक्त ६२ (६४)

ऋषिः—मरीचिः काश्यपः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—जगती ॥ मन्त्र १ ।

अ॒यम॒ग्निः सत्प॑तिर्वृ॒द्धवृ॑ष्णो र॒थीव॑ प॒त्तीन॑जयत् पु॒रोहि॑तः । नाभा॑
पृथि॒व्यां निहि॑तो॒ दवि॑द्युतदधस्प॒दं कृ॑णु॒तां ये पृ॑त॒न्यवः॑ ॥ १ ॥ [६।३]

सूक्त ६३ (६५)

ऋषिः—मारीचिः कश्यपः ॥ देवता—जातवेदाः ॥ छन्दः—जगती; । मन्त्र १ ।

पृ॒त॒ना॒जितं॒ सह॑मानम॒ग्निमु॒क्थैर्ह॑वामहे प॒रमात् स॒धस्था॑त् । स नः
पर्ष॒दति॑ दु॒र्गाणि॒ विश्वा॒ क्षाम॑द् दे॒वोऽति॑ दुरि॒तान्य॒ग्निः ॥ १ ॥ [६।४]

सूक्त ६४ (६६)

ऋषिः—यमः ॥ देवता—१ आपः २ अग्निः ॥ छन्दः—१ भुरिगनुष्टुप्; २ न्यङ्-
कुसारिणी बृहती ॥ मन्त्र २ ।

इ॒दं यत् कृ॒ष्णः श॒कुनि॑रभिनि॒ष्पत॒न्नपी॑पतत् । आपो॑ मा॒ तस्मा॒त्
सर्व॑स्माद् दुरि॒तात् पा॒न्त्वंह॑सः ॥ १ ॥

इ॒दं यत् कृ॒ष्णः श॒कुनि॑र॒वामृ॑क्षन्निर्ऋते॒ ते मुखे॑न । अ॒ग्निर्मा॒ तस्मा॒देन॑सो॒
गार्ह॑पत्यः प्र मु॑ञ्चतु ॥ २ ॥ [६।५]

सूक्त ६५ (६६)

ऋषिः— शुक्रः ॥ देवता—अपामार्गः । छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

प्र॒ती॒ची॑नफलो॒ हि त्वमपा॑मार्गः रु॒रोहि॑थ । सर्वा॒न् मच्छ॒पथाँ॒ अधि॒ वरी॑यो यात्रया इ॒तः ॥ १ ॥

यद् दु॑ष्कृ॒तं यच्छम॑लं॒ यद् वा॑ चेरि॒म पा॒पया॑ । त्वया॒ तद् वि॑श्वतोमु॒खा-पा॑मा॒र्गाप॑ मृज्महे ॥ २ ॥

श्या॒वद॑ता कु॒न॒खिना॑ ब॒ण्डेन यत्स॒हासि॒म । अपा॑मार्ग॒ त्वया॑ व॒यं सर्वं॒ तदप॑ मृज्महे ॥ ३ ॥ [६।६]

सूक्त ६६ (६८)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—ब्राह्मणम् ॥ छन्दः—त्रिष्टुप ॥ मन्त्र १ ।

यद्य॒न्तरि॑क्षे॒ यदि॒,वात॒ आस॒ यदि॑ वृ॒क्षेष यदि॒ वोल॑पेषु । यदश्र॑वन् प॒शव॑ उ॒द्यमा॑नं॒ तद् ब्रा॑ह्म॒णं पुन॑र॒स्मानु॒पै॑तु ॥ ॥ १ ॥ [६।७]

सूक्त ६७ (६९)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आत्मा । छन्दः—पुरःपरोष्णिग् बृहती ॥ मंत्र १ ।

पुन॒र्मैत्वि॑न्द्रि॒यं पुन॑रा॒त्मा द्रवि॑णं॒ ब्राह्म॑णं च । पुन॑र॒ग्नयो॒ धिष्ण्या॑ यथास्था॒म क॑ल्पयन्तामि॒हैव ॥ १ ॥ [६।८]

सूक्त ६८ (७०)

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—सरस्वती ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २ त्रिष्टुप्; ३ गायत्री ॥ मंत्र ३ ।

सर॑स्वति व्र॒तेषु॑ ते दि॒व्येषु॑ देवि॒ धाम॑सु । जु॒षस्व॑ ह॒व्यमाहु॑तं प्र॒जां दे॑वि ररास्व नः ॥ १ ॥

इ॒दं ते॑ ह॒व्यं घृ॒तव॑त् सरस्व॒तीदं पि॑तृ॒णां ह॒विरा॒स्यं१ यत् । इ॒मानि॑ त उदि॒ता शंत॑मानि॒ तेभि॑र्व॒यं मधु॑मन्तः स्याम ॥ २ ॥

शि॒वा नः॒ शंत॑मा भव सुमृ॒डीका सर॑स्वति । मा ते॑ युयोम सं॒दृशः॑ ॥३॥
[६९]

सूक्त ६९ (७२)

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—सुखम् ॥ छन्दः—पथ्यापङ्क्तिः ॥ मन्त्र १ ।

शं नो॒ वातो॑ वातु॒ शं न॑स्तपतु॒ सूर्यः॑ । अहा॑नि॒ शं भ॑वन्तु नः॒ शं रात्री॒
प्रति॑ धीयतां॒ शमु॒षा नो॒ व्यु॑च्छतु ॥ १ ॥ [६|१०]

सूक्त ७० (७३)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—श्येनादयो मन्त्रोक्ताः । छन्दः—१ त्रिष्टुप्; अतिजगतीगर्भा जगती; ३ पुरःककुम्मत्यनुष्टुप्; ४, ५ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ५ ।

यत् किं चा॒सौ मन॑सा॒ यच्च॒ वा॒चा य॒ज्ञैर्जु॒होति॑ ह॒विषा॒ यजु॑षा ।
तन्मृ॒त्युना॒ निर्ऋ॑तिः सं॑विदा॒ना पु॒रा स॒त्यादाहु॑तिं हन्त्वस्य ॥ १ ॥
यातु॒धाना॒ निर्ऋ॑ति॒रादु॒ रक्ष॒स्ते अ॑स्य घ्न॒न्त्वनृ॑तेन स॒त्यम् । इन्द्रे॑षिता
दे॒वा आज्य॑मस्य मथ्नन्तु॒ मा तत् स पा॑दि॒ यद॒सौ जु॒होति॑ ॥ २ ॥
अ॒जि॒रा॒धि॒रा॒जौ श्ये॒नौ सं॑पा॒तिना॑विव । आज्यं॑ पृतन्य॒तो ह॑तां॒ यो नः॒
कश्चा॑भ्यघा॒यति ॥ ३ ॥
अपा॑ञ्चौ त उ॒भौ बा॒हू अपि॑ नह्याम्या॒स्य॑म् । अ॒ग्नेर्दे॒वस्य॑ म॒न्युना॒ तेन॑
तेऽवधिषं ह॒विः ॥ ४ ॥
अपि॑ नह्यामि ते बा॒हू अपि॑ नह्याम्या॒स्य॑म् । अ॒ग्नेर्घो॒रस्य॑ म॒न्युना॒ तेन॑
तेऽवधिषं ह॒विः ॥ ५ ॥ [६|११]

सूक्त ७१ (७४)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

परि॑ त्वाग्ने॒ पुरं॑ व॒यं विप्रं॑ सहस्य धीमहि । धृ॒षद्व॑र्णं दि॒वेदि॑वे ह॒न्तारं॑
भङ्गु॒राव॑तः ॥ १ ॥ [६|१२]

सूक्त ७२ (७५)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, अनुष्टुप्; २ ३ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

उत् ति॑ष्ठ॒ताव॑ पश्य॒तेन्द्र॑स्य भा॒गमृ॒त्विय॑म्। यदि॑ श्रा॒तं जु॒होत॑न॒ यद्यश्रा॑तं
म॒मत्त॑न ॥ १ ॥
श्रा॒तं ह॒विरो॒ ष्विन्द्र॒ प्र या॑हि ज॒गाम॒ सूरो॒ अध्व॑नो॒ वि मध्य॑म्। परि॑
त्वासते नि॒धिभि॒ः सखा॑यः कुल॒पा न व्रा॑जप॒तिं चर॑न्तम् ॥ २ ॥

सूक्त ७२ (७६)

श्रा॒तं म॑न्य॒ ऊध॑नि श्रा॒तम॒ग्नौ सुशृ॑तं मन्ये॒ तदृ॒तं नवी॑यः। माध्य॑न्दिनस्य॒
सव॑नस्य द॒ध्नः पिबे॑न्द्रः वज्रिन् पुरु॒कृज्जु॑षा॒णः ॥ ३ ॥ [६।१३]

सूक्त ७३ (७७)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—घर्मः; अश्विनौ, प्रत्यृचं मन्त्रोक्ता वा ॥ छन्दः—१. ४,
६ जगती; २ पथ्याबृहती; ३, ५, ७—११ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ११ ।

समि॑द्धो अ॒ग्निर्वृ॑षणा र॒थी दि॒वस्त॒प्तो घ॒र्मो दु॑ह्यते वामि॒षे मधु॑। व॒यं
हि वाँ पुरु॒दमा॑सो अश्वि॒ना हवा॑महे सध॒मादे॑षु का॒रव॑ः ॥ १ ॥
समि॑द्धो अ॒ग्निर॑श्विना त॒प्तो वाँ घ॒र्म आ ग॑तम्। दु॒ह्यन्ते॑ नू॒नं वृ॑षणे॒ह
धे॒नवो॒ द॒स्रा मद॑न्ति वे॒धस॑ः ॥ २ ॥
स्वाहा॑कृत॒ः शुचि॑र्दे॒वेषु॑ य॒ज्ञो यो अ॒श्विनो॑श्चम॒सो दे॑व॒पान॑ः। तमु॒ विश्वे॑
अ॒मृता॑सो जुषा॒णा ग॑न्ध॒र्वस्य॒ प्रत्या॒स्ना रि॑हन्ति ॥ ३ ॥
यदु॒स्रिया॒स्वाहु॑तं घृ॒तं पयो॒ऽयं स वा॑मश्विना भा॒ग आ ग॑तम्। माध्वी॑
धर्तारा विदथस्य सत्पती त॒प्तं घ॒र्मं पि॑बतं रोच॒ने दि॒वः ॥ ४ ॥

तप्तो वां घर्मो नक्षतु स्वहोता प्र वामध्वर्युश्चरतु पयस्वान् । मधोर्दुग्धस्याश्विना तनाया वीतं पातं पयस उस्रियायाः ॥ ५ ॥

उप द्रव पयसा गोधुगोषमा घर्मे सिञ्च पय उस्रियायाः । वि नाकमख्यत् सविता वरेण्योऽनुप्रयाणमुषसो वि राजति ॥ ६ ॥

उप ह्वये सुदुघां धेनुमेतां सुहस्तो गोधुगुत दोहदेनाम् । श्रेष्ठं सवं सविता साविषन्नोऽभीद्धो घर्मस्तदु षु प्र वोचत् ॥ ७ ॥

हिङ्कृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसा न्यागन् । दुहामश्विभ्यां पयो अघ्न्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय ॥ ८ ॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोण इमं नो यज्ञमुप याहि विद्वान् । विश्वा अग्ने अभियुजो विहत्य शत्रूयतामा भरा भोजनानि ॥ ९ ॥

अग्ने शर्ध महते सौभगाय तव द्युम्नान्युत्तमानि सन्तु । सं जास्पत्यं सुयममा कृणुष्व शत्रूयतामभि तिष्ठा महांसि ॥ १० ॥

सूयवसाद् भगवती हि भूया अधा वयं भगवन्तः स्याम । अद्धि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती ॥ ११ ॥ [६।१४]

सूक्त ७४ (७८)

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता – मन्त्रोक्ताः; ४ जातवेदाः ॥ छन्दः—[१—२] अनुष्टुप्; [४ त्रिष्टुप्] ॥ मन्त्र ४ ।

अपचितां लोहिनीनां कृष्णा मातेति शुश्रुम । मुनेर्देवस्य मूलेन सर्वा विध्यामि ता अहम् ॥ १ ॥

वि॒ध्या॑म्यासां॑ प्रथ॒मां वि॒ध्या॑म्यु॒त म॑ध्य॒माम् । इ॒दं ज॑घ॒न्या॑मासा॒मा
च्छि॑नद्मि॒ स्तुका॑मिव ॥ २ ॥

त्वा॒ष्ट्रेणा॒हं वच॑सा॒ वि त॑ ई॒र्ष्याम॑मीमदम् । अथो॒ यो म॒न्युष्टे॑ पते॒ तमु॑
ते शमयामसि ॥ ३ ॥

व्र॒तेन॒ त्वं॑ व्र॑तपते॒ सम॑क्तो वि॒श्वाहा॑ सु॒मना॑ दीदिही॒ह । तं त्वा॑ व॒यं
जा॑तवेदः॒ समि॑द्धं प्र॒जाव॑न्त॒ उप॑ सदेम॒ सर्वे॑ ॥ ४ ॥ [७।१

सूक्त ७५ (७९)

ऋषिः—उपरिबभ्रवः ॥ देवता—अघ्न्याः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ पञ्चपदा भुरिक् पथ्यापङ्क्तिः ॥ मन्त्र २ ।

प्र॒जाव॑तीः सू॒यव॑से रु॒शन्तीः॑ शु॒द्धा अ॒पः सु॑प्रपा॒णे पिब॑न्तीः । मा व॑
स्ते॒न ई॑शत॒ माघशं॑स॒ः परि॑ वो रु॒द्रस्य॑ हे॒तिर्वृ॑णक्तु ॥ १ ॥

प॒द॒ज्ञा स्थ॒ रम॑तयः॒ संहि॑ता वि॒श्वना॑म्नीः । उप॑ मा देवीर्दे॒वेभि॒रेत॑ ।
इ॒मं गो॒ष्ठमि॒दं सदो॑ घृ॒तेना॒स्मान्त्समु॑क्षत ॥ २ ॥ [७।२]

सूक्त ७६ (८०)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१, २ अपचिद् भैषज्यम्; ३—५ जायान्यः; ६ इन्द्रः ॥
छन्दः—१ विराडनुष्टुप् ॥ २ परोष्णिक्; ३, ४ अनुष्टुप्; ५ भुरिगनुष्टुप्; ६ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

आ सु॒स्रसः॑ सु॒स्रसो॒ अस॑तीभ्यो॒ अस॑त्तराः । सेहो॑रर॒सत॑रा लव॒णाद्
विक्ले॑दीयसीः ॥ १ ॥

या ग्रैव्या॑ अप॒चितोऽथो॒ या उ॑पप॒क्ष्याः॑ । वि॒जाम्नि॒ या अ॑प॒चितः॑
स्वयं॒स्रसः॑ ॥ २ ॥

यः कीक॑साः प्रशृ॒णाति॑ तली॒द्य॑मव॒तिष्ठ॑ति । निर्हा॒स्तं सर्वं॑ जा॒यान्यं॒ यः
कश्च॑ क॒कुदि॑ श्रि॒तः ॥ ३ ॥

प॒क्षी जा॒यान्यः॑ पतति॒ स आ वि॑शति॒ पूरु॑षम् । तदक्षि॑तस्य भेष॒ज-
मु॒भयो॒ः सुद्ध॑तस्य च ॥ ४ ॥

सूक्त ७६ (८१)

वि॒द्म वै ते॑ जायान्य॒ जानं॒ यतो॑ जायान्य॒ जाय॑से । क॒थं ह॒ तत्र॒ त्वं
ह॑नो॒ यस्य॑ कृ॒ण्मो ह॒विर्गृ॒हे ॥ ५ ॥

धृ॒षत् पि॑ब क॒लशे॒ सोम॑मिन्द्र वृत्र॒हा शू॑र सम॒रे वसू॑नाम् । माध्यं॑न्दिने॒
सव॑न॒ आ वृ॑षस्व रयि॒ष्ठानो॑ र॒यिम॒स्मासु॑ धेहि ॥ ६ ॥ [७।३]

सूक्त ७७ (८२)

ऋषिः—अङ्गिराः ॥ देवता—मरुतः ॥ छन्दः—१ त्रिपदा गायत्री; २ त्रिष्टुप्;
३ जगती ॥ मन्त्र ३ ।

सांत॑पना इ॒दं ह॒विर्मरु॑त॒स्तज्जु॑जुष्टन । अ॒स्माको॒ती रि॑शादसः ॥ १ ॥

यो नो॒ मर्तो॑ मरुतो दुर्हृ॒णायु॑स्ति॒रश्चि॒त्तानि॑ वसवो॒ जिघां॑सति । द्रु॒हः
पाशा॒न् प्रति॑ मुञ्चतां॒ सस्तपि॑ष्ठेन॒ तप॑सा हन्तना॒ तम् ॥ २ ॥

सं॒व॒त्स॒रीणा॑ म॒रुतः॑ स्व॒र्का उ॑रु॒क्षया॒ः सग॑णा॒ मानु॑षासः । ते अ॒स्मत्
पाशा॒न् प्र मु॑ञ्चन्त्वेन॑सः सांत॒पना॑ मत्स॒रा मा॑दयि॒ष्णवः॑ ॥३॥ [७।४]

सूक्त ७८ (८३)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ परोष्णिक्; २ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र २ ।

वि ते॑ मुञ्चामि रश॒नां वि योक्त्रं॒ वि नि॒योज॑नम् । इ॒हैव त्वमज॑स्र
एध्यग्ने ॥ १ ॥

अस्मै क्षत्राणि धारयन्तमग्ने युनज्मि त्वा ब्रह्मणा दैव्येन । दीदिह्य१स्मभ्यं द्रविणेह भद्रं प्रेमं वोचो हविर्दां देवतासु ॥ २ ॥ [७५]

सूक्त ७९ (८४)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अमावस्या ॥ छन्दः—१ जगती ॥ २—४ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ४ ।

यत् ते देवा अकृण्वन् भागधेयममावास्ये संवसन्तो महित्वा । तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम् ॥ १ ॥

अहमेवास्म्यमावास्या३ मामा वसन्ति सुकृतो मयीमे । मयि देवा उभये साध्याश्चेन्द्रज्येष्ठाः समगच्छन्त सर्वे ॥ २ ॥

आगन् रात्री संगमनी वसूनामूर्जं पुष्टं वस्वावेशयन्ती । अमावास्यायै हविषा विधेमोर्जं दुहाना पयसा न आगन् ॥ ३ ॥

अमावास्ये न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ४ ॥ [७६]

सूक्त ८० (८५)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१, २, ४ पौर्णमासी; ३ प्रजापतिः ॥ छन्दः—१, ३, ४ त्रिष्टुप्; २ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तादुन्मध्यतः पौर्णमासी जिगाय । तस्यां देवैः संवसन्तो महित्वा नाकस्य पृष्ठे समिषा मदेम ॥ १ ॥

वृषभं वाजिनं वयं पौर्णमासं यजामहे । स नो ददात्वक्षितां रयिमनुपदस्वतीम् ॥ २ ॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान । यत्कामास्ते
जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ३ ॥
पौर्णमासी प्रथमा यज्ञियासीदह्नां रात्रीणामतिशर्वरेषु । ये त्वां यज्ञै-
र्यज्ञिये अर्धयन्त्यमी ते नाके सुकृतः प्रविष्टाः ॥ ४ ॥ [७।७]

सूक्त ८१ (८६)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सावित्री, सूर्यः, चन्द्रश्च ॥ छन्दः—१, २, ६ त्रिष्टुप्; ३ अनुष्टुप्; ४ आस्तारपङ्क्तिः; ५ स्वराडास्तारपङ्क्तिः ॥ मंत्र ६ ।

पूर्वापरं चरतो माययैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् । विश्वान्यो
भुवना विचष्ट ऋतूँरन्यो विदधज्जायसे नवः ॥ १ ॥
नवोनवो भवसि जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेष्यग्रम् । भागं देवेभ्यो वि
दधास्यायन् प्र चन्द्रमस्तिरसे दीर्घमायुः ॥ २ ॥
सोमस्यांशो युधां पतेऽनूनो नाम वा असि । अनूनं दर्श मा कृधि
प्रजया च धनेन च ॥ ३ ॥
दर्शोऽसि दर्शतोऽसि समग्रोऽसि समन्तः । समग्रः समन्तो भूयासं
गोभिरश्वैः प्रजया पशुभिर्गृहैर्धनेन ॥ ४ ॥
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तस्य त्वं प्राणेना प्यायस्व । आ वयं
प्यासिषीमहि गोभिरश्वैः प्रजया पशुभिर्गृहैर्धनेन ॥ ५ ॥
यं देवा अंशुमाप्याययन्ति यमक्षितमक्षिता भक्षयन्ति । तेनास्मानिन्द्रो
वरुणो बृहस्पतिरा प्याययन्तु भुवनस्य गोपाः ॥ ६ ॥ [७।८]

सूक्त ८२ (८७)

ऋषिः—शौनकः (संपत्कामः) ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१, ४—६ त्रिष्टुप्; २ ककुम्मती बृहती; ३ जगती ॥ मंत्र ६ ।

अ॒भ्य॑र्चत सुष्टु॒तिं गव्य॑मा॒जिम॒स्मासु॑ भ॒द्रा द्रवि॑णानि धत्त । इ॒मं य॒ज्ञं नय॑त दे॒वता॑ नो घृ॒तस्य॒ धारा॒ मधु॑मत् पवन्ताम् ॥ १ ॥

मय्य॒ग्रे अ॒ग्निं गृ॑ह्णामि स॒ह क्ष॒त्रेण॒ वर्च॑सा॒ बले॑न । मयि॑ प्र॒जां मय्यायु॑र्दधामि॒ स्वाहा॒ मय्य॒ग्निम् ॥ २ ॥

इ॒है॒वाग्ने॒ अधि॑ धारया र॒यिं मा त्वा॒ नि क्र॒न् पूर्व॑चित्ता निका॒रिणः॑ । क्ष॒त्रेणा॑ग्ने सु॒यम॑मस्तु॒ तुभ्य॑मुपस॒त्ता व॑र्धतां ते॒ अनि॑ष्टृतः ॥ ३ ॥

अन्व॒ग्निरु॒षसा॒मग्र॑मख्य॒दन्वहा॑नि प्रथ॒मो जा॒तवे॑दाः । अनु॒ सूर्य॑ उ॒षसो॒ अनु॑ र॒श्मीननु॒ द्यावा॑पृथि॒वी आ वि॑वेश ॥ ४ ॥

प्रत्य॒ग्निरु॒षसा॒मग्र॑मख्य॒त् प्रत्यहा॑नि प्रथ॒मो जा॒तवे॑दाः । प्रति॒ सूर्य॑स्य पु॒रुधा॑ च र॒श्मीन् प्रति॒ द्यावा॑पृथि॒वी आ त॑तान ॥ ५ ॥

घृ॒तं ते॑ अग्ने दि॒व्ये स॒धस्थे॑ घृ॒तेन॒ त्वां मनु॑र॒द्या समि॑न्धे । घृ॒तं ते॑ दे॒वीर्न॒प्त्य१॒॑ आ व॑हन्तु घृ॒तं तुभ्यं॑ दुह्रतां॒ गावो॑ अग्ने ॥ ६ ॥ [८।१]

सूक्त ८३ (८८)

ऋषिः—शुनःशेपः ॥ देवता—वरुणः ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २ पथ्या पङ्क्तिः; ३ त्रिष्टुप् ४ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

अ॒प्सु ते॑ राजन् वरुण गृ॒हो हि॑र॒ण्ययो॑ मि॒थः । ततो॑ धृ॒तव्र॑तो॒ राजा॒ सर्वा॒ धामा॑नि मुञ्चतु ॥ १ ॥

धाम्नो॑धाम्नो राजन्नि॒तो व॑रुण मुञ्च नः । यदापो॑ अ॒घ्न्या इति॒ वरु॒णेति॒ यदू॒चिम॒ ततो॑ वरुण मुञ्च नः ॥ २

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय। अधा वयमादित्य
व्रते तवानागसो अदितये स्याम ॥ ३ ॥
प्रास्मत् पाशान् वरुण मुञ्च सर्वान् य उत्तमा अधमा वारुणा ये।
दुष्वप्न्यं दुरितं नि ष्वास्मदथ गच्छेम सुकृतस्य लोकम् ॥४॥ [८।२]

सूक्त ८४ (८९)

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—१ अग्निः २; ३ इन्द्रः ॥ छन्दः—१ जगती; २, ३ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ३ ।

अनाधृष्यो जातवेदा अमर्त्यो विराडग्ने क्षत्रभृद् दीदिहीह। विश्वा
अमीवाः प्रमुञ्चन् मानुषीभिः शिवाभिरद्य परि पाहि नो गयम् ॥१॥
इन्द्र क्षत्रमभि वाममोजोऽजायथा वृषभ चर्षणीनाम्। अपानुदो
जनममित्रायन्तमुरुं देवेभ्यो अकृणोरु लोकम् ॥ २ ॥
मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आ जगम्यात् परस्याः।
सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताढि वि मृधो नुदस्व ॥३॥
[८।३]

सूक्त८५ (९०)

ऋषिः—अथर्वा ॥ (स्वस्त्ययनकामः) ॥ देवता—तार्क्ष्यः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मंत्र १ ।

त्यमू षु वाजिनं देवजूतं सहोवानं तरुतारं रथानाम्। अरिष्टनेमिं
पृतनाजिमाशुं स्वस्तये तार्क्ष्यमिहा हुवेम ॥ १ ॥ [८।४]

सूक्त ८६ (९१)

ऋषिः—अथर्वा ॥ (स्वस्त्ययनकामः) ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे सुहवं शूरमिन्द्रम्। हुवे नु शक्रं
पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्ति न इन्द्रो मघवान् कृणोतु ॥ १ ॥ [८।५]

सूक्त ८७ (९२)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—रुद्रः ॥ छन्दः—जगती ॥ मंत्र १ ।

यो अ॒ग्नौ रु॒द्रो यो अ॒प्स्व१॒॑न्तर्य ओष॑धीर्वी॒रुध॑ आवि॒वेश॑ । य इ॒मा
विश्वा॒ भुव॑नानि चाक्लृ॒पे तस्मै॑ रु॒द्राय॒ नमो॑ अस्त्व॒ग्नये॑ ॥ १ ॥ [८।६]

सूक्त ८८ (९३)

ऋषिः—गरुत्मान् । देवता—सर्पविषापाकरणम् । छन्दः—बृहती ॥ मन्त्र १ ।

अपे॒ह्यरि॑र॒स्यरि॒र्वा अ॑सि । वि॒षे वि॒षम॑पृक्था वि॒षमिद् वा अ॑पृक्थाः ।
अहि॑मे॒वाभ्यपे॑हि॒ तं ज॑हि ॥ १ ॥ [८।७]

सूक्त ८९ (९४)

ऋषिः—सिन्धुद्वीपः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१—३ अनुष्टुप्; ४ त्रिपदा निचृत्परोष्णिक् ॥ मन्त्र ४ ।

अ॒पो दि॒व्या अ॑चायिषं॒ रसे॑न॒ सम॑पृक्ष्महि । पय॑स्वानग्न॒ आग॑मं॒ तं मा॒
सं सृ॑ज॒ वर्च॑सा ॥ १ ॥

सं मा॑ग्ने॒ वर्च॑सा सृज॒ सं प्र॒जया॒ समायु॑षा । वि॒द्युर्मे॑ अ॒स्य दे॒वा इन्द्रो॑
वि॒द्यात् स॒ह ऋषि॑भिः ॥ २ ॥

इ॒दमा॑पः॒ प्र व॑हतावद्यं॑ च॒ मलं॑ च॒ यत् । यच्चा॑भिदु॒द्रोहानृ॑तं॒ यच्च॑ शे॒पे
अ॒भीरु॑णम् ॥ ३ ॥

एधो॑ऽस्येधिषी॒य स॒मिद॑सि॒ समे॑धिषीय । तेजो॑ऽसि॒ तेजो॒ मयि॑ धेहि ॥४॥
[८।८]

सूक्त ९० (९५)

ऋषिः—अङ्गिराः ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ गायत्री; २ विराट्पुरस्ताद्बृहती; ३ षट्पदा भुरिग् जगती ॥ मन्त्र ३ ।

अपि॑ वृश्च पुरा॒णवद् व्र॒तते॑रिव गुष्पि॒तम्। ओजो॑ दा॒सस्य॑ दम्भय ॥१॥

व॒यं तद॑स्य॒ संभृ॑तं॒ वस्त्विन्द्रे॑ण॒ वि भ॑जामहै । म्ला॒पया॑मि भ्र॒जः शि॒भ्रं वरु॑णस्य व्र॒तेन॑ ते ॥ २ ॥

यथा॒ शेपो॑ अ॒पाया॑तै स्त्री॒षु चास॒दना॑वयाः । अ॒व॒स्थस्य॑ क्न॒दीव॑तः शाङ्कु॒रस्य॑ नितो॒दिनः॑ । यदात॑त॒मव॒ तत्त॑नु॒ यदुत्त॑तं॒ नि तत्त॑नु ॥ ३ ॥
[८।६]

सूक्त ९१ (९६)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—चन्द्रमाः (?, इन्द्रः) ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

इन्द्रः॑ सु॒त्रामा॒ स्ववाँ॒ अवो॑भिः सुमृडी॒को भ॑वतु वि॒श्ववे॑दाः । बाध॑तां॒ द्वेषो॒ अभ॑यं नः कृणोतु सु॒वीर्य॑स्य॒ पत॑यः स्याम ॥ १ ॥ [९।१]

सूक्त ९२ (९७)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—चन्द्रमाः (?, इन्द्रः) ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

स सु॒त्रामा॒ स्ववाँ॒ इन्द्रो॑ अ॒स्मदा॒राच्चि॒द् द्वेषः॑ सनु॒तर्यु॑योतु । तस्य॑ व॒यं सु॑म॒तौ य॒ज्ञिय॒स्यापि॑ भ॒द्रे सौ॑मन॒से स्या॑म ॥ १ ॥ [९।२]

सूक्त ९३ (९८)

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र १ ।

इन्द्रे॑ण म॒न्युना॑ व॒यम॒भि ष्या॑म पृतन्य॒तः । घ्नन्तो॑ वृ॒त्राण्य॑प्र॒ति ॥१॥
[९।३]

सूक्त ९४ (९९)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—सोमः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

ध्रु॒वं ध्रु॒वेण॑ ह॒विषाव॒ सोमं॑ नयामसि । यथा॑ न॒ इन्द्रः॒ केव॑ली॒र्विशः॒ संम॑नस॒स्कर॑त् ॥ १ ॥ [९।४]

सूक्त ९५ (१००)

ऋषिः—कपिञ्जलः ॥ देवता—गृध्रौ ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २, ३ भुरिगनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

उदस्य श्यावौ विथुरौ गृध्रौ द्यामिव पेततुः । उच्छोचनप्रशोचनावस्योच्छोचनौ हृदः ॥ १ ॥

अहमेनावुदतिष्ठिरं गावौ श्रान्तसदाविव । कुकुराविव कूजन्तावुदवन्तौ वृकाविव ॥ २ ॥

आतोदिनौ नितोदिनावथो संतोदिनावुत । अपि नह्याम्यस्य मेढ्रं य इतः स्त्री पुमाञ्जभार ॥ ३ ॥ [९।५]

सूक्त ९६ (१०१)

ऋषिः—कपिञ्जलः । देवता—वयः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

असदन् गावः सदनेऽपप्तद् वसतिं वयः । आस्थाने पर्वता अस्थुः स्थाम्नि वृक्कावतिष्ठिपम् ॥ १ ॥ [९।६]

सूक्त ९७ (१०२)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—१—४ त्रिष्टुप्; ५ त्रिपदाऽऽर्षी (?, त्रिपदाऽऽर्ची) भुरिग् गायत्री; ६ त्रिपदा प्राजापत्या बृहती; ७ त्रिपदा साम्नी भुरिग् जगती; ८ उपरिष्टाद् बृहती ॥ मन्त्र ८ ।

यदद्य त्वा प्रयति यज्ञे अस्मिन् होतश्चिकित्वन्नवृणीमहीह । ध्रुवमयो ध्रुवमुता शविष्ठ प्रविद्वान् यज्ञमुप याहि सोमम् ॥ १ ॥

समिन्द्र नो मनसा नेष गोभिः सं सूरिभिर्हरिवन्त्सं स्वस्त्या । सं ब्रह्मणा देवहितं यदस्ति सं देवानां सुमतौ यज्ञियानाम् ॥ २ ॥

यानाव॑ह उ॒श॒तो दे॑व दे॒वांस्तान् प्रेर॑य॒ स्वे अ॑ग्ने स॒धस्थे॑। ज॒क्षि॒वांस॑ः
पपि॒वांसो॒ मधू॑न्य॒स्मै ध॑त्त वसवो॒ वसू॑नि ॥ ३ ॥

सु॒गा वो॑ देवा॒ः सद॑ना अक॒र्म॒ य आ॑ज॒ग्म सव॑ने मा जु॒षा॒णाः। वह॑-
माना॒ भर॑माणा॒ः स्वा वसू॑नि॒ वसुं॑ घ॒र्मं दिव॒मा रो॑ह॒तानु॑ ॥ ४ ॥

यज्ञं॑ य॒ज्ञं ग॑च्छ य॒ज्ञप॑तिं गच्छ। स्वां॑ योनिं॑ गच्छ॒ स्वाहा॑ ॥ ५ ॥

ए॒ष ते॑ य॒ज्ञो य॑ज्ञपते स॒हसू॑क्तवाकः। सु॒वीर्य॒ः स्वाहा॑ ॥ ६ ॥

वष॑ड्ढु॒तेभ्यो॒ वष॒डहु॑तेभ्यः। देवा॑ गातु॑विदो गा॒तुं वि॒त्त्वा
गा॒तुमि॑त ॥ ७ ॥

मन॑सस्पत इ॒मं नो॑ दि॒वि दे॒वेषु॑ य॒ज्ञम्। स्वाहा॑ दि॒वि स्वाहा॑ पृथि॒व्यां॑
स्वाहा॒न्तरि॑क्षे॒ स्वाहा॒ वाते॑ धा॒ं स्वाहा॑ ॥ ८ ॥ [९।७]

सूक्त ९८ (१०३)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—विराट् ॥ मन्त्र १ ।

सं ब॒र्हिर॒क्तं ह॒विषा॑ घृ॒तेन॒ समिन्द्रे॑ण॒ वसु॑ना॒ सं म॒रुद्भि॑ः। सं दे॒वैर्वि॒श्व-
दे॑वेभिर॒क्तमिन्द्रं॑ गच्छतु ह॒विः स्वाहा॑ ॥ १ ॥ [९।८]

सूक्त ९९ (१०४)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वेदिः ॥ छन्दः—भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

परि॑ स्तृणीहि॒ परि॑ धेहि॒ वेदिं॒ मा जा॒मिं मो॑षीरमु॒या शया॑नाम्। हो॒तृ॒
षद॑नं॒ हरि॑तं हि॒रण्ययं॑ नि॒ष्का ए॒ते यज॑मानस्य लो॒के ॥ १ ॥ [९।९]

सूक्त १०० (१०५)

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

प॒र्यावर्ते॑ दु॒ष्वप्न्या॑त् पा॒पात् स्वप्न्या॒दभू॑त्याः। ब्र॒ह्माहम॑न्तरं कृण्वे॒ परा॒
स्वप्न॑मुखा॒ः शुच॑ः ॥ १ ॥ [९।१०]

सूक्त १०१ (१०६)

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

यत् स्व॒प्ने॒ अन्न॑म॒श्नामि॒ न प्रा॒तर॑धिग॒म्यते॑ । सर्वं॒ तद॑स्तु मे शि॒वं न॒हि
तद् दृ॒श्यते॒ दिवा॑ ॥ १ ॥ [९।११]

सूक्त १०२ (१०७)

ऋषिः—प्रजापतिः ॥ देवता—द्यावापृथिव्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—विराट्-पुरस्ताद्बृहती ॥ मन्त्र १ ।

न॒म॒स्कृत्य॒ द्यावा॑पृथि॒वीभ्या॑म॒न्तरि॑क्षाय मृ॒त्यवे॑ । मे॒क्षाम्यू॒र्ध्वस्तिष्ठ॒न् मा
मा॑ हिंसिषुरीश्व॒राः ॥ १ ॥ [९।१२]

सूक्त १०३ (१०८)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आत्मा ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

को अ॒स्या नो॑ द्रु॒हो॑ऽव॒द्यव॑त्या॒ उन्ने॑ष्यति क्ष॒त्रियो॒ वस्य॑ इ॒च्छन् । को
य॒ज्ञका॑मः क उ॒ पूर्ति॑काम॒ः को दे॒वेषु॑ वनुते दी॒र्घमायु॑ः ॥१॥ [१०।१]

सूक्त १०४ (१०९)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आत्मा ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

कः पृश्निं॑ धे॒नुं वरु॑णेन द॒त्ताम॑थर्वणे सु॒दुघां॒ नित्य॑वत्साम् । बृह॒स्पति॑ना
स॒ख्यं॑ऽ जु॒षा॒णो यथा॑व॒शं त॒न्व॑ऽः कल्पयाति ॥ १ ॥ [१०।२]

सूक्त १०५ (११०)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

अ॒प॒क्राम॒न् पौरु॑षेयाद् वृ॒णा॒नो दैव्यं॒ वच॑ः । प्रणी॑तीर॒भ्याव॑र्तस्व॒ विश्वे॑भि॒ः
सखि॑भिः स॒ह ॥ १ ॥ [१०।३]

सूक्त १०६ (१११)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—जातवेदाः, वरुणश्च ॥ छन्दः—बृहतीगर्भा त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

यदस्मृ॑ति चकृ॒म किं चि॑दग्न उपारि॒म चर॑णे जातवेदः । तत॑ः पाहि॒
त्वं न॑ः प्रचेतः शु॒भे सखि॑भ्यो अमृत॒त्वम॑स्तु नः ॥ १ ॥ [१०।४]

सूक्त १०७ (११२)

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—सूर्यः, आपश्च ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

अव॑ दि॒वस्ता॑रयन्ति स॒प्त सूर्य॑स्य र॒श्मय॑ः । आप॑ः समु॒द्रिया॒ धारा॒स्तास्ते॑
श॒ल्यम॑सिस्रसन् ॥ १ ॥ [१०।५]

सूक्त १०८ (११३)

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप्; २ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र २ ।

यो न॑स्ता॒यद् दिप्स॑ति॒ यो न॑ आ॒विः स्वो वि॒द्वानर॑णो वा नो अग्ने ।
प्र॒तीच्ये॒त्वर॑णी द॒त्वती॒ तान् मैषा॑मग्ने॒ वास्तु॑ भू॒न्मो अप॑त्यम् ॥ १ ॥
यो न॑ः सु॒प्तान् जाग्र॑तो वाभि॒दासा॒त् तिष्ठ॑तो वा॒ चर॑तो जातवेदः । वै॒श्वा॒-
नरेण॑ स॒युजा॑ स॒जोषा॒स्तान् प्र॒तीचो॒ निर्द॑ह जातवेदः ॥ २ ॥ [१०।६]

सूक्त १०९ (११४)

ऋषिः—बादरायणिः ॥ देवता—अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ विराट्पुरस्ताद्-
बृहती; २, ३, ५, ६ त्रिष्टुप्; ४, ७ अनुष्टुप् ॥ मंत्र ७ ।

इ॒दमु॒ग्राय॑ ब॒भ्रवे॒ नमो॒ यो अ॒क्षेषु॑ तनूव॒शी । घृ॒तेन॒ कलिं॑ शिक्षामि॒ स
नो॑ मृडाती॒दृशे॑ ॥ १ ॥

घृ॒तम॑प्स॒राभ्यो॑ वह॒ त्वम॑ग्ने पां॒सून॒क्षेभ्य॒ः सिक॑ता अ॒पश्च॑ । य॒था॒भा॒गं
ह॒व्यदा॑तिं जुषा॒णा मद॑न्ति दे॒वा उ॒भया॑नि ह॒व्या ॥ २ ॥
अ॒प्स॒रस॑ः सध॒मादं॑ मदन्ति हवि॒र्धान॑मन्त॒रा सूर्यं॑ च । ता मे॒ हस्तौ॒ सं
सृ॑जन्तु घृ॒तेन॑ स॒पत्नं॑ मे कित॒वं र॑न्धयन्तु ॥ ३ ॥
आ॒दि॒न॒वं प्र॑ति॒दीव्ने॑ घृ॒तेना॒स्माँ अ॒भि क्ष॑र । वृ॒क्षमि॑वा॒शन्या॑ जहि॒ यो
अ॒स्मान् प्र॑ति॒दीव्य॑ति ॥ ४ ॥
यो नो॑ द्यु॒वे धन॑मि॒दं च॒कार॒ यो अ॒क्षाणां॑ ग्लह॑नं॒ शेष॑णं च । स नो॑ दे॒वो
ह॒विरि॒दं जु॑षा॒णो ग॑न्ध॒र्वेभि॑ः सध॒मादं॑ मदेम ॥ ५ ॥
संव॑सव॒ इति॑ वो नाम॒धेय॑मुग्रंप॒श्या रा॑ष्ट्र॒भृतो॒ ह्य१॒क्षाः । तेभ्यो॑ व
इन्द॑वो ह॒विषा॑ विधेम व॒यं स्या॑म॒ पत॑यो रयी॒णाम् ॥ ६ ॥
दे॒वान् यन्ना॑थि॒तो हु॒वे ब्र॑ह्म॒चर्यं॒ यदू॑षि॒म । अ॒क्षान् यद् ब॒भ्रूना॒लभे॒ ते
नो॑ मृडन्त्वी॒दृशे॑ ॥ ७ ॥ [१०।७]

सूक्त ११० (११५)

ऋषिः—भृगुः । देवता—इन्द्राग्नी ॥ छन्दः—१ गायत्री; २ त्रिष्टुप्; ३ अनुष्टुप् ॥
मन्त्र ३ ।

अग्न॒ इन्द्र॑श्च दा॒शुषे॑ ह॒तो वृ॒त्राण्य॑प्र॒ति । उ॒भा हि वृ॑त्र॒हन्त॑मा ॥ १ ॥
याभ्या॒मज॑य॒न्त्स्व१॒रग्र॑ एव यावा॑त॒स्थतु॒र्भुव॑नानि॒ विश्वा॑ । प्र च॑र्षणी॒
वृष॑णा॒ वज्र॑बाहू अ॒ग्निमिन्द्रं॑ वृत्र॒हणा॑ हुवे॒ऽहम् ॥ २ ॥
उप॑ त्वा दे॒वो अ॑ग्रभीच्चम॒सेन॒ बृह॒स्पति॑ः । इन्द्र॑ गी॒र्भिर्न॒ आ वि॑श॒
यज॑मानाय सुन्व॒ते ॥ ३ ॥ [१०।८]

सूक्त १११ (११६)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—वृषभः ॥ छन्दः—पराबृहती त्रिष्टुप् ॥ मंत्र १ ।

इन्द्र॑स्य कु॒क्षिर॑सि सोम॒धानं॑ आ॒त्मा दे॒वाना॑मु॒त मानु॑षाणाम् । इ॒ह प्र॒जा
जन॑य॒ यास्त॑ आ॒सु या अ॒न्यत्रे॒ह तास्ते॑ रमन्ताम् ॥ १ ॥ [१०।९]

सूक्त ११२ (११७)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आपः । छन्दः—१ भुरिगनुष्टुप्; २ अनुष्टुप् । मत्र २ ।

शुम्भ॑नी॒ द्यावा॑पृथि॒वी अ॑न्तिसु॒म्ने॒ महि॑व्रते । आप॑ः स॒प्त सु॑स्रुवु॒र्दे॒वीस्ता
नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १ ॥

मु॒ञ्चन्तु॑ मा शप॒थ्या॒३॒दथो॑ वरु॒ण्या॑दु॒त । अथो॑ य॒मस्य॒ पड्वी॑शा॒द्
विश्व॑स्माद् दे॒वकिल्बि॒षात् ॥ २ ॥ [१०।१०]

सूक्त ११३ (११८)

ऋषिः—भार्गवः । देवता—तृष्टिका ॥ छन्दः—विराडनुष्टुप् ; २ शङ्कुमती चतुष्पदा भुरिगुष्णिक् ॥ मन्त्र २ ।

तृष्टि॑के॒ तृष्ट॑वन्दन॒ उद॒मूं छि॑न्धि तृष्टिके । यथा॑ कृ॒तद्वि॒ष्टासो॒ऽमुष्मै॑
शे॒प्याव॑ते ॥ १ ॥

तृष्टासि॑ तृष्टि॒का वि॒षा विषा॑त॒क्य॑सि । परि॑वृक्ता॒ यथास॑स्यृष॒भस्य॑
व॒शेव॑ ॥ २ ॥ [१०।११]

सूक्त ११४ (११९)

ऋषिः—भार्गवः । देवता—अग्नीषोमौ ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

आ ते॑ ददे व॒क्षणा॑भ्य॒ आ ते॒ऽहं हृद॑याद् ददे । आ ते॒ मुख॑स्य॒ संका॑शा॒त
सर्वं॑ ते॒ वर्च॒ आ द॑दे ॥ १ ॥

प्रेतो य॑न्तु॒ व्या॑ध्य॒ः प्रानु॒ध्याः प्रो अश॑स्तयः । अ॒ग्नी र॑क्ष॒स्विनी॒र्ह॑न्तु॒
सोमो॑ हन्तु दु॒रस्य॒तीः ॥ २ ॥
[१०।१२]

सूक्त ११५ (१२०)

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—सविता, जातवेदाः । छन्दः—१, ४ अनुष्टुप्, २ ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ४ ।

प्र प॑ते॒तः पा॑पि लक्ष्मि॒ नश्ये॒तः प्रा॒मुतः॑ पत । अ॒य॒स्मये॑ना॒ङ्केन॑ द्वि॒ष॒ते
त्वा सं॑जामसि ॥ १ ॥

या मा॑ ल॒क्ष्मीः प॑तया॒लूरजु॑ष्टाभि॒चस्क॑न्द॒ वन्द॑नेव वृ॒क्षम् । अ॒न्यत्रा॒स्मत्
स॑वित॒स्तामि॒तो धा॒ हिर॑ण्यहस्तो॒ वसु॑ नो॒ ररा॑णः ॥ २ ॥

एक॑शतं ल॒क्ष्म्यो॒३॑ मर्त्य॑स्य सा॒कं त॒न्वा॑ ज॒नुषोऽधि॑ जा॒ताः । तासां॒
पापि॑ष्ठा॒ निरि॒तः प्र हि॑ण्मः शि॒वा अ॒स्मभ्यं॑ जातवे॒दो नि य॑च्छ ॥ ३ ॥

ए॒ता ए॑ना॒ व्याक॑रं खि॒ले गा विष्ठि॑ता इव । रम॑न्तां॒ पुण्या॑ ल॒क्ष्मीर्याः
पा॒पीस्ता अ॑नीनशम् ॥ ४ ॥
[१०।१३]

सूक्त ११६ (१२१)

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—चन्द्रमाः (?, ज्वरः) । छन्दः—१ परोष्णिक् २ द्विपदाऽऽर्च्युनुष्टुप् (? आर्च्युष्णिक्) एकावसाना ॥ मन्त्र २ ।

नमो॑ रू॒राय॒ च्यव॑नाय॒ नोद॑नाय धृ॒ष्णवे । नमः॑ शी॒ताय॑ पूर्वकाम॒कृत्व॑ने ॥ १ ॥

यो अ॑न्ये॒द्युरु॑भय॒द्युर॒भ्येती॒मं म॒ण्डूक॑म॒भ्ये॑त्वव्र॒तः ॥ २ ॥ [१०।१४]

सूक्त ११७ (१२२)

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—पथ्या बृहती ॥ मन्त्र १ ।

सूक्त ११८ (१२३)

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—सोमादयः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

मर्मा॑णि ते॒ वर्म॑णा छादयामि॒ सोम॑स्त्वा॒ राजा॒मृते॒नानु॑ वस्ताम् ।
उ॒रोर्वरी॑यो॒ वरु॑णस्ते कृणोतु॒ जय॑न्तं॒ त्वानु॑ दे॒वा म॑दन्तु ॥१॥[१०।१६]

॥ इति सप्तमं काण्डम् समाप्तम् ॥

* * *

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ अष्टमं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आयुः ॥ छन्दः—१ पुरोबृहती त्रिष्टुप्; २, ३, १७—२१ अनुष्टुप्; ४, ९ १५, १६ प्रस्तारपङ्क्तिः; ५, ६, १०, ११ त्रिष्टुप्; ७ त्रिपाद्-विराड्गायत्री; ८ विराट् पथ्या बृहती; १२ पञ्चपदा जगती; १३ त्रिपदा भुरिङ्-महाबृहती; १४ द्विपदा साम्नी भुरिग्बृहती ॥ मंत्र २१ ।

अन्त॑काय मृ॒त्यवे॒ नम॑ः प्रा॒णा अ॑पा॒ना इ॒ह ते॑ रमन्ताम् । इ॒हायम॑स्तु
पुरु॑षः स॒हासु॑ना॒ सूर्य॑स्य भा॒गे अ॒मृत॑स्य लो॒के ॥ १ ॥
उदे॑नं॒ भगो॑ अग्रभी॒दुदे॑नं॒ सोमो॑ अंशु॒मान् । उदे॑नं म॒रुतो॑ दे॒वा उदि॑न्द्रा॒ग्नी
स्व॒स्तये॑ ॥ २ ॥
इ॒ह तेऽसु॑रि॒ह प्रा॒ण इ॒हायु॑रि॒ह ते॒ मन॑ः । उत् त्वा॒ निर्ऋ॑त्या॒ः पाशे॑भ्यो॒
दैव्या॑ वा॒चा भ॑रामसि ॥ ३ ॥
उत् क्रा॒मात॑ः पुरुष॒ माव॑ पत्था मृ॒त्योः पड्वी॑शमवमु॒ञ्चमा॑नः । मा
च्छि॑त्था अ॒स्माल्लो॒काद॒ग्नेः सूर्य॑स्य सं॒दृश॑ः ॥ ४ ॥
तुभ्यं॒ वात॑ः पवतां मात॒रिश्वा॒ तुभ्यं॑ वर्ष॑न्त्व॒मृता॒न्याप॑ः । सूर्य॑स्ते त॒न्वे॒३॒
शं त॑पाति त्वां मृ॒त्युर्द॑यता॒ं मा प्र मे॑ष्ठाः ॥ ५ ॥
उ॒द्यानं॑ ते पुरुष॒ नाव॒यानं॑ जी॒वातुं॑ ते॒ दक्ष॑तातिं कृणोमि । आ हि
रोहे॒मम॒मृतं॑ सु॒खं रथ॒मथ॒ जिर्वि॑ वि॒दथ॒मा व॑दासि ॥ ६ ॥

मा ते॒ मन॒स्तत्र॑ गा॒न्मा ति॒रो भू॒न्मा जी॒वेभ्य॒ः प्र म॑दो॒ मानु॑ गाः पि॒तॄन् । विश्वे॑ दे॒वा अ॒भि र॑क्षन्तु॒ त्वे॒ह ॥ ७ ॥

मा ग॒ताना॒मा दी॑धीथा॒ ये नय॑न्ति परा॒वत॑म् । आ रो॑ह॒ तम॑सो॒ ज्योति॒रेह्या ते॒ हस्तौ॑ रभामहे ॥ ८ ॥

श्या॒मश्च॑ त्वा॒ मा श॒बल॑श्च॒ प्रेषि॑तौ य॒मस्य॒ यौ प॑थि॒रक्षी॒ श्वानौ॑ । अ॒र्वाङेहि॒ मा वि दी॑ध्यो॒ मात्र॑ तिष्ठ॒ः परा॑ङ्मनाः ॥ ९ ॥

मैतं पन्था॒मनु॑ गा भी॒म ए॒ष येन॒ पूर्वं॒ नेयथ॒ तं ब्र॑वीमि । तम॑ ए॒तत् पु॑रुष॒ मा प्र प॑त्था भ॒यं प॒रस्ता॒दभ॑यं ते अ॒र्वाक् ॥ १० ॥

रक्ष॑न्तु त्वा॒ग्नयो॒ ये अ॒प्स्व॑न्ता रक्ष॑तु त्वा मनु॒ष्या॒३ यमि॒न्धते॑ । वै॒श्वा॒न॒रो र॑क्षतु जा॒तवे॑दा दि॒व्यस्त्वा॒ मा प्र धा॑ग् वि॒द्युता॑ स॒ह ॥ ११ ॥

मा त्वा॑ क्र॒व्याद॒भि म॑ँस्ता॒रात् संक॑सुकाच्चर । रक्ष॑तु त्वा॒ द्यौ रक्ष॑तु पृथि॒वी सूर्य॑श्च त्वा॒ रक्ष॑तां च॒न्द्रमा॑श्च । अ॒न्तरि॑क्ष र॑क्षतु देवहे॒त्याः ॥ १२ ॥

बो॒धश्च॑ त्वा प्रतीबो॒धश्च॑ रक्षतामस्व॒प्नश्च॑ त्वानवद्रा॒णश्च॑ रक्षताम् । गो॒पा॒यंश्च॑ त्वा॒ जागृ॑विश्च रक्षताम् ॥ १३ ॥

ते त्वा॑ रक्षन्तु॒ ते त्वा॑ गोपायन्तु॒ तेभ्यो॒ नम॒स्तेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ १४ ॥

जी॒वेभ्य॑स्त्वा स॒मुदे॑ वा॒युरिन्द्रो॑ धा॒ता द॑धातु सवि॒ता त्राय॑माणः । मा त्वा॑ प्रा॒णो बलँ॑ हासी॒दसुं॒ तेऽनु॑ ह्वयामसि ॥ १५ ॥

मा त्वा॑ ज॒म्भः संह॑नु॒र्मा तमो॑ विद॒न्मा । जि॒ह्वा ब॒र्हिः प्र॑म॒युः क॒था स्या॑ः । उत् त्वा॑दि॒त्या वस॑वो भरन्तू॒दिन्द्रा॒ग्नी स्व॒स्तये॑ ॥ १६ ॥

उत् त्वा द्यौरुत् पृथिव्युत् प्रजापतिरग्रभीत्। उत् त्वा मृत्योरोषधयः
सोमराज्ञीरपीपरन् ॥ १७ ॥

अयं देवा इहैवास्त्वयं मामुत्र गादितः। इमं सहस्रवीर्येण मृत्योरुत्
पारयामसि ॥ १८ ॥

उत् त्वा मृत्योरपीपरं सं धमन्तु वयोधसः। मा त्वा व्यस्तकेश्यो३
मा त्वाघरुदो रुदन् ॥ १९ ॥

आहार्षमविदं त्वा पुनरागाः पुनर्णवः। सर्वाङ्ग सर्वं ते चक्षुः सर्व-
मायुश्च तेऽविदम् ॥ २० ॥

व्यवात् ते ज्योतिरभूदप त्वत् तमो अक्रमीत्। अप त्वन्मृत्युं निर्ऋति-
मप यक्ष्मं नि दध्मसि ॥ २१ ॥ [१।१]

सूक्त २

ऋषिः— ब्रह्मा ॥ देवता—आयुः ॥ छन्दः—१, २, ७ भुरिक् त्रिष्टुप्; ३, २६ आस्तारपङ्क्तिः; ४ प्रस्तारपङ्क्तिः; ५, १०, १६, १८, २०, २३—२५, २७ अनुष्टुप्; ६, १५ पथ्या पङ्क्तिः; ८ पुरस्ताज्ज्योतिष्मती जगती; ९ पञ्चपदा जगती; ११ विष्टारपङ्क्तिः; १२, २२, २८ पुरस्ताद् बृहती; १३ त्रिष्टुप्; १४ षट्पदा जगती; १७ त्रिपादनुष्टुप्; १९ उपरिष्टाद् बृहती; २१ सतः पङ्क्तिः ॥ मंत्र २७।

आरभस्वेमाममृतस्य श्नुष्टिमच्छिद्यमाना जरदष्टिरस्तु ते। असुं त
आयुः पुनरा भरामि रजस्तमो मोप गा मा प्र मेष्ठाः ॥ १ ॥

जीवतां ज्योतिरभ्येह्यर्वाङा त्वा हरामि शतशारदाय। अवमुञ्चन्
मृत्युपाशानशस्तिं द्राघीय आयुः प्रतरं ते दधामि ॥ २ ॥

वातात् ते प्राणमविदं सूर्याच्चक्षुरहं तव। यत् ते मनस्त्वयि तद्
धारयामि सं वित्स्वाङ्गैर्वद जिह्वयालपन् ॥ ३ ॥

प्रा॒णेन॑ त्वा द्वि॒पदां॑ चतु॑ष्पदाम॒ग्निमि॑व जा॒तम॒भि सं ध॑मामि । नम॑स्ते
मृ॒त्यो चक्षु॑षे॒ नम॑: प्रा॒णाय॑ तेऽकरम् ॥ ४ ॥
अ॒यं जी॑वतु॒ मा मृ॑ते॒मं समी॑रयामसि । कृ॒णोम्य॑स्मै भेष॒जं मृत्यो॒ मा
पुरु॑षं वधीः ॥ ५ ॥
जी॒व॒लां न॑घारि॒षां जी॑व॒न्तीमोष॑धीम॒हम् । त्रा॒य॒मा॒णां सह॑माना॒ं सह॑स्व-
तीमि॒ह हु॑वे॒ऽस्मा अ॑रि॒ष्टता॑तये ॥ ६ ॥
अधि॑ ब्रूहि॒ मा र॑भथाः सृ॒जेमं तवै॒व सन्त्सर्व॑हाया इ॒हास्तु॑ । भवा॑शर्वौ
मृ॒डतं॒ शर्म॑ यच्छतमप॒सिध्य॑ दुरि॒तं ध॑त्त॒मायु॑ः ॥ ७ ॥
अ॒स्मै मृ॒त्यो॒ अधि॑ ब्रूही॒मं द॑य॒स्वोदि॒तो३॒॑ यमे॑तु । अरि॑ष्टः सर्वा॑ङ्गः
सु॒श्रुज्ज॒रसा॑ श॒तहा॑यन आ॒त्मना॒ भुज॑मश्नुताम् ॥ ८ ॥
दे॒वानां॑ हे॒तिः परि॑ त्वा वृणक्तु पा॒रया॑मि त्वा॒ रज॑स॒ उत् त्वा॑ मृ॒त्योर॑-
पीपरम् । आ॒राद॒ग्नि क्र॒व्याद॑ं नि॒रूह॑ं जी॒वात॑वे ते परि॒धिं द॑धामि ॥ ९ ॥
यत् ते॑ नि॒यानं॑ रज॒सं मृत्यो॑ अनवध॒र्ष्य॑म् । प॒थ इ॒मं तस्मा॒द् रक्ष॑न्तो
ब्रह्मा॑स्मै॒ वर्म॑ कृण्मसि ॥ १० ॥
कृ॒णोमि॑ ते प्राणापा॒नौ ज॒रां मृ॒त्युं दी॒र्घमायु॑ः स्व॒स्ति । वै॒व॒स्व॒तेन॒
प्रहि॑तान् यमदू॒तांश्च॑र॒तोऽप॑ सेधामि॒ सर्वा॑न् ॥ ११ ॥
आ॒राद॑राति॒ं निर्ऋ॑तिं प॒रो ग्राहिं॑ क्र॒व्याद॑ः पिशा॒चान् । रक्षो॒ यत् सर्वं॑
दु॒र्भू॒तं तत् तम॑ इ॒वाप॑ हन्मसि ॥ १२ ॥
अ॒ग्नेष्टे॑ प्रा॒णम॒मृता॒दायु॑ष्मतो वन्वे जा॒तवे॑दसः । यथा॒ न रिष्या॑ अ॒मृत॑ः
स॒जूरस॒स्तत् ते॑ कृणोमि॒ तदु॑ ते॒ समृ॑ध्यताम् ॥ १३ ॥

शि॒वे ते॑ स्तां॒ द्यावा॑पृथि॒वी अ॑संता॒पे अ॑भि॒श्रियौ॑ । शं ते॒ सूर्य॒ आ त॑पतु
शं वातो॑ वातु ते हृ॒दे । शि॒वा अ॒भि क्ष॑रन्तु त्वापो॑ दि॒व्याः
पय॑स्वतीः ॥ १४ ॥

शि॒वास्ते॑ स॒न्त्वोष॑धय॒ उत् त्वा॑हार्ष॒मध॑रस्या॒ उत्त॑रां पृथि॒वीम॒भि । तत्र॑
त्वादि॒त्यौ र॑क्षतां सूर्याचन्द्र॒मसा॑वु॒भा ॥ १५ ॥

यत् ते॒ वासः॑ परि॒धानं॒ यां नी॒विं कृ॑णु॒षे त्वम् । शि॒वं ते॑ त॒न्वे॒३ तत
कृ॑ण्मः संस्प॒र्शेऽद्रू॑क्ष्णमस्तु ते ॥ १६ ॥

यत् क्षु॒रेण॑ म॒र्चय॑ता सु॒ते॒जसा॒ वप्ता॒ वप॑सि केशश्म॒श्रु । शुभं॒ मुखं॒ मा न॒
आयु॒ः प्र मो॑षीः ॥ १७ ॥

शि॒वौ ते॑ स्तां व्रीहि॒यवा॑वब॒लासा॑वदोम॒धौ । ए॒तौ यक्ष्मं॒ वि बा॑धेते
ए॒तौ मु॑ञ्च॒तो अंह॑सः ॥ १८ ॥

यद॒श्नासि॒ यत्पिब॑सि धा॒न्यं॑ कृ॒ष्याः पयः॑ । यदा॒द्यं॑१॒ यद॑ना॒द्यं सर्वं॑ ते॒
अन्न॑मवि॒षं कृ॑णोमि ॥ १९ ॥

अह्ने॑ च त्वा रात्र॑ये चो॒भाभ्यां॒ परि॑ दद्मसि । अ॒राये॑भ्यो जिघ॒त्सुभ्य॑
इ॒मं मे॒ परि॑ रक्षत ॥ २० ॥

श॒तं ते॒ऽयु॒तं हा॑य॒नान् द्वे यु॒गे त्रीणि॑ च॒त्वारि॑ कृण्मः । इ॒न्द्रा॒ग्नी विश्वे॑
दे॒वास्तेऽनु॑ मन्यन्ता॒महृ॑णीयमानाः ॥ २१ ॥

श॒रदे॑ त्वा हेम॒न्ताय॑ वस॒न्ताय॑ ग्री॒ष्माय॒ परि॑ दद्मसि । व॒र्षाणि॒ तुभ्यं॑
स्यो॒नानि॒ येषु॒ वर्ध॑न्त॒ ओष॑धीः ॥ २२ ॥

मृ॒त्युरी॑शे द्वि॒पदां॑ मृ॒त्युरी॑शे॒ चतु॑ष्पदाम् । तस्मा॒त् त्वां मृ॒त्योर्गोप॑ते॒रुद्भ॑रामि॒ स मा बि॑भेः ॥ २३ ॥

सो॑ऽरिष्ट॒ न म॑रिष्यसि॒ न म॑रिष्यसि॒ मा बि॑भेः । न वै तत्र॑ म्रियन्ते॒ नो य॑न्त्यध॒मं तम॑ः ॥ २४ ॥

सर्वो॒ वै तत्र॑ जीवति॒ गौरश्व॒ः पुरु॑षः प॒शुः । यत्रे॒दं ब्रह्म॑ क्रि॒यते॑ परि॒धिर्जीव॑नाय॒ कम् ॥ २५ ॥

परि॑ त्वा पातु समा॒नेभ्यो॑ऽभिचा॒रात् सब॑न्धुभ्यः । अम॑म्रिर्भवा॒मृतो॑ऽतिजी॒वो मा ते॑ हासिषु॒रस॑व॒ः शरी॑रम् ॥ २६ ॥

ये मृ॒त्यव॒ एक॑शतं॒ या ना॒ष्ट्रा अ॑तिता॒र्या᳡ः । मु॒ञ्चन्तु॒ तस्मा॒त् त्वां दे॒वा अ॒ग्नेर्वै॑श्वान॒राद॑धि ॥ २७ ॥

अ॒ग्नेः शरी॑रमसि पारयि॒ष्णु र॑क्षो॒हासि सपत्न॒हा । अथो॑ अमीव॒चात॑नः पू॒तुद्रु॒र्नाम॑ भेष॒जम् ॥ २८ ॥ [१।२]

सूक्त ३

ऋषिः—चातनः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१—६, ८—११, १३, १६, १८—२०, २४ त्रिष्टुप्; ७, १२, १४, १५, १७, २१ भुरिक् त्रिष्टुप्; २२, २३ अनुष्टुप्; २५ बृहतीगर्भा जगती; २६ गायत्री। मन्त्र २६।

र॒क्षो॒हणं॑ वा॒जिन॒मा जि॑घर्मि मि॒त्रं प्रथि॑ष्ठ॒मुप॑ यामि॒ शर्म॑ । शिशा॑नो अ॒ग्निः क्रतु॑भिः॒ समि॑द्धः॒ स नो॒ दिवा॒ स रि॒षः पा॑तु॒ नक्त॑म् ॥ १ ॥

अयो॑दंष्ट्रो अ॒र्चिषा॑ यातु॒धाना॒नुप॑ स्पृश जातवेदः॒ समि॑द्धः । आ जि॒ह्वया॒ मूर॑देवान् रभस्व क्र॒व्यादो॑ वृ॒ष्ट्वापि॑ धत्स्वा॒सन् ॥ २ ॥

उ॒भोभ॑यावि॒न्नुप॑ धेहि॒ दंष्ट्रौ॑ हिं॒स्रः शिशा॒नोऽव॑रं॒ परं॑ च । उ॒तान्तरि॑क्षे॒ परि॑ याह्यग्ने॒ जम्भैः॒ सं धे॑ह्य॒भि यातु॒धाना॑न् ॥ ३ ॥

अग्ने॒ त्वचं॑ यातु॒धान॑स्य भिन्धि हिं॒स्राशनि॒र्हर॑सा हन्त्वेनम्। प्र
पर्वा॑णि जातवेदः शृणीहि क्र॒व्यात् क्र॑वि॒ष्णुर्वि चि॑नोत्वेनम् ॥ ४ ॥
यत्रे॒दानीं॒ पश्य॑सि जातवेद॒स्तिष्ठ॑न्तमग्न उ॒त वा॒ चर॑न्तम्। उ॒तान्तरि॑क्षे
पत॑न्तं यातु॒धानं॒ तमस्ता॑ विध्य॒ शर्वा॒ शिशा॑नः ॥ ५ ॥
य॒ज्ञैरिषूः॑ सं॒नम॑मानो अग्ने वा॒चा श॒ल्याँ अ॒शनि॑भिर्दि॒हानः। ताभि॑-
र्विध्य॒ हृद॑ये यातुधाना॑न् प्रती॒चो बा॒हून् प्रति॑ भङ्ग्ध्येषाम् ॥ ६ ॥
उ॒तार॑ब्धान्त्स्पृणुहि जातवेद उ॒तार॑भा॒णाँ ऋ॒ष्टिभि॑र्यातु॒धाना॑न्। अग्ने॒
पूर्वो॒ नि ज॑हि॒ शोशु॑चान आ॒मादः॒ क्ष्विङ्का॒स्तम॑द॒न्त्वेनीः॑ ॥ ७ ॥
इ॒ह प्र ब्रू॑हि यत॒मः सो अ॑ग्ने यातु॒धानो॒ य इ॒दं कृ॒णोति॑। तमा र॑भस्व
स॒मिधा॑ यविष्ठ नृ॒चक्ष॑स॒श्चक्षु॑षे रन्धयैनम् ॥ ८ ॥
ती॒क्ष्णेना॑ग्ने॒ चक्षु॑षा रक्ष य॒ज्ञं प्राञ्चं॒ वसु॑भ्य॒ः प्र ण॑य प्रचेतः। हिं॒स्रं
रक्षां॑स्य॒भि शोशु॑चानं॒ मा त्वा॑ दभन् यातु॒धाना॑ नृचक्षः ॥ ९ ॥
नृ॒चक्षा॒ रक्षः॒ परि॑ पश्य वि॒क्षु तस्य॒ त्रीणि॒ प्रति॑ शृणी॒ह्यग्रा॑। तस्या॑ग्ने
पृ॒ष्टीर्हर॑सा शृणीहि त्रे॒धा मूलं॑ यातु॒धान॑स्य वृश्च ॥ १० ॥
त्रिर्या॑तु॒धानः॒ प्रसि॑तिं त ए॒त्वृ॒तं यो अ॑ग्ने॒ अनृ॑तेन॒ हन्ति॑। तम॒र्चिषा॑
स्फू॒र्जय॑न् जातवेदः सम॒क्षमे॑नं गृण॒ते नि यु॑ङ्ग्धि ॥ ११ ॥
यद॑ग्ने अ॒द्य मि॑थु॒ना शपा॑तो॒ यद् वा॒चस्तृ॒ष्टं ज॒नय॑न्त रे॒भाः। म॒न्यो-
र्मन॑सः शर॒व्या॒३॒॑ जाय॑ते॒ या तया॑ विध्य॒ हृद॑ये यातु॒धाना॑न् ॥ १२ ॥

परा॑ शृणीहि॒ तप॑सा यातु॒धाना॒न् परा॑ग्ने॒ रक्षो॒ हर॑सा शृणीहि ।
परा॒र्चिषा॒ मूर॑देवाञ्छृणीहि॒ परा॑सु॒तृप॒ः शोशु॑चतः शृणीहि ॥ १३ ॥
परा॒द्य दे॒वा वृ॑जि॒नं शृ॑णन्तु प्र॒त्यगे॑नं श॒पथा॑ यन्तु सृ॒ष्टाः । वा॒चास्ते॑नं॒
शर॑व ऋच्छन्तु॒ मर्म॒न् विश्व॑स्यैतु॒ प्रसि॑तिं यातु॒धानः॑ ॥ १४ ॥
यः पौरु॑षेयेण क्र॒विषा॑ सम॒ङ्क्ते यो अश्व्ये॑न प॒शुना॑ यातु॒धानः॑ । यो
अ॒घ्न्याया॒ भर॑ति क्षी॒रम॑ग्ने॒ तेषां॑ शी॒र्षाणि॒ हर॒सापि॑ वृश्च ॥ १५ ॥
वि॒षं गवां॑ यातु॒धाना॑ भरन्ता॒मा वृ॑श्चन्ता॒मदि॑तये दु॒रेवाः॑ । परै॑णान्
दे॒वः स॑वि॒ता द॑दातु॒ परा॑ भा॒गमोष॑धीनां॑ जय॑न्ताम् ॥ ॥ १६ ॥
सं॒व॒त्स॒रीणं॒ पय॑ उ॒स्रिया॑या॒स्तस्य॒ माशी॑द् यातु॒धानो॑ नृचक्षः । पी॒यूष॑मग्ने
यत॒मस्तितृ॑प्सा॒त् तं प्र॒त्यञ्च॑म॒र्चिषा॑ विध्य॒ मर्म॑णि ॥ १७ ॥
स॒नाद॑ग्ने मृणसि यातु॒धाना॒न् न त्वा॒ रक्षां॑सि॒ पृत॑नासु जिग्युः ।
स॒हमू॑रा॒ननु॑ दह क्र॒व्यादो॒ मा ते॑ हे॒त्या मु॑क्षत दै॒व्यायाः॑ ॥ १८ ॥
त्वं नो॑ अग्ने अध॒रादु॒दक्त॒स्त्वं प॒श्चादु॒त र॑क्षा पु॒रस्ता॑त् । प्रति॒ त्ये ते॑
अ॒जरा॑सस्तपि॑ष्ठा अ॒घशं॑सं॒ शोशु॑चतो दहन्तु ॥ १९ ॥
प॒श्चात् पु॒रस्ता॑दध॒रादु॒तोत्त॒रात् क॒विः काव्ये॑न॒ परि॑ पाह्यग्ने । सखा॒
सखा॑यम॒जरो॑ जरि॒म्णे अग्ने॒ मर्ता॒ँ अम॑र्त्य॒स्त्वं नः॑ ॥ २० ॥
तद॑ग्ने॒ चक्षुः॒ प्रति॑ धेहि रे॒भे श॑फा॒रुजो॒ येन॒ पश्य॑सि यातु॒धाना॑न् ।
अ॒थ॒र्व॒वज्ज्योति॑षा॒ दैव्ये॑न स॒त्यं धूर्व॑न्तम॒चितं॒ न्यो॑ऽष ॥ २१ ॥
परि॑ त्वाग्ने॒ पुरं॑ व॒यं विप्रं॑ सहस्य धीमहि । धृ॒षद्व॑र्णं दि॒वेदि॑वे ह॒न्तारं॑
भ॒ङ्गुरा॑वतः ॥ २२ ॥

विषेण भङ्गुरावतः प्रति स्म रक्षसो जहि । अग्ने तिग्मेन शोचिषा
तपुरग्राभिरर्चिभिः ॥ २३ ॥
वि ज्योतिषा बृहता भात्यग्निराविर्विश्वानि कृणुते महित्वा । प्रादेवी-
र्मायाः सहते दुरेवाः शिशीते शृङ्गे रक्षोभ्यो विनिक्ष्वे ॥ २४ ॥
ये ते शृङ्गे अजरे जातवेदस्तिग्महेती ब्रह्मसंशिते । ताभ्यां दुर्हार्दम-
भिदासन्तं किमीदिनं प्रत्यञ्चमर्चिषा जातवेदो वि निक्ष्व ॥ २५ ॥
अग्नी रक्षाँसि सेधति शुक्रशोचिरमर्त्यः । शुचिः पावक ईड्यः ॥२६॥
[२।१]

सूक्त ४

ऋषिः—चातनः ॥ देवता—इन्द्रसोमादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१—७, १५, १८, २१ जगती; ८—१४, १६, १७, १९, २२, २४, त्रिष्टुप्; २०, २३ भुरिक् त्रिष्टुप् २५ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र २५ ।

इन्द्रासोमा तपतं रक्ष उब्जतं न्यर्पयतं वृषणा तमोवृधः । परा शृणीत-
मचितो न्योषतं हतं नुदेथां नि शिशीतमत्त्रिणः ॥ १ ॥
इन्द्रासोमा समघशँसमभ्य१घं तपुर्ययस्तु चरुरग्निमाँ इव । ब्रह्मद्विष
क्रव्यादे घोरचक्षसे द्वेषो धत्तमनवायं किमीदिने ॥ २ ॥
इन्द्रासोमा दुष्कृतो वव्रे अन्तरनारम्भणे तमसि प्र विध्यतम् । यतो
नैषां पुनरेकश्चनोदयत् तद् वामस्तु सहसे मन्युमच्छवः ॥ ३ ॥
इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवो वधं सं पृथिव्या अघशँसाय तर्हणम् । उत्
तक्षतं स्वर्यं१ पर्वतेभ्यो येन रक्षो वावृधानं निजूर्वथः ॥ ४ ॥
इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवस्पर्यग्नितप्तेभिर्युवमश्महन्मभिः । तपुर्वधेभिर-
जरेभिरत्त्रिणो नि पर्शाने विध्यतं यन्तु निस्वरम् ॥ ५ ॥

इन्द्रा॑सोमा॒ परि॑ वां॑ भूतु वि॒श्वत॑ इ॒यं म॒तिः क॒क्ष्याश्वै॑व वा॒जिना॑ । या॑
वां॒ होत्राँ॑ परिहि॒नोमि॑ मे॒धये॒मा ब्रह्मा॑णि नृ॒पती॑ इव जिन्वतम् ॥ ६ ॥
प्रति॑ स्मरेथां॑ तु॒जय॑द्भि॒रेवै॑र्ह॒तं द्रु॒हो र॒क्षसो॑ भङ्गु॒राव॑तः । इन्द्रा॑सोमा
दु॒ष्कृते॒ मा सु॒गं॑ भू॒द् यो मा॑ क॒दा चि॑दभि॒दास॑ति द्रु॒हुः ॥ ७ ॥
यो मा॒ पाके॑न॒ मन॑सा॒ चर॑न्तमभि॒चष्टे॒ अनृ॑तेभि॒र्वचो॑भिः । आप॑ इव
का॒शिना॒ संगृ॑भीता॒ अस॑न्न॒स्त्वास॑त इन्द्र व॒क्ता ॥ ८ ॥
ये पा॑कशं॒स वि॒हर॑न्त॒ ए॒वैर्ये॑ वा॑ भ॒द्रं दु॒षय॑न्ति स्व॒धाभिः॑ । अह॑ये वा॒
तान् प्र॒ददा॑तु सोम॒ आ वा॑ दधातु॒ निर्ऋ॑तेरु॒पस्थे॑ ॥ ९ ॥
यो नो॒ रसं॒ दिप्स॑ति पि॒त्वो अ॑ग्ने॒ अश्वा॑नां॒ गवां॒ यस्त॒नूना॑म् । रि॒पु॒स्ते॒न
स्तेय॒कृद् द॒भ्रमे॑तु नि ष ही॑यतां त॒न्वा॒३ तना॑ च ॥ १० ॥
प॒रः सो अ॑स्तु त॒न्वा॒३ तना॑ च ति॒स्रः पृ॑थि॒वीर॒धो अ॑स्तु॒ विश्वाः॑ ।
प्रति॑ शुष्यतु॒ यशो॑ अस्य दे॒वा यो मा॒ दि॒वा दिप्स॑ति॒ यश्च॒ नक्त॑म् ॥११॥
सु॒वि॒ज्ञानं॑ चि॑कि॒तुषे॒ जना॑य॒ स॒च्चास॑च्च॒ वच॑सी पस्पृधाते । त॒योर्यत्
स॒त्यं य॑त॒रदृजी॑य॒स्तदित् सोमो॑ऽवति॒ हन्त्यास॑त् ॥ १२ ॥
न वा उ॒ सोमो॑ वृजि॒नं हि॑नोति॒ न क्ष॒त्रियं॑ मिथु॒या धा॒रय॑न्तम् । हन्ति॒
रक्षो॒ हन्त्यास॒द् वद॑न्तमु॒भाविन्द्र॑स्य॒ प्रसि॑तौ शयाते ॥ १३ ॥
यदि॑ वा॒हमनृ॑तदेवो॒ अस्मि॒ मोघं॑ वा दे॒वाँ अ॑प्यू॒हे अ॑ग्ने । किम॒स्मभ्यँ॑
जातवेदो हृणीषे द्रोघ॒वाच॑स्ते निर्ऋ॒थं स॑चन्ताम् ॥ १४ ॥
अ॒द्या मु॑रीय॒ यदि॑ यातु॒धानो॒ अस्मि॒ यदि॒ वायु॑स्त॒तप॒ पूरु॑षस्य । अधा॒
स वी॒रैर्द॒शभि॒र्वि यू॑या॒ यो मा॒ मोघं॒ यातु॑धा॒नेत्याह॑ ॥ १५ ॥

यो मा॒या॑तु॒ यातु॑धा॒नेत्याह॒ यो वा॑ र॒क्षाः शुचि॑र॒स्मीत्याह॑ । इन्द्र॒स्तं
हन्॑तु मह॒ता व॒धेन॒ विश्व॑स्य ज॒न्तोर॑ध॒मरप॑दीष्ट ॥ १६ ॥
प्र या जिगा॑ति ख॒र्गले॑व॒ नक्त॒मप॑ द्रु॒हुस्त॒न्वं॒१ गूह॑माना । व॒व्रम॑न॒न्तमव॒
सा प॑दीष्ट॒ ग्रावा॑णो घ्नन्तु र॒क्षस॑ उप॒ब्दैः ॥ १७ ॥
वि ति॑ष्ठध्वं मरुतो वि॒क्ष्वी॒३च्छत॑ गृभा॒यत॑ र॒क्षसः॒ सं पि॑नष्टन । वयो॒
ये भू॒त्वा प॒तय॑न्ति न॒क्तभि॒र्ये वा॒ रिपो॑ दधि॒रे दे॒वे अ॑ध्व॒रे ॥ १८ ॥
प्र व॑र्तय दि॒वोऽश्मा॑नमिन्द्र॒ सोम॑शितं मघव॒न्त्सं शि॑शाधि । प्रा॒क्तो
अ॑पा॒क्तो अ॑ध॒रादु॑द॒क्तो॒३॒भि ज॑हि र॒क्षसः॒ पर्व॑तेन ॥ १९ ॥
ए॒त उ॒ त्ये प॑तयन्ति॒ श्वया॑तव॒ इन्द्रं॑ दिप्सन्ति दि॒प्सवोऽदा॑भ्यम् ।
शिशी॑ते श॒क्रः पिशु॑नेभ्यो व॒धं नू॒नं सृ॑जद॒शनिं॑ यातु॒मद्भ्यः॑ ॥ २० ॥
इन्द्रो॑ यातू॒नाम॑भवत् पराश॒रो ह॑वि॒र्मथी॑नाम॒भ्या॒३॒विवा॑सताम् । अ॒भीदु॑
श॒क्रः प॑र॒शुर्यथा॒ वन॒ं पात्रे॑व भि॒न्दन्त्स॒त ए॑तु र॒क्षसः॑ ॥ २१ ॥
उलू॑कयातुं शुशु॒लूक॑यातुं ज॒हि श्वया॑तुमु॒त कोक॑यातुम् । सु॒प॒र्णया॑तुमु॒त
गृध्र॑यातुं दृ॒षदे॑व॒ प्र मृ॑ण॒ रक्ष॑ इन्द्र ॥ २२ ॥
मा नो॒ रक्षो॑ अ॒भि न॑ड् यातु॒माव॒दपो॑च्छन्तु मिथु॒ना ये कि॑मी॒दिनः॑ ।
पृथि॒वी नः॒ पार्थि॑वात् पा॒त्वंह॑सो॒ऽन्तरि॑क्षं दि॒व्यत् पा॑त्व॒स्मान् ॥ २३ ॥
इन्द्र॑ ज॒हि पुमां॑सं यातु॒धान॑मु॒त स्त्रियं॑ मा॒यया॒ शाश॑दानाम् । विग्री॑वासो॒
मूर॑देवा ऋदन्तु॒ मा ते दृ॑श॒न्त्सूर्य॑मु॒च्चर॑न्तम् ॥ २४ ॥
प्रति॑ चक्ष्व॒ वि च॒क्ष्वेन्द्र॑श्च सोम जागृतम् । रक्षो॑भ्यो व॒धम॑स्यतम॒शनिं॑
यातु॒मद्भ्यः॑ ॥ २५ ॥ [२।२]

सूक्त ५

ऋषिः—शुक्रः ॥ देवताः—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, ६ उपरिष्टाद् बृहती; २ त्रिपदा विराड् गायत्री; ३ भुरिक् जगती; ४, १२ १३, १६, १८ अनुष्टुप्; ५ भुरिक् संस्तारपङ्क्तिः; ७, ८ ककुम्मत्यनुष्टुप्; ९ पुरस्कृतिर्जगती; १० त्रिष्टुप्; ११ पथ्या पङ्क्तिः; १४ षट्पदा जगती; १५ पुरस्ताद् बृहती; १९ जगती गर्भा त्रिष्टुप्; २० विर:ड्गर्भाऽऽस्तार पङ्क्तिः; २१ विराट् त्रिष्टुप्; २२ सप्तपदा विराड्गर्भा भुरिक् शक्वरी ॥ मन्त्र २२ ।

अयं प्रतिसरो मणिर्वीरो वीराय बध्यते । वीर्यवान्त्सपत्नहा शूरवीरः
परिपाणः सुमङ्गलः ॥ १ ॥

अयं मणिः सपत्नहा सुवीरः सहस्वान् वाजी सहमान उग्रः । प्रत्यक्
कृत्या दूषयन्नेति वीरः ॥ २ ॥

अनेनेन्द्रो मणिना वृत्रमहन्ननेनासुरान् पराभावयन्मनीषी । अनेना-
जयद् द्यावापृथिवी उभे इमे अनेनाजयत् प्रदिशश्चतस्रः ॥ ३ ॥

अयं स्राक्त्यो मणिः प्रतीवर्तः प्रतिसरः । ओजस्वान् विमृधो वशी सो
अस्मान् पातु सर्वतः ॥ ४ ॥

तदग्निराह तदु सोम आह बृहस्पतिः सविता तदिन्द्रः । ते मे देवाः
पुरोहिताः प्रतीचीः कृत्याः प्रतिसरैरजन्तु ॥ ५ ॥

अन्तर्दधे द्यावापृथिवी उताहरुत सूर्यम् । ते मे देवाः पुरोहिताः
प्रतीचीः कृत्याः प्रतिसरैरजन्तु ॥ ६ ॥

ये स्राक्त्यं मणिं जना वर्माणि कृण्वते । सूर्य इव दिवमारुह्य वि
कृत्या बाधते वशी ॥ ७ ॥

स्राक्त्येन मणिना ऋषिणेव मनीषिणा । अजैषं सर्वाः पृतना वि मृधो
हन्मि रक्षसः ॥ ८ ॥

याः कृ॒त्या आ॑ङ्गिर॒सीर्याः कृ॒त्या आ॑सु॒रीर्याः कृ॒त्याः स्व॒यंकृ॑ता॒ या
उ॑ चा॒न्येभि॒राभृ॑ताः । उ॒भयी॒स्ताः परा॑ यन्तु प॒राव॑तो नव॒तिं ना॒व्या॒३
अति॑ ॥ ९ ॥

अ॒स्मै म॒णिं वर्म॑ बध्नन्तु दे॒वा इन्द्रो॒ विष्णुः॑ सवि॒ता रु॒द्रो अ॒ग्निः ।
प्र॒जाप॑तिः परमे॒ष्ठी वि॒राड् वैश्वान॒र ऋष॑यश्च॒ सर्वे॑ ॥ १० ॥

उ॒त्त॒मो अ॒स्योष॑धीनामन॒ड्वान् जग॑तामिव व्या॒घ्रः श्वप॑दामिव ।
यमैच्छा॒मावि॑दाम॒ तं प्र॑ति॒स्पाश॑न॒मन्ति॑तम् ॥ ११ ॥

स इद् व्या॒घ्रो भ॑व॒त्यथो॑ सिं॒हो अथो॒ वृषा॑ । अथो॑ सपत्न॒कर्श॑नो॒ यो
बिभ॑र्ती॒मं म॒णिम् ॥ १२ ॥

नैनं॑ घ्नन्त्यप्स॒रसो॒ न ग॑न्ध॒र्वा न मर्त्याः॑ । सर्वा॒ दिशो॒ वि रा॑जति॒ यो
बिभ॑र्ती॒मं म॒णिम् ॥ १३

क॒श्यप॒स्त्वाम॑सृजत क॒श्यप॑स्त्वा॒ समै॑रयत् । अबि॑भ॒स्त्वेन्द्रो॒ मानु॑षे
बिभ्र॑त् संश्रे॒षिणे॑ऽजयत् । म॒णिं स॒हस्र॑वीर्यं॒ वर्म॑ दे॒वा अ॑कृण्वत ॥ १४ ॥

यस्त्वा॑ कृ॒त्याभि॒र्यस्त्वा॑ दी॒क्षाभि॑र्य॒ज्ञैर्यस्त्वा॒ जिघां॑सति । प्र॒त्यक्
त्वमि॑न्द्र॒ तं ज॑हि॒ वज्रे॑ण श॒तप॑र्वणा ॥ १५ ॥

अ॒यमिद् वै प्र॑तीव॒र्त ओज॑स्वान्त्संज॒यो म॒णिः । प्र॒जां धनं॑ च रक्षतु
परि॒पाणः॑ सुम॒ङ्गलः॑ ॥ १६ ॥

अ॒स॒प॒त्नं नो॑ अध॒राद॑सप॒त्नं न॑ उत्त॒रात् । इन्द्रा॑सप॒त्नं नः॑ प॒श्चाज्ज्योतिः॑
शूर पु॒रस्कृ॑धि ॥ १७ ॥

वर्म॑ मे॒ द्यावा॑पृथि॒वी वर्माह॒र्वर्म॒ सूर्यः॑ । वर्म॑ म॒ इन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॒ वर्म॑ धा॒ता
द॑धातु मे ॥ १८ ॥

ऐन्द्राग्नं वर्म बहुलं यदुग्रं विश्वे देवा नातिविध्यन्ति सर्वे। तन्मे तन्वं त्रायतां सर्वतो बृहदायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासानि ॥ १९ ॥

आ मारुक्षद् देवमणिर्मह्या अरिष्टतातये। इमं मेथिमभिसंविशध्वं तनूपानं त्रिवरूथमोजसे ॥ २० ॥

अस्मिन्निन्द्रो नि दधातु नृम्णमिमं देवासो अभिसंविशध्वम्। दीर्घायुत्वाय शतशारदायायुष्मान् जरदष्टिर्यथासत् ॥ २१ ॥

स्वस्तिदा विशां पतिर्वृत्रहा विमृधो वशी। इन्द्रो बध्नातु ते मणिं जिगीवाँ अपराजितः सोमपा अभयंकरो वृषा। स त्वा रक्षतु सर्वतो दिवा नक्तं च विश्वतः ॥ २२ ॥ [३।१]

सूक्त ६

ऋषिः—मातृनामा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः, मातृनामा, १५ ब्रह्मणस्पतिः ॥ छन्दः—१, ३—९, १३, १८—२६ अनुष्टुप्; २ पुरस्ताद् बृहती; १० षट्पदा जगती; ११, १२, १४, १६ पथ्या पङ्क्तिः; १५ सप्तपदा शक्वरी; १७ सप्तपदा जगती ॥ मन्त्र २६ ॥

यौ ते मातोन्ममार्ज जातायाः पतिवेदनौ। दुर्णामा तत्र मा गृधदलिंश उत वत्सपः ॥ १ ॥

पलालानुपलालौ शर्कुं कोकं मलिम्लुचं पलीजकम्। आश्रेषं वव्रिवाससमृक्षग्रीवं प्रमीलिनम् ॥ २ ॥

मा सं वृतो मोप सृप ऊरू माव सृपोऽन्तरा। कृणोम्यस्यै भेषजं बजं दुर्णामचातनम् ॥ ३ ॥

दुर्णामा च सुनामा चोभा संवृतमिच्छतः । अरायानप हन्मः सुनामा
स्त्रैणमिच्छताम् ॥ ४ ॥
यः कृष्णः केश्यसुर स्तम्बज उत तुण्डिकः । अरायानस्या मुष्काभ्यां
भंससोऽप हन्मसि ॥ ४ ॥
अनुजिघ्रं प्रमृशन्तं क्रव्यादमुत रेरिहम् । अरायांछ्ववकिष्किणो बजः
पिङ्गो अनीनशत् ॥ ६ ॥
यस्त्वा स्वप्ने निपद्यते भ्राता भूत्वा पितेव च । बजस्तान्त्सहतामितः
क्लीबरूपांस्तिरीटिनः । ॥ ७ ॥
यस्त्वा स्वपन्तीं त्सरति यस्त्वा दिप्सति जाग्रतीम् । छायामिव प्र
तान्त्सूर्यः परिक्रामन्ननीनशत् ॥ ८ ॥
यः कृणोति मृतवत्सामवतोकामिमां स्त्रियम् । तमोषधे त्वं नाशयास्याः
कमलमञ्जिवम् ॥ ६ ॥
ये शालाः परिनृत्यन्ति सायं गर्दभनादिनः । कुसूला ये च कुक्षिलाः
ककुभाः करुमाः स्रिमाः । तानोषधे त्वं गन्धेन विषूचीनान् वि
नाशय ॥ १० ॥
ये कुकुन्धाः कुकूरभाः कृत्तीर्दूर्शानि बिभ्रति । क्लीबा इव प्रनृत्यन्तो
वने ये कुर्वते घोषं तानितो नाशयामसि ॥ ११ ॥
ये सूर्यं न तितिक्षन्त आतपन्तममुं दिवः । अरायान् बस्तवासिनो
दुर्गन्धींल्लोहितास्यान् मककान् नाशयामसि ॥ १२ ॥
य आत्मानमतिमात्रमंस आधाय बिभ्रति । स्त्रीणां श्रोणिप्रतोदिन इन्द्र
रक्षांसि नाशय ॥ १३ ॥

ये पूर्वे वध्वो३ यन्ति हस्ते शृङ्गाणि बिभ्रतः । आपाकेष्ठाः प्रहासिनं
स्तम्बे ये कुर्वते ज्योतिस्तानितो नाशयामसि ॥ १४ ॥

येषां पश्चात् प्रपदानि पुरः पार्ष्णीः पुरो मुखा । खलजाः शंकधूमजा
उरुण्डा ये च मट्मटाः कुम्भमुष्का अयाशवः । तानस्या ब्रह्मणस्पते
प्रतीबोधेन नाशय ॥ १५ ॥

पर्यस्ताक्षा अप्रचङ्कशा अस्त्रैणाः सन्तु पण्डगाः । अव भेषज पादय
य इमां संविवृत्सत्यपतिः स्वपतिं स्त्रियम् ॥ १६ ॥

उद्धर्षिणं मुनिकेशं जम्भयन्तं मरीमृशम् । उपेषन्तमुदुम्बलं तुण्डेलमुत
शालुडम् । पदा प्र विध्य पार्ष्ण्या स्थालीं गौरिव स्पन्दना ॥ १७ ॥

यस्ते गर्भं प्रतिमृशाज्जातं वा मारयाति ते । पिङ्गस्तमुग्रधन्वा कृणोतु
हृदयाविधम् ॥ १८ ॥

ये अम्नो जातान् मारयन्ति सूतिका अनुशेरते । स्त्रीभागान् पिङ्गो
गन्धर्वान् वातो अभ्रमिवाजतु ॥ १९ ॥

परिसृष्टं धारयतु यद्धितं माव पादि तत् । गर्भं त उग्रौ रक्षतां भेषजौ
नीविभार्यौ३ ॥ २० ॥

पवीनसात् तङ्गल्वा३च्छायकादुत नग्नकात् । प्रजायै पत्ये त्वा पिङ्गः
परि पातु किमीदिनः ॥ २१ ॥

द्व्या३स्याच्चतुरक्षात् पञ्चपादादनङ्गुरेः । वृन्तादभि प्रसर्पतः परि पाहि
वरीवृतात् ॥ २२ ॥

य आमं मांसमदन्ति पौरुषेयं च ये क्रविः । गर्भान् खादन्ति केशवा-
स्तानितो नाशयामसि ॥ २३ ॥

ये सूर्यात् परिसर्पन्ति स्नुषेव श्वशुरादधि। बजश्च तेषां पिङ्गश्च हृदयेऽधि नि विध्यताम् ॥ २४ ॥

पिङ्ग रक्ष जायमानं मा पुमांसं स्त्रियं क्रन्। आण्डादो गर्भान्मा दभन् बाधस्वेतः किमीदिनः ॥ २५ ॥

अप्रजास्त्वं मार्तवत्समाद् रोदमघमावयम्। वृक्षादिव स्रजं कृत्वाप्रिये प्रति मुञ्च तत् ॥ २६ ॥ [३।२]

सूक्त ७

ऋषि:—अथर्वा ॥ देवता—भैषज्यं, आयुष्यं ओषधयः ॥ छन्दः—१, ७, ८, ११, १३, १६—२३, २७ अनुष्टुप्; २ उपरिष्टाद् भुरिग् बृहती; ३ पुरउष्णिक्, ४ पञ्चपदा परानुष्टुबतिजगती; ५, १०, २५ पथ्या पङ्क्तिः; ६ विराड्गर्भा भुरिक् पथ्या पङ्क्तिः; ९ द्विपदाऽऽर्ची भूरिगनुष्टुप्; १२ पञ्चपदा विराडतिशक्वरी; १४ उपरिष्टाद् निचृद् बृहती; [१५ त्रिष्टुप् २४ षट्पदा जगती;] २६ निचृदनुष्टुप्; २८ भुरिगनुष्टुप् ॥ मन्त्र २८ ।

या बभ्रवो याश्च शुक्रा रोहिणीरुत पृश्नयः। असिक्नीः कृष्णा ओषधीः सर्वा अच्छावदामसि ॥ १ ॥

त्रायन्तामिमं पुरुषं यक्ष्माद् देवेषितादधि। यासां द्यौष्पिता पृथिवी माता समुद्रो मूलं वीरुधां बभूव ॥ २ ॥

आपो अग्रं दिव्या ओषधयः। तास्ते यक्ष्ममेनस्य१मङ्गादङ्गादनीनशन् ॥ ३ ॥

प्रस्तृणती स्तम्बिनीरेकशुङ्गाः प्रतन्वतीरोषधीरा वदामि। अंशुमतीः काण्डिनीर्या विशाखा ह्वयामि ते वीरुधो वैश्वदेवीरुग्राः पुरुषजीवनीः ॥ ४ ॥

यद् वः सहः सहमाना वीर्यं१ यच्च वो बलम्। तेनेममस्माद् यक्ष्मात्
पुरुषं मुञ्चतौषधीरथो कृणोमि भेषजम् ॥ ५ ॥
जीवलां नघारिषां जीवन्तीमोषधीमहम्। अरुन्धतीमुन्नयन्तीं पुष्पां
मधुमतीमिह हुवेऽस्मा अरिष्टतातये ॥ ६ ॥
इहा यन्तु प्रचेतसो मेदिनीर्वचसो मम। यथेमं पारयामसि पुरुषं
दुरितादधि ॥ ७ ॥
अग्नेर्घासो अपां गर्भो या रोहन्ति पुनर्णवाः। ध्रुवाः सहस्रनाम्नीर्भेषजीः सन्त्वाभृताः ॥ ८ ॥
अवकोल्बा उदकात्मान ओषधयः। व्यृषन्तु दुरितं तीक्ष्णशृङ्ग्यः ॥ ९ ॥
उन्मुञ्चन्तीर्विवरुणा उग्रा या विषदूषणीः। अथो बलासनाशनीः
कृत्यादूषणीश्च यास्ता इहा यन्त्वोषधीः ॥ १० ॥
अपक्रीताः सहीयसीर्वीरुधो या अभिष्टुताः। त्रायन्तामस्मिन् ग्रामे
गामश्वं पुरुषं पशुम् ॥ ११ ॥
मधुमन्मूलं मधुमदग्रमासां मधुमन्मध्यं वीरुधां बभूव। मधुमत् पर्णं
मधुमत् पुष्पमासां मधोः संभक्ता अमृतस्य भक्षो घृतमन्नं दुह्रतां
गोपुरोगवम् ॥ १२ ॥
यावतीः कियतीश्चेमाः पृथिव्यामध्योषधीः। ता मा सहस्रपर्ण्यो
मृत्योर्मुञ्चन्त्वंहसः ॥ १३ ॥
वैयाघ्रो मणिर्वीरुधां त्रायमाणोऽभिशस्तिपाः। अमीवाः सर्वा रक्षांस्यप
हन्त्वधि दूरमस्मत् ॥ १४ ॥

सिं॒हस्ये॑व स्त॒नथो॒ः सं वि॑जन्ते॒ऽग्नेरि॑व विजन्त॒ आभृ॑ताभ्यः । गवा॒ं॑
यक्ष्म॒ः पुरु॑षाणां वी॒रुद्भि॒रति॑नुत्तो ना॒व्या॑ ए॒तु स्रो॒त्याः ॥ १५ ॥

मु॒मु॒चा॒ना ओष॑धयो॒ऽग्नेर्वै॑श्वान॒राद॑धि । भूमिं॑ संतन्व॒तीरि॒त यासा॒ं॑
राजा॒ वन॒स्पति॑ः ॥ १६ ॥

या रोह॑न्त्याङ्गिर॒सीः पर्व॑तेषु स॒मेषु॑ च । ता न॒ः पय॑स्वतीः शि॒वा
ओष॑धीः सन्तु॒ शं हृ॒दे ॥ १७ ॥

याश्चा॒हं वेद॑ वी॒रुधो॒ याश्च॒ पश्या॑मि॒ चक्षु॑षा । अज्ञा॑ता जानी॒मश्च॒ या
यासु॑ वि॒द्म च॒ संभृ॑तम् ॥ १८ ॥

सर्वा॑ः सम॒ग्रा ओष॑धी॒र्बोध॑न्तु॒ वच॑सो॒ मम॑ । यथे॒मं पा॒रया॑मसि॒ पुरु॑षं
दुरि॒ताद॑धि ॥ १९ ॥

अ॒श्व॒त्थो द॒र्भो वी॒रुधां॒ सोमो॒ राजा॒मृतं॑ ह॒विः । व्री॒हिर्यव॑श्च भेष॒जौ
दि॒वस्पु॒त्राव॑मर्त्यौ॑ ॥ २० ॥

उज्जिहीध्वे स्त॒नय॑त्यभि॒क्रन्द॑त्योषधीः । य॒दा व॑ः पृश्निमातरः प॒र्जन्यो॒
रेत॒साव॑ति ॥ २१ ॥

तस्या॒मृत॑स्ये॒मं बलं॒ पुरु॑षं पाययामसि । अथो॑ कृणोमि भेष॒जं
यथास॑च्छ॒तहा॑यनः ॥ २२ ॥

व॒राहो॒ वे॑द वी॒रुधं॑ नकु॒लो वे॑द भेष॒जीम् । स॒र्पा ग॑न्ध॒र्वा या वि॒दुस्ता
अ॒स्मा अव॑से हुवे ॥ २३ ॥

याः सु॑प॒र्णा आ॑ङ्गि॑र॒सीर्दि॒व्या या र॒घटौ॑ वि॒दुः । वयां॑सि हं॒सा या
विदुर्याश्च॒ सर्वे॑ पत॒त्रिण॑ः । मृ॒गा या वि॒दुरोष॑धी॒स्ता अ॒स्मा अव॑से
हुवे ॥ २४ ॥

याव॑तीना॒मोष॑धीना॒ं गाव॑ः प्रा॒श्नन्त्य॒घ्न्या याव॑तीनामजा॒वय॑ः । ताव॑ती॒-
स्तुभ्य॒मोष॑धी॒ः शर्म॑ यच्छ॒न्त्वाभृ॑ताः ॥ २५ ॥

याव॑तीषु मनु॒ष्याऽभेष॒जं भि॒षजो॑ वि॒दुः । ताव॑तीर्वि॒श्वभे॑षजी॒रा भ॑रामि॒
त्वाम॒भि ॥ २६ ॥

पुष्प॑वतीः प्र॒सूम॑तीः फ॒लिनी॑रफ॒ला उ॒त । सं॒मा॒तर॑ इव दुह्राम॒स्मा
अ॑रि॒ष्टता॑तये ॥ २७ ॥

उत् त्वा॑हार्ष॒ं पञ्च॑शला॒दथो॒ दश॑शलादु॒त । अथो॑ य॒मस्य॒ पड्वी॑शा॒द्
विश्व॑स्माद् देवकिल्बि॒षात् ॥ २८ ॥

सूक्त ८

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—इन्द्रः, वनस्पतिः, परसेनाहननं च ॥ छन्दः—१, ५, १३—१८ अनुष्टुप्; २, ८—१०, २३ उपरिष्टाद् बृहती; ३ विराड् बृहती; ४ बृहती पुरस्तात्प्रस्तारपङ्क्तिः; ६ आस्तारपङ्क्तिः; ७ विपरीतपादलक्ष्मा चतुष्पदाऽतिजगती; ११ पथ्या बृहती; १२ भुरिगनुष्टुप्; १९ पुरस्ताद् विराड् बृहती; २० पुरस्तान्निचृद् बृहती; २१ त्रिष्टुप्; २२ चतुष्पदा शक्वरी; २४ त्रिष्टुबुष्णिग्गर्भा पराशक्वरी पञ्चपदा जगती ॥ मन्त्र २४।

इन्द्रो॑ मन्थतु॒ मन्थि॑ता श॒क्रः शूर॑ः पुरंद॒रः । यथा॒ हना॑म॒ सेना॑
अ॒मित्रा॑णां सहस्र॒शः ॥ १ ॥

पू॒तिर॒ज्जुरु॑प॒ध्मानी॒ पूतिं॒ सेनां॑ कृणोत्व॒मूम् । धू॒मम॒ग्निं प॑रा॒दृश्या॒मित्रा॑
हृ॒त्स्वा द॑धतां भ॒यम् ॥ २ ॥

अ॒मून॑श्वत्थ॒ निः शृ॑णीहि॒ खादा॒मून् ख॑दिराजि॒रम् । ता॒जद्भ॑ङ्ग इव
भज्यन्तां॒ हन्त्वे॑ना॒न् वध॑को व॒धैः ॥ ३ ॥

परुषानमून् परुषाह्वः कृणोतु हन्त्वेनान् वधको वधैः। क्षिप्रं शर इव
भज्यन्तां बृहज्जालेन सदिताः॥ ४ ॥

अन्तरिक्षं जालमासीज्जालदण्डा दिशो महीः। तेनाभिधाय दस्यूनां
शक्रः सेनामपावपत्॥ ५ ॥

बृहद्धि जालं बृहतः शक्रस्य वाजिनीवतः। तेन शत्रूनभि सर्वान
न्युब्ज यथा न मुच्यातै कतमश्चनैषाम्॥ ६ ॥

बृहत् ते जालं बृहत इन्द्र शूर सहस्रार्घस्य शतवीर्यस्य। तेन शतं
सहस्रमयुतं न्यर्बुदं जघान शक्रो दस्यूनामभिधाय सेनया॥ ७ ॥

अयं लोको जालमासीच्छक्रस्य महतो महान्। तेनाहमिन्द्रजालेनामूंस्तमसाभि दधामि सर्वान्॥ ८ ॥

सेदिरुग्रा व्यृद्धिरार्तिश्चानपवाचना। श्रमस्तन्द्रीश्च मोहश्च तैरमूनभि
दधामि सर्वान्॥ ९ ॥

मृत्यवेऽमून् प्र यच्छामि मृत्युपाशैरमी सिताः। मृत्योर्ये अघला
दूतास्तेभ्य एनान् प्रति नयामि बद्ध्वा॥ १० ॥

नयतामून् मृत्युदूता यमदूता अपोम्भत। परःसहस्रा हन्यन्तां तृणेढ्वेनान् मत्यं भवस्य॥ ११ ॥

साध्या एकं जालदण्डमुद्यत्य यन्त्योजसा। रुद्रा एके वसव एकमादित्यैरेक उद्यतः॥ १२ ॥

विश्वे देवा उपरिष्टादुब्जन्तो यन्त्वोजसा। मध्येन घ्नन्तो यन्तु सेनामङ्गिरसो महीम्॥ १३ ॥

वनस्पतीन् वानस्पत्यानोषधीरुत वीरुधः। द्विपाच्चतुष्पादिष्णामि यथा
सेनाममूं हनन् ॥ ॥ १४ ॥

गन्धर्वाप्सरसः सर्पान् देवान् पुण्यजनान् पितॄन्। दृष्टानदृष्टानिष्णामि
यथा सेनाममूं हनन् ॥ १५ ॥

इम उप्ता मृत्युपाशा यानाक्रम्य न मुच्यसे। अमुष्या हन्तु सेनाया
इदं कूटं सहस्रशः ॥ १६ ॥

घर्मः समिद्धो अग्निनायं होमः सहस्रहः। भवश्च पृश्निबाहुश्च शर्व
सेनाममूं हतम् ॥ १७ ॥

मृत्योराषमा पद्यन्तां क्षुधं सेदिं वधं भयम्। इन्द्रश्चाक्षुजालाभ्यां शर्व
सेनाममूं हतम् ॥ १८ ॥

पराजिताः प्र त्रसतामित्रा नुत्ता धावत ब्रह्मणा। बृहस्पतिप्रणुत्तानां
मामीषां मोचि कश्चन ॥ १९ ॥

अव पद्यन्तामेषामायुधानि मा शकन् प्रतिधामिषुम्। अथैषां बहु
बिभ्यतामिषवो घ्नन्तु मर्मणि ॥ २० ॥

सं क्रोशतामेनान् द्यावापृथिवी समन्तरिक्षं सह देवताभिः। मा ज्ञातारं
मा प्रतिष्ठां विदन्त मिथो विघ्नाना उप यन्तु मृत्युम् ॥ २१ ॥

दिशश्चतस्रोश्वतर्यो देवरथस्य पुरोडाशाः शफा अन्तरिक्षमुद्धिः। द्यावा-
पृथिवी पक्षसी ऋतवोभीशवोन्तर्देशाः किंकरा वाक् परिरथ्यम् ॥२२॥

संवत्सरो रथः परिवत्सरो रथोपस्थो विराडीषाग्नी रथमुखम्। इन्द्रः
सव्यष्ठाश्चन्द्रमाः सारथिः ॥ २३ ॥

इ॒तो ज॑ये॒तो वि ज॑य॒ सं ज॑य॒ जय॒ स्वाहा॑। इ॒मे ज॑यन्तु॒ परा॒मी ज॑यन्ता॒
स्वाहै॒भ्यो दु॒राहा॒मीभ्य॑ः। नी॒ल॒लो॒हि॒तेना॒मून॒भ्यव॑तनोमि ॥ २४ ॥
[४।२]

सूक्त ९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, ६, ७, १०, १३, १५—२१, २४ त्रिष्टुप्; २ पङ्क्तिः; ३ आस्तारपङ्क्तिः; ४, ५, २३, २५, २६ अनुष्टुप्; ८; ११, १२, २२ जगती, ९ भुरिक् त्रिष्टुप्, १४ चतुष्पदाऽतिजगती ॥ मंत्र २६।

कु॒तस्तौ जा॒तौ क॑त॒मः सो अर्ध॒ः कस्मा॑ल्लो॒कात् क॑त॒मस्या॑ः पृथि॒व्याः।
व॒त्सौ वि॒राज॑ः सलि॒लादुदै॑तां॒ तौ त्वा॑ पृच्छामि कत॒रेण॑ दु॒ग्धा ॥ १ ॥
यो अक्र॑न्दयत् सलि॒लं म॑हि॒त्वा योनिं॑ कृ॒त्वा त्रि॒भुज॒ं शया॑नः। व॒त्सः
का॑म॒दुघो॑ वि॒राज॒ः स गुहा॑ च॒क्रे त॒न्व॑ः परा॒चैः ॥ २ ॥
यानि॒ त्रीणि॑ बृ॒हन्ति॒ येषां॑ च॒तु॒र्थं॑ वि॒युन॑क्ति॒ वाच॑म्। ब्र॒ह्मैन॑द् विद्या॒त्
तप॑सा विप॒श्चिद् यस्मि॒न्नेकं॑ यु॒ज्यते॒ यस्मि॒न्नेक॑म् ॥ ३ ॥
बृ॒ह॒तः परि॒ सामा॑नि ष॒ष्ठात् पञ्चाधि॒ निर्मि॑ता। बृ॒हद् बृ॑ह॒त्या
निर्मि॑तं॒ कुतोऽधि बृह॒ती मि॒ता ॥ ४ ॥
बृ॒ह॒ती परि॒ मात्रा॑या मा॒तुर्मात्राधि॒ निर्मि॑ता। मा॒या ह॑ ज॒ज्ञे मा॒याया॑
मा॒याया॒ मात॒ली परि॑ ॥ ५ ॥
वै॒श्वा॒न॒रस्य॑ प्रति॒मोपरि॒ द्यौर्याव॑द् रोद॑सी विबबा॒धे अ॒ग्निः। ततः॑
ष॒ष्ठादा॒मुतो॑ यन्ति॒ स्तोमा॒ उदि॒तो य॑न्त्य॒भि ष॒ष्ठमह्नः॑ ॥ ६ ॥
षट् त्वा॑ पृच्छाम॒ ऋष॑यः कश्यपे॒मे त्वं हि यु॒क्तं यु॑यु॒क्षे योग्यं॑ च।
वि॒राज॑माहु॒र्ब्रह्म॑णः पि॒तरं॒ तां नो॒ वि धे॑हि यति॒धा सखि॑भ्यः ॥ ७ ॥

यां प्रच्यु॑ता॒मनु॑ य॒ज्ञाः प्रच्यव॑न्त उप॒तिष्ठ॑न्त उप॒तिष्ठ॑मानाम् । यस्या॑
व्र॒ते प्र॑स॒वे य॒क्षमेज॑ति॒ सा वि॒राडृ॑षयः पर॒मे व्यो॑मन् ॥ ८ ॥

अ॒प्राणै॑ति प्रा॒णेन॑ प्राण॒तीनां॑ वि॒राट् स्व॒राज॑म॒भ्ये॑ति प॒श्चात् । विश्वं॑
मृ॒शन्ती॑म॒भिरू॑पां वि॒राजं॒ पश्य॑न्ति॒ त्वे न त्वे प॑श्यन्त्येनाम् ॥ ९ ॥

को वि॒राजो॑ मिथुन॒त्वं प्र वे॑द॒ क ऋ॒तून् क उ॒ कल्प॑मस्याः । क्रमा॒न्
को अ॑स्याः कति॒धा विदु॑ग्धा॒न् को अ॑स्या॒ धाम॑ कति॒धा व्यु॑ष्टीः ॥१०॥

इ॒यमे॒व सा या प्र॑थ॒मा व्यौच्छ॑दा॒स्वित॑रासु चरति॒ प्रवि॑ष्टा । म॒हान्तो॑
अ॒स्यां म॑हि॒मानो॑ अ॒न्तर्व॒धूर्जि॑गाय नवग॒ज्जनि॑त्री ॥ ११ ॥

छन्दः॑पक्षे उ॒षसा॒ पेपि॑शाने समा॒नं योनि॒मनु॒ सं च॑रेते । सूर्य॑पत्नी॒ सं
च॑रतः प्रजान॒ती के॒तुम॑ती अ॒जरे॒ भूरि॑रेतसा ॥ १२ ॥

ऋ॒तस्य॒ पन्था॒मनु॑ ति॒स्र आगु॒स्त्रयो॑ घ॒र्मा अनु॒ रेत॒ आगुः॑ । प्र॒जामेका॑
जिन्व॒त्यूर्ज॒मेका॑ रा॒ष्ट्रमेका॑ रक्षति देवयू॒नाम् ॥ १३ ॥

अ॒ग्नीषोमा॑वदधु॒र्या तु॒रीयासी॑द् य॒ज्ञस्य॑ प॒क्षावृष॑यः क॒ल्पय॑न्तः । गा॒य॒त्रीं
त्रि॒ष्टुभं॒ जग॑तीमनु॒ष्टुभं॑ बृहद॒र्कीं यज॑माना॒य स्व॑रा॒भर॑न्तीम् ॥ १४ ॥

पञ्च॒ व्यु॑ष्टीरनु॒ पञ्च॒ दोहा॒ गां पञ्च॑ ना॑म्नीमृ॒तवोऽनु॒ पञ्च॑ । पञ्च॒
दिशः॑ पञ्चद॒शेन॑ क्लृ॒प्तास्ता एक॑मूर्ध्नीर॒भि लो॒कमेक॑म् ॥ १५ ॥

षड् जा॒ता भू॒ता प्र॑थम॒जर्तस्य॒ षडु॒ सामा॑नि षड॒हं व॑हन्ति । ष॒ड्योगं॒
सीर॒मनु॒ साम॑साम॒ षडा॑हु॒र्द्यावा॑पृथि॒वीः षडु॒र्वीः ॥ १६ ॥

षडा॑हुः शी॒तान् षडु॑ मा॒स उ॒ष्णानृ॒तुं नो॑ ब्रूत यत॒मोऽति॑रिक्तः । स॒प्त
सु॑प॒र्णाः क॒वयो॒ नि षे॑दुः स॒प्त च्छन्दां॒स्यनु॑ स॒प्त दी॒क्षाः ॥ १७ ॥

स॒प्त होमा॑ः स॒मिधो॑ ह स॒प्त मधू॑नि स॒प्तर्तवो॑ ह स॒प्त । स॒प्ताज्या॑नि॒
परि॑ भू॒तमाय॒न् ताः स॑प्तगृ॒ध्रा इति॑ शुश्रुमा व॒यम् ॥ १८ ॥

स॒प्त च्छन्दां॑सि चतुरुत्त॒राण्य॒न्यो अ॒न्यस्मि॒न्नध्यार्पि॑तानि । क॒थं स्तोमा॒ः
प्रति॑ तिष्ठन्ति॒ तेषु॒ तानि॒ स्तोमे॑षु क॒थमार्पि॑तानि ॥ १९ ॥

क॒थं गा॑य॒त्री त्रि॒वृतं॒ व्या॑प क॒थं त्रि॒ष्टुप् प॑ञ्चद॒शेन॑ कल्पते । त्र॒य॒स्त्रिं॒शेन॒
जग॑ती क॒थम॑नु॒ष्टुप् क॒थमे॑कवि॒ंशः ॥ २० ॥

अ॒ष्ट जा॒ता भू॒ता प्र॑थम॒जर्त॑स्या॒ष्टेन्द्र॒र्त्विजो॒ दैव्या॒ ये । अ॒ष्टयो॑नि॒रदि॑ति॒रष्टपु॑त्राष्ट॒मीं रात्रि॑म॒भि ह॒व्यमे॑ति ॥ २१ ॥

इ॒त्थं श्रेयो॒ मन्य॑माने॒दमाग॑मं यु॒ष्माकं॑ स॒ख्ये अ॒हम॑स्मि॒ शेवा॑ । स॒मा॒नज॑न्मा॒
क्रतु॑रस्ति वः शि॒वः स व॒ः सर्वा॑ः सं च॑रति प्रजा॒नन् ॥ २२ ॥

अ॒ष्टेन्द्र॑स्य॒ षड् य॒मस्य॒ ऋषी॑णां स॒प्त स॑प्त॒धा । अ॒पो म॑नु॒ष्या॒३नोष॑धी॒स्ताँ
उ॒ पञ्चानु॑ सेचिरे ॥ २३ ॥

केव॒लीन्द्रा॑य दुदु॒हे हि गृ॒ष्टिर्वशं॑ पी॒यूषं॑ प्रथ॒मं दुहा॑ना । अथा॑तर्पयच्च॒तुर॑श्चतु॒र्धा
दे॒वान् म॑नु॒ष्या॒३ँ असु॑रानु॒त ऋषी॑न् ॥ २४ ॥

को नु गौः क ए॑कऋ॒षिः किमु॒ धाम॒ का आ॒शिष॑ः । य॒क्षं पृ॑थि॒व्यामे॑कवृ॒देक॑ऋ॒तुः
क॑त॒मो नु सः ॥ २५ ॥

एको॒ गौरेक॑ एकऋ॒षिरेकं॒ धामै॑क॒धाशिष॑ः । य॒क्षं पृ॑थि॒व्यामे॑कवृ॒देक॒र्तुर्नाति॑ रिच्यते ॥ २६ ॥

[५।१]

॥ सूक्त १० (२) ॥

ऋषिः—अथर्वाचार्यः ॥ देवता—विराट् ॥ छन्दः—१ आर्ची पङ्क्तिः; २, ४, ६, ८, १०, १२ याजुषी जगती; ३, ९ साम्न्यनुष्टुप्; ५ आर्च्यनुष्टुप्; ७, १३ विराड् गायत्री; ११ साम्नी बृहती ॥ मन्त्र १३ ।

वि॒राड् वा इ॒दमग्र॑ आसी॒त् तस्या॑ जा॒ताया॒ः सर्व॑मबिभेदि॒यमे॒॑वेदं
भ॑वि॒ष्यतीति॑ ॥ १ ॥ (१)
सोद॑क्राम॒त् सा गार्ह॑पत्ये॒ न्यऽक्रामत् । गृ॒ह॒मे॒धी गृ॒हप॑तिर्भ॑वति॒ य
ए॒वं वेद॑ ॥ २ ॥ (२-३)
सोद॑क्राम॒त् साह॑व॒नीये॒ न्यऽक्रामत् । यन्त्य॑स्य दे॒वा दे॒वहू॑तिं प्रि॒यो
दे॒वानां॑ भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ३ ॥ (४-५)
सोद॑क्राम॒त् सा द॑क्षिणा॒ग्नौ न्यऽक्रामत् । य॒ज्ञर्तो॑ दक्षि॒णीयो॒ वास॑तेयो
भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ४ ॥ (६-७)
सोद॑क्राम॒त् सा स॒भाया॒ं न्यऽक्रामत् । यन्त्य॑स्य स॒भां सभ्यो॑ भवति॒ य
ए॒वं वेद॑ ॥ ५ ॥ (८-९)
सोद॑क्राम॒त् सा समि॑तौ॒ न्यऽक्रामत् । यन्त्य॑स्य॒ समि॑तिं सामि॒त्यो
भ॑वति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ६ ॥ (१०-११)
सोद॑क्राम॒त् साम॑न्त्रणे॒ न्यऽक्रामत् ॥ यन्त्य॑स्या॒मन्त्र॑णमामन्त्र॒णीयो॑
भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ७ ॥ (१२-१३) [५।२]

—:०:—

॥ १० (२) ॥

ऋषिः—अथर्वाचार्यः ॥ देवता—विराट् ॥ छन्दः—१ त्रिपदा साम्न्यनुष्टुप्; २ उष्णिग्गर्भा चतुष्पदोपरिष्टाद् विराड् बृहती; ३ एकपदा याजुषी गायत्री; ४ एकपदा साम्नी पङ्क्तिः; ५ विराड्गायत्री; ६ आर्च्यनुष्टुप्; ७ साम्नी पङ्क्तिः; ८ आसुरी गायत्री; ९ साम्न्यनुष्टुप्; १० साम्नी बृहती ॥ मन्त्र १० ।

सोद॑क्राम॒त् सान्तरि॑क्षे चतु॒र्धा विक्रा॑न्तातिष्ठत् ॥ ८ ॥ (१)
तां दे॑वमनु॒ष्या॑ अब्रुवन्नि॒यमे॒व तद् वे॑द॒ यदु॒भयं॑ उप॒जीवे॑मे॒मामुप॑ ह्वयामहा॒ इति॑ ॥ ९ ॥ (२)
तामुपा॑ह्वयन्त ॥ १० ॥ (३)
ऊर्ज॒ एहि॒ स्वध॒ एहि॒ सूनृ॑त॒ एहीरा॑व॒त्येहीति॑ ॥ ११ ॥ (४)
तस्या॒ इन्द्रो॑ व॒त्स आसी॑द् गाय॒त्र्य॑भिधान्य॒भ्रमूध॑ः ॥ १२ ॥ (५)
बृ॒हच्च॑ रथन्त॒रं च॒ द्वौ स्तना॒वास्तां॑ यज्ञाय॒ज्ञियं॑ च वामदे॒व्यं च॒ द्वौ ॥ १३ ॥ (६)
ओष॑धीरे॒व र॑थन्त॒रेण॑ दे॒वा अ॑दुह्र॒न् व्यचो॑ बृह॒ता ॥ १४ ॥ (७)
अ॒पो वा॑मदे॒व्येन॑ य॒ज्ञं य॑ज्ञाय॒ज्ञिये॑न ॥ १५ ॥ (८)
ओष॑धीरे॒वास्मै॑ रथंत॒रं दु॑हे॒ व्यचो॑ बृ॒हत् ॥ १६ ॥ (९)
अ॒पो वा॑मदे॒व्यं य॒ज्ञं य॑ज्ञाय॒ज्ञियं॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ १७ ॥ (१०)

—:०:—

॥ १० (३) ॥

ऋषिः—अथर्वाचार्यः ॥ देवता—विराट् ॥ छन्दः—१ चतुष्पदा विराडनुष्टुप्; २ आर्ची त्रिष्टुप्; ३, ५, ७ चतुष्पदा प्राजापत्या पङ्क्तिः; ४, ६, ८ आर्ची बृहती ॥ मन्त्र ८।

सोद॑क्राम॒त् सा वन॒स्पती॒नाग॑च्छ॒त् । तां वन॒स्पत॑योऽघ्नत॒ सा सं॑वत्स॒रे सम॑भवत् । तस्मा॒द् वन॒स्पती॑नां संवत्स॒रे वृ॒क्णमपि॑ रोहति वृ॒श्चते॒ऽस्याप्रियो॒ भ्रातृ॑व्यो॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ १८ ॥ (१·२)
सोद॑क्राम॒त् सा पि॒तॄनाग॑च्छ॒त् । तां पि॒तरो॑ऽघ्नत॒ सा मा॒सि

समभवत् । तस्मात् पितृभ्यो मास्युपमास्यं ददति प्र पितृयाणं पन्थां जानाति य एवं वेद ॥ १९ ॥ (३-४)

सोदक्रामत् सा देवानागच्छत् तां देवा अघ्नत सार्धमासे समभवत् । तस्माद् देवेभ्योऽर्धमासे वषट् कुर्वन्ति प्र देवयानं पन्थां जानाति य एवं वेद ॥ २० ॥ (५-६)

सोदक्रामत् सा मनुष्या३ँनागच्छत् । तां मनुष्याऽ अघ्नत सा सद्यः समभवत् । तस्मान्मनुष्येऽभ्य उभयद्युरुप हरन्त्युपास्य गृहे हरन्ति य एवं वेद ॥ २१ ॥ (७-८)

—:०:—

॥ १० (४) ॥

ऋषिः—अथर्वाचार्यः ॥ देवता—विराट् ॥ छन्दः—१, ५ चतुष्पदा साम्नी जगती; २, ६, १० साम्नी बृहती; ३, १४ साम्न्युष्णिक्; ४, ८ आर्च्यनुष्टुप्; ७ आसुरी गायत्री; ९, १३ चतुष्पदोष्णिक् ११ प्राजापत्यानुष्टुप्; १२, १६ आर्ची त्रिष्टुप् १५ विराड् गायत्री ॥ मन्त्र १६ ।

सोदक्रामत् सासुरानागच्छत् तामसुरा उपाह्वयन्त माय एहीति । तस्या विरोचनः प्राह्लादिर्वत्स आसीदयस्पात्रं पात्रम् । तां द्विमूर्धार्त्व्योऽधोक् तां मायामेवाधोक् । तां मायामसुरा उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ॥ २२ ॥ (१-४)

सोदक्रामत् सा पितॄनागच्छत् तां पितर उपाह्वयन्त स्वध एहीति । तस्या यमो राजा वत्स आसीद् रजतपात्रं पात्रम् । तामन्तको मार्त्यवोधोक् तां स्वधामेवाधोक् । तां स्वधां पितर उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ॥ २३ ॥ (५-८)

सोदक्रामत् सा मनुष्या३नागच्छत् तां मनुष्या३ उपाह्वयन्तेरावत्येहीति तस्या मनुर्वैवस्वतो वत्स आसीत् पृथिवी पात्रम् तां पृथीं वैन्योऽधोक् तां कृषिं च सस्यं चाधोक् ते कृषिं च सस्यं च मनुष्या३ उप जीवन्ति कृष्टराधिरुपजीवनीयो भवति य एवं वेद ॥ २४ ॥ (६-१३)

सोदक्रामत् सा सप्तऋषीनागच्छत् तां सप्तऋषय उपाह्वयन्त ब्रह्मण्वत्येहीति । तस्याः सोमो राजा वत्स आसीच्छन्दः पात्रम् । तां बृहस्पतिराङ्गिरसोऽधोक् तां ब्रह्म च तपश्चाधोक् । तद् ब्रह्म च तपश्च सप्तऋषय उप जीवन्ति ब्रह्मवर्चस्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ॥२५॥ १३-१६

—:०:—

॥१० (५)॥

ऋषिः—अथर्वाचार्यः ॥ देवता —विराट् ॥ छन्दः—१, १३ चतुष्पदा साम्नी जगती; २, ३ साम्न्युष्णिक् ४, १६ आर्च्यनुष्टुप् ५ चतुष्पदा प्राजापत्या जगती; ६ साम्नी बृहती त्रिष्टुप्; ७, ११ विराड्गायत्री; ८ आर्ची त्रिष्टुप्; ९ चतुष्पदोष्णिक् १०, १४ साम्नी बृहती; १२ त्रिपदा ब्राह्मी भुरिग् गायत्री, १५ साम्न्यनुष्टुप् ॥ मन्त्र १६।

सोदक्रामत् सा देवानागच्छत् तां देवा उपाह्वयन्तोर्ज एहीति । तस्या इन्द्रो वत्स आसीच्चमसः पात्रम् । तां देवः सविताधोक् तामूर्जामेवाधोक् । तामूर्जां देवा उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ॥ २६ ॥ (१-४)

सोदक्रामत् सा गन्धर्वाप्सरस आगच्छत् तां गन्धर्वाप्सरस उपाह्वयन्त पुण्यगन्ध एहीति ॥ तस्याश्चित्ररथः सौर्यवर्चमो वत्स आसीत्

पुष्करपर्णं पात्रम् ॥ तां वसुरुचिः सौर्यवर्चसोऽधोक् तां पुण्यमेव गन्धमधोक् ॥ तं पुण्यं गन्धं गन्धर्वाप्सरस उप जीवन्ति पुण्यगन्धिरुपजीवनीयो भवति य एवं वेद । २७ ॥ (५-८)

सोदक्रामत् सेतरजनानागच्छत् तामितरजना उपाह्वयन्त तिरोध एहीति । तस्याः कुबेरो वैश्रवणो वत्स आसीदामपात्रं पात्रम् । तां रजतनाभिः काबेरकोऽधोक् तां तिरोधामेवाधोक् । तां तिरोधामितरजना उप जीवन्ति तिरो धत्ते सर्वं पाप्मानमुपजीवनीयो भवति य एवं वेद ॥ २८ ॥ (९-१२)

सोदक्रामत् सा सर्पानागच्छत् तां सर्पा उपाह्वयन्त विषवत्येहीति । तस्यास्तक्षको वैशालेयो वत्स आसीदलाबुपात्रं पात्रम् । तां धृतराष्ट्र ऐरावतोऽधोक् तां विषमेवाधोक् । तद् विषं सर्पा उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ॥ २९ ॥ (१३-१६)

—:०:—

॥ १० (६) ॥

ऋषिः—अथर्वाचार्यः ॥ देवता—विराट् ॥ छन्दः—१ द्विपदा विराड्गायत्री; २ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप्; ३ द्विपदा प्राजापत्यानुष्टुप्, ४ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप् ॥ मंत्र ४।

तद् यस्मा एवं विदुषेलाबुनाभिषिञ्चेत् प्रत्याहन्यात् ॥ ३० ॥ (१)

न च प्रत्याहन्यान्मनसा त्वा प्रत्याहन्मीति प्रत्याहन्यात् ॥३१॥ (२)

यत् प्रत्याहन्ति विषमेव तत् प्रत्याहन्ति ॥ ३२ ॥ (३)

विषमेवास्याप्रियं भ्रातृव्यमनुविषिच्यते य एवं वेद ॥३३॥ (४) [५।२]

॥ इति अष्टमं काण्डम् समाप्तम् ॥

ॐ

अथर्ववेद–संहिता

अथ नवमं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मधु, अश्विनौ ॥ छन्दः—१, ४, ५ त्रिष्टुप्; २ त्रिष्टुब्गर्भा पङ्क्तिः; ३ पराऽनुष्टुप् (?); ६ अतिशक्वरीगर्भा यवमध्या महाबृहती; ७ अतिजगतीगर्भा यवमध्या महाबृहती; ८ बृहतीगर्भा संस्तारपङ्क्तिः; ९ पराबृहती प्रस्तारपङ्क्तिः; १० पुरउष्णिक् पङ्क्तिः; ११—१३, १५, १६, १८, १९ अनुष्टुप्; १४ पुरउष्णिक; १७ उपरिष्टाद् विराड्बृहती; २० भुरिग् विष्टारपङ्क्तिः; २१ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप् एकावसाना); २२ द्विपदा ब्राह्मी पुरउष्णिक्, २३ द्विपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः; २४ षट्पदाऽष्टिः ॥ मन्त्र २४ ।

दि॒वस्पृ॑थि॒व्या अ॒न्तरि॑क्षात् समु॒द्राद॒ग्नेर्वाता॑न्मधुक॒शा हि ज॒ज्ञे । तां
चा॑यि॒त्वामृत॒ं वसा॑नां हृ॒द्भिः प्र॒जाः प्रति॑ नन्दन्ति॒ सर्वाः॑ ॥ १ ॥
म॒हत् पयो॑ वि॒श्वरू॑पमस्याः समु॒द्रस्य॑ त्वो॒त रेत॑ आहुः । यत॒ ऐति॑
मधुक॒शा ररा॑णा॒ तत् प्रा॒णस्तद॒मृत॒ं निवि॑ष्टम् ॥ २ ॥
पश्य॑न्त्यस्याश्चरि॒तं पृ॑थि॒व्यां पृथ॒ङ्नरो॑ बहु॒धा मीमां॑समानाः । अ॒ग्ने-
र्वाता॑न्मधुक॒शा हि ज॒ज्ञे म॒रुता॑मु॒ग्रा न॒प्तिः ॥ ३ ॥
मा॒तादि॒त्यानां॑ दुहि॒ता वसू॑नां प्रा॒णः प्र॒जाना॑म॒मृत॑स्य॒ नाभिः॑ ।
हिर॑ण्यवर्णा मधुकशा घृ॒ताची॑ म॒हान् भर्ग॑श्चरति॒ मर्त्ये॑षु ॥ ४ ॥

मधो॒ः कशा॑मजनयन्त दे॒वास्तस्या॒ गर्भो॑ अभवद् वि॒श्वरू॑पः । तं जा॒तं॑
तरु॑णं पिपर्ति मा॒ता स जा॒तो विश्वा॒ भुव॑ना॒ वि च॑ष्टे ॥ ५ ॥
कस्तं प्र वे॑द॒ क उ॒ तं चि॑केत॒ यो अ॑स्या हृ॒दः क॒लश॑ः सोम॒धानो॒
अक्षि॑तः । ब्र॒ह्मा सु॒मे॒धाः सो अ॑स्मिन् मदेत ॥ ६ ॥
स तौ प्र वे॑द॒ स उ तौ चि॑केत॒ याव॑स्या॒ः स्तनौ॑ स॒हस्र॑धारा॒वक्षि॑तौ ।
ऊर्जं॑ दुहाते॒ अन॑पस्फु॒रन्तौ ॥ ७ ॥
हि॒ङ्क॒रिक्रती बृ॒ह॒ती व॑यो॒धा उ॒च्चैर्घो॑षा॒भ्येति॒ या व्र॒तम् । त्रीन् घ॒र्मान॒भि
वा॑व॒शाना मिमा॑ति मा॒युं पय॑ते॒ पयो॑भिः ॥ ८ ॥
यामापी॑नामुप॒सीद॒न्त्याप॑ः शाक्व॒रा वृ॑ष॒भा ये स्व॒राज॑ः । ते व॑र्षन्ति॒ ते
व॑र्षयन्ति त॒द्विदे॒ काम॒मूर्ज॒माप॑ः ॥ ९ ॥
स्त॒न॒यि॒त्नुस्ते॒ वाक् प्र॑जापते॒ वृषा॒ शुष्मं॑ क्षिपसि॒ भूम्या॒मधि॑ ।
अ॒ग्नेर्वाता॑न्मधुक॒शा हि ज॒ज्ञे म॒रुता॑मु॒ग्रा न॒प्तिः ॥ १० ॥
यथा॒ सोम॑ः प्रातःसव॒ने अ॒श्विनो॒र्भव॑ति प्रि॒यः । ए॒वा मे॑ अश्विना॒ वर्च॑
आ॒त्मनि॑ ध्रियताम् ॥ ११ ॥
यथा॒ सोमो॑ द्वितीये॒ सव॑न इन्द्रा॒ग्न्योर्भव॑ति प्रि॒यः । ए॒वा म॑ इन्द्राग्नी॒
वर्च॑ आ॒त्मनि॑ ध्रियताम् ॥ १२ ॥
यथा॒ सोम॑स्तृ॒तीये॒ सव॑न ऋभू॒णां भव॑ति प्रि॒यः । ए॒वा म॑ ऋभवो॒ वर्च॑
आ॒त्मनि॑ ध्रियताम् ॥ १३ ॥
मधु॑ जनिषीय॒ मधु॑ वंशिषीय । पय॑स्वानग्न॒ आग॑मं॒ तं मा॒ सं सृ॑ज॒
वर्च॑सा ॥ १४ ॥

सं मा॑ग्ने॒ वर्च॑सा सृज॒ सं प्र॒जया॒ समायु॑षा । वि॒द्युर्मे॑ अ॒स्य दे॒वा इन्द्रो॑ वि॒द्यात् स॒ह ऋषि॑भिः ॥ १५ ॥

यथा॒ मधु॑ मधु॒कृतः॑ सं॒भर॑न्ति॒ मधा॒वधि॑ । ए॒वा मे॑ अश्विना॒ वर्च॑ आ॒त्मनि॑ ध्रियताम् ॥ १६ ॥

यथा॒ मक्षा॑ इ॒दं मधु॑ न्य॒ञ्जन्ति॒ मधा॒वधि॑ । ए॒वा मे॑ अश्विना॒ वर्च॒स्तेजो॒ बल॒मोज॑श्च ध्रियताम् ॥ १७ ॥

यद् गि॒रिषु॒ पर्व॑तेषु॒ गोष्वश्वे॑षु॒ यन्मधु॑ । सुरा॑यां सि॒च्यमा॑नाया॒ं यत् तत्र॒ मधु॒ तन्मयि॑ ॥ १८ ॥

अश्विना सार॒घेण॑ मा॒ मधु॑नाङ्क्तं शुभस्पती । यथा॒ वर्च॑स्वतीं॒ वाच॑मा॒वदा॑नि॒ जना॒ँ अनु॑ ॥ १९ ॥

स्तन॒यि॒त्नुस्ते॒ वाक् प्र॑जापते॒ वृषा॒ शुष्मं॑ क्षिपसि॒ भूम्यां॑ दि॒वि । तां प॒शव॒ उप॑ जीवन्ति॒ सर्वे॒ तेनो॒ सेष॒मूर्जं॑ पिपर्ति ॥ २० ॥

पृ॒थि॒वी द॒ण्डो॒३॒॑न्तरि॑क्षं॒ गर्भो॒ द्यौः कशा॑ वि॒द्युत् प्र॑क॒शो हि॑र॒ण्ययो॑ बि॒न्दुः ॥ २१ ॥

यो वै कशा॑याः स॒प्त मधू॑नि॒ वेद॒ मधु॑मान् भवति । ब्रा॒ह्म॒णश्च॒ राजा॑ च धे॒नुश्चा॑न॒ड्वांश्च॑ व्री॒हिश्च॒ यव॑श्च॒ मधु॑ सप्त॒मम् ॥ २२ ॥

मधु॑मान् भवति॒ मधु॑मदस्याहा॒र्यं॑ भवति । मधु॑मतो लो॒काञ्जयति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ २३ ॥

यद् वी॒ध्रे स्त॒नय॑ति प्र॒जाप॑तिरे॒व तत् प्र॒जाभ्यः॑ प्रा॒दुर्भ॑वति । तस्मा॑त् प्राचीनोपवी॒तस्ति॑ष्ठे॒ प्रजा॑प॒तेऽनु॑ मा बुध्य॒स्वेति॑ । अन्वे॑नं प्र॒जा अनु॑ प्र॒जाप॑तिर्बुध्यते॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ २४ ॥ [१।१]

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—कामः ॥ छन्दः—१—४, ६, ९, १०, १९, २४, २५ त्रिष्टुप्; ५ अतिजगती; ७, १४, १५, १७, १८, २१, २२ जगती; ८ त्रिपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः; ११, २०, २३ भुरिक् त्रिष्टुप्; १२ अनुष्टुप्; १३ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप्; १६ चतुष्पदा शक्वरीगर्भा परा जगती ॥ मन्त्र २५ ।

स॒प॒त्न॒हन॑मृष॒भं घृ॒तेन॒ कामं॑ शिक्षामि ह॒विषाज्ये॑न । नी॒चैः स॒पत्ना॒न्
मम॑ पादय॒ त्वम॒भिष्टु॑तो मह॒ता वी॒र्ये॑ण ॥ १ ॥
यन्मे॒ मन॑सो॒ न प्रि॒यं न चक्षु॑षो॒ यन्मे॒ बभ॑स्ति॒ नाभि॒नन्द॑ति । तद्
दु॒ःष्वप्न्यं॒ प्रति॑ मुञ्चामि स॒पत्ने॒ कामं॑ स्तु॒त्वोद॒हं भि॑देयम् ॥ २ ॥
दु॒ःष्वप्न्यं॑ काम दुरि॒तं च॑ कामाप्र॒जस्ता॑मस्व॒गता॒मव॑र्तिम् । उ॒ग्र ईशा॑नः
प्रति॑ मुञ्च॒ तस्मि॒न् यो अ॒स्मभ्य॑मंहूर॒णा चिकि॑त्सात् ॥ ३ ॥
नु॒दस्व॑ काम॒ प्र णु॑दस्व॒ का॒माव॑र्तिं यन्तु॒ मम॒ ये स॒पत्ना॑ः । तेषां॑
नु॒त्ताना॑मध॒मा तमां॑स्यग्ने॒ वास्तू॑नि॒ निर्द॑ह॒ त्वम् ॥ ४ ॥
सा ते॑ काम दुहि॒ता धे॒नुरु॑च्यते॒ याम॒ाहुर्वाचं॑ क॒वयो॑ त्रि॒राज॑म् । तया॑
स॒पत्ना॒न् परि॑ वृङ्ग्धि॒ ये मम॒ पर्ये॑नान् प्रा॒णः प॒शवो॒ जीव॑नं
वृणक्तु ॥ ५ ॥
काम॒स्येन्द्र॑स्य॒ वरु॑णस्य॒ राज्ञो॒ विष्णो॒र्बले॑न सवि॒तुः स॒वेन॑ । अ॒ग्नेर्हो॒त्रेण॒
प्र णु॑दे स॒पत्ना॑ञ्छ॒म्बीव॒ नाव॑मुद॒केषु॒ धीर॑ः ॥ ६ ॥
अध्य॑क्षो वा॒जी मम॒ काम॑ उ॒ग्रः कृ॒णोतु॒ मह्य॑मसप॒त्नमे॒व । विश्वे॑ दे॒वा
मम॑ ना॒थं भ॑वन्तु॒ सर्वे॑ दे॒वा हव॒मा य॑न्तु म इ॒मम् ॥ ७ ॥
इ॒दमाज्यं॑ घृ॒तव॑ज्जुषा॒णाः काम॑ज्येष्ठा इ॒ह मा॑दयध्वम् । कृ॒ण्वन्तो॒
मह्य॑मसप॒त्नमे॒व ॥ ८ ॥

इ॒न्द्रा॒ग्नी का॑म स॒रथं॑ हि भू॒त्वा नी॒चैः स॒पत्ना॒न् मम॑ पादयाथः । तेषां॑ प॒न्नाना॑मध॒मा तमां॒स्यग्ने॒ वास्तू॑न्यनु॒निर्द॑ह॒ त्वम् ॥ ९ ॥

ज॒हि त्वं का॑म॒ मम॒ ये स॒पत्ना॑ अ॒न्धा तमां॒स्यव॑ पादयैनान् । निरि॑न्द्रिया अ॑र॒साः स॑न्तु॒ सर्वे॒ मा ते जी॑विषुः कत॒मच्च॒नाहः॑ ॥ १० ॥

अव॑धी॒त् कामो॒ मम॒ ये स॒पत्ना॑ उ॒रुं लो॒कम॑कर॒न्मह्य॑मेध॒तुम् । मह्यं॑ नमन्तां प्र॒दिश॒श्चत॑स्रो॒ मह्यं॒ षडु॒र्वीर्घृ॒तमा व॑हन्तु ॥ ११ ॥

ते॑ऽध॒राञ्चः॒ प्र प्ल॑वन्तां छि॒न्ना नौरि॑व॒ बन्ध॑नात् । न सा॑यकप्र॑णुत्ताना॒ं पुन॑रस्ति नि॒वर्त॑नम् ॥ १२ ॥

अ॒ग्निर्यव॒ इन्द्रो॒ यव॒ः सोमो॒ यव॑ः । य॒व॒यावा॑नो दे॒वा या॑वयन्त्वे॒नम् ॥ १३ ॥

अस॑र्ववीरश्चरतु॒ प्रणु॑त्तो द्वेष्यो॑ मि॒त्राणां॑ परिव॒र्ग्य॑ः स्वाना॑म् । उ॒त पृ॑थि॒व्यामव॑ स्यन्ति वि॒द्युत॑ उ॒ग्रो वो॑ दे॒वः प्र मृ॑णत् स॒पत्ना॑न् ॥१४॥

च्यु॒ता चे॒यं बृ॑ह॒त्यच्यु॑ता च वि॒द्युद् बि॑भर्ति स्तनयि॒त्नूंश्च॒ सर्वा॑न् । उ॒द्यन्ना॑दि॒त्यो द्रवि॑णेन॒ तेज॑सा नी॒चैः स॒पत्ना॑न् नुदतां मे॒ सह॑स्वान् ॥ १५ ॥

यत् ते॑ काम॒ शर्म॑ त्रि॒वरू॑थमु॒द्भु ब्रह्म॒ वर्म॒ वित॑तमनतिव्या॒ध्यं॑ऽकृतम् । तेन॑ स॒पत्ना॒न् परि॑ वृङ्ग्धि॒ ये मम॒ पर्ये॑नान् प्रा॒णः प॒शवो॒ जीव॑नं वृणक्तु ॥ १६ ॥

येन॑ दे॒वा असु॑रा॒न् प्राणु॑दन्त॒ येनेन्द्रो॒ दस्यू॑नध॒मं तमो॑ नि॒नाय॑ । तेन॒ त्वं का॑म॒ मम॒ ये स॒पत्ना॒स्ताना॒स्माल्लो॒कात् प्र णु॑दस्व दू॒रम् ॥ १७ ॥

यथा॑ दे॒वा असु॑रा॒न् प्राणु॑दन्त॒ यथेन्द्रो॒ दस्यू॑नध॒मं तमो॑ बबा॒धे । तथा॒
त्वं का॑म॒ मम॒ ये स॒पत्ना॒स्तान॒स्माल्लो॒कात् प्र णु॑दस्व दू॒रम् ॥ १८ ॥

कामो॑ जज्ञे प्रथ॒मो नैनँ॑ दे॒वा आ॑पुः पि॒तरो॒ न मर्त्याः॑ । तत॒स्त्वम॑सि॒
ज्याया॑न् वि॒श्वहा॑ म॒हाँस्तस्मै॑ ते काम॒ नम॒ इत् कृ॑णोमि ॥ १९ ॥

याव॑ती॒ द्यावा॑पृथि॒वी व॑रि॒म्णा याव॒दापः॑ सिष्य॒दुर्याव॑द॒ग्निः । तत॒स्त्वम॑सि॒
ज्याया॑न् वि॒श्वहा॑ म॒हांस्तस्मै॑ ते काम॒ नम॒ इत् कृ॑णोमि ॥ २० ॥

याव॑ती॒र्दि॑शः प्र॒दिशो॒ विषू॑ची॒र्याव॑ती॒राशा॑ अभि॒चक्ष॑णा दि॒वः । तत॒स्त्वम॑सि ज्याया॑न् वि॒श्वहा॑ म॒हांस्तस्मै॑ ते काम॒ नम॒ इत् कृ॑णोमि ॥ २१ ॥

याव॑ती॒र्भृङ्गा॑ ज॒त्वऽः कु॒रूर॑वो॒ याव॑ती॒र्वघा॑ वृक्षस॒र्प्योऽ बभू॒वुः । तत॒स्त्वम॑सि॒
ज्याया॑न् वि॒श्वहा॑ म॒हांस्तस्मै॑ ते काम॒ नम॒ इत् कृ॑णोमि ॥ २२ ॥

ज्याया॑न्न निमिष॒तोऽसि॒ तिष्ठ॑तो॒ ज्याया॑न्त्समु॒द्राद॑सि काम मन्यो ।
तत॒स्त्वम॑सि॒ ज्याया॑न् वि॒श्वहा॑ म॒हांस्तस्मै॑ ते काम॒ नम॒ इत्
कृ॑णोमि ॥ २३ ॥

न वै वात॑श्च॒न काम॑माप्नोति॒ नाग्निः सूर्यो॒ नोत च॒न्द्रमाः॑ । तत॒स्त्वम॑सि॒
ज्याया॑न् वि॒श्वहा॑ म॒हांस्तस्मै॑ ते काम॒ नम॒ इत् कृ॑णोमि ॥ २४ ॥

यास्ते॑ शि॒वास्त॒न्वऽः काम भ॒द्रा याभिः॑ स॒त्यं भव॑ति॒ यद् वृ॑णी॒षे ।
ताभि॒ष्ट्वम॒स्माँ अ॑भि॒संवि॑शस्वा॒न्यत्र॑ पा॒पीरप॑ वेशया॒ धियः॑ ॥ २५ ॥

[१.२]

—:०:—

सूक्त ३

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ।। देवता—शाला ।। छन्दः—१– ५,८—१४, १६, १८–२०, २२—२४ अनुष्टुप्; ६ पथ्या पङ्क्तिः; ७ परउष्णिक्; १५ पञ्चपदातिशक्वरी; १७ प्रस्तारपङ्क्तिः; २१ आस्तारपङ्क्ति २५, ३१ त्रिपदा प्राजापत्या बृहती; २६ त्रिपदा साम्नी त्रिष्टुप्; २७—३० त्रिपदा प्रतिष्ठानाम गायत्री; मन्त्र ३१ ।

उ॒प॒मितां॑ प्रति॒मिता॒मथो॑ परि॒मिता॑मु॒त । शाला॑या वि॒श्ववा॑राया न॒द्धानि॒
वि चृ॑तामसि ॥ १ ॥

यत् ते॑ न॒द्धं वि॑श्ववारे॒ पाशो॑ ग्र॒न्थिश्च॒ यः कृ॒तः । बृह॒स्पति॑रिवा॒हं ब॒लं
वा॒चा वि स्रं॑सयामि॒ तत् ॥ २ ॥

आ यं॑याम॒ सं ब॑बर्ह ग्र॒न्थीँश्च॑कार ते दृ॒ढान् । परूं॑षि वि॒द्वाञ्छस्ते॒वेन्द्रे॑ण॒
वि चृ॑तामसि ॥ ३ ॥

वं॒शानां॑ ते॒ नह॑नानां प्राणा॒हस्य॒ तृणं॑स्य च । प॒क्षाणां॑ विश्ववारे ते
न॒द्धानि॒ वि चृ॑तामसि ॥ ४ ॥

सं॒दं॒शानां॑ प॒लदा॑नां॒ परि॑ष्वञ्जल्यस्य च । इ॒दं मानं॑स्य॒ पत्न्या॑ न॒द्धानि॒
वि चृ॑तामसि ॥ ५ ॥

यानि॑ ते॒ऽन्तः शि॒क्या॒ऽन्या॒ऽबे॒धू रु॒ण्या॒ऽय॒ कम् । प्र ते॒ तानि॑ चृतामसि
शि॒वा मानं॑स्य पत्नी॑ न॒ उद्धि॑ता त॒न्वे॒ऽ भव ॥ ६ ॥

ह॒वि॒र्धान॑मग्नि॒शाल॒ं पत्नी॑ना॒ं सद॑न॒ं सदः॑ । सदो॑ दे॒वाना॑मसि देवि
शाले ॥ ७ ॥

अक्षु॑मोप॒शं वित॑तं सहस्रा॒क्षं वि॑षू॒वति॑ । अव॑नद्धम॒भिहि॑त॒ं ब्रह्म॑णा॒ वि
चृ॑तामसि ॥ ८ ॥

यस्त्वा॑ शाले प्रतिगृ॒ह्णाति॒ येन॒ चासि॑ मि॒ता त्वम् । उ॒भौ मान॑स्य पत्नि॒
तौ जीव॑तां ज॒रद॑ष्टी ॥ ९ ॥

अ॒मुत्रै॒न॒मा ग॑च्छताद् दृ॒ढा न॒द्धा परि॑ष्कृता । यस्या॑स्ते विचृ॒ताम॒स्यङ्ग॑मङ्ग॒ं परु॑ष्परुः ॥ १० ॥

यस्त्वा॑ शाले निमि॒माय॑ संज॒भार॒ वन॒स्पती॑न् । प्र॒जायै॑ चक्रे त्वा शाले परमे॒ष्ठी प्र॒जाप॑तिः ॥ ११ ॥

नम॒स्तस्मै॒ नमो॑ दा॒त्रे शाला॑पतये च कृण्मः । नमो॒ऽग्नये॑ प्र॒चर॑ते॒ पुरु॑षाय च ते॒ नम॑ः ॥ १२ ॥

गोभ्यो॒ अश्वे॑भ्यो॒ नमो॒ यच्छाला॑यां वि॒जाय॑ते । विजा॑वति॒ प्रजा॑वति॒ वि ते॒ पाशां॑श्चृतामसि ॥ १३ ॥

अ॒ग्निम॒न्तश्छा॑दयसि॒ पुरु॑षान् प॒शुभिः स॒ह । विजा॑वति॒ प्रजा॑वति॒ वि ते॒ पाशां॑श्चृतामसि ॥ १४ ॥

अ॒न्त॒रा द्यां च॑ पृथि॒वीं च यद् व्यच॒स्तेन॒ शाला॒ं प्रति॑ गृह्णामि त इ॒माम् । यद॒न्तरि॑क्षं॒ रज॑सो वि॒मान॒ं तत् कृ॑ण्वे॒ऽहमु॒दरं॑ शेव॒धिभ्य॑ः । तेन॒ शाला॒ं प्रति॑ गृह्णामि॒ तस्मै॑ ॥ १५ ॥

ऊर्ज॑स्वती॒ पय॑स्वती पृथि॒व्यां निमि॑ता मि॒ता । वि॒श्वा॒न्नं बिभ्र॑ती शाले॒ मा हिं॑सीः प्रतिगृह्ण॒तः ॥ १६ ॥

तृणै॒राव॑ृता पल॒दान् वसा॑ना॒ रात्री॑व॒ शाला॒ जग॑तो नि॒वेश॑नी । मि॒ता पृ॑थि॒व्यां ति॑ष्ठसि ह॒स्तिनी॑व प॒द्वती॑ ॥ १७ ॥

इट॑स्य ते॒ वि चृ॑ता॒म्यपि॑नद्धमपोर्णु॒वन् । वरु॑णेन॒ समु॑ब्जितां मि॒त्रः प्रा॒तर्व्यु॑ब्जतु ॥ १८ ॥

ब्रह्म॑णा॒ शाला॒ं निमि॑तां क॒विभि॒र्निमि॑तां मि॒ताम् । इ॒न्द्रा॒ग्नी र॑क्षतां॒ शाला॑म॒मृतौ॑ सो॒म्यं सद॑ः ॥ १९ ॥

कु॒लाये॒ऽधि कु॒ला॒यं॒ कोशे॒ कोशः॒ स॒मु॑ब्जितः । तत्र॒ मर्तो॒ वि जा॑यते॒
यस्मा॒द् विश्वं॑ प्र॒जाय॑ते ॥ २० ॥

या द्विप॑क्षा॒ चतु॑ष्पक्षा॒ षट्प॑क्षा॒ या निमी॒यते॑ । अ॒ष्टाप॑क्षां॒ दश॑पक्षां॒
शाला॒ं मान॑स्य॒ पत्नी॑म॒ग्निर्गर्भ॑ इ॒वा श॑ये ॥ २१ ॥

प्र॒तीचीं॑ त्वा प्र॒तीचीनः॒ शाले॒ प्रैम्यहिं॑सतीम् । अ॒ग्निर्ह्य१॒न्तराप॑श्च॒र्तस्य॑
प्र॒थ॒मा द्वाः ॥ २२ ॥

इ॒मा आपः॒ प्र भ॑राम्ययक्ष्मा य॑क्ष्म॒नाश॑नीः । गृ॒हानुप॒ प्र सी॑दाम्य॒मृते॑न
स॒हाग्निना॑ ॥ २३ ॥

मा नः॒ पाशं॒ प्रति॑ मुचो गु॒रुर्भा॒रो ल॒घुर्भ॑व । व॒धूमि॑व त्वा शाले यत्र॒कामं॑ भरामसि ॥ २४ ॥

प्राच्या॑ दि॒शः शाला॑या॒ नमो॑ महि॒म्ने स्वाहा॑ दे॒वेभ्यः॑ स्वा॒ह्ये॒१भ्यः ॥२५॥

दक्षि॑णाया दि॒शः शाला॑या॒ नमो॑ महि॒म्ने स्वाहा॑ दे॒वेभ्यः॑ स्वा॒ह्ये॒१भ्यः ॥ २६ ॥

प्र॒तीच्या॑ दि॒शः शाला॑या॒ नमो॑ महि॒म्ने स्वाहा॑ दे॒वेभ्यः॑ स्वा॒ह्ये॒१भ्यः ॥ २७ ॥

उदी॑च्या दि॒शः शाला॑या॒ नमो॑ महि॒म्ने स्वाहा॑ दे॒वेभ्यः॑ स्वा॒ह्ये॒१भ्यः ॥ २८ ॥

ध्रु॒वाया॑ दि॒शः शाला॑या॒ नमो॑ महि॒म्ने स्वाहा॑ दे॒वेभ्यः॑ स्वा॒ह्ये॒१भ्यः ॥ २९ ॥

ऊ॒र्ध्वायां॑ दि॒शः शाला॑या॒ नमो॑ महि॒म्ने स्वाहा॑ दे॒वेभ्यः॑ स्वा॒ह्ये᳚भ्यः
॥ ३० ॥

दि॒शो॑दि॑श॒ः शाला॑या॒ नमो॑ महि॒म्ने स्वाहा॑ दे॒वेभ्यः॑ स्वा॒ह्ये᳚भ्यः ॥३१॥
[२।१]

—:०:—

सूक्त ४

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता – ऋषभः ।। छन्दः—१—५, ७, ९, २२ त्रिष्टुप्; ६, १०, २४ जगती; ८ भुरिक् त्रिष्टुप्; ११ – १७, १९, २०. २३ अनुष्टुप्; १८ उपरिष्टाद् बृहती; २१ आस्तारपङ्क्तिः ।। मन्त्र २४ ।

सा॒ह॒स्रस्त्वे॒ष ऋ॑ष॒भः पय॑स्वान् विश्वा॑ रू॒पाणि॑ व॒क्षणा॑सु बिभ्र॑त् । भ॒द्रं
दा॒त्रे यज॑माना॒य शिक्ष॑न् बार्हस्प॒त्य उ॒स्रिय॑स्तन्तुमाता॑न् ॥ १ ॥

अ॒पां यो अग्रे॑ प्रति॒मा ब॒भूव॑ प्रभुः सर्व॑स्मै पृथि॒वीव॑ दे॒वी । पि॒ता
व॒त्सा॒नां पति॑र॒घ्न्याना॑ं साह॒स्रे पो॒षे अपि॑ नः कृणोतु ॥ २ ॥

पुमा॑न॒न्तर्वा॒न्त्स्थवि॑र॒ः पय॑स्वा॒न् वसोः॑ कब॑न्धमृष॒भो बि॑भर्ति ।
तमिन्द्रा॑य प॒थिभि॑र्दे॒वयानै॑र्हु॒तम॒ग्निर्व॑हतु जा॒तवे॑दाः ॥ ३ ॥

पि॒ता व॒त्साना॒ं पति॑र॒घ्न्याना॒मथो॑ पि॒ता म॑ह॒तां गर्ग॑राणाम् । व॒त्सो
ज॒रायु॑ः प्रति॒धुक् पी॒यूष॑ आ॒मिक्षा॑ घृ॒तं तद् व॑स्य॒ रेत॑ः ॥ ४ ॥

दे॒वानां॑ भा॒ग उ॑पना॒ह ए॒षो३॑पां रस॒ ओष॑धीनां घृ॒तस्य॑ । सोम॑स्य
भ॒क्षम॑वृणीत श॒क्रो बृ॒हन्नद्रि॑रभव॒द् यच्छरी॑रम् ॥ ५ ॥

सोमे॑न पू॒र्णं क॒लशं॑ बिभर्षि॒ त्वष्टा॑ रू॒पाणां॑ जनि॒ता प॑शू॒नाम् । शि॒वास्ते॑
सन्तु प्रज॒न्व᳚ इ॒ह या इ॒मा न्य१॒॑स्मभ्यं॑ स्वधिते यच्छ॒ या अ॒मूः ॥६॥

आज्य॑ं बिभर्ति घृतम॑स्य॒ रेत॑ः साह॒स्रः पोष॒स्तमु॑ य॒ज्ञमा॑हुः । इन्द्र॑स्य
रू॒पमृ॑ष॒भो व॒सा॑न॒ः सो अ॒स्मान् दे॑वाः शि॒व ए॑तु द॒त्तः ॥ ७ ॥
इन्द्र॒स्यौजो॒ वरु॑णस्य बा॒हू अ॒श्विनो॒रंसौ॑ म॒रुता॑मि॒यं क॒कुत् । बृह॒स्पति॒ं
संभृ॑तमे॒तमा॑हु॒र्ये धीरा॑सः क॒वयो॒ ये म॑नी॒षिण॑ः ॥ ८ ॥
दै॒वी॒र्वि॑श॒ः पय॑स्वा॒ना त॑नोषि॒ त्वामिन्द्र॒ं त्वां सर॑स्वन्तमाहुः । स॒हस्र॒ं
स एक॑मुखा ददाति॒ यो ब्रा॑ह्म॒ण ऋ॑ष॒भमा॑जुहोति॑ ॥ ९ ॥
बृह॒स्पति॑ः सवि॒ता ते॒ वयो॑ दधौ॒ त्वष्टु॑र्वा॒योः पर्या॒त्मा त॒ आभृ॑तः ।
अ॒न्तरि॑क्षे॒ मन॑सा त्वा जुहोमि ब॒र्हिष्टे॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे स्ता॑म् ॥१०॥
य इन्द्र॑ इव दे॒वेषु॒ गोष्वेति॑ वि॒वाव॑दत् । तस्य॑ ऋष॒भस्याङ्गा॑नि ब्र॒ह्मा सं
स्तौ॑तु भ॒द्रया॑ ॥ ११ ॥
पा॒र्श्वे आ॑स्ता॒मनु॑मत्या॒ भग॑स्यास्तामनू॒वृजौ॑ । अ॒ष्ठी॒वन्ता॑वब्रवीन्मि॒त्रो
ममै॒तौ केव॑ला॒विति॑ ॥ १२ ॥
भ॒सदा॑सीदादि॒त्याना॒ं श्रोणी॑ आस्ता॒ं बृह॒स्पते॑ः । पुच्छ॒ं वात॑स्य दे॒वस्य॒
तेन॑ धूनो॒त्योष॑धीः ॥ १३ ॥
गुदा॑ आसन्त्सिनीवा॒ल्याः सू॒र्याया॒स्त्वच॑मब्रुवन् । उ॒त्था॒तुर॑ब्रुवन् प॒द
ऋ॑ष॒भं यदक॑ल्पयन् ॥ १४ ॥
क्रो॒ड आ॑सीज्जामिश॒ंसस्य॒ सोम॑स्य क॒लशो॑ धृ॒तः । दे॒वाः सं॒गत्य॒ यत्
सर्व॑ ऋष॒भं व्यक॑ल्पयन् ॥ १५ ॥
ते कु॒ष्ठिका॑ः स॒रमा॑यै कू॒र्मेभ्यो॑ अदधुः श॒फान् । ऊब॑ध्यमस्य की॒टेभ्य॑ः
श्व॒वर्तेभ्यो॑ अधारयन् ॥ १६ ॥

शृङ्गा॑भ्या॒ं रक्ष॑ ऋष॒त्यव॑र्तिं हन्ति॒ चक्षु॑षा । शृणोति॑ भ॒द्रं कर्णा॑भ्या॒ं गवा॒ं
यः पति॑र॒घ्न्यः ॥ १७ ॥

श॒तया॒जं स य॑जते॒ नैनँ॑ दुन्वन्त्य॒ग्नय॑ः । जिन्व॑न्ति॒ विश्वे॒ तं दे॒वा यो
ब्रा॑ह्म॒ण ऋ॑ष॒भमा॑जु॒होति॑ ॥ १८ ॥

ब्रा॒ह्मणेभ्य॑ ऋष॒भं॑ द॒त्त्वा वरी॑यः कृणु॒ते मन॑ः । पुष्टिं॒ सो अ॒घ्न्याना॒ं स्वे
गो॒ष्ठेऽव॑ पश्यते ॥ १९ ॥

गाव॑ः सन्तु प्र॒जाः स॒न्त्वथो॑ अस्तु तनूब॒लम् । तत् सर्व॒मनु॑ मन्यन्तां
दे॒वा ऋ॑षभदा॒यिन ॥ २० ॥

अ॒यं॑ पिपा॑न॒ इन्द्र॒ इद् र॒यिं॑ द॑धातु चेत॒नीम् । अ॒यं धे॒नुं॑ सुदुघा॒ं नित्य॑-
वत्सा॒ं वशँ॑ दुहां विप॒श्चितँ॑ प॒रो दि॒वः ॥ २१ ॥

पि॒शङ्ग॑रूपो नभ॒सो व॑यो॒धा ऐ॒न्द्रः शुष्मो॑ वि॒श्वरू॑पो न॒ आग॑न् । आयु॑-
र॒स्मभ्य॒ं दध॑त् प्र॒जां च॑ रा॒यश्च॒ पोषै॑र॒भि न॑ः सचताम् ॥ २२ ॥

उपे॒होप॑पर्च॑ना॒स्मिन् गो॒ष्ठ उप॑ पृञ्च नः । उप॑ ऋष॒भस्य॒ यद् रेत॒ उपे॑न्द्र॒
तव॑ वी॒र्य॑म् ॥ २३ ॥

ए॒तं वो॒ युवा॑नं॒ प्रति॑ दध्मो॒ अत्र॒ तेन॒ क्रीड॑न्तीश्चरत॒ वशाँ॒ अनु॑ । मा
नो॑ हासिष्ट ज॒नुषा॑ सुभागा रा॒यश्च॒ पोषै॑र॒भि न॑ः सचध्वम् ॥ २४ ॥

[२।२]

—:०:—

सूक्त ५

ऋषिः – भृगुः ।। देवता – अजः पञ्चोदनः ।। छन्दः—१, २, ५ – ९, ११ – १३, १५, १९, २६ त्रिष्टुप्; ३ चतुष्पदा पुरोऽतिशक्वरी जगती; ४, १० जगती; १४, १७, २७—२९ अनुष्टुप्; ३० ककुम्मत्यनुष्टुप्; १६ त्रिपदानुष्टुप्; १८, ३७ त्रिपदा विराड्गायत्री; २०—२२, २५ पञ्चपदानुष्टुबुष्णिग्गर्भोपरिष्टाद् बार्हता भुरिक् (?); २३ पुरउष्णिक्; २४ पञ्चपदाऽनुष्टुबुष्णिग्गर्भोपरिष्टाद् बार्हता विराड् जगती; ३१ सप्तपदाऽष्टिः; ३२—३५ दशपदा प्रकृतिः; ३६ दशपदाऽऽकृतिः; ३८ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप् (एकावसाना) ।। मन्त्र ३७ ।

आ न॑यै॒तमा र॑भस्व सु॒कृतां॑ लो॒कमपि॑ गच्छतु प्रजा॒नन्। ती॒र्त्वा तमां॑सि बहु॒धा महान्त्य॒जो नाक॒मा क्र॑मतां तृ॒तीय॑म् ॥ १ ॥

इन्द्रा॑य भा॒गं परि॑ त्वा नयाम्य॒स्मिन् य॒ज्ञे यज॑मानाय सू॒रिम्। ये नो॑ द्वि॒षन्त्यनु॒ तान् र॑भ॒स्वाना॑गमो॒ यज॑मानस्य वी॒राः ॥ २ ॥

प्र प॒दोऽव॑ नेनिग्धि॒ दुश्च॑रितं॒ यच्च॒चार॑ शु॒द्धैः श॒फैरा क्र॑मतां प्रजा॒नन्। ती॒र्त्वा तमां॑सि बहु॒धा वि॒पश्य॑न्न॒जो नाक॒मा क्र॑मतां तृ॒तीय॑म् ॥ ३ ॥

अनु॑ च्छ्य श्या॒मेन॒ त्वच॑मे॒तां वि॑शस्तर्यथाप॒र्व॒श॑ऽसि॒ना माभि मं॑स्थाः। माभि द्रु॑हः परु॒शः क॑ल्पयैनं तृ॒तीये॒ नाके॒ अधि॒ वि श्र॑यैनम् ॥ ४ ॥

ऋ॒चा कु॒म्भीमध्य॒ग्नौ श्र॑या॒म्या सि॑ञ्चोद॒कमव॑ धेह्येनम्। प॒र्याध॑त्ता॒ग्निना॑ शमितारः शृ॒तो ग॑च्छतु सु॒कृतां॒ यत्र॑ लो॒कः ॥ ५ ॥

उत्क्रा॒मातः॒ परि॒ चेदत॑प्तस्त॒प्ताच्च॒रोरधि॒ नाकं॑ तृ॒तीय॑म्। अ॒ग्नेर॒ग्निरधि॒ सं ब॑भूविथ॒ ज्योति॑ष्मन्तम॒भि लो॒कं ज॑यै॒तम् ॥ ६ ॥

अ॒जो अ॒ग्निर॒जमु॒ ज्योति॑राहुर॒जं जीव॑ता ब्र॒ह्मणे॒ देय॑माहुः। अ॒जस्तमां॒स्यप॑ हन्ति दू॒रम॒स्मिँल्लो॒के श्र॒द्दधा॑नेन द॒त्तः ॥ ७ ॥

पञ्चौदनः पञ्चधा वि क्रमतामाक्रंस्यमानस्त्रीणि ज्योतींषि । ईजानानां
सुकृतां प्रेहि मध्यं तृतीये नाके अधि वि श्रयस्व ॥ ८ ॥
अजा रोह सुकृतां यत्र लोकः शरभो न चत्तोऽति दुर्गाण्येषः । पञ्चौदनो
ब्रह्मणे दीयमानः स दातारं तृप्त्या तर्पयाति ॥ ९ ॥
अजस्त्रिनाके त्रिदिवे त्रिपृष्ठे नाकस्य पृष्ठे ददिवांसं दधाति । पञ्चौदनो
ब्रह्मणे दीयमानो विश्वरूपा धेनुः कामदुघास्येका ॥ १० ॥
एतद् वो ज्योतिः पितरस्तृतीयं पञ्चौदनं ब्रह्मणेऽजं ददाति । अजस्तमांस्यप
हन्ति दूरमस्मिंल्लोके श्रद्दधानेन दत्तः ॥ ११ ॥
ईजानानां सुकृतां लोकमीप्सन् पञ्चौदनं ब्रह्मणेऽजं ददाति । स
व्याप्तिमभि लोकं जयैतं शिवोऽस्मभ्यं प्रतिगृहीतो अस्तु ॥ १२ ॥
अजो ह्यग्नेरजनिष्ट शोकाद् विप्रो विप्रस्य सहसो विपश्चित् । इष्टं
पूर्तमभिपूर्तं वषट्कृतं तद् देवा ऋतुशः कल्पयन्तु ॥ १३ ॥
अमोतं वासो दद्याद्धिरण्यमपि दक्षिणाम् । तथा लोकान्त्समाप्नोति
ये दिव्या ये च पार्थिवाः ॥ १४ ॥
एतास्त्वाजोप यन्तु धाराः सोम्या देवीर्घृतपृष्ठा मधुश्चुतः । स्तभान
पृथिवीमुत द्यां नाकस्य पृष्ठेऽधि सप्तरश्मौ ॥ १५ ॥
अजोऽस्यज स्वर्गोऽसि त्वया लोकमङ्गिरसः प्राजानन् । तं लोकं
पुण्यं प्र ज्ञेषम् ॥ १६ ॥
येना सहस्रं वहसि येनाग्ने सर्ववेदसम् । तेनेमं यज्ञं नो वह स्वर्देवेषु
गन्तवे ॥ १७ ॥

अ॒जः प॒क्वः स्व॒र्गे लो॒के द॑धाति॒ पञ्चौ॑दनो॒ निर्ऋ॑तिं॒ बाध॑मानः । तेन॑
लो॒कान्त्सूर्य॑वतो जयेम ॥ १८ ॥

यं ब्रा॑ह्म॒णे नि॑द॒धे यं च॑ वि॒क्षु या वि॒प्रुष॑ ओद॒नाना॑म॒जस्य॑ । सर्वं॒
तद॑ग्ने सुकृ॒तस्य॑ लो॒के जा॑नी॒तान्नः॑ सं॒गम॑ने पथी॒नाम् ॥ १९ ॥

अ॒जो वा इ॒दमग्रे॒ व्य॑क्रमत॒ तस्योर॑ इ॒यम॑भव॒द् द्यौः पृ॒ष्ठम् । अ॒न्तरि॑क्षं॒
मध्यं॒ दिशः॑ पा॒र्श्वे स॑मु॒द्रौ कु॒क्षी ॥ २० ॥

स॒त्यं च॒ ऋ॒तं च॒ चक्षु॑षी॒ विश्वं॑ स॒त्यं श्र॒द्धा प्रा॒णो वि॒राट् शिरः॑ ।
ए॒ष वा अप॑रिमितो य॒ज्ञो यद॒जः पञ्चौ॑दनः ॥ २१ ॥

अप॑रिमितमे॒व य॒ज्ञमा॒प्नोत्यप॑रिमितं लो॒कमव॑ रुन्द्धे । यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒
दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ २२ ॥

नास्यास्थी॑नि भिन्द्या॒न्न म॒ज्ज्ञो निर्ध॑येत् । सर्व॑मेनं समा॒दाये॒दमि॑दं॒ प्र
वे॑शयेत् ॥ २३ ॥

इ॒दमि॑दमे॒वास्य॑ रू॒पं भ॑वति॒ तेनै॑नं॒ सं ग॑मयति । इषं॒ मह॒ ऊर्ज॑मस्मै
दुहे॒ यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ २४ ॥

पञ्च॑ रु॒क्मा पञ्च॒ नवा॑नि॒ वस्त्रा॒ पञ्चा॑स्मै धे॒नवः॑ काम॒दुघा॑ भवन्ति ।
यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ २५ ॥

पञ्च॑ रु॒क्मा ज्योति॑रस्मै भवन्ति॒ वर्म॒ वासां॑सि त॒न्वे॑ भवन्ति । स्व॒र्गं
लो॒कम॑श्नुते॒ यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ २६ ॥

या पूर्वं॒ पतिं॑ वि॒त्त्वाथा॒न्यं वि॒न्दते॑ऽपरम् । पञ्चौ॑दनं च॒ ताव॒जं ददा॑तो॒
न वि यो॑षतः ॥ २७ ॥

स॒मा॒नलो॑को भवति पुन॒र्भुवाप॑रः॒ पतिः॑ । यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ २८ ॥

अ॒नु॒पू॒र्व॑वत्सां धे॒नुम॑न॒ड्वाह॑मुप॒बर्ह॑णम् । वासो॒ हिर॑ण्यं द॒त्त्वा ते य॑न्ति॒
दिव॑मुत्त॒माम् ॥ २९ ॥

आ॒त्मानँ पि॒तरँ पु॒त्रं पौत्रँ पिताम॒हम् । जा॒यां जनि॑त्रीं मा॒तरं॒ ये
प्रि॒यास्ता॒नुप॑ ह्वये ॥ ३० ॥

यो वै नैदा॑घं॒ नाम॒र्तुं वेद॑ । ए॒ष वै नैदा॑घो॒ नाम॒र्तुर्य॑द॒जः
पञ्चौ॑दनः । निरे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒ श्रियँ दहति॒ भव॑त्या॒त्मना॑ ।
यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ ३१ ॥

यो वै कु॒र्वन्तं॒ नाम॒र्तुं वेद॑ । कु॒र्व॒तीं कु॑र्वतीमे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒
श्रिय॒मा द॑त्ते । ए॒ष वै कु॒र्वन्नाम॒र्तुर्य॑द॒जः पञ्चौ॑दनः । निरे॒वाप्रि॑यस्य॒
भ्रातृ॑व्यस्य॒ श्रियँ दहति॒ भव॑त्या॒त्मना॑ । यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒
दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ ३२ ॥

यो वै सं॒यन्तं॒ नाम॒र्तुं वेद॑ । सं॒य॒तीं सँयतीमे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒
श्रिय॒मा द॑त्ते । ए॒ष वै सं॒यन्नाम॒र्तुर्य॑द॒जः पञ्चौ॑दनः । निरे॒वाप्रि॑यस्य॒
भ्रातृ॑व्यस्य॒ श्रियँ दहति॒ भव॑त्या॒त्मना॑ । यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ ददा॑ति ॥ ३३ ॥

यो वै पि॒न्वन्तं॒ नाम॒र्तुं वेद॑ । पि॒न्व॒तीं पि॑न्वतीमे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒
श्रिय॒मा द॑त्ते । ए॒ष वै पि॒न्वन्नाम॒र्तुर्य॑द॒जः पञ्चौ॑दनः ।

निरे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒ श्रियँ॑ दहति॒ भव॑त्या॒त्मना॑ । यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ द॒दा॑ति ॥ ३४ ॥

यो वा उ॒द्यन्तं॒ नाम॒र्तुं वेद॑ । उ॒द्य॒तीमु॑द्यतीमे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य श्रिय॒मा द॑त्ते । ए॒ष वा उ॒द्यन्नाम॒र्तुर्यद॒जः पञ्चौ॑दनः । निरे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒ श्रियँ॑ दहति॒ भव॑त्यात्मना॑ । यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ द॒दा॑ति ॥ ३५ ॥

यो वा अ॑भि॒भुवं॒ नाम॒र्तुं वेद॑ । अ॒भि॒भव॑न्तीमभिभवन्तीमे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒ श्रिय॒मा द॑त्ते । ए॒ष वा अ॑भि॒भूर्नाम॒र्तुर्यद॒जः पञ्चौ॑दनः । निरे॒वाप्रि॑यस्य॒ भ्रातृ॑व्यस्य॒ श्रियँ॑ दहति॒ भव॑त्या॒त्मना॑ । यो॒३॒जं पञ्चौ॑दनं॒ दक्षि॑णाज्योतिषं॒ द॒दा॑ति ॥ ३६ ॥

अ॒जं च॒ पच॑त॒ पञ्च॑ चौद॒नान् । सर्वा॒ दिश॒ः संम॑नसः स॒ध्रीची॒ः सान्त॑र्दे॑शा॒ः प्रति॑ गृह्णन्तु त ए॒तम् ॥ ३७ ॥

तास्ते॑ रक्षन्तु॒ तव॒ तुभ्य॑मे॒तं ताभ्य॒ आज्यँ॑ ह॒विरि॒दं जु॑होमि ॥ ३८ ॥

[३।१]

—:०:—

सूक्त ६

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अतिथिः; विद्या ॥ छन्दः—१ नागीनामत्रिपाद् गायत्री; २ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; ३, ७ साम्नी त्रिष्टुप्; ४, ९ आर्च्यनुष्टुप्; ५ आसुरी गायत्री; ६ त्रिपदा साम्नी जगती; ८ याजुषी त्रिष्टुप्; १० साम्नी भुरिग्बृहती; ११, १४—१६ साम्न्यनुष्टुप्; १२ विराड् गायत्री; १३ साम्नी निचृत् पङ्क्तिः; १७ त्रिपदा भुरिग् विराड् गायत्री ॥ मन्त्र १७ ।

यो वि॒द्याद् ब्रह्म॑ प्र॒त्यक्षं॒ परूं॑षि॒ यस्य॑ संभा॒रा ऋचो॒ यस्या॑नू॒क्य॑म् ॥१॥

सामा॑नि॒ यस्य॒ लोमा॑नि॒ यजु॒र्हृद॑यमु॒च्यते॑ परि॒स्तर॑ण॒मिद्ध॒विः ॥ २ ॥

यद् वा अति॑थिपति॒रति॑थीन् प्रति॒पश्य॑ति देव॒यज॑नं॒ प्रेक्ष॑ते ॥ ३ ॥

यद॑भि॒वद॑ति दी॒क्षामु॒पै॑ति॒ यदु॑द॒कं याच॑त्य॒पः प्र ण॑यति ॥ ४ ॥

या ए॒व य॒ज्ञ आप॑ः प्रणी॒यन्ते॒ ता ए॒व ताः ॥ ५ ॥

यत् तर्प॑णमा॒हर॑न्ति॒ य ए॒वाग्नी॑षो॒मीय॑ः प॒शुर्ब॑ध्यते॒ स ए॒व सः ॥ ६ ॥

यदा॑वस॒थान् क॒ल्पय॑न्ति सदोहवि॒र्धाना॑न्ये॒व तत् क॑ल्पयन्ति ॥ ७ ॥

यदु॑पस्तृ॒णन्ति ब॒र्हि॑रे॒व तत् ॥ ८ ॥

यदु॑परिश॒यनमा॒हर॑न्ति स्व॒र्ग॑मे॒व तेन॑ लो॒कमव॑ रुन्द्धे ॥ ९ ॥

यत् क॑शिपूपब॒र्हणमा॒हर॑न्ति परि॒धय॑ ए॒व ते ॥ १० ॥

यदा॑ञ्जनाभ्यञ्ज॒नमा॒हरन्त्याज्य॑मे॒व तत् ॥ ११ ॥

यत् पु॒रा प॑रिवे॒षात् खा॒दमा॒हर॑न्ति पुरो॒डाशा॑वे॒व तौ ॥ १२ ॥

यद॑शन॒कृतं॒ ह्वय॑न्ति हवि॒ष्कृत॑मे॒व तद्ध्व॑यन्ति ॥ १३ ॥

ये व्री॒हयो॒ यवा॑ निरू॒प्यन्ते॒ऽशव॑ ए॒व ते ॥ १४ ॥

यान्यु॑लूखलमुस॒लानि॒ ग्रावा॑ण ए॒व ते ॥ १५ ॥

शूर्पं॑ प॒वित्रं॒ तुषा॑ ऋजी॒षाभि॒षव॑णी॒राप॑ः ॥ १६ ॥

स्रुग् द॒र्विर्नेक्ष॑णमा॒यव॑नं द्रोणकल॒शाः कु॒म्भ्यो॑ वाय॒व्या॑नि॒ पात्रा॑णी॒
यमे॒व कृ॑ष्णाजि॒नम् ॥ १७ ॥

—:०:—

द्वितीय पर्यायः (शंकर पाण्डु० सं० के अनुसार सूक्त ७)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अतिथिः; विद्या ॥ छन्दः—१ विराट् पुरस्ताद् बृहती; २, १२ साम्नी त्रिष्टुप्; ३ आसुरी त्रिष्टुप; ४ साम्न्युष्णिक्; ५ साम्नी बृहती; ६ आर्च्यनुष्टुप्; ७ पञ्चपदा विराट् पुरस्ताद् बृहती; [८], ९ साम्न्युनुष्टुप्; १० त्रिपदाऽऽर्ची त्रिष्टुप्; ११ भुरिक् साम्नी बृहती; ३ त्रिपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः ॥ मन्त्र १३ ।

य॒ज॒मा॒न॒ब्रा॒ह्म॒णं वा ए॒तद॑ति॑थिपतिः कुरुते॒ यदा॑हा॒र्या॑णि॒ प्रेक्ष॑त इ॒दं भू॑या३ इ॒दा३मिति॑ (१) ॥ १८ ॥

यदा॑ह॒ भूय॒ उद्ध॒रेति॑ प्रा॒णमे॒व तेन॒ वर्षी॑यांसं कुरुते (२) ॥ १९ ॥

उप॑ हरति ह॒वींष्या सा॑दयति (३) ॥ २० ॥

तेषा॒मास॑न्नाना॒मति॑थिरा॒त्मञ्जु॑होति (४) ॥ २१ ॥

स्रु॒चा हस्ते॑न प्रा॒णे यूपे॑ स्रुक्का॒रेण॑ वषट्का॒रेण॑ (५) ॥ २२ ॥

ए॒ते वै प्रि॒याश्चाप्रि॑याश्च॒र्त्विज॑ः स्व॒र्गं लो॒कं ग॑मयन्ति॒ यदति॑थयः । (६) ॥२३॥

स य ए॒वं वि॒द्वान् न द्वि॒षन्न॑श्नीया॒न्न द्वि॒षतोऽन्न॑मश्नीया॒न्न मीमांसि॒तस्य॒ न मीमा॒ंसमा॑नस्य (७) ॥ २४ ॥

सर्वो॒ वा ए॒ष ज॒ग्धपा॑प्मा॒ यस्यान्न॑म॒श्नन्ति॑ (८) ॥ २५ ॥

सर्वो॒ वा ए॒षोऽज॑ग्धपाप्मा॒ यस्यान्नं॒ नाश्नन्ति॑ (९) ॥ २६ ॥

स॒र्वदा वा ए॒ष यु॒क्तग्रा॑वा॒र्द्रप॑वित्रो॒ वित॑ताध्वर॒ आहृ॑तयज्ञक्रतु॒र्य उ॑प॒हर॑ति (१०) ॥ २७ ॥

प्रा॒जा॒प॒त्यो वा ए॒तस्य॑ य॒ज्ञो वित॑तो॒ य उ॑प॒हर॑ति (११) ॥ २८ ॥

प्र॒जाप॑ते॒र्वा ए॒ष वि॑क्र॒मान॑नुवि॒क्र॑मते॒ य उ॑प॒हर॑ति (१२) ॥ २९ ॥

योऽति॑थीना॒ं स आ॑हव॒नीयो॒ यो वेश्म॑नि॒ स गार्ह॑पत्यो॒ यस्मि॒न् पच॑न्ति॒ स द॑क्षिणा॒ग्निः (१३) ॥ ३० ॥

पर्याय-३ (शं० पा० के अनुसार सूक्त ८)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अतिथिः विद्या ॥ छन्दः—१—६, ९ त्रिपदा पिपीलिकामध्या गायत्री; ७ साम्नी बृहती; ८ पिपीलिकमध्योष्णिक् ॥ मन्त्र ९ ।

इ॒ष्टं च॒ वा ए॒ष पू॒र्तं च॑ गृ॒हाणा॑मश्नाति॒ यः पूर्वोऽति॑थेर॒श्नाति॑ (१) ॥ ३१ ॥

पय॑श्च॒ वा ए॒ष रसं॑ च गृ॒हाणा॑मश्नाति॒ यः पूर्वोऽति॑थेर॒श्नाति॑ (२) ॥३२॥

ऊ॒र्जां च॒ वा ए॒ष स्फा॒तिं च॑ गृ॒हाणा॑मश्नाति॒ यः पूर्वोऽति॑थेर॒श्नाति॑ (३) ॥ ३३ ॥

प्र॒जां च॒ वा ए॒ष प॒शूंश्च॑ गृ॒हाणा॑मश्नाति॒ यः पूर्वोऽति॑थेर॒श्नाति॑ (४) ॥ ३४ ॥

की॒र्तिं च॒ वा ए॒ष यश॑श्च गृ॒हाणा॑मश्नाति॒ यः पूर्वोति॑थेर॒श्नाति॑ (५) ॥ ३५ ॥

श्रियं॑ च॒ वा ए॒ष सं॒विदं॑ च गृ॒हाणा॑मश्नाति॒ यः पूर्वोऽति॑थेर॒श्नाति॑ (६) ॥ ३६ ॥

ए॒ष वा अति॑थि॒र्यच्छ्रोत्रि॑य॒स्तस्मा॒त् पूर्वो॒ नाश्नी॑यात् (७) ॥ ३७ ॥

अ॒शि॒ता॒व॒त्यति॑थावश्नीयाद् य॒ज्ञस्य॑ सात्म॒त्वाय॑ य॒ज्ञस्यावि॑च्छेदा॒य तद् व्र॒तम् (८) ॥ ३८ ॥

ए॒तद् वा उ॒ स्वादी॑यो॒ यद॑धिग॒वं क्षी॒रं वा॑ मां॒सं वा॒ तदे॒व नाश्नी॑यात्
(९) ॥ ३९ ॥

पर्याय—४ (शं० पा० के अनुसार सूक्त ९)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अतिथिः; विद्या ॥ छन्दः—१, ३, ५, ७ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; २, ४, ६, ८ त्रिपदा गायत्री; ९ भुरिक् प्राजापत्या गायत्री; १० चतुष्पदा प्रस्तारपङ्क्तिः ॥ मन्त्र १० ।

स य ए॒वं वि॒द्वान् क्षी॒रमु॑प॒सिच्यो॑प॒हर॑ति (१)
याव॑दग्निष्टो॒मेने॒ष्ट्वा सुस॑मृद्धेनावरु॒न्द्धे ताव॑देने॒नाव॑ रुन्द्धे (२) ॥४०॥
स य ए॒वं वि॒द्वान्त्स॒र्पिरु॑प॒सिच्यो॑प॒हर॑ति (३)
याव॑दतिरा॒त्रेणे॒ष्ट्वा सुसं॑मृद्धेनावरु॒न्द्धे ताव॑देने॒नाव॑ रुन्द्धे (४) ॥४१॥
स य ए॒वं वि॒द्वान् मधू॑प॒सिच्यो॑प॒हर॑ति (५)
याव॑त् सत्र॒सद्ये॑ने॒ष्ट्वा सुसं॑मृद्धेनावरु॒न्द्धे ताव॑देने॒नाव॑ रुन्द्धे (६) ॥४२॥
स य ए॒वं वि॒द्वान् मां॒समु॑प॒सिच्यो॑प॒हर॑ति (७)
याव॑द् द्वाद॒शाहेने॒ष्ट्वा सुस॑मृद्धेनावरु॒न्द्धे ताव॑देने॒नाव॑ रुन्द्धे (८)
॥ ४३ ॥

स य ए॒वं वि॒द्वानु॑द॒कमु॑प॒सिच्यो॑प॒हर॑ति (९)
प्र॒जानां॑ प्र॒जन॑नाय गच्छति प्रति॒ष्ठां॑ प्रि॒यः प्र॒जानां॑ भवति॒ य ए॒वं
वि॒द्वानु॑द॒कमु॑प॒सिच्यो॑प॒हर॑ति (१०) ॥ ४४ ॥

पर्याय—५

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अतिथिः; विद्या ॥ छन्दः—१ साम्न्युष्णिक्; २ पुरउष्णिक्; ३, ५, ७ (अनयोरुत्तरार्धः), १० भुरिक् साम्नी बृहती; ४, ६, ९ साम्न्यनुष्टुप; ५ (पूर्वार्धः) त्रिपदा निचृद् विषमानामगायत्री; ७ (पूर्वार्धः) त्रिपदा विराड् विषमानामगायत्री; ८ त्रिपदा विराडनुष्टुप् ॥ मन्त्र १० ।

तस्मा॑ उ॒षा हिङ्कृ॑णोति सवि॒ता प्र स्तौ॑ति (१)
बृह॒स्पति॑रू॒र्जयोद् गा॑यति॒ त्व॒ष्टा पुष्ट्या॒ प्रति॑ हरति॒ विश्वे॑ दे॒वा
नि॒धन॑म् (२)
नि॒धनं॒ भूत्या॑ः प्र॒जाया॑ः पशू॒नां भ॑वति॒ य ए॒वं वेद॑ (३) ॥ ४५ ॥
तस्मा॑ उ॒द्यन्त्सू॒र्यो॑ हिङ्कृ॑णोति संग॒वः प्र स्तौ॑ति (४)
म॒ध्यन्दिन॒ उद्गा॑यत्यपरा॒ह्णः प्रति॑ हरत्यस्तं॒यन् नि॒धन॑म् । नि॒धनं॒
भूत्या॑ः प्र॒जाया॑ः पशू॒नां भ॑वति॒ य ए॒वं वेद॑ (५) ॥ ४६ ॥
तस्मा॑ अ॒भ्रो भव॒न् हिङ्कृ॑णोति स्त॒नय॒न् प्र स्तौ॑ति (६)
वि॒द्योत॑मान॒ः प्रति॑ हरति॒ वर्ष॒न्नुद्गा॑यत्युद्गृ॒ह्णन् नि॒धन॑म् । नि॒धनं॒
भूत्या॑ः प्र॒जाया॑ः पशू॒नां भ॑वति॒ य ए॒वं वेद॑ (७) ॥ ४७ ॥
अति॑थी॒न् प्रति॑ पश्यति॒ हिङ्कृ॑णोत्य॒भि व॑दति॒ प्र स्तौ॑त्युद॒कं याच॒त्युद्
गा॑यति (८)
उप॑ हरति॒ प्रति॑ हर॒त्युच्छि॑ष्टं नि॒धन॑म् (९)
नि॒धनं॒ भूत्या॑ः प्र॒जाया॑ः पशू॒नां भ॑वति॒ य ए॒वं वेद॑ (१०) ॥ ४८ ॥

पर्याय—६

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता—अतिथिः; विद्या ।। छन्दः—३ आसुरी गायत्री; २ साम्न्यनुष्टुप; ३, ५ त्रिपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः; ४ एकपदा प्राजापत्या गायत्री; ६—११ आर्ची बृहती; १२ एकपदा आसुरी जगती; १३ याजुषी त्रिष्टुप्: १४ एकपदासुर्युष्णिक् ।।

यत् क्ष॒त्तार॒ं ह्वय॒त्या श्रा॑वयत्ये॒व तत् (१) ॥ ४९ ॥
यत् प्र॑तिशृणोति॑ प्र॒त्याश्रा॑वयत्ये॒व तत् (२) ॥ ५० ॥

यत् प॑रिवे॒ष्टार॒ः पात्र॑हस्ता॒ः पूर्वे॒ चाप॑रे च प्र॒पद्य॑न्ते चम॒साध्व॑र्य॑व
|| ५१ ||
ए॒व ते (३) || ५२ ||
ते॒षां॑ न क॒श्च॒नाहो॑ता (४)
यद् वा अति॑थिपति॒रति॑थीन् परि॒विष्य॑ गृ॒हानु॑पो॒दैत्य॑व॒भृथ॑मे॒व
|| ५३ ||
तदु॒पावै॑ति (५)
यत् सं॑भा॒गय॑ति॒ दक्षिणाः सभागयति॒ यद॑नु॒तिष्ठ॑त उ॒दव॑स्यत्ये॒व तत्
(६) || ५४ ||

स उप॑हूतः पृथि॒व्यां भ॑क्षय॒त्युप॑हूत॒स्तस्मि॒न् यत् पृ॑थि॒व्यां वि॒श्वरू॑पम्
(७) || ५५ ||

स उप॑हूतो॒ऽन्तरि॑क्षे भक्षय॒त्युप॑हूत॒स्तस्मि॒न् यद॒न्तरि॑क्षे वि॒श्वरू॑पम् (८)
|| ५६ ||

स उप॑हूतो दि॒वि भ॑क्षय॒त्युप॑हूत॒स्तस्मि॒न् यद् दि॒वि वि॒श्वरू॑पम् (९)
|| ५७ ||

स उप॑हूतो दे॒वेषु॑ भक्षय॒त्युप॑हूत॒स्तस्मि॒न् यद् दे॒वेषु॑ वि॒श्वरू॑पम् (१०)
|| ५८ ||

स उप॑हूतो लो॒केषु॑ भक्षय॒त्युपहूत॒स्तस्मि॒न् यल्लो॒केषु॑ वि॒श्वरू॑पम् (११)
|| ५९ ||

स उप॑हूत॒ उप॑हूतः (१२) || ६० ||
आ॒प्नोती॒म लो॒कमा॒प्नोत्य॒मुम् (१३) || ६१ |
ज्योति॑ष्मतो लो॒काञ्ज॑यति॒ य ए॒वं वेद॑ (१४) || ६२ || [३।२]

—:०:—

सूक्त ७

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—गौः ॥ छन्दः—१ आर्ची बृहती ६, ८ आसुरी गायत्री;
७ त्रिपदा पिपीलिकामध्या निचृत् गायत्री; ९, १३ साम्नी गायत्री; १० पुरउष्णिक्;
११, १२, १७, २५ साम्न्युष्णिक्; १८, २२ एकपदाऽऽसुरी जगती; १९ एक-
पदाऽऽसुरी पङ्क्तिः; २० याजुषी जगती; २१ आसुर्यनुष्टुप् २३ एकपदाऽऽसुरी
बृहती; २४ साम्नी भुरिग्बृहती; २६ साम्नी त्रिष्टुप्; (इहानुक्तपादा द्विपदाः) ॥ मंत्र २६

प्र॒जाप॑तिश्च परमे॒ष्ठी च॒ शृङ्गे॒ इन्द्रः॒ शिरो॑ अ॒ग्निर्ल॒लाटं॑ य॒मः कृका॑टम् ॥ १ ॥

सोमो॒ राजा॑ म॒स्तिष्को॒ द्यौरु॑त्तरह॒नुः पृ॑थि॒व्य॑धरह॒नुः ॥ २ ॥

वि॒द्युज्जि॒ह्वा म॒रुतो॒ दन्ता॑ रे॒वती॑र्ग्री॒वाः कृत्ति॑का स्क॒न्धा घ॒र्मो वहः॑ ॥३॥

विश्वं॑ वा॒युः स्व॒र्गो लो॒कः कृ॑ष्ण॒द्रं वि॒धर॑णी निवे॒ष्यः॑ ॥ ४ ॥

श्ये॒नः क्रो॒डो॒ऽन्तरि॑क्षं पाज॒स्यं॑ बृह॒स्पतिः॑ क॒कुद् बृ॑ह॒तीः कीक॑साः ॥ ५ ॥

दे॒वाना॒ं पत्नीः॑ पृ॒ष्टय॑ उ॒पस॒दः पर्श॑वः ॥ ६ ॥

मि॒त्रश्च॒ वरु॑णश्चांसौ॒ त्वष्टा॑ चार्य॒मा च॑ दो॒षणी॑ महादे॒वो बा॒हू ॥ ७ ॥

इ॒न्द्रा॒णी भ॒सद् वा॒युः पुच्छं॒ पव॑मानो॒ वालाः॑ ॥ ८ ॥

ब्रह्म॑ च क्ष॒त्रं च॒ श्रोणी॒ बल॑मू॒रू ॥ ९ ॥

धा॒ता च॑ सवि॒ता चा॑ष्ठीव॒न्तौ जङ्घा॑ गन्ध॒र्वा अ॑प्स॒रसः॒ कुष्ठि॑का॒ अदि॑तिः
श॒फाः ॥ १० ॥

चेतो॒ हृद॑यं॒ यकृ॑न्मे॒धा व्र॒तं पु॑रीतत् ॥ ११ ॥

क्षुत् कु॒क्षिरिरा॑ वनि॒ष्ठुः पर्व॑ताः प्ला॒शयः॑ ॥ १२ ॥

क्रोधो वृक्कौ मन्युराण्डौ प्रजा शेपः ॥ १३ ॥

नदी सूत्री वर्षस्य पतय स्तना स्तनयित्नुरूधः ॥ १४ ॥

विश्वव्यचाश्चर्मौषधयो लोमानि नक्षत्राणि रूपम् ॥ १५ ॥

देवजना गुदा मनुष्या आन्त्राण्यत्रा उदरम् ॥ १६ ॥

रक्षांसि लोहितमितरजना ऊबध्यम् ॥ १७ ॥

अभ्रं पीबो मज्जा निधनम् ॥ १८ ॥

अग्निरासीन उत्थितोऽश्विना ॥ १९ ॥

इन्द्रः प्राङ् तिष्ठन् दक्षिणा तिष्ठन् यमः ॥ २० ॥

प्रत्यङ् तिष्ठन् धातोदङ् तिष्ठन्त्सविता ॥ २१ ॥

तृणानि प्राप्तः सोमो राजा ॥ २२ ॥

मित्र ईक्षमाण आवृत्त आनन्दः ॥ २३ ॥

युज्यमानो वैश्वदेवो युक्तः प्रजापतिर्विमुक्तः सर्वम् ॥ २४ ॥

एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम् ॥ २५ ॥

उपैनं विश्वरूपाः सर्वरूपाः पशवस्तिष्ठन्ति य एवं वेद ॥ २६ ॥ (२१)

[४।१]

—:o:—

सूक्त ८

ऋषिः—भृग्वाङ्गिराः ॥ देवता— सर्वशीर्षामयापाकरणम ॥ छन्दः— १—११, १३, १४, १६—२० अनुष्टुप्; १२ अनुष्टुब्गर्भा ककुम्मती चतुष्पदोष्णिक्; १५ विराडनुष्टुप्; २२ विराट पथ्याबृहती; २२ पथ्यापङ्क्तिः ॥ मंत्र २२ ।

शीर्षक्तिं शीर्षामयं कर्णशूलं विलोहितम् । सर्वं शीर्षण्यं ते रोगं बहिर्निर्मन्त्रयामहे ॥ १ ॥

कर्णा॑भ्यां ते॒ कङ्कू॑षेभ्यः कर्ण॑शूलं वि॒सल्प॑कम्। सर्वं॑ शीर्ष॒ण्यं॑ ते॒ रोगं॑ ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ २ ॥

यस्य॑ हे॒तोः प्र॒च्यव॑ते॒ यक्ष्मः॑ कर्ण॒त आ॑स्य॒तः। सर्वं॑ शीर्ष॒ण्यं॑ ते॒ रोगं॑ ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ ३ ॥

यः कृ॒णोति॑ प्र॒मोत॑म॒न्धं कृ॒णोति॒ पूरु॑षम्। सर्वं॑ शीर्ष॒ण्यं॑ ते॒ रोगं॑ ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ ४ ॥

अ॒ङ्ग॒भे॒दम॑ङ्गज्व॒रं वि॒श्वा॒ङ्ग्यं॑ वि॒सल्प॑कम्। सर्वं॑ शीर्ष॒ण्यं॑ ते॒ रोगं॑ ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ ५ ॥

यस्य॑ भी॒मः प्र॑तीका॒श उ॑द्वे॒पय॑ति॒ पूरु॑षम्। त॒क्मानं॑ वि॒श्वशा॑रदं ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ ६ ॥

य ऊ॒रू अ॑नुस॒र्प॑त्यथो॒ एति॑ ग॒वीनि॑के। यक्ष्मं॑ ते अ॒न्तर॒ङ्गेभ्यो ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ ७ ॥

यदि॒ कामा॑दपका॒माद्धृद॑या॒ज्जाय॑ते॒ परि॑ हृ॒दो ब॒लास॒मङ्गे॑भ्यो ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ ८ ॥

ह॒रि॒माणं॑ ते॒ अङ्गे॑भ्यो॒ऽप्वाम॑न्त॒रोद॑रात्। य॒क्ष्मो॒धाम॒न्तर॒ात्मनो॑ ब॒हिर्निर्मं॑न्त्रयामहे ॥ ९ ॥

आसो॑ ब॒लासो॒ भव॑तु॒ मूत्रं॑ भवत्वा॒मय॑त्। यक्ष्मा॑णां॒ सर्वे॑षां वि॒षं निर॑वोचम॒हं त्वत् ॥ १० ॥ (२२)

ब॒हिर्बिलं॒ निर्द्र॑वतु॒ काहा॑बाहं॒ तवो॒दरा॑त्। यक्ष्मा॑णां॒ सर्वे॑षां वि॒षं निर॑वोचम॒हं त्वत् ॥ ११ ॥

उदरात् ते क्लोम्नो नाभ्या हृदयादधि । यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् ॥ १२ ॥

याः सीमानं विरुजन्ति मूर्धानं प्रत्यर्षणीः । अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् ॥ १३ ॥

या हृदयमुपर्षन्त्यनुतन्वन्ति कीकसाः । अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् ॥ १४ ॥

याः पार्श्वे उपर्षन्त्यनुनिक्षन्ति पृष्टीः । अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् ॥ १५ ॥

यास्तिरश्चीरुपर्षन्त्यर्षणीर्वक्षणासु ते । अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् ॥ १६ ॥

या गुदा अनुसर्पन्त्यान्त्राणि मोहयन्ति च । अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् ॥ १७ ॥

या मज्ज्ञो निर्धयन्ति परूंषि विरुजन्ति च । अहिंसन्तीरनामया निर्द्रवन्तु बहिर्बिलम् ॥ १८ ॥

ये अङ्गानि मदयन्ति यक्ष्मासो रोपणास्तव । यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् ॥ १९ ॥

विसल्पस्य विद्रधस्य वातीकारस्य वालजेः । यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् ॥ २० ॥

पादाभ्यां ते जानुभ्यां श्रोणिभ्यां परि भंससः । अनूकादर्षणीरुष्णिहाभ्यः शीर्ष्णो रोगमनीनशम् ॥ २१ ॥

सं ते॑ शी॒र्ष्णः क॒पाला॑नि॒ हृद॑यस्य च॒ यो वि॒धुः । उ॒द्यन्ना॑दित्य र॒श्मिभिः॑
शी॒र्ष्णो॑ रोग॑मनीनशोऽङ्गभे॒दम॑शीशमः ॥ २२ ॥ (२३) [४।२]

—:०:—

सूक्त ९

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आदित्यः; अध्यात्मम् ॥ छन्दाः—१—११, १३, १५, १७, १९—२२ त्रिष्टुप्; १२, १४, १६, १८ जगती ॥

अ॒स्य वा॒मस्य॑ पलि॒तस्य॒ होतु॒स्तस्य॒ भ्राता॑ मध्य॒मो अ॒स्त्यश्न॑ः । तृ॒तीयो॒
भ्राता॑ घृ॒तपृ॑ष्ठो अ॒स्यात्रा॑पश्यं वि॒श्पतिं॑ स॒प्तपु॑त्रम् ॥ १ ॥

स॒प्त यु॑ञ्जन्ति॒ रथ॒मेक॑चक्र॒मेको॒ अश्वो॑ वहति स॒प्तना॑मा । त्रि॒नाभि च॒क्र-
म॒जर॑मन॒र्वं यत्रे॒मा विश्वा॒ भुव॒नाधि॑ त॒स्थुः ॥ २ ॥

इ॒मं रथ॒मधि॒ ये स॒प्त त॒स्थुः स॒प्तच॑क्रं स॒प्त व॑ह॒न्त्यश्वाः॑ । स॒प्त स्वसा॑रो
अ॒भि सं न॑वन्त॒ यत्र॒ गवां॒ निहि॑ता स॒प्त नाम॑ ॥ ३ ॥

को द॑दर्श प्रथ॒मं जाय॑मानमस्थ॒न्वन्त॒ यद॑न॒स्था बिभ॑र्ति । भूम्या॒ असु॒र-
सृ॑गा॒त्मा क्व॑ स्वि॒त् को वि॒द्वांस॒मुप॑ गा॒त् प्रष्टु॑मे॒तत् ॥ ४ ॥

इ॒ह ब्र॑वीतु॒ य ई॑म॒ङ्ग वेदा॒स्य वा॒मस्य॒ निहि॑तं प॒दं वेः । शी॒र्ष्णः क्षी॒रं
दु॑ह॒ते गावो॑ अस्य व॒व्रिं वसा॑ना उद॒कं प॒दापु॑ः ॥ ५ ॥

पाकः॑ पृच्छामि॒ मन॒सावि॑जानन् दे॒वाना॑मे॒ना निहि॑ता प॒दानि॑ । व॒त्से
ब॒ष्कये॒ऽधि स॒प्त तन्तू॒न् वि त॑त्निरे क॒वय॒ ओत॒वा उ॑ ॥ ६ ॥

अचि॑कित्वांश्चि॒कितु॑षश्चि॒दत्र॑ क॒वीन् पृ॑च्छामि वि॒द्मनो॒ न वि॒द्वान् । वि
यस्त॒स्तम्भ॒ षडि॒मा रजां॑स्य॒जस्य॑ रू॒पे किमपि॑ स्वि॒देक॑म् ॥ ७ ॥

माता पितरमृत आ बभाज धीत्यग्रे मनसा सं हि जग्मे। सा बीभत्सुर्गर्भरसा निविद्धा नमस्वन्त इदुपवाकमीयुः ॥ ८ ॥

युक्ता मातासीद्धुरि दक्षिणाया अतिष्ठद् गर्भो वृजनीष्वन्तः। अमीमेद् वत्सो अनु गामपश्यद् विश्वरूप्यं त्रिषु योजनेषु ॥ ९ ॥

तिस्रो मातृस्त्रीन् पितृन् बिभ्रदेक ऊर्ध्वस्तस्थौ नेमव ग्लापयन्त।
मन्त्रयन्ते दिवो अमुष्य पृष्ठे विश्वविदो वाचमविश्वविन्नाम् ॥ १० ॥

(२४)

पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने यस्मिन्नातस्थुर्भुवनानि विश्वा। तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न च्छिद्यते सनाभिः ॥ ११ ॥

पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे अर्धे पुरीषिणम्। अथेमे अन्य उपरे विचक्षणे सप्तचक्रे षडर आहुरर्पितम् ॥ १२ ॥

द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वर्ति चक्रं परि द्यामृतस्य। आ पुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्थुः ॥ १३ ॥

सनेमि चक्रमजरं वि वावृत उत्तानायां दश युक्ता वहन्ति। सूर्यस्य चक्षू रजसैत्यावृतं यस्मिन्नातस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥ १४ ॥

स्त्रियः सतीस्ताँ उ मे पुंस आहुः पश्यदक्षण्वान्न वि चेतदन्धः।
कविर्यः पुत्रः स ईमा चिकेत यस्ता विजानात् स पितुष्पितासत् ॥१५॥

साकंजानां सप्तथमाहुरेकजं षडिद्यमा ऋषयो देवजा इति। तेषामिष्टानि विहितानि धामशः स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः ॥ १६ ॥

अ॒वः परे॑ण प॒र ए॒नाव॑रेण प॒दा व॒त्सं बिभ्र॑ती॒ गौरुद॑स्थात्। सा
क॒द्रीची॒ कं स्वि॒दर्धं॒ परा॑गा॒त् क्व॑ स्वित् सूते न॒हि यू॒थे अ॒स्मिन् ॥१७॥
अ॒वः परे॑ण पि॒तरं॒ यो अ॑स्य॒ वेदा॒वः परे॑ण प॒र ए॒नाव॑रेण। क॒वी॒यमा॑नः॒
क इ॒ह प्र वो॑चद् दे॒वं मनः॒ कुतो॒ अधि॒ प्रजा॑तम् ॥ १८ ॥
ये अ॒र्वाञ्च॒स्ताँ उ॒ परा॑च आहु॒र्ये परा॑ञ्च॒स्ताँ उ॑ अ॒र्वाच॑ आहुः।
इन्द्र॑श्च॒ या च॒क्रथुः॑ सोम॒ तानि॑ धु॒रा न यु॒क्ता रज॑सो वहन्ति ॥ १९ ॥
द्वा सु॑प॒र्णा स॒युजा॒ सखा॑या समा॒नं वृ॒क्षं परि॑ षस्वजाते। तयो॑र॒न्यः
पिप्प॑लं स्वा॒द्वत्त्यन॑श्नन्न॒न्यो अ॒भि चा॑कशीति ॥ २० ॥
यस्मि॑न् वृ॒क्षे म॒ध्वद॑ः सुप॒र्णा नि॑वि॒शन्ते॒ सुव॑ते॒ चाधि॒ विश्वे॑। तस्य॒
यदा॒हुः पिप्प॑लं स्वा॒द्वग्रे॒ तन्नोन्न॑श॒द्यः पि॒तरं॒ न वेद॑ ॥ २१ ॥
यत्रा॑ सुप॒र्णा अ॒मृत॑स्य भ॒क्षमनि॑मेषं वि॒दथा॑भि॒स्वर॑न्ति। ए॒ना विश्व॑स्य॒
भुव॑नस्य गो॒पाः स मा॒ धीरः॒ पाक॒मत्रा वि॑वेश ॥२२॥ (२५) [५।१]

—:०:—

सूक्त १०

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—गौः, विराट्, अध्यात्मम्; २३ मित्रावरुणौ ॥ छन्दः—१, ७, १४, १७, १८ जगती; २, २६, २७ भुरिक् त्रिष्टुप्; ३—६, ८—१३, १५, १६, १९, २०, २२, २३, २५, २८ त्रिष्टुप्; २१ पञ्चपदाऽतिशक्वरी; २४ चतुष्पदा पुरस्कृतिर्भुरिगतिजगती ॥ मन्त्र २८ ।

यद् गा॑य॒त्रे अधि॑ गाय॒त्रमाहि॑तं॒ त्रैष्टु॑भं वा॒ त्रैष्टु॑भान्नि॒रत॑क्षत। यद्वा॒
जग॒ज्जग॒त्याहि॑तं प॒दं य इत् तद् वि॒दुस्ते अ॑मृत॒त्वमा॑नशुः ॥ १ ॥
गा॒य॒त्रेण॒ प्रति॑ मिमीते अ॒र्कम॒र्केण॒ साम॒ त्रैष्टु॑भेन वा॒कम्। वा॒केन॑ वा॒कं
द्वि॒पदा॒ चतु॑ष्पदा॒क्षरे॑ण मिमते स॒प्त वाणीः॑ ॥ २ ॥

जगता सिन्धुं दिव्य[स्कभायद् रथंतरे सूर्यं पर्यपश्यत् । गायत्रस्य
समिधस्तिस्र आहुस्ततो मह्ना प्र रिरिचे महित्वा ॥ ३ ॥
उप ह्वये सुदुघां धेनुमेतां सुहस्तो गोधुगुत दोहदेनाम् । श्रेष्ठं सवं
सविता साविषन्नोऽभी[द्धो घर्मस्तदु षु प्र वोचत् ॥ ४ ॥
हिङ्कृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात् । दुहाम-
श्विभ्यां पयो अघ्न्येय सा वर्धतां महते सौभगाय ॥ ५ ॥
गौरमीमेदभि वत्सं मिषन्तं मूर्धानं हिङ्ङकृणोन्मातवा उ । सृक्वाणं
घर्ममभि वावशाना मिमाति मायुं पयते पयोभिः ॥ ॥ ६ ॥
अयं स शिङ्क्ते येन गौरभीवृता मिमाति मायुं ध्वसनावधि श्रिता ।
सा चित्तिभिर्नि हि चकार मर्त्यान् विद्युद्भवन्ती प्रति वव्रिमौहत ॥७॥
अनच्छये तुरगातु जीवमेजद् ध्रुवं मध्य आ पस्त्या[नाम् । जीवो
मृतस्य चरति स्वधाभिरमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः ॥ ८ ॥
विधुं दद्राणं सलिलस्य पृष्ठे युवानं सन्तं पलितो जगार । देवस्य पश्य
काव्यं महित्वाद्या ममार स ह्यः समान ॥ ९ ॥
य ईं चकार न सो अस्य वेद य ईं ददर्श हिरुगिन्नु तस्मात् । स
मातुर्योना परिवीतो अन्तर्बहुप्रजा निर्ऋतिरा विवेश ॥ १० ॥ (२६)
अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तम् । स सध्रीचीः
स विषूचीर्वसान आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः ॥ ११ ॥

द्यौर्नः पिता जनिता नाभिरत्र बन्धुर्नो माता पृथिवी महीयम् ।
उत्तानयोश्चम्वो३र्योनिरन्तरत्रा पिता दुहितुर्गर्भमाधात् ॥ १२ ॥

पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्याः पृच्छामि वृष्णो अश्वस्य रेतः ।
पृच्छामि विश्वस्य भुवनस्य नाभिं पृच्छामि वाचः परमं व्योम ॥१३॥

इयं वेदिः परो अन्तः पृथिव्या अयं सोमो वृष्णो अश्वस्य रेतः ।
अयं यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिर्ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम ॥१४॥

न वि जानामि यदिवेदमस्मि निण्यः संनद्धो मनसा चरामि । यदा
मागन् प्रथमजा ऋतस्यादिद् वाचो अश्नुवे भागमस्याः ॥ १५ ॥

अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः । ता शश्वन्ता
विषूचीना वियन्ता न्य१न्यं चिक्युर्न नि चिक्युरन्यम् ॥ १६ ॥

सप्तार्धगर्भा भुवनस्य रेतो विष्णोस्तिष्ठन्ति प्रदिशा विधर्मणि । ते
धीतिभिर्मनसा ते विपश्चितः परिभुवः परि भवन्ति विश्वतः ॥ १७ ॥

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः । यस्तन्न
वेद किमृचा करिष्यति य इत् तद् विदुस्ते अमी समासते ॥ १८ ॥

ऋचः पदं मात्रया कल्पयन्तोऽर्धर्चेन चाक्लृपुर्विश्वमेजत् । त्रिपाद् ब्रह्म
पुरुरूपं वि तष्ठे तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः ॥ १९ ॥

सूयवसाद् भगवती हि भूया अधा वयं भगवन्तः स्याम । अद्धि
तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती ॥ २० ॥

गौरिन्मि॑माय सलि॒लानि॒ तक्ष॒त्येक॑पदी द्वि॒पदी॒ सा चतु॑ष्पदी । अ॒ष्टाप॑दी॒ नव॑पदी बभू॒वुषी॑ स॒हस्रा॑क्षरा॒ भुव॑नस्य प॒ङ्क्तिस्तस्या॑ः समु॒द्रा अधि॒ वि क्ष॑रन्ति ॥ २१ ॥

कृ॒ष्णं नि॒यानं॒ हर॑यः सु॒प॒र्णा अ॒पो वसा॑ना॒ दिव॒मुत्प॑तन्ति । त आव॑वृत्र॒न्त्सद॑नादृ॒तस्यादिद् घृ॒तेन॑ पृथि॒वीं व्यू]दुः ॥ २२ ॥

अ॒पादे॑ति प्रथ॒मा प॒द्वती॑नां॒ कस्तद् वाँ॑ मित्रावरु॒णा चि॑केत । गर्भो॑ भा॒रं भ॑रत्या चि॑दस्या ऋ॒तं पिप॒र्त्यनृ॑तं॒ नि पा॑ति ॥ २३ ॥

वि॒राड् वाग् वि॒राट् पृ॑थि॒वी वि॒राड॒न्तरि॑क्षं वि॒राट् प्र॒जाप॑तिः । वि॒राण्मृत्युः सा॒ध्याना॑मधिरा॒जो ब॑भूव॒ तस्य॑ भू॒तं भव्यं॒ वशे॒ स मे॑ भू॒तं भव्यं॒ वशे॑ कृणोतु ॥ २४ ॥

श॒कम॒यँ धू॒मम॒राद॑पश्यं विषू॒वता॑ प॒र ए॒नाव॑रेण । उ॒क्षाणं॒ पृश्नि॑मपचन्त वी॒रास्तानि॒ धर्मा॑णि प्रथ॒मान्या॑सन् ॥ २५ ॥

त्रयः॑ के॒शिन॑ ऋतु॒था वि च॑क्षते संवत्स॒रे व॑पत॒ एक॑ एषाम् । विश्व॑म॒न्यो अ॑भि॒चष्टे॒ शची॑भि॒र्ध्राजि॒रेक॑स्य ददृशे॒ न रू॒पम् ॥ २६ ॥

च॒त्वारि॒ वाक् परि॑मिता प॒दानि॒ तानि॑ विदुर्ब्रा॒ह्मणा ये म॑नी॒षिणः॑ । गुहा॒ त्रीणि॒ निहि॑ता॒-नेङ्ग॑यन्ति तु॒रीयँ॑ वा॒चो म॑नु॒ष्या]वदन्ति ॥ २७ ॥

इन्द्रं॑ मि॒त्रं वरु॑णम॒ग्निमा॑हु॒रथो॑ दि॒व्यः स सु॑प॒र्णो ग॒रुत्मा॑न् । एकं॒ सद् विप्रा॑ बहु॒धा व॑दन्त्य॒ग्निं य॒मं मा॑त॒रिश्वा॑नमाहुः ॥२८॥ (२८) [५।२]

—:०:—

* श्री गणेशाय नमः *

अथ दशमम् काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—प्रत्यङ्गिरसः ।। देवता—मन्त्रोक्ताः ।। छन्दः—१ महाबृहती; २ विराण्नाम गायत्री; ३—८, १०, ११, १४, २१, २५—२७, ३०, ३१ अनुष्टुप्; ९ पथ्यापङ्क्तिः; १२ पङ्क्ति; १३ उरोबृहती, १५ चतुष्पदा विराड् जगती; १६, १८ त्रिष्टुप्; १७, २४ प्रस्तारपङ्क्तिः; १९ चतुष्पदा जगती; २० विराट् प्रस्तारपङ्क्तिः; २२ द्विपदाऽऽर्च्युष्णिक् (एकावसाना); २३ त्रिपदा भुरिक् विषमा गायत्री; २८ त्रिपदा गायत्री; २९ मध्ये ज्योतिष्मती जगती; ३२ द्व्यनुष्टुब्गर्भा पञ्चपदातिजगती ।। मन्त्र ३२ ।

यां क॒ल्पय॑न्ति वह॒तौ व॒धूमि॑व वि॒श्वरू॑पां॒ हस्त॑कृतां चिकि॒त्सव॑ः । सारा-
दे॒त्वप॑ नुदाम एनाम् ॥ १ ॥

शी॒र्ष॒ण्वती॑ न॒स्वती॑ क॒र्णिनी॑ कृत्या॒कृता॒ संभृ॑ता वि॒श्वरू॑पा । सारादे॒त्वप॑
नुदाम एनाम् ॥ २ ॥

शूद्रकृ॑ता॒ राज॑कृता॒ स्त्रीकृ॑ता ब्र॒ह्मभि॑ः कृ॒ता । जा॒या पत्या॑ नु॒त्तेव॑ क॒र्तारं॒
बन्ध्वृ॑च्छतु ॥ ३ ॥

अ॒नया॒हमोष॑ध्या॒ सर्वा॑ः कृ॒त्या अ॑दूदुषम् । यां क्षेत्रे॑ च॒क्रुर्यां गोषु॒ यां
वा॑ ते॒ पुरु॑षेषु ॥ ४ ॥

अ॒घम॑स्त्वघ॒कृते॑ श॒पथ॑ः शपथीय॒ते । प्र॒त्यक् प्र॑ति॒प्रहि॑ण्म॒ो यथा॑ कृत्या-
कृत॒ं हन॑त् ॥ ५ ॥

प्र॒ती॒ची॑न आङ्गि॒रसोऽध्य॑क्षो नः पु॒रोहि॑तः । प्र॒तीचीः॑ कृ॒त्या आ॒कृत्या॒मून् कृ॑त्या॒कृतो॑ जहि ॥ ६ ॥

यस्त्वो॒वाच॒ परे॒हीति॑ प्रति॒कूल॑मुदा॒य्य॑म् । तं कृ॑त्येऽभि॒निव॑र्तस्व॒ मास्मानि॑च्छो अ॒नागसः॑ ॥ ७ ॥

यस्ते॒ परूं॑षि संद॒धौ रथ॑स्येव॒र्भुर्धि॒या । तं ग॑च्छ॒ तत्र॒ तेऽय॑न॒मज्ञा॑तस्ते॒ऽयं जनः॑ ॥ ८ ॥

येत्वा॑ कृ॒त्वाले॑भि॒रे वि॑द्व॒ला अ॑भिचा॒रिणः॑ । श॒म्भ्वी॒३॒॑दं कृ॑त्या॒दूष॑णं प्रतिव॒र्त्म पुनः॑स॒रं तेन॑ त्वा स्नपयामसि ॥ ९ ॥

यद् दु॒र्भगां॑ प्रस्न॑पितां मृ॒तव॑त्सामुपेयि॒म । अपै॑तु॒ सर्वं॑ मत् पा॒पं द्रवि॑णं॒ मोप॑ तिष्ठतु ॥ १० ॥ (१)

यत् ते॑ पि॒तृभ्यो॒ दद॑तो य॒ज्ञे वा॒ नाम॑ ज॒गृहुः । सं॒दे॒श्या॒३॒॑त् सर्व॑स्मात् पा॒पादि॒मा मु॑ञ्चन्तु॒ त्वौष॑धीः ॥ ११ ॥

दे॒वै॒न॒सात् पित्र्या॑न्नामग्रा॒हात् संदे॒श्या॒३॒॑दभि॒निष्कृ॑तात् । मु॒ञ्चन्तु॑ त्वा वी॒रुधो॑ वी॒र्ये॒३॒॑ण॒ ब्रह्म॑ण ऋ॒ग्भिः पय॑स॒ ऋषी॑णाम् ॥ १२ ॥

यथा॒ वात॑श्च्याव॒यति॒ भूम्या॑ रे॒णुम॒न्तरि॑क्षाच्चा॒भ्रम् । ए॒वा मत् सर्वं॑ दु॒र्भूतं॒ ब्रह्म॑नुत्त॒मपा॑यति ॥ १३ ॥

अप॑ क्राम॒ नान॑दती॒ विन॑द्धा गर्द॒भीव॑ । क॒र्तॄन् न॑क्षस्वे॒तो नु॒त्ता ब्रह्म॑णा वी॒र्या॒३॒॑वता ॥ १४ ॥

अयं पन्थाः कृत्येति त्वा नयामोऽभिप्रहितां प्रति त्वा प्र हिण्मः ।
तेनाभि याहि भञ्जत्यनस्वतीव वाहिनी विश्वरूपा कुरूटिनी ॥ १५ ॥

पराक् ते ज्योतिरपथं ते अर्वागन्यत्रास्मदयना कृणुष्व । परेणेहि
नवतिं नाव्या३ अति दुर्गाः स्रोत्या मा क्षणिष्ठाः परेहि ॥ १६ ॥

वात इव वृक्षान् नि मृणीहि पादय मा गामश्वं पुरुषमुच्छिष एषाम् ।
कर्तॄन् निवृत्येतः कृत्येऽप्रजास्त्वाय बोधय ॥ १७ ॥

यां ते बर्हिषि यां श्मशाने क्षेत्रे कृत्यां वलगं वा निचख्नुः । अग्नौ
वा त्वा गार्हपत्येऽभिचेरुः पाकं सन्तं धीरतरा अनागसम् ॥ १८ ॥

उपाहृतमनुबुद्धं निखातं वैरं त्सार्यन्वविदाम कर्त्रम् । तदेतु यत आभृतं
तत्राश्व इव वि वर्ततां हन्तु कृत्याकृतः प्रजाम् ॥ १९ ॥

स्वायसा असयः सन्ति नो गृहे विद्मा ते कृत्ये यतिधा परूंषि
उत्तिष्ठैव परेहीतोऽज्ञाते किमिहेच्छसि ॥ २० ॥ (२)

ग्रीवास्ते कृत्ये पादौ चापि कर्त्स्यामि निर्द्रव । इन्द्राग्नी अस्मान्
रक्षतां यौ प्रजानां प्रजावती ॥ २१ ॥

सोमो राजाधिपा मृडिता च भूतस्य नः पतयो मृडयन्तु ॥ २२ ॥

भवाशर्वावस्यतां पापकृते कृत्याकृते । दुष्कृते विद्युतं देवहेतिम् ॥ २३ ॥

यद्येयथ द्विपदी चतुष्पदी कृत्याकृता संभृता विश्वरूपा । सेतो३ष्टा-
पदी भूत्वा पुनः परेहि दुच्छुने ॥ २४ ॥

अभ्य१क्ताक्ता स्व१रंकृता सर्वं भरन्ती दुरितं परेहि । जानीहि कृत्ये
कर्तारं दुहितेव पितरं स्वम् ॥ २५ ॥

परे॑हि कृत्ये॒ मा ति॑ष्ठो वि॒द्धस्ये॑व प॒दं न॑य । मृगः स मृ॑ग॒युस्त्वं न
त्वा॒ निक॑र्तुमर्ह॑ति ॥ २६ ॥
उ॒त ह॑न्ति पूर्वा॒सिनं॑ प्रत्या॒दायाप॑र॒ इष्वा॑ । उ॒त पूर्व॑स्य निघ्न॒तो नि
ह॒न्त्यप॑रः॒ प्रति॑ ॥ २७ ॥
ए॒तद्धि शृ॒णु मे॒ वचोऽथे॑हि॒ यत॑ ए॒यथ॑ । यस्त्वा॑ च॒कार॒ तं प्रति॑ ॥२८॥
अ॒ना॒गो॒ह॒त्या वै भी॒मा कृ॑त्ये॒ मा नो॒ गामश्व॒ं पुरु॑षं वधीः । यत्र॑य॒त्रासि॒
निहि॑ता॒ त॒तस्त्वोत्था॑पयामसि प॒र्णाल्लघी॑यसी भव ॥ २९ ॥
यदि॒ स्थ तम॒सावृ॑ता॒ जाले॑ना॒भिहि॑ता इव । सर्वाः॑ सं॒लुप्ये॒तः कृ॒त्याः
पुन॑ः क॒र्त्रे॑ प्र हि॑ण्मसि ॥ ३० ॥
कृ॒त्या॒कृतो॑ वल॒गिनो॑ऽभिनिष्का॒रिण॑ः प्र॒जाम् । मृ॒णी॒हि कृ॑त्ये॒ मोच्छि॑षो॒ऽमून्
कृ॑त्या॒कृतो॑ जहि ॥ ३१ ॥
यथा॒ सूर्यो॑ मु॒च्यते॒ तम॑स॒स्परि॒ रात्रिं॒ जहा॑त्यु॒षस॑श्च के॒तून् । ए॒वाहं
सर्वं॑ दु॒र्भूतं कर्त्रं॑ कृत्या॒कृता॑ कृ॒तं ह॒स्तीव॒ रजो॑ दुरि॒तं ज॑हामि ॥ ३२ ॥
(३) [१।१]

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः—नारायणः ॥ देवता—पुरुषः, ब्रह्मप्रकाशनम् (३१, ३२ साक्षात् ब्रह्मप्रकाशिन्यौ) ॥ छन्दः—१—४, ७, ८ त्रिष्टुप्; ५. ६, १०, १२—२७, २९—३३ अनुष्टुप्; ६, ११ जगती; २८ भुरिग्बृहती ॥ मन्त्र ३३ ।

केन॒ पार्ष्णी॒ आभृ॑ते॒ पूरु॑षस्य॒ केन॑ मा॒ंसं संभृ॑तं॒ केन॑ गु॒ल्फौ । केना॒ङ्गु॒लीः
पेश॑नी॒ः केन॒ खानि॒ केनो॑च्छ्ल॒ङ्खौ म॑ध्य॒तः कः प्र॑ति॒ष्ठाम् ॥ १ ॥

कस्मा॒न्नु गु॒ल्फावध॑रावकृ॒ण्वन्नष्ठी॒वन्ता॒वुत्त॑रौ॒ पूरु॑षस्य । जङ्घे॑ नि॒र्ऋत्य॒
न्य᳚दधुः॒ क्व᳚स्वि॒ज्जानु॑नोः सं॒धी क उ॒ तच्चि॑केत ॥ २ ॥
चतु॑ष्टयं युज्यते॒ संहि॑तान्तं॒ जानु॑भ्यामू॒र्ध्वं शि॑थि॒रं कब॑न्धम् । श्रोणी॒
यदू॒रू क उ॒ तज्ज॑जान॒ याभ्यां॒ कुसि॑न्धं॒ सुदृ॑ढं ब॒भूव॑ ॥ ३ ॥
कति॑ दे॒वाः क॑त॒मे त आ॑सन् य उरो॑ ग्री॒वाश्चि॒क्युः पूरु॑षस्य । कति॒
स्तनौ॒ व्य᳚दधुः॒ कः क॑फो॒डौ कति॑ स्क॒न्धान् कति॑ पृ॒ष्टीर॑चिन्वन् ॥४॥
को अ॑स्य बा॒हू सम॑भरद् वी॒र्य᳚ करवा॒दिति॑ । अंसौ॒ को अ॑स्य॒ तद्
दे॒वः कुसि॑न्धे॒ अध्या द॑धौ ॥ ५ ॥
कः स॒प्त खानि॒ वि त॑तर्द शी॒र्षणि॒ कर्णा॑वि॒मौ नासि॑के॒ चक्ष॑णी॒ मुख॑म् ।
येषां॑ पुरु॒त्रा वि॑ज॒यस्य॑ म॒ह्मनि॒ चतु॑ष्पादो द्वि॒पदो॒ यन्ति॒ याम॑म् ॥ ६ ॥
हन्वो॒र्हि जि॒ह्वामद॑धात् पुरू॒चीमधा॑ म॒हीमधि॑ शिश्राय॒ वाच॑म् । स आ
व॑रीवर्ति॒ भुव॑नेष्व॒न्तर॒पो वसा॑नः॒ क उ॒ तच्चि॑केत ॥ ७ ॥
म॒स्तिष्क॑मस्य यत॒मो ल॒लाटं॑ क॒काटि॑कां प्रथ॒मो यः क॒पाल॑म् । चि॒त्वा
चित्यं॒ हन्वोः॒ पूरु॑षस्य॒ दिवं॑ रुरोह कत॒मः स दे॒वः ॥ ८ ॥
प्रि॒या॒प्रि॒याणि॑ बहु॒ला स्वप्नं॑ संबाधत॒न्द्र्य᳚ः । आ॒न॒न्दानु॒ग्रो नन्दां॑श्च॒
कस्मा॑द् वहति॒ पूरु॑षः ॥ ९ ॥
आर्ति॒रव॑र्ति॒र्निर्ऋ॑तिः॒ कुतो॒ नु पुरु॒षेऽम॑तिः । राद्धिः॒ समृ॑द्धि॒रव्यृ॑द्धिर्म॒ति-
रुदि॑तयः॒ कुतः॑ ॥ १० ॥ (४)
को अ॑स्मि॒न्नापो॒ व्य᳚दधाद् विषू॒वृतः॑ पुरू॒वृतः॑ सिन्धु॒सृत्या॑य जा॒ताः ।
ती॒व्रा अ॑रु॒णा लोहि॑नीस्ताम्रधू॒म्रा ऊ॒र्ध्वा अवा॑चीः॒ पुरु॑षे ति॒रश्चीः॑ ॥११॥

को अ॑स्मिन् रू॒पम॑दधा॒त् को म॒ह्मानं॑ च॒ नाम॑ च। गा॒तुं को अ॑स्मि॒न्
कः के॒तुं क॑श्च॒रित्रा॑णि॒ पूरु॑षे ॥ १२ ॥
को अ॑स्मिन् प्रा॒णम॑वय॒त् को अ॑पा॒नं व्या॒नमु॑। स॒मा॒नम॑स्मि॒न् को
दे॒वोऽधि॑ शिश्राय॒ पूरु॑षे ॥ १३ ॥
को अ॑स्मिन् य॒ज्ञम॑दधा॒देको॑ दे॒वोऽधि॒ पूरु॑षे। को अ॑स्मिन्त्स॒त्यं
कोऽनृ॑तं॒ कुतो॑ मृ॒त्युः कु॒तो॒ऽमृत॑म् ॥ १४ ॥
को अ॑स्मै॒ वासः॒ पर्य॑दधा॒त् को अ॒स्यायु॑रकल्पयत्। बलं॒ को अ॑स्मै॒
प्राय॑च्छ॒त् को अ॑स्याकल्पयज्ज॒वम् ॥ १५ ॥
केना॒पो अन्व॑तनु॒त केनाह॑रकरोद् रु॒चे। उ॒षसं॒ केनान्वै॑न्द्ध केन॑ सायं-
भ॒वं द॑दे ॥ १६ ॥
को अ॑स्मि॒न् रेतो॒ न्य॑दधा॒त् तन्तु॒रा ताय॑ता॒मिति॑। मे॒धां को अ॑स्मि॒-
न्नध्यौ॑ह॒त् को बा॒णं को नृतो॑ दधौ ॥ १७ ॥
केने॒मां भूमि॑मौर्णो॒त् केन॒ पर्य॑भव॒द् दिव॑म्। केना॒भि म॒ह्ना पर्व॑ता॒न्
केन॒ कर्मा॑णि॒ पूरु॑षः ॥ १८ ॥
केन॑ प॒र्जन्य॒मन्वे॑ति॒ केन॒ सोमं॑ विचक्ष॒णम्। केन॑ य॒ज्ञं च॑ श्र॒द्धां च॒
केना॑स्मि॒न् निहि॑तं॒ मनः॑ ॥ १९ ॥
केन॒ श्रोत्रि॑यमाप्नोति॒ केने॒मं प॑रमे॒ष्ठिन॑म्। केने॒मम॒ग्निं पूरु॑षः॒ केन॑
संवत्स॒रं म॑मे ॥ २० ॥ (५)

ब्रह्म॒ श्रोत्रि॑यमाप्नोति॒ ब्रह्मे॒मं प॑रमे॒ष्ठिन॑म् । ब्रह्मे॒मम॒ग्निं पूरु॑षो॒ ब्रह्म॑
संवत्स॒रं म॑मे ॥ २१ ॥

केन॑ दे॒वाँ अनु॑ क्षियति॒ केन॒ दैव॑जनी॒र्विशः॑ । केने॒दम॒न्यन्नक्ष॑त्र॒ं केन॒ सत्
क्ष॒त्रमु॑च्यते ॥ २२ ॥

ब्रह्म॑ दे॒वाँ अनु॑ क्षियति॒ ब्रह्म॒ दैव॑जनी॒र्विशः॑ । ब्रह्मे॒दम॒न्यन्नक्ष॑त्र॒ं ब्रह्म॒
सत् क्ष॒त्रमु॑च्यते ॥ २३ ॥

केने॒यं भूमि॒र्विहि॑ता॒ केन॒ द्यौरुत्त॑रा हि॒ता । केने॒दमू॒र्ध्वं ति॒र्यक् चा॒न्तरि॑क्ष॒ं
व्यचो॑ हि॒तम् ॥ २४ ॥

ब्रह्म॑णा॒ भूमि॒र्विहि॑ता॒ ब्रह्म॒ द्यौरुत्त॑रा हि॒ता । ब्रह्मे॒दमू॒र्ध्वं ति॒र्यक् चा॒न्तरि॑क्ष॒ं
व्यचो॑ हि॒तम् ॥ २५ ॥

मू॒र्धान॑मस्य सं॒सीव्याथ॑र्वा॒ हृद॑यं च॒ यत् । म॒स्तिष्का॑दू॒र्ध्वः प्रैर॑य॒त्
पव॑मा॒नोऽधि॑ शीर्ष॒तः ॥ २६ ॥

तद् वा अथ॑र्वणः॒ शिरो॑ देवको॒शः समु॑ब्जितः । तत् प्रा॒णो अ॒भि र॑क्षति॒
शिरो॒ अन्न॒मथो॒ मनः॑ ॥ २७ ॥

ऊ॒र्ध्वो नु सृ॒ष्टा३स्ति॒र्यङ् नु सृ॒ष्टा३ः सर्वा॒ दिशः॒ पुरु॑ष॒ आ ब॑भू॒वाँ३ ।
पुरं॒ यो ब्रह्म॑णो॒ वेद॒ यस्याः॒ पुरु॑ष उ॒च्यते॑ ॥ २८ ॥

यो वै तां ब्रह्म॑णो॒ वेदा॒मृते॒नावृ॑तां॒ पुर॑म् । तस्मै॒ ब्रह्म॑ च ब्रा॒ह्माश्च॒ चक्षुः॑
प्रा॒णं प्र॒जां द॑दुः ॥ २९ ॥

न वै तं चक्षु॑र्जहाति॒ न प्रा॒णो ज॒रसः॑ पु॒रा । पुरं॒ यो ब्रह्म॑णो॒ वेद॒
यस्याः॒ पुरु॑ष उ॒च्यते॑ ॥ ३० ॥

अ॒ष्टाच॑क्रा॒ नव॑द्वारा दे॒वानां॒ पूर॑योऽध्या । तस्यां॑ हिर॒ण्यय॒ः कोश॑ः स्व॒र्गो ज्योति॒षावृ॑तः ॥ ३१ ॥

तस्मि॑न् हिर॒ण्यये॒ कोशे॒ त्र्य॑रे॒ त्रिप्र॑तिष्ठिते । तस्मि॒न् यद् य॒क्षमा॑त्म॒न्वत् तद् वै ब्र॑ह्म॒विदो॑ विदुः ॥ ३२ ॥

प्र॒भ्राज॑माना॒ं हरि॑णीं॒ यश॑सा सं॒परी॑वृताम् । पुरं॑ हिर॒ण्ययीं॒ ब्रह्मा वि॑वे॒शाप॑राजिताम् ॥ ३३ ॥ (६) [१।२]

—:०:—

सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—वरणमणिः, वनस्पतिः ।। छन्दः—१, ४, ५, ७, ९, १०, १२ अनुष्टुप्; २, ३, ६ भुरिक् त्रिष्टुप्; ८, १३, १४ पथ्यापङ्क्तिः; ११, १६ भुरिगनुष्टुप्; १५, १७—२५ षट्पदा जगती ।। मन्त्र २५ ।

अ॒यं मे॑ वर॒णो म॒णिः स॑पत्न॒क्षय॑णो॒ वृषा॑ । तेना र॑भस्व॒ त्वं शत्रू॒न् प्र मृ॑णीहि दुरस्य॒तः ॥ १ ॥

प्रैणा॑न्छृणीहि॒ प्र मृ॒णा र॑भस्व म॒णिस्ते॑ अस्तु पुरए॒ता पु॒रस्ता॑त् । अवा॑रयन्त वर॒णेन॑ दे॒वा अ॑भ्याचा॒रमसु॑राणा॒ं श्वःश्वः॑ ॥ २ ॥

अ॒यं म॒णिर्व॑र॒णो वि॒श्वभे॑षजः सहस्रा॒क्षो हरि॑तो हिर॒ण्ययः॑ । स ते॒ शत्रू॒नध॑रान् पादयाति पू॒र्वस्तान् द॑भ्नुहि॒ ये त्वा॑ द्वि॒षन्ति॑ ॥ ३ ॥

अ॒यं ते॑ कृ॒त्यां वित॑तां॒ पौरु॑षेयाद॒यं भ॒यात् । अ॒यं त्वा॒ सर्व॑स्मात् पा॒पाद् व॑र॒णो वा॑रयिष्यते ॥ ४ ॥

व॒रणो वा॑रयाता अ॒यं दे॒वो वन॒स्पति॑ः । यक्ष्मो॒ यो अ॒स्मिन्नावि॑ष्टस्तमु॑ दे॒वा अ॑वीवरन् ॥ ५ ॥

स्वप्नं॑ सु॒प्त्वा यदि॒ पश्या॑सि पा॒पं मृ॒गः सृ॒तिं यति॒ धावा॒दजु॑ष्टाम्। प॒रि॒क्ष॒वाच्छ॒कुने॑ः पापवा॒दाद॒यं म॒णिवर॑णो वा॑रयिष्यते ॥ ६ ॥

अरा॑त्यास्त्वा॒ निर्ऋ॑त्या अभिचा॒राद॑थो भ॒यात्। मृ॒त्योरोजी॑यसो व॒धाद् व॑र॒णो वा॑रयिष्यते ॥ ७ ॥

यन्मे॑ मा॒ता यन्मे॑ पि॒ता भ्रात॑रो॒ यच्च॑ मे॒ स्वा यदेन॑श्चकृ॒मा व॒यम्। ततो॑ नो वा॑रयिष्यते॒ऽयं दे॒वो वन॒स्पति॑ः ॥ ८ ॥

वर॒णेन॒ प्रव्य॑थिता॒ भ्रातृ॑व्या मे सब॑न्धवः। अ॒सूर्तं॒ रजो॒ अप्य॑गु॒स्ते यन्त्व॑ध॒मं तम॑ः ॥ ९ ॥

अरि॑ष्टो॒ऽहमरि॑ष्टगु॒रायु॑ष्मा॒न्त्सर्व॑पूरुषः। तं मा॒यं व॑र॒णो म॒णिः परि॑ पातु दि॒शोदि॑शः ॥ १० ॥ (७)

अ॒यं मे॑ वर॒ण उर॑सि॒ राजा॑ दे॒वो वन॒स्पति॑ः। स मे॒ शत्रू॒न वि बा॑धता॒मिन्द्रो॒ दस्यू॑नि॒वासु॑रान् ॥ ११ ॥

इ॒मं बि॑भर्मि वर॒णमायु॑ष्मान्छ॒तशा॑रदः। स मे॑ रा॒ष्ट्रं च॑ क्ष॒त्रं च॑ प॒शूनोज॑श्च मे दधत् ॥ १२ ॥

यथा॒ वातो॒ वन॒स्पती॑न् वृ॒क्षान् भ॒नक्त्योज॑सा। ए॒वा स॒पत्ना॑न् मे भङ्ग्धि॒ पूर्वा॑न् जा॒ताँ उ॒ताप॑रान् वर॒णस्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ १३ ॥

यथा॒ वात॑श्चा॒ग्निश्च॑ वृ॒क्षान् प्सा॒तो वन॒स्पती॑न्। ए॒वा स॒पत्ना॑न् मे प्सा॒हि पूर्वा॑न् जा॒ताँ उ॒ताप॑रान् वर॒णस्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ १४ ॥

यथा॒ वाते॑न॒ प्रक्षी॑णा वृ॒क्षाः शेरे॒ न्य॑र्पिताः। ए॒वा स॒पत्ना॒ंस्त्वं मम॒ प्र क्षि॑णीहि॒ न्य॑र्पय॒ पूर्वा॑न् जा॒ताँ उ॒ताप॑रान् वर॒णस्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ १५ ॥

ता॑स्त्वं प्र च्छि॑न्द्धि वरण पु॒रा दि॒ष्टात् पु॒रायु॑षः । य ए॑नं प॒शुषु॒ दिप्स॑न्ति॒
ये चा॑स्य राष्ट्रदि॒प्सव॑ः ॥ १६ ॥
यथा॒ सूर्यो॑ अतिभाति॒ यथा॑स्मिन्॒ तेज॒ आहि॑तम् । ए॒वा मे॑ वरु॒णो
म॒णिः की॒र्तिं भूति॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु
मा ॥ १७ ॥
यथा॒ यश॑श्च॒न्द्रम॑स्यादि॒त्ये च॑ नृ॒चक्ष॑सि । ए॒वा मे॑ वरु॒णो म॒णिः की॒र्तिं
भूति॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥ १८ ॥
यथा॒ यश॑ः पृथि॒ऽव्यां यथा॒स्मिन् जा॒तवे॑दसि । ए॒वा मे॑ वरु॒णो म॒णिः
की॒र्तिं भूतिं॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥१९॥
यथा॒ यश॑ः क॒न्या]यां॒ यथा॒स्मिन्त्संभृ॑ते॒ रथे॑ । ए॒वा मे॑ वरु॒णो म॒णिः
की॒र्तिं भूतिं॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥२०॥
(८)
यथा॒ यश॑ः सोमपी॒थे म॑धुप॒र्के यथा॒ यश॑ः । ए॒वा मे॑ वरु॒णो म॒णिः
की॒र्तिं भूति॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥२१॥
यथा॒ यशो॑ऽग्निहो॒त्रे व॑षट्का॒रे यथा॒ यश॑ः । ए॒वा मे॑ वरु॒णो म॒णिः
की॒र्तिं भूति॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥२२॥
यथा॒ यशो॒ यज॑माने॒ यथा॒स्मिन् य॒ज्ञ आहि॑तम् । ए॒वा मे॑ वरु॒णो म॒णिः
की॒र्तिं भूति॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥२३॥
यथा॒ यश॑ः प्र॒जाप॑तौ॒ यथा॒स्मिन् प॑रमे॒ष्ठिनि॑ । ए॒वा मे॑ वरु॒णो म॒णिः
की॒र्तिं भूति॒ नि य॑च्छतु॒ तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥२४॥

यथा॑ दे॒वेष्व॒मृतं॒ यथै॑षु स॒त्यमाहि॑तम्। ए॒वा मे॑ वर॒णो म॒णिः की॒र्तिं भू॒तिं नि य॑च्छतु तेज॑सा मा॒ समु॑क्षतु॒ यश॑सा॒ सम॑नक्तु मा ॥२५॥ (६)

[२।१]

* * *

सूक्त ४

ऋषिः—गरुत्मान् ॥ देवता—सर्पविषापाकरणम् ॥ छन्दः—१ पथ्यापङ्क्तिः; २ त्रिपदा यवमध्या गायत्री; ३, ४ पथ्याबृहती; ५—७, ९—११, १३—१५, १७—२०, २२, २४, २५ अनुष्टुप्; ८ उष्णिग्गर्भा परा त्रिष्टुप्; १२ भुरिग्गायत्री; १६ त्रिपदा प्रतिष्ठा गायत्री; २१ ककुम्मत्यनुष्टुप्; २३ त्रिष्टुप्; २६ षट्पदा बृहतीगर्भा ककुम्मती भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २६ ।

इन्द्र॑स्य प्रथ॒मो रथो॑ दे॒वाना॒मप॑रो॒ रथो॒ वरु॑णस्य तृ॒तीय॒ इत्। अही॑नामप॒मा रथः॑ स्था॒णुमा॑र॒दथा॑र्षत् ॥ १ ॥

द॒र्भः शो॒चिस्त॒रूण॑कमश्व॑स्य॒ वारः॑ परु॒षस्य॒ वारः॑। रथ॑स्य॒ बन्धु॑रम् ॥ २ ॥

अव॑ श्वेत प॒दा ज॑हि॒ पूर्वे॑ण॒ चाप॑रेण च। उ॒द॒प्लु॒तमि॑व॒ दार्वही॑नामर॒सं वि॒षं वारु॒ग्रम् ॥ ३ ॥

अ॒रं॒घु॒षो नि॒मज्यो॒न्मज्य॒ पुन॑रब्रवीत्। उ॒द॒प्लु॒तमि॑व॒ दार्वही॑नामर॒सं वि॒षं वारु॒ग्रम् ॥ ४ ॥

पै॒द्वो ह॑न्ति कस॒र्णीलं॑ पै॒द्वः श्वि॒त्रमु॒तासि॒तम्। पै॒द्वो र॑थ॒र्व्याः शिरः॒ सं बि॑भेद पृदा॒क्वाः ॥ ५ ॥

पैद्व॒ प्रेहि॑ प्रथ॒मोऽनु॑ त्वा व॒यमेम॑सि । अही॒न् व्य॑स्यतात् प॒थो येन॑
स्मा व॒यमे॒मसि॑ ॥ ६ ॥
इ॒दं पै॒द्वो अ॑जायते॒दम॑स्य प॒राय॑णम् । इ॒मान्यर्व॑तः प॒दाहि॒घ्न्यो
वा॒जिनी॑वतः ॥ ७ ॥
संय॑तं॒ न वि ष्प॑रद्॒ व्यात्तं॒ न सं य॑मत् । अ॒स्मिन् क्षेत्रे॒ द्वाव॒ही॒ स्त्री
च॒ पुमाँ॑श्च॒ तावु॒भाव॑र॒सा ॥ ८ ॥
अ॒र॒सास॑ इ॒हाह॑यो॒ ये अन्ति॒ ये च॑ दू॒रके॑ । घ॒नेन॑ हन्मि॒ वृश्चि॑कु॒महिं॑
द॒ण्डेनाग॑तम् ॥ ९ ॥
अ॒घा॒श्वस्ये॒दं भे॑ष॒जमु॒भयोः॑ स्व॒जस्य॑ च । इन्द्रो॒ मेऽहि॑मघा॒यन्त॒महिं॑
पै॒द्वो अ॑रन्धयत् ॥ १० ॥ (१०)
पै॒द्वस्य॑ मन्महे व॒यं स्थि॒रस्य॑ स्थि॒रधा॑म्नः । इ॒मे प॒श्चा पृदा॑कवः
प्र॒दीध्य॑त आसते ॥ ११ ॥
न॒ष्टास॑वो न॒ष्टवि॑षा ह॒ता इन्द्रे॑ण व॒ज्रिणा॑ । ज॒घानेन्द्रो॑ ज॒घ्निमा
व॒यम् ॥ १२ ॥
ह॒तास्तिर॑श्चिराजयो॒ निपि॑ष्टासः॒ पृदा॑कवः । दर्वि॒ करि॑क्रतं श्वि॒त्रं
द॒र्भेष्व॑सि॒तं ज॑हि ॥ १३ ॥
कै॒रा॒ति॒का कु॑मारि॒का स॒का ख॑नति भेष॒जम् । हि॒र॒ण्ययी॑भि॒रभ्रि॑भि-
गि॒रीणा॒मुप॒ सानु॑षु ॥ १४ ॥
आ॒यम॑ग॒न् युवा॑ भि॒षक् पृ॑श्नि॒हाप॑राजितः । स वै स्व॒जस्य॒ जम्भ॑न
उ॒भयो॒र्वृश्चि॑कस्य च ॥ १५ ॥

इन्द्रो मेऽहि॑मरन्धयन्मि॒त्रश्च॒ वरु॑णश्च । वा॒ता॒प॒र्ज॑न्यो॒३॑भा ॥ १६ ॥

इन्द्रो मेऽहि॑मरन्धय॒त् पृदा॑कुं च पृदा॒क्वम् । स्व॒जं तिर॑श्चिराजिं क॒स॒र्णीलं॒ द॒शो॑नसिम् ॥ १७ ॥

इन्द्रो॑ जघान प्रथ॒मं ज॑नि॒तार॑मह॒े तव॑ । तेषा॑मु तृ॒ह्यमा॑णाना॒ं कः स्वि॒त् तेषा॑मस॒द् रसः॑ ॥ १८ ॥

सं हि शी॒र्षाण्यग्र॑भं पौञ्जि॒ष्ठ इ॑व॒ कर्व॑रम् । सिन्धो॒र्मध्यं॑ प॒रेत्य॒ व्य[निज॒महे॑र्वि॒षम् ॥ १९ ॥

अही॑ना॒ं सर्वे॑षां वि॒षं परा॑ वहन्तु॒ सिन्ध॑वः । ह॒तास्तिर॑श्चिराजयो॒ निपि॑ष्टास॒ः पृदा॑कवः ॥ २० ॥ (११)

ओष॑धीनाम॒हं वृ॑ण उ॒र्वरी॑रिव साधु॒या । न॒याम्यर्व॑तीरि॒वाहे॑ नि॒रैतु॑ ते वि॒षम् ॥ २१ ॥

यद॒ग्नौ सूर्ये॑ वि॒षं पृ॑थि॒व्यामोष॑धीषु॒ यत् । का॒न्द॒ावि॒षं क॒नक्न॑कं नि॒रैत्वैतु॑ ते वि॒षम् ॥ २२ ॥

ये अ॑ग्नि॒जा ओ॑षधि॒जा अही॑ना॒ं ये अ॑प्सुजा वि॒द्युत॑ आबभू॒वुः । येषां॑ जा॒तानि॑ बहुधा म॒हान्ति॒ तेभ्यः॑ स॒र्पेभ्यो॒ नम॑सा विधेम ॥ २३ ॥

तौदी॒ नामा॑सि क॒न्या[घृ॒ताची॒ नाम॒ वा अ॑सि । अ॒ध॒स्प॒देन॑ ते प॒दमा द॑दे विष॒दूष॑णम् ॥ २४ ॥

अङ्गा॑दङ्गा॒त् प्र च्या॑वय॒ हृद॑यं॒ परि॑ वर्ज॑य । अधा॑ वि॒षस्य॒ यत् तेजो॑ऽवा॒चीनं॒ तदे॑तु ते ॥ २५ ॥

आरे अ॑भूद् वि॒षम॑रौद् वि॒षे वि॒षम॑प्रा॒गपि॑ । अ॒ग्निर्वि॒षमहे॒र्निर॑धा॒त् सोमो॒ निर॑णयीत् । दं॒ष्टार॒मन्व॑गाद् वि॒षमहि॑रमृत ॥ २६ ॥ (१२)
[२।२]

—:०:—

सूक्त ५

ऋषिः—१—२४ सिन्धुद्वीपः; २५—३६ कौशिकः; ३७—४१ ब्रह्मा; ४२—५० विहव्यः ॥ देवता—१—२४ आपः; २५—४१ मन्त्रोक्ताः; ४२—५० प्रजापतिः ॥ छन्दः—१—५ त्रिपदा पुरोभिकृतिः ककुम्मतीगर्भा पङ्क्तिः; ६ चतुष्पदा जगतीगर्भा जगती; ७—१४ पञ्चपदा विपरीतपादलक्ष्मा बृहती (११, १४ पथ्या पङ्क्तिः); १५—२१ दशपदा त्रैष्टुब्गर्भाऽतिधृतिः (१९, २० कृतिः); २२, २३, ४२, ४३, ४५—४७ अनुष्टुप्; २४ त्रिपदा विराड् गायत्री; २५—३५ षट्पदा यथाक्षरं शक्वर्यतिशक्वरी; ३६ पञ्चपदाऽतिशक्वरातिजागत गर्भाऽष्टिः; ३७ विराट्; पुरस्ताद्बृहती; ३८ पुरउष्णिक्; ३९, ४१ आर्षीगायत्री; ४० विराड् विषमा गायत्री; ४४ त्रिपदा गायत्रीगर्भाऽनुष्टुप्; [४८, ४९] ५० त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ५० ॥

विनि०—जल को वज्र बनाकर शत्रु मारण कर्म ।

इन्द्र॒स्यौज॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ सह॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ बलं॒ स्थेन्द्र॑स्य वी॒र्यं१॒ स्थेन्द्र॑स्य नृ॒म्णं स्थ॑ । जि॒ष्णवे॒ योगा॑य ब्रह्मयो॒गैर्वो॑ युनज्मि ॥ १ ॥

इन्द्र॒स्यौज॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ सह॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ बलं॒ स्थेन्द्र॑स्य वी॒र्यं१॒ स्थेन्द्र॑स्य नृ॒म्णं स्थ॑ । जि॒ष्णवे॒ योगा॑य क्षत्रयो॒गैर्वो॑ युनज्मि ॥ २ ॥

इन्द्र॒स्यौज॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ सह॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ बलं॒ स्थेन्द्र॑स्य वी॒र्यं१॒ स्थेन्द्र॑स्य नृ॒म्णं स्थ॑ । जि॒ष्णवे॒ योगा॑येन्द्रयो॒गैर्वो॑ युनज्मि ॥ ३ ॥

इन्द्र॒स्यौज॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ सह॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ बलं॒ स्थेन्द्र॑स्य वी॒र्यं१॒ स्थेन्द्र॑स्य नृ॒म्णं स्थ॑ । जि॒ष्णवे॒ योगा॑य सोमयो॒गैर्वो॑ युनज्मि ॥ ४ ॥

इन्द्र॒स्यौज॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ सह॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ बलं॒ स्थेन्द्र॑स्य वी॒र्यं॑१॒ स्थेन्द्र॑स्य
नृ॒म्णं स्थ॑। जि॒ष्णवे॒ योगा॑याप्सु॒योगैर्वो॑ युनज्मि ॥ ५ ॥
इन्द्र॒स्यौज॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ सह॒ स्थेन्द्र॑स्य॒ बलं॒ स्थेन्द्र॑स्य वी॒र्यं॑१॒ स्थेन्द्र॑स्य
नृ॒म्णं स्थ॑। जि॒ष्णवे॒ योगा॑य॒ विश्वा॑नि मा भू॒तान्युप॑ तिष्ठन्तु यु॒क्ता
म॑ आप स्थ ॥ ६ ॥
अ॒ग्नेर्भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त। प्र॒जाप॑तेर्वो॒
धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ ७ ॥
इन्द्र॑स्य भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त।
प्र॒जाप॑तेर्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ ८ ॥
सोम॑स्य भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त।
प्र॒जाप॑तेर्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ ९ ॥
वरु॑णस्य भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त।
प्र॒जाप॑तेर्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ १० ॥ (१३]
मि॒त्रावरु॑णयोर्भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त।
प्र॒जाप॑तेर्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ ११ ॥
य॒मस्य॑ भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त।
प्र॒जाप॑तेर्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ १२ ॥
पि॒तॄ॒णां भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त।
प्र॒जाप॑तेर्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ १३ ॥
दे॒वस्य॑ सवि॒तुर्भा॒ग स्थ॑। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वीर्वर्चो॑ अ॒स्मासु॑ धत्त।
प्र॒जाप॑तेर्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ॥ १४ ॥

यो व॑ आपो॒ऽपां भा॒गो॒३॑प्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॑ देव॒यज॑नः । इ॒दं तमति॑ सृजामि॒ तं माभ्यव॑निक्षि । तेन॒ तम॒भ्यति॑सृजामो॒ यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीय॒ानेन॒ ब्रह्म॑णा॒नेन॒ कर्म॑णा॒नया॑ मे॒न्या ॥ १५ ॥

यो व॑ आपो॒ऽपामू॒र्मिर॒प्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॑ देव॒यज॑नः । इ॒दं तमति॑ सृजामि॒ तं माभ्यव॑निक्षि । तेन॒ तम॒भ्यति॑सृजामो॒ यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒य द्वि॒ष्मः । तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीय॒ानेन॒ ब्रह्म॑णा॒नेन॒ कर्म॑णा॒नया॑ मे॒न्या ॥ १६ ॥

यो व॑ आपो॒ऽपां व॒त्सो॒३॑प्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॑ देव॒यज॑नः । इ॒दं तमति॑ सृजामि॒ तं माभ्यव॑निक्षि । तेन॒ तम॒भ्यति॑सृजामो॒ यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ थं व॒यं द्वि॒ष्मः । तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीय॒ानेन॒ ब्रह्म॑णा॒नेन॒ कर्म॑णा॒नया॑ मे॒न्या ॥ १७ ॥

यो व॑ आपो॒ऽपां वृ॑ष॒भो॒३॑प्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॑ देव॒यज॑नः । इ॒दं तमति॑ सृजामि॒ तं माभ्यव॑निक्षि । तेन॒ तम॒भ्यति॑सृजामो॒ यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीय॒ानेन॒ ब्रह्म॑णा॒नेन॒ कर्म॑णा॒नया॑ मे॒न्या ॥ १८ ॥

यो व॑ आपो॒ऽपां हि॑रण्यग॒र्भो॒३॑प्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॑ देव॒यज॑नः । इ॒दं तमति॑ सृजामि॒ तं माभ्यव॑निक्षि । तेन॒ तम॒भ्यति॑सृजामो॒ यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीय॒ानेन॒ ब्रह्म॑णा॒नेन॒ कर्म॑णा॒नया॑ मे॒न्या ॥ १९ ॥

यो व॑ आपो॒ऽपामश्मा॒ पृश्नि॑र्दि॒व्यो॒३॒॑ऽप्स्व॑१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॑ʃदेव॒यज॑नः ।
इ॒दं तमति॑ सृजामि॒ तं माभ्यव॑निक्षि । तेन॒ तम॒भ्यति॑सृजामो॒
यो॒३॒॑ऽस्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीया॒नेन॒ ब्रह्म॑णा॒नेन॒
कर्म॑णा॒नया॑ मे॒न्या ॥ २० ॥ (१४)

ये व॑ आपो॒ऽपाम॒ग्नयो॒ऽप्स्व॑१॒न्तर्य॑जु॒ष्याʃदेव॒यज॑नाः । इ॒दं तानति॑
सृजामि॒ तान् माभ्यव॑निक्षि । तैस्तम॒भ्यति॑सृजामो॒ यो॒३॒॑ऽस्मान् द्वेष्टि॒
यं व॒यं द्वि॒ष्मः । तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीया॒नेन॒ ब्रह्म॑णा॒नेन॒ कर्म॑णा॒नया॑
मे॒न्या ॥ २१ ॥

यद॑र्वा॒चीनं॑ त्रैहाय॒णादनृ॑तं॒ किं चो॑दि॒म । आपो॑ मा॒ तस्मा॒त् सर्व॑स्माद्
दुरि॒तात् पा॒न्त्वंह॑सः ॥ २२ ॥

स॒मु॒द्रं व॒ः प्र हि॑णोमि॒ स्वां योनि॒मपी॑तन । अरि॑ष्टाः॒ सर्व॑हायसो॒ मा
च॑ नः॒ किं च॒नाम॑मत् ॥ २३ ॥

अ॒रि॒प्रा आपो॒ अप॑ रि॒प्रम॒स्मत् । प्रास्मदेनो॑ दुरि॒तं सु॒प्रती॑काः॒ प्र
दु॒ःष्वप्न्यं॒ प्र मलं॑ वहन्तु ॥ २४ ॥

विष्णोः॒ क्रमो॑ऽसि सपत्न॒हा पृ॑थि॒वीसं॑शितो॒ऽग्नितेजाः । पृ॑थि॒वीमनु॒
वि क्र॑मे॒ऽहं पृ॑थि॒व्यास्तं निर्भ॑जामो॒ यो॒३॒॑ऽस्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः ।
स मा जी॑वी॒त् तं प्रा॒णो ज॑हातु ॥ २५ ॥

विष्णोः॒ क्रमो॑ऽसि सपत्न॒हान्तरि॑क्षसंशितो वा॒युते॑जाः । अ॒न्तरि॑क्षमनु॒
वि क्र॑मे॒ऽहम॒न्तरि॑क्षा॒त् तं निर्भ॑जामो॒ यो॒३॒॑ऽस्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः ।
स मा जी॑वी॒त् तं प्रा॒णो ज॑हातु ॥ २६ ॥

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा द्यौसंशितः सूर्यतेजाः । दिवमनु वि क्रमेऽहं दिवस्तं निर्भजामो यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ॥ २७ ॥

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा दिक्संशितो मनस्तेजाः । दिशोऽनु वि क्रमेऽहं दिग्भ्यस्तं निर्भजामो यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ॥ २८ ॥

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहाशासंशितो वाततेजाः । आशा अनु वि क्रमेऽहमाशाभ्यस्तं निर्भजामो यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ॥ २९ ॥

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नह ऋक्संशितः सामतेजाः । ऋचोऽनु वि क्रमेऽहमृग्भ्यस्तं निर्भजामो यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ॥ ३० ॥ (१५)

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा यज्ञसंशितो ब्रह्मतेजाः । यज्ञमनु वि क्रमेऽहं यज्ञात् तं निर्भजामो यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ॥ ३१ ॥

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहौषधीसंशितः सोमतेजाः । ओषधीरनु वि क्रमेऽहमोषधीभ्यस्तं निर्भजामो यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः । स मा जीवीत् तं प्राणो जहातु ॥ ३२ ॥

विष्णो॒ः क्रमो॑ऽसि सपत्न॒हाप्सुसं॑शितो॒ वरु॑णतेजाः । अ॒पोऽनु॒ वि क्र॑मे॒ऽहम॒द्भ्यस्तं निर्भ॑जामो॒ यो॒३॒॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । स मा जी॑वी॒त् तं प्रा॒णो ज॑हातु ॥ ३३ ॥

विष्णो॒ः क्रमो॑ऽसि सपत्न॒हा कृ॒षिसं॑शि॒तोऽन्न॑तेजाः । कृ॒षिमनु॒ वि क्र॑मे॒हं कृ॒ष्यास्तं निर्भ॑जामो॒ यो॒३॒॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । स मा जी॑वी॒त् तं प्रा॒णो ज॑हातु ॥ ३४ ॥

विष्णो॒ः क्रमो॑ऽसि सपत्न॒हा प्रा॒णसं॑शित॒ः पुरु॑षतेजाः । प्रा॒णमनु॒ वि क्र॑मे॒ऽहं प्रा॒णात् तं निर्भ॑जामो॒ यो॒३॒॑स्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः । स मा जी॑वी॒त् तं प्रा॒णो ज॑हातु ॥ ३५ ॥

जि॒तम॒स्माक॒मुद्भि॑न्नम॒स्माक॑म॒भ्य[ष्ठां विश्वा॒ः पृत॑ना॒ अरा॑तीः । इ॒दम॒हमा॑मुष्याय॒णस्या॒मुष्याः॑ पु॒त्रस्य॒ वर्च॒स्तेजः॑ प्रा॒णमायु॒र्नि वे॑ष्टयामी॒दमे॑नमध॒राञ्चं॑ पादयामि ॥ ३६ ॥

सूर्य॑स्या॒वृत॑म॒न्वाव॑र्ते॒ दक्षि॑णा॒मन्वा॒वृत॑म् । सा मे॒ द्रवि॑णं यच्छतु॒ सा मे॑ ब्राह्मणवर्च॒सम् ॥ ३७ ॥

दिशो॒ ज्योति॑ष्मतीर॒भ्याव॑र्ते । ता मे॒ द्रवि॑णं यच्छन्तु ता मे॑ ब्राह्मणवर्च॒सम् ॥ ३८ ॥

स॒प्तऋ॒षीन॒भ्याव॑र्ते । ते मे॒ द्रवि॑णं यच्छन्तु ते मे॑ ब्राह्मणवर्च॒सम् ॥३९॥

ब्रह्मा॒भ्याव॑र्ते । तन्मे॒ द्रवि॑णं यच्छतु तन्मे॑ ब्राह्मणवर्च॒सम् ।४०। [१६]

ब्रा॒ह्म॒णाँ अ॒भ्याव॑र्ते । ते मे॒ द्रवि॑णं यच्छन्तु॒ ते मे॑ ब्राह्मणवर्च॒सम् ॥४१॥

यं व॒यं मृ॒गया॑महे॒ तं व॒धै स्तृ॑णवामहै । व्या॑त्ते॒ परमे॒ष्ठिनो॒ ब्रह्म॒णापी॑पदाम॒ तम् ॥ ४२ ॥
वै॒श्वा॒न॒रस्य॒ दंष्ट्रा॑भ्यां हे॒तिस्तं सम॑धाद॒भि । इ॒यं तं प्सा॒त्वाहु॑तिः स॒मिद् दे॒वी सही॑यसी ॥ ४३ ॥
राज्ञो॒ वरु॑णस्य ब॒न्धोऽसि । सो॒ऽ॒मुमा॑मुष्याय॒णम॒मुष्याः॑ पु॒त्रमन्ने॑ प्रा॒णे ब॑धान ॥ ४४ ॥
यत् ते॒ अन्नं॑ भुवस्पत आक्षि॒यति॑ पृथि॒वीमनु॑ । तस्य॑ न॒स्त्वं भु॑वस्पते सं॒प्रय॑च्छ प्रजापते ॥ ४५ ॥
अ॒पो दि॒व्या अ॑चायिषं॒ रसे॑न सम॑पृक्ष्महि । पय॑स्वानग्न॒ आग॑मं॒ तं मा॒ सं सृ॑ज॒ वर्च॑सा ॥ ४६ ॥
सं मा॑ग्ने॒ वर्च॑सा सृज॒ सं प्र॒जया॒ समायु॑षा । वि॒द्युर्मे॑ अ॒स्य दे॒वा इन्द्रो॑ विद्यात् स॒ह ऋषि॑भिः ॥ ४७ ॥
यद॑ग्ने अ॒द्य मि॑थु॒ना शपा॑तो॒ यद् वा॒चस्तृ॒ष्टं ज॒नय॑न्त रे॒भाः । म॒न्योर्मन॑सः शर॒व्या॒३ जाय॑ते॒ या तया॑ विध्य॒ हृद॑ये यातु॒धाना॑न् ॥ ४८ ॥
परा॑ शृणीहि॒ तप॑सा यातु॒धाना॒न् परा॑ग्ने॒ रक्षो॒ हर॑सा शृणीहि । परा॒र्चिषा॒ मूर॑देवां छृणीहि॒ परा॑सु॒तृपः॒ शोशु॑चतः शृणीहि ॥ ४९ ॥
अ॒पाम॑स्मै॒ वज्रं॒ प्र ह॑रामि॒ चतु॑र्भृष्टिं शीर्ष॒भिद्या॑य वि॒द्वान् । सो अ॒स्याङ्गा॑नि॒ प्र शृ॑णातु॒ सर्वा॒ तन्मे॑ दे॒वा अनु॑ जानन्तु॒ विश्वे॑ ॥ ५० ॥ (१७)
[३।१]

—:o:—

सूक्त ६

ऋषिः—बृहस्पतिः ॥ देवता— वनस्पतिः; फालमणिः; ३ आपः ॥ छन्दः—१, ४, २१ गायत्री; २, ३, १८, १९, २२, २८—३०, ३२—३४ अनुष्टुप्। ५, ३१ षट्पदा जगती; ६ सप्तपदा विराट् शक्वरी; ७—९ अष्टपदाऽष्टिः; १० नवपदा धृतिः; ११, २०, २३—२७ पथ्या पङ्क्तिः। १२—२७ त्र्यवसाना (?; सप्तपदा) शक्वरी; ३५ पञ्चपदाऽनु (त्र्यनु) ष्टुब्गर्भा जगती ॥ मन्त्र ३५ ।

अरा॒ती॒योर्भ्रातृ॑व्यस्य दु॒र्हार्दो॑ द्विष॒तः शिर॑ः। अपि॑ वृश्चा॒म्योज॑सा ॥१॥

वर्म॒ मह्य॑म॒यं म॒णिः फाला॑ज्जा॒तः क॑रिष्यति। पू॒र्णो॑ म॒न्थेन॒ माग॑म॒द् रसे॑न स॒ह वर्च॑सा ॥ २ ॥

यत् त्वा॑ शि॒क्वः प॒राव॑धी॒त् तक्षा॒ हस्ते॑न॒ वास्या॑। आप॑स्त्वा॒ तस्मा॑ज्जीव॒लाः पु॒नन्तु॒ शुच॑य॒ः शुचि॑म् ॥ ३ ॥

हिर॑ण्यस्रग॒यं म॒णिः श्र॒द्धां य॒ज्ञं महो॒ दध॑त्। गृ॒हे व॑सतु॒ नोऽति॑थिः ॥४॥

तस्मै॑ घृ॒तं सुरां॒ मध्वन्न॑मन्नं क्षदामहे। स न॑ः पि॒तेव॑ पत्रेभ्य॒ः श्रेय॑ःश्रेयश्चिकित्सतु॒ भूयो॑भूय॒ः श्वःश्वो॑ दे॒वेभ्यो॑ म॒णिरेत्य॑ ॥ ५ ॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्म॒णिं फाल॑ं घृत॒श्चुत॑मु॒ग्रं ख॑दि॒रमोज॑से। तम॒ग्निः प्रत्य॑मुञ्चत॒ सो अ॑स्मै दुह॒ आज्य॒ं भूयो॑भूय॒ः श्वःश्व॒स्तेन॒ त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥ ६ ॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्म॒णिं फाल॑ं घृत॒श्चुत॑मु॒ग्रं ख॑दि॒रमोज॑से। तमिन्द्र॒ः प्रत्य॑मुञ्च॒तौज॑से वी॒र्या॑य॒ कम्। सो अ॑स्मै॒ बल॒मिद् दु॑हे॒ भूयो॑भूय॒ः श्वःश्व॒स्तेन॒ त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥ ७ ॥

यमबध्नाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्चुतमुग्रं खदिरमोजसे । तं सोमः प्रत्यमुञ्चत महे श्रोत्राय चक्षसे । सो अस्मै वर्च इद् दुहे भूयोभयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ॥ ८ ॥

यमबध्नाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्चुतमुग्रं खदिरमोजसे । तं सूर्यः प्रत्यमुञ्चत तेनेमा अजयद् दिशः । सो अस्मै भूतिमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ॥ ९ ॥

यमबध्नाद् बृहस्पतिर्मणिं फालं घृतश्चुतमुग्रं खदिरमोजसे । तं बिभ्रच्चन्द्रमा मणिमसुराणां पुरोऽजयद् दानवानां हिरण्ययीः । सो अस्मै श्रियमिद् दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ॥ १० ॥

(१८)

यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । सो अस्मै वाजिनं दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ॥ ११ ॥

यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशवे । तेनेमां मणिना कृषिमश्विनावभि रक्षतः । स भिषग्भ्यां महो दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ॥ १२ ॥

यमबध्नाद् बृहस्पतिर्वाताय मणिमाशव । तं बिभ्रत् सविता मणिं तेनेदमजयत् स्वः । सो अस्मै सूनृतां दुहे भूयोभूयः श्वःश्वस्तेन त्वं द्विषतो जहि ॥ १३ ॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॒र्वाता॑य म॒णिमा॒शवे॑। तमा॑पो॒ बिभ्र॑तीर्म॒णिं सदा॑ धाव॒न्त्यक्षि॑ताः। स आ॑भ्यो॒ऽमृत॒मिद् दु॑हे॒ भूयो॑भूय॒ः श्वःश्व॒स्तेन त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥ १४ ॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॒र्वाता॑य म॒णिमा॒शवे॑। तं रा॒जा वरु॑णो म॒णिं प्रत्य॑मुञ्चत शं॒भुव॑म्। सो अ॑स्मै स॒त्यमिद् दु॑हे॒ भूयो॑भूय॒ः श्वःश्व॒स्ते॒न त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥ १५ ॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॒र्वाता॑य म॒णिमा॒शवे॑। तं दे॒वा बिभ्र॑तो म॒णिं सर्वां॑ल्लो॒कान् यु॒धाज॑यन्। स ए॑भ्यो॒ जिति॒मिद् दु॑हे॒ भूयो॑भूय॒ः श्वःश्व॒स्ते॒न त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥ १६ ॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॒र्वाता॑य म॒णिमा॒शवे॑। तमि॒मं दे॒वता॑ म॒णिं प्रत्य॑मुञ्चन्त शं॒भुव॑म्। स आ॑भ्यो॒ विश्व॒मिद् दु॑हे॒ भूयो॑भूय॒ः श्वःश्वस्ते॒न त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥ १७ ॥

ऋ॒तव॒स्तम॑बध्नतार्त॒वास्तम॑बध्नत। सं॒व॒त्स॒रस्तं ब॒द्ध्वा सर्वं॑ भू॒तं वि र॑क्षति ॥ १८ ॥

अ॒न्त॒र्दे॒शा अ॑बध्नत प्र॒दिश॒स्तम॑बध्नत। प्र॒जाप॑तिसृष्टो म॒णिर्द्वि॑ष॒तो मेऽध॑राँ अकः ॥ १९ ॥

अथ॑र्वाणो अबध्नताथर्व॒णा अ॑बध्नत। तैर्मे॒दिनो॒ अङ्गि॑रसो॒ दस्यू॑नां बिभिदु॒ः पुर॒स्तेन॒ त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥ २० ॥ (१९)

तं धा॒ता प्रत्य॑मुञ्चत॒ स भू॒तं व्य॑कल्पयत्। तेन॒ त्वं द्वि॑ष॒तो ज॑हि ॥२१॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्दे॒वेभ्यो॒ असु॑रक्षितिम्। स मा॒यं म॒णिराग॑म॒द् रसे॑न स॒ह वर्च॑सा ॥ २२ ॥

यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्दे॒वेभ्यो॒ असु॑रक्षितिम् । स मा॒यं म॒णिराग॑मत् स॒ह
गोभि॑रजा॒त्रिभि॒रन्ने॑न प्र॒जया॑ स॒ह ॥ २३ ॥
यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्दे॒वेभ्यो॒ असु॑रक्षितिम् । स मा॒यं म॒णिराग॑मत्
स॒ह व्री॑हियवाभ्यां म॒ह॑सा भू॒त्या॑ स॒ह ॥ २४ ॥
यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्दे॒वेभ्यो॒ असु॑रक्षितिम् । स मा॒यं म॒णिराग॑म॒न्मधो॑-
घृ॒तस्य॒ धार॑या की॒लाले॑न म॒णिः स॒ह ॥ २५ ॥
यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्दे॒वेभ्यो॒ असु॑रक्षितिम् । स मा॒यं म॒णिराग॑मदू॒र्जया॒
पय॑सा स॒ह द्रवि॑णेन श्रि॒या स॒ह ॥ २६ ॥
यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्दे॒वेभ्यो॒ असु॑रक्षितिम् । स मा॒यं म॒णिराग॑म॒त्
तेज॑सा॒ त्विष्या॑ स॒ह यश॑सा की॒र्त्या] स॒ह ॥ २७ ॥
यमब॑ध्ना॒द् बृह॒स्पति॑र्दे॒वेभ्यो॒ असु॑रक्षितिम् । स मा॒यं म॒णिराग॑म॒त्
सर्वा॑भि॒र्भूति॑भिः स॒ह ॥ २८ ॥
तमि॒मं दे॒वता॑ म॒णिं मह्यं॑ ददतु॒ पुष्ट॑ये । अ॒भि॒भुं क्ष॑त्र॒वर्ध॑नं सपत्न॒दम्भ॑नं
म॒णिम् ॥ २९ ॥
ब्रह्म॑णा॒ तेज॑सा स॒ह प्रति॑ मुञ्चामि मे शि॒वम् । अ॒स॒प॒त्नः स॑पत्न॒हा
स॒पत्ना॒न् मेऽध॑राँ अकः ॥ ३० ॥ (२०)
उत्त॑रं द्विष॒तो माम॒यं म॒णिः कृ॑णोतु देव॒जाः । यस्य॑ लो॒का इ॒मे त्रय॒ः
पयो॑ दु॒ग्धमु॒पास॑ते । स मा॒यमधि॑ रोहतु म॒णिः श्रैष्ठ्या॑य मूर्ध॒तः ॥३१॥
यं दे॒वाः पि॒तरो॑ मनु॒ष्या] उप॒जीव॑न्ति स॒र्वदा । स मा॒यमधि॑ रोहतु
म॒णिः श्रैष्ठ्या॑य मूर्ध॒तः ॥ ३२ ॥

यथा बीजमुर्वरायां कृष्टे फालेन रोहति । एवा मयि प्रजा पशवोऽन्न-
मन्नं वि रोहतु ॥ ३३ ॥
यस्मै त्वा यज्ञवर्धन मणे प्रत्यमुचं शिवम् । तं त्वं शतदक्षिण मणे
श्रैष्ठ्याय जिन्वतात् ॥ ३४ ॥
एतमिध्मं समाहितं जुषाणो अग्ने प्रति हर्य होमैः । तस्मिन् विदेम
सुमतिं स्वस्ति प्रजां चक्षुः पशून्त्समिद्धे जातवेदसि ब्रह्मणा ॥ ३५ ॥
(२१) [३।२]

—:०:—

सूक्त ७

ऋषिः— अथर्वा ॥ देवता—स्कम्भः; अध्यात्मम् ॥ छन्दः — १ विराड् जगती, २, ८ भुरिक् त्रिष्टुप्; ३—६, ६, ३८, ४२, ४३ त्रिष्टुप ७, १३ परोष्णिक्; १०, १४, १६, १८, १६ उपरिष्टाद् बृहती; ११, १२, १५, २०, २२, ३६ उपरिष्टाज्ज्योति-र्जगती; १७ षट्पदा जगती; २१ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप्; २३—३०, ३७, ४० अनुष्टुप्; ३१ मध्ये ज्योतिर्जगती; ३२, ३४, ३६ उपरिष्टाद् विराड् बृहती; ३३ पराविराड-नुष्टुप्; ३५ चतुष्पदा जगती; ४१ आर्षी त्रिपदा गायत्री; ४४ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप्; पञ्चपदा निचृद् पदपङ्क्तिर्वा (एकावसाना) ॥ मन्त्र ४४ ।

कस्मिन्नङ्गे तपो अस्याधि तिष्ठति कस्मिन्नङ्ग ऋतमस्याध्याहितम् ।
क्व व्रतं क्व श्रद्धास्य तिष्ठति कस्मिन्नङ्गे सत्यमस्य प्रतिष्ठितम् ॥१॥
कस्मादङ्गाद् दीप्यते अग्निरस्य कस्मादङ्गात् पवते मातरिश्वा । कस्मा-
दङ्गाद् वि मिमीतेऽधि चन्द्रमा मह स्कम्भस्य मिमानो अङ्गम् ॥२॥
कस्मिन्नङ्गे तिष्ठति भूमिरस्य कस्मिन्नङ्गे तिष्ठत्यन्तरिक्षम् । कस्मिन्नङ्गे
तिष्ठत्याहिता द्यौः कस्मिन्नङ्गे तिष्ठत्युत्तरं दिवः ॥ ३ ॥

क्व॑१॒ प्रेप्स॑न् दीप्यत ऊ॒र्ध्वो अ॒ग्निः क्व॑१॒ प्रेप्स॑न् पवते मात॒रिश्वा॑ ।
यत्र॒ प्रेप्स॑न्तीरभि॒यन्त्या॒वृत॑ः स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥४॥
क्वा∫र्धमा॒साः क्व∫यन्ति॒ मासा॑ः संवत्स॒रेण॑ स॒ह सँविदा॒नाः । यत्र॒
यन्त्यृ॒तवो॒ यत्रा॑र्त॒वाः स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥ ५ ॥
क्व॑१॒ प्रेप्स॑न्ती युव॒ती विरूपे अहोरा॒त्रे द्र॑वतः संविदा॒ने । यत्र॒
प्रेप्स॑न्तीरभि॒यन्त्याप॑ः स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥ ६ ॥
यस्मि॑न्त्स्त॒ब्ध्वा प्र॒जाप॑तिर्लो॒कान्त्सर्वाँ॒ अधा॑रयत् । स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि
कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥ ७ ॥
यत् प॑र॒मम॑व॒मं यच्च॑ मध्य॒मं प्र॒जाप॑तिः ससृ॒जे वि॒श्वरू॑पम् । किय॑ता
स्क॒म्भः प्र वि॑वेश॒ तत्र॒ यन्न प्रावि॑श॒त् किय॒त् तद् ब॑भूव ॥ ८ ॥
किय॑ता स्क॒म्भः प्र वि॑वेश भू॒तं किय॑द् भवि॒ष्यद॒न्वाश॑येऽस्य । एक॒ं
यदङ्ग॒मकृ॑णोत् सहस्र॒धा किय॑ता स्क॒म्भः प्र वि॑वेश॒ तत्र॑ ॥ ९ ॥
यत्र॑ लो॒कांश्च॒ कोशां॒श्चापो॒ ब्रह्म॒ जना॑ वि॒दुः । अस॑च्च॒ यत्र॒ सच्चा॒न्तः
स्क॒म्भ तं ब्रू॑हि कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥ १० ॥ (२२)
यत्र॒ तप॑ः परा॒क्रम्य॑ व्र॒तं धा॒रय॒त्युत्त॑रम् । ऋ॒तं च॒ यत्र॑ श्र॒द्धा चापो॒
ब्रह्म॑ स॒माहिताः स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥ ११ ॥
यस्मि॒न् भूमि॑र॒न्तरि॑क्षं॒ द्यौर्यस्मि॒न्नध्याहि॑ता । यत्रा॒ग्निश्च॒न्द्रमा॒ः सूर्यो॒
वात॒स्तिष्ठ॒न्त्यार्पि॑ताः स्क॒म्भ तं ब्रू॑हि कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥ १२ ॥
यस्य॒ त्रय॑स्त्रिंशद् दे॒वा अङ्गे॒ सर्वे॑ स॒माहि॑ताः । स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि
कत॒मः स्वि॑दे॒व सः ॥ १३ ॥

यत्र ऋषयः प्रथमजा ऋचः साम यजुर्मही। एकर्षिर्यस्मिन्नार्पितः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥ १४ ॥

यत्रामृतं च मृत्युश्च पुरुषेऽधि समाहिते। समुद्रो यस्य नाड्यः पुरुषेऽधि समाहिताः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥ १५ ॥

यस्य चतस्रः प्रदिशो नाड्य१स्तिष्ठन्ति प्रथमाः। यज्ञो यत्र पराक्रान्तः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥ १६ ॥

ये पुरुषे ब्रह्म विदुस्ते विदुः परमेष्ठिनम्। यो वेद परमेष्ठिनं यश्च वेद प्रजापतिम्। ज्येष्ठं ये ब्राह्मणं विदुस्ते स्कम्भमनुसंविदुः ॥ १७ ॥

यस्य शिरो वैश्वानरश्चक्षुरङ्गिरसोऽभवन्। अङ्गानि यस्य यातवः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥ १८ ॥

यस्य ब्रह्म मुखमाहुर्जिह्वां मधुकशामुत। विराजमूधो यस्याहुः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥ १९ ॥

यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्। सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥२०॥ (२३)

असच्छाखां प्रतिष्ठन्तीं परममिव जना विदुः। उतो सन्मन्यन्तेऽवरे ये ते शाखामुपासते ॥ २१ ॥

यत्रादित्याश्च रुद्राश्च वसवश्च समाहिताः। भूतं च यत्र भव्यं च सर्वे लोकाः प्रतिष्ठिताः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥ २२ ॥

यस्य त्रयस्त्रिंशद् देवा निधिं रक्षन्ति सर्वदा। निधिं तमद्य को वेद यं देवा अभिरक्षथ ॥ २३ ॥

यत्र॑ दे॒वा ब्र॑ह्म॒विदो॒ ब्रह्म॑ ज्ये॒ष्ठमु॒पास॑ते । यो वै तान् वि॒द्यात् प्र॒त्यक्षं॒
स ब्र॒ह्मा वेदि॑ता स्यात् ॥ २४ ॥
बृ॒हन्तो॒ नाम॒ ते दे॒वा येऽस॑त॒ः परि॑ ज॒ज्ञिरे । एकं॒ तदङ्गं॑ स्क॒म्भस्यास॑-
दाहुः प॒रो जना॑ः ॥ २५ ॥
यत्र॑ स्क॒म्भः प्र॑ज॒नय॑न् पु॒रा॒णं व्यव॑र्तयत् । एकं॒ तदङ्गं॑ स्क॒म्भस्य॑
पु॒रा॒णम॑नु॒संवि॑दुः ॥ २६ ॥
यस्य॒ त्रय॑स्त्रिंशद् दे॒वा अङ्गे॒ गात्रा॑ विभेजि॒रे । तान् वै त्रय॑स्त्रिंशद्
दे॒वानेके॑ ब्रह्म॒विदो॑ विदुः ॥ २७ ॥
हि॒र॒ण्य॒ग॒र्भं प॑र॒मम॑नत्यु॒द्यं जना॑ विदुः । स्क॒म्भस्तदग्रे॒ प्रासि॑ञ्चद्धिर॑ण्यं
लो॒के अ॒न्तरा ॥ २८ ॥
स्क॒म्भे लो॒काः स्क॒म्भे तप॑ः स्क॒म्भेऽध्यृ॒तमाहि॑तम् । स्कम्भं॑ त्वा वेद
प्र॒त्यक्ष॒मिन्द्रे॒ सर्वं॑ स॒माहि॑तम् ॥ २९ ॥
इन्द्रे॑ लो॒का इन्द्रे॒ तप॒ इन्द्रेऽध्यृ॒तमाहि॑तम् । इन्द्रं॑ त्वा वेद प्र॒त्यक्षं॑
स्क॒म्भे सर्वं॒ प्रति॑ष्ठितम् ॥ ३० ॥ (२४)
नाम॒ नाम्ना॑ जोहवीति पु॒रा सूर्या॑त् पु॒रोषस॑ः । यद॒जः प्र॑थ॒मं सं॑ब॒भूव॒
स ह॒ तत् स्व॒राज्य॑मियाय॒ यस्मा॒न्नान्यत् पर॒मस्ति भू॒तम् ॥ ३१ ॥
यस्य॒ भूमि॑ः प्र॒मान्तरि॑क्षमु॒तोदर॑म् । दिवं॒ यश्च॒क्रे मू॒र्धानं॒ तस्मै॑ ज्ये॒ष्ठाय॒
ब्रह्म॑णे नम॑ः ॥ ३२ ॥
यस्य॒ सूर्य॒श्चक्षु॑श्च॒न्द्रमा॑श्च॒ पुन॑र्णवः । अ॒ग्निं यश्च॒क्र आ॒स्यं॑१ तस्मै॑ ज्ये॒ष्ठाय
ब्रह्म॑णे॒ नम॑ः ॥ ३३ ॥

यस्य वातः प्राणापानौ चक्षुरङ्गिरसोऽभवन् । दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीस्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥ ३४ ॥

स्कम्भो दाधार द्यावापृथिवी उभे इमे स्कम्भो दाधारोर्व१न्तरिक्षम् । स्कम्भो दाधार प्रदिशः षडुर्वीः स्कम्भ इदं विश्वं भुवनमा विवेश ॥ ३५ ॥

यः श्रमात् तपसो जातो लोकान्त्सर्वान्त्समानशे । सोमं यश्चक्रे केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥ ३६ ॥

कथं वातो नेलयति कथं न रमते मनः । किमापः सत्यं प्रेप्सन्तीर्नेलयन्ति कदा चन ॥ ३७ ॥

महद् यक्षं भुवनस्य मध्ये तपसि क्रान्तं सलिलस्य पृष्ठे । तस्मिन् छ्रयन्ते य उ के च देवा वृक्षस्य स्कन्धः परित इव शाखाः ॥ ३८ ॥

यस्मै हस्ताभ्यां पादाभ्यां वाचा श्रोत्रेण चक्षुषा । यस्मै देवाः सदा बलिं प्रयच्छन्ति विमितेऽमितं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ।३९।

अप तस्य हतं तमो व्यावृत्तः स पाप्मना । सर्वाणि तस्मिन् ज्योतींषि यानि त्रीणि प्रजापतौ ॥ ४० ॥

यो वेतसं हिरण्ययं तिष्ठन्तं सलिले वेद । स वै गुह्यः प्रजापतिः ।४१।

तन्त्रमेके युवती विरूपे अभ्याक्रामं वयतः षण्मयूखम् । प्रान्या तन्तूंस्तिरते धत्ते अन्या नाप वृञ्जाते न गमातो अन्तम् ॥ ४२ ॥

तयोरहं परिनृत्यन्त्योरिव न वि जानामि यतरा परस्तात् । पुमानेनद् वयत्युद् गृणत्ति पुमानेनद् वि जभाराधि नाके ॥ ४३ ॥

इ॒मे म॒यूखा॒ उप॑ तस्तभु॒र्दिवं॒ सामा॑नि चक्रु॒स्तस॑राणि॒ वात॑वे ॥ ४४ ॥
(२५)　[४ १]

—:०:—

सूक्त ८

ऋषिः कुत्सः ॥ देवता—अध्यात्मम् ॥ छन्दः—१ उपरिष्टाद् विराड् बृहती; २ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप्; ३, ४, ८, ९. १३, १६—१८, २४, २८, ३५, ३६, ४०, ४४ त्रिष्टुप्; ५ भुरिगनुष्टुप्; ६, १४, १९—२१, २३, २५; २९, ३१—३४, ३७, ३८, ४१, ४३ अनुष्टुप्; ७ पराबृहती; १० अनुष्टुब्गर्भा त्रिष्टुप्; ११ जगती; १२ पुरोबृहती त्रिष्टुब्गर्भाऽऽर्षी पङ्क्तिः; १५ २७ भुरिग्बृहती; २२, पुरउष्णिक्; २६ द्व्युष्णिग्गर्भाऽनुष्टुप्; ३० भुरिक् त्रिष्टुप्; ३९ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप्; ४२ (त्रिपदा, विराड् गायत्री ॥ मन्त्र ४४ ।

यो भू॒तं च॒ भव्यं॑ च॒ सर्वं॒ यश्चा॑धि॒तिष्ठ॑ति । स्व॒१॒र्यस्य॑ च॒ केव॑लं॒ तस्मै॑
ज्ये॒ष्ठाय॒ ब्रह्म॑णे॒ नमः॑ ॥ १ ॥
स्क॒म्भेने॒मे विष्ट॑भिते॒ द्यौश्च॒ भूमि॑श्च तिष्ठतः । स्क॒म्भ इ॒दं सर्व॑मा॒त्मन्व॒द्
यत् प्रा॒णन्नि॑मि॒षच्च॒ यत् ॥ २ ॥
ति॒स्रो ह॑ प्र॒जा अ॑त्या॒यमा॑य॒न् न्य॑१॒न्या अ॒र्कम॒भितो॑ऽविशन्त । बृ॒हन्
ह॑ तस्थौ॒ रज॑सो वि॒मानो॒ हरि॑तो॒ हरि॑णी॒रा वि॑वेश ॥ ३ ॥
द्वाद॑श प्र॒धय॑श्च॒क्रमेकं॒ त्रीणि॒ नभ्या॑नि॒ क उ॒ तच्चि॑केत । तत्राह॑ता॒स्त्रीणि॑
श॒तानि॑ श॒ङ्कवः॑ ष॒ष्टिश्च॒ खीला॒ अवि॑चाचला॒ ये ॥ ४ ॥
इ॒दं स॑वित॒र्वि जा॑नीहि॒ षड् य॒मा एक॑ एक॒जः । तस्मि॑न् हापि॒त्व-
मि॑च्छन्ते॒ य ए॑षा॒मेक॑ एक॒जः ॥ ५ ॥
आ॒विः सन्निहि॑तं॒ गुहा॒ जर॒न्नाम॑ म॒हत् प॒दम् । तत्रे॒दं सर्व॒मार्पि॑त॒मेज॑त्
प्रा॒णत् प्रति॑ष्ठितम् ॥ ६ ॥

एक॑चक्रं वर्तत॒ एक॑नेमि स॒हस्रा॑क्षरं॒ प्र पु॒रो नि प॒श्चा । अ॒र्धेन॒ विश्वं॒
भुव॑नं ज॒जान॒ यद॑स्या॒र्धं क्व१॒॑ तद् ब॑भूव ॥ ७ ॥
प॒ञ्च॒वा॒ही व॑हत्यग्रमेषां॒ प्रष्ट॑यो यु॒क्ता अ॑नु॒संव॑हन्ति । अया॑तमस्य
ददृशे न या॒तं पर॒ं नेदी॒योऽव॑रं॒ दवी॑यः ॥ ८ ॥
ति॒र्यग्बि॑लश्चम॒स ऊ॒र्ध्वबु॑ध्न॒स्तस्मि॒न् यशो॒ निहि॑तं वि॒श्वरू॑पम् । तदा॑सत॒
ऋष॑यः स॒प्त सा॒कं ये अ॒स्य गो॒पा म॑ह॒तो ब॑भू॒वुः ॥ ९ ॥
या पु॒रस्ता॑द् यु॒ज्यते॒ या च॑ प॒श्चाद् या वि॒श्वतो॑ यु॒ज्यते॒ या च॑
स॒र्वतः॑ । यया॑ य॒ज्ञः प्राङ् ता॒यते॒ तां त्वा॑ पृच्छामि कत॒मा सर्चाम्
॥ १० ॥ (२६)

यदेज॑ति॒ पत॑ति॒ यच्च॒ तिष्ठ॑ति प्रा॒णदप्रा॑णन्निमि॒षच्च॒ यद् भुव॑त् ।
तद् दा॑धार पृथि॒वीं वि॒श्वरू॑पं तत् सं॒भूय॑ भवत्येक॑मे॒व ॥ ११ ॥
अ॒नन्तं॒ वित॑तं पुरु॒त्रान॒न्तमन्त॑वच्चा॒ सम॑न्ते । ते ना॑कपा॒लश्च॑रति
वि॒चिन्व॒न् वि॒द्वान् भू॒तमु॒त भव्य॑मस्य ॥ १२ ॥
प्र॒जाप॑तिश्चरति॒ गर्भे॑ अ॒न्तरदृ॑श्यमानो बहु॒धा वि जा॑यते । अ॒र्धेन॒ विश्वं॒
भुव॑नं ज॒जान॒ यद॑स्या॒र्धं क॑त॒मः स के॒तुः ॥ १३ ॥
ऊ॒र्ध्वं भर॑न्तमुद॒कं कु॒म्भेने॑वोदहा॒र्य॑म् । पश्य॑न्ति॒ सर्वे॒ चक्षु॑षा॒ न सर्वे॒
मन॑सा विदुः ॥ १४ ॥
दू॒रे पू॒र्णेन॑ वसति दू॒र ऊ॒नेन॑ हीयते । म॒हद् य॒क्षं भुव॑नस्य॒ मध्ये॒ तस्मै॑
ब॒लिं रा॑ष्ट्र॒भृतो॑ भरन्ति ॥ १५ ॥
यतः॒ सूर्य॑ उ॒देत्यस्तं॒ यत्र॑ च॒ गच्छ॑ति । तदे॒व मन्ये॒ऽहं ज्ये॒ष्ठं तदु॒
नात्ये॑ति॒ किं च॒न ॥ १६ ॥

ये अ॒र्वाङ् मध्य॑ उ॒त वा॑ पुरा॒णं वेदं᳚ वि॒द्वांस॑म॒भितो॒ वद॑न्ति । आ॒दि॒त्य-
मे॒व ते परि॑ वदन्ति॒ सर्वे᳚ अ॒ग्निं द्वि॒तीयं᳚ त्रि॒वृतं᳚ च हं॒सम् ॥ १७ ॥
स॒ह॒स्रा॒ह्ण्यं वियं॑तावस्य प॒क्षौ हरे॑र्हं॒सस्य॒ पत॑तः स्व॒र्गम् । स दे॒वान्त्सर्वा॒-
नुर॑स्युप॒दद्य॑ सं॒पश्य॑न् याति॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑ ॥ १८ ॥
स॒त्येनो॒र्ध्वस्त॑पति॒ ब्रह्म॑णा॒र्वाङ् वि प॑श्यति । प्रा॒णेन॑ ति॒र्यङ् प्राण॑ति॒
यस्मि॑न् ज्ये॒ष्ठमधि॑ श्रि॒तम् ॥ १९ ॥
यो वै ते वि॒द्याद॒रणी॒ याभ्यां᳚ निर्म॒थ्यते॒ वसु॑ । स वि॒द्वान् ज्ये॒ष्ठं म॑न्येत॒
स वि॑द्याद् ब्राह्म॑णं म॒हत् ॥ २० ॥ (२७)
अ॒पादग्रे॒ सम॑भव॒त् सो अग्रे॒ स्वं१॒राभ॑रत् । चतु॑ष्पाद् भू॒त्वा भोग्यः॒
सर्व॒माद॑त्त॒ भोज॑नम् ॥ २१ ॥
भोग्यो᳚ भव॒दथो॒ अन्न॑मदद् ब॒हु । यो दे॒वमु॑त्त॒राव॑न्तमु॒पासा॑तै सना॒त-
न॑म् ॥ २२ ॥
स॒ना॒तन॑मेनमाहुरु॒ताद्य स्या॒त् पुन॑र्णवः । अ॒हो॒रा॒त्रे प्र जा॑येते अ॒न्यो
अ॒न्यस्य॑ रू॒पयोः᳚ ॥ २३ ॥
श॒तं स॒ह॒स्रम॒युतं॒ न्य१॒र्बुदमसंख्ये॒यं स्वम॑स्मि॒न् निवि॑ष्टम् । तद॑स्य
घ्नन्त्यभि॒पश्य॑त ए॒व तस्मा॑द् दे॒वो रो॑चत ए॒ष ए॒तत् ॥ २४ ॥
बा॒लादेक॑मणीय॒स्कमु॒तैकं॒ नेव॑ दृश्यते । त॒तः परि॑ष्वजीयसी दे॒वता॒ सा
मम॑ प्रि॒या ॥ २५ ॥
इ॒यं क॑ल्याण्य॑१॒जरा॒ मर्त्य॑स्या॒मृता॑ गृ॒हे । यस्मै॑ कृ॒ता शये॒ स यश्च॒कार॑
ज॒जार॒ सः ॥ २६ ॥

त्वं स्त्री त्वं पुमा॑नसि॒ त्वं कु॑मा॒र उ॒त वा॑ कु॒मारी । त्वं जी॒र्णो द॒ण्डेन॑
व॒ञ्चसि॒ त्वं जा॒तो भ॑वसि वि॒श्वतो॑मुखः ॥ २७ ॥
उ॒तैषां॑ पि॒तोत वा॑ पु॒त्र ए॑षामु॒तैषां॑ ज्ये॒ष्ठ उ॒त वा॑ कनि॒ष्ठः । एको॑ ह
दे॒वो मन॑सि॒ प्रवि॑ष्टः प्रथ॒मो जा॒तः स उ॒ गर्भे॑ अ॒न्तः ॥ २८ ॥
पू॒र्णात् पू॒र्णमुद॑चति पू॒र्णं पू॒र्णेन॑ सिच्यते । उ॒तो तद॒द्य वि॑द्याम॒ यत॒स्तत्
प॑रिषि॒च्यते॑ ॥ २९ ॥
ए॒षा स॒नत्नी॒ सन॑मे॒व जा॒तैषा पु॑रा॒णी परि॒ सर्वं॑ बभूव । म॒ही दे॒व्यु॑१॒षसो॑
वि॒भाति॒ सैके॑नैकेन मिष॒ता वि च॑ष्टे ॥ ३० ॥ (२८)
अ॒वि॒र्वै नाम॑ दे॒वत॒र्तेना॑स्ते॒ परी॑वृता । तस्या॑ रू॒पेणे॒मे वृ॒क्षा हरि॑ता॒
हरि॑तस्रजः ॥ ३१ ॥
अन्ति॒ सन्तं॒ न ज॑हा॒त्यन्ति॒ सन्तं॒ न प॑श्यति । दे॒वस्य॑ पश्य॒ काव्यं॒ न
म॑मार॒ न जी॑र्यति ॥ ३२ ॥
अ॒पूर्वेणे॑षि॒ता वाच॒स्ता व॑दन्ति यथाय॒थम् । वद॑न्ती॒र्यत्र॒ गच्छ॑न्ति॒
तदा॑हु॒र्ब्राह्म॑णं म॒हत् ॥ ३३ ॥
यत्र॑ दे॒वाश्च॑ मनु॒ष्या[श्चा॒रा नाभा॑विव श्रि॒ताः । अ॒पां त्वा॒ पुष्पं॑ पृच्छामि॒
यत्र॒ तन्मा॒यया॑ हि॒तम् ॥ ३४ ॥
येभि॒र्वात॑ इषि॒तः प्र॒वाति॒ ये दद॑न्ते॒ पञ्च॒ दिशः॑ स॒ध्रीचीः॑ । य
आहु॑तिम॒त्यम॑न्यन्त दे॒वा अ॒पां ने॒तारः॑ कत॒मे त आ॑सन् ॥ ३५ ॥
इ॒मामे॑षां पृथि॒वीं वस्त॒ एको॒ऽन्तरि॑क्षं॒ पर्येको॑ बभूव । दिव॑मेषां ददते॒
यो वि॑ध॒र्ता विश्वा॒ आशाः॒ प्रति॑ रक्षन्त्येके॑ ॥ ३६ ॥

यो वि॒द्यात् सूत्रं॒ वित॑तं॒ यस्मि॒न्नोताः॑ प्र॒जा इ॒माः । सूत्रं॒ सूत्र॑स्य॒ यो
वि॒द्यात् स वि॑द्या॒द् ब्राह्म॑णं म॒हत् ॥ ३७ ॥
वेदा॒हं सूत्रं॒ वित॑तं॒ यस्मि॒न्नोताः॑ प्र॒जा इ॒माः । सूत्रं॒ सूत्र॑स्या॒हं वे॒दाथो॒
यद् ब्राह्म॑णं म॒हत् ॥ ३८ ॥
यद॑न्त॒रा द्यावा॑पृथि॒वी अ॒ग्निरैत् प्र॒दह॑न् विश्वदा॒व्यऽः । यत्राति॑ष्ठ॒न्नेक॑-
पत्नीः प॒रस्ता॒त् क्वेऽवासीन्मात॒रिश्वा॑ त॒दानी॑म् ॥ ३९ ॥
अ॒प्स्वाऽसीन्मात॒रिश्वा॒ प्रवि॑ष्ट॒ः प्रवि॑ष्टा दे॒वाः स॑लि॒लान्या॑सन् । बृ॒हन्
ह॑ तस्थौ॒ रज॑सो वि॒मान॒ः पव॑मानो ह॒रित॒ आ वि॑वेश ॥ ४० ॥
उत्त॑रेणेव गाय॒त्रीम॒मृतेऽधि॒ वि च॑क्रमे । साम्ना॒ ये साम॑ संवि॒दुर॒जस्तद्
द॑दृशे॒ क्वऽ ॥ ४१ ॥
नि॒वेश॑नः स॒ंगम॑नो॒ वसू॑नां दे॒व इ॑व सवि॒ता स॒त्यध॑र्मा । इन्द्रो॒ न त॑स्थौ
सम॒रे धना॑नाम् ॥ ४२ ॥
पु॒ण्डरी॑कं॒ नव॑द्वारं त्रि॒भिर्गु॒णेभि॒रावृ॑तम् । तस्मि॒न् यद् य॒क्षमा॑त्म॒न्वत्
तद् वै ब्रह्म॒विदो॑ विदुः ॥ ४३ ॥
अ॒का॒मो धीरो॑ अ॒मृत॑ः स्वय॒ंभू रसे॑न तृ॒प्तो न कुत॑श्च॒नोन॑ः । तमे॒व वि॒द्वान्
न बिभाय मृ॒त्योरा॒त्मानं॒ धीर॑म॒जरं॒ युवा॑नम् ॥४४॥ (२९) [४।२]

—:०:—

सूक्त ९

ऋषिः— अथर्वा ।। देवता— शतौदना ।। छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २—११, १३—२४ अनुष्टुप्; १२ पथ्यापङ्क्तिः; २५ द्व्युष्णिग्गर्भाऽनुष्टुप्; २६ पञ्चपदा बृहत्यनुष्टुबुष्णिग्गर्भा जगती; २७ पञ्चपदाऽतिजागताऽनुष्टुब्गर्भा शक्वरी ।। मन्त्र २७ ।

अ॒घा॒य॒तामपि॑ नह्या॒ मुखा॑नि स॒पत्ने॑षु॒ वज्र॑मर्पये॒तम् । इन्द्रे॑ण द॒त्ता
प्र॑थ॒मा श॒तौद॑ना भ्रातृव्य॒घ्नी यज॑मानस्य गा॒तु ॥ १ ॥

वेदि॑ष्टे॒ चर्म॑ भवतु ब॒र्हिर्लोमा॑नि॒ यानि॑ ते । ए॒षा त्वा॑ रश॒नाग्र॑भी॒द्
ग्रावा॑ त्वै॒षोऽधि॑ नृत्यतु ॥ २ ॥
वाला॑स्ते॒ प्रोक्ष॑णीः सन्तु जि॒ह्वा सं मा॑र्ष्ट्वघ्न्ये । शु॒द्धा त्वं य॒ज्ञिया॑
भू॒त्वा दि॒वं प्रे॑हि शतौदने ॥ ३ ॥
यः श॒तौद॑ना॒ं पच॑ति काम॒प्रेण॒ स क॑ल्पते । प्री॒ता ह्य॑स्य॒र्त्विज॒ः सर्वे॒
यन्ति॑ यथाय॒थम् ॥ ४ ॥
स स्व॒र्गमा रो॑हति॒ यत्रा॒दस्त्रि॑दि॒वं दि॒वः । अ॒पू॒पना॑भिं कृ॒त्वा यो ददा॑ति
श॒तौद॑नाम् ॥ ५ ॥
स तांल्लो॒कान्त्समा॑प्नोति॒ ये दि॒व्या ये च॒ पार्थि॑वाः । हिर॑ण्यज्योतिषं
कृ॒त्वा यो ददा॑ति श॒तौद॑नाम् ॥ ६ ॥
ये ते॑ देवि शमि॒तार॑ः प॒क्तारो॒ ये च॑ ते॒ जना॑ः । ते त्वा॒ सर्वे॑ गोप्स्यन्ति॒
मैभ्यो॑ भैषीः शतौदने ॥ ७ ॥
वस॑वस्त्वा दक्षिण॒त उ॑त्त॒रान्म॒रुत॑स्त्वा । आ॒दि॒त्याः प॒श्चाद् गो॑प्स्यन्ति॒
साग्नि॑ष्टो॒मम॑ति द्रव ॥ ८ ॥
दे॒वाः पि॒तरो॑ मनु॒ष्या॑ गन्धर्वाप्स॒रस॑श्च॒ ये । ते त्वा॒ सर्वे॑ गोप्स्यन्ति॒
साति॑रा॒त्रमति॑ द्रव ॥ ९ ॥
अ॒न्तरि॑क्षं दि॒वं भूमि॑मादि॒त्यान् म॒रुतो॒ दिश॑ः । लो॒कान्त्स सर्वा॑-
नाप्नोति॒ यो ददा॑ति श॒तौद॑नाम् ॥ १० ॥ (३०)
घृ॒तं प्रो॒क्षन्ती॑ सु॒भगा॑ दे॒वी दे॒वान् ग॑मिष्यति । प॒क्तार॑मघ्न्ये॒ मा
हिंसी॒र्दिवं॒ प्रेहि॑ शतौदने ॥ ११ ॥

ये दे॒वा दि॑वि॒षदो॑ अन्तरिक्ष॒सद॑श्च॒ ये ये चे॒मे भूम्या॒मधि॑ । तेभ्य॒स्त्वं धु॑क्ष्व सर्व॒दा क्षी॒रं स॒र्पिरथो॒ मधु॑ ॥ १२ ॥

यत् ते॒ शिरो॒ यत् ते॒ मुखं॒ यौ कर्णौ॒ ये च॑ ते॒ हनू॑ । आमि॒क्षां दु॑ह॒तां दा॒त्रे क्षी॒रं स॒र्पिरथो॒ मधु॑ ॥ १३ ॥

यौ त॒ ओष्ठौ॒ ये नासि॑के॒ ये शृङ्गे॒ ये च॒ तेऽक्षि॑णी । आ॒मिक्षां॰ ।१४।

यत् ते॑ क्लो॒मा यद्धृद॑यं पुरी॒तत् स॒हक॑ण्ठिका । आ॒मिक्षां॰ ॥ १५ ॥

यत् ते॒ यकृ॒द् ये मत॑स्ने॒ यदा॒न्त्रं याश्च॑ त॒ गुदाः॑ । आ॒मिक्षां॰ ॥१६॥

यस्ते॑ प्ला॒शिर्यो व॑नि॒ष्ठुर्यौ कु॒क्षी यच्च॒ चर्म॑ ते । आ॒मिक्षां॰ ॥१७॥

यत् ते॑ म॒ज्जा यदस्थि॒ यन्मां॒सं यच्च॒ लोहि॑तम् । आ॒मिक्षां॰ ॥ १८ ॥

यौ ते॑ बा॒हू ये दो॒षणी॒ याव॑सौ॒ या च॑ ते क॒कुत् । आ॒मिक्षां॰ ॥ १९ ॥

यास्ते॑ ग्री॒वा ये स्क॒न्धा याः पृ॒ष्टीर्याश्च॒ पर्श॑वः । आ॒मिक्षां॰ ॥२०॥

(३१)

यौ त॑ ऊ॒रू अ॑ष्ठी॒वन्तौ॒ ये श्रोणी॒ या च॑ ते भ॒सत् । आ॒मिक्षां दु॑ह॒तां दा॒त्रे क्षी॒रं स॒र्पिरथो॒ मधु॑ ॥ २१ ॥

यत् ते॒ पुच्छं॒ ये ते॒ बाला॒ यदूधो॒ ये च॑ ते॒ स्तनाः॑ । आ॒मिक्षां॰ ॥२२॥

यास्ते॒ जङ्घा॒ याः कुष्ठि॑का ऋ॒च्छरा॒ ये च॑ ते श॒फाः । आ॒मिक्षां॰ ।२३।

यत् ते॒ चर्म॑ शतौदने॒ यानि॒ लोमा॑न्यघ्न्ये । आ॒मिक्षां॰ ॥ २४ ॥

क्रो॒डौ ते॑ स्तां पु॒रो॒डाशा॒वाज्ये॑ना॒भिघा॑रितौ । तौ प॒क्षौ दे॑वि कृ॒त्वा सा प॒क्तारं॒ दिवं॑ वह ॥ २५ ॥

उ॒लूख॑ले॒ मु॒सले॒ यश्च॒ चर्म॑णि॒ यो वा॒ शू॒र्पे॑ तण्डु॒लः कणः॑ । यं वा॒ वातो॑ मात॒रिश्वा॒ पव॑मानो म॒माथा॒ग्निष्टद्धोता॑ सुहु॑तं कृणोतु ॥ २६ ॥

अ॒पो दे॒वीर्मधु॑मतीर्घृत॒श्चुतो॑ ब्र॒ह्मणां॒ हस्ते॑षु प्रपृथक् सा॑दयामि । यत्का॑म इ॒दम॑भिषि॒ञ्चामि॑ वो॒ऽहं तन्मे॒ सर्वं॒ सं प॑द्यतां व॒यं स्या॑म॒ पत॑यो र॒यी॒णाम् ॥ २७ ॥ (३२) [५।१]

—:०:—

सूक्त १०

ऋषिः— कश्यपः ॥ देवता—वशा ॥ छन्दः—१ ककुम्मत्यनुष्टुप्; २—४, ७, ९, ११—१२, २५, २८, ३०, ३३, ३४ अनुष्टुप्; ५ पञ्चपदाऽतिजागतानुष्टुभं (?) स्कन्धोग्रीवो बृहती; ६, ८, १० विराडनुष्टुप; २३ बृहती; २४ उपरिष्टाद्बृहती; २६ आस्तारपङ्क्तिः; २७ शङ्कुमत्यनुष्टुप्; २९ त्रिपदा विराड्गायत्री; ३१ उष्णिग्गर्भाऽनुष्टुप; ३२ विराट् पथ्या बृहती ॥ मन्त्र ३४ ।

नम॑स्ते॒ जाय॑मानायै जा॒ताया॑ उ॒त ते॒ नमः॑ । बाले॑भ्यः श॒फेभ्यो॑ रू॒पाया॑घ्न्ये ते॒ नमः॑ ॥ १ ॥

यो वि॒द्यात् स॒प्त प्र॒वतः॑ स॒प्त वि॒द्यात् प॑रा॒वतः॑ । शिरो॑ य॒ज्ञस्य॒ यो वि॒द्यात् स व॒शां प्रति॑ गृह्णीयात् ॥ २ ॥

वेदा॒हं स॒प्त प्र॒वतः॑ स॒प्त वे॑द परा॒वतः॑ । शिरो॑ य॒ज्ञस्या॒हं वे॑द॒ सोमं॑ चास्यां विचक्ष॒णम् ॥ ३ ॥

यया॒ द्यौर्यया॑ पृथि॒वी ययापो॑ गुपि॒ता इ॒माः । व॒शां स॒हस्र॑धारां॒ ब्रह्म॑णाच्छाव॑दामसि ॥ ४ ॥

श॒तं कं॒साः श॒तं दो॒ग्धारः॑ श॒तं गो॒प्तारो॒ अधि॑ पृ॒ष्ठे अ॒स्याः । ये दे॒वास्तस्यां॑ प्रा॒णन्ति॒ ते व॒शां वि॑दुरेक॒धा ॥ ५ ॥

यज्ञपदीराक्षीरा स्वधाप्राणा महीलुका। वशा पर्जन्यपत्नी देवाँ अप्येति
ब्रह्मणा ॥ ६ ॥
अनु त्वाग्निः प्राविशदनु सोमो वशे त्वा। ऊधस्ते भद्रे पर्जन्यो
विद्युतस्ते स्तना वशे ॥ ७ ॥
अपस्त्वं धुक्षे प्रथमा उर्वरा अपरा वशे। तृतीयं राष्ट्रं धुक्षेऽन्नं क्षीरं वशे
त्वम् ॥ ८ ॥
यदादित्यैर्हूयमानोपातिष्ठ ऋतावरि। इन्द्रः सहस्रं पात्रान्त्सोमं
त्वापाययद् वशे ॥ ९ ॥
यदनूचीन्द्रमैरात् त्वं ऋषभोऽह्वयत्। तस्मात् ते वृत्रहा पयः क्षीरं
क्रुद्धोऽहरद् वशे ॥ १० ॥ (३२)
यत् ते क्रुद्धो धनपतिरा क्षीरमहरद् वशे। इदं तदद्य नाकस्त्रिषु पात्रेषु
रक्षति ॥ ११ ॥
त्रिषु पात्रेषु तं सोममा देव्यऽहरद् वशा। अथर्वा यत्र दीक्षितो बर्हि-
ष्यास्त हिरण्यय ॥ १२ ॥
सं हि सोमेनागत समु सर्वेण पद्वता। वशा समुद्रमध्यष्ठाद् गन्धर्वैः
कलिभिः सह ॥ १३ ॥
सं हि वातेनागत समु सर्वैः पतत्रिभिः। वशा समुद्रे प्रानृत्यदृचः
सामानि बिभ्रती ॥ १४ ॥
सं हि सूर्येणागत समु सर्वेण चक्षुषा। वशा समुद्रमत्यख्यद् भद्रा
ज्योतींषि बिभ्रती ॥ १५ ॥

अ॒भीवृ॑ता॒ हिर॑ण्येन॒ यद॒ति॑ष्ठ ऋताव॒रि । अश्वः॑ समु॒द्रो भू॒त्वाध्य॑स्कन्दद्
वशे त्वा ॥ १६ ॥
तद् भ॒द्राः सम॑गच्छन्त व॒शा दे॒ष्ट्र्यथो॑ स्व॒धा । अथ॑र्वा॒ यत्र॑ दीक्षि॒तो
ब॒र्हिष्यास्त॑ हिर॒ण्यये॑ ॥ १७ ॥
व॒शा मा॒ता रा॑ज॒न्य१स्य व॒शा मा॒ता स्व॑धे॒ तव॑ । व॒शाया॑ य॒ज्ञ आयु॑धं॒
तत॑श्चि॒त्तम॑जायत ॥ १८ ॥
ऊ॒र्ध्वो बि॒न्दुरुद॑चर॒द् ब्रह्म॑णः॒ ककु॑दा॒दधि॑ । तत॒स्त्वं ज॑ज्ञिषे वशे॒ ततो॒
होता॑जायत ॥ १९ ॥
आ॒स्नस्ते॒ गाथा॑ अभवन्नु॒ष्णिहा॑भ्यो॒ बलं॑ वशे । पा॒ज॒स्या१ज्जज्ञे य॒ज्ञ
स्तने॑भ्यो र॒श्मय॒स्तव॑ ॥ २० ॥ (३४)
ई॒र्माभ्या॒मय॑नं जा॒तं सक्थि॑भ्यां च वशे॒ तव॑ । आ॒न्त्रेभ्यो॑ जज्ञिरे अ॒त्रा
उ॒दरा॒दधि॑ वी॒रुधः॑ ॥ २१ ॥
यदु॒दरं॒ वरु॑णस्यानु॒प्रावि॑शथा वशे । तत॑स्त्वा ब्र॒ह्मोद॑ह्वय॒त् स हि
ने॒त्रमवे॒त् तव॑ ॥ २२ ॥
सर्वे॒ गर्भा॑दवेपन्त॒ जाय॑मानादसू॒स्व१ः । स॒सूव॒ हि तामा॒हुर्व॒शेति॒
ब्रह्म॑भिः क्लृ॒प्तः स ह्य१स्या॒ बन्धुः॑ ॥ २३ ॥
युध॒ एकः॒ सं सृ॑जति॒ यो अ॒स्या एक॒ इद् व॒शी । तरां॑सि य॒ज्ञा अ॑भव॒न्
तर॑सां॒ चक्षु॑रभवद् व॒शा ॥ २४ ॥
व॒शा य॒ज्ञं प्रत्य॑गृह्णाद् व॒शा सूर्य॑मधारयत् । व॒शाया॑म॒न्तर॑विश॒दोद॒नो
ब्र॒ह्मणा॑ स॒ह ॥ २५ ॥

व॒शामे॒वामृत॑माहु॒र्व॒शां मृ॒त्युमु॒पा॑सते । व॒शेदं सर्व॑मभवद् दे॒वा म॑नु॒ष्या॒३
असु॑राः पि॒तर॒ ऋष॑यः ॥ २६ ॥

य ए॒वं वि॒द्यात् स व॒शां प्रति॑ गृ॒ह्णीयात् । तथा॒ हि य॒ज्ञः सर्व॑पाद् दु॒हे
दा॒त्रेऽन॑पस्फुरन् ॥ २७ ॥

ति॒स्रो जि॒ह्वा वरु॑णस्या॒न्तर्दी॑द्यत्या॒सनि॑ । तासां॒ या म॒ध्ये॒ राज॑ति॒ सा
व॒शा दु॑ष्प्रति॒ग्रहा॑ ॥ २८ ॥

च॒तु॒र्धा रेतो॑ अभवद् व॒शायाः॑ । आप॒स्तुरी॑यममृत॒ं तु॒री॑यं य॒ज्ञस्तु॒री॑यं
प॒शव॒स्तुरी॑यम् ॥ २९ ॥

व॒शा द्यौर्व॒शा पृ॑थि॒वी व॒शा विष्णु॑ः प्र॒जाप॑तिः । व॒शाया॑ दु॒ग्धम॑पि-
बन्त्सा॒ध्या वस॑वश्च॒ ये ॥ ३० ॥

व॒शाया॑ दु॒ग्धं पी॒त्वा सा॒ध्या वस॑वश्च॒ ये । ते वै ब्र॒ध्नस्य॑ वि॒ष्टपि॒ पयो॑
अ॒स्या उपा॑सते ॥ ३१ ॥

सोम॑मेना॒मेके॑ दु॒ह्रे घृ॒तमेक॒ उपा॑सते । य ए॒वं वि॒दुषे॑ व॒शां द॒दुस्ते
ग॒तास्त्रि॑दि॒वं दि॒वः ॥ ३२ ॥

ब्रा॒ह्म॒णेभ्यो॑ व॒शां द॒त्त्वा सर्वाँ॑ल्लो॒कान्त्सम॑श्नुते । ऋ॒तं ह्य॑स्या॒मा-
र्पि॒तमपि॒ ब्रह्माथो॒ तप॑ः ॥ ३३ ॥

व॒शां दे॒वा उप॑ जीवन्ति व॒शां म॑नु॒ष्या॑ उ॒त । व॒शेदं सर्व॑मभव॒द् याव॒त्
सूर्यो॑ वि॒पश्य॑ति ॥ ३४ ॥ (३५) [५।२]

॥ इति दशमं काण्डम् समाप्तम् ॥

—:o:—

* श्री गणेशाय नमः *

अथैकादश काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—ब्रह्मौदनः ॥ छन्दः—१ अनुष्टुब्गर्भा भुरिक् पङ्क्तिः; २, ५ बृहतीगर्भा विराट् त्रिष्टुप्; ३ चतुष्पदा शाक्वरगर्भा जगती; ४, १५, १६, ३१ भुरिक् त्रिष्टुप्; ६ उष्णिक्; ७, १२—१४, १९, २२, २३, २८, ३०, ३२—३४ त्रिष्टुप्; ८ (त्रिपदा) विराड् गायत्री; ९ शाक्वरातिजागतगर्भा जगती; १० पुरोति जगती; विराड् जगती; ११ जगती; १७, २१, २४—२६, ३७ विराड् जगती; १८ अतिजागतगर्भा परातिजागती विराडतिजगती; २० अतिजागतगर्भा पराशाक्वरा चतुष्पदा भुरिग् जगती; २७ अतिजागतगर्भा भुरिग् जगती; २९ भुरिग् जगती; ३५ चतुष्पदा ककुम्मत्युष्णिक्; ३६ पुरोविराट् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३७ ।

अग्ने जायस्वादितिर्नाथितेयं ब्रह्मौदनं पचति पुत्रकामा । सप्तऋषयो
भूतकृतस्ते त्वा मन्थन्तु प्रजया सहेह ॥ १ ॥
कृणुत धूमं वृषणः सखायोऽद्रोघाविता वाचमच्छ । अयमग्निः पृतना-
षाट् सुवीरो येन देवा असहन्त दस्यून् ॥ २ ॥
अग्नेऽजनिष्ठा महते वीर्याय ब्रह्मौदनाय पक्तवे जातवेदः । सप्तऋषयो
भूतकृतस्ते त्वाजीजनन्नस्यै रयिं सर्ववीरं नि यच्छ ॥ ३ ॥
समिद्धो अग्ने समिधा समिध्यस्व विद्वान् देवान् यज्ञियाँ एह वक्षः ।
तेभ्यो हविः श्रपयं जातवेद उत्तमं नाकमधि रोहयेमम् ॥ ४ ॥
त्रेधा भागो निहितो यः पुरा वो देवानां पितॄणां मर्त्यानाम् ।
अंशान् जानीध्वं वि भजामि तान् वो यो देवानां स इमां पारयाति ॥५॥

अग्ने सहस्वानभिभूरभीदसि नीचो न्युब्ज द्विषतः सपत्नान्। इयं
मात्रा मीयमाना मिता च सजातांस्ते बलिहृतः कृणोतु ॥ ६ ॥
साकं सजातैः पयसा सहैध्युदुब्जैनां महते वीर्याय। ऊर्ध्वो
नाकस्याधि रोह विष्टपं स्वर्गो लोक इति यं वदन्ति ॥ ७ ॥
इयं मही प्रति गृह्णातु चर्म पृथिवी देवी सुमनस्यमाना। अथ गच्छेम
सुकृतस्य लोकम् ॥ ८ ॥
एतौ ग्रावाणौ सयुजा युङ्ग्धि चर्मणि निर्भिन्ध्यंशून् यजमानाय साधु।
अवघ्नती नि जहि य इमां पृतन्यव ऊर्ध्वं प्रजामुद्भरन्त्युदूह ॥ ९ ॥
गृहाण ग्रावाणौ सुकृतौ वीर हस्त आ ते देवा यज्ञिया यज्ञमगुः।
त्रयो वरा यतमांस्त्वं वृणीषे तास्ते समृद्धीरिह राधयामि ॥१०॥ (१)
इयं ते धीतिरिदमु ते जनित्रं गृह्णातु त्वामदितिः शूरपुत्रा। परा
पुनीहि य इमां पृतन्यवोऽस्यै रयिं सर्ववीरं नि यच्छ ॥ ११ ॥
उपश्वसे द्रुवये सीदत यूयं वि विच्यध्वं यज्ञियासस्तुषैः। श्रिया
समानानति सर्वान्त्स्यामाधस्पदं द्विषतस्पादयामि ॥ १२ ॥
परेहि नारि पुनरेहि क्षिप्रमपां त्वा गोष्ठोऽध्यरुक्षद् भराय। तासां
गृह्णीताद् यतमा यज्ञिया असन् विभाज्य धीरीतरा जहीतात् ॥१३॥
एमा अगुर्योषितः शुम्भमाना उत्तिष्ठ नारि तवसं रभस्व। सुपत्नी
पत्या प्रजया प्रजावत्या त्वागन् यज्ञः प्रति कुम्भं गृभाय ॥ १४ ॥
ऊर्जो भागो निहितो यः पुरा व ऋषिप्रशिष्टाप आ भरैताः। अयं
यज्ञो गातुविन्नाथवित् प्रजाविदुग्रः पशुविद् वीरविद् वो अस्तु ॥१५॥

अग्ने॑ च॒रुर्य॒ज्ञिय॒स्त्वाध्य॑रुक्ष॒च्छुचि॒स्तपि॑ष्ठ॒स्तप॑सा तपै॑नम् । आर्षे॒या
दे॒वा अ॑भिस॒ङ्गत्य॑ भा॒गमि॒मं तपि॑ष्ठा ऋ॒तुभि॑स्तपन्तु ॥ १६ ॥
शु॒द्धाः पू॒ता यो॒षितो॑ य॒ज्ञिया॑ इ॒मा आप॑श्च॒रुमव॑ सर्पन्तु शु॒भ्राः । अदु॑ः
प्र॒जां ब॑हु॒लान् प॒शून् न॑ः प॒क्तौद॒नस्य॑ सु॒कृता॑मेतु लो॒कम् ॥ १७ ॥
ब्रह्म॑णा शु॒द्धा उ॒त पू॒ता घृ॒तेन॒ सोम॑स्यां॒शव॑स्तण्डु॒ला य॒ज्ञिया॑ इ॒मे ।
अ॒पः प्र वि॑शत॒ प्रति॑ गृह्णातु वश्च॒रुरि॒मं प॒क्त्वा सु॒कृता॑मेत लो॒कम् ।१८।
उ॒रुः प्र॑थस्व मह॒ता म॑हि॒म्ना स॒हस्र॑पृष्ठः सुकृ॒तस्य॑ लो॒के । पि॒ता॒म॒हाः
पि॒तर॑ः प्र॒जोप॒जाहं प॒क्ता प॑ञ्चद॒शस्ते॑ अस्मि ॥ १९ ॥
स॒हस्र॑पृष्ठः श॒तधा॑रो॒ अक्षि॑तो ब्रह्मौद॒नो दे॑व॒यान॑ः स्व॒र्गः । अ॒मूंस्त॒ आ
द॑धामि प्र॒जया॑ रेषयैनान् बलिहा॒राय॑ मृडता॒न्मह्य॑मे॒व ॥ २० ॥ (२)
उ॒दे॑हि॒ वेदिं॑ प्र॒जया॑ वर्धयैनां नु॒दस्व॒ रक्ष॑ः प्रत॒रं धे॑ह्येनाम् । श्रि॒या
स॑मा॒नानति॒ सर्वा॑न्त्स्यामाधस्प॒दं द्वि॑ष॒तस्पा॑दयामि ॥ २१ ॥
अ॒भ्याव॑र्तस्व प॒शुभि॑ः स॒हैनां॑ प्र॒त्यङे॑नां दे॒वता॑भिः स॒हैधि॑ । मा त्वा॒
प्राप॑च्छ॒पथो॒ माभि॑चा॒रः स्वे क्षेत्रे॑ अनमी॒वा वि रा॑ज ॥ २२ ॥
ऋ॒तेन॑ त॒ष्टा मन॑सा हि॒तैषा ब्र॑ह्मौद॒नस्य॒ विहि॑ता वेदि॒रग्रे॑ । अं॒स॒द्रीं
शु॒द्धामुप॑ धेहि नारि॒ तत्रौद॒नं सा॑दय दे॒वाना॑म् ॥ २३ ॥
अदि॑ते॒र्हस्तां॒ स्रुच॑मे॒तां द्वि॒तीयां॑ सप्तऋ॒षयो॑ भूत॒कृतो॒ याम॑कृण्वन् ।
सा गात्रा॑णि वि॒दुष्यौद॒नस्य॒ द॒र्वि॒र्वेद्या॒मध्ये॑नं चिनोतु ॥ २४ ॥
शृ॒तं त्वा॑ ह॒व्यमुप॑ सीदन्तु दे॒वा नि॒ःसृप्या॒ग्नेः पुन॑रेना॒न् प्र सी॑द ।
सोमे॑न पू॒तो ज॒ठरे॑ सीद ब्र॒ह्मणा॑मार्षे॒यास्ते॒ मा रि॑षन् प्राशि॒तार॑ः ॥२५॥

सोम॑ राजन्त्सं॒ज्ञान॒मा व॑पैभ्य॒ः सुब्रा॑ह्मणा यत॒मे त्वो॑प॒सीदा॑न् । ऋषी॑-
नार्षे॒यांस्तप॒सोऽधि॑ जा॒तान्ब्र॑ह्मौद॒ने सु॒हवा॑ जोहवीमि ॥ २६ ॥
शु॒द्धाः पू॒ता यो॒षितो॑ य॒ज्ञिया॑ इ॒मा ब्र॒ह्मणां॒ हस्ते॑षु प्रपृ॒थक् सा॑दयामि ।
यत्का॑म इ॒दम॑भिषि॒ञ्चामि॑ वो॒ऽहमिन्द्रो॑ म॒रुत्वा॒न्त्स द॑दादि॒दं मे॑ ॥२७॥
इ॒दं मे॒ ज्योति॑र॒मृतं॒ हिर॑ण्यं प॒क्वं क्षेत्रा॑त् का॒मदु॑घा म ए॒षा । इ॒दं धनं॒
नि द॑धे ब्राह्म॒णेषु॑ कृ॒ण्वे पन्थां॑ पि॒तृ॒षु यः स्व॒र्गः ॥ २८ ॥
अ॒ग्नौ तु॒षाना व॑प जा॒तवे॑दसि प॒रः क॒म्बूकाँ॒ अप॑ मृड्ढि दू॒रम् । ए॒तं
शुश्रुम गृहरा॒जस्य॑ भा॒गमथो॑ विद्म॒ निर्ऋ॑तेर्भाग॒धेय॑म् ॥ २९ ॥
श्रा॒म्य॑तः पच॑तो विद्धि सुन्व॒तः पन्थां॑ स्व॒र्गम॑धि रोहयैनम् । येन॒
रोहा॑त् पर॑मा॒पद्य॒ यद् वय॑ उत्त॒मं नाकं॑ पर॒मं व्यो॒३॑म ॥ ३० ॥ (३)
ब॒भ्रेर॑ध्वर्यो॒ मुख॑मे॒तद् वि मृ॑ड्ढ्याज्या॑य लो॒कं कृ॑णुहि प्रवि॒द्वान् ।
घृ॒तेन॒ गात्रानु॒ सर्वा॒ वि मृ॑ड्ढि कृ॒ण्वे पन्थां॑ पि॒तृ॒षु यः स्व॒र्गः ॥ ३१ ॥
ब॒भ्रे रक्षः॑ स॒मद॒मा व॑पै॒भ्योब्रा॑ह्मणा यत॒मे त्वो॑प॒सीदा॑न् । पु॒री॒षिणः॒
प्रथ॑मानाः पु॒रस्ता॑दार्षे॒यास्ते॒ मा रि॑षन् प्राशि॒तारः॑ ॥ ३२ ॥
आ॒र्षे॒येषु॒ नि द॑ध ओदन त्वा॒ नाना॑र्षेयाणा॒मप्य॒स्त्यत्र॑ । अ॒ग्निर्मे॑ गो॒प्ता
म॒रुत॑श्च॒ सर्वे॒ विश्वे॑ दे॒वा अ॒भि र॑क्षन्तु प॒क्वम् ॥ ३३ ॥
य॒ज्ञं दुहा॑नं॒ सद॒मित प्रपी॑नं॒ पुमां॑सं धे॒नुं सद॑नं र॒यीणाम् । प्र॒जा-
मृ॒त॒त्वमु॒त दी॒र्घमायू॑ रा॒यश्च॒ पोषै॑रु॒प त्वा॑ सदेम ॥ ३४ ॥
वृ॒ष॒भो॒३॑सि स्व॒र्ग ऋषी॑नार्षे॒यान् गच्छ । सु॒कृतां॑ लो॒के सी॑द॒ तत्र॑ नौ
संस्कृ॒तम् ॥ ३५ ॥

समाचिनुष्वानुसंप्रयाह्यग्ने पथः कल्पय देवयानान्। एतैः सुकृतैरनु
गच्छेम यज्ञं नाके तिष्ठन्तमधि सप्तरश्मौ ॥ ३६ ॥
येन देवा ज्योतिषा द्यामुदायन् ब्रह्मौदनं पक्त्वा सुकृतस्य लोकम्।
तेन गेष्म सुकृतस्य लोकं स्वरारोहन्तो अभि नाकमुत्तमम् ॥ ३७ ॥
(४) [१।१]

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—भवादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ परातिजागता विराड् जगती, २ अनुष्टुब्गर्भा पञ्चपदा पथ्या जगती; ३ चतुष्पदा स्वराडुष्णिक् ४ ५, ७, १३, १५, १६, २१, अनुष्टुप् ६ आर्षी गायत्री; ८ महाबृहती; ९ आर्षी त्रिष्टुप्; १० पुरःकृतिः त्रिपदा विराट् त्रिष्टुप्; ११ पञ्चपदा जगतीगर्भा विराट् शक्वरी; १२ भुरिक् त्रिष्टुप्; १४, १७—१९, २३, २६, २७ [त्रिपदा] विराड् गायत्री; २० भुरिक् गायत्री; २२ विषमपादयक्ष्मा त्रिपदा महाबृहती; २४, २९ जगती; २५ पञ्चपदातिशक्वरी; २८ त्रिष्टुप्; ३० चतुष्पदा उष्णिक्; ३१ विपरीतपादलक्ष्मा षट्पदा त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३१ ।

भवाशर्वौ मृडतं माभि यातं भूतपती पशुपती नमो वाम्। प्रतिहितामायतां मा वि स्राष्टं मा नो हिंसिष्टं द्विपदो मा चतुष्पदः ॥ १ ॥

शुने क्रोष्ट्रे मा शरीराणि कर्तमलिक्लवेभ्यो गृध्रेभ्यो ये च कृष्णा अविष्यवः। मक्षिकास्ते पशुपते वयांसि ते विघसे मा विदन्त ॥२॥

क्रन्दाय ते प्राणाय याश्च ते भव रोपयः। नमस्ते रुद्र कृण्मः सहस्राक्षायामर्त्य ॥ ३ ॥

पुरस्तात् ते नमः कृण्म उत्तरादधरादुत। अभीवर्गाद् दिवस्पर्यन्तरिक्षाय ते नमः ॥ ४ ॥

मुखाय ते पशुपते यानि चक्षूंषि ते भव। त्वचे रूपाय संदृशे प्रतीचीनाय ते नमः ॥ ५ ॥

अङ्गेभ्यस्त उदराय जिह्वाया आस्याय ते। दुद्भ्यो गन्धाय ते नमः ॥ ६ ॥

अस्त्रा नीलशिखण्डेन सहस्राक्षेण वाजिना। रुद्रेणार्धकघातिना तेन मा समरामहि ॥ ७ ॥

स नो भवः परि वृणक्तु विश्वत आप इवाग्निः परि वृणक्तु नो भवः। मा नोऽभि मांस्त नमो अस्त्वस्मै ॥ ८ ॥

चतुर्नमो अष्टकृत्वो भवाय दश कृत्वः पशुपते नमस्ते। तवेमे पञ्च पशवो विभक्ता गावो अश्वाः पुरुषा अजावयः ॥ ९ ॥

तव चतस्रः प्रदिशस्तव द्यौस्तव पृथिवी तवेदमुग्रोर्व३न्तरिक्षम्। तवेदं सर्वमात्मन्वद् यत् प्राणत् पृथिवीमनु ॥ १० ॥ (५)

उरुः कोशो वसुधानस्तवायं यस्मिन्निमा विश्वा भुवनान्यन्तः। स नो मृड पशुपते नमस्ते परः क्रोष्टारो अभिभाः श्वानः परो यन्त्वघरुदो विकेश्यः ॥ ११ ॥

धनुर्बिभर्षि हरितं हिरण्ययं सहस्रघ्नि शतवधं शिखण्डिन्। रुद्रस्येषुश्चरति देवहेतिस्तस्यै नमो यतमस्यां दिशी३तः ॥ १२ ॥

यो३भियातो निलयते त्वां रुद्र निचिकीर्षति। पश्चादनुप्रयुङ्क्षे तं विद्धस्य पदनीरिव ॥ १३ ॥

भवारुद्रौ सयुजा संविदानावुभावुग्रौ चरतो वीर्याय। ताभ्यां नमो यतमस्यां दिशी३तः ॥ १४ ॥

नम॑स्तेऽस्त्वाय॒ते नमो॑ अस्तु पराय॒ते । नम॑स्ते रुद्र॒ तिष्ठ॑त॒ आसी॑नायो॒त
ते॒ नमः॑ ॥ १५ ॥

नमः॑ सा॒यं नमः॑ प्रा॒तर्नमो॒ रात्र्या॒ नमो॒ दिवा॑ । भ॒वाय॑ च श॒र्वाय॑
चो॒भाभ्या॑मकरं॒ नमः॑ ॥ १६ ॥

स॒ह॒स्रा॒क्षम॑तिप॒श्यं पु॒रस्ता॑द् रु॒द्रमस्य॑न्तं बहु॒धा विप॒श्चित॑म् । मोपा॑राम
जि॒ह्वयेय॑मानम् ॥ १७ ॥

श्या॒वाश्वं॑ कृ॒ष्णमसि॑तं मृ॒णन्तं॑ भी॒मं रथं॑ के॒शिनः॑ पा॒दय॑न्तम् । पूर्वे॑
प्रती॑मो॒ नमो॑ अस्त्वस्मै ॥ १८ ॥

मा नो॒ऽभि स्रा॑ म॒त्यं॑ देवहे॒तिं मा नः॑ क्रुधः पशुपते॒ नम॑स्ते । अ॒न्यत्रा॒स्मद् दि॒व्यां शाखां॒ वि धू॑नु ॥ १९ ॥

मा नो॑ हिंसी॒रधि॑ नो ब्रूहि॒ परि॑ णो वृङ्ग्धि॒ मा क्रु॑धः । मा त्वया॒
सम॑रामहि ॥ २० ॥ (६)

मा नो॒ गोषु॒ पुरु॑षेषु॒ मा गृ॑धो नो अजा॒विषु॑ । अ॒न्यत्रो॑ग्र॒ वि व॑र्तय॒
पिया॑रूणां प्र॒जां ज॑हि ॥ २१ ॥

यस्य॑ त॒क्मा कासि॑का हे॒तिरेक॒मश्व॑स्येव॒ वृष॑णः॒ क्रन्द॒ एति॑ । अ॒भि॒पूर्वं॑
नि॒र्णय॑ते॒ नमो॑ अस्त्वस्मै ॥ २२ ॥

यो॒३॑न्तरि॑क्षे॒ तिष्ठ॑ति॒ विष्ट॑भि॒तोऽय॑ज्वनः प्रमृ॒णन् दे॑वपी॒यून् । तस्मै॒
नमो॑ द॒शभिः॒ शक्व॑रीभिः ॥ २३ ॥

तुभ्य॑मार॒ण्याः प॒शवो॑ मृ॒गा वने॑ हि॒ता हं॒साः सु॑प॒र्णाः श॑कु॒ना वयां॑सि ।
तव॑ य॒क्षं प॑शुपते अ॒प्स्व॑१॒न्तस्तुभ्यं॑ चरन्ति दि॒व्या आपो॑ वृ॒धे ॥२४॥

शि॒शु॒मारा॑ अजग॒राः पु॑री॒कया॑ ज॒षा मत्स्या॑ रज॒सा येभ्यो॒ अस्य॑सि ।
न ते॑ दू॒रं न प॑रि॒ष्ठास्ति॑ ते भव स॒द्यः सर्वा॒न् परि॑ पश्यसि॒ भूमिं॒
पूर्वँ॑स्माद्ध॒ंस्युत्त॑रस्मिन् समु॒द्रे ॥ २५ ॥
मा नो॑ रुद्र त॒क्मना॒ मा वि॒षेण॒ मा नः॒ सं स्रा॑ दि॒व्येना॒ग्निना॑ । अ॒न्यत्रा॒स्मद्
वि॒द्युतँ॑ पातयै॒ताम् ॥ २६ ॥
भ॒वो दि॒वो भ॒व ई॑शे पृथि॒व्या भ॒व आ प॑प्र उ॒र्व॑१॒न्तरि॑क्षम् । तस्मै॒
नमो॑ यत॒मस्यां॑ दि॒शी॒३॒तः ॥ २७ ॥
भव॑ राज॒न् यज॑मानाय मृड प॒शू॒नां हि प॑शु॒पति॑र्ब॒भूथ॑ । यः श्र॒द्दधा॑ति॒
सन्ति॑ दे॒वा इति॒ चतु॑ष्पदे द्वि॒पदे॑ऽस्य मृड ॥ २८ ॥
मा नो॑ म॒हान्त॑मु॒त मा नो॑ अर्भ॒कं मा नो॒ वह॑न्तमु॒त मा नो॑ वक्ष्य॒तः ।
मा नो॑ हिंसीः पि॒तरं॑ मा॒तरं॑ च॒ स्वां त॒न्वं॑ रुद्र मा री॑रिषो नः ॥२९॥
रु॒द्रस्यै॑लबका॒रेभ्यो॑ऽसंसूक्तगि॒लेभ्यः॑ । इ॒दं म॒हास्ये॑भ्य॒ः श्वभ्यो॑ अकरं॒
नमः॑ ॥ ३० ॥
नम॑स्ते घो॒षिणी॑भ्यो॒ नम॑स्ते के॒शिनी॑भ्यः । नमो॒ नम॑स्कृताभ्यो॒ नमः॑
संभु॒ञ्ज॒तीभ्यः॑ । नम॑स्ते देव॒ सेना॑भ्यः स्व॒स्ति नो॒ अभ॑यं च नः ॥३१॥
(७) [१।२]

—:०:—

सूक्त ३

ऋषि:—**अथर्वा** ॥ देवता—बार्हस्पत्यौदनः ॥ छन्दः—१, १४ आसुरी गायत्री; २ त्रिपदा समविषमा गायत्री; ३, ६, १०, आसुरी पङ्क्तिः ४, ८ साम्न्यनुष्टुप्; ५, १३, १५, २५ साम्न्युष्णिक्; ७, १९—२२ प्राजापत्यानुष्टुप्; ९, १७, १८ आसुर्यनुष्टुप्; ११ भुरिगार्च्यनुष्टुप्; १२ याजुषी जगती; १६, २३ आसुरी बृहती;

२४ त्रिपदा प्राजापत्या बृहती; २६ आर्च्युष्णिक्; २७, २८ साम्नी बृहती; २९ भुरिक् साम्नी बृहती; ३० याजुषी त्रिष्टुप्; ३१ अल्पशः पङ्क्तिरुत याजुषी ॥ मन्त्र ३१।

तस्यौ॑द॒नस्य॒ बृह॒स्पति॒ः शिरो॒ ब्रह्म॒ मुख॑म् ॥ १ ॥
द्यावा॑पृथि॒वी श्रोत्रे॑ सूर्याचन्द्र॒मसा॒वक्षि॑णी सप्तऋ॒षय॑ः प्राणापा॒नाः ॥२॥
चक्षु॒र्मुस॑लं॒ काम॑ उ॒लूख॑लम् ॥ ३ ॥
दिति॒ः शूर्प॒मदि॑तिः शूर्पग्रा॒ही वातोऽपा॑विनक् ॥ ४ ॥
अश्वा॒ः कणा॒ गाव॑स्तण्डु॒ला म॒शका॒स्तुषा॑ः ॥ ५ ॥
कब्रु॑ फली॒कर॑णा॒ः शरो॒ऽभ्रम् ॥ ६ ॥
श्या॒ममयो॑ऽस्य मां॒सानि॒ लोहि॑तमस्य॒ लोहि॑तम् ॥ ७ ॥
त्रपु॒ भस्म॒ हरि॑तं॒ वर्ण॒ः पुष्क॑रमस्य ग॒न्धः ॥ ८ ॥
खल॒ः पात्र॒ं स्फ्यावं॑सा॑वी॒षे अ॑नू॒क्ये॑ ॥ ९ ॥
आ॒न्त्राणि॑ ज॒त्रवो॒ गुदा॑ वर॒त्राः ॥ १० ॥
इ॒यमे॒व पृ॑थि॒वी कुम्भी भ॑वति॒ राध्य॑मानस्यौद॒नस्य॒ द्यौर॑पि॒धान॑म् ।११।
सीता॒ः पर्श॑व॒ः सिक॑ता॒ ऊब॑ध्यम् ॥ १२ ॥
ऋ॒तं ह॑स्ताव॒नेज॑नं कु॒ल्यो॑प॒सेच॑नम् ॥ १३ ॥
ऋ॒चा कु॒म्भ्यधि॑हि॒तार्त्वि॑ज्येन॒ प्रेषि॑ता ॥ १४ ॥
ब्रह्म॑णा॒ परि॑गृहीता॒ साम्ना॒ पर्यू॑ढा ॥ १५ ॥
बृ॒हदा॒यव॑नं रथन्त॒रं दर्वि॑ः ॥ १६ ॥
ऋ॒तव॑ः प॒क्तार॑ आर्त॒वाः समि॑न्धते ॥ १७ ॥
च॒रुं पञ्च॑बिलमु॒खं घ॒र्मो॒३भीन्धे ॥ १८ ॥
ओ॒द॒नेन॑ यज्ञव॒चः सर्वे॑ लो॒काः स॑मा॒प्या॑ः ॥ १९ ॥

यस्मि॑न्त्समु॒द्रो द्यौर्भूमि॒स्त्रयो॑ऽवरप॒रं श्रि॒ताः ॥ २० ॥
यस्य॑ दे॒वा अक॑ल्प॒न्तोच्छि॑ष्टे॒ षड॑शी॒तय॑ः ॥ २१ ॥
तं त्वौ॑द॒नस्य॑ पृच्छामि॒ यो अ॑स्य महि॒मा म॒हान् ॥ २२ ॥
स य ओ॑द॒नस्य॑ महि॒मानँ॑ वि॒द्यात् ॥ २३ ॥
नाल्प॒ इति॑ ब्रूया॒न्नानु॑पसेच॒न इति॒ नेदं॑ च॒ किं चेति॑ ॥ २४ ॥
याव॑द् दा॒ता॑भिमन॒स्येत॒ तन्नाति वदेत् ॥ २५ ॥
ब्र॒ह्म॒वा॒दिनो॑ वदन्ति॒ परा॑ञ्चमोद॒नं प्राशी३ः प्र॒त्यञ्चा३मिति॑ ॥२६॥
त्वमो॑द॒नं प्राशी३स्त्वामो॑द॒ना३ इति॑ ॥ २७ ॥
परा॑ञ्चं चैनं॒ प्राशीः॑ प्रा॒णास्त्वा॑ हास्य॒न्तीत्ये॑नमाह ॥ २८ ॥
प्र॒त्यञ्चँ॑ चैनं॒ प्राशी॑रपा॒नास्त्वा॑ हास्य॒न्तीत्ये॑नमाह ॥ २९ ॥
नैवाहमो॑द॒नं न मामो॑द॒नः ॥ ३० ॥
ओ॒द॒न ए॒वौद॒नं प्राशी॑त् ॥ ३१ ॥ (८)

तत॑श्चैनम॒न्येन॑ शी॒र्ष्णा प्राशी॒र्येन॑ चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑यः॒ प्राश्न॑न्। ज्ये॒ष्ठ॒तस्ते॑
प्र॒जा म॑रिष्य॒तीत्ये॑नमाह। तं वा अ॒हं नार्वाञ्चं॒ न परा॑ञ्चं॒ न
प्र॒त्यञ्च॑म्। बृह॒स्पति॑ना शी॒र्ष्णा। तेनै॑नं॒ प्राशि॑षं॒ तेनै॑नमजीगमम्।
ए॒ष वा ओ॑द॒नः सर्वा॑ङ्गः॒ सर्व॑परुः॒ सर्व॑तनूः। सर्वा॑ङ्ग ए॒व सर्व॑परुः॒
सर्व॑तनूः॒ सं भ॑वति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ३२ ॥

तत॑श्चैनम॒न्याभ्या॒ श्रोत्रा॑भ्या॒ प्राशी॒र्याभ्यां॑ चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑यः॒ प्राश्न॑न्।
ब॒धि॒रो भ॑विष्य॒सीत्ये॑नमाह। तं वा अ॒हं नार्वाञ्चं॒ न परा॑ञ्चं॒ न
प्र॒त्यञ्च॑म्। द्यावा॑पृथि॒वीभ्या॒ श्रोत्रा॑भ्याम्। ताभ्या॑मेनं॒ प्राशि॑षं॒
ताभ्या॑मेनमजीगमम्। ए॒ष वा ओ॑द॒नः०··· य ए॒वं वेद॑ ॥ ३३ ॥

तत॑श्चैनम॒न्याभ्या॑म॒क्षीभ्या॒ं प्राशी॒र्याभ्याँ॑ चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑य॒ः प्राश्न॑न् ।
अ॒न्धो भ॑विष्य॒सीत्ये॑नमाह । तं वा अ॒हं नार्वा॑ञ्च॒ं न परा॑ञ्च॒ं न
प्र॒त्यञ्च॑म् । सू॒र्या॒च॒न्द्र॒म॒साभ्या॑म॒क्षीभ्या॑म् । ताभ्या॑मेन॒ं प्राशि॑ष॒ं ताभ्या॑-
मेनमजीगमम् । ए॒ष वा ओ॑द॒नः सर्वा॑ङ्ग॒ः० ··· य ए॒वं वेद॑ ॥ ३४ ॥
तत॑श्चैनम॒न्येन॒ मुखे॑न॒ प्राशी॒र्ये॑न॒ चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑य॒ः प्राश्न॑न् । मु॒ख॒तस्ते॑
प्र॒जा म॑रिष्य॒तीत्ये॑नमाह । तं वा अ॒हं नार्वा॑ञ्च॒ं न परा॑ञ्च॒ं न प्र॒त्यञ्च॑म् ।
ब्रह्म॑णा॒ मुखे॑न । तेनै॑न॒ं प्राशि॑ष॒ं तेनै॑नमजीगमम् ।० ··· य ए॒वं वेद॑ ।३५।
तत॑श्चैनम॒न्यया॑ जि॒ह्वया॒ प्राशी॒र्यया॑ चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑य॒ः प्राश्न॑न् । जि॒ह्वा
ते॑ मरिष्य॒तीत्ये॑नमाह । तं वा अ॒हं नार्वा॑ञ्च॒ं न परा॑ञ्च॒ं न प्र॒त्यञ्च॑म् ।
अ॒ग्नेर्जि॒ह्वया॑ । तयै॑न॒ं प्राशि॑ष॒ं तयै॑नमजीगमम् । ०···य ए॒वं वेद॑ ।३६।
तत॑श्चैनम॒न्यैर्दन्तै॒ः प्राशी॒र्यैश्चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑य॒ः प्राश्न॑न् । दन्ता॑स्ते
शत्स्य॒न्तीत्ये॑नमाह । तं वा अ॒हं नार्वा॑ञ्च॒ं न परा॑ञ्च॒ं न प्र॒त्यञ्च॑म् ।
ऋ॒तुभि॒र्दन्तै॑ः । तैरे॑न॒ं प्राशि॑ष॒ं तैरनमजीगमम् । ०···य ए॒वं वेद॑ ।३७।
तत॑श्चैनम॒न्यैः प्रा॑णापा॒नैः प्राशी॒र्यैश्चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑य॒ः प्राश्न॑न् । प्रा॒णा॒-
पा॒नास्त्वा॑ हास्य॒न्तीत्ये॑नमाह । तं वा अ॒हं नार्वा॑ञ्च॒ं न परा॑ञ्च॒ं न
प्र॒त्यञ्च॑म् । स॒प्त॒ऋ॒षिभि॑ः प्राणापा॒नैः । तैरे॑न॒ं० ··· वेद॑ ॥ ३८ ॥
तत॑श्चैनम॒न्येन॒ व्यच॑सा॒ प्राशी॒र्ये॑न॒ चै॒तं पूर्व॒ ऋष॑य॒ः प्राश्न॑न् । रा॒ज॒-
य॒क्ष्मस्त्वा॑ हनिष्य॒तीत्ये॑नमाह । तं वा अ॒हं नार्वा॑ञ्च॒ं न परा॑ञ्च॒ं न
प्र॒त्यञ्च॑म् । अ॒न्तरि॑क्षेण॒ व्यच॑सा । तेनै॑न॒ं प्राशि॑ष॒ं तेनै॑नमजीगमम् ।
ए॒ष वा० ··· वेद॑ ॥ ३९ ॥

ततश्चैनमन्येन पृष्ठेन प्राशीर्येन चैतं पूर्व ऋषयः प्राश्नन्। विद्युत् त्वा
हनिष्यतीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम्।
दिवा पृष्ठेन। तेनैनं प्राशिषं तेनैनमजीगमम्०।···वेद ॥ ४० ॥
ततश्चैनमन्येनोरसा प्राशीर्येन चैतं पूर्व ऋषयः प्राश्नन्। कृष्या न
रात्स्यसीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम्।
पृथिव्योरसा। तेनैनं प्राशिषं तेनैनमजीगमम्०।···य एवं वेद ।४१।
ततश्चैनमन्येनोदरेण प्राशीर्येन चैतं पूर्व ऋषयः प्राश्नन्। उदरदारस्त्वा
हनिष्यतीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम्।
सत्येनोदरेण। तेनैनं प्राशिषं०···य एवं वेद ॥ ४२ ॥
ततश्चैनमन्येन वस्तिना प्राशीर्येन चैतं पूर्व ऋषयः प्राश्नन्। अप्सु
मरिष्यसीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम्।
समुद्रेण वस्तिना। तेनैनं०···भवति य एवं वेद ॥ ४३ ॥
ततश्चैनमन्याभ्यामूरुभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्व ऋषयः प्राश्नन्। ऊरू
ते मरिष्यत इत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न प्रत्यञ्चम्।
मित्रावरुणयोरूरुभ्याम्। ताभ्यामेनं प्राशिषं ताभ्यामेनमजीगमम्।
एष वा ओदनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः०···य एवं वेद ॥ ४४ ॥
ततश्चैनमन्याभ्यामष्ठीवद्भ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्व ऋषयः प्राश्नन्।
स्रामो भविष्यसीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न
प्रत्यञ्चम्। त्वष्टुरष्ठीवद्भ्याम्। ताभ्यामेनं०—य एवं वेद ॥ ४५ ॥

ततश्चैनमन्याभ्यां पादाभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वे ऋषयः प्राश्नन्।
बहुचारी भविष्यसीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न
प्रत्यञ्चम्। अश्विनोः पादाभ्याम्। ताभ्यामेनं०…य एवं वेद ।४६।
ततश्चैनमन्याभ्यां प्रपदाभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वे ऋषयः प्राश्नन्।
सर्पस्त्वा हनिष्यतीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न
प्रत्यञ्चम्। सवितुः प्रपदाभ्याम्। ताभ्यामेनं०…य एवं वेद ।४७।
ततश्चैनमन्याभ्यां हस्ताभ्यां प्राशीर्याभ्यां चैतं पूर्वे ऋषयः प्राश्नन्।
ब्राह्मणं हनिष्यसीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न पराञ्चं न
प्रत्यञ्चम्। ऋतस्य हस्ताभ्याम्। ताभ्यामेनं०…एवं वेद ॥ ४८ ॥
ततश्चैनमन्यया प्रतिष्ठया प्राशीर्यया चैतं पूर्वे ऋषयः प्राश्नन्।
अप्रतिष्ठानोऽनायतनो मरिष्यसीत्येनमाह। तं वा अहं नार्वाञ्चं न
पराञ्चं न प्रत्यञ्चम्। सत्ये प्रतिष्ठाय। तयैनं प्राशिषं तयैनमजीगमम्।
एष वा ओदनः सर्वाङ्गः सर्वपरुः सर्वतनूः। सर्वाङ्ग एव
सर्वपरुः सर्वतनूः सं भवति य एवं वेद ॥ ४९ ॥ (६)

पर्याय ५ शं० पा० के अनुसार सूक्त ५

एतद् वै ब्रध्नस्य विष्टपं यदोदनः ॥ ५० ॥
ब्रध्नलोको भवति ब्रध्नस्य विष्टपि श्रयते य एवं वेद ॥ ५१ ॥
एतस्माद्वा ओदनात् त्रयस्त्रिंशतं लोकान् निरमिमीत प्रजापतिः ।५२।
तेषां प्रज्ञानाय यज्ञमसृजत ॥ ५३ ॥
स य एवं विदुष उपद्रष्टा भवति प्राणं रुणद्धि ॥ ५४ ॥

न च प्राणं रुणद्धि सर्वज्यानिं जीयते ॥ ५५ ॥ न च सर्वज्यानिं
जीयते पुरैनं जरसः प्राणो जहाति ॥ ५६ ॥ (१०) [२।१]

—:०:—

सूक्त ४ (शं० पाण्डु० अनुसार ६)

ऋषिः—भार्गवो वैदर्भिः ॥ देवता—प्राणः ॥ छन्दः—१ शङ्कुमत्यनुष्टुप्; २—७, ९—१३, १६—१९, २३—२५ अनुष्टुप्; ८ पथ्या पङ्क्तिः; १४ निचृदनुष्टुप्; १५ भुरिगनुष्टुप्; २० अनुष्टुब्गर्भा त्रिष्टुप्; २१ मध्येज्योतिर्जगती; २२ त्रिष्टुप्; २६ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप् । मन्त्र २६ ॥

प्राणाय नमो यस्य सर्वमिदं वशे । यो भूतः सर्वस्येश्वरो यस्मिन्त्सर्वं
प्रतिष्ठितम् ॥ १ ॥

नमस्ते प्राण क्रन्दाय नमस्ते स्तनयित्नवे । नमस्ते प्राण विद्युते
नमस्ते प्राण वर्षते ॥ २ ॥

यत् प्राण स्तनयित्नुनाभिक्रन्दत्योषधीः । प्र वीयन्ते गर्भान् दधतेऽथो
बह्वीर्वि जायन्ते ॥ ३ ॥

यत् प्राण ऋतावागतेऽभिक्रन्दत्योषधीः । सर्वं तदा प्र मोदते यत्
किं च भूम्यामधि ॥ ४ ॥

यदा प्राणो अभ्यवर्षीद् वर्षेण पृथिवीं महीम् । पशवस्तत् प्र मोदन्ते
महो वै नो भविष्यति ॥ ५ ॥

अभिवृष्टा ओषधयः प्राणेन समवादिरन् । आयुर्वै नः प्रातीतरः सर्वा
नः सुरभीरकः ॥ ६ ॥

नमस्ते अस्त्वायते नमो अस्तु परायते । नमस्ते प्राण तिष्ठत
आसीनायोत ते नमः ॥ ७ ॥

नम॑स्ते प्राण प्राण॒ते नमो॑ अस्त्वपान॒ते । प॒राचीना॑य ते॒ नमः॑ प्रती॒ची-
ना॑य ते॒ नम॒ः सर्व॑स्मै त इ॒दं नमः॑ ॥ ८ ॥
या ते॑ प्राण प्रि॒या त॒नूर्यो॑ ते॑ प्राण॒ प्रेय॑सी । अथो॒ यद् भेष॒जं तव॒
तस्य॑ नो धेहि जीवसे॑ ॥ ९ ॥
प्रा॒णः प्र॒जा अनु॑ वस्ते पि॒ता पु॒त्रमि॑व प्रि॒यम् । प्रा॒णो ह॒ सर्व॑स्येश्व॒रो
यच्च॑ प्रा॒णति॒ यच्च॒ न ॥ १० ॥ (११)
प्रा॒णो मृ॒त्युः प्रा॒णस्त॒क्मा प्रा॒णं दे॒वा उपा॑सते । प्रा॒णो ह॑ सत्यवा॒दिन॑-
मुत्त॒मे लो॒क आ द॑धत् ॥ ११ ॥
प्रा॒णो वि॒राट् प्रा॒णो देष्ट्री॑ प्रा॒णं सर्व॒ उपा॑सते । प्रा॒णो ह॒ सूर्य॑श्च॒न्द्रमाः॑
प्रा॒णमा॑हुः प्र॒जाप॑तिम् ॥ १२ ॥
प्रा॒णा॒पा॒नौ व्री॑हिय॒वाव॑न॒ड्वान् प्रा॒ण उ॑च्यते । यवे॑ ह प्रा॒ण आहि॑-
तोऽपा॒नो व्री॒हिरु॑च्यते ॥ १३ ॥
अपा॑नति॒ प्राण॑ति पुरु॑षो॒ गर्भे॑ अन्त॒रा । य॒दा त्वं प्रा॑ण॒ जिन्व॒स्यथ॒ स
जा॑यते॒ पुनः॑ ॥ १४ ॥
प्रा॒णमा॑हुर्मात॒रिश्वा॑नं॒ वातो॑ ह प्रा॒ण उ॑च्यते । प्रा॒णे ह॑ भू॒तं भव्यं॑ च
प्रा॒णे सर्वं॒ प्रति॑ष्ठितम् ॥ १५ ॥
आ॒थर्व॒णीरा॑ङ्गिर॒सीर्दै॑वीर्म॑नुष्य॒जा उ॒त । ओष॑धयः॒ प्र जा॑यन्ते य॒दा त्वं
प्रा॑ण॒ जिन्व॑सि ॥ १६ ॥
य॒दा प्रा॒णो अ॒भ्यव॑र्षीद् व॒र्षेण॑ पृथि॒वीं म॒हीम् । ओष॑धय॒ः प्र जा॑य॒न्तेऽथो॒
याः काश्च॑ वी॒रुधः॑ ॥ १७ ॥

यस्ते प्राणेदं वेद यस्मिंश्चासि प्रतिष्ठितः । सर्वे तस्मै बलिं हरान-
मुष्मिंल्लोक उत्तमे ॥ १८ ॥
यथा प्राण बलिहृतस्तुभ्यं सर्वाः प्रजा इमाः । एवा तस्मै बलिं हरान्
यस्त्वा शृणवत् सुश्रवः ॥ १९ ॥
अन्तर्गर्भश्चरति देवतास्वाभूतो भूतः स उ जायते पुनः । स भूतो भव्यं
भविष्यत् पिता पुत्रं प्र विवेशा शचीभिः ॥ २० ॥ (१२)
एकं पादं नोत्खिदति सलिलाद्धंस उच्चरन् । यदङ्ग स तमुत्खिदे-
न्नैवाद्य न श्वः स्यान्न रात्री नाहः स्यान्न व्युच्छेत् कदा चन ॥२१॥
अष्टाचक्रं वर्तत एकनेमि सहस्राक्षरं प्र पुरो नि पश्चा । अर्धेन विश्वं
भुवनं जजान यदस्यार्धं कतमः स केतुः ॥ २२ ॥
यो अस्य विश्वजन्मन ईशे विश्वस्य चेष्टतः । अन्येषु क्षिप्रधन्वने तस्मै
प्राण नमोऽस्तु ते ॥ २३ ॥
यो अस्य सर्वजन्मन ईशे सर्वस्य चेष्टतः । अतन्द्रो ब्रह्मणा धीरः
प्राणो मानु तिष्ठतु ॥ २४ ॥
ऊर्ध्वः सुप्तेषु जागार ननु तिर्यङ् नि पद्यते । न सुप्तमस्य सुप्तेष्वनु
शुश्राव कश्चन ॥ २५ ॥
प्राण मा मत् पर्यावृतो न मदन्यो भविष्यसि । अपां गर्भमिव जीवसे
प्राण बध्नामि त्वा मयि ॥ २६ ॥ (१३) [२।२]

—:o:—

सूक्त ५ (शं० पा० के अनुसार ७)

ऋषिः— ब्रह्मा ॥ देवता—ब्रह्मचारी ॥ छन्दः—१ पुरोऽतिजागता विराड्गर्भा त्रिष्टुप्; २ पञ्चपदा बृहतीगर्भा विराट् शक्वरी; ३ उरोबृहती; ४, ५, २४ त्रिष्टुप्; ६ शाक्वरगर्भा चतुष्पदा जगती; ७ विराड्गर्भा त्रिष्टुप्; ८ पुरोऽतिजागता विराड्-जगती; ९ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप्; १० भुरिक् त्रिष्टुप्; ११, १३ जगती; १२ शाक्वर-गर्भा चतुष्पदा विराडतिजगती; १४, १६—२२ अनुष्टुप्; १५ पुरस्ताज्ज्योति-स्त्रिष्टुप्; २३ पुरोबार्हतातिजागतगर्भा त्रिष्टुप्; २५ आर्च्युष्णिक् (एकावसाना); २६ मध्येज्योतिरुष्णिग्गर्भा त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २६ ।

ब्र॒ह्म॒चा॒रीष्णं॑श्चरति॒ रोद॑सी उ॒भे तस्मि॑न् दे॒वाः संम॑नसो भवन्ति । स
दा॑धार पृथि॒वीं दिवं॑ च॒ स आ॑चा॒र्यं१॒ तप॑सा पिपर्ति ॥ १ ॥
ब्र॒ह्म॒चा॒रिणं॑ पि॒तरो॑ देवज॒नाः पृथ॑ग् दे॒वा अ॑नु॒संय॑न्ति॒ सर्वे॑ । ग॒न्ध॒र्वा
ए॑न॒मन्वा॑य॒न् त्रय॑स्त्रिंशत् त्रिश॒ताः ष॑ट्स॒हस्राः॑ सर्वा॒न्त्स दे॒वांस्तप॑सा
पिपर्ति ॥ २ ॥
आ॒चा॒र्य॑∫ उ॒पन॑यमानो ब्रह्मचा॒रिणं॑ कृणुते॒ गर्भ॑म॒न्तः । तं रात्री॑स्ति॒स्र
उ॒दरे॑ बिभर्ति॒ तं जा॒तं द्रष्टु॑मभि॒संय॑न्ति दे॒वाः ॥ ३ ॥
इ॒यं स॒मित् पृ॑थि॒वी द्यौर्द्वि॒तीयो॒तान्तरि॑क्षं स॒मिधा॑ पृणाति । ब्र॒ह्म॒चा॒री
स॒मिधा॒ मेख॑लया॒ श्रमे॑ण लो॒कांस्तप॑सा पिपर्ति ॥ ४ ॥
पूर्वो॑ जा॒तो ब्रह्म॑णो ब्रह्मचा॒री घ॒र्मं वसा॑न॒स्तप॒सोद॑तिष्ठत् । तस्मा॑ज्जा॒तं
ब्राह्म॑णं॒ ब्रह्म॑ ज्ये॒ष्ठं दे॒वाश्च॒ सर्वे॑ अ॒मृते॑न सा॒कम् ॥ ५ ॥
ब्र॒ह्म॒चा॒र्ये॑∫ति स॒मिधा॒ समि॑द्धः॒ कार्ष्णं॒ वसा॑नो दीक्षि॒तो दी॒र्घश्म॑श्रुः ।
स स॒द्य ए॑ति॒ पूर्व॑स्मा॒दुत्त॑रं समु॒द्रं लो॒कान्त्सं॒गृभ्य॒ मुहु॑राच॑रिक्रत् ॥६॥

ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मापो लोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम् । गर्भो
भूत्वामृतस्य योनाविन्द्रो ह भूत्वासुरांस्ततर्ह ॥ ७ ॥
आचार्यस्ततक्ष नभसी उभे इमे उर्वी गम्भीरे पृथिवीं दिवं च ।
ते रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तस्मिन् देवाः संमनसो भवन्ति ॥ ८ ॥
इमां भूमिं पृथिवीं ब्रह्मचारी भिक्षामा जभार प्रथमो दिवं च । ते
कृत्वा समिधावुपास्ते तयोरार्पिता भुवनानि विश्वा ॥ ९ ॥
अर्वागन्यः परो अन्यो दिवस्पृष्ठाद् गुहा निधी निहितौ ब्राह्मणस्य ।
तौ रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तत् केवलं कृणुते ब्रह्म विद्वान् ।१०। (१४)
अर्वागन्य इतो अन्यः पृथिव्या अग्नी समेतो नभसी अन्तरेमे ।
तयोः श्रयन्ते रश्मयोऽधि दृढास्ताना तिष्ठति तपसा ब्रह्मचारी ॥११॥
अभिक्रन्दन् स्तनयन्नरुणः शितिङ्गो बृहच्छेपोऽनु भूमौ जभार । ब्रह्मचारी
सिञ्चति सानौ रेतः पृथिव्यां तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः ।१२।
अग्नौ सूर्ये चन्द्रमसि मातरिश्वन् ब्रह्मचार्य१प्सु समिधमा दधाति ।
तासामर्चींषि पृथगभ्रे चरन्ति तासामाज्यं पुरुषो वर्षमापः ॥ १३ ॥
आचार्यो मृत्युर्वरुणः सोम ओषधयः पयः । जीमूता आसन्त्सत्वानस्तैरिदं
स्व१राभृतम् ॥ १४ ॥
अमा घृतं कृणुते केवलमाचार्यो भूत्वा वरुणो यद्यदैच्छत् प्रजापतौ ।
तद् ब्रह्मचारी प्रायच्छत् स्वान्मित्रो अध्यात्मनः ॥ १५ ॥
आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः । प्रजापतिर्वि राजति
विराडिन्द्रोऽभवद् वशी ॥ १६ ॥

ब्र॒ह्म॒चर्ये᳚ण॒ तप॑सा॒ राजा॑ रा॒ष्ट्रं वि र॑क्षति । आ॒चा॒र्यो᳡ ब्र॒ह्मचर्ये᳚ण
ब्रह्मचा॒रिण॑मिच्छते ॥ १७ ॥
ब्र॒ह्म॒चर्ये᳚ण क॒न्या॒३॒ युवा॑नं विन्दते॒ पति॑म् । अ॒न॒ड्वान् ब्र॑ह्म॒चर्ये॒णाश्वो᳚
घा॒सं जि॑गीष॑ति ॥ १८ ॥
ब्र॒ह्म॒चर्ये᳚ण॒ तप॑सा दे॒वा मृ॒त्युमपा॑घ्नत । इन्द्रो᳚ ह ब्र॒ह्मचर्ये᳚ण दे॒वेभ्य॒ः
स्व॑१॒राभ॑रत् ॥ १९ ॥
ओष॑धयो भूतभ॒व्यम॑होरा॒त्रे व॒न॒स्पति॑ः । सं॒व॒त्स॒रः स॒हर्तुभि॒स्ते जा॒ता
ब्र॑ह्मचा॒रिण॑ः ॥ २० ॥ (१५)
पार्थि॑वा दि॒व्याः प॒शव॑ आर॒ण्या ग्रा॒म्याश्च॒ ये । अ॒प॒क्षाः प॒क्षिण॑श्च॒ ये
ते जा॒ता ब्र॑ह्मचा॒रिण॑ः ॥ २१ ॥
पृथ॒क् सर्वे᳚ प्राजाप॒त्याः प्रा॒णाना॒त्मसु॑ बिभ्रति । तान्त्सर्वा॒न् ब्रह्म॑ रक्षति
ब्रह्मचा॒रिण्याभृ॑तम् ॥ २२ ॥
दे॒वाना॑मे॒तत् प॑रिषू॒तमन॑भ्यारूढं चरति॒ रोच॑मानम् । तस्मा॑ज्जा॒तं
ब्राह्म॑णं॒ ब्रह्म॑ ज्ये॒ष्ठ दे॒वाश्च॒ सर्वे᳚ अ॒मृते॑न सा॒कम् ॥ २३ ॥
ब्र॒ह्म॒चा॒री ब्रह्म॒ भ्राज॑द् बिभर्ति॒ तस्मि॑न् दे॒वा अधि॒ विश्वे᳚ स॒मोता॑ः ।
प्रा॒णा॒पा॒नौ ज॒नय॒न्नाद् व्या॒नं वाचं॒ मनो॒ हृद॑यं॒ ब्रह्म॑ मे॒धाम् ॥ २४ ॥
चक्षु॒ः श्रोत्रं॒ यशो᳚ अ॒स्मासु॑ धे॒ह्यन्नं॒ रेतो॒ लोहि॑तमु॒दर॑म् ॥ २५ ॥
तानि॒ कल्प॑द् ब्रह्मचा॒री स॑लि॒लस्य॑ पृ॒ष्ठे तपो᳚ऽतिष्ठत् त॒प्यमा॑नः समु॒द्रे ।
स स्ना॒तो ब॒भ्रुः पि॑ङ्ग॒लः पृ॑थि॒व्यां ब॒हु रो॑चते ॥२६॥ (१६) [३।१]

—:o:—

सूक्त ६ (शं० पाण्डु के अनुसार ८)

ऋषिः — शन्तातिः ॥ देवता — अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः — १—२२ अनुष्टुप्; २३ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप्; ॥ मन्त्र २३ ।

अग्निं ब्रूमो वनस्पतीनोषधीरुत वीरुधः । इन्द्रं बृहस्पतिं सूर्यं ते नो मुञ्चत्वंहसः ॥ १ ॥

ब्रूमो राजानं वरुणं मित्रं विष्णुमथो भगम् । अंशं विवस्वन्तं ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥ २ ॥

ब्रूमो देवं सवितारं धातारमुत पषणम् । त्वष्टारमग्रियं ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥ ३ ॥

गन्धर्वाप्सरसो ब्रूमो अश्विना ब्रह्मणस्पतिम् । अर्यमा नाम यो देवस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥ ४ ॥

अहोरात्रे इदं ब्रूमः सूर्याचन्द्रमसावुभा । विश्वानादित्यान् ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥ ५ ॥

वातं ब्रूमः पर्जन्यमन्तरिक्षमथो दिशः । आशाश्च सर्वा ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥ ६ ॥

मुञ्चन्तु मा शपथ्यादहोरात्रे अथो उषाः । सोमो मा देवो मुञ्चतु यमाहुश्चन्द्रमा इति ॥ ७ ॥

पार्थिवा दिव्याः पशव आरण्या उत ये मृगाः । शकुन्तान् पक्षिणो ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥ ८ ॥

भवाशर्वाविदं ब्रूमो रुद्रं पशुपतिश्च यः । इषूर्या एषां संविद्म ता नः सन्तु सदा शिवाः ॥ ९ ॥

दिवं᳚ ब्रूमो॒ नक्ष॑त्राणि॒ भूमिं॑ य॒क्षाणि॒ पर्व॑तान्। स॒मु॒द्रा न॒द्यो᳚ वेश॒न्तास्ते
नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १० ॥ (१७)

स॒प्त॒ऋ॒षीन् वा इ॒दं ब्रू॑मो॒ऽपो दे॒वीः प्र॒जाप॑तिम्। पि॒तॄन् य॒मश्रे॑ष्ठान्
ब्रूम॒स्ते नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ ११ ॥

ये दे॒वा दि॑वि॒षदो॑ अन्तरिक्ष॒सद॑श्च॒ ये। पृ॒थि॒व्यां श॒क्रा ये श्रि॒तास्ते नो॑
मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १२ ॥

आ॒दि॒त्या रु॒द्रा वसं॑वो दि॒वि दे॒वा अथ॑र्वाणः। अङ्गि॑रसो मनी॒षिण॒स्ते
नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १३ ॥

य॒ज्ञं ब्रू॑मो॒ यज॑मान॒मृच॒ः सामा॑नि भेष॒जा। यजूं᳚षि॒ होत्रा॑ ब्रूम॒स्ते नो॑
मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १४ ॥

पञ्च॑ रा॒ज्यानि॑ वी॒रुधां॒ सोम॑श्रेष्ठानि ब्रूमः। द॒र्भो भ॒ङ्गो यव॒ः सह॒स्ते
नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १५ ॥

अ॒राया॑न् ब्रूमो॒ रक्षां॑सि स॒र्पान् पु॑ण्यज॒नान् पि॒तॄन्। मृ॒त्यूनेक॑शतं
ब्रूम॒स्ते नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १६ ॥

ऋ॒तून् ब्रू॑म ऋतु॒पती॑नार्त॒वानु॒त हा॑य॒नान्। समा॑ः संवत्स॒रान् मासां॒स्ते
नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ १७ ॥

एतं॑ देवा दक्षिण॒तः प॒श्चात् प्राञ्च॑ उ॒देत॑। पु॒रस्ता॑दुत्त॒राच्छ॒क्रा विश्वे॑
दे॒वाः स॒मेत्य॒ ते नो॑०··· ॥ १८ ॥

विश्वा॑न् दे॒वानि॒दं ब्रू॑मः स॒त्यसं᳚धानृता॒वृधः॑। विश्वा॑भिः॒ पत्नी॑भिः स॒ह
ते नो॑०··· ॥ १९ ॥

सर्वा॑न् दे॒वानि॒दं ब्रू॑मः स॒त्यसँ॑धानृता॒वृधः॑। सर्वा॑भि॒ः पत्नी॑भिः स॒ह ते
नो॑०··· ॥ २० ॥
भू॒तं ब्रू॑मो भू॒तप॑तिं भू॒ताना॑मु॒त यो व॒शी। भू॒तानि॒ सर्वा॑ सं॒गत्य॒ ते
नो॑०... ॥ २१ ॥
या दे॒वीः पञ्च॑ प्र॒दिशो॒ ये दे॒वा द्वाद॑श॒र्त॑वः। सं॒व॒त्स॒रस्य॒ ये दंष्ट्रा॒स्ते
नः॑ सन्तु॒ सदा॑ शि॒वाः ॥ २२ ॥
यन्मात॑ली रथक्री॒तम॒मृतं॒ वेद॑ भेष॒जम्। तदिन्द्रो॑ अ॒प्सु प्रावे॑शय॒त्
तदापो॑ दत्त भेष॒जम् ॥ २३ ॥ (१८) [३।२]

—:०:—

सूक्त ७ (शं० पा० के अनुसार ९)

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—उच्छिष्टः अध्यात्मम् ॥ छन्दः—१—५, ७—२०, १३—२७ अनुष्टुप्; ६ पुरउष्णिग् बार्हतपराऽनुष्टुप्; २१ स्वराडनुष्टुप्; २२ विराट् पथ्या बृहती ॥ मन्त्र २७।

उच्छि॑ष्टे॒ नाम॑ रू॒पं चोच्छि॑ष्टे लो॒क आहि॑तः। उच्छि॑ष्ट॒ इन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॒
विश्व॑म॒न्तः स॒माहि॑तम् ॥ १ ॥
उच्छि॑ष्टे॒ द्यावा॑पृथि॒वी विश्वँ॑ भू॒तं स॒माहि॑तम्। आपः॑ समु॒द्र उच्छि॑ष्टे
च॒न्द्रमा॒ वात॒ आहि॑तः ॥ २ ॥
सन्नुच्छि॑ष्टे॒ अ॒सँश्चो॒भौ मृ॒त्युर्वाजः॑ प्र॒जाप॑तिः। लौ॒क्या उच्छि॑ष्ट॒ आय॑त्ता॒
व्रश्च॒ द्रश्चा॒पि श्रीर्मयि॑ ॥ ३ ॥
दृ॒ढो दृँह॑स्थि॒रो न्यो ब्रह्म॑ विश्व॒सृजो॒ दश॑। नाभि॑मिव स॒र्वत॑श्च॒क्रमुच्छि॑ष्टे
दे॒वताः॑ श्रि॒ताः ॥ ४ ॥

ऋक् साम यजुरुच्छिष्ट उद्गीथः प्रस्तुतं स्तुतम्। हिङ्कार उच्छिष्टे स्वरः साम्नो मेडिश्च तन्मयि ॥ ५ ॥

ऐन्द्राग्नं पावमानं महानाम्नीर्महाव्रतम्। उच्छिष्टे यज्ञस्याङ्गान्यन्तर्गर्भ इव मातरि ॥ ६ ॥

राजसूयं वाजपेयमग्निष्टोमस्तदध्वरः। अर्काश्वमेधावुच्छिष्टे जीवबर्हिर्मदिन्तमः ॥ ७ ॥

अग्न्याधेयमथो दीक्षा कामप्रश्छन्दसा सह। उत्सन्ना यज्ञाः सत्राण्युच्छिष्टेऽधि समाहिताः ॥ ८ ॥

अग्निहोत्रं च श्रद्धा च वषट्कारो व्रतं तपः। दक्षिणेष्टं पूर्तं चोच्छिष्टेऽधि समाहिताः ॥ ९ ॥

एकरात्रो द्विरात्रः सद्यःक्रीः प्रक्रीरुक्थ्यः। ओतं निहितमुच्छिष्टे यज्ञस्याणूनि विद्यया ॥ १० ॥ (१९)

चतूरात्रः पञ्चरात्रः षड्रात्रश्चोभयः सह। षोडशी सप्तरात्रश्चोच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे ये यज्ञा अमृते हिताः ॥ ११ ॥

प्रतीहारो निधनं विश्वजिच्चाभिजिच्च यः। साह्नातिरात्रावुच्छिष्टे द्वादशाहोऽपि तन्मयि ॥ १२ ॥

सूनृता संनतिः क्षेमः स्वधोर्जामृतं सहः। उच्छिष्टे सर्वे प्रत्यञ्चः कामाः कामेन तातृपुः ॥ १३ ॥

नव भूमीः समुद्रा उच्छिष्टेऽधि श्रिता दिवः। आ सूर्यो भात्युच्छिष्टेऽहोरात्रे अपि तन्मयि ॥ १४ ॥

उपहव्यं विषूवन्तं ये च यज्ञा गुहा हिताः । बिभर्ति भर्ता विश्वस्योच्छिष्टो
जनितुः पिता ॥ १५ ॥
पिता जनितुरुच्छिष्टोऽसोः पौत्रः पितामहः । स क्षियति विश्वस्येशानो
वृषा भूम्यामतिघ्न्यः ॥ १६ ॥
ऋतं सत्यं तपो राष्ट्रं श्रमो धर्मश्च कर्म च । भूतं भविष्यदुच्छिष्टे
वीर्यं लक्ष्मीर्बलं बले ॥ १७ ॥
समृद्धिरोज आकूतिः क्षत्रं राष्ट्रं षडुर्व्यः । संवत्सरोऽध्युच्छिष्ट इडा
प्रैषा ग्रहा हविः ॥ १८ ॥
चतुर्होतार आप्रियश्चातुर्मास्यानि नीविदः । उच्छिष्टे यज्ञा होत्राः
पशुबन्धास्तदिष्टयः ॥ १९ ॥
अर्धमासाश्च मासाश्चार्तवा ऋतुभिः सह । उच्छिष्टे घोषिणीरापः
स्तनयित्नुः श्रुतिर्मही ॥ २० ॥ (२०)
शर्कराः सिकता अश्मान ओषधयो वीरुधस्तृणा । अभ्राणि विद्युतो
वर्षमुच्छिष्टे संश्रिता श्रिता ॥ २१ ॥
राद्धिः प्राप्तिः समाप्तिर्व्याप्तिर्मह एधतुः । अत्याप्तिरुच्छिष्टे भूतिश्चाहिता
निहिता हिता ॥ २२ ॥
यच्च प्राणति प्राणेन यच्च पश्यति चक्षुषा । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे
दिवि देवा दिविश्रितः ॥ २३ ॥
ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे
दिवि देवा दिविश्रितः ॥ २४ ॥

प्रा॒णा॒पा॒नौ चक्षु॒ः श्रोत्र॒मक्षि॑तिश्च॒ क्षिति॑श्च॒ या। उच्छि॑ष्टाज्जज्ञि॒रे सर्वे॑
दि॒वि दे॒वा दि॑वि॒श्रितः॑ ॥ २५ ॥
आ॒न॒न्दा मोदाः॑ प्र॒मुदो॑ऽभीमोद॒मुद॑श्च॒ ये । उच्छि॑ष्टाज्जज्ञि॒रे सर्वे॑
दि॒वि दे॒वा दि॑वि॒श्रितः॑ ॥ २६ ॥
दे॒वाः पि॒तरो॑ मनु॒ष्या॑ऽ गन्धर्वाप्स॒रस॑श्च॒ ये। उच्छि॑ष्टाज्जज्ञि॒रे सर्वे॑
दि॒वि दे॒वा दि॑वि॒श्रितः॑ ॥ २७ ॥ (२१) [४।१]

—:०:—

सूक्त ८ (शं० पा० के अनुसार १०)

ऋषिः—कौरुपथिः ॥ देवता—मन्युः; अध्यात्मम् ॥ छन्दः—१—३२, ३४ अनुष्टुप्; ३३ पथ्या पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ३४।

यन्म॒न्युर्जा॒यामाव॑हत् संक॒ल्पस्य॑ गृ॒हादधि॑। क आ॑सं॒ जन्या॒ः के व॒राः
क उ॑ ज्येष्ठव॒रोऽभवत् ॥ १ ॥
तप॑श्चै॒वास्तां॒ कर्म॑ चा॒न्तर्म॑ह॒त्यऽर्ण॒वे। त आ॑सं॒ जन्या॒स्ते व॒रा ब्रह्म॑
ज्येष्ठव॒रोऽभवत् ॥ २ ॥
दश॑ सा॒कम॑जायन्त दे॒वा दे॒वेभ्य॑ः पु॒रा। यो वै ता॒न् वि॒द्यात् प्र॒त्यक्षं॒
स वा अ॒द्य म॒हद् व॑देत ॥ ३ ॥
प्रा॒णा॒पा॒नौ चक्षु॒ः श्रोत्र॒मक्षि॑तिश्च॒ क्षिति॑श्च॒ या। व्या॒नो॒दा॒नौ वाङ्
मन॒स्ते वा आकू॑ति॒माव॑हन् ॥ ४ ॥
अजा॑ता आसन्नृ॒तवोऽथो॑ धा॒ता बृह॒स्पति॑ः। इ॒न्द्रा॒ग्नी अ॒श्विना॒ तर्हि॒ कं
ते ज्ये॒ष्ठमुपा॑सत ॥ ५ ॥

तपश्चैवास्तां कर्म चान्तर्महत्यर्णवे । तपो ह जज्ञे कर्मणस्तत् ते ज्येष्ठमुपासत ॥ ६ ॥

येत आसीद् भूमिः पूर्वा यामद्धातय इद् विदुः । यो वै तां विद्यान्नामथा स मन्येत पुराणवित् ॥ ७ ॥

कुत इन्द्रः कुतः सोमः कुतो अग्निरजायत । कुतस्त्वष्टा समभवत् कुतो धाताजायत ॥ ८ ॥

इन्द्रादिन्द्रः सोमात् सोमो अग्नेरग्निरजायत । त्वष्टा ह जज्ञे त्वष्टुर्धातुर्धाताजायत ॥ ९ ॥

ये त आसन् दश जाता देवा देवेभ्यः पुरा । पुत्रेभ्यो लोकं दत्त्वा कस्मिंस्ते लोक आसते ॥ १० ॥ (२२)

यदा केशानस्थि स्नाव मांसं मज्जानमाभरत् । शरीरं कृत्वा पादवत् कं लोकमनु प्राविशत् ॥ ११ ॥

कुतः केशान् कुतः स्नाव कुतो अस्थीन्याभरत् । अङ्गा पर्वाणि मज्जानं को मांसं कुत आभरत् ॥ १२ ॥

संसिचो नाम ते देवा ये संभारान्त्समभरन् । सर्वं संसिच्य मर्त्यं देवाः पुरुषमाविशन् ॥ १३ ॥

ऊरू पादावष्ठीवन्तौ शिरो हस्तावथो मुखम् । पृष्टीर्बर्जह्ये पार्श्वे कस्तत् समदधादृषिः ॥ १४ ॥

शिरो हस्तावथो मुखं जिह्वां ग्रीवाश्च कीकसाः । त्वचा प्रावृत्य सर्वं तत् संधा समदधान्मही ॥ १५ ॥

य॒त्तच्छरी॑र॒मश॑यत् सं॒धया॒ संहि॑तं म॒हत् । येने॒दम॒द्य रोच॑ते॒ को अ॑स्मि॒न्
वर्ण॒माभ॑रत् ॥ १६ ॥
सर्वे॑ दे॒वा उपा॑शिक्ष॒न् तद॑जानाद् व॒धूः स॒ती । ई॒शा वश॑स्य॒ या जा॒या
सास्मि॒न् वर्ण॒माभ॑रत् ॥ १७ ॥
य॒दा त्वष्टा॒ व्यतृ॑णत् पि॒ता त्वष्टु॒र्य उत्त॑रः । गृ॒हं कृ॒त्वा मर्त्यं॑ दे॒वाः
पुरु॑ष॒मावि॑शन् ॥ १८ ॥
स्वप्नो॒ वै त॒न्द्रीर्निर्ऋ॑तिः पा॒प्मानो॒ नाम॑ दे॒वताः॑ । ज॒रा खाल॑त्यं॒
पालि॑त्यं॒ शरी॑र॒मनु॒ प्रावि॑शन् ॥ १९ ॥
स्तेयं॑ दुष्कृ॒तं बृ॑जि॒नं स॒त्यं य॒ज्ञो यशो॑ बृ॒हत् । बलं॑ च क्ष॒त्रमोज॑श्च॒
शरी॑र॒मनु॒ प्रावि॑शन् ॥ २० ॥ (२३)
भूति॑श्च॒ वा अभू॑तिश्च रा॒तयोऽरा॑तयश्च॒ याः । क्षुध॑श्च॒ सर्वा॒स्तृष्णा॑श्च॒
शरी॑र॒मनु॒ प्रावि॑शन् ॥ २१ ॥
नि॒न्दाश्च॒ वा अनि॑न्दाश्च॒ यच्च॒ हन्तेति॒ नेति॑ च । शरी॑रं श्र॒द्धा
दक्षि॒णाश्र॑द्धा चानु॒ प्रावि॑शन् ॥ २२ ॥
वि॒द्याश्च॒ वा अवि॑द्याश्च॒ यच्चा॒न्यदु॑पदे॒श्य]म् । शरी॑रं॒ ब्रह्म॒ प्रावि॑श॒दृचः॒
सामाथो॒ यजुः॑ ॥ २३ ॥
आ॒न॒न्दा मोदाः॑ प्र॒मुदो॑ऽभीमोद॒मुद॑श्च॒ ये । ह॒सो न॒रिष्टा॑ नृ॒त्तानि॒
शरी॑र॒मनु॒ प्रावि॑शन् ॥ २४ ॥
आ॒ला॒पाश्च॑ प्र॒ला॒पाश्चा॑भीला॒प॒लप॑श्च॒ ये । शरी॑रं॒ सर्वे॒ प्रावि॑शन्ना॒युजः॑
प्र॒युजो॒ युजः॑ ॥ २५ ॥

प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रमक्षितिश्च क्षितिश्च या । व्यानोदानौ
वाङ्मनः शरीरेण त ईयन्ते ॥ २६ ॥

आशिषश्च प्रशिषश्च संशिषो विशिषश्च याः । चित्तानि सर्वे
संकल्पाः शरीरमनु प्राविशन् ॥ २७ ॥

आस्तेयीश्च वास्तेयीश्च त्वरणाः कृपणाश्च याः । गुह्याः शुक्राः
स्थूला अपस्ता बीभत्सावसादयन् ॥ २८ ॥

अस्थि कृत्वा समिधं तदष्टापो असादयन् । रेतः कृत्वाज्यं देवाः
पुरुषमाविशन् ॥ २९ ॥

या आपो याश्च देवता या विराड् ब्रह्मणा सह । शरीरं ब्रह्म
प्राविशच्छरीरेऽधि प्रजापतिः ॥ ३० ॥

सूर्यश्चक्षुर्वातः प्राणं पुरुषस्य वि भेजिरे । अथास्येतरमात्मानं देवाः
प्रायच्छन्नग्नये ॥ ३१ ॥

तस्माद् वै विद्वान् पुरुषमिदं ब्रह्मेति मन्यते । सर्वा ह्यस्मिन् देवता
गावो गोष्ठ इवासते ॥ ३२ ॥

प्रथमेन प्रमारेण त्रेधा विष्वङ् वि गच्छति । अद एकेन गच्छत्यद
एकेन गच्छतीहैकेन नि षेवते ॥ ३३ ॥

अप्सु स्तीमासु वृद्धासु शरीरमन्तरा हितम् । तस्मिञ्छवोऽध्यन्तरा
तस्माच्छवोऽध्युच्यते ॥ ३४ ॥ (२४) [४१२]

सूक्त ९ (शं० पा० के अनुसार ११)

ऋषिः—काङ्कायनः ॥ देवता—अर्बुदिः ॥ छन्दः—१ सप्तपदा विराट् शक्वरी; २, ५—८, १०, १२, १३, १८—२१ अनुष्टुप्; ३ परोष्णिक्; ४ उष्णिग् बृहती-गर्भा परात्रिष्टुप् षट्पदाऽतिजगती; ९, ११, १४, २३, २६ पथ्यापङ्क्तिः; १५, २२, २४, २५ सप्तपदा शक्वरी; १६ पञ्चपदा विराडुपरिष्टाज्ज्योतिस्त्रिष्टुप्; १७ त्रिपदा गायत्री ॥ मन्त्र २६ ।

ये बा॒ह॒वो या इष॑वो॒ धन्व॑नां वी॒र्या᳡णि च । अ॒सीन् प॑र॒शूनायु॑धं
चि॒त्ताकू॑तं च॒ यद्धृ॒दि । सर्वं॒ तद॑र्बुदे॒ त्वम॒मित्रे॑भ्यो दृ॒शे कु॑रूदा॒रांश्च॒ प्र
द॑र्शय ॥ १ ॥

उत्ति॑ष्ठत॒ सं न॑ह्यध्वं॒ मित्रा॒ देव॑जना यू॒यम् । संदृ॑ष्टा गु॒प्ता वः॑ सन्तु॒ या
नो॑ मि॒त्राण्य॑र्बुदे ॥ २ ॥

उत्ति॑ष्ठत॒मा र॑भेथामादानसंदा॒नाभ्या॑म् । अ॒मित्रा॑णां॒ सेना॑ अ॒भि
ध॑त्तमर्बुदे ॥ ३ ॥

अर्बु॑दि॒र्नाम॒ यो दे॒व ईशा॑नश्च॒ न्य᳡र्बुदिः । याभ्या॑म॒न्तरि॑क्ष॒मावृ॑तमि॒यं
च॑ पृथि॒वी म॒ही । ताभ्या॒मिन्द्र॑मेदिभ्याम॒हं जि॒तमन्वे॑मि॒ सेन॑या ॥४॥

उत्ति॑ष्ठ॒ त्वं दे॑वज॒नार्बु॑दे॒ सेन॑या स॒ह । भ॒ञ्जन्न॒मित्रा॑णां॒ सेनां॑ भो॒गेभि॑ः
परि॑ वारय ॥ ५ ॥

स॒प्त जा॒तान् न्य᳡र्बुद उदा॒राणां॑ समी॒क्षय॑न् । तेभि॒ष्ट्वमाज्ये॑ हु॒ते
सर्वैँ॒रुत्ति॑ष्ठ॒ सेन॑या ॥ ६ ॥

प्र॒ति॒घ्ना॒ना॑श्रु॒मु॒खी कृ॑धुक॒र्णी च॑ क्रोशतु । वि॒के॒शी पुरु॑षे ह॒ते र॑दि॒ते
अर्बु॑दे॒ तव॑ ॥ ७ ॥

संकर्षन्ती करूकरं मनसा पुत्रमिच्छन्ती । पतिं भ्रातरमात् स्वान्
रदिते अर्बुदे तव ॥ ८ ॥
अलिक्लवा जाष्कमदा गृध्राः श्येनाः पतत्रिणः । ध्वाङ्क्षाः शकुन-
यस्तृप्यन्त्वमित्रेषु समीक्षयन् रदिते अर्बुदे तव ॥ ९ ॥
अथो सर्वं श्वापदं मक्षिका तृप्यतु क्रिमिः । पौरुषेयेऽधि कुणपे रदिते
अर्बुदे तव ॥ १० ॥ (२५)
आ गृह्णीतं सं बृहतं प्राणापानान् न्यर्बुदे । निवाशा घोषाः सं यन्त्व-
मित्रेषु समीक्षयन् रदिते अर्बुदे तव ॥ ११ ॥
उद् वेपय सं विजन्तां भियामित्रान्त्सं सृज । उरुग्राहैर्बाह्वङ्कैर्विध्या-
मित्रान् न्यर्बुदे ॥ १२ ॥
मुह्यन्त्वेषां बाहवश्चित्ताकूतं च यद्धृदि । मैषामुच्छेषि किं चन रदिते
अर्बुदे तव ॥ १३ ॥
प्रतिघ्नानाः सं धावन्तूरः पटूरावाघ्नानाः । अघारिणीर्विकेश्यो]
रुदत्य१ः पुरुषे हते रदिते अर्बुदे तव ॥ १४ ॥
श्व[न्वतीरप्सरसो रूपका उतार्बुदे । अन्तःपात्रे रेरिहतीं रिशां दुर्णि-
हितैषिणीम् । सर्वास्ता अर्बुदे त्वममित्रेभ्यो दृशे कुरूदारांश्च प्र
दर्शय ॥ १५ ॥
खड्रेऽधिचङ्क्रमां खर्विकां खर्ववासिनीम् । य उदारा अन्तर्हिता
गन्धर्वाप्सरसश्च ये । सर्पा इतरजना रक्षांसि ॥ १६ ॥
चतुर्दंष्ट्राञ्छ्यावदतः कुम्भमुष्काँ असृङ्मुखान् । स्वभ्यसा ये
चोद्भ्यसाः ॥ १७ ॥

उद् वे॑पय॒ त्वम॑र्बुदे॒ऽमित्रा॑णाम॒मूः सिचः॑। जयाँ॑श्च जि॒ष्णुश्चा॒मित्राँ॒-
जय॑न्ता॒मिन्द्र॑मेदिनौ ॥ १८ ॥
प्रव्ली॑नो मृदि॒तः श॑यां ह॒तो॒३॒मित्रो॑ न्य॑र्बुदे। अ॒ग्नि॒जि॒ह्वा धू॑मशि॒खा
जय॑न्तीर्यन्तु॒ सेन॑या ॥ १९ ॥
तया॑र्बुदे॒ प्रणु॑त्ताना॒मिन्द्रो॑ हन्तु॒ वरँ॑वरम्। अ॒मित्रा॑णां॒ शची॑पति॒र्मामीषाँ॑
मोचि॒ कश्च॒न ॥ २० ॥ (२६)
उत्क॑सन्तु॒ हृद॑यान्यू॒र्ध्वः प्रा॒ण उदी॑षतु। शौ॒ष्का॒स्यमनु॑ वर्त॑ताम॒मित्रा॒न्
मोत मि॒त्रिणः॑ ॥ २१ ॥
ये च॒ धीरा॒ ये चाधी॑राः परा॑ञ्चो बधि॒राश्च॒ ये। त॒म॒सा ये च॑ तू॒परा
अथो॑ बस्ताभिवा॒सिनः॑। सर्वा॒स्ताँ अ॑र्बुदे॒ त्वम॒मित्रे॑भ्यो दृशे कु॑रूदा॒रांश्च॒
प्र द॑र्शय ॥ २२ ॥
अर्बु॑दिश्च॒ त्रिष॑न्धिश्चा॒मित्रा॑न् नो॒ वि वि॑ध्यताम्। यथै॑षामिन्द्र वृत्रह॒न्
हना॑म शचीपते॒ऽमित्रा॑णां सहस्र॒शः ॥ २३ ॥
वन॒स्पती॑न् वानस्प॒त्यानोष॑धीरु॒त वी॒रुधः॑। ग॒न्ध॒र्वा॒प्स॒रसः॑ स॒र्पान्
दे॒वान् पु॑ण्यज॒नान् पि॒तॄन्। सर्वा॒स्ताँ अ॑र्बुदे॒ त्वम॒मित्रे॑भ्यो दृशे कु॑रू-
दा॒रांश्च॒ प्र द॑र्शय ॥ २४ ॥
ई॒शां वो॑ म॒रुतो॑ दे॒व आ॑दि॒त्यो ब्रह्म॑ण॒स्पतिः॑। ई॒शां व॒ इन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॑
धा॒ता मि॒त्रः प्र॒जाप॑तिः। ई॒शां व॒ ऋष॑यश्चक्रुर॒मित्रे॑षु स॒मीक्षय॑न् रदि॒ते
अ॑र्बुदे॒ तव॑ ॥ २५ ॥

ते॒षां स॒र्वे॑षा॒मीशा॑ना॒ उत्ति॑ष्ठत॒ सं न॑ह्यध्व॒ं मित्रा॒ देव॑जना यूयम् । इ॒मं
सं॑ग्रा॒मं सं॒जित्य॑ यथालो॒कं वि ति॑ष्ठध्वम् ॥ २६ ॥ (२७) [५।१]

—:०:—

सूक्त १० (शं० पा० के अनुसार १२)

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—त्रिषन्धिः ॥ छन्दः—१ विराट् पथ्याबृहती; २ षट्पदा त्रिष्टुब्गर्भाऽतिजगती; ३ विराडास्तारपङ्क्तिः; ४ विराडनुष्टुप्; ५—७, १०, ११, १४, १५, १८—२०, २३, २४ अनुष्टुप्; ८ विराट् त्रिष्टुप्। ९ पुरोविराड् त्रिष्टुप्; ९ पुरोविराड् पुरस्ताज्ज्योतिस्त्रिष्टुप्; १२ पञ्चपदा पथ्यापङ्क्तिः; १३ षट्पदा जगती; १६ षट्पदा ककुम्मत्यनुष्टुप्त्रिष्टुब्गर्भा शक्वरी; १७ पथ्यापङ्क्तिः; २१ त्रिपदा गायत्री; २२ विराट् पुरस्ताद् बृहती; २५ ककुम् (उष्णिक्); २६ प्रस्तारपङ्क्तिः ॥ मन्त्र २७ ।

उत्ति॑ष्ठत॒ सं न॑ह्यध्व॒मुदा॑राः के॒तुभि॑ः स॒ह । स॒र्पा॒ इत॑रजना॒ रक्षां॑स्य॒-
मित्रा॒ननु॑ धावत ॥ १ ॥

ई॒शां वो॑ वेद॒ राज्य॒ं त्रिष॑न्धे अरु॒णैः के॒तुभि॑ः स॒ह । ये अ॒न्तरि॑क्षे ये दि॒वि
पृ॑थि॒व्यां ये च॑ मान॒वाः । त्रिष॑न्धे॒स्ते चेत॑सि दु॒र्णामा॑न॒ उपा॑सताम् ।२।

अयो॑मुखाः सू॒चीमु॑खा॒ अथो॑ विकङ्क॒तीमु॑खाः । क्र॒व्यादो॒ वात॑रंहस॒
आ सं॑जन्त्व॒मित्रा॒न् वज्रे॑ण॒ त्रिष॑न्धिना ॥ ३ ॥

अ॒न्तर्धे॑हि जातवेद॒ आदि॑त्य॒ कुण॑पं ब॒हु । त्रिष॑न्धेरि॒यं सेना॒ सुहि॑तास्तु
मे॒ वशे॑ ॥ ४ ॥

उत्ति॑ष्ठ॒ त्वं दे॑वज॒नार्बु॑दे॒ सेन॑या स॒ह । अ॒यं ब॒लिर्व॒ आहु॑त॒स्त्रिष॑न्धे॒राहु॑तिः
प्रि॒या ॥ ५ ॥

शि॒ति॒प॒दी सं द्य॑तु शर॒व्ये॒३यं चतु॑ष्पदी । कृत्ये॒ऽमित्रे॑भ्यो भव॒ त्रिष॑न्धेः
स॒ह सेन॑या ॥ ६ ॥

धू॒मा॒क्षी सं प॑ततु कृधुक॒र्णी च॑ क्रोशतु । त्रिषं॑धे॒ः सेन॑या जि॒ते अ॑रु॒णाः
स॑न्तु के॒त॑वः ॥ ७ ॥
अवा॑यन्तां प॒क्षिणो॒ ये वयां॑स्य॒न्तरि॑क्षे दि॒वि ये चर॑न्ति । श्वाप॑दो॒
मक्षि॑का॒ः सं र॑भन्तामा॒मादो॒ गृध्रा॒ः कुण॑पे रदन्ताम् ॥ ८ ॥
यामिन्द्रे॑ण सं॒धां स॒मध॑त्था॒ ब्रह्म॑णा च बृहस्पते । तया॒हमि॑न्द्रसं॒धया॒
सर्वा॑न् दे॒वानि॒ह हु॑व इ॒तो ज॑यत॒ मामु॑तः ॥ ९ ॥
बृह॒स्पति॑राङ्गिर॒स ऋष॑यो॒ ब्रह्म॑संशिताः । अ॒सु॒र॒क्षय॑णं व॒धं त्रिषं॑धिं
दि॒व्याश्रय॑न् ॥ १० ॥ (२८)
येना॒सौ गुप्त आ॑दि॒त्य उ॒भाविन्द्र॑श्च॒ तिष्ठ॑तः । त्रिषं॑धिं दे॒वा
अ॑भज॒न्तौज॑से च॒ बला॑य च ॥ ११ ॥
सर्वा॑ँल्लो॒कान्त्सम॑जयन् दे॒वा आहु॑त्या॒नया॑ । बृह॒स्पति॑राङ्गिर॒सो वज्रं॒
यमसि॑ञ्चतासुर॒क्षय॑णं व॒धम् ॥ १२ ॥
बृह॒स्पति॑राङ्गिर॒सो वज्रं॒ यमसि॑ञ्चतासुर॒क्षय॑णं व॒धम् । तेना॒हम॒मूं सेना॑ं
नि लि॑म्पामि बृहस्पते॒ऽमित्रा॑न् ह॒न्म्योज॑सा ॥ १३ ॥
सर्वे॑ दे॒वा अ॒त्याय॑न्ति॒ ये अ॒श्नन्ति॒ वष॑ट्कृतम् । इ॒मां जु॑षध्व॒माहु॑तिमि॒तो
ज॑यत मामु॑तः ॥ १४ ॥
सर्वे॑ दे॒वा अ॒त्याय॑न्तु त्रिषं॑धे॒राहु॑तिः प्रि॒या । सं॒धां म॑ह॒तीं र॑क्षत॒
यया॒ग्रे असु॑रा जि॒ताः ॥ १५ ॥
वा॒युर॒मित्रा॑णामिष्व॒ग्राण्याश्च॑तु । इन्द्र॑ एषां बा॒हून् प्रति॑ भनक्तु॒ मा
श॑कन् प्रति॒धामिषु॑म् । आ॒दि॒त्य ए॑षाम॒स्त्रं वि ना॑शयतु च॒न्द्रमा॑ युता॒मग॑तस्य॒ पन्था॑म् ॥ १६ ॥

यदि॑ प्रे॒युर्दे᳚वपु॒रा ब्रह्म॒ वर्मा॑णि चक्रि॒रे । त॒नू॒पानं᳚ परि॒पाणं᳚ कृ॒ण्वा॒ना
यदु॑पोचि॒रे सर्वं॒ तद॑र॒सं कृ॑धि ॥ १७ ॥

क्र॒व्यादा॑नुव॒र्तय॑न् मृ॒त्युना॑ च पु॒रोहि॑तम् । त्रिषं᳚धे॒ प्रेहि॒ सेन॑या॒ जया॒-
मित्रा॒न् प्र प॑द्यस्व ॥ १८ ॥

त्रिषं᳚धे॒ तम॑सा॒ त्वम॒मित्रा॒न् परि॑ वारय । पृ॒ष॒दा॒ज्यप्र॑णुत्ता॒नां मामीषां᳚
मोचि॒ कश्च॒न ॥ १९ ॥

शि॒ति॒प॒दी सं प॑तत्व॒मित्रा॑णाम॒मूः सिचः॑ । मुह्य॑न्त्व॒द्यामूः सेना॑ अ॒मि-
त्राणां॑ न्यर्बुदे ॥ २० ॥ (२६)

मू॒ढा अ॒मित्रा॑ न्यर्बुदे ज॒ह्ये᳚षां॒ वरं᳚वरम् । अ॒नया॑ जहि॒ सेन॑या ॥२१॥

यश्च॑ कव॒ची यश्चा॑कव॒चो॒३॒मित्रो॒ यश्चाज्म॑नि । ज्या॒पा॒शैः क॑वचपा॒शै-
रज्म॑ना॒भिह॑तः शयाम् ॥ २२ ॥

ये व॒र्मिणो॒ ये᳚ऽव॒र्माणो॑ अ॒मित्रा॒ ये च॑ व॒र्मिणः॑ । सर्वा॒᳚स्ताँ अ॑र्बुदे
ह॒ताञ्छ्वानो᳚ऽदन्तु भूम्या॑म् ॥ २३ ॥

ये र॒थिनो॒ ये अ॑र॒था अ॑सा॒दा ये च॑ सा॒दिनः॑ । सर्वा᳚नदन्तु॒ तान् ह॒तान्
गृध्राः॑ श्ये॒नाः प॑त॒त्रिणः॑ ॥ २४ ॥

स॒हस्र॑कुणपा शेतामामि॒त्री सेना॑ सम॒रे व॒धाना॑म् । विवि॑द्धा कक॒जा-
कृ॑ता ॥ २५ ॥

म॒र्मा॒विधं॒ रोरु॑वतं सुप॒र्णैर॒दन्तु॑ दु॒श्चितं᳚ मृदि॒तं शया॑नम् । य इ॒मां
प्र॒तीची॒माहु॑तिम॒मित्रो॑ नो॒ युयु॑त्सति ॥ २६ ॥

यां दे॒वा अ॑नुति॒ष्ठन्ति॒ यस्या॒ नास्ति॑ वि॒राध॑नम् । तयेन्द्रो॑ हन्तु॒ वृत्र॒हा वज्रे॑ण॒ त्रि॒षं॑धिना ॥ २७ ॥ (३०) [५१२]

॥ इत्येकादशमं काण्डम् समाप्तम् ॥

अथ द्वादशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—भूमिः ॥ छन्दः—१, ३, १७, २९, ३१, ५५, ६०
त्रिष्टुप्; २ भुरिक् त्रिष्टुप; ४—६, १०, ३८ षट्पदा जगती, ७ प्रस्तार पङ्क्तिः;
८, ११ षट्पदा विराडष्टिः; ९ परानुष्टुप् त्रिष्टुप्; १२, १३, १५, ३७ पञ्चपदा
शक्वरी; १४ महाबृहती; १६, २१ साम्नी त्रिष्टुप्; १८ षट्पदा त्रिष्टुबनुष्टुब्गर्भाति-
शक्वरी; १९ उरोबृहती; २० विराडुरोबृहती; २२ षट्पदा विराडतिजगती; २३
पञ्चपदा विराडतिजगती; २४ पञ्चपदानुष्टुब्गर्भा जगती; २५ सप्तपदोष्णि-
गनुष्टुब्गर्भा शक्वरी; २६ —२८, ३३, ३५, ३९, ४०, ५०, ५४, ५६, ५९, ६३
अनुष्टुप्; ५३ पुरोबार्हतानुष्टुप; ३० (त्रिपदा) विराड् गायत्री; ३२ पुरस्ताज्ज्योति-
स्त्रिष्टुप्; ३४ षट्पदा त्रिष्टुब्बृहतीगर्भातिजगती; ३६ विपरीतपादलक्ष्मा पङ्क्तिः;
४१ षट्पदा ककुम्मती शक्वरी; ४२ स्वराडनुष्टुप्; ४३ विराडास्तारपङ्क्ति; ४४,
४५, ४९ जगती; ४६ षट्पदाऽनुष्टुब्गर्भा पराशक्वरी; ४७ षट्पदोष्णिगनुष्टुब्गर्भा
परातिशक्वरी; ४८ पुरोऽनुष्टुप्त्रिष्टुप्; ५१ षट्पदाऽनुष्टुब्गर्भा ककुम्मती शक्वरी
५२ पञ्चपदाऽनुष्टुब्गर्भा परातिजगती; ५७ पुरोतिजागता जगती; ५८ पुरस्ताद्
बृहती; ६१ पुरोबार्हता त्रिष्टुप्; ६२ परा विराट् (?; निचृत) त्रिष्टुप् ॥

मन्त्र ६३ ।

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति । सा नो
भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुंलोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥ १ ॥
असंबाधं बध्यतो मानवानां यस्या उद्वतः प्रवतः समं बहु । नाना-
वीर्या ओषधीर्या बिभर्ति पृथिवी नः प्रथतां राध्यतां नः ॥ २ ॥
यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो यस्यामन्नं कृष्टयः सबभूवुः । यस्यामिदं
जिन्वति प्राणदेजत् सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु ॥ ३ ॥
यस्याश्चतस्रः प्रदिशः पृथिव्या यस्यामन्नं कृष्टयः सबभूवुः । या
बिभर्ति बहुधा प्राणदेजत् सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु ॥ ४ ॥
यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन् ।
गवामश्वानां वयसश्च विष्ठा भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु ॥ ५ ॥
विश्वंभरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी । वैश्वानरं
बिभ्रती भूमिरग्निमिन्द्रऋषभा द्रविणे नो दधातु ॥ ६ ॥
यां रक्षन्त्यस्वप्ना विश्वदानीं देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम् । सा नो
मधु प्रियं दुहामथो उक्षतु वर्चसा ॥ ७ ॥
यार्णवेऽधि सलिल मग्र आसीद् यां मायाभिरन्वचरन् मनीषिणः ।
यस्या हृदयं परमे व्योमन्त्सत्येनावृतममृतं पृथिव्याः । सा नो
भूमिस्त्विषिं बलं राष्ट्रे दधातूत्तमे ॥ ८ ॥
यस्यामापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति । सा नो
भूमिर्भूरिधारा पयो दुहामथो उक्षतु वर्चसा ॥ ९ ॥

याम॒श्विना॒वमि॑माता॒ं विष्णु॒र्यस्यां॑ विचक्र॒मे । इन्द्रो॒ यां च॒क्र आ॒त्मने॑ऽनमि॒त्रां शची॒पतिः॑ । सा नो॒ भूमि॒र्वि सृ॑जतां मा॒ता पु॒त्राय॑ मे॒ पयः॑ ।१०।

(१)

गि॒रय॑स्ते पर्व॑ता हि॒मव॒न्तोऽर॑ण्यं ते पृथिवि स्यो॒नम॑स्तु । ब॒भ्रुं कृ॒ष्णां रोहि॑णीं वि॒श्वरू॑पां ध्रु॒वां भूमिं॑ पृथि॒वीमिन्द्र॑गुप्ताम् । अजी॒तोऽह॑तो॒ अक्ष॒तोऽध्य॑ष्ठां पृथि॒वीम॒हम् ॥ ११ ॥

यत् ते॒ मध्यं॑ पृथिवि॒ यच्च॒ नभ्यं॒ यास्त॒ ऊर्ज॑स्त॒न्व१ः संबभू॒वुः । तासु॑ नो धेह्य॒भि नः॑ पवस्व मा॒ता भूमिः॑ पु॒त्रो अ॒हं पृ॑थि॒व्याः । प॒र्जन्यः॑ पि॒ता स उ॑ नः पिपर्तु ॥ १२ ॥

यस्या॒ं वेदिं॑ परिगृ॒ह्णन्ति॒ भूम्या॒ं यस्यां॑ य॒ज्ञं त॒न्वते॑ वि॒श्वक॑र्माणः । यस्यां॑ मी॒यन्ते॒ स्वर॑वः पृथि॒व्यामू॒र्ध्वाः शु॒क्रा आहु॑त्याः पु॒रस्ता॑त् सा नो॒ भूमि॑र्वर्धय॒द् वर्ध॑माना ॥ १३ ॥

यो नो॒ द्वेष॑त् पृथिवि यः पृ॑त॒न्याद् योऽभि॒दासा॒न्मन॑सा॒ यो व॒धेन॑ । तं नो॑ भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि ॥ १४ ॥

त्वज्जा॒तास्त्वयि॑ चरन्ति॒ मर्त्या॒स्त्वं बि॑भर्षि द्वि॒पद॒स्त्वं चतु॑ष्पदः । तवे॒मे पृ॑थिवि॒ पञ्च॑ मान॒वा येभ्यो॒ ज्योति॑र॒मृतं॒ मर्त्ये॑भ्य उ॒द्यन्त्सूर्यो॑ र॒श्मिभि॑रात॒नोति॑ ॥ १५ ॥

ता नः॑ प्र॒जाः स दु॑ह्रतां सम॒ग्रा वा॒चो मधु॑ पृथिवि धेहि॒ मह्य॑म् ॥१६॥

वि॒श्व॒स्वं१ मा॒तर॒मोष॑धीनां ध्रु॒वां भूमिं॑ पृथि॒वीं धर्म॑णा धृ॒ताम् । शि॒वां स्यो॒नामनु॑ चरेम वि॒श्वहा॑ ॥ १७ ॥

म॒हत् स॒धस्थं॑ मह॒ती ब॑भूवि॒थ म॒हान् वेग॑ ए॒जथु॑र्वे॒पथु॑ष्टे । म॒हांस्त्वेन्द्रो॑
रक्ष॒त्यप्र॑मादम् । सा नो॑ भूमे॒ प्र रो॑चय॒ हिर॑ण्यस्येव सं॒दृशि॒ मा नो॑
द्विक्षत॒ कश्च॒न ॥ १८ ॥

अ॒ग्निर्भूम्या॒मोष॑धीष्व॒ग्निमापो॑ बिभ्रत्य॒ग्निरश्म॑सु । अ॒ग्निर॒न्तः पुरु॑षेषु॒
गोष्वश्वे॑ष्व॒ग्नय॑ः ॥ १९ ॥

अ॒ग्निर्दि॒व आ त॑पत्य॒ग्नेर्दे॒वस्यो॒र्व॑१॒न्तरि॑क्षम् । अ॒ग्निं मर्ता॑स इन्धते
ह॒व्य॒वाहं॑ घृ॒तप्रि॑यम् ॥ २० ॥ (२)

अ॒ग्निवा॑साः पृथि॒व्य॑सित॒ज्ञूस्त्विषी॑मन्तं॒ संशि॑तं मा कृणोतु ॥ २१ ॥

भूम्यां॑ दे॒वेभ्यो॑ ददति य॒ज्ञं ह॒व्यमरं॑कृतम् । भूम्यां॑ मनु॒ष्या॑ जीवन्ति
स्व॒धयान्ने॑न॒ मर्त्याः॑ । सा नो॒ भूमिः॑ प्रा॒णमायु॑र्दधातु ज॒रद॑ष्टिं मा
पृथि॒वी कृ॑णोतु ॥ २२ ॥

यस्ते॑ ग॒न्धः पृ॑थिवि संब॒भू॒व यं बिभ्र॒त्योष॑धयो॒ यमापः॑ । यं ग॑न्ध॒र्वा
अ॑प्स॒रस॑श्च भेजि॒रे तेन॑ मा सुर॒भिं कृ॑णु॒ मा नो॑ द्विक्षत॒ कश्च॒न ॥२३॥

यस्ते॑ ग॒न्धः पुष्क॑रमावि॒वेश॒ यं सं॑ज॒भ्रुः सू॒र्याया॑ विवा॒हे । अम॑र्त्याः
पृथिवि ग॒न्धमग्रे॒ तेन॑ मा सुर॒भिं कृ॑णु॒ मा नो॑ द्विक्षत॒ कश्च॒न ॥ २४ ॥

यस्ते॑ ग॒न्धः पुरु॑षेषु स्त्री॒षु पुं॒सु भगो॒ रुचिः॑ । यो अश्वे॑षु वी॒रेषु॒ यो
मृ॒गेषू॒त ह॒स्तिषु॑ । क॒न्या॑यां॒ वर्चो॒ यद् भू॑मे॒ तेना॒स्माँ अपि॒ सं सृ॑ज॒ मा
नो॑ द्विक्षत॒ कश्च॒न ॥ २५ ॥

शि॒ला भूमि॒रश्मा॑ पां॒सुः सा भूमिः॒ संधृ॑ता धृ॒ता । तस्यै॒ हिर॑ण्यवक्षसे
पृथि॒व्या अ॑क॒रं नमः॑ ॥ २६ ॥

यस्यां वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्वहा। पृथिवीं विश्वधायसं
धृतामच्छावदामसि ॥ २७ ॥

उदीराणा उतासीनास्तिष्ठन्तः प्रक्रामन्तः। पद्भ्यां दक्षिणसव्याभ्यां
मा व्यथिष्महि भूम्याम् ॥ २८ ॥

विमृग्वरीं पृथिवीमा वदामि क्षमां भूमिं ब्रह्मणा वावृधानाम् ऊर्जं
पुष्टं बिभ्रतीमन्नभागं घृतं त्वाभि नि षीदेम भूमे ॥ २९ ॥

शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये तं नि दध्मः। पवित्रेण
पृथिवि मोत् पुनामि ॥ ३० ॥ (३)

यास्ते प्राचीः प्रदिशो या उदीचीर्यास्ते भूमे अधराद् याश्च पश्चात्
स्योनास्ता मह्यं चरते भवन्तु मा नि पप्तं भुवने शिश्रियाणः ॥३१॥

मा नः पश्चान्मा पुरस्तान्नुदिष्ठा मोत्तरादधरादुत। स्वस्ति भूमे नो
भव मा विदन् परिपन्थिनो वरीयो यावया वधम ॥ ३२ ॥

यावत् तेऽभि विपश्यामि भूमे सूर्येण मेदिना। तावन्मे चक्षुर्मा
मेष्टोत्तरामुत्तरां समाम् ॥ ३३ ॥

यच्छयानः पर्यावर्ते दक्षिणं सव्यमभि भूमे पार्श्वम्। उत्तानास्त्वा
प्रतीचीं यत् पृष्टीभिरधिशेमहे। मा हिंसीस्तत्र नो भूमे सर्वस्य प्रतिशीवरि ॥ ३४ ॥

यत् ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु। मा ते मर्म विमृग्वरि मा
ते हृदयमर्पिपम् ॥ ३५ ॥

ग्री॒ष्मस्ते॑ भूमे व॒र्षाणि॑ श॒रद्धे॑म॒न्तः शिशि॑रो वस॒न्तः। ऋ॒तव॑स्ते॒ विहि॑ता
हाय॒नीर॑होरा॒त्रे पृ॑थिवि नो दुहाताम् ॥ ३६ ॥
याप॑ स॒र्पं वि॒जमा॑ना वि॒मृग्व॑री॒ यस्या॒मास॑न्न॒ग्नयो॒ ये अ॒प्स्व॑१न्तः। परा॒
दस्यू॒न् दद॑ती देवपी॒यूनिन्द्रं॒ वृणा॒ना पृ॑थि॒वी न वृ॒त्रम्। श॒क्राय॑ दध्रे॒
वृ॒ष॒भाय॒ वृष्णे॑ ॥ ३७ ॥
यस्यां॒ सदो॑हविर्धा॒ने यूपो॒ यस्यां॑ निमी॒यते॑। ब्र॒ह्माणो॒ यस्या॒म-
र्च॑न्त्यृ॒ग्भिः साम्ना॑ यजु॒र्विदः॑। यु॒ज्यन्ते॒ यस्या॑मृ॒त्विजः॒ सोम॒मिन्द्रा॑य
पात॑वे ॥ ३८ ॥
यस्यां॒ पूर्वे॑ भूत॒कृत॒ ऋष॑यो॒ गा उद॑नृ॒चुः। स॒प्त स॒त्त्रेण॑ वे॒धसो॑ य॒ज्ञेन॒
तप॑सा स॒ह ३९ ॥
सा नो॒ भूमि॒रा दि॑शतु॒ यद्धनं॑ का॒मया॑महे। भगो॑ अनु॒प्रयुङ्क्ता॒मिन्द्र॑
एतु पुरोग॒वः ॥ ४० ॥ (४)
यस्यां॒ गाय॑न्ति॒ नृत्य॑न्ति॒ भूम्यां॒ मर्त्या॒ व्यै]लबाः। यु॒ध्यन्ते॒ यस्या॑मा-
क्र॒न्दो यस्यां॒ वद॑ति दु॒न्दुभिः॑। सा नो॒ भूमिः॒ प्र णु॑दतां स॒पत्ना॑नसप॒त्नं
मा॑ पृथि॒वी कृ॑णोतु ॥ ४१ ॥
यस्या॒मन्नं॑ व्रीहिय॒वौ यस्या॑ इ॒माः पञ्च॑ कृ॒ष्टयः॑। भू॒म्यै प॒र्जन्य॑पत्न्यै॒
नमो॑ऽस्तु व॒र्षमे॑दसे ॥ ४२ ॥
यस्याः॒ पुरो॑ दे॒वकृ॑ताः॒ क्षेत्रे॒ यस्या॑ विकु॒र्वते॑। प्र॒जाप॑तिः पृथि॒वीं
वि॒श्वग॑र्भा॒माशा॑माशां॒ रण्यां॑ नः कृणोतु ॥ ४३ ॥
नि॒धिं बिभ्र॑ती बहु॒धा गुहा॒ वसु॑ म॒णिं हिर॑ण्यं पृथि॒वी द॑दातु॒ मे।
वसू॑नि नो वसु॒दा रास॑माना दे॒वी द॑धातु सु॒मन॒स्यमा॑ना ॥ ४४ ॥

जनं॒ बिभ्र॑ती बहुधा विवा॑चसं॒ नाना॑धर्माणं पृथि॒वी य॑थौक॒सम् । स॒हस्रं॒
धारा॒ द्रवि॑णस्य मे दुहां ध्रु॒वेव॑ धे॒नुरन॑पस्फुरन्ती ॥ ४५ ॥

यस्ते᳚ स॒र्पो वृश्चि॑कस्तृ॒ष्टदं᳚श्मा हेम॒न्तज॑ब्धो भृम॒लो गुहा॒ शये᳚ । क्रिमि॒-
जिन्व॑त् पृथिवि॒ यद्य॒देज॑ति प्रा॒वृषि॒ तन्नः॒ सर्प॒न्मोप॑ सृप॒द् यच्छि॒वं तेन॑
नो मृड ॥ ४६ ॥

ये ते॒ पन्था॑नो बह॒वो᳚ ज॒नाय॑ना॒ रथ॑स्य॒ वर्त्मान॑सश्च॒ यात॑वे । यैः
सं॒चर॑न्त्युभये᳚ भद्रपा॒पास्तं पन्था॑नं जयेमानमि॒त्रम॑तस्क॒रं यच्छि॒वं तेन॑
नो मृड ॥ ४७ ॥

म॒ल्वं बिभ्र॑ती गुरु॒भृद् भ॑द्रपा॒पस्य॑ नि॒धनं᳚ तिति॒क्षुः । व॒रा॒हेण॑ पृथि॒वी
सं᳚विदा॒ना सू॑क॒राय॒ वि जि॑हीते मृगाय॑ ॥ ४८ ॥

ये त आ॑र॒ण्याः प॒शवो॑ मृगा वने॑ हि॒ताः सिं॒हा व्या॒घ्राः पु॑रु॒षाद॒श्चर॑न्ति ।
उ॒लं वृकं᳚ पृथिवि दु॒च्छुना॑मि॒त ऋक्षीकां॒ रक्षो॒ अप॑ वाधया॒स्मत् ॥४९॥

ये ग॑न्ध॒र्वा अ॑प्स॒रसो॒ ये चा॒राया॑ः किमी॒दिनः॑ । पि॒शा॒चान्त्सर्वा॒
रक्षां॑सि॒ ताना॒स्मद् भू॑मे यावय ॥ ५० ॥ (५)

यां द्वि॒पादः॑ प॒क्षिणः॑ सं॒पत॑न्ति हं॒साः सु॑प॒र्णाः श॑कु॒ना वयां॑सि । यस्यां॒
वातो᳚ मात॒रिश्वेय॑ते॒ रजां॑सि कृ॒ण्वंश्च्या॒वयं᳚श्च वृ॒क्षान् । वात॑स्य
प्र॒वाम॑ुप॒वाम॑नु वात्य॒र्चिः ॥ ५१ ॥

यस्यां᳚ कृ॒ष्णम॑रु॒णं च॒ संहि॑ते अहो॑रा॒त्रे विहि॑ते॒ भूम्या॒मधि॑ । व॒र्षेण॒ भूमिः॑
पृथि॒वी वृ॒तावृ॑ता॒ सा नो᳚ दधातु भ॒द्रया॑ प्रि॒ये धाम॑निधाम॑नि ॥ ५२ ॥

द्यौश्च॑ म इ॒दं पृ॑थि॒वी चा॒न्तरि॑क्षं च मे॒ व्यचः॑ । अ॒ग्निः सू॒र्य आपो᳚ मे॒धां
विश्वे᳚ दे॒वाश्च॒ सं द॑दुः ॥ ५३ ॥

अ॒हम॑स्मि॒ सह॑मान॒ उत्त॑रो॒ नाम॒ भूम्या॑म् । अ॒भी॒षाड॑स्मि विश्वा॒षाडाशा॑माशां॑ विषास॒हिः ॥ ५४ ॥

अ॒दो यद् दे॑वि॒ प्रथ॑माना पु॒रस्ता॑द् दे॒वैरु॒क्ता व्यस॑र्पो महि॒त्वम् । आ त्वा॑ सुभू॒तम॑विशत् त॒दानी॒मक॑ल्पयथाः प्र॒दिश॒श्चत॑स्रः ॥ ५५ ॥

ये ग्राम॒ा यदर॑ण्यं॒ याः स॒भा अधि॒ भूम्या॑म् । ये सं॑ग्रा॒माः समि॑तय॒स्तेषु॒ चारु॑ वदे॒म ते ॥ ५६ ॥

अश्व॑ इव॒ रजो॑ दुधुवे॒ वि तान् जना॒न् य आ॑क्षियन् पृथि॒वीं यादजा॑यत । म॒न्द्राग्रेत्व॑री॒ भुव॑नस्य गो॒पा वन॒स्पती॑ना॒ं गृभि॒रोष॑धीनाम् ॥ ५७ ॥

यद् वदा॑मि॒ मधु॑म॒त् तद् व॑दामि॒ यदीक्षे॒ तद् व॑नन्ति मा । त्विषी॑मानस्मि जूति॒मानवा॒न्यान् ह॑न्मि॒ दोध॑तः ॥ ५८ ॥

श॒न्ति॒वा सु॑र॒भिः स्यो॒ना की॒लालो॑ध्नी॒ पय॑स्वती । भूमि॒रधि॑ ब्रवीतु मे पृथि॒वी पय॑सा स॒ह ॥ ५९ ॥

याम॒न्वैच्छ॑द्ध॒विषा॑ वि॒श्वक॑र्मा॒न्तर॑र्ण॒वे रज॑सि॒ प्रवि॑ष्टाम् । भु॒जि॒ष्यं॑१॒ पात्र॒ं निहि॑तं॒ गुहा॒ यदा॒विर्भोगे॑ अभव॒न्मातृ॒मद्भ्य॑ः ॥ ६० ॥

त्वम॑स्या॒वप॑नी॒ जना॑ना॒मदि॑तिः काम॒दुघा॑ पप्रथा॒ना । यत् त॑ ऊ॒नं तत् त॒ आ पू॑रयाति प्र॒जाप॑तिः प्रथम॒जा ऋ॒तस्य॑ ॥ ६१ ॥

उ॒प॒स्थास्ते॑ अनमी॒वा अ॑य॒क्ष्मा अ॒स्मभ्यं॑ सन्तु पृथिवि॒ प्रसू॑ताः । दी॒र्घं॑ न॒ आयुः॑ प्रति॒बुध्य॑माना व॒यं तुभ्यं॑ बलि॒हृत॑ः स्याम ॥ ६२ ॥

भूमे॑ मात॒र्नि धे॑हि मा भ॒द्रया॒ सुप्र॑तिष्ठितम् । सं॒वि॒दा॒ना दि॒वा क॑वे श्रि॒यां मा॑ धेहि॒ भूत्या॑म् ॥ ६३ ॥ (६) [१।१]

—:o:—

सूक्त २

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—अग्निः; मन्त्रोक्ता; २१—३३ मृत्युः ॥ छन्दः—१, ४, १०, ११, २१—३३, ५३ त्रिष्टुप्; २, ५, १२—१५, १७, १९, २० ३४—३६, ३८, ३९, ४१, ४३, ५१, ५४ अनुष्टुप्; ३ आस्तारपङ्क्तिः; ६ भुरिगार्षी पङ्क्तिः ७, ४५ जगती; ८, ४८, ४९ भुरिक् त्रिष्टुप्; ९ अनुष्टुब्गर्भा विपरीतपादलक्ष्मा पङ्क्तिः; १६ ककुम्मती पराबृहत्यनुष्टुप्; १८ निचृदनुष्टुप् ३७ पुरस्ताद् बृहती; ४० पुरस्ताद् ककुम्मत्यनुष्टुप्; ४२ त्रिपदा भुरिगार्ची गायत्री; ४४ द्विपदाऽऽर्वी बृहती; ४६ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप्; (४२, ४४, ४६ एकावसाना); ४७ पञ्चपदा बार्हतवैराजगर्भा जगती; ५० उपरिष्टाद् विराड् बृहती; ५२ पुरस्ताद् विराड् बृहती; ५५ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ५५ ।

न॒डमा रो॑ह॒ न ते॒ अत्र॑ लो॒क इ॒दं॑ सीसँ॑ भाग॒धेयँ॑ त॒ एहि॑। यो गोषु॒ यक्ष्म॒ः पुरु॑षेषु॒ यक्ष्म॒स्तेन॒ त्वं सा॒कम॑ध॒राङ् परे॑हि ॥ १ ॥

अ॒घ॒शं॒स॒दु॒ःशं॒साभ्यां॑ क॒रेणा॑नुक॒रेण॑ च। यक्ष्मं॑ च॒ सर्वं॒ ते॒नेतो मृ॒त्युं च॒ निर॑जामसि ॥ २ ॥

निरि॒तो मृ॒त्युं निर्ऋ॑तिं॒ निररा॑तिमजामसि। यो नो॒ द्वेष्टि॒ तम॑द्ध्यग्ने अक्रव्या॒द् यमु॑ द्वि॒ष्मस्तमु॑ ते॒ प्र सु॑वामसि ॥ ३ ॥

यद्य॒ग्निः क्र॒व्याद् यदि॑ वा व्या॒घ्र इ॒मं गो॒ष्ठं प्र॑वि॒वेशान्यो॑काः। तं माषा॑ज्यं कृ॒त्वा प्र हि॑णोमि दू॒रं स ग॑च्छत्वप्सु॒षदो॒ऽप्य॒ग्नीन् ॥ ४ ॥

यत् त्वा॑ क्रु॒द्धाः प्र॑च॒क्रुर्म॒न्युना॒ पुरु॑षे मृ॒ते। सु॒कल्प॑मग्ने॒ तत् त्वया॒ पुन॒स्त्वोद्दी॑पयामसि ॥ ५ ॥

पुन॑स्त्वादि॒त्या रु॒द्रा वस॑वः॒ पुन॑र्ब्र॒ह्मा वसु॑नीतिरग्ने। पुन॑स्त्वा॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॒राधा॑द् दीर्घायु॒त्वाय॑ श॒तशा॑रदाय ॥ ६ ॥

यो अ॒ग्निः क्र॒व्यात् प्र॑वि॒वेश॑ नो गृ॒हमि॒मं पश्य॒न्नित॑रं जा॒तवे॑दसम् । तं ह॑रामि पितृय॒ज्ञाय॑ दू॒रं स घ॒र्ममि॑न्धां पर॒मे स॒धस्थे॑ ॥ ७ ॥

क्र॒व्याद॑म॒ग्निं प्र हि॑णोमि दू॒रं य॒मरा॑ज्ञो गच्छतु रिप्रवा॒हः । इ॒हायमित॑रो जा॒तवे॑दा दे॒वो दे॒वेभ्यो॑ ह॒व्यं व॑हतु प्रजा॒नन् ॥ ८ ॥

क्र॒व्याद॑म॒ग्निमि॑षि॒तो ह॑रामि॒ जना॑न् दृंहन्तं॒ वज्रे॑ण मृ॒त्युम् । नि तं शा॑स्मि॒ गार्ह॑पत्येन वि॒द्वान् पि॑तॄ॒णां लो॒के अपि॑ भा॒गो अ॑स्तु ॥ ९ ॥

क्र॒व्याद॑म॒ग्निं शं॑शमा॒नमु॒क्थ्यं॑१ प्र हि॑णोमि प॒थिभिः॑ पितृ॒याणैः॑ । मा दे॒व॒यानैः॒ पुन॒रा गा॒ अत्रै॒वैधि॑ पि॒तृषु॑ जागृहि॒ त्वम् ॥ १० ॥ (७)

समि॑न्धते॒ संक॑सुकं स्व॒स्तये॑ शु॒द्धा भव॑न्तः॒ शुच॑यः पाव॒काः । जहा॑ति रि॒प्रमत्ये॑न एति॒ समि॑द्धो अ॒ग्निः सु॒पुना॑ पुनाति ॥ ११ ॥

दे॒वो अ॒ग्निः संक॑सुको दि॒वस्पृ॒ष्ठान्यारु॑हत् । मु॒च्यमा॑नो॒ निरेण॒सोऽमो॑ग॒स्माँ अश॑स्त्याः ॥ १२ ॥

अ॒स्मिन् व॒यं संक॑सुके अ॒ग्नौ रि॒प्राणि॑ मृज्महे । अभू॑म य॒ज्ञियाः॑ शु॒द्धाः प्र ण॒ आयूँ॑षि तारिषत् ॥ १३ ॥

संक॑सुको॒ विक॑सुको निर्ऋ॒थो यश्च॑ निस्व॒रः । ते ते॒ यक्ष्मं॒ सवे॑दसो दू॒राद् दू॒रम॑नीनशन् ॥ १४ ॥

यो नो॒ अश्वे॑षु वी॒रेषु॒ यो नो॒ गोष्व॑जा॒विषु॑ । क्र॒व्याद॒ं निर्णु॑दामसि॒ यो अ॒ग्निर्ज॑न॒योप॑नः ॥ १५ ॥

अ॒न्येभ्य॑स्त्वा॒ पुरु॑षेभ्यो॒ गोभ्यो॒ अश्वे॑भ्यस्त्वा । निः क्र॒व्याद॑ं नुदामसि॒ यो अ॒ग्निर्जी॑वित॒योप॑नः ॥ १६ ॥

य॒स्मि॑न् दे॒वा अमृ॑जत॒ यस्मि॑न् मनु॒ष्या॑ उ॒त । तस्मि॑न् घृत॒स्तावो॑
मृ॒ष्ट्वा त्वम॑ग्ने॒ दिवं॑ रुह ॥ १७ ॥
समि॑द्धो अग्न आहुत॒ स नो॒ माभ्य॑पक्रमीः । अत्रै॒व दी॑दिहि॒ द्यवि॒
ज्योक् च॒ सूर्यं॑ दृशे ॥ १८ ॥
सीसे॑ मृड्ढ्वं न॒डे मृ॑ड्ढ्वम॒ग्नौ संकु॑सुके च॒ यत् । अथो॒ अव्यां॑ रा॒मायां॑
शीर्ष॒क्तिमु॑प॒बर्ह॑णे ॥ १९ ॥
सीसे मलं॑ सादयि॒त्वा शी॑र्ष॒क्तिमु॑प॒बर्ह॑णे । अव्या॒मसि॑क्न्यां मृ॒ष्ट्वा
शु॒द्धा भ॑वत य॒ज्ञियाः॑ ॥ २० ॥ (८)
परं॑ मृत्यो॒ अनु॒ परे॑हि॒ पन्थां॒ यस्त॑ ए॒ष इत॑रो देव॒याना॑त् । चक्षु॑ष्मते
शृण्व॒ते ते॑ ब्रवीमी॒हेमे वी॒रा ब॒हवो॑ भवन्तु ॥ २१ ॥
इ॒मे जी॒वा वि मृ॒तैराव॑वृत्र॒न्नभू॑द् भ॒द्रा दे॒वहू॑तिर्नो अ॒द्य । प्राञ्चो॑
अगाम नृ॒तये॒ हसा॑य सु॒वीरा॑सो वि॒दथ॒मा व॑देम ॥ २२ ॥
इ॒मं जी॒वेभ्यः॑ परि॒धिं द॑धामि॒ मैषां॒ नु गा॒दप॑रो॒ अर्थ॑मे॒तम् । श॒तं
जीव॑न्तः श॒रदः॑ पुरू॒चीस्ति॒रो मृ॒त्युं द॑धतां॒ पर्व॑तेन ॥ २३ ॥
आ रो॑ह॒तायु॑र्ज॒रसं॑ वृणा॒ना अ॑नुपू॒र्वं यत॑माना॒ यति॒ स्थ । तान्
व॒स्त्वष्टा॑ सु॒जनि॑मा स॒जोषाः॒ सर्व॒मायु॑र्नयतु॒ जीव॑नाय ॥ २४ ॥
यथाहा॑न्यनुपू॒र्वं भव॑न्ति॒ यथ॒र्तव॑ ऋ॒तुभि॒र्यन्ति॑ सा॒कम् । यथा॒ न
पूर्व॒मप॑रो॒ जहा॑त्ये॒वा धा॑त॒रायूं॑षि कल्पयै॒षाम् ॥ २५ ॥
अश्म॑न्वती रीयते॒ सं र॑भध्वं वी॒रय॑ध्वं॒ प्र त॑रता सखायः । अत्रा॑ जहीत॒
ये अस॑न् दु॒रेवा॑ अनमी॒वानुत्त॑रेमा॒भि वाजा॑न् ॥ २६ ॥

उत्तिष्ठता प्र तरता सखायोऽश्मन्वती नदी स्यन्दत इयम्। अत्रा जहीत
ये असन्नशिवाः शिवान्त्स्योनानुत्तरेमाभि वाजान् ॥ २७ ॥
वैश्वदेवीं वर्चस आ रभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः। अतिक्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमाः सर्ववीरा मदेम ॥ २८ ॥
उदीचीनैः पथिभिर्वायुमद्भिरतिक्रामन्तोऽवरान् परेभिः। त्रिः सप्त
कृत्व ऋषयः परेता मृत्युं प्रत्यौहन् पदयोपनेन ॥ २९ ॥
मृत्योः पदं योपयन्त एत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः। आसीना
मृत्युं नुदता सधस्थेऽथ जीवासो विदथमा वदेम ॥ ३० ॥ (६)
इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं स्पृशन्ताम्। अनश्रवो
अनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे ॥ ३१ ॥
व्याकरोमि हविषाहमेतौ तौ ब्रह्मणा व्य१हं कल्पयामि। स्वधां
पितृभ्यो अजरां कृणोमि दीर्घेणायुषा समिमान्त्सृजामि ॥ ३२ ॥
यो नो अग्निः पितरो हृत्स्व१न्तराविवेशामृतो मर्त्येषु। मय्यहं तं परि
गृह्णामि देवं मा सो अस्मान् द्विक्षत मा वयं तम् ॥ ३३ ॥
अपावृत्य गार्हपत्यात् क्रव्यादा प्रेत दक्षिणा प्रियं पितृभ्य आत्मने
ब्रह्मभ्यः कृणुता प्रियम् ॥ ३४ ॥
द्विभागधनमादाय प्र क्षिणात्यवर्त्या। अग्निः पुत्रस्य ज्येष्ठस्य यः
क्रव्यादनिराहितः ॥ ३५ ॥
यत् कृषते यद् वनुते यच्च वस्नेन विदन्ते। सर्वं मर्त्यस्य तन्नास्ति
क्रव्याच्चेदनिराहितः ॥ ३६ ॥

अ॒य॒ज्ञियो॑ ह॒तव॑र्चा भवति॒ नैने॑न ह॒विरत्त॑वे । छि॒नत्ति॑ कृ॒ष्या गोर्ध॑ना॒द्
यं क्र॒व्याद॑नु॒वर्तते ॥ ३७ ॥

मु॒हुर्गृध्यै॒ः प्र व॑द॒त्यार्ति॒ं मर्त्यो॒ नीत्य॑ । क्र॒व्याद् यान॒ग्निर॑न्ति॒काद॑नु॒-
वि॒द्वान् वि॒ताव॑ति ॥ ३८ ॥

ग्राह्या॑ गृ॒हाः सं सृ॑ज्यन्ते स्त्रि॒या यन्म्रि॒यते॒ पति॑ः । ब्र॒ह्मैव वि॒द्वाने॒ष्यो॒३
यः क्र॒व्याद॑ं निरा॒दध॑त् ॥ ३९ ॥

यद् रि॒प्रं शम॑लं च॒कृम यच्च॑ दुष्कृ॒तम् । आपो॑ मा॒ तस्मा॑च्छुम्भन्त्व॒ग्नेः
संक॑सुका॒च्च यत् ॥ ४० ॥ (१०)

ता अ॑ध॒रादुदी॑ची॒राव॑वृत्रन् प्र॒जान॒तीः प॒थिभि॑र्देव॒यानैः॑ । पर्व॑तस्य
वृ॒ष॒भस्याधि॑ पृ॒ष्ठे नवा॑श्चरन्ति स॒रित॑ः पु॒रा॒णीः ॥ ४१ ॥

अग्ने॑ अक्र॒व्या॒न्निष्क्र॒व्याद॑ं नु॒दा दे॑व॒यज॑नं वह ॥ ४२ ॥

इ॒मं क्र॒व्यादा वि॑वे॒शा॒यं क्र॒व्याद॒॑मन्व॑गात् । व्या॒घ्रौ कृ॒त्वा ना॑ना॒नं तं
ह॑रामि शि॒वाप॒रम् ॥ ४३ ॥

अ॒न्त॒र्धिर्दे॒वानां॑ परि॒धिर्म॑नु॒ष्या॒णाम॒ग्निर्गार्ह॑पत्य उ॒भया॑नन्त॒रा श्रि॒तः
॥ ४४ ॥

जी॒वाना॒मायु॒ः प्र ति॑र॒ त्वम॑ग्ने पि॒तॄणां॑ लो॒कमपि॑ गच्छन्तु॒ ये मृ॒ताः ।
सु॒गा॒र्ह॒प॒त्यो वि॒तप॒न्नरा॑तिमु॒षामु॑षां॒ श्रेय॑सीं धेह्य॒स्मै ॥ ४५ ॥

सर्वा॑नग्ने॒ सह॑मानः स॒पत्ना॒नैषा॒मूर्ज॑ र॒यिम॒स्मासु॑ धेहि ॥ ४६ ॥

इ॒ममिन्द्रं॒ वह्नि॒ं पप्रि॑म॒न्वार॑भध्वं॒ स वो॒ निर्व॑क्षद् दुरि॒ताद॑व॒द्यात् । तेनाप॑
हत॒ शरु॑मा॒पत॑न्तं॒ तेन॑ रु॒द्रस्य॒ परि॑ पाता॒स्ताम् ॥ ४७ ॥

अ॒न॒ड्वाहं॑ प्ल॒वम॒न्वार॑भध्वं॒ स वो॒ निर्व॑क्षद् दुरि॒ताद॑व॒द्यात् । आ रो॑हत सवि॒तुर्नाव॑मे॒तां ष॒ड्भिरु॒र्वीभि॒रम॑तिं तरेम ॥ ४८ ॥

अ॒हो॒रा॒त्रे अन्वे॑षि॒ बिभ्र॑त् क्षे॒म्यस्तिष्ठ॑न् प्र॒तर॑णः सु॒वीरः॑ । अना॑तुरान्त्सु॒मन॑सस्तल्प॒ बिभ्र॒ज्ज्योगे॒व नः॒ पुरु॑षगन्धिरेधि ॥ ४९ ॥

ते दे॒वेभ्य॒ आ वृ॑श्चन्ते पा॒पं जी॑वन्ति स॒र्वदा॑ । क्र॒व्याद् यान॒ग्निर॑न्ति॒कादश्व॑ इवानु॒वप॑ते न॒डम् ॥ ५० (११)

ये॑ऽश्र॒द्धा ध॑नका॒म्या क्र॒व्यादा॑ स॒मास॑ते । ते वा अ॒न्येषां॑ कु॒म्भीं प॒र्याद॑धति स॒र्वदा॑ ॥ ५१ ॥

प्रेव॑ पिपतिषति॒ मन॑सा॒ मुहु॒रा व॑र्तते॒ पुनः॑ । क्र॒व्याद् यान॒ग्निर॑न्ति॒काद॑नुवि॒द्वान् वि॒ताव॑ति ॥ ५२ ॥

अवि॑ः कृ॒ष्णा भा॑ग॒धेयं॑ प॒शूनां॑ सीसं॑ क्र॒व्याद॑पि च॒न्द्रं त॑ आहुः । माषाः॑ पि॒ष्टा भा॑ग॒धेयं॑ ते ह॒व्यम॑रण्या॒न्या गह्व॑रं सचस्व ॥ ५३ ॥

इ॒षीकां॒ जर॑तीमि॒ष्ट्वा ति॒ल्पिञ्जं॒ दण्ड॑नं न॒डम् । तमिन्द्र॑ इ॒ध्मं कृ॒त्वा य॒मस्या॒ग्निं नि॒राद॑धौ ॥ ५४ ॥

प्र॒त्यञ्च॑म॒र्कं प्र॑त्यर्पयि॒त्वा प्र॑वि॒द्वान् पन्थां॒ वि ह्या॑ऽवि॒वेश॑ । परा॒मीषा॒मसू॑न् दि॒देश॑ दी॒र्घेणायु॑षा॒ समि॒मान्त्सृ॑जामि ॥५५॥ (१२) [२।१]

—:०:—

सूक्त ३

ऋषिः — यमः ॥ देवता — स्वर्गः, ओदनः, अग्निः ॥ छन्दः—१, ४२, ४३ ४७ भुरिक् त्रिष्टुप्; २—७, ९—११, १४—१६, १८—२०, २३, २५—३३, ३५—३८, ४०, ४१, ४५, ४६, ४८—५४ त्रिष्टुप्; ८, १२, २१, २२, २४ जगती; १, ३,

१७ स्वराडार्षी पङ्क्तिः; ३४ विराड्गर्भा त्रिष्टुप्; ३९ अनुष्टुब्गर्भा त्रिष्टुप्; ४४ पराबृहती त्रिष्टुप्; ५५—६० सप्तपदाः शङ्कुमत्योऽतिजागतशाक्वरातिशाक्वर-धार्त्यगर्भा अतिधृतयः (?); (५५, ५७—६० कृतिः) ॥ मन्त्र ६० ॥

पुमा॑न् पुं॒सोऽधि॑ तिष्ठ॒ चर्मे᳚हि॒ तत्र॑ ह्वयस्व यत॒मा प्रि॒या ते᳚। याव॑न्ता॒-
वग्रे᳚ प्रथ॒मं सं॑मे॒यथु॒स्तद् वां॒ वयो॑ यम॒राज्ये᳚ समा॒नम् ॥ १ ॥
ताव॑द् वां॒ चक्षु॒स्तति॑ वी॒र्या॑णि॒ ताव॒त् तेज॑स्तति॒धा वाजि॑नानि॒।
अग्निः शरी॑रं सचते य॒दैधोऽधा॑ प॒क्वान्मि॑थुना॒ सं भ॑वाथः ॥ २ ॥
सम॑स्मिंल्लो॒के समु॑ दे॒वया॒ने सं स्मा॑ स॒मेतं᳚ यम॒राज्ये॑षु। पूतौ॒
प॒वित्रै॒रुप॒ तद्ध्व॑येथां॒ यद्य॒द् रेतो॒ अधि॑ वां सं॑ब॒भूव॑ ॥ ३ ॥
आप॑स्पुत्रासो अ॒भि सं वि॑शध्वमि॒मं जी॒वं जीवधन्याः स॒मेत्य॑। तासां᳚
भजध्वम॒मृतं॒ यमा॒हुर्यमो॑द॒नं पच॑ति वां॒ जनि॑त्री ॥ ४ ॥
यं वां᳚ पिता पच॑ति॒ यं च॑ मा॒ता रि॒प्रान्निर्मु᳚क्त्यै॒ शम॑लाच्च वा॒चः।
स ओ॑द॒नः श॒तधा॑रः स्व॒र्ग᳚ उ॒भे व्या॑प॒ नभ॑सी महि॒त्वा ॥ ५ ॥
उ॒भे नभ॑सी उ॒भयां॑श्च लो॒कान् ये यज्व॑नाम॒भिजि॑ताः स्व॒र्गाः। तेषां॒
ज्योति॑ष्मा॒न् मधु॑मा॒न् यो अग्रे॒ तस्मि॑न् पु॒त्रैर्ज॒रसि॒ सं श्र॑येथाम् ॥६॥
प्राचीं᳚प्राचीं प्र॒दिश॒मा र॑भेथामे॒तं लो॒कं श्र॒द्दधा॑नाः सचन्ते। यद् वां᳚
प॒क्वं परि॑विष्टम॒ग्नौ तस्य॒ गुप्त॑ये दम्पती॒ सं श्र॑येथाम् ॥ ७ ॥
दक्षि॑णां॒ दिश॑म॒भि नक्ष॑माणौ प॒र्याव॑र्तेथाम॒भि पात्र॑मे॒तत्। तस्मि॑न् वां
य॒मः पि॒तृभिः॑ सं॑विदा॒नः प॒क्वाय॒ शर्म᳚ बहु॒लं नि य॑च्छात् ॥ ८ ॥
प्र॒तीची॑ दि॒शामि॒यमिद् वरं॒ यस्यां॒ सोमो॑ अधि॒पा मृ॑डि॒ता च॑। तस्यां᳚
श्रयेथां सु॒कृतः॑ सचेथा॒मधा॑ प॒क्वान्मि॑थुना॒ सं भ॑वाथः ॥ ९ ॥

उत्त॑रं रा॒ष्ट्रं प्र॒जयो॑त्त॒राव॑द् दि॒शामु॒दी॑ची कृण्वन्नो॒ अग्र॑म् । पाङ्क्तं॒
छन्द॒ः पुरु॑षो बभूव॒ विश्वै॒र्विश्वा॒ङ्गैः स॒ह सं भ॑वेम ॥ १० ॥ (१३)
ध्रु॒वेयं वि॒राण्नमो॑ अस्त्व॒स्यै शि॒वा पु॒त्रेभ्य॑ उ॒त मह्य॑मस्तु । सा नो॑
दे॒व्यदिते विश्ववार॒ इर्य॑ इव गो॒पा अ॒भि र॑क्ष प॒क्वम् ॥ ११ ॥
पि॒तेव॑ पु॒त्रान॒भि सं स्व॑जस्व नः शि॒वा नो॒ वाता॑ इ॒ह वा॑न्तु॒ भूमौ॑ ।
यमो॑द॒नं पच॑तो दे॒वते॑ इ॒ह तं न॒स्तप॑ उ॒त स॒त्यं च॑ वेत्तु ॥ १२ ॥
यद्य॑त् कृ॒ष्णः श॑कु॒न एह ग॒त्वा त्सर॒न् विष॑क्तं॒ बिल॑ आस॒साद॑ । यद्वा॑
दा॒स्या॒र्द्रह॑स्ता सम॒ङ्क्त उ॒लूख॑लं॒ मुस॑लं शुम्भतापः ॥ १३ ॥
अ॒यं ग्रावा॑ पृ॒थुबु॑ध्नो वयो॒धाः पू॒तः प॒वित्रै॒रप॑ हन्तु॒ रक्षः॑ । आ रो॑ह॒
चर्म॒ म॑हि॒ शर्म॑ यच्छ॒ मा दम्प॑ती॒ पौत्र॑म॒घं नि गा॑ताम् ॥ १४ ॥
वन॒स्पति॑ः स॒ह दे॒वैर्न॒ आग॒न् रक्षः॑ पिशा॒चाँ अ॑प॒बाध॑मानः । स
उच्छ्र॑याते॒ प्र व॑दाति॒ वाच॒ं तेन॑ लो॒काँ अ॒भि सर्वा॑न् जयेम ॥ १५ ॥
स॒प्त मेधा॑न् प॒शव॒ः पर्य॑गृह्ण॒न् य ए॑षां॒ ज्योति॑ष्माँ उ॒त यश्च॒कर्श॑ ।
त्रय॑स्त्रिंशद् दे॒वता॒स्तान्त्सच॑न्ते॒ स नः॑ स्व॒र्गम॒भि ने॑ष लो॒कम् ॥ १६ ॥
स्व॒र्गं लो॒कम॒भि नो॑ नयासि॒ सं जा॒यया॑ स॒ह पु॒त्रैः स्या॑म । गृ॒ह्णामि॒
हस्त॒मनु॒ मैत्वत्र॒ मा न॑स्तारी॒न्निर्ऋ॑ति॒र्मो अरा॑तिः ॥ १७ ॥
ग्राहिं॑ पा॒प्मान॒मति॒ ताँ अ॑याम॒ तमो॒ व्य॑स्य॒ प्र व॑दासि व॒ल्गु ।
वा॒न॒स्प॒त्य उद्य॑तो॒ मा जि॑हिंसी॒र्मा त॑ण्डु॒लं वि श॑रीर्दे॒वय॑न्तम् ॥ १८ ॥
वि॒श्वव्य॑चा घृ॒तपृ॑ष्ठो भवि॒ष्यन्त्सयो॑निर्लो॒कमुप॑ याह्ये॒तम् । व॒र्षवृ॑द्धमुप॑
यच्छ॒ शूर्प॒ं तुषं॑ प॒लावा॒नप॒ तद् वि॑नक्तु ॥ १९ ॥

त्रयो लोकाः संमिता ब्राह्मणेन द्यौरेवासौ पृथिव्यं१न्तरिक्षम्। अंशून्
गृभीत्वान्वारभेथामा प्यायन्तां पुनरा यन्तु शूर्पम् ॥ २० ॥ (१४)
पृथग् रूपाणि बहुधा पशूनामेकरूपो भवसि सं समृद्ध्या। एतां त्वचं
लोहिनीं तां नुदस्व ग्रावा शुम्भाति मलग इव वस्त्रा ॥ २१ ॥
पृथिवीं त्वा पृथिव्यामा वेशयामि तनूः समानी विकृता त एषा।
यद्यद् द्युत्तं लिखितमर्पणेन तेन मा सुस्रोर्ब्रह्मणापि तद् वपामि ॥२२॥
जनित्रीव प्रति हर्यासि सूनुं सं त्वा दधामि पृथिवीं पृथिव्या। उखा
कुम्भी वेद्यां मा व्यथिष्ठा यज्ञायुधैराज्येनातिषक्ता ॥ २३ ॥
अग्निः पचन् रक्षतु त्वा पुरस्तादिन्द्रो रक्षतु दक्षिणतो मरुत्वान्।
वरुणस्त्वा दृंहाद्धरुणे प्रतीच्या उत्तरात् त्वा सोमः सं ददातै ॥ २४ ॥
पूताः पवित्रैः पवन्ते अभ्राद् दिवं च यन्ति पृथिवीं च लोकान्।
ता जीवला जीवधन्याः प्रतिष्ठाः पात्र आसिक्ताः पर्यग्निरिन्धाम् ॥२५॥
आ यन्ति दिवः पृथिवीं सचन्ते भूम्याः सचन्ते अध्यन्तरिक्षम्। शुद्धाः
सतीस्ता उ शुम्भन्त एव ता नः स्वर्गमभि लोकं नयन्तु ॥ २६ ॥
उतेव प्रभ्वीरुत संमितास उत शुक्राः शुचयश्चामृतासः। ता ओदनं
दंपतिभ्यां प्रशिष्टा आपः शिक्षन्तीः पचता सुनाथाः ॥ २७ ॥
संख्याता स्तोकाः पृथिवीं सचन्ते प्राणापानैः संमिता ओषधीभिः।
असंख्याता ओप्यमानाः सुवर्णाः सर्वं व्यापुः शुचयः शुचित्वम् ॥२८॥
उद्योधन्त्यभि वल्गन्ति तप्ताः फेनमस्यन्ति बहुलांश्च बिन्दून्। योषेव
दृष्ट्वा पतिमृत्वियायैतैस्तण्डुलैर्भवता समापः ॥ २९ ॥

उत्थापय सीदतो बुध्न एनानद्भिरात्मानमभि सं स्पृशन्ताम्। अमासि
पात्रैरुदकं यदेतन्मितास्तण्डुलाः प्रदिशो यदीमाः ॥ ३० ॥ (१५)
प्र यच्छ पर्शुं त्वरया हरौषमहिंसन्त ओषधीर्दान्तु पर्वन्। यासां सोमः
परि राज्यं बभूवामन्युता नो वीरुधो भवन्तु ॥ ३१ ॥
नवं बर्हिरोदनाय स्तृणीत प्रियं हृदश्चक्षुषो वल्ग्वस्तु। तस्मिन् देवाः
सह दैवीर्विशन्त्विमं प्राश्नन्त्वृतुभिर्निषद्य ॥ ३२ ॥
वनस्पते स्तीर्णमा सीद बर्हिरग्निष्टोमैः संमितो देवताभिः। त्वष्ट्रेव
रूपं सुकृतं स्वधित्यैना एहाः परि पात्रे ददृश्राम् ॥ ३३ ॥
षष्ट्यां शरत्सु निधिपा अभीच्छात् स्वः पक्वेनाभ्यश्नवातै। उपैनं
जीवान् पितरश्च पुत्रा एतं स्वर्गं गमयान्तमग्नेः ॥ ३४ ॥
धर्ता ध्रियस्व धरुणे पृथिव्या अच्युतं त्वा देवताश्च्यावयन्तु। तं त्वा
दम्पती जीवन्तौ जीवपुत्रावुद् वासयातः पर्यग्निधानात् ॥ ३५ ॥
सर्वान्त्समागा अभिजित्य लोकान् यावन्तः कामाः समतीतृपस्तान्।
वि गाहेथामायवनं च दर्विरेकस्मिन् पात्रे अध्युद्धरैनम् ॥ ३६ ॥
उप स्तृणीहि प्रथय पुरस्ताद् घृतेन पात्रमभि घारयैतत्। वाश्रेवोस्रा
तरुणं स्तनस्युमिमं देवासो अभिहिङ्कृणोत ॥ ३७ ॥
उपास्तरीरकरो लोकमेतमुरुः प्रथतामसमः स्वर्गः। तस्मिञ्छ्रयातै
महिषः सुपर्णो देवा एनं देवताभ्यः प्र यच्छान् ॥ ३८ ॥
यद्यज्जाया पचति त्वत् परःपरः पतिर्वा जाये त्वत् तिरः। सं तत्
सृजेथा सह वां तदस्तु संपादयन्तौ सह लोकमेकम् ॥ ३९ ॥

याव॑न्तो अ॒स्याः पृ॑थि॒वीं सच॑न्ते अ॒स्मत् पु॒त्राः परि॒ ये सं॑बभू॒वुः । सर्वा॒ं-
स्ताँ उप॒ पात्रे॑ ह्वयेथा॒ं नाभिं॑ जाना॒नाः शिशं॑वः स॒माया॑न् ।४०। (१६)
वसो॒र्या धारा॒ मधु॑ना॒ प्रपी॑ना घृ॒तेन॑ मि॒श्रा अ॒मृत॑स्य॒ नाभ॑यः । सर्वा॒स्ता
अव॑ रुन्धे स्व॒र्गः ष॒ष्ट्यां श॒रत्सु॑ निधि॒पा अ॒भीऽच्छात् ॥ ४१ ॥
नि॒धिं नि॑धि॒पा अ॒भ्येऽनमिच्छा॒दनी॑श्वरा अ॒भित॑ः सन्तु॒ ये॒ऽ॑न्ये ।
अ॒स्माभि॑र्द॒त्तो निहि॑तः स्व॒र्गस्त्रि॒भिः काण्डै॒स्त्रीन्त्स्व॒र्गान॑रुक्षत् ॥४२॥
अ॒ग्नी रक्ष॑स्तपतु॒ यद् विदे॑वं क्र॒व्यात् पि॑शा॒च इ॒ह मा प्र पा॑स्त ।
नु॒दाम॑ एन॒मप॑ रुध्मो अ॒स्मदा॑दि॒त्या ए॑न॒मङ्गि॑रसः सचन्ताम् ॥४३॥
आदि॒त्येभ्यो॒ अङ्गि॑रोभ्यो॒ मध्वि॒दं घृ॒तेन॑ मि॒श्रं प्रति वेदयामि ।
शु॒द्धह॑स्तौ ब्राह्म॒णस्यानि॑हत्यै॒तं स्व॒र्गं सु॑कृता॒वपी॑तम् ॥ ४४ ॥
इ॒दं प्राप॑मुत्त॒मं काण्ड॑मस्य॒ यस्मा॑ल्लो॒कात् प॑रमे॒ष्ठी स॒माप॑ । आ सि॑ञ्च
स॒र्पिर्घृ॒तव॑त् सम॑ङ्ग्ध्ये॒ष भा॒गो अङ्गि॑रसो नो॒ अत्र॑ ॥ ४५ ॥
स॒त्याय॑ च॒ तप॑से दे॒वता॑भ्यो नि॒धिं शे॑व॒धिं परि॑ दद्म ए॒तम् । मा नो॑
द्यू॒तेऽव॑ गा॒न्मा समि॑त्यां॒ मा स्मा॒न्यस्मा॒ उत्सृ॑जता पु॒रा मत् ॥ ४६ ॥
अ॒हं प॑चाम्य॒हं द॑दामि॒ ममेदु॒ कर्म॑न् क॒रुणेऽधि॑ जा॒या । कौमा॑रो लो॒को
अ॑जनिष्ट पु॒त्रो॒ऽ॑न्वार॑भेथां॒ वय॑ उत्त॒राव॑त् ॥ ४७ ॥
न कि॒ल्बिष॒मत्र॒ नाधा॒रो अस्ति॒ न यन्मि॒त्रैः स॒मम॑मान॒ एति॑ । अनू॑नं॒
पात्रं॒ निहि॑तं न ए॒तत् प॒क्तारं॑ प॒क्वः पुन॒रा वि॑शाति ॥ ४८ ॥
प्रि॒यं प्रि॒याणां॑ कृणवाम॒ तम॒स्ते य॑न्तु यत॒मे द्वि॒षन्ति॑ । धे॒नुर॑न॒ड्वान्
वयो॑वय आ॒यदे॒व पौरु॑षेय॒मप॑ मृ॒त्युं नु॑दन्तु ॥ ४९ ॥

स॒मग्र॒यो॑ विदु॒र॒न्यो अ॒न्यं य ओष॑धी॒ः सच॑ते॒ यश्च॒ सिन्धू॑न् । याव॑न्तो
दे॒वा दि॒व्या॒३॒तप॑न्ति॒ हिर॑ण्यं॒ ज्योति॒ः पच॑तो बभूव ॥ ५० ॥ (१७)

ए॒षा त्व॒चां॑ पुरु॑षे॒ सं ब॑भूवान॑ग्ना॒ः सर्वे॑ प॒शवो॒ ये अ॒न्ये । क्ष॒त्रेणा॒त्मान॒ं
परि॑ धापयाथोऽमो॒तं वासो॒ मुख॑मोद॒नस्य॑ ॥ ५१ ॥

यद॒क्षेषु॒ वदा॒ यत् समि॑त्यां॒ यद्वा॒ वदा॒ अनृ॑तं वित्तका॒म्या । स॒मा॒नं
तन्तु॑म॒भि सं॒वसा॑नौ॒ तस्मि॒न्त्सर्वं॒ शम॑लं सादयाथः ॥ ५२ ॥

व॒र्षं व॑नुष्वापि॑ गच्छ दे॒वांस्त्व॒चो धू॒मं पर्यु॑त्पा॑तयासि । वि॒श्वव्य॑चा
घृ॒तपृ॑ष्ठो भवि॒ष्यन्त्सयो॑निर्लो॒कमुप॑ याह्ये॒तम् ॥ ५३ ॥

त॒न्वं॑ स्व॒र्गो ब॑हु॒धा वि च॑क्रे॒ यथा॑ वि॒द आ॒त्मन्न॒न्यव॑र्णाम् । अपा॑जैत्
कृ॒ष्णां रु॒शती॑ं पुना॒नो या लोहि॑नी॒ तां ते॑ अ॒ग्नौ जु॑होमि ॥ ५४ ॥

प्राच्यै॑ त्वा दि॒शे॒३॒ग्नये॒ऽधि॑पतये॒ऽसि॒ताय॑ रक्षि॒त्र आ॑दि॒त्यायेषु॑मते ।
ए॒तं परि॑ द॒द्मस्तं नो॑ गोपाय॒तास्माक॒मैतो॑ः । दि॒ष्टं नो॒ अत्र॑ ज॒रसे॒ नि
नेषज्ज॒रा मृ॒त्यवे॒ परि॑ णो ददा॒त्वथ॑ प॒क्वेन॑ स॒ह सं भ॑वेम ॥ ५५ ॥

दक्षि॑णायै त्वा दि॒श इन्द्रा॒याधि॑पतये॒ तिर॑श्चिराजये रक्षि॒त्रे य॒मा-
येषु॑मते । ए॒तं परि॑ द॒द्मस्तं नो॑ गोपाय॒तास्माक॒मैतो॑ः । दि॒ष्टं नो॒ अत्र॑
ज॒रसे॒ नि ने॑षज्ज॒रा मृ॒त्यवे॒ परि॑ णो ददा॒त्वथ॑ प॒क्वेन॑ स॒ह सं भ॑वेम ।५६।

प्र॒तीच्यै॑ त्वा दि॒शे वरु॑णा॒याधि॑पतये॒ पृदा॑कवे रक्षि॒त्रेऽन्ना॒येषु॑मते । ए॒तं
परि॑ द॒द्मस्तं नो॑ गोपाय॒तास्माक॒मैतो॑ः । दि॒ष्टं नो॒ अत्र॑ ज॒रसे॒ नि
नेषज्ज॒रा मृ॒त्यवे॒ परि॑ णो ददा॒त्वथ॑ प॒क्वेन॑ स॒ह सं भ॑वेम ॥ ४७ ॥

उदी॑च्यै त्वा दि॒शे सोमा॒याधि॑पतये स्व॒जाय॑ रक्षि॒त्रेऽशन्या॒ इषु॑मत्यै ।
ए॒तं परि॑ दद्म॒स्तं नो॑ गोपाय॒तास्माक॒मैतो॑ः । दि॒ष्टं नो॒ अत्र॑ ज॒रसे॒ नि
ने॑षज्ज॒रा मृ॒त्यवे॒ परि॑ णो ददा॒त्वथ॑ प॒क्वेन॑ स॒ह सं भ॑वेम ॥ ५८ ॥

ध्रु॒वायै॑ त्वा दि॒शे विष्ण॒वेऽधि॑पतये क॒ल्माष॑ग्रीवाय रक्षि॒त्र ओष॑धीभ्य॒
इषु॑मतीभ्यः । ए॒तं परि॑ दद्म॒स्तं नो॑ गोपाय॒तास्माक॒मैतो॑ः । दि॒ष्टं नो॒
अत्र॑ ज॒रसे॒ नि ने॑षज्ज॒रा मृ॒त्यवे॒ परि॑ णो ददा॒त्वथ॑ प॒क्वेन॑ स॒ह सं
भ॑वेम ॥ ५९ ॥

ऊ॒र्ध्वायै॑ त्वा दि॒शे बृह॒स्पत॒येऽधि॑पतये श्वि॒त्राय॑ रक्षि॒त्रे व॒र्षायेषु॑मते ।
ए॒तं परि॑ दद्म॒स्तं नो॑ गोपाय॒तास्माक॒मैतो॑ः । दि॒ष्टं नो॒ अत्र॑ ज॒रसे॒ नि
ने॑षज्ज॒रा मृ॒त्यवे॒ परि॑ णो ददा॒त्वथ॑ प॒क्वेन॑ स॒ह सं भ॑वेम ॥ ६० ॥
(१८) [३।१]

सूक्त ४

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—वशा ॥ छन्दः—१—६, ८—१९, २१—३१, ३३—४१, ४३—५३ अनुष्टुप्; ७ भुरिगनुष्टुप्; २० विराडनुष्टुप्; ३२ उष्णिग्बृहतीगर्भाऽनुष्टुप् ४२ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप् ॥ मन्त्र ५३ ।

द॒दामी॒त्ये॒व ब्रू॑या॒दनु॑ चैना॒मभु॑त्सत । व॒शां ब्र॒ह्मभ्यो॒ याच॑द्भ्य॒स्तत्
प्र॒जाव॒दप॑त्यवत् ॥ १ ॥

प्र॒जया॒ स वि क्री॑णीते प॒शुभि॒श्चोप॑ दस्यति । य आ॑र्षे॒येभ्यो॒ याच॑द्भ्यो
दे॒वानां॒ गां न दित्स॑ति ॥ २ ॥

कू॒टया॑स्य॒ सं शी॑र्यन्ते श्लो॒णया॑ का॒टम॑र्दति । ब॒ण्डया॑ दह्यन्ते गृ॒हाः
का॒णया॑ दीयते॒ स्वम् ॥ ३ ॥

विलोहितो अधिष्ठानाच्छक्नो विन्दति गोपतिम्। तथा वशायाः
संविद्यं दुरदभ्ना ह्यु१च्यसे ॥ ४ ॥

पदोरस्या अधिष्ठानाद् विक्लिन्दुर्नाम विन्दति। अनामनात् सं शीर्यन्ते
या मुखेनोपजिघ्रति ॥ ५ ॥

यो अस्याः कर्णावास्कुनोत्या स देवेषु वृश्चते। लक्ष्म कुर्व इति मन्यते
कनीयः कृणुते स्वम् ॥ ६ ॥

यदस्याः कस्मै चिद् भोगाय बालान् कश्चित् प्रकृन्तति। ततः किशोरा
म्रियन्ते वत्सांश्च घातुको वृकः ॥ ७ ॥

यदस्या गोपतौ सत्या लोम ध्वाङ्क्षो अजीहिडत्। ततः कुमारा
म्रियन्ते यक्ष्मो विन्दत्यनामनात् ॥ ८ ॥

यदस्याः पल्पूलनं शकृद् दासी समस्यति। ततोऽपरूपं जायते
तस्माद्व्येष्यदेनसः ॥ ९ ॥

जायमानाभि जायते देवान्त्सब्राह्मणान् वशा। तस्माद् ब्रह्मभ्यो देयैषा
तदाहुः स्वस्य गोपनम् ॥ १० ॥ (१६)

य एनां वनिमायन्ति तेषां देवकृता वशा। ब्रह्मज्येयं तदब्रुवन् य एनां
निप्रियायते ॥ ११ ॥

य आर्षेयेभ्यो याचद्भ्यो देवानां गां न दित्सति। आ स देवेषु वृश्चते
ब्राह्मणानां च मन्यवे ॥ १२ ॥

यो अस्य स्याद् वशाभोगो अन्यामिच्छेत तर्हि सः। हिंस्ते अदत्ता
पुरुषं याचितां च न दित्सति ॥ १३ ॥

यथा॑ शेव॒धिर्निहि॑तो ब्राह्म॒णाना॒ं तथा॑ व॒शा । तामे॒तदु॒च्छ्राय॑न्ति॒ यस्मि॒न् कस्मि॑ंश्च॒ जाय॑ते ॥ १४ ॥

स्वमे॒तदु॒च्छ्राय॑न्ति॒ यद् व॒शा॑ं ब्रा॑ह्म॒णा अ॒भि । यथै॑नान॒न्यस्मिन् जिनी॒यादे॒वास्या॑ नि॒रोध॑नम् ॥ १५ ॥

चरे॑दे॒वा त्रै॑हाय॒णाद॑विज्ञातगदा स॒ती । व॒शां च॑ वि॒द्यान्ना॑रद ब्राह्म॒णास्तर्ह्ये॒ष्या∫ः ॥ १६ ॥

य ए॑ना॒मव॑शा॒माह॑ दे॒वाना॒ं निहि॑तं नि॒धिम् । उ॒भौ तस्मै॑ भवाश॒र्वौ प॑रि॒क्रम्येषु॑मस्यतः ॥ १७ ॥

यो अ॑स्या॒ ऊधो॒ न वेदाथो॑ अस्या॒ स्तना॑नु॒त । उ॒भये॑नै॒वास्मै॑ दुहे॒ दातु॒ं चेदश॑कद् व॒शाम् ॥ १८ ॥

दु॒र॒द॒भ्नैन॒मा श॑ये याचि॒तां च॒ न दित्स॑ति । नास्मै॒ कामा॒ः समृ॑ध्यन्ते॒ याम॑दत्त्वा॒ चिकी॑र्षति ॥ १९ ॥

दे॒वा व॒शाम॑याच॒न् मुखं॑ कृ॒त्वा ब्राह्म॑णम् । तेषां॒ सर्वे॑षा॒मद॑दु॒द्धेड॒ं न्ये∫ति॒ मानु॑षः ॥ २० ॥ (२०)

हेडं॑ पशू॒नां न्ये∫ति ब्राह्म॒णेभ्यो॑ऽददद् व॒शाम् । दे॒वाना॒ं निहि॑तं भा॒गं मर्त्य॒श्चेन्नि॑प्रिया॒यते॑ ॥ २१ ॥

यद॒न्ये श॒तं याचे॑युर्ब्राह्म॒णा गोप॑तिं व॒शाम् । अथै॑नां दे॒वा अ॑ब्रुवन्ने॒वं ह॑ वि॒दुषो॑ व॒शा ॥ २२ ॥

य ए॒वं वि॒दुषेऽद॒त्त्वाथा॒न्येभ्यो॒ दद॑द् व॒शाम् । दुर्गा॑ तस्मा॑ अधि॒ष्ठाने॑ पृथि॒वी स॒हदे॑वता ॥ २३ ॥

दे॒वा व॒शाम॑याच॒न् यस्मि॒न्नग्रे॒ अजा॑यत । तामे॒तां वि॑द्या॒न्नार॑दः स॒ह
दे॒वैरुदा॑जत ॥ २४ ॥
अ॒न॒प॒त्यमल्प॑पशुं व॒शा कृ॑णोति॒ पूरु॑षम् । ब्रा॒ह्म॒णैश्च॑ याचि॒तामथै॑नां
निप्रिया॒यते॑ ॥ २५ ॥
अ॒ग्नीषोमा॑भ्या॒ं कामा॑य मि॒त्राय॒ वरु॑णाय च । तेभ्यो॑ याचन्ति
ब्राह्म॒णास्तेष्वा वृ॑श्च॒तेऽद॑दत् ॥ २६ ॥
याव॑दस्या॒ गोप॑ति॒र्नोप॑शृणु॒यादृचः॑ स्व॒यम् । चरे॑दस्य॒ ताव॒द् गोषु॒
नास्य॑ श्रु॒त्वा गृ॒हे व॑सेत् ॥ २७ ॥
यो अ॑स्या॒ ऋच॑ उप॒श्रुत्याथ॒ गोष्वची॑चरत् । आयु॑श्च॒ तस्य॒ भूतिं॑ च
दे॒वा वृ॑श्चन्ति हीडि॒ताः ॥ २८ ॥
व॒शा चर॑न्ती बहु॒धा दे॒वाना॒ं निहि॑तो नि॒धिः । आ॒विष्कृ॑णुष्व रू॒पाणि॑
य॒दा स्थाम॒ जिघां॑सति ॥ २९ ॥
आ॒विरा॒त्मानं॑ कृणुते य॒दा स्थाम॒ जिघां॑सति । अथो॑ ह ब्र॒ह्मभ्यो॑ व॒शा
या॒ञ्ञ्याय॑ कृणुते॒ मनः॑ ॥ ३० ॥ (२१)
मन॑सा॒ सं क॑ल्पयति॒ तद् दे॒वाँ अपि॑ गच्छति । ततो॑ ह ब्र॒ह्माणो॑
व॒शामु॑प॒प्रय॑न्ति॒ याचि॑तुम् ॥ ३१ ॥
स्व॒धाका॒रेण॑ पि॒तृभ्यो॑ य॒ज्ञेन॑ दे॒वता॑भ्यः । दाने॑न राज॒न्यो[व॒शाया॑
मा॒तुर्हेड॒ं न ग॑च्छति ॥ ३२ ॥
व॒शा मा॒ता रा॑ज॒न्य[स्य॒ तथा॒ संभू॑तमग्र॒शः । तस्या॑ आहु॒रन॑र्पण॒ं यद्
ब्र॒ह्मभ्यः॑ प्रदी॒यते॑ ॥ ३३ ॥

यथाज्यं॒ प्रगृ॑हीतमालु॒म्पेत् स्रु॒चो अ॒ग्नय। ए॒वा ह॑ ब्र॒ह्मभ्यो॑ व॒शाम॒ग्नय॒
आ वृ॑श्चते॒ऽद॑दत् ॥ ३४ ॥

पु॒रो॒डा॒शव॑त्सा सु॒दुघा॑ लो॒केऽस्मा॒ उप॑ तिष्ठति। सास्मै॑ सर्वा॒न् कामा॑न्
व॒शा प्र॑द॒दुषे॑ दुहे ॥ ३५ ॥

सर्वा॒न् कामा॑न् यम॒राज्ये॑ व॒शा प्र॑द॒दुषे॑ दुहे। अथा॑हु॒र्नार॑कं लो॒कं
नि॑रु॒न्धा॒नस्य॑ याचि॒ताम् ॥ ३६ ॥

प्र॒वीय॑मा॑ना चरति क्रु॒द्धा गोप॑तये व॒शा। वे॒हतं॑ मा॒ मन्य॑मानो मृ॒त्योः
पाशे॑षु बध्यताम् ॥ ३७ ॥

यो वे॒हतं॒ मन्य॑माना॒ऽमा च॒ पच॑ते व॒शाम्। अप्य॑स्य पु॒त्रान् पौत्रां॑श्च
या॒चय॑ते॒ बृह॒स्पति॑ः ॥ ३८ ॥

म॒हदे॒षाव॑ तपति॒ चर॑न्ती॒ गोषु॒ गौरपि॑। अथो॑ ह॒ गोप॑तये व॒शाद॑दुषे
वि॒षं दु॑हे ॥ ३९ ॥

प्रि॒यं प॑शू॒नां भ॑वति॒ यद् ब्र॒ह्मभ्यः॑ प्रदी॒यते॑। अथो॑ व॒शाया॒स्तत् प्रि॒यं
यद् दे॑व॒त्रा ह॒विः स्यात् ॥ ४० ॥ (२२)

या व॒शा उ॒दक॑ल्पयन् दे॒वा य॒ज्ञादु॒देत्य॑। तासां॑ विलि॒प्त्यं भी॒मा॒म॒दाकु॑रुत ना॒रदः॑ ॥ ४१ ॥

तां दे॒वा अ॑मीमांसन्त व॒शेया३म॒वशेति॑। ताम॑ब्रवीन्ना॒रद॒ ए॒षा व॒शानां॑
व॒शत॒मेति॑ ॥ ४२ ॥

कति॒ नु व॒शा ना॑रद॒ यास्त्वं वे॑त्थ मनु॒ष्य॒जाः। तास्त्वां॑ पृ॒च्छामि
वि॒द्वांसं॒ कस्या॒ नाश्नी॑या॒दब्रा॑ह्मणः ॥ ४३ ॥

विलिप्त्या बृहस्पते या च सूतवशा वशा । तस्या नाश्नीयादब्राह्मणो
य आशंसेत भूत्याम् ॥ ४४ ॥
नमस्ते अस्तु नारदानुष्ठु विदुषे वशा । कतमासां भीमतमा यामदत्त्वा
पराभवेत् ॥ ४५ ॥
विलिप्ती या बृहस्पतेऽथो सूतवशा वशा । तस्या नाश्नीयादब्राह्मणो
य आशंसेत भूत्याम् ॥ ४६ ॥
त्रीणि वै वशाजातानि विलिप्ती सूतवशा वशा । ताः प्र यच्छेद्
ब्रह्मभ्यः सोऽनाव्रस्कः प्रजापतौ ॥ ४७ ॥
एतद् वो ब्राह्मणा हविरिति मन्वीत याचितः । वशां चेदेनं याचेयुर्या
भीमाददुषो गृहे ॥ ४८ ॥
देवा वशां पर्यवदन् न नोऽदादिति हीडिताः । एताभिर्ऋग्भिर्भेदं
तस्माद् वै स पराभवत् ॥ ४९ ॥
उतैनां भेदो नाददाद् वशामिन्द्रेण याचितः । तस्मात् तं देवा
आगसोऽवृश्चन्नहमुत्तरे ॥ ५० ॥
ये वशाया अदानाय वदन्ति परिरापिणः । इन्द्रस्य मन्यवे जाल्मा
आ वृश्चन्ते अचित्त्या ॥ ५१ ॥
ये गोपतिं पराणीयाथाहुर्मा ददा इति । रुद्रस्यास्तां ते हेतिं परि
यन्त्यचित्त्या ॥ ५२ ॥
यदि हुतां यद्यहुताममा च पचते वशाम् देवान्त्सब्राह्मणानृत्वा जिह्मो
लोकान्निर्ऋच्छति ॥ ५३ ॥ (२३) [४।१]

सूक्त ५ (पर्याय १)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—१ प्राजापत्यानुष्टुप्; २ भुरिक् साम्न्यनुष्टुप्; ३ चतुष्पदा स्वराडुष्णिक्; ४ आसुर्यनुष्टुप्; ५ साम्नी पङ्क्तिः; (६ साम्न्युष्णिक्) ॥ मन्त्र ६ ।

श्रमे॑ण॒ तप॑सा सृ॒ष्टा ब्रह्म॑णा वि॒त्तर्ते॑ श्रि॒ता ॥ १ ॥
स॒त्येनावृ॑ता श्रि॒या प्रावृ॑ता॒ यश॑सा॒ परी॑वृता ॥ २ ॥
स्व॒धया॒ परि॑हिता श्र॒द्धया॒ पर्यू॑ढा दी॒क्षया॑ गु॒प्ता य॒ज्ञे प्रति॑ष्ठिता लो॒को नि॒धन॑म् ॥ ३ ॥
ब्रह्म॑ प॒द्वा॒यं ब्रा॑ह्म॒णोऽधि॑पतिः ॥ ४ ॥
तामा॒ददा॑नस्य ब्रह्मग॒वीं जि॑न॒तो ब्रा॑ह्म॒णं क्ष॒त्रिय॑स्य ॥ ५ ॥
अप॑ क्रामति सू॒नृता॑ वी॒र्यं᳚१॒ पुण्या॑ ल॒क्ष्मीः ॥ ६ ॥ (२४)

—:०:—

सूक्त ५ (पर्याय २)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—(७ साम्नीत्रिष्टुप्;) ८ भुरिगार्च्यनुष्टुप्; ९ आर्च्यनुष्टुप्; १० उष्णिक्; ११ आर्ची निचृत्पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ५ ।

ओज॑श्च॒ तेज॑श्च॒ सह॑श्च॒ बलं᳚ च॒ वाक् चे᳚न्द्रि॒यं च॒ श्रीश्च॒ धर्म᳚श्च ॥१॥ (७)
ब्रह्म॑ च क्ष॒त्रं च॑ रा॒ष्ट्रं च॒ विश॑श्च॒ त्विषि॑श्च॒ यश॑श्च॒ वर्च᳚श्च॒ द्रवि॑णं च ।२।
आयु॑श्च रू॒पं च॒ नाम॑ च की॒र्तिश्च॑ प्रा॒णश्चा॑पा॒नश्च॒ चक्षु॑श्च॒ श्रोत्रं᳚ च ॥३॥
पय॑श्च॒ रस॒श्चान्नं᳚ चा॒न्नाद्यं᳚ च॒र्तं च॑ स॒त्यं चे॒ष्टं च॑ पू॒र्तं च॑ प्र॒जा च॑ प॒शव॑श्च ॥ ४ ॥ (१०)
तानि॒ सर्वा॒ण्यप॑ क्रामन्ति ब्रह्मग॒वीमा॒ददा॑नस्य जिन॒तो ब्रा॑ह्म॒णं क्ष॒त्रिय॑स्य ॥ ५ ॥ (११) (२५)

सूक्त ५ (पर्याय ३)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—१२ विराड् विष्मा गायत्री; १३ आसुर्यनुष्टुप्; १४, २६ साम्न्युष्णिक्; १५ गायत्री; १६, १७: १९, २० प्राजापत्यानुष्टुप्; १८ याजुषी जगती; २१, २५ साम्न्यनुष्टुप्; २२ साम्नी बृहती; २३ याजुषी त्रिष्टुप्; २४ आसुरी गायत्री; २७ आर्च्युष्णिक् ॥ मन्त्र, १६ ।

सैषा भी॒मा ब्र॑ह्मग॒व्य॑१॒घवि॑षा सा॒क्षात् कृ॒त्या कूल्ब॑ज॒मावृ॑ता ।१। (१२)
सर्वा॑ण्यस्यां घो॒राणि॒ सर्वे॑ च मृ॒त्यवः॑ ॥ २ ॥
सर्वा॑ण्यस्यां क्रू॒राणि॒ सर्वे॑ पुरुषव॒धाः ॥ ३ ॥ (१४)
सा ब्र॑ह्म॒ज्यं दे॑व॒पी॒युं ब्र॑ह्मग॒व्या᳚दी॒यमा॑ना मृ॒त्योः पड्बी॑श॒ आ द्य॑ति ॥ ४ ॥
मे॒निः श॒तव॑धा॒ हि सा ब्र॑ह्म॒ज्यस्य॒ क्षिति॒र्हि सा ॥ ५ ॥ (१६)
तस्मा॒द् वै ब्रा॑ह्मणा॒नां गौर्दु॑रा॒धर्षा॑ विजान॒ता ॥ ६ ॥
वज्रो॒ धाव॑न्ती वैश्वान॒र उद्वी॑ता ॥ ७ ॥ (१८)
हे॒तिः श॒फानु॑त्खि॒दन्ती॑ महादे॒वो॒३॒पेक्ष॑माणा ॥ ८ ॥
क्षु॒रप॑वि॒रीक्ष॑माणा॒ वाश्य॑माना॒भि स्फू॑र्जति ॥ ९ ॥ (२०)
मृ॒त्युर्हि॑ङ्कृण्व॒त्यु॑१॒ग्रो दे॒वः पुच्छं॑ प॒र्यस्य॑न्ती ॥ १० ॥
स॒र्व॒ज्या॒निः कर्णौ॑ वरीव॒र्जय॑न्ती राजय॒क्ष्मो मेह॑न्ती ॥ ११ ॥
मे॒निर्दु॒ह्यमा॑ना शीर्ष॒क्तिर्दु॒ग्धा ॥ १२ ॥ (२३)
से॒दिरु॑प॒तिष्ठ॑न्ती मिथोयो॒धः परा॑मृष्टा ॥ १३ ॥
श॒र॒व्या॒३॒ मुखे॑ऽपिन॒ह्यमा॑न॒ ऋति॑र्ह॒न्यमा॑ना ॥ १४ ॥ (२५)
अ॒घवि॑षा नि॒पत॑न्ती॒ तमो॒ निप॑तिता ॥ १५ ॥ (२६)
अ॒नु॒गच्छ॑न्ती प्रा॒णानुप॑ दासयति ब्रह्मग॒वी ब्र॑ह्म॒ज्यस्य॑ ॥ १६ ॥ (२६)

सूक्त ५ (पर्याय ४)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—२८ आसुरी गायत्री; २९, ३७ आसुर्यनुष्टुप्; ३० साम्न्यनुष्टुप्; ३१ याजुषी त्रिष्टुप्; ३२ साम्नी गायत्री; ३३, ३४ साम्नी बृहती; ३५ भुरिक् साम्न्यनुष्टुप्; ३६ साम्न्युष्णिक् ३८ प्रतिष्ठा गायत्री ॥ मन्त्र ११ ।

वैरं विकृत्यमाना पौत्राद्यं विभाज्यमाना ॥ १ ॥ (२८)
देवहेतिर्ह्रियमाणा व्यृद्धिर्हृता ॥ २ ॥ (२९)
पाप्माधिधीयमाना पारुष्यमवधीयमाना ॥ ३ ॥ (३०)
विषं प्रयस्यन्ती तक्मा प्रयस्ता ॥ ४ ॥
अघं पच्यमाना दुःष्वप्न्यं पक्वा ॥ ५ ॥ (३२)
मूलबर्हणी पर्याक्रियमाणा क्षितिः पर्याकृता ॥ ६ ॥ (३३)
असंज्ञा गन्धेन शुगुद्ध्रियमाणाशीविष उद्धृता ॥ ७ ॥ (३४)
अभूतिरुपह्रियमाणा पराभूतिरुपहृता ॥ ८ ॥ (३५)
शर्वः क्रुद्धः पिश्यमाना शिमिदा पिशिता ॥ ९ ॥ (३६)
अवर्तिरश्यमाना निर्ऋतिरशिता ॥ १० ॥ (३७)
अशिता लोकाच्छिनत्ति ब्रह्मगवी ब्रह्मज्यमस्माच्चामुष्माच्च ॥११॥ (२७)

सूक्त ५ (पर्याय ५)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—३९ साम्नी पङ्क्तिः; ४० याजुष्यनुष्टुप्; ४१, ४६ भुरिक् साम्न्यनुष्टुप्; ४२ आसुरी बृहती; ४३ साम्नी बृहती; ४४ पिपीलिकामध्यानुष्टुप्; ४५ आर्ची बृहती ॥ मन्त्र ८ ।

तस्या आहननं कृत्या मेनिराशसनं वलग ऊबध्यम् ॥ १ ॥ (३९)

अ॒स्व॒गता॒ परि॑ह्णुता ॥ २ ॥ (४०)

अ॒ग्निः क्र॒व्याद् भू॒त्वा ब्र॑ह्मग॒वी ब्र॑ह्म॒ज्यं प्र॒विश्या॑त्ति ॥ ३ ॥

सर्वा॒स्याङ्गा॒ पर्वा॒ मूला॑नि वृश्चति ॥ ४ ॥ (४२)

छि॒नत्त्य॑स्य पितृब॒न्धु परा॑ भावयति मातृब॒न्धु ॥ ५ ॥ (४३)

वि॒वा॒हां ज्ञा॒तीन्त्सर्वा॒नपि॑ क्षापयति ब्रह्मग॒वी ब्र॑ह्म॒ज्यस्य॑ क्ष॒त्रिये॒णापु॑नर्दीयमाना ॥ ६ ॥ (४४)

अ॒वा॒स्तुमे॑न॒मस्व॑ग॒मप्र॑जसं करोत्यपरापर॒णो भ॑वति क्षीयते॑ ॥ ७ ॥

य ए॒वं वि॒दुषो॑ ब्रा॒ह्म॒णस्य॑ क्ष॒त्रियो॒ गामा॑द॒त्ते ॥ ८ ॥ (४६) (२८)

—:०:—

सूक्त ५ (पर्याय ६)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—(४७, ४९, ५१—५३, ५७—५९,) ६१ प्राजापत्यानुष्टुप्; ४८ आर्च्यनुष्टुप्; ५० साम्नी बृहती; ५४, ५५ प्राजापत्योष्णिक्; ५६ आसुरी गायत्री; ६० गायत्री ॥ मन्त्र १५ ।

क्षि॒प्रं वै तस्या॒हन॑ने॒ गृध्राः॑ कुर्वत ऐल॒बम् ॥ १ ॥ (४७)

क्षि॒प्रं वै तस्या॒दह॑नं॒ परि॑ नृत्यन्ति के॒शिनी॑राघ्ना॒नाः पा॒णिनोर॑सि कुर्वा॒णाः पा॒पमै॑ल॒बम् ॥ २ ॥ (४८)

क्षि॒प्रं वै तस्य॒ वास्तु॑षु॒ वृकाः॑ कुर्वत ऐलबम् ॥ ३ ॥

क्षि॒प्रं वै तस्य॑ पृच्छन्ति॒ यत् तदासी३दि॒दं नु ता३दिति॑ ॥४॥ (५०)

छि॒न्ध्या च्छि॑न्धि॒ प्र च्छि॒न्ध्यपि॑ क्षापय क्षा॒पय॑ ॥ ५ ॥ (५१)

आ॒ददा॑नमाङ्गिरसि ब्रह्म॒ज्यमुप॑ दासय ॥ ६ ॥

वै॒श्व॒दे॒वी ह्यु॑१॒च्यसे॑ कृ॒त्या कूल्ब॑ज॒मावृ॑ता ॥ ७ ॥ (५३)
ओष॑न्ती स॒मोष॑न्ती॒ ब्रह्म॑णो॒ वज्र॑: ॥ ८ ॥ (५४)
क्षु॒रप॑विर्मृ॒त्युर्भू॒त्वा वि धा॑व॒ त्वम् ॥ ९ ॥ (५५)
आ द॑त्से जिन॒तां वर्च॑ इ॒ष्टं पू॒र्तं चा॒शिष॑: ॥ १० ॥ (५६)
आ॒दाय॑ जी॒तं जी॒ताय॑ लो॒के॒३॒॑ऽमुष्मि॒न् प्र य॑च्छसि ॥ ११ ॥
अघ्न्ये॑ पद॒वीर्भ॑व ब्राह्म॒णस्या॒भिश॑स्त्या ॥ १२ ॥
मे॒निः श॑र॒व्या॑ भवा॒घाद॒घवि॑षा भव ॥ १३ ॥ (५९)
अघ्न्ये॒ प्र शिरो॑ जहि ब्रह्म॒ज्यस्य॑ कृ॒ताग॑सो देवपी॒योर॑रा॒धस॑: ॥ १४ ॥
त्वया॒ प्रमू॑र्णं मृदि॒तम॒ग्निर्द॑हतु दुश्चित॑म् ॥ १५ ॥ (६१) (२९)

—:०:—

सूक्त ५ (पर्याय ७)

ऋषिः—कश्यपः ॥ देवता—ब्रह्मगवी ॥ छन्दः—६२—६४, ६६, ६८—७० प्राजापत्यानुष्टुप्; ६५ गायत्री; ६७ प्राजापत्या गायत्री; ७१ आसुरी पङ्क्तिः; ७२ प्राजापत्या त्रिष्टुप्; ७३ आसुर्युष्णिक् ॥ मन्त्र १२ ।

वृ॒श्च प्र वृ॑श्च॒ सं वृ॑श्च॒ दह॒ प्र द॑ह॒ सं द॑ह ॥ १ ॥ (६२)
ब्र॒ह्म॒ज्यं दे॑व्यघ्न्य॒ आ मूला॑दनु॒संद॑ह ॥ २ ॥
यथाया॑द् यमसा॒दना॑त् पा॑पलो॒कान् प॑रा॒वत॑: ॥ ३ ॥ (६४)
ए॒वा त्वं दे॑व्यघ्न्ये ब्रह्मज्यस्य॑ कृ॒ताग॑सो देवपी॒योर॑रा॒धस॑: ॥ ४ ॥
वज्रे॑ण श॒तप॑र्वणा ती॒क्ष्णेन॑ क्षु॒रभृ॑ष्टिना ॥ ५ ॥ (६६)
प्र स्क॒न्धान् प्र शिरो॑ जहि ॥ ६ ॥ (६७)

लोमा॑न्यस्य॒ सं छि॑न्धि॒ त्वच॑मस्य॒ वि वे॑ष्टय ॥ ७ ॥ (६८)
मां॒सान्य॑स्य शातय॒ स्नावा॑न्यस्य॒ संवृ॑ह ॥ ८ ॥ (६९)
अस्थी᳚न्यस्य पीडय म॒ज्जान॑मस्य॒ निर्ज᳚हि ॥ ९ ॥ (७०)
स॒र्वास्या॒ङ्गा॒ पर्वा᳚णि॒ वि श्र॑थय ॥ १० ॥ (७१)
अ॒ग्निरे᳚नं क्र॒व्यात् पृ॑थि॒व्या नु॑द॒तामु॒दो॑षतु वा॒यु॒रन्तरि॑क्षान्मह॒तो
व॑रि॒म्णः ॥ ११ ॥ (७२)
सूर्य᳚ एनं दि॒वः प्र णु॑द॒तां न्योऽषतु ॥ १२ ॥ (७३) (३०) [५।१]

इति द्वादशं काण्डम् समाप्तम् ॥

—:०:—

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ त्रयोदशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम्, रोहितः, आदित्यः; ३ मरुतः; २८—३० अग्निः; ३१ अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, २, ६, ७, १०, ११, २०, २२—२५, २७, ३३, ३४, ३८, ४१ त्रिष्टुप्; ३—५, ९, १२ जगती; ८ भुरिक् त्रिष्टुप्; १३ अतिशाक्वरगर्भातिजगती; १४ त्रिपदा पुरःपरशाक्वरा विपरीतपादलक्ष्मा पङ्क्तिः; १५ अतिजागतगर्भा परा जगती; (१६ विराड् बृहती); १७ पञ्चपदा ककुम्मती जगती; १८ पञ्चपदा परशाक्वरा भुरिक् ककुम्मत्यतिजगती; १९ पञ्चपदा परातिजागता ककुम्मत्यतिजगती; २१ आर्षी निचृद् गायत्री; २६ विराट् परोष्णिक्; २८ भुरिगनुष्टुप्; २९, ३०, ३२, ३९, ४०, ४५—५१, ५३, ५४, ५६, ५८ अनुष्टुप्; ३१ पञ्चपदा ककुम्मती शाक्वरगर्भा जगती; ३५ उपरिष्टाद् बृहती; ३६ निचृन्महाबृहती; ३७ परशाक्वरा विराडतिजगती; ४२ विराड् जगती; ४३ विराण्महाबृहती; ४४ परोष्णिक्; ५२ पथ्या पङ्क्तिः; ५५ ककुम्मती बृहतीगर्भा पथ्या पङ्क्तिः; ५७ ककुम्मत्यनुष्टुप्; ५९, ६० गायत्री ॥ मन्त्र ६० ।

उ॒देहि॑ वाजि॒न् यो अ॒प्स्व॑१॒न्तरि॒दं रा॒ष्ट्रं प्र वि॑श सू॒नृता॑वत् । यो
रोहि॑तो॒ विश्व॑मि॒दं ज॒जान॒ स त्वा॑ रा॒ष्ट्राय॒ सुभृ॑तं बिभर्तु ॥ १ ॥

उद्वाज॒ आ ग॒न् यो अ॒प्स्व॑१॒न्तर्वि॑श॒ आ रो॑ह॒ त्वद्यो॑नयो॒ याः । सोमं॒
दधा॑नो॒ऽप ओष॑धी॒र्गाश्चतु॑ष्पदो द्विपद॒ आ वे॑शये॒ह ॥ २ ॥

यू॒यमु॒ग्रा म॑रुतः पृश्निमातर॒ इन्द्रे॑ण यु॒जा प्र मृ॑णीत॒ शत्रू॑न्। आ वो॒
रोहि॑तः शृणवत् सुदानवस्त्रिष॒प्तासो॑ मरुतः स्वादु॒संमुदः ॥ ३ ॥
रुहो॑ रुरोह॒ रोहि॑त॒ आ रु॑रोह॒ गर्भो॑ जनी॑नां ज॒नुषा॑मु॒पस्थ॑म्। ताभि॒ः
संर॑ब्ध॒मन्व॑विन्दन् षडु॒र्वीर्गा॒तुं प्र॒पश्य॑न्नि॒ह रा॒ष्ट्रमाहा॑ः ॥ ४ ॥
आ ते॑ रा॒ष्ट्रमि॒ह रोहि॑तोऽहार्षी॒द् व्याऽस्थ॒न्मृधो॒ अभ॑यं ते अभूत्।
तस्मै॑ ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी रे॒वती॑भिः कामँ दुहाथामि॒ह शक्व॑रीभिः ॥ ५ ।
रोहि॑तो॒ द्यावा॑पृथि॒वी ज॑जान॒ तत्र॒ तन्तुँ॑ परमे॒ष्ठी त॑तान। तत्र॑
शिश्रिये॒ऽज एक॑पा॒दोऽदृँह॒द् द्यावा॑पृथि॒वी बले॑न ॥ ६ ॥
रोहि॑तो॒ द्यावा॑पृथि॒वी अ॑दृंह॒त् तेन॒ स्वऽस्तभि॒तं तेन॒ नाकः॑। तेना॒न्तरि॑क्ष॒ं
विमि॑ता॒ रजां॑सि॒ तेन॑ दे॒वा अ॒मृत॒मन्व॑विन्दन् ॥ ७ ॥
वि रोहि॑तो अमृशद् वि॒श्वरू॑पं समाकुर्वा॒णः प्र॒रुहो॒ रुह॑श्च। दिवँ॑ रू॒ढ्वा
म॑ह॒ता म॑हि॒म्ना सं ते॑ रा॒ष्ट्रम॑नक्तु॒ पय॑सा घृ॒तेन॑ ॥ ८ ॥
यास्ते॒ रुहः॑ प्र॒रुहो॒ यास्त॑ आ॒रुहो॒ याभि॑रापृ॒णासि॒ दिव॑म॒न्तरि॑क्षम्।
तासां॒ ब्रह्म॑णा॒ पय॑सा वावृधा॒नो वि॒शि रा॒ष्ट्रे जा॑गृहि॒ रोहि॑तस्य ॥९॥
यास्ते॒ वि॒शस्तप॑सः संबभू॒वुर्व॒त्सं गा॑य॒त्रीमनु॒ ता इ॒हागुः॑। तास्त्वा
वि॑शन्तु॒ मन॑सा शि॒वेन॒ संमा॑ता व॒त्सो अ॒भ्येऽतु॒ रोहि॑तः ॥१०॥ (१)
ऊ॒र्ध्वो रोहि॑तो॒ अधि॒ नाके॒ अस्था॒द् विश्वा॑ रू॒पाणि॑ ज॒नय॒न् युवा॑ क॒विः।
ति॒ग्मेना॒ग्निर्ज्योति॑षा॒ वि भा॑ति तृ॒तीये॑ च॒क्रे रज॑सि प्रि॒याणि॑ ॥ ११ ॥
स॒हस्र॑शृङ्गो वृष॒भो जातवे॑दा घृ॒ताहु॑त॒ः सोम॑पृष्ठः सु॒वीरः॑। मा मा॑
हासीन्नाथि॒तो नेत् त्वा॒ जहा॑नि गोपो॒षं च॑ मे वीरपो॒षं च॑ धेहि ।१२।

रोहि॑तो य॒ज्ञस्य॑ जनि॒ता मुखं॑ च॒ रोहि॑ताय वा॒चा श्रोत्रे॑ण॒ मन॑सा जुहोमि । रोहि॑तं दे॒वा य॑न्ति सुमन॒स्यमा॑ना॒ स मा॒ रोहैः॑ सामि॒त्यै रो॑हयतु ॥ १३ ॥

रोहि॑तो य॒ज्ञं व्य॑दधाद् वि॒श्वक॑र्मणे॒ तस्मा॒त् तेजां॒स्युप॑ मे॒मान्या॑गुः । वो॒चेयं॑ ते॒ नाभि॒ं भुव॑न॒स्याधि॑ म॒ज्मनि॑ ॥ १४ ॥

आ त्वा॑ रुरोह बृह॒त्यु॒३॒त प॒ङ्क्तिरा॑ क॒कुब् वर्च॑सा जातवेदः । आ त्वा॑ रुरोहोष्णिहाक्ष॒रो व॑षट्का॒र आ त्वा॑ रुरोह॒ रोहि॑तो॒ रेत॑सा स॒ह ॥१५॥

अ॒यं व॑स्ते॒ गर्भं॑ पृथि॒व्या दिवं॑ वस्ते॒ऽयम॒न्तरि॑क्षम् । अ॒यं ब्र॒ध्नस्य॑ वि॒ष्टपि॒ स्व॑र्लो॒कान् व्या॑नशे ॥ १६ ॥

वाच॑स्पते पृथि॒वी नः॑ स्यो॒ना स्यो॒ना योनि॒स्तल्पा॑ नः सुशेवा॑ । इ॒हैव प्रा॒णः स॒ख्ये नो॑ अस्तु॒ तं त्वा॑ परमेष्ठि॒न् पर्य॒ग्निरायु॑षा॒ वर्च॑सा दधातु ॥ १७ ॥

वाच॑स्पत ऋ॒तवः॒ पञ्च॒ ये नौ॑ वैश्वकर्म॒णाः परि॒ ये सं॑बभूवुः । इ॒हैव प्रा॒णः स॒ख्ये नो॑ अस्तु॒ तं त्वा॑ परमेष्ठि॒न् परि॒ रोहि॑त॒ आयु॑षा॒ वर्च॑सा दधातु ॥ १८ ॥

वाच॑स्पते सौमन॒सं मन॑श्च गो॒ष्ठे नो॒ गा ज॒नय॒ योनि॑षु प्र॒जाः । इ॒हैव प्रा॒णः स॒ख्ये नो॑ अस्तु॒ तं त्वा॑ परमेष्ठि॒न् पर्य॒हमायु॑षा॒ वर्च॑सा दधामि ॥ १९ ॥

परि॑ त्वा धात् सवि॒ता दे॒वो अ॒ग्निर्वर्च॑सा मि॒त्रावरु॑णाव॒भि त्वा॑ । सर्वा॒ अरा॑तीरव॒क्राम॒न्नेहीदं रा॒ष्ट्रम॑करः सू॒नृता॑वत् ॥ २० ॥ (२)

यं त्वा॒ पृष॑ती॒ रथे॒ प्रष्टि॒र्वह॑ति रोहित । शु॒भा या॑सि रि॒णन्न॒पः ॥२१॥

अनु॑व्रता॒ रोहि॑णी॒ रोहि॑तस्य सू॒रिः सु॒वर्णा॑ बृह॒ती सु॒वर्चा॑ः । तया॒
वाजा॑न् वि॒श्वरू॑पां जयेम॒ तया॒ विश्वा॒ः पृत॑ना अ॒भि ष्या॑म ॥ २२ ॥

इ॒दं सदो॒ रोहि॑णी॒ रोहि॑तस्या॒सौ पन्था॒ः पृष॑ती॒ येन॒ याति॑ । तां
ग॑न्ध॒र्वाः क॒श्यपा॒ः उन्न॑यन्ति॒ तां र॑क्षन्ति क॒वयोऽप्र॑मादम् ॥ २३ ॥

सूर्य॑स्याश्वा॒ हर॑यः केतु॒मन्त॒ः सदा॑ वहन्त्य॒मृता॑ः सु॒खं रथ॑म् । घृ॒तपा॑वा॒
रोहि॑तो॒ भ्राज॑मानो॒ दिवं॑ दे॒वः पृष॑ती॒मा वि॑वेश ॥ २४ ॥

यो रोहि॑तो वृष॒भस्ति॒ग्मशृ॑ङ्गः॒ पर्य॒ग्नि परि॒ सूर्यं॑ ब॒भूव॑ । यो वि॑ष्ट॒-
भ्नाति॑ पृथि॒वीं दिवं॑ च॒ तस्मा॑द् दे॒वा अधि॒ सृष्टीः॑ सृजन्ते ॥ २५ ॥

रोहि॑तो॒ दिव॒मारु॑हन्मह॒तः पर्य॑र्ण॒वात् । सर्वा॑ रुरोह॒ रोहि॑तो॒ रुहः॑ ।२६।

वि मि॑मीष्व॒ पय॑स्वतीं घृ॒ताचीं॑ दे॒वानां॑ धे॒नुरन॑पस्पृगे॒षा । इन्द्रः॒ सोमं॑
पिब॑तु॒ क्षेमो॑ अस्त्व॒ग्निः प्र स्तौ॑तु॒ वि मृधो॑ नुदस्व ॥ २७ ॥

समि॑द्धो अ॒ग्निः स॑मिधा॒नो घृ॒तवृ॑द्धो घृ॒ताहु॑तः । अ॒भी॒षाड् वि॑श्वा॒षाड॒ग्निः
स॒पत्ना॑न् हन्तु॒ ये मम॑ ॥ २८ ॥

हन्त्वे॑ना॒न् प्र द॑हत्व॒रिर्यो नः॑ पृत॒न्यति॑ । क्र॒व्यादा॒ग्निना॑ व॒यं स॒पत्ना॒न्
प्र द॑हामसि ॥ २९ ॥

अ॒वा॒ची॒नानव॑ ज॒हीन्द्र॒ वज्रे॑ण बाहु॒मान् । अधा॑ स॒पत्ना॑न् माम॒काना॒ग्ने-
स्तेजो॑भि॒रादि॑षि ॥ ३० ॥ (३)

अग्ने॑ स॒पत्ना॒नध॑रान् पादया॒स्मद् व्य॒थया॑ सजा॒तमु॒त्पिपा॑नं बृहस्पते ।
इन्द्रा॑ग्नी॒ मित्रा॑वरुणा॒वध॑रे पद्यन्ता॒मप्र॑तिमन्यूयमानाः ॥ ३१ ॥

उ॒द्यंस्त्वं दे॑व सूर्य स॒पत्ना॒नव॑ मे जहि । अवै॑ना॒नश्म॑ना जहि॒ ते य॑न्त्वध॒मं तमः॑ ॥ ३२ ॥

व॒त्सो वि॒राजो॑ वृष॒भो म॑ती॒नामा रु॑रोह शु॒क्रपृ॑ष्ठो॒ऽन्तरि॑क्षम् । घृ॒तेना॒र्कम॒भ्य॑र्चन्ति व॒त्सं ब्रह्म॒ सन्तं॒ ब्रह्म॑णा वर्धयन्ति ॥ ३३ ॥

दिवं॑ च॒ रोह॑ पृथि॒वीं च॑ रोह रा॒ष्ट्रं च॒ रोह॒ द्रवि॑णं च रोह । प्र॒जां च॒ रोहा॒मृतं॑ च रोह॒ रोहि॑तेन त॒न्वं१॒॑ सं स्पृ॑शस्व ॥ ३४ ॥

ये दे॒वा रा॑ष्ट्र॒भृतो॒ऽभितो॒ यन्ति॒ सूर्य॑म् । तैष्टे॒ रोहि॑तः संविदा॒नो रा॒ष्ट्रं द॑धातु सुमन॒स्यमा॑नः ॥ ३५ ॥

उत् त्वा॑ य॒ज्ञा ब्रह्म॑पूता वह॒न्त्य॑ध्व॒गतो॒ हर॑यस्त्वा वहन्ति । ति॒रः स॑मु॒द्रमति॑ रोचसेऽर्ण॒वम् ॥ ३६ ॥

रोहि॑ते॒ द्यावा॑पृथि॒वी अधि॑ श्रि॒ते व॑सु॒जिति॑ गो॒जिति॑ संध॒नाजिति॑ । स॒हस्रं॒ यस्य॒ जनि॑मानि स॒प्त च॑ वो॒चेयं॑ ते॒ नाभिं॒ भुव॑न॒स्याधि॑ म॒ज्मनि॑ ॥ ३७ ॥

य॒शा या॑सि प्र॒दिशो॒ दिश॑श्च य॒शाः प॑शू॒नामु॒त च॑र्षणी॒नाम् । य॒शाः पृ॑थि॒व्या अदि॑त्या उ॒पस्थे॒ऽहं भू॑यासं सवि॒तेव॒ चारुः॑ ॥ ३८ ॥

अ॒मुत्र॒ सन्नि॒ह वे॑त्थे॒तः संस्ता॑नि पश्यसि । इ॒तः प॑श्यन्ति रोच॒नं दि॒वि सूर्यं॑ विप॒श्चित॑म् ॥ ३९ ॥

दे॒वो दे॒वान् म॑र्चयस्य॒न्तश्च॑रस्यर्ण॒वे । स॒मा॒नम॒ग्निमि॑न्धते॒ तं वि॑दुः क॒वयः॒ परे॑ ॥ ४० ॥ (४)

अवः॒ परे॑ण प॒र ए॒नाव॑रेण प॒दा व॒त्सं बिभ्र॑ती॒ गौरुद॑स्थात् । सा क॒द्रीची॒ कं स्वि॒दर्धं॒ परा॑गात् क्व॑ स्वित् सूते न॒हि यू॒थे अ॒स्मिन् ॥ ४१ ॥

एक॑पदी द्वि॒प॑दी॒ सा चतु॑ष्पद्य॒ष्टाप॑दी॒ नव॑पदी बभूवुषी॑ । स॒हस्रा॑क्षरा॒
भुव॑नस्य प॒ङ्क्तिस्तस्या॑ः समुद्रा अधि॒ वि क्ष॑रन्ति ॥ ४२ ॥

आ॒रोह॒न् द्याम॒मृत॒ः प्राव॑ मे॒ वच॑ः । उत् त्वा॑ य॒ज्ञा ब्रह्म॑पूता वहन्त्यध्व॒गतो॒
हर॑यस्त्वा वहन्ति ॥ ४३ ॥

वेद॒ तत् ते॑ अमर्त्य॒ यत् त॑ आ॒क्रम॑णं दि॒वि । यत् ते᳚ स॒धस्थ᳚ं पर॒मे
व्यो॑मन् ॥ ४४ ॥

सूर्यो॒ द्यां सूर्य᳚ः पृथि॒वीं सूर्य॒ आपोऽति॑ पश्यति । सूर्यो᳚ भूतस्यैक॒ं
चक्षु॒रा रु॑रोह॒ दिवं᳚ म॒हीम् ॥ ४५ ॥

उ॒र्वीरा॑सन् परि॒धयो॒ वेदि॒र्भूमि॑रकल्पत । तत्रै॒ताव॒ग्नी आध॑त्त हि॒मं घ्रं॒सं
च॒ रोहि॑तः ॥ ४६ ॥

हि॒मं घ्रं॒सं चा॒धाय॒ यूपा॑न् कृ॒त्वा पर्व॑तान् । व॒र्षाज्या॑व॒ग्नी ई᳚जाते॒
रोहि॑तस्य स्व॒र्विद॑ः ॥ ४७ ॥

स्व॒र्विदो॒ रोहि॑तस्य॒ ब्रह्म॑णा॒ग्निः समि॑ध्यते । तस्मा॑द् घ्रं॒सस्तस्मा॑द्धि॒म-
स्तस्मा॑द् य॒ज्ञो॑ऽजायत ॥ ४८ ॥

ब्रह्म॑णा॒ग्नी वा॑वृधा॒नौ ब्रह्म॑वृद्धौ॒ ब्रह्मा॑हुतौ । ब्रह्मे॑द्धाव॒ग्नी ई᳚जाते॒ रोहि॑-
तस्य स्व॒र्विद॑ः ॥ ४९ ॥

स॒त्ये अ॒न्यः स॒माहि॑तो॒ऽप्स्व॑१॒न्यः समि॑ध्यते । ब्रह्मे॑द्धाव॒ग्नी ई᳚जाते॒
रोहि॑तस्य स्व॒र्विद॑ः ॥ ५० ॥ (५)

यं वात॑ः परि॒ शुम्भ॑ति॒ यं वेन्द्रो॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॑ः । ब्रह्मे॑द्धाव॒ग्नी ई᳚जाते॒
रोहि॑तस्य स्व॒र्विद॑ः ॥ ५१ ॥

वेदिं भूमिं कल्पयित्वा दिवं कृत्वा दक्षिणाम्। घ्रंसं तदग्निं कृत्वा चकार विश्वमात्मन्वद् वर्षेणाज्येन रोहितः ॥ ५२ ॥

वर्षमाज्यं घ्रंसो अग्निर्वेदिर्भूमिरकल्पत। तत्रैतान् पर्वतानग्निर्गीर्भिरूर्ध्वाँ अकल्पयत् ॥ ५३ ॥

गीर्भिरूर्ध्वान् कल्पयित्वा रोहितो भूमिमब्रवीत्। त्वयीदं सर्वं जायतां यद् भूतं यच्च भाव्यम् ॥ ५४ ॥

स यज्ञः प्रथमो भूतो भव्यो अजायत। तस्माद्ध जज्ञ इदं सर्वं यत् किं चेदं विरोचते रोहितेन ऋषिणाभृतम् ॥ ५५ ॥

यश्च गां पदा स्फुरति प्रत्यङ् सूर्यं च मेहति। तस्य वृश्चामि ते मूलं न च्छायां करवोऽपरम् ॥ ५६ ॥

यो माभिच्छायमत्येषि मां चाग्निं चान्तरा। तस्य वृश्चामि ते मूलं न च्छायां करवोऽपरम् ॥ ५७ ॥

यो अद्य देव सूर्य त्वां च मां चान्तरायति। दुःष्वप्न्यं तस्मिञ्छमलं दुरितानि च मृज्महे ॥ ५८ ॥

मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः। मान्त स्थुर्नो अरातयः ॥ ५९ ॥

यो यज्ञस्य प्रसाधनस्तन्तुर्देवेष्वाततः। तमाहुतमशीमहि ॥६०॥ (६)

[१।१]

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम्, रोहितः; आदित्यः ॥ छन्दः—४—७, ९, १८, ३१—३३, ३, ५, ३६, ३८, ४२, ४६, त्रिष्टुप्; १, १२—१५, ३९—४१ अनुष्टुप्; २, ३, ८, ४३ जगती, १० आस्तारपङ्क्तिः; ११ बृहतीगर्भा त्रिष्टुप्; १६—२४ आर्षी गायत्री; २५ ककुम्मत्यास्तारपङ्क्तिः; २६ पुरोद्व्यतिजागता भुरिग् जगती; २७ विराड् जगती; २९ बार्हतगर्भानुष्टुप्; ३० पञ्चपदोष्णिग्बृहतीगर्भाऽतिजगती; ३४ आर्षी पङ्क्तिः; ३७ पञ्चपदा विराड्गर्भा जगती; ४४ चतुष्पदा पुरःशाक्वरा भुरिग् जगती; ४५ अतिजागतगर्भा जगती ॥ मन्त्र ४६ ।

उद॑स्य के॒तवो॑ दि॒वि शु॒क्रा भ्राज॑न्त ईरते । आ॒दि॒त्यस्य॑ नृ॒चक्ष॑सो॒
महि॑व्रतस्य मी॒ढुष॑: ॥ १ ॥

दि॒शां प्र॒ज्ञानां॑ स्व॒रय॑न्तम॒र्चिषा॑ सुप॒क्षमा॒शुं प॒तय॑न्तमर्ण॒वे । स्तवा॑म॒
सूर्यं॒ भुव॑नस्य गो॒पां यो र॒श्मिभि॒र्दिश॑ आ॒भाति॒ सर्वाः॑ ॥ २ ॥

यत् प्रा॒ङ् प्र॒त्यङ् स्व॒धया॒ यासि॒ शीभं॒ नाना॑रूपे॒ अह॑नी॒ कर्षि॑ मा॒यया॑ ।
तदा॑दित्य॒ महि॒ तत् ते॒ महि॒ श्रवो॒ यदेको॒ विश्वं॒ परि॒ भूम॒ जाय॑से ॥३॥

वि॒प॒श्चितं॑ त॒रणिं॒ भ्राज॑मानं॒ वह॑न्ति॒ यं ह॒रितः॑ स॒प्त ब॒ह्वीः । स्रु॒ताद्
यम॒त्त्रिर्दिव॑मुन्नि॒नाय॒ तं त्वा॑ पश्यन्ति परि॒यान्त॑मा॒जिम् ॥ ४ ॥

मा त्वा॑ दभन् परि॒यान्त॑मा॒जिं स्व॒स्ति दु॒र्गाँ अति॑ याहि॒ शीभ॑म् ।
दिवं॑ च सूर्य पृथि॒वीं च॑ दे॒वीम॑होरा॒त्रे वि॒मिमा॑नो॒ यदेषि॑ ॥ ५ ॥

स्व॒स्ति ते॑ सूर्य च॒रसे॒ रथा॑य॒ येनो॒भावन्तौ॑ परि॒यासि॑ स॒द्यः । यं ते॒
वह॑न्ति ह॒रितो॒ वहि॑ष्ठाः श॒तमश्वा॒ यदि॑ वा स॒प्त ब॒ह्वीः ॥ ६ ॥

सु॒खं सूर्य॒ रथ॑मंशु॒मन्तं॑ स्यो॒नं सु॒वह्नि॒मधि॑ तिष्ठ वा॒जिन॑म् । यं ते॒
वह॑न्ति ह॒रितो॒ वहि॑ष्ठाः श॒तमश्वा॒ यदि॑ वा स॒प्त ब॒ह्वीः ॥ ७ ॥

स॒प्त सूर्यो॑ ह॒रितो॒ यात॑वे॒ रथे॒ हिर॑ण्यत्वचसो बृह॒तीर॑युक्त । अमो॑चि
शु॒क्रो रज॑सः प॒रस्ता॑द् वि॒धूय॑ दे॒वस्तमो॒ दिव॒मारु॑हत् ॥ ८ ॥

उत् के॒तुना॑ बृह॒ता दे॒व आ॒गन्नपा॑वृक् तमो॒ऽभि ज्योति॑रश्रैत् । दि॒व्यः
सु॑प॒र्णः स वी॒रो व्य॑ख्य॒ददि॑तेः पु॒त्रो भुव॑नानि॒ विश्वा॑ ॥ ९ ॥

उ॒द्यन् र॒श्मीना त॑नुषे॒ विश्वा॑ रू॒पाणि॑ पुष्यसि । उ॒भा स॑मु॒द्रौ क्रतु॑ना॒
वि भा॑सि॒ सर्वाँ॑ल्लो॒कान् प॑रि॒भूर्भ्राज॑मानः ॥ १० ॥ (७)

पू॒र्वा॒प॒रं च॑रतो मा॒यये॒तौ शिशू॒ क्रीड॑न्तौ॒ परि॑ यातो अर्ण॒वम् ।
विश्वा॒न्यो भुव॑ना वि॒चष्टे॑ हैर॒ण्यैर॒न्यं ह॒रितो॑ वहन्ति ॥ ११ ॥

दि॒वि त्वात्त्रिरधारय॒त् सूर्या॒ मासा॑य॒ कर्त॑वे । स ए॑षि॒ सुधृ॑त॒स्तप॒न्
विश्वा॑ भू॒ताव॒चाक॑शत् ॥ १२ ॥

उ॒भावन्तौ॒ सम॑र्षसि व॒त्सः स॑मा॒तरा॑विव । न॒न्वे॒३॒॑तदि॒तः पु॒रा ब्रह्म॑ दे॒वा
अ॒मी वि॑दुः ॥ १३ ॥

यत् स॑मु॒द्रमनु॑ श्रि॒तं तत् सिषासति॒ सूर्य॑: । अध्वास्य॒ वित॑तो म॒हान्
पू॒र्वश्चाप॑रश्च॒ यः ॥ १४ ॥

तं समा॑प्नोति जू॒तिभि॒स्ततो॒ नाप॑ चिकित्सति । तेना॒मृत॑स्य भ॒क्षं
दे॒वानां॒ नाव॑ रुन्धते ॥ १५ ॥

उदु॒ त्यं जा॒तवे॑दसं दे॒वं व॑हन्ति के॒तव॑: । दृ॒शे विश्वा॑य॒ सूर्य॑म् ॥ १६ ॥

अप॒ त्ये ता॒यवो॑ यथा॒ नक्ष॑त्रा यन्त्य॒क्तुभि॑: । सूरा॑य वि॒श्वच॑क्षसे ।१७।

अदृ॑श्रन्नस्य के॒तवो॒ वि र॒श्मयो॒ जनाँ॒ अनु॑ । भ्राज॑न्तो अ॒ग्नयो॑
यथा ॥ १८ ॥

त॒रणि॑र्वि॒श्वद॑र्शतो ज्योति॒ष्कृद॑सि सूर्य । विश्व॒मा भा॑सि रोचन ॥ १९ ॥

प्र॒त्यङ् दे॒वानां॒ विश॑: प्र॒त्यङ्ङुदे॑षि॒ मानु॑षीः । प्र॒त्यङ् विश्वं॒ स्व॑र्दृ॒शे
॥ २० ॥ (८)

येना॑ पाव॒क चक्ष॑सा भुर॒ण्यन्तं॒ जना॒ँ अनु॑ । त्वं व॑रुण॒ पश्य॑सि ॥२१॥
वि द्यामे॑षि॒ रज॑स्पृ॒थ्वह॒र्मिमा॑नो अ॒क्तुभिः॑ । पश्य॒न् जन्मा॑नि सूर्य॑ ।२२।
स॒प्त त्वा॑ ह॒रितो॒ रथे॒ वह॑न्ति देव सूर्य । शो॒चिष्के॑शं विचक्ष॒णम् ॥२३॥
अयु॑क्त स॒प्त शु॒न्ध्युव॒ः सूरो॒ रथ॑स्य न॒प्त्य᳚ः । ताभि॑र्याति॒ स्वयु॑क्तिभिः
॥ २४ ॥
रोहि॑तो॒ दिव॒मारु॑ह॒त् तप॑सा तप॒स्वी । स योनि॒मैति॒ स उ॑ जायते॒
पुन॒ः स दे॒वाना॒मधि॑पतिर्ब॑भूव ॥ २५ ॥
यो वि॒श्वच॑र्षणिरु॒त वि॒श्वतो॑मुखो॒ यो वि॒श्वत॑स्पाणिरु॒त वि॒श्वत॑स्पृथः ।
सं बा॒हुभ्या॒ं भर॑ति॒ सं पत॑त्रै॒र्द्यावा॑पृथि॒वी ज॒नय॑न् दे॒व एक॑ः ॥ २६ ॥
एक॑पा॒द् द्विप॑दो॒ भूयो॒ वि॒ च॑क्रमे॒ द्विपा॒त् त्रिपा॑दम॒भ्ये᳚ति प॒श्चात् ।
द्विपा॑द्ध॒ षट्प॑दो॒ भूयो॒ वि च॑क्रमे॒ त एक॑पदस्त॒न्वँ॑१॒ समा॑सते ॥ २७ ॥
अत॑न्द्रो या॒स्यन् ह॒रितो॒ यदास्था॒द् द्वे रू॒पे कृ॑णुते॒ रोच॑मानः ।
के॒तुमा॑नु॒द्यन्त्सह॑मानो॒ रजां॑सि॒ विश्वा॑ आदित्य प्र॒वतो॒ वि भा॑सि ।२८।
बण्म॒हाँ अ॑सि सूर्य॒ बडा॑दित्य म॒हाँ अ॑सि । म॒हांस्ते॑ मह॒तो म॑हि॒मा
त्वमा॑दित्य म॒हाँ अ॑सि ॥ २९ ॥ (अथर्व २०।५८।३
रोच॑से दि॒वि रोच॑से अ॒न्तरि॑क्षे॒ पत॑ङ्ग पृथि॒व्यां रोच॑से॒ रोच॑से
अ॒प्स्व॑१॒न्तः । उ॒भा स॑मु॒द्रौ रुच्या॒ व्या᳚पिथ दे॒वो दे॑वासि महि॒षः
स्व॒र्जित् ॥ ३० ॥ (९)
अ॒र्वाङ् प॒रस्ता॒त् प्रय॑तो व्य॒ध्व आ॒शुर्वि॑प॒श्चित् प॒तय॑न् पत॒ङ्गः । विष्णु॒र्विचि॑त्तः
शव॑साधि॒तिष्ठ॒न् प्र के॒तुना॑ सहते॒ विश्व॒मेज॑त् ॥ ३१ ॥

चि॒त्रश्चि॑कि॒त्वान् म॑हि॒ष सु॑प॒र्ण॑ आ॑रो॒चय॒न् रोद॑सी अ॒न्तरि॑क्षम् ।
अ॒हो॒रा॒त्रे परि॒ सूर्यँ॒ वसा॑ने॒ प्रास्य॒ विश्वा॑ तिरतो वी॒र्या॑णि ॥ ३२ ॥
ति॒ग्मो वि॒भ्राज॑न् त॒न्वं१॒ शिशा॑नोऽरंग॒मास॑ः प्र॒व॒तो ररा॑णः ।
ज्योति॑ष्मान् प॒क्षी म॑हि॒षो व॑यो॒धा विश्वा॒ आस्था॑त् प्र॒दिश॒ः कल्प॑मानः
॥ ३३ ॥
चि॒त्रं दे॒वानां॑ के॒तुरनी॑कं॒ ज्योति॑ष्मान् प्र॒दिश॒ः सूर्य॑ उ॒द्यन् । दि॒वा॒क॒रोऽति॑ द्यु॒म्नैस्तमां॑सि॒ विश्वा॑तारीद् दुरि॒तानि॑ शु॒क्रः ॥ ३४ ॥
चि॒त्रं दे॒वाना॒मुद॑गा॒दनी॑कं॒ चक्षु॑र्मि॒त्रस्य॒ वरु॑णस्या॒ग्नेः । आप्रा॒द् द्यावा॑पृथि॒वी अ॒न्तरि॑क्षं॒ सूर्य॑ आ॒त्मा जग॑तस्त॒स्थुष॑श्च ॥ ३५ ॥
उ॒च्चा पत॑न्तमरु॒णं सु॑प॒र्णं मध्ये॑ दि॒वस्त॒रणिं॒ भ्राज॑मानम् । पश्या॑म त्वा सवि॒तारं॒ यमा॒हुरज॑स्रं॒ ज्योति॒र्यदवि॑न्दु॒दत्त्रिः ॥ ३६ ॥
दि॒वस्पृ॒ष्ठे धाव॑मानं सुप॒र्णमदि॑त्याः पु॒त्रं ना॒थका॑म॒ उप॑ यामि भी॒तः । स नः॑ सूर्य॒ प्र ति॑र दी॒र्घमायु॒र्मा रि॑षाम सुम॒तौ ते॑ स्याम ॥ ३७ ॥
स॒ह॒स्रा॒ह्ण्यं वि॑यतावस्य प॒क्षौ हरे॑र्हं॒सस्य॒ पत॑तः स्व॒र्गम् । स दे॒वान्त्सर्वा॒नुर॑स्युप॒दद्य॑ सं॒पश्य॑न् याति॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑ ॥ ३८ ॥ (अ० १०।८।१८)
रोहि॑तः का॒लो अ॑भव॒द् रोहि॒तोऽग्रे॑ प्र॒जाप॑तिः । रोहि॑तो य॒ज्ञानां॒ मुखं॒ रोहि॑त॒ः स्व॑१॒राभ॑रत् ॥ ३९ ॥
रोहि॑तो लो॒को अ॑भव॒द् रोहि॒तोऽत्य॑तप॒द् दिव॑म् । रोहि॑तो र॒श्मिभि॒र्भूमि॑ँ समु॒द्रमनु॒ सं च॑रत् ॥ ४० ॥ (१०)
सर्वा॒ दिश॒ः सम॑चर॒द् रोहि॒तोऽधि॑पतिर्दि॒वः । दिवं॑ समु॒द्राद् भूमि॒ँ सर्वं॑ भू॒तं वि र॑क्षति ॥ ४१ ॥

आ॒रोह॑ञ्छु॒क्रो बृ॑ह॒तीरत॑न्द्रो॒ द्वे रू॒पे कृ॑णुते॒ रोच॑मानः । चि॒त्रश्चि॑कि॒त्वान्
म॑हि॒षो वात॑माया॒ याव॑तो लो॒कान॒भि यद् वि॒भाति॑ ॥ ४२ ॥
अ॒भ्य॑१॒न्यदे॑ति॒ पर्य॒न्यद॑स्यते॒ऽहोरा॒त्राभ्यां॑ महि॒षः कल्प॑मानः । सूर्यं॑ व॒यं
रज॑सि क्षि॒यन्तं॑ गा॒तु॒विदं॑ हवामहे॒ नाध॑मानाः ॥ ४३ ॥
पृ॒थि॒वी॒प्रो म॑हि॒षो नाध॑मानस्य गा॒तुरद॑ब्धचक्षुः॒ परि॒ विश्वं॑ ब॒भूव॑ ।
विश्वं॑ सं॒पश्य॑न्त्सुवि॒दत्रो॒ यज॑त्र इ॒दं शृ॑णोतु॒ यद॒हं ब्रवी॑मि ॥ ४४ ॥
पर्य॑स्य महि॒मा पृ॑थि॒वीं स॑मु॒द्रं ज्योति॑षा वि॒भ्राज॒न् परि॒ द्याम॒न्तरि॑क्षम् ।
सर्वं॑ सं॒पश्य॑न्त्सुवि॒दत्रो॒ यज॑त्र इ॒दं शृ॑णोतु॒ यद॒हं ब्रवी॑मि ॥ ४५ ॥
अबो॑ध्य॒ग्निः स॒मिधा॒ जना॑नां॒ प्रति॑ धे॒नुमि॑वाय॒तीमु॒षास॑म् । य॒ह्वा इ॑व
प्र व॒यामु॒ज्जिहा॑ना॒ः प्र भा॒नवः॑ सिस्रते॒ नाक॒मच्छ॑ ॥४६॥ (११) [२।१]

—:o:—

सूक्त ३

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम्, रोहितः; आदित्यः ॥ छन्दः—१, १६, १८, २१ अष्टपदाऽऽकृतिः; २ षट्पदा भुरिगष्टिः; ३ षट्पदाऽष्टिः; ४ षट्पदाऽतिशाक्वरगर्भा धृतिः; ५, ६ सप्तपदा शाक्वरातिशाक्वरगर्भा प्रकृतिः; ७ सप्तपदाऽनुष्टुब्गर्भाऽतिधृतिः; ८, २०, २२ षट्पदाऽत्यष्टिः; ९—१२ सप्तपदा भुरिगतिधृतिः; १३, १४, २३, २५ अष्टपदा विकृतिः, १५ सप्तपदा निचृदतिधृतिः; १७, २४ सप्तपदा कृतिः; १९ अष्टपदा भुरिगाकृतिः २६ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २६ ॥

य इ॒मे द्यावा॑पृथि॒वी ज॒जान॒ यो द्रा॒पिं कृ॒त्वा भुव॑नानि॒ वस्ते॑ । यस्मि॑न्
क्षि॒यन्ति॑ प्र॒दिशः॒ षडु॒र्वीर्याः॑ प॑त॒ङ्गो अनु॑ वि॒चाक॑शीति॒ तस्य॑ दे॒वस्य॑ ।
क्रु॒द्धस्यै॒तदा॒गो य ए॒वं वि॒द्वांसं॑ ब्राह्म॒णं जि॒नाति॑ । उद् वे॑पय रोहित॒
प्र क्षि॑णीहि ब्रह्म॒ज्यस्य॒ प्रति॑ मुञ्च॒ पाशा॑न् ॥ १ ॥

यस्मा॒द् वाता॑ ऋतु॒था पव॑न्ते॒ यस्मा॑त् समु॒द्रा अधि॑ वि॒क्षर॑न्ति॒ तस्य॑
दे॒वस्य॑ । क्रु॒द्धस्यै॒तदागो॒ य ए॒वं वि॒द्वांसँ ब्राह्म॒णं जि॒नाति॑ ॥ उद् वे॑पय
रोहि॒त प्र क्षि॒णीहि ब्रह्म॒ज्यस्य॒ प्रति॑ मु॒ञ्च॒ पाशा॑न् ॥ २ ॥

यो मा॒रय॑ति प्रा॒णय॑ति॒ यस्मा॑त् प्रा॒णन्ति॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॒ । तस्य॑
दे॒वस्य॑ क्रु॒द्धस्यै॒तदागो॒ य ए॒वं वि॒द्वांसँ ब्राह्म॒णं जि॒नाति॑ ॥ उद् वे॑पय
रोहि॒त प्र क्षि॒णीहि ब्रह्म॒ज्यस्य॒ प्रति॑ मु॒ञ्च॒ पाशा॑न् ॥ ३ ॥

यः प्रा॒णेन॒ द्यावा॑पृथि॒वी त॒र्पय॑त्यपा॒नेन॑ समु॒द्रस्य॑ ज॒ठरं॒ यः पिप॑र्ति॒ ।
तस्य॑ दे॒वस्य॑ क्रु॒द्धस्यै॒तदागो॒ य ए॒वं वि॒द्वांसँ ब्राह्म॒णं जि॒नाति॑ ॥ उद्
वे॑पय रोहि॒त प्र क्षि॒णीहि ब्रह्म॒ज्यस्य॒ प्रति॑ मु॒ञ्च॒ पाशा॑न् ॥ ४ ॥

यस्मि॑न् वि॒राट् प॑रमे॒ष्ठी प्र॒जाप॑तिर॒ग्निर्वै॑श्वान॒रः स॒ह प॒ङ्क्त्या श्रि॒तः ।
यः पर॑स्य प्रा॒णं प॑र॒मस्य॒ तेज॑ आद॒दे ॥ तस्य॑ ··· मु॒ञ्च॒ पाशा॑न् ॥५॥

यस्मि॒न् षडु॒र्वीः पञ्च॒ दिशो॒ अधि॑ श्रि॒ताश्चत॑स्र॒ आपो॑ य॒ज्ञस्य॒
त्रयो॒ऽक्षराः॑ । यो अ॑न्त॒रा रोद॑सी क्रु॒द्धश्चक्षु॒षैक्ष॑त ॥ तस्य॑ ····· मु॒ञ्च॒
पाशा॑न् ॥ ६ ॥

यो अ॑न्ना॒दो अन्न॑पतिर्ब॒भूव॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॑रु॒त यः । भू॒तो भ॑वि॒ष्यद्
भुव॑नस्य॒ यस्पति॒ः ॥ तस्य॑ ··· मु॒ञ्च॒ पाशा॑न् ॥ ७ ॥

अ॒हो॒रा॒त्रैर्विमि॑तं त्रिं॒शद॑ङ्गं त्रयो॒द॒शं मासं॒ यो नि॒र्मिमी॑ते॒ । तस्य॑ ···
मु॒ञ्च॒ पाशा॑न् ॥ ८ ॥

कृ॒ष्णं नि॒यानं॒ हर॑यः सुप॒र्णा अ॒पो वसा॑ना॒ दिव॒मुत् प॑तन्ति । त आव॑वृ॒त्रन्त्सद॑नादृ॒तस्य॒ । तस्य॑ ··· मु॒ञ्च॒ पाशा॑न् ॥ ९ ॥

यत् ते चन्द्रं कश्यप रोचनावद् यत् संहितं पुष्कलं चित्रभानु।
यस्मिन्त्सूर्या आर्पिताः सप्त साकम्। तस्य···पाशान् ॥१०॥ (१२)
बृहदेनमनु वस्ते पुरस्ताद् रथन्तरं प्रति गृह्णाति पश्चात्। ज्योति-
र्वसाने सदमप्रमादम्। तस्य···मुञ्च पाशान् ॥ ११ ॥
बृहदन्यतः पक्ष आसीद् रथन्तरमन्यतः सबले सध्रीची। यद् रोहितम-
जनयन्त देवाः। तस्य···मुञ्च पाशान् ॥ १२ ॥
स वरुणः सायमग्निर्भवति स मित्रो भवति प्रातरुद्यन्। स सविता
भूत्वान्तरिक्षेण याति स इन्द्रो भूत्वा तपति मध्यतो दिवम्। तस्य···
मुञ्च पाशान् ॥ १३ ॥
सहस्राह्ण्यं वियतावस्य पक्षौ हरेर्हंसस्य पततः स्वर्गम्। स देवान्त्सर्वा-
नुरस्युपदद्य संपश्यन् याति भुवनानि विश्वा। तस्य······मुञ्च
पाशान् ॥ १४ ॥
अयं स देवो अप्स्व१न्तः सहस्रमूलः पुरुशाको अत्त्रिः। य इदं विश्वं
भुवनं जजान। तस्य···मुञ्च पाशान् ॥ १५ ॥
शुक्रं वहन्ति हरयो रघुष्यदो देवं दिवि वर्चसा भ्राजमानम्। यस्योर्ध्वा
दिवं तन्व१स्तपन्त्यर्वाङ् सुवर्णैः पटरैर्वि भाति। तस्य······मुञ्च
पाशान् ॥ १६ ॥
येनादित्यान् हरितः संवहन्ति येन यज्ञेन बहवो यन्ति प्रजानन्तः।
यदेकं ज्योतिर्बहुधा विभाति। तस्य···मुञ्च पाशान् ॥ १७ ॥

सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा। त्रिनाभि
चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनाधि तस्थुः। तस्य·····मुञ्च
पाशान् ॥ १८ ॥

अष्टधा युक्तो वहति वह्निरुग्रः पिता देवानां जनिता मतीनाम्।
ऋतस्य तन्तुं मनसा मिमानः सर्वा दिशः पवते मातरिश्वा। तस्य···
मुञ्च पाशान् ॥ १९ ॥

सम्यञ्चं तन्तुं प्रदिशोऽनु सर्वा अन्तर्गायत्र्याममृतस्य गर्भे। तस्य···
मुञ्च पाशान् ॥ २० ॥ (१३)

निम्रुचस्तिस्रो व्युषो ह तिस्रस्त्रीणि रजांसि दिवो अङ्ग तिस्रः। विद्मा
ते अग्ने त्रेधा जनित्रं त्रेधा देवानां जनिमानि विद्म। तस्य···मुञ्च
पाशान् ॥ २१ ॥

वि य और्णोत् पृथिवीं जायमान आ समुद्रमदधादन्तरिक्षे। तस्य···
मुञ्च पाशान् ॥ २२ ॥

त्वमग्ने क्रतुभिः केतुभिर्हितोऽर्कः समिद्ध उदरोचथा दिवि। किमभ्या-
र्चन्मरुतः पृश्निमातरो यद् रोहितमजनयन्त देवाः। तस्य···मुञ्च
पाशान् ॥ ॥२३ ॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। योऽस्येशे
द्विपदो यश्चतुष्पदः। तस्य···मुञ्च पाशान् ॥ २४ ॥

एकपाद् द्विपदो भूयो वि चक्रमे द्विपात त्रिपादमभ्येति पश्चात्।
चतुष्पाच्चक्रे द्विपदामभिस्वरे संपश्यन् पङ्क्तिमुपतिष्ठमानः। तस्य···
मुञ्च पाशान् ॥ २५ ॥

कृ॒ष्णाया॑ः पु॒त्रो अर्जु॑नो॒ रात्र्या॑ व॒त्सोऽजायत । स ह॒ द्याम॒धि॑ रोहति॒
रुहो॑ रुरोह॒ रोहि॑तः ॥ २६ ॥ (१४) [३।१]

—:०:—

सूक्त ४ (पर्याय १)

ऋषि:—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम् ॥ छन्द:—१—११ प्राजापत्यानुष्टुप् (३—७ रश्मिभिरित्यस्योक्तमेव); १२ विराड् गायत्री; १३ आसुर्युष्णिक् ॥ मन्त्र १३ ।

स ए॑ति सवि॒ता स्वऽदि॒॑वस्पृ॒ष्ठेऽव॒चाक॑शत् ॥ १ ॥
र॒श्मिभि॒र्नभ॒ आभृ॑तं महे॒न्द्र ए॒त्यावृ॑तः ॥ २ ॥
स धा॒ता स वि॒धर्ता॑ स वा॒युर्नभ॒ उच्छ्रि॑तम् । र॒श्मिभि॒र्नभ॒ आभृ॑तं
महे॒न्द्र ए॒त्यावृ॑तः ॥ ३ ॥
सोऽर्य॒मा स वरु॑ण॒ः स रु॒द्रः स म॑हादे॒वः । र॒श्मिभि॒र्नभ॒ आभृ॑तं महे॒न्द्र
ए॒त्यावृ॑तः ॥ ४ ॥
सो अ॒ग्निः स उ॒ सूर्य॒ः स उ॑ ए॒व म॑हाय॒मः । र॒श्मिभि॒र्नभ॒० · · ॥५॥
तं व॒त्सा उप॑ तिष्ठ॒न्त्येक॑शीर्षाणो यु॒ता दश॑ । र॒श्मिभि॒र्नभ॒० · · ॥६॥
प॒श्चात् प्राञ्च॒ आ त॑न्वन्ति॒ यदु॒देति॒ वि भा॑सति । र॒श्मिभि॒र्नभ॒० · · ।७।
तस्यै॒ष मारु॑तो ग॒णः स ए॑ति शि॒क्याकृ॑तः ॥ ८ ॥
र॒श्मिभि॒र्नभ॒ आभृ॑तं महे॒न्द्र ए॒त्यावृ॑तः ॥ ९ ॥
तस्ये॒मे नव॒ कोशा॑ विष्ट॒म्भा न॑व॒धा हि॒ताः ॥ १० ॥
स प्र॒जाभ्यो॒ वि प॑श्यति॒ यच्च॑ प्रा॒णति॒ यच्च॒ न ॥ ११ ॥
तमि॒दं निग॑तं॒ सह॒ः स ए॒ष एक॑ एकवृ॒देक॑ ए॒व ॥ १२ ॥

ए॒ते अ॑स्मिन् दे॒वा ए॑क॒वृतो॑ भवन्ति ॥ १३ ॥(१५)

—:०:—

सूक्त ४ (पर्याय २)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम् । छन्दः—१४ भुरिक् साम्नी त्रिष्टुप्; १५ आसुरी पङ्क्तिः; १६; १९ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; १७, १८ आसुरी गायत्री; २० विराड् गायत्री; २१ आसुर्युष्णिक् (१६—२१, य एतमित्यस्योक्तमेव) ॥

की॒र्ति॑श्च॒ यश॒श्चाम्भ॑श्च॒ नभ॑श्च ब्राह्मणवर्च॒सं चान्नं॑ चा॒न्नाद्यं॑ च ॥१४॥(१)
य ए॒तं दे॒वमे॑क॒वृतं॒ वेद॑ ॥ १५ ॥ (२)
न द्वि॒तीयो॒ न तृ॒तीय॑श्चतु॒र्थो नाप्यु॑च्यते । य ए॒तं दे॒वमे॑क॒०···।१६।(३)
न प॑ञ्च॒मो न ष॒ष्ठः स॑प्तमो नाप्यु॑च्यते । य ए॒तं दे॒वमे॑क॒०···॥१७॥(४)
नाष्ट॒मो न न॑व॒मो द॑श॒मो नाप्यु॑च्यते । य ए॒तं०···वेद॑ ॥ १८ ॥ (५)
स सर्व॑स्मै॒ वि प॑श्यति॒ यच्च॑ प्रा॒णति॒ यच्च॒ न । य ए॒तं०···वेद॑ ।१९। (६)
तमि॒दं निग॑तं॒ सहः॒ स ए॒ष एक॑ एक॒वृदेक॑ ए॒व । य ए॒तं०···
वेद॑ ॥२०॥ (७)
सर्वे॑ अस्मिन् दे॒वा ए॑क॒वृतो॑ भवन्ति । य ए॒तं दे॒वमे॑क॒वृतं॒
वेद॑ ॥२१॥ (१६) (८)

सूक्त ४ (पर्याय ३)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम् ॥ छन्दः—२२ भुरिक् प्राजापत्या त्रिष्टुप् (य एतमित्यस्योक्तमेव); २३ आर्ची गायत्री; २४ आसुरी पङ्क्तिः; २५ एकपदाऽऽसुरी गायत्री; २६ आर्ची गायत्री; २७, २८ प्राजापत्यानुष्टुप् ॥

ब्रह्म॑ च॒ तप॑श्च की॒र्तिश्च॒ यश॒श्चाम्भ॑श्च॒ नभ॑श्च ब्राह्मणवर्च॒सं चान्नं॑
चा॒न्नाद्यं॑ च । य ए॒तं दे॒वमे॑क॒वृतं॒ वेद॑ ॥ २२ ॥ (१)

भू॒तं च॒ भव्यं᳚ च श्र॒द्धा च॒ रुचि॑श्च स्व॒र्गश्च॑ स्व॒धा च॑ ॥ २३ ॥ (२)
य ए॒तं दे॒वमे᳚क॒वृतं॒ वेद॑ ॥ २४ ॥ (३)
स ए॒व मृ॒त्युः सो॒३॑मृतं॒ सो॒३॑भ्वं᳚१॒ स रक्षः॑ ॥ २५ ॥ [४]
स रु॒द्रो व॑सु॒वनि᳚र्वसु॒देये᳚ नमोवा॒के व॑षट्का॒रोऽनु॒ संहि॑तः ॥ २६ ॥ [५]
तस्ये॒मे सर्वे᳚ या॒तव॒ उप॑ प्र॒शिष॑मासते ॥ २७ ॥ [६]
तस्या॒मू सर्वा॒ नक्ष॑त्रा॒ वशे᳚ च॒न्द्रम॑सा स॒ह ॥ २८ ॥ (१७) [७]

—:०:—

सूक्त ४ (पर्याय ४)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम् ॥ छन्दः—२९, ३३, ३९, ४०, ४५ आसुरी गायत्री; ३०, ३२, ३५, ३६, ४२ प्राजापत्यानुष्टुप्; ३१ विराड् गायत्री; ३४, ३७, ३८ साम्न्युष्णिक्; ४१ साम्नी बृहती; ४३ आर्षी गायत्री; ४४ साम्न्यनुष्टुप् ॥

स वा अह्नो॑ऽजायत॒ तस्मा॒दह॑रजायत ॥ २९ ॥ [१]
स वै रात्र्या॑ अजायत॒ तस्मा॒द् रात्रि॑रजायत ॥ ३० ॥ [२]
स वा अ॒न्तरि॑क्षादजायत॒ तस्मा॑द॒न्तरि॑क्षमजायत ॥ ३१ ॥ [३]
स वै वा॒योर॑जायत॒ तस्मा॑द् वा॒युर॑जायत ॥ ३२ ॥ [४]
स वै दि॒वो॑ऽजायत॒ तस्मा॒द् द्यौरध्य॑जायत ॥ ३३ ॥ [५]
स वै दि॒ग्भ्यो॑ऽजायत॒ तस्मा॒द् दिशो॑ऽजायन्त ॥ ३४ ॥ [६]
स वै भूमे᳚रजायत॒ तस्मा॒द् भूमि॑रजायत ॥ ३५ ॥ [७]
स वा अ॒ग्नेर॑जायत॒ तस्मा॑द॒ग्निर॑जायत ॥ ३६ ॥ [८]
स वा अ॒द्भ्यो॑ऽजायत॒ तस्मा॒दापो॑ऽजायन्त ॥ ३७ ॥ [९]
स वा ऋ॒ग्भ्यो॑ऽजायत॒ तस्मा॒दृचो॑ऽजायन्त ॥ ३८ ॥ [१०]

स वै य॒ज्ञाद॑जायत॒ तस्मा॑द् य॒ज्ञोऽजायत ॥ ३९ ॥ [११]
स य॒ज्ञस्तस्य॑ य॒ज्ञः स य॒ज्ञस्य॒ शिर॑स्कृ॒तम् ॥ ४० ॥ [१२]
स स्त॑नयति॒ स वि द्यो॑तते॒ स उ॒ अश्मा॑नमस्यति ॥ ४१ ॥ [१३]
पा॒पाय॑ वा भ॒द्राय॑ वा॒ पुरु॑षा॒यासु॑राय वा ॥ ४२ ॥ [१४]
यद्वा॑ कृ॒णोष्योष॑धी॒र्यद्वा॑ वर्ष॑सि भ॒द्रया॒ यद्वा॑ ज॒न्यमवी॑वृधः ।४३। [१५]
तावाँ॑स्ते मघवन् महि॒मोपो॑ ते त॒न्वः॑ श॒तम् ॥ ४४ ॥ [१६]
उपो॑ ते॒ बध्वे॒ बद्धा॑नि॒ यदि॒ वासि॒ न्य॑र्बुदम् ॥ ४५ ॥ (१८) [१७]

—:०:—

सूक्त ४ (पर्याय ५)

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अध्यात्मम् ॥ छन्दः—४६ आसुरी गायत्री; ४७ यवमध्या गायत्री; ४८ साम्न्युष्णिक्; ४९ निचृत्साम्नी बृहती; ५० प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ५१ विराड् गायत्री (५०, ५१ नमस्ते इत्यस्यान्नाद्येनेत्यस्य चोक्तमेव) ।

भू॒यानिन्द्रो॑ नमु॒राद् भूया॑निन्द्रासि मृ॒त्युभ्यः॑ ॥ ४६ ॥ [१]
भू॒याना॑त्या॒ः शच्या॒ः पति॒स्त्वमि॑न्द्रासि वि॒भूः प्र॒भूरि॑ति॒ त्वोपा॑स्महे
व॒यम् ॥ ४७ ॥ [२]
नम॑स्ते अस्तु पश्यत॒ पश्य॑ मा पश्यत ॥ ४८ ॥ (३)
अ॒न्नाद्ये॑न॒ यश॑सा॒ तेज॑सा ब्राह्मणवर्च॒सेन॑ ॥ ४९ ॥ (४)
अम्भो॒ अमो॒ महः॒ सह॒ इति॒ त्वोपा॑स्महे व॒यम् । नम॑स्ते अस्तु पश्यत॒
पश्य॑ मा पश्यत । अ॒न्नाद्ये॑न॒०···ब्राह्मणवर्च॒सेन॑ ॥ ५० ॥ (५)
अम्भो॑ अरु॒णं र॑ज॒तं रजः॒ सह॒ इति॒ त्वोपा॑स्महे व॒यम् । नम॑स्ते अस्तु०
अ॒न्नाद्ये॑न॒०···ब्राह्मणवर्च॒सेन॑ ॥ ५१ ॥ (६) (१९)

सूक्त ४ (पर्याय ६)

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता—अध्यात्मम् ।। छन्दः—५२, ५३ प्राजापत्याऽनुष्टुप् (नमस्ते इत्यस्यान्नाद्येनेत्यस्य चोक्तमेव); ५४ द्विपदाऽऽर्षी गायत्री; ५५ साम्न्युष्णिक्; ५६ निचृत्साम्नी बृहती ।। मन्त्र ५ ।

उ॒रुः पृ॒थुः सु॒भू॒र्भुव॒ इति॒ त्वोपा॑स्महे व॒यम् । नम॑स्ते अस्तु पश्यत॒
पश्य॑ मा पश्यत०···अ॒न्नाद्ये॑न॒···ब्राह्मणवर्च॒सेन॑ ॥ ५२ ॥ (१)
प्रथो॒ वरो॒ व्यचो॒ लो॒क इति॒ त्वोपा॑स्महे व॒यम् । नम॑स्ते० अ॒न्नाद्ये॑न॒···
ब्राह्मणवर्च॒सेन॑ ॥ ५३ ॥ (२)
भव॑द्वसुरि॒दद्व॑सुः सं॒यद्व॑सुरा॒यद्व॑सुरिति॒ त्वोपा॑स्महे व॒यम् ॥ ५४ ॥ (३)
नम॑स्ते अस्तु पश्यत॒ पश्य॑ मा पश्यत ॥ ५५ ॥ (४)
अ॒न्नाद्ये॑न॒ यश॑सा॒ तेज॑सा ब्राह्मणवर्च॒सेन॑ ॥५६॥ (५) (२०) [१।६]

।। इति त्रयोदशं काण्डम् समाप्तम् ।।

—:०:—

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ चतुर्दशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—सावित्री सूर्या ॥ देवता—आत्मा; १—५ सोमः; ६—२२ विवाहः; २३ सोमार्कौ; २४ चन्द्रमाः; २५, २७ वधूवासःसंस्पर्शमोचनम्; २६, २८—६४ विवाहमन्त्राशिषः ॥ छन्दः—१—१३, १६—१८, २२, २५—२८, ३०, ३५, ३६, ४१—४४, ५१, ५२, ६२, ६३ अनुष्टुप्; १४ बिराट् प्रस्तारपङ्क्तिः; १५ आस्तारपङ्क्तिः; १९, २०, २४, ३२; ३३, ३७, ३९, ४०, ४७, ४९, ५०, ५३, ५६—५९, ६१ त्रिष्टुप्; २१, ४६, ६४ जगती; २३ ३१, ४५, ६० परानुष्टुप् (?) त्रिष्टुप्; २९, ५५, पुरस्ताद् बृहती; ३४ प्रस्तारपङ्क्तिः; ३८ पुरोबृहती त्रिपदा परोष्णिक्; ४८ पथ्यापङ्क्तिः ५४ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६४।

स॒त्येनोत्त॑भिता॒ भूमि॒ः सूर्ये॒णोत्त॑भिता॒ द्यौः। ऋ॒तेना॑दि॒त्यास्ति॑ष्ठन्ति
दि॒वि सोमो॒ अधि॑ श्रि॒तः ॥ १ ॥ (ऋ० १० । ८५ । १)
सोमे॑नादि॒त्या ब॒लिन॒ः सोमे॑न पृथि॒वी म॒ही। अथो॒ नक्ष॑त्राणामे॒षा-
मु॒पस्थे॒ सोम॒ आहि॑तः ॥ २ ॥ (ऋ० १०।८५।२)
सोमं॑ मन्यते पपि॒वान् यत् सं॑पि॒ंषन्त्योष॑धिम्। सोम॒ं यं ब्र॒ह्माणो॑ वि॒दुर्न
तस्या॑श्नाति॒ पार्थि॑वः ॥ ३ ॥ (ऋ० १०।८५।३)
यत् त्वा॑ सोम प्र॒पिब॑न्ति॒ तत॒ आ प्या॑यसे॒ पुन॑ः। वा॒युः सोम॑स्य
रक्षि॒ता समा॑ना॒ं मास॒ आकृ॑तिः ॥ ४ ॥ (ऋ० १०।८५।५)

आ॒च्छद्वि॑धानै॒र्गु॑पि॒तो बार्ह॑तैः सोम रक्षि॒तः। ग्रा॒व्णामिच्छृ॒ण्व॑न्
ति॑ष्ठसि॒ न ते॑ अश्नाति॒ पार्थि॑वः ॥ ५ ॥ (ऋ० १०।८५।४)

चि॒त्ति॑रा उप॒बर्ह॑णं॒ चक्षु॑रा अ॒भ्यञ्ज॑नम्। द्यौर्भू॑मि॒ः कोश॑ आसी॒द्
यदया॑त् सू॒र्या पति॑म् ॥ ६ ॥ (ऋ० १०।८५।७)

रैभ्या॑सीदनु॒देयी॑ नाराशं॒सी न्योच॑नी। सू॒र्याया॑ भ॒द्रमिद् वासो॒ गाथ॑-
यैति॒ परि॑ष्कृता ॥ ७ ॥ (ऋ० १०।८५।६)

स्तोमा॑ आसन् प्रति॒धय॑ः कुरी॑रं॒ छन्द॑ ओप॒शः। सू॒र्याया॑ अ॒श्विना॑
व॒राग्निरा॑सीत् पुरोग॒वः ॥ ८ ॥ (ऋ० १०।८५।८)

सोमो॑ वधू॒युर॑भवद॒श्विना॑स्तामु॒भा व॒रा। सू॒र्यां यत् पत्ये॒ शंस॑न्तीं॒
मन॑सा सवि॒ताद॑दात् ॥ ९ ॥ (ऋ० १०।८५।९)

मनो॑ अ॒स्या अन॑ आसी॒द् द्यौरा॑सीदु॒त च्छ॒दिः। शु॒क्राव॑न॒ड्वाहा॑वास्तां॒
यदया॑त् सू॒र्या पति॑म् ॥ १० ॥ (१) (ऋ० १०।८५।१०)

ऋक्सा॒माभ्या॑म॒भिहि॑तौ॒ गावौ॑ ते साम॒नावै॑ताम्। श्रोत्रे॑ ते च॒क्रे
आ॑स्तां दि॒वि पन्था॑श्चराच॒रः ॥ ११ ॥ (ऋ० १०।८५।११)

शुची॑ ते॑ च॒क्रे या॒त्या व्या॒नो अक्ष॒ आह॑तः। अनो॑ मन॒स्मयं॑ सू॒र्या-
रो॑हत् प्रय॒ती पति॑म् ॥ १२ ॥ (ऋ० १०।८५।१२)

सू॒र्याया॑ वह॒तुः प्रागा॑त् सवि॒ता यम॒वासृ॑जत्। म॒घासु॑ ह॒न्यन्ते॒ गाव॒ः
फल्गु॑नीषु॒ व्यु॑ह्यते ॥ १३ ॥ (ऋ० १०।८५।१३)

यद॑श्विना पृ॒च्छमा॑ना॒वया॑तं॒ त्रिच॒क्रेण॑ वह॒तुं सू॒र्याया॑ः। क्वैकं॑ च॒क्रं
वा॑मासी॒त् क्व॑ दे॒ष्ट्राय॑ तस्थथुः ॥ १४ ॥ (ऋ० १०।८५।१४)

यदया॑तं शुभस्पती वरे॒यं सू॒र्या॑मुप॑। विश्वे॑ दे॒वा अनु॒ तद् वा॑मजान॒न्
पत्रः पि॒तर॑मवृणीत पू॒षा ॥ १५ ॥ (ऋ० १०।८५।१५)

द्वे त॑ च॒क्रे सूर्ये॑ ब्र॒ह्माण॑ ऋतु॒था वि॑दुः। अथैकं॑ च॒क्रं यद् गुहा॒ तद॑द्धात॒य
इद् वि॒दुः ॥ १६ ॥ (ऋ० १०।८५।१६)

अ॒र्य॒मणं॑ यजामहे सुब॒न्धुं प॑ति॒वेद॑नम्। उ॒र्वा॒रु॒कमि॑व॒ बन्ध॑ना॒त् प्रेतो
मु॑ञ्चामि॒ नामुतः॑ ॥ १७ ॥ (ऋ० १०।५९।१२)

प्रेतो मु॑ञ्चामि॒ नामुतः॑ सुब॒द्धाम॒मुत॑स्करम्। यथे॒यमि॑न्द्र मीढ्वः
सुपु॒त्रा सु॒भगास॑ति ॥ १८ ॥ (ऋ० १०।८५।२५)

प्र त्वा॑ मुञ्चामि॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॒द् येन॒ त्वाब॑ध्नात् सवि॒ता सु॒शेवाः॑।
ऋ॒तस्य॒ योनौ॑ सुकृ॒तस्य॑ लो॒के स्यो॒नं ते॑ अस्तु स॒हसं॑भलायै ॥ १९ ॥
(ऋ० १०।८५।२४)

भग॑स्त्वे॒तो न॑यतु हस्त॒गृह्या॒श्विना॑ त्वा॒ प्र व॑हतां॒ रथे॑न। गृ॒हान् ग॑च्छ
गृ॒हप॑त्नी॒ यथासो॑ व॒शिनी॒ त्वं वि॒दथ॒मा व॑दासि ॥ २० ॥ (२)
(ऋ० १०।८५।२६)

इ॒ह प्रि॒यं प्र॒जायै॑ ते॒ समृ॑ध्यताम॒स्मिन् गृ॒हे गार्ह॑पत्याय जागृहि।
ए॒ना पत्या॑ त॒न्वं॒१ सं स्पृ॑श॒स्वाथ॒ जिर्वि॑र्वि॒दथ॒मा व॑दासि ॥ २१ ॥
(ऋ० १०।८५।२७)

इ॒हैव स्तं॒ मा वि यौ॑ष्टं॒ विश्व॒मायु॒र्व्य॑[श्नुतम्। क्रीड॑न्तौ पु॒त्रैर्नप्तृ॑भि॒र्मोद॑मानौ स्वस्त॒कौ ॥ २२ ॥ (ऋ० १०।८५।४२)

पू॒र्वा॒प॒रं च॑रतो मा॒यये॒तौ शिशू॒ क्रीड॑न्तौ॒ परि॑ यातोऽर्ण॒वम्। विश्वा॒न्यो
भुव॑ना वि॒चष्ट॑ ऋ॒तूँर॒न्यो वि॒दध॑ज्जायसे॒ नवः॑ ।२३। (ऋ० १०।८५।१८)

नवो॑नवो भवसि॒ जाय॑मा॒नोऽह्नां॑ के॒तुरु॒षसा॑मे॒ष्यग्र॑म्। भा॒गं दे॒वेभ्यो॒ वि द॑धास्याय॒न् प्र च॑न्द्रमस्तिरसे दी॒र्घमायुः॑ ॥२४॥ (ऋ० १०।८५।१९)

परा॑ देहि शामु॒ल्यं॑ ब्र॒ह्मभ्यो॒ वि भ॑जा॒ वसु॑। कृ॒त्यैषा प॒द्वती॑ भू॒त्वा जा॒या वि॑शते॒ पति॑म् ॥ २५ ॥ (ऋ० १०।८५।२९)

नी॒ल॒लो॒हि॒तं भ॑वति कृ॒त्यास॒क्तिर्व्य॑ज्यते। एध॑न्ते अ॒स्या ज्ञा॒तयः॒ पति॑र्ब॒न्धेषु॑ बध्यते ॥ २६ ॥ (ऋ० १०।८५।२८)

अ॒श्ली॒ला त॒नूर्भ॑वति॒ रुश॑ती पा॒पया॑मु॒या। पति॒र्यद् व॒ध्वो॒३ वास॑सः॒ स्वमङ्ग॑मभ्यू॒र्णु॒ते ॥ २७ ॥ (ऋ० १०।८५।३०)

आ॒शस॑नं वि॒शस॑न॒मथो॑ अधिवि॒कर्त॑नम्। सू॒र्यायाः॑ पश्य रू॒पाणि॒ तानि॑ ब्र॒ह्मोत शु॑म्भति ॥ २८ ॥ (ऋ० १०।८५।३५)

तृ॒ष्टमे॒तत् कटु॑कमपा॒ष्ठव॑द् वि॒षव॒न्नैतद॒त्तवे॑। सू॒र्यां यो ब्र॒ह्मा वेद॒ स इद् वाधू॑यमर्हति ॥ २९ ॥ (ऋ० १०।८५।३४)

स इत् तत् स्यो॒नं ह॑रति ब्र॒ह्मा वासः॑ सुम॒ङ्गल॑म्। प्राय॑श्चित्तिं॒ यो अ॒ध्येति॒ येन॑ जा॒या न रिष्य॑ति ॥ ३० ॥ (३)

यु॒वं भग॒ं सं भ॑रतं॒ समृ॑द्धमृ॒तं वद॑न्तावृ॒तोद्ये॑षु। ब्रह्म॑णस्पते॒ पति॑म॒स्यै रो॑चय॒ चारु॑ संभ॒लो व॑दतु॒ वाच॑मे॒ताम् ॥ ३१ ॥

इ॒हेद॑साथ॒ न प॒रो ग॑मा॒थेमं गावः॑ प्र॒जया॑ वर्धयाथ। शु॒भं य॒तीरु॒स्रियाः॒ सोम॑वर्चसो॒ विश्वे॑ दे॒वाः क्र॒न्निह वो॒ मनां॑सि ॥ ३२ ॥

इ॒मं गा॑वः प्र॒जया॒ सं वि॑शा॒थायं दे॒वानां॒ न मि॑नाति भा॒गम्। अ॒स्मै वः॑ पू॒षा म॒रुत॑श्च॒ सर्वे॑ अ॒स्मै वो॑ धा॒ता स॑वि॒ता सु॑वाति ॥ ३३ ॥

अ॒नृ॒क्ष॒रा ऋ॒जवः॑ सन्तु॒ पन्था॑नो॒ येभिः॒ सखा॑यो॒ यन्ति॑ नो वरे॒यम् ।
सं भगे॑न॒ सम॑र्य॒म्णा सं धा॒ता सृ॑जतु॒ वर्च॑सा ॥ ३४ ॥

यच्च॒ वर्चो॑ अ॒क्षेषु॒ सुरा॑यां च॒ यदाहि॑तम् । यद् गोष्व॑श्विना॒ वर्च॒स्तेने॒मां
वर्च॑सावतम् ॥ ३५ ॥

येन॑ महान॒घ्न्या ज॒घन॑मश्विना॒ येन॑ वा॒ सुरा॑ । येना॒क्षा अ॒भ्यषि॑च्यन्त॒
तेने॒मां वर्च॑सावतम् ॥ ३६ ॥

यो अ॑नि॒ध्मो दी॒दय॑द॒प्स्व॑१न्तर्यं विप्रा॑स॒ ईड॑ते अध्व॒रेषु॑ । अपां॑
नपा॒न्मधु॑मतीर॒पो दा॒ याभि॒रिन्द्रो॑ वावृ॒धे वी॒र्या॑वान् ॥ ३७ ॥

इ॒दम॒हं रुश॑न्तं ग्रा॒भं त॑नू॒दूषि॒मपो॑हामि । यो भ॒द्रो रो॑च॒नस्तमुद॑चामि
॥ ३८ ॥

आस्यै॑ ब्राह्म॒णाः स्नप॑नीर्हर॒न्त्ववी॑रघ्नी॒रुद॑जन्त्वापः॑ । अ॒र्य॒म्णो अ॒ग्निं
पर्ये॑तु पूषन् प्रती॑क्षन्ते॒ श्वशु॑रो दे॒वर॑श्च ॥ ३९ ॥

शं ते॒ हिर॑ण्यं॒ शमु॒ सन्त्वापः॒ शं मे॒थिर्भ॑वतु॒ शं यु॒गस्य॒ तर्द्म॑ । शं त॒
आपः॑ श॒तप॑वित्रा भव॑न्तु॒ शमु॒ पत्या॑ त॒न्वं॑१ सं स्पृ॑शस्व ॥४०॥ (४)

खे रथ॑स्य॒ खेऽन॑सः॒ खे यु॒गस्य॑ शतक्रतो । अ॒पा॒लामि॑न्द्र॒ त्रिष्पू॒त्वाकृ॑णोः
सूर्य॑त्वचम् ॥ ४१ ॥ (ऋ० ८।६।१४)

आ॒शासा॑ना सौमन॒सं प्र॒जां सौभा॑ग्यं र॒यिम् । पत्यु॒रनु॑व्रता भू॒त्वा सं
न॑ह्यस्वा॒मृता॑य॒ कम् ॥ ४२ ॥

यथा॒ सिन्धु॑र्न॒दीनां॒ साम्रा॑ज्यं सुषु॒वे वृषा॑ । ए॒वा त्वं स॒म्राज्ञ्ये॑धि॒ पत्यु॒रस्तं॑
प॒रेत्य॑ ॥ ४३ ॥

स॒म्राज्ञ्ये॑धि॒ श्वशु॑रेषु स॒म्राज्ञ्यु॒त दे॒वृषु॑। नना॑न्दुः स॒म्राज्ञ्ये॑धि स॒म्राज्ञ्यु॒त
श्व॒श्र्वाः ॥ ४४ ॥

या अकृ॑न्त॒न्नव॑य॒न् याश्च॑ तत्नि॒रे या दे॒वीरन्ताँ॑ अ॒भितोऽद॑दन्त।
तास्त्वा॑ ज॒रसे॒ सं व्य॑य॒न्त्वायु॑ष्मती॒दं परि॑ धत्स्व॒ वासः॑ ॥ ४५ ॥

जी॒वं रु॑दन्ति॒ वि न॑यन्त्यध्व॒रं दी॒र्घामनु॒ प्रसि॑तिं दीध्यु॒र्नरः॑। वा॒मं
पि॒तृभ्यो॒ य इ॒दं स॑मीरि॒रे मयः॒ पति॑भ्यो ज॒नये॑ परि॒ष्वजे॑ ॥ ४६ ॥
(ऋ० १०।४०।१०)

स्यो॒नं ध्रु॒वं प्र॒जायै॑ धारयामि॒ तेऽश्मा॑नं दे॒व्याः पृ॑थि॒व्या उ॒पस्थे॑।
तमा ति॑ष्ठानु॒माद्या॑ सु॒वर्चा॑ दी॒र्घं त॒ आयुः॑ सवि॒ता कृ॑णोतु ॥ ४७ ॥

येना॒ग्निर॒स्या भूम्या॒ हस्तं॑ ज॒ग्राह॒ दक्षि॑णम्। तेन॑ गृह्णामि ते॒ हस्त॒ं मा
व्य॑थिष्ठा॒ मया॑ स॒ह प्र॒जया॑ च॒ धने॑न च ॥ ४८ ॥

दे॒वस्ते॑ सवि॒ता हस्तं॑ गृह्णातु॒ सोमो॒ राजा॑ सुप्र॒जसं॑ कृणोतु। अ॒ग्निः
सु॒भगां॑ जा॒तवे॑दाः पत्ये॒ पत्नीं॑ ज॒रद॑ष्टिं कृणोतु ॥ ४९ ॥

गृ॒ह्णामि॑ ते सौभग॒त्वाय॒ हस्तं॒ मया॒ पत्या॑ ज॒रद॑ष्टि॒र्यथासः॑। भगो॑
अ॒र्य॒मा स॑वि॒ता पुर॑न्धि॒र्मह्यं॑ त्वादु॒र्गार्ह॑पत्याय दे॒वाः ॥ ५० ॥ (५)

भग॑स्ते॒ हस्त॑मग्रहीत् सवि॒ता हस्त॑मग्रहीत्। पत्नी॒ त्वम॑सि॒ धर्म॑णा॒हं
गृ॒हप॑ति॒स्तव॑ ॥ ५१ ॥

ममे॒यम॑स्तु पोष्या॒ मह्यं॑ त्वादा॒द् बृह॒स्पतिः॑। मया॒ पत्या॑ प्रजावति॒
सं जी॑व श॒रदः॑ श॒तम् ॥ ५२ ॥

त्वष्टा वासो व्यदधाच्छुभे कं बृहस्पतेः प्रशिषा कवीनाम् । तेनेमां
नारीं सविता भगश्च सूर्यामिव परि धत्तां प्रजया ॥ ५३ ॥
इन्द्राग्नी द्यावापृथिवी मातरिश्वा मित्रावरुणा भगो अश्विनोभा ।
बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां नारीं प्रजया वर्धयन्तु ॥ ५४ ॥
बृहस्पतिः प्रथमः सूर्यायाः शीर्षे केशाँ अकल्पयत् । तेनेमामश्विना
नारीं पत्ये सं शोभयामसि ॥ ५५ ॥
इदं तद्रूपं यदवस्त योषा जायां जिज्ञासे मनसा चरन्तीम् । तामन्वर्तिष्ये
सखिभिर्नवग्वैः क इमान् विद्वान् वि चचर्त पाशान् ॥ ५६ ॥
अहं वि ष्यामि मयि रूपमस्या वेददित् पश्यन् मनसः कुलायम् ।
न स्तेयमद्मि मनसोदमुच्ये स्वयं श्रथ्नानो वरुणस्य पाशान् ॥ ५७ ॥
प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद् येन त्वाबध्नात् सविता सुशेवाः ।
उरुं लोकं सुगमत्र पन्थां कृणोमि तुभ्यं सहपत्न्यै वधु ॥ ५८ ॥
उद्यच्छध्वमप रक्षो हनाथेमां नारीं सुकृते दधात । धाता विपश्चित्
पतिमस्यै विवेद भगो राजा पुर एतु प्रजानन् ॥ ५९ ॥५ ॥
भगस्ततक्ष चतुरः पादान् भगस्ततक्ष चत्वार्युष्पलानि । त्वष्टा पिपेश
मध्यतोऽनु वर्ध्रान्त्सा नो अस्तु सुमङ्गली ॥ ६० ॥
सुकिंशुकं वहतुं विश्वरूपं हिरण्यवर्णं सुवृतं सुचक्रम् । आ रोह सूर्ये
अमृतस्य लोकं स्योनं पतिभ्यो वहतुं कृणु त्वम् ।६१। (ऋ० १०।८५।२०)
अभ्रातृघ्नीं वरुणापशुघ्नीं बृहस्पते । इन्द्रापतिघ्नीं पुत्रिणीमास्मभ्यं
सवितर्वह ॥ ६२ ॥

मा हिं॑सिष्टं कुमा॒र्य॑१॒ स्थूणे॑ दे॒वकृ॑ते प॒थि । शाला॑या दे॒व्या द्वारं॑
स्यो॒नं कृ॑ण्मो व॒धूप॒थम् ॥ ६३ ॥
ब्रह्माप॑रं यु॒ज्यतां॒ ब्रह्म॒ पूर्वं॒ ब्रह्मा॑न्त॒तो म॑ध्य॒तो ब्रह्म॑ स॒र्वतः॑ । अ॒ना-
व्या॒धां दे॑वपु॒रां प्र॒पद्य॑ शि॒वा स्यो॒ना प॑तिलो॒के॑ वि रा॑ज ॥ ६४ ॥
(६) [१।१]

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः—सावित्री सूर्या ॥ देवता—आत्मा; १० यक्ष्मनाशिनी; ११ दम्पत्योः परि-
पन्थिनाशनी; ३६ देवाः ॥ छन्दः—१—४, ७—११, १६, २१, २२, २३,
२७—३०, ४५, ४६, ५३—५८, ६३—६७, ७२, ७३ अनुष्टुप्; ५, ६, १२,
३१, ४० जगती; ९ षट्पदा विराडत्यष्टि; १३, १४, १७—१९, ३६, ३८, ४१,
४२, ४९, ६१, ७०, ७४, ७५ त्रिष्टुप्; १५, ५१ भुरिगनुष्टुप्; २०, पुरस्ताद्
बृहती; २४, २५, ३२, ३४ परानुष्टुप्; त्रिष्टुप्; २६ त्रिपदा विराण्नाम गायत्री;
३३ विराडास्तारपङ्क्तिः; ३५ पुरोबृहती त्रिष्टुप्; ३७, ३९ भुरिक् त्रिष्टुप्;
४३ त्रिष्टुब्गर्भा पङ्क्तिः; ४४ प्रास्तारपङ्क्तिः; ४७ पथ्या बृहती; ४८ सतः-
पङ्क्तिः; ५० उपरिष्टाद् बृहती निचृत्; ५२ विराट् परोष्णिक्; ५९, ६०,
६२ पथ्या पङ्क्तिः; ६८ पुर उष्णिक्; ६९ षट्पदातिशक्वरी; ७१ बृहती ॥
मन्त्र ७५ ॥

तुभ्य॒मग्रे॒ पर्य॑वहन्त्सू॒र्यां॑ व॑ह॒तुना॑ स॒ह । स नः॒ पति॑भ्यो जा॒यां दा अग्ने॑
प्र॒जया॑ स॒ह ॥ १ ॥ (ऋ० १०।८५।३८)
पुनः॒ पत्नी॑म॒ग्निर॑दा॒दायु॑षा स॒ह वर्च॑सा । दी॒र्घायु॑रस्या॒ यः पति॒-
र्जीवा॑ति श॒रदः॑ श॒तम् ॥ २ ॥ (ऋ० १०।८५।३९)

सोम॑स्य जा॒या प्र॑थ॒मं ग॑न्ध॒र्व॑स्तेऽप॑र॒ः पति॑ः । तृ॒तीयो॑ अ॒ग्निष्टे॒ पति-
स्तु॒रीय॑स्ते मनुष्य॒जाः ॥ ३ ॥ (ऋ० १०।८५।४०)
सोमो॑ दद॒द् गन्ध॒र्वाय॑ गन्ध॒र्वो द॑दद॒ग्नये॑ । र॒यिं च॑ पु॒त्रांश्चा॑दाद॒ग्नि-
र्मह्य॒मथो॑ इ॒माम् ॥ ४ ॥ (ऋ० १०।८५।४१)
आ वा॑मगन्त्सुम॒तिर्वा॑जिनीवसू॒ न्य᳚श्विना हृ॒त्सु कामा॑ अरंसत ।
अभू॑तं गो॒पा मि॑थु॒ना शु॑भस्पती प्रि॒या अ॑र्य॒म्णो दुर्याँ॑ अशीमहि ॥५॥
सा म॑न्दसा॒ना मन॑सा शि॒वेन॑ र॒यिं धे॑हि॒ सर्व॑वीरं वच॒स्य᳚म् । सु॒गं
ती॒र्थं॑ सु॑प्रपा॒णं शु॑भस्पती स्था॒णुं प॑थि॒ष्ठामप॑ दुर्म॒तिं ह॑तम् ॥ ६ ॥
(ऋ० १०।४०।१३)

या ओष॑धयो॒ या न॒द्यो॑३॒ यानि॒ क्षेत्रा॑णि॒ या वना॑ । तास्त्वा॑ वधु
प्र॒जाव॑ती॒ं पत्ये॑ रक्षन्तु र॒क्षस॑ः ॥ ७ ॥
एमं पन्था॑मरुक्षाम सु॒गं स्व॑स्ति॒वाह॑नम् । यस्मि॑न् वी॒रो न रिष्य॑त्य॒-
न्येषां॑ वि॒दन्ते॒ वसु॑ ॥ ८ ॥
इ॒दं सु मे॑ नरः शृणुत॒ यया॒शिषा॒ दंप॑ती वा॒मम॑श्नु॒तः । ये ग॑न्ध॒र्वा॑
अ॑प्स॒रस॑श्च दे॒वीरे॒षु वा॑नस्प॒त्येषु॒ येऽधि॑ त॒स्थुः । स्यो॒नास्ते॑ अ॒स्यै व॒ध्वै॑
भ॑वन्तु॒ मा हिं॑सिषुर्व॑ह॒तुमु॒ह्यमा॑नम् ॥ ९ ॥
ये व॒ध्व᳚श्च॒न्द्रं व॑ह॒तुं यक्ष्मा॒ यन्ति॒ जना॒ँ अनु॑ । पुन॒स्तान् य॒ज्ञिया॑ दे॒वा
नय॑न्तु॒ यत॒ आग॑ताः ॥ १० ॥ (७) (ऋ० १०।८५।३१)
मा वि॑दन् परिप॒न्थिनो॒ य आ॒सीद॑न्ति॒ दंप॑ती । सु॒गेन॑ दु॒र्गमती॑ता॒मप॑
द्रा॒न्त्वरा॑तयः ॥ ११ ॥ (ऋ० १०।८५।३२)

सं का॑शयामि वह॒तुं ब्रह्म॑णा गृ॒हैरघो॑रेण॒ चक्षु॑षा मि॒त्रिये॑ण । प॒र्याण॑द्धं
वि॒श्वरू॑पं॒ यदस्ति॑ स्यो॒नं पति॑भ्यः सवि॒ता तत् कृ॑णोतु ॥ १२ ॥
शि॒वा नारी॒यमस्त॒माग॑न्नि॒मं धा॒ता लो॒कम॒स्यै दि॑देश । ताम॑र्य॒मा
भगो॑ अ॒श्विनो॒भा प्र॒जाप॑तिः प्र॒जया॑ वर्धयन्तु ॥ १३ ॥
आ॒त्म॒न्वत्यु॒र्व॑रा॒ नारी॒यमाग॒न् तस्यां॑ नरो॑ वपत॒ बीज॑मस्याम् । सा वः॑
प्र॒जां ज॑नयद् व॒क्षणा॑भ्यो॒ बिभ्र॑ती दु॒ग्धमृ॑ष॒भस्य॒ रेतः॑ ॥ १४ ॥
प्रति॑ तिष्ठ वि॒राड॑सि॒ विष्णु॑रिवे॒ह स॑रस्वति । सिनी॑वालि॒ प्र जा॑यतां॒
भग॑स्य सुम॒तावसत् ॥ १५ ॥
उद् व॑ ऊ॒र्मिः शम्या॑ ह॒न्त्वापो॒ योक्त्रा॑णि मुञ्चत । मादु॑ष्कृतौ॒
व्ये॑नसाव॒घ्न्याव॑शु॒नमार॑ताम् ॥ १६ ॥ (ऋ० १०।८५।१३)
अघो॑रचक्षु॒रप॑तिघ्नी स्यो॒ना श॒ग्मा सु॒शेवा॑ सु॒यमा॑ गृ॒हेभ्यः॑ । वी॒र॒सूर्दे॒वृ-
का॑मा॒ सं त्वयै॑धिषीमहि सुमन॒स्यमा॑ना ॥ १७ ॥ (ऋ० १०।८५।४४)
अदे॑वृघ्न्यप॑तिघ्नी॒हैधि॑ शि॒वा प॒शुभ्यः॑ सु॒यमा॑ सु॒वर्चाः॑ । प्र॒जाव॑ती
वी॒र॒सूर्दे॒वृका॑मा स्यो॒नेमम॒ग्निं गार्ह॑पत्यं सपर्य ।१८। (ऋ० १०।८५।४४)
उत्ति॑ष्ठेतः किमि॒च्छन्ती॒दमागा॑ अ॒हं त्वे॑डे अभि॒भूः स्वाद् गृ॒हात् ।
शू॒न्यै॒षी नि॑रृते॒ याज॒गन्धोत्ति॑ष्ठाराते॒ प्र प॑त॒ मेह रं॑स्थाः ॥ १९ ॥
य॒दा गार्ह॑पत्य॒मस॑पर्यै॒त् पूर्व॑म॒ग्निं व॒धूरि॒यम् । अधा॒ सर॑स्वत्यै नारि
पि॒तृभ्य॑श्च॒ नम॑स्कुरु ॥ २० ॥ (८)
शर्म॒ वर्म॒तदा ह॑रा॒स्यै नार्या॑ उप॒स्तरे॑ । सिनी॑वालि॒ प्र जा॑यतां॒ भग॑स्य
सुम॒ताव॑सत् ॥ २१ ॥

यं बल्ब॑जं॒ न्यस्य॑थ॒ चर्म᳚ चोपस्तृणी॒थन॑ । तदा रो॑हतु सुप्र॒जा या
क॒न्या᳚ वि॒न्दते॒ पति॑म् ॥ २२ ॥
उप॑ स्तृणीहि॒ बल्ब॑ज॒मधि॒ चर्म᳚णि॒ रोहि॑ते । तत्रो॑प॒विश्य॑ सुप्र॒जा
इ॒मम॒ग्निं सं॑पर्यतु ॥ २३ ॥
आ रो॑ह॒ चर्मोप॑ सीदा॒ग्निमे॒ष दे॒वो ह॑न्ति॒ रक्षां॑सि॒ सर्वा॑ । इ॒ह प्र॒जां
ज॑नय॒ पत्ये᳚ अ॒स्मै सु॑ज्यै॒ष्ठ्यो भ॑वत् पु॒त्रस्त॑ ए॒षः ॥ २४ ॥
वि ति॑ष्ठन्तां मा॒तुर॒स्या उ॒पस्था॒न्नाना॑रूपाः प॒शवो॒ जाय॑मानाः ।
सु॒म॒ङ्ग॒ल्युप॑ सीदे॒मम॒ग्निं संप॑त्नी॒ प्रति॑ भूषे॒ह दे॒वान् ॥ २५ ॥
सु॒म॒ङ्ग॒ली प्र॒तर॑णी गृ॒हाणां᳚ सु॒शेवा॒ पत्ये॒ श्वशु॑राय शं॒भूः । स्यो॒ना
श्व॒श्र्वै प्र गृ॒हान् वि॑शे॒मान् ॥ २६ ॥
स्यो॒ना भ॑व॒ श्वशु॑रेभ्यः स्यो॒ना पत्ये᳚ गृ॒हेभ्यः॑ । स्यो॒नास्यै सर्व॑स्यै वि॒शे
स्यो॒ना पु॒ष्टायै᳚षां भव ॥ २७ ॥
सु॒म॒ङ्ग॒लीरि॒यं व॒धूरि॒मां स॒मेत॒ पश्य॑त । सौभा॑ग्यम॒स्यै द॒त्त्वा दौर्भा᳚ग्यै-
र्वि॒परे᳚तन ॥ २८ ॥ (ऋ० १०।८५।३३)
या दु॒र्हार्दो᳚ युव॒तयो॒ याश्चे॒ह ज॑र॒तीरपि॑ । वर्चो॒ न्व॑स्यै सं द॒त्ताथास्तं᳚
वि॒परे॑तन ॥ २९ ॥
रु॒क्म॒प्रस्त॑रणं व॒ह्यं विश्वा॑ रू॒पाणि॒ बिभ्र॑तम् । आरो॑हत् सू॒र्या सा॑वि॒त्री
बृ॒ह॒ते सौभ॑गाय॒ कम् ॥ ३० ॥ (६)
आ रो॑ह॒ तल्पं᳚ सुमन॒स्यमा॑ने॒ह प्र॒जां ज॑नय॒ पत्ये᳚ अ॒स्मै । इ॒न्द्रा॒णीव॑
सु॒बुधा॒ बुध्य॑माना॒ ज्योति॑रग्रा उ॒षसः॒ प्रति॑ जागरासि ॥ ३१ ॥

दे॒वा अग्रे॒ न्य॑पद्यन्त॒ पत्नीः॒ सम॑स्पृशन्त त॒न्व॑स्त॒नूभिः॑ । सू॒र्येव॑ नारि
वि॒श्वरू॑पा महि॒त्वा प्र॒जाव॑ती॒ पत्या॒ सं भ॑वे॒ह ॥ ३२ ॥
उत्ति॑ष्ठे॒तो वि॑श्वावसो॒ नम॑सेडामहे त्वा । जा॒मिमि॑च्छ पितृ॒षदं॒ न्य॑क्तां॒
स ते॑ भा॒गो ज॒नुषा॒ तस्य॑ विद्धि ॥ ३३ ॥
अ॒प्स॒रसः॑ सध॒मादं॑ मदन्ति हवि॒र्धान॑मन्त॒रा सूर्यं॑ च । तास्ते॑ ज॒नित्र॑-
म॒भि ताः परे॑हि॒ नम॑स्ते गन्धर्व॒र्तुना॑ कृणोमि ॥ ३४ ॥
नमो॑ गन्ध॒र्वस्य॒ नम॑से॒ नमो॒ भामा॑य॒ चक्षु॑षे च कृण्मः । विश्वा॑वसो॒
ब्रह्म॑णा ते॒ नमो॒ऽभि जा॒या अ॑प्स॒रसः॒ परे॑हि ३५ ॥
रा॒या व॒यं सु॒मन॑सः स्या॒मोदि॒तो गन्ध॒र्वमावी॑वृताम् । अग॒न्त्स दे॒वः
प॑र॒मं स॒धस्थ॒मग॑न्म॒ यत्र॑ प्रति॒रन्त॒ आयुः॑ ॥ ३६ ॥
सं पि॑तरा॒वृत्वि॑ये सृजेथां मा॒ता पि॒ता च॒ रेत॑सो भवाथः । मर्यँ॑ इव॒
योषा॒मधि॒रोह॑यैनां प्र॒जां कृ॑ण्वाथामि॒ह पुष्य॑तं र॒यिम् ॥ ३७ ॥
तां पू॑षँ छि॒वत॑मा॒मेर॑यस्व॒ यस्यां॒ बीजं॑ मनु॒ष्या॒३ वप॑न्ति । या न॑ ऊ॒रू
उ॑श॒ती वि॒श्रया॑ति॒ यस्या॑मु॒शन्तः॑ प्र॒हरे॑म॒ शेपः॑ ॥ ३८ ॥
आ रो॑हो॒रुमुप॑ धत्स्व॒ हस्तं॒ परि॑ ष्वजस्व जा॒यां सु॑मन॒स्यमा॑नः । प्र॒जां
कृ॑ण्वाथामि॒ह मोद॑मानौ दी॒र्घं वा॒मायुः॑ सवि॒ता कृ॑णोतु ॥ ३९ ॥
आ वां॑ प्र॒जां ज॑नयतु प्र॒जाप॑तिरहोरा॒त्राभ्यां॒ सम॑नक्त्वर्य॒मा । अदु॑र्मङ्गली
पतिलो॒कमा वि॑शे॒मं शं नो॑ भव द्वि॒पदे॒ शं चतु॑ष्पदे ॥ ४० ॥ (१०)
दे॒वैर्द॒त्तं मनु॑ना सा॒कमे॒तद् वाधू॑यं॒ वासो॑ व॒ध्व॑श्च॒ वस्त्र॑म् । यो ब्र॒ह्मणे॑
चिकि॒तुषे॒ ददा॑ति॒ स इद् रक्षां॑सि॒ तल्पा॑नि हन्ति ॥ ४१ ॥

यं मे॑ द॒त्तो ब्र॑ह्मभा॒गं व॑धू॒योर्वाधू॑यं॒ वासो॑ व॒ध्व॑श्च॒ वस्त्र॑म् । यु॒वं ब्र॒ह्मणे॑ऽनु॒मन्य॑मानौ॒ बृह॑स्पते सा॒कमिन्द्र॑श्च द॒त्तम् ॥ ४२ ॥

स्यो॒नाद्योने॒रधि॒ बुध्य॑मानौ । ह॒सा॒मु॒दौ मह॑सा॒ मोद॑मानौ । सु॒गू सु॑पु॒त्रौ सु॑गृ॒हौ त॑राथो जी॒वावु॒षसो॑ वि॒भातीः ॥ ४३ ॥

नव॒ं वसा॑नः सुर॒भिः सु॒वासा॑ उ॒दागां॑ जी॒व उ॒षसो॑ वि॒भातीः । आ॒ण्डात् प॑त॒त्रीवा॑मुक्षि॒ विश्व॑स्मा॒देन॑स॒स्परि॑ ॥ ४४ ॥

शुम्भ॑नी॒ द्यावा॑पृथि॒वी अन्ति॑सुम्ने॒ महि॑व्रते । आप॑ः स॒प्त सु॑स्रुवुर्दे॒वीस्ता नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः ॥ ४५ ॥

सू॒र्या॑यै दे॒वेभ्यो॑ मि॒त्राय॒ वरु॑णाय च । ये भू॒तस्य॒ प्रचे॑तस॒स्तेभ्य॑ इ॒दम॑करं॒ नम॑ः ॥ ४६ ॥

य ऋ॒ते चि॑दभि॒श्रिष॑ः पु॒रा ज॒त्रुभ्य॑ आ॒तृद॑ः । संधा॑ता सं॒धिं म॒घवा॑ पुरू॒वसु॒र्निष्क॑र्ता॒ विहु॑तं॒ पुन॑ः ॥ ४७ ॥

अपा॒स्मत् तम॑ उच्छतु॒ नील॑ं पि॒शङ्ग॑मु॒त लोहि॑तं॒ यत् । नि॒र्द॒ह॒नी या पृ॑षात॒क्य॑१॒स्मिन् तां स्था॒णाव॒ध्या स॑जामि ॥ ४८ ॥

याव॑तीः कृ॒त्या उ॑प॒वास॑ने॒ याव॑न्तो॒ राज्ञो॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑ः । व्यृ॑द्धयो॒ या अस॑मृद्धयो॒ या अ॒स्मिन् ता स्था॒णावधि॑ सादयामि ॥ ४९ ॥

या मे॑ प्रि॒यत॑मा त॒नूः सा मे॑ बिभाय॒ वास॑सः । तस्या॒ग्रे त्वं व॑नस्पते नी॒विं॑ कृ॑णुष्व॒ मा व॒यं रि॑षाम ॥ ५० ॥ (११)

ये अन्ता॒ याव॑ती॒ः सिचो॒ य ओत॑वो॒ ये च॒ तन्त॑वः । वासो॒ यत् पत्नी॑भिरु॒तं तन्न॑ः स्यो॒नमुप॑ स्पृशात् ॥ ५१ ॥

उ॒श॒तीः क॒न्यला॑ इ॒माः पि॑तृ॒लोकात् पतिं॑ यतीः । अव॑ दी॒क्षाम॑सृक्षत॒
स्वाहा॑ ॥ ५२ ॥

बृह॒स्पति॒नाव॑सृष्टां विश्वे॑ दे॒वा अ॑धारयन् । वर्चो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टं॒ यत्
तेने॒मां सं सृ॑जामसि ॥ ५३ ॥

बृह॒स्पति॒ना॰···तेजो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टं॒ यत् तेने॒मां···॥ ५४ ॥

बृह॒स्पति॒ना॰···भगो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टो॒ यस्तेने॒मां॰ ॥ ५५ ॥

बृह॒स्पति॒ना॰···यशो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टं॒ यत् तेने॒मां॰ ॥ ५६ ॥

बृह॒स्पति॒ना॰···पयो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टं॒ यत् तेने॒मां॰ ॥ ५७ ॥

बृह॒स्पति॒नाव॑सृष्टां॒ विश्वे॑ दे॒वा अ॑धारयन् । रसो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टो॒ यस्तेने॒मां
सं सृ॑जामसि ॥ ५८ ॥

यदी॒मे के॒शिनो॒ जना॑ गृ॒हे ते॑ स॒मन॑र्तिषू॒ रोदे॑न कृण्व॒न्तो॒ऽ॒घम् । अ॒ग्निष्ट्वा॒
तस्मा॒देन॑सः सवि॒ता च॒ प्र मु॑ञ्चताम् ॥ ५९ ॥

यदी॒यं दु॑हि॒ता तव॑ विके॒श्यरु॑दद् गृ॒हे रोदे॑न कृण्व॒त्य॑१॒घम् । अ॒ग्निष्ट्वा॒
तस्मा॒देन॑सः सवि॒ता च॒ प्र मु॑ञ्चताम् ॥ ६० ॥ (१२)

यज्जा॒मयो॒ यद्यु॑व॒तयो॑ गृ॒हे ते॑ स॒मन॑र्तिषू॒ रोदे॑न कृण्व॒तीर॒घम् । अ॒ग्निष्ट्वा॒
तस्मा॒देन॑सः सवि॒ता च॒ प्र मु॑ञ्चताम् ॥ ६१ ॥

यत् ते॑ प्र॒जायां॑ प॒शुषु॒ यद्वा॑ गृ॒हेषु॒ निष्ठि॑तमघ॒कृद्भि॑र॒घं कृ॒तम् । अ॒ग्निष्ट्वा॒
तस्मा॒देन॑सः सवि॒ता च॒ प्र मु॑ञ्चताम् ॥ ६२ ॥

इ॒यं नार्युप॑ ब्रूते॒ पूल्या॑न्यावपन्ति॒का । दी॒र्घायु॑रस्तु मे॒ पति॒र्जीवा॑ति
श॒रदः॑ श॒तम् ॥ ६३ ॥

इ॒हेमावि॑न्द्र॒ सं नु॑द चक्रवा॒केव॒ दम्प॑ती । प्र॒जयै॑नौ स्वस्त॒कौ विश्व॒माय॒-
र्व्य॑[श्नुताम् ॥ ६४ ॥

यदा॑स॒न्द्यामु॑प॒धाने॒ यद् वो॑प॒वास॑ने कृ॒तम् । वि॒वा॒हे कृ॒त्यां॑ यां॑ च॒क्रुरा॒-
स्नाने॒ तां नि द॑ध्मसि ॥ ६५ ॥

यद् दु॑ष्कृ॒तं यच्छम॑लं विवा॒हे व॑ह॒तौ च॒ यत् । तत् सं॑भ॒लस्य॑ कम्ब॒ले
मृ॒ज्महे॑ दुरि॒तं व॒यम् ॥ ६६ ॥

सं॒भ॒ले मलँ॑ सादयि॒त्वा क॑म्ब॒ले दु॑रि॒तं व॒यम् । अभू॑म य॒ज्ञियाः॑ शु॒द्धाः
प्र ण॒ आयूँ॑षि तारिषत् ॥ ६७ ॥

कृ॒त्रिम॒ः कण्ट॑कः श॒तद॒न् य ए॒षः । अ॒पास्याः॑ केश्य॒ं मल॒मप॑ शीर्ष॒ण्यं॑[
लिखात् ॥ ६८ ॥

अङ्गा॑दङ्गाद् व॒यम॒स्या अप॒ यक्ष्म॒ं नि द॑ध्मसि । तन्मा प्राप॑त् पृथि॒वीं
मोत दे॒वान् दिव॒ं मा प्राप॑दु॒र्व॑१॒न्तरि॑क्षम् । अ॒पो मा प्राप॒न्मल॑मे॒तद॑ग्ने
य॒मं मा प्राप॑त् पि॒तॄंश्च॒ सर्वा॑न् ॥ ६९ ॥

सं त्वा॑ नह्यामि॒ पय॑सा पृथि॒व्याः सं त्वा॑ नह्यामि॒ पय॒सौष॑धीनाम् ।
सं त्वा॑ नह्यामि प्र॒जया॒ धने॑न॒ सा संन॑द्धा सनुहि॒ वाज॒मेमम् ।७०।(१३)

अमो॒ऽहम॑स्मि॒ सा त्वं सामा॒हम॒स्म्यृक् त्वं द्यौर॒हं पृ॑थि॒वी त्वम् ।
तावि॒ह सं भ॑वाव प्र॒जामा ज॑नयावहै ॥ ७१ ॥

ज॒नि॒यन्ति ना॒वग्र॑वः पु॒त्रि॒यन्ति सु॒दान॑वः । अरि॑ष्टासू सचेवहि बृह॒ते
वाज॑मातये ॥ ७२ ॥ (ऋ. ७।९६।४)

ये पि॒तरो॑ वधूद॒र्शा इ॒मं व॑ह॒तुमाग॑मन् । ते अ॒स्यै व॒ध्वै संप॑त्न्यै प्र॒जाव॒च्छर्म॑ यच्छन्तु ॥ ७३ ॥

येदं पूर्वाग॑न् रशना॒यमा॑ना प्र॒जाम॒स्यै द्रवि॑णं चे॒ह द॒त्त्वा । तां व॑ह॒न्त्वग॑त॒स्यानु पन्थां॑ वि॒राडि॒यं सु॑प्र॒जा अत्य॑जैषीत् ॥ ७४ ॥

प्र बु॑ध्यस्व सुबुधा॒ बुध्य॑माना दीर्घायुत्वाय॑ श॒तशा॑रदाय । गृ॒हान् ग॑च्छ गृ॒हप॑त्नी॒ यथासो॑ दी॒र्घं॑ त॒ आयु॑ः सवि॒ता कृ॑णोतु ॥७५॥ (१४)

[२।१]

॥ इति चतुर्दशं काण्डम् समाप्तम् ॥

* * *

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ पंचदशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ साम्नी पङ्क्तिः; २ द्विपदा साम्नी बृहती; ३ एकपदा यजुर्ब्राह्म्यनुष्टुप्; ४ एकपदा विराड् गायत्री; ५ साम्न्यनुष्टुप्; ६ त्रिपदा प्राजापत्या बृहती; ७ आसुरी पङ्क्तिः; ८ त्रिपदाऽनुष्टुप् ॥ मन्त्र ८ ।

व्रात्य॑ आसी॒दीय॑मान ए॒व स प्र॒जाप॑ति॒ंं समै᳚रयत् ॥ १ ॥
स प्र॒जाप॑तिः सु॒वर्ण॑मा॒त्मन्न॑पश्य॒त् तत् प्राज॑नयत् ॥ २ ॥
तदेक॑मभव॒त् तल्ल॒लाम॑मभव॒त् तन्म॒हद॑भव॒त् तज्ज्ये॒ष्ठम॑भव॒त् तद् ब्रह्मा॑भव॒त् तत् तपो॑ऽभव॒त् तत् स॒त्यम॑भव॒त् तेन॒ प्राजा॑यत ॥ ३ ॥
सो॑ऽवर्ध॑त॒ स म॒हान॑भव॒त् स म॑हादे॒वो॑ऽभवत् ॥ ४ ॥
स दे॒वाना॑मी॒शां पर्यै᳚त्॒ स ईशा॑नोभवत् ॥ ५ ॥
स एक॑व्रा॒त्यो॑ऽभव॒त् स धनु॒राद॑त्त॒ तदे॒वेन्द्र॑ध॒नुः ॥ ६ ॥
नील॑मस्यो॒द॒रं लोहि॑तं पृ॒ष्ठम् ॥ ७ ॥
नीले᳚नै॒वाप्रि॑य॒ं भ्रातृ॑व्य॒ं प्रोर्णो᳚ति॒ लोहि॑तेन द्विषन्तं᳚ विध्य॒तीति॑ ब्रह्मवा॒दिनो॑ वदन्ति ॥ ८ ॥ [१।१]

* * *

सूक्त (पर्याय) २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१, ६, ९, १५, २१, २६ साम्न्यनुष्टुप्; २, १६, २२ साम्नी त्रिष्टुप्; ३ द्विपदाऽऽर्षी; पङ्क्तिः; ४, १८, २४ द्विपदा ब्राह्मी गायत्री; ५, १३, १९, २५ द्विपदाऽऽर्ची जगती; [७ भुरिगार्च्यनुष्टुप्; ८ आर्ची बृहती]; १० एकपदोष्णिक्; ११ द्विपदाऽऽर्षी भुरिक् त्रिष्टुप्; १२ आर्षी परानुष्टुप्; १४ साम्नी पङ्क्तिः; [१४, २० मातरिश्वा इत्यस्य कीर्त्तिश्चेत्यस्य; च सप्तमाष्टमवत्]; १७ द्विपदा विराडार्षी पङ्क्तिः; २० आसुरी गायत्री; २३ निचृदार्षी पङ्क्तिः; २७ पदपङ्क्तिः; २८ त्रिपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २८ ।

स उदतिष्ठत् स प्राचीं दिशमनु व्यचलत् ॥ १ ॥

तं बृहच्च रथंतरं चादित्याश्च विश्वे च देवा अनुव्यचलन् ॥ २ ॥

बृहते च वै स रथंतराय चादित्येभ्यश्च विश्वेभ्यश्च देवेभ्य आ वृश्चते
य एवं विद्वांसं व्रात्यमुपवदति ॥ ३ ॥

बृहतश्च वै स रथंतरस्य चादित्यानां च विश्वेषां च देवानां प्रियं
धाम भवति तस्य प्राच्यां दिशि ॥ ४ ॥

श्रद्धा पुंश्चली मित्रो मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीषं रात्री केशा
हरितौ प्रवर्तौ कल्मलिर्मणिः ॥ ५ ॥

भूतं च भविष्यच्च परिष्कन्दौ मनो विपथम् ॥ ६ ॥

मातरिश्वा च पवमानश्च विपथवाहौ वातः सारथी रेष्मा प्रतोदः ॥७॥

कीर्तिश्च यशश्च पुरःसरावैनं कीर्तिर्गच्छत्या यशो गच्छति य एवं
वेद ॥ ८ ॥ (१)

स उदतिष्ठत स दक्षिणां दिशमनु व्यचलत् ॥ ९ ॥

तं य॑ज्ञाय॒ज्ञियं॑ च वामदे॒व्यं च॑ य॒ज्ञश्च॒ यज॑मानश्च प॒शव॑श्चानु॒-
व्य॑चलन् ॥ १० ॥

य॒ज्ञा॒य॒ज्ञिया॑य च॒ वै स वा॑मदे॒व्याय॑ च य॒ज्ञाय॑ च॒ यज॑मानाय च
प॒शुभ्य॒श्चा वृ॑श्चते॒ य ए॒वं वि॒द्वांसं॒ व्रात्य॑मुप॒वद॑ति ॥ ११ ॥

य॒ज्ञा॒य॒ज्ञिय॑स्य च॒ वै स वा॑मदे॒व्यस्य॑ च य॒ज्ञस्य॑ च॒ यज॑मानस्य च
पशू॒नां च॑ प्रि॒यं धाम॑ भवति॒ तस्य॒ दक्षि॑णायां दि॒शि ॥ १२ ॥

उ॒षाः पुं॑श्च॒ली मन्त्रो॑ माग॒धो वि॒ज्ञानं॒ वासो॑ऽह॑रु॒ष्णीषं॒ रात्री॒ केशा॒
हरि॑तौ प्रव॒र्तौ क॑ल्म॒लिर्म॒णिः ॥ १३ ॥

अ॒मा॒वा॒स्या॑ च पौर्ण॒मासी च॑ परिष्क॒न्दौ मनो॰ ··· वेद॑ ॥१४॥ (२)

स उद॑तिष्ठ॒त् स प्र॒तीची॒ं दि॒शमनु॒ व्य॑चलत् ॥ १५ ॥

तं वै॑रू॒पं च॑ वै॒राजं॑ चाप॑श्च॒ वरु॑णश्च॒ राजा॑नु॒व्य॑चलन् ॥ १६ ॥

वै॒रू॒पाय॑ च॒ वै स वै॑रा॒जाय॑ चा॒द्भ्यश्च॒ वरु॑णाय च॒ राज्ञ॒ आ वृ॑श्चते॒ य
ए॒वं वि॒द्वांसं॒ व्रात्य॑मुप॒वद॑ति ॥ १७ ॥

वै॒रू॒पस्य॑ च॒ वै स वै॑रा॒जस्य॑ चा॒पां च॒ वरु॑णस्य च॒ राज्ञः॑ प्रि॒यं धाम॑
भवति॒ तस्य॑ प्र॒तीच्यां॑ दि॒शि ॥ १८ ॥

इ॒रा पुं॑श्च॒ली हसो॑ माग॒धो वि॒ज्ञानं॒॰ ··· क॑ल्म॒लिर्म॒णिः ॥ १९ ॥

अह॑श्च॒ रात्री॑ च परिष्क॒न्दौ मनो॑ विप॒थम् ।॰ ··· य ए॒वं वेद॑ ॥२०॥ (३)

स उद॑तिष्ठ॒त् स उदी॑ची॒ं दि॒शमनु व्य॑चलत् ॥ २१ ॥

तं श्यै॒तं च॑ नौध॒सं च॑ सप्त॒र्षय॑श्च॒ सोम॑श्च॒ राजा॑नु॒व्य॑चलन् ॥ २२ ॥

श्यै॒ताय॑ च॒ वै स नौ॑ध॒साय॑ च स॒प्त॒र्षिभ्य॑श्च॒ सोमा॑य च॒ राज्ञ॒ आ
वृ॑श्चते॒ य ए॒वं वि॒द्वांसं॒ व्रात्य॑मुप॒वद॑ति ॥ २३ ॥
श्यै॒तस्य॑ च॒ वै स नौ॑ध॒सस्य॑ च सप्तर्षी॒णां॑ च॒ सोम॑स्य च॒ राज्ञः॑ प्रि॒यं
धाम॑ भवति॒ तस्योदी॑च्यां दि॒शि ॥ २४ ॥
वि॒द्युत् पुं॑श्च॒ली स्त॑नयि॒त्नुर्मा॑ग॒धो वि॒ज्ञानं॒ वासोऽह॑रु॒ष्णीषं॒ रात्री॒ केशा॒
हरि॑तौ प्रव॒र्तौ क॑ल्म॒लिर्म॒णिः ॥ २५ ॥
श्रु॒तं च॒ विश्रु॑तं च॒ परिष्क॒न्दौ मनो॑ विप॒थम् ॥ २६ ॥
मा॒त॒रिश्वा॑ च॒ पव॑मानश्च विपथवा॒हौ वा॒तः सार॑थी रे॒ष्मा प्र॑तो॒दः ।२७।
की॒र्तिश्च॒ यश॑श्च पुरःस॒रावैनं॑ की॒र्तिर्ग॑च्छ॒त्या यशो॑ गच्छति॒ य ए॒वं
वेद॑ ॥ २८ ॥ (४) [१।२]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) ३

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ पिपीलिकामध्या गायत्री; २ साम्न्युष्णिक्; ३ याजुषी जगती; ४ द्विपदाऽऽर्च्युष्णिक्; ५ आर्ची बृहती; ६ आसुर्यनुष्टुप्; ७ साम्नी गायत्री; ८ आसुरी पङ्क्तिः; ९ आसुरी जगती; १० प्राजापत्या त्रिष्टुप्; ११ विराड् गायत्री ॥ मन्त्र १० ।

स सं॑वत्स॒रमू॒र्ध्वो॑ऽतिष्ठ॒त् तं दे॒वा अ॑ब्रुव॒न् व्रात्य॒ किं नु ति॑ष्ठ॒सीति॑ ।१।
सो॑ऽब्रवीदास॒न्दीं मे॒ सं भ॑र॒न्त्विति॑ ॥ २ ॥
तस्मै॒ व्रात्या॑यास॒न्दीं सम॑भरन् ॥ ३ ॥
तस्या॑ ग्री॒ष्मश्च॑ वस॒न्तश्च॒ द्वौ पादा॒वास्तां॑ श॒रच्च॑ व॒र्षाश्च॒ द्वौ ॥ ४ ॥

बृहच्च रथन्तरं चानूच्ये३ आस्तां यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं च
तिरश्च्ये ॥ ५ ॥
ऋचः प्राञ्चस्तन्तवो यजूंषि तिर्यञ्चः ॥ ६ ॥
वेद आस्तरणं ब्रह्मोपबर्हणम् ॥७॥ सामासाद उद्गीथोऽपश्रयः ॥८॥
तामासन्दीं व्रात्य आरोहत् ॥ ९ ॥ तस्य देवजनाः परिष्कन्दा
आसन्त्संकल्पाः प्रहाय्या३ विश्वानि भूतान्युपसदः ॥ १० ॥
विश्वान्येवास्य भूतान्युपसदो भवन्ति य एवं वेद ॥ ११ ॥ [१।३]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) ४

ऋषिः—अथर्वा ।। देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ।। छन्दः—१, १३, १६ दैवी जगती; २, ८ आर्च्यनुष्टुप्; ३, १२ द्विपदा प्राजापत्या जगती; ४, ७, १० प्राजापत्या गायत्री; ५ प्राजापत्या पङ्क्तिः; ६ आर्ची जगती; ९ आर्ची त्रिष्टुप्; ११ साम्नी त्रिष्टुप्; १४ प्राजापत्या बृहती; १५, १८ द्विपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः; १७ आर्च्युष्णिक् ।। मन्त्र १८ ।

तस्मै प्राच्या दिशः ॥ १ ॥
वासन्तौ मासौ गोप्तारावकुर्वन् बृहच्च रथन्तरं चानुष्ठातारौ ॥ २ ॥
वासन्तावेनं मासौ प्राच्या दिशो गोपायतो बृहच्च रथन्तरं चानु
तिष्ठतो य एवं वेद ॥ ३ ॥ (१)
तस्मै दक्षिणाया दिशः ॥ ४ ॥
ग्रैष्मौ मासौ गोप्तारावकुर्वन् यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं चानुष्ठातारौ ।५।
ग्रैष्मावेनं मासौ दक्षिणाया दिशो गोपायतो यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं
चानु तिष्ठतो य एवं वेद ॥ ६ ॥ (२)

तस्मै॑ प्र॒तीच्या॑ दि॒शः ॥ ७ ॥
वा॒र्षि॑कौ॒ मासौ॑ गो॒प्तारा॒वकु॑र्वन् वै॑रू॒पं च॑ वै॑रा॒जं चा॑नुष्ठा॒तारौ॑ ॥ ८ ॥
वा॒र्षि॑कावे॑नं मासौ॑ प्र॒तीच्या॑ दि॒शो गो॑पायतो वै॑रू॒पं च॑ वै॑रा॒जं चानु॑
तिष्ठ॒तो य ए॒वं वेद॑ ॥ ९ ॥ (३)
तस्मा॒ उदी॑च्या दि॒शः ॥ १० ॥
श॒ा॒र॒दौ मासौ॑ गो॒प्तारा॒वकु॑र्वञ्छ्यै॒तं च॑ नौ॑ध॒सं चा॑नुष्ठा॒तारौ॑ ॥ ११ ॥
शा॒र॒दावे॑न॒ं मासा॒वुदी॑च्या दि॒शो गो॑पायतः श्यै॒तं च॑ नौध॒सं चानु॑
तिष्ठ॒तो य ए॒वं वेद॑ ॥ १२ ॥ (४)
तस्मै॑ ध्रु॒वायै॑ दि॒शः ॥ १३ ॥
है॒म॒नौ मासौ॑ गो॒प्तारा॒वकु॑र्व॒न् भूमिं॑ चा॒ग्निं चा॑नुष्ठा॒तारौ॑ ॥ १४ ॥
है॒म॒नावे॑न॒ं मासौ॑ ध्रु॒वाया॑ दि॒शो गो॑पायतो॒ भूमि॑श्चा॒ग्निश्चानु॑ तिष्ठ॒तो
य ए॒वं वेद॑ ॥ १५ ॥ (५)
तस्मा॑ ऊ॒र्ध्वाया॑ दि॒शः ॥ १६ ॥
शै॒शि॒रौ मासौ॑ गो॒प्तारा॒वकु॑र्व॒न् दिवं॑ चादि॒त्यं चा॑नुष्ठा॒तारौ॑ ॥ १७ ॥
शै॒शि॒रावे॑न॒ं मासा॑वू॒र्ध्वाया॑ दि॒शो गो॑पायतो॒ द्यौश्चा॑दि॒त्यश्चानु॑ तिष्ठ॒तो
य ए॒वं वेद॑ ॥ १८ ॥ (६) [१।४]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) ५

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—रुद्रः ॥ छन्दः—१ त्रिपदा समविषमा गायत्री; २ त्रिपदा भुरिगार्ची त्रिष्टुप्; ३, १६ द्विपदा प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ४ त्रिपदा स्वराट् प्राजापत्या

पङ्क्तिः; ५, ७, ९, ११, १३ त्रिपदा ब्राह्मी गायत्री; (नास्य इत्यस्योक्तम्) ६, ८, १२ त्रिपदा ककुप्; (१०, १४ आर्षी गायत्री;) १५ विराड् (बृहती) ॥ मंत्र १६ ।

तस्मै॒ प्राच्या॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद् भ॒वमि॑ष्वा॒सम॑नुष्ठा॒तार॑मकुर्वन् ॥ १ ॥
भ॒व ए॑नमिष्वा॒सः प्राच्या॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद॑नुष्ठा॒तानु॑ तिष्ठति॒ नैनं॑
श॒र्वो न भ॒वो नेशा॑नः ॥ २ ॥
नास्य॑ प॒शून् न स॑मा॒नान् हि॑नस्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ३ ॥ (१)
तस्मै॒ दक्षि॑णाया दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाच्छ॒र्वमि॑ष्वा॒सम॑नुष्ठा॒तार॑मकुर्वन् ॥ ४ ॥
श॒र्व ए॑नमिष्वा॒सो दक्षि॑णाया दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद॑नु०···वेद॑ ॥ ५ ॥ (२)
तस्मै॑ प्र॒तीच्या॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शात् प॑शु॒पति॑मिष्वा॒सम॑नुष्ठा॒तार॑मकुर्वन् ।६।
प॒शु॒पति॑रेनमिष्वा॒सः प्र॒तीच्या॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद॑नु···वेद॑ ॥७॥ (३)
तस्मा॒ उदी॑च्या दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शादु॒ग्रं दे॒वमि॑ष्वा॒सम॑नुष्ठा॒तार॑मकुर्वन् ।८।
उ॒ग्र ए॑नं दे॒व इ॑ष्वा॒स उदी॑च्या दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद॑नु···वेद॑ ॥९॥ (४)
तस्मै॑ ध्रु॒वाया॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद् रु॒द्रमि॑ष्वा॒सम॑नुष्ठा॒तार॑मकुर्वन् ॥१०॥
रु॒द्र ए॑नमिष्वा॒सो ध्रु॒वाया॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद॑नु···वेद॑ ॥ ११ ॥ (५)
तस्मा॑ ऊ॒र्ध्वाया॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शान्म॑हादे॒वमि॑ष्वा॒सम॑नुष्ठा॒तार॑मकुर्वन् १२
म॒हा॒दे॒व ए॑नमिष्वा॒स ऊ॒र्ध्वाया॑ दि॒शो अ॑न्तर्दे॒शाद॑नु···वेद॑ ।१३। (६)
तस्मै॒ सर्वे॑भ्यो अन्तर्दे॒शेभ्य॒ ईशा॑नमिष्वा॒सम॑नुष्ठा॒तार॑मकुर्वन् ॥ १४ ॥
ईशा॑न एनमिष्वा॒सः सर्वे॑भ्यो अन्तर्दे॒शेभ्यो॑ऽनुष्ठा॒तानु॑ तिष्ठति॒ नैनं॑ श॒र्वो
न भ॒वो नेशा॑नः ॥ १५ ॥
नास्य॑ प॒शून् न स॑मा॒नान् हि॑नस्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥१६॥ (७) [१।५]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) ६

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१, ४ आसुरी पङ्क्तिः; २, १७ आर्ची पङ्क्तिः; ३ आर्षी पङ्क्तिः; ५, ११ साम्नी त्रिष्टुप्; ६, १२ निचृद् बृहती; ७, १०, १३, १६, २४ आसुरी बृहती; ८ साम्नी पङ्क्तिः; ९ प्राजापत्या त्रिष्टुप्; १४, २३ आर्ची त्रिष्टुप्; १५, १८ विराड् जगती; १९ आर्च्युष्णिक्; २० साम्न्यनुष्टुप्; २१ आर्ची बृहती; २२ परोष्णिक्; २५ आर्च्यनुष्टुप्; २६ विराड् बृहती ॥ मन्त्र २६।

स ध्रुवां दिशमनु व्य∫चलत् ॥ १ ॥

तं भूमिश्चाग्निश्चौषधयश्च वनस्पतयश्च वानस्पत्याश्च वीरुधश्चानुव्य∫चलन् ॥ २ ॥

भूमेश्च वै सोऽग्नेश्चौषधीनां च वनस्पतीनां च वानस्पत्यानां च वीरुधां च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ॥ ३ ॥ (१)

स ऊर्ध्वां दिशमनु व्य∫चलत् ॥ ४ ॥

तमृतं च सत्यं च सूर्यश्च चन्द्रश्च नक्षत्राणि चानुव्य∫चलन् ॥ ५ ॥

ऋतस्य च वै स सत्यस्य च सूर्यस्य च चन्द्रस्य च नक्षत्राणां च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ॥ ६ ॥ (२)

स उत्तमां दिशमनु व्य∫चलत् ॥ ७ ॥

तमृचश्च सामानि च यजूंषि च ब्रह्म चानुव्य∫चलन् ॥ ८ ॥

ऋचां च वै स साम्नां च यजुषां च ब्रह्मणश्च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ॥ ९ ॥ (३)

स बृहतीं दिशमनु व्य∫चलत् ॥ १० ॥

त॒मि॑तिहा॒सश्च॑ पुरा॒णं च॒ गाथा॑श्च नाराशं॒सीश्चा॑नु॒व्य॑चलन् ॥११॥
इ॒ति॒हा॒सस्य॑ च॒ वै स पु॑रा॒णस्य॑ च॒ गाथा॑नां च नाराशं॒सीनां॑ च प्रि॒यं
धाम॑ भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ १२ ॥ (४)
स प॑र॒मां दिश॒मनु॒ व्य॑चलत् ॥ १३ ॥
तमा॑हव॒नीय॑श्च॒ गार्ह॑पत्यश्च दक्षिणा॒ग्निश्च॑ य॒ज्ञश्च॒ यज॑मानश्च
प॒शव॑श्चानु॒व्य॑चलन् ॥ १४ ॥
आ॒ह॒व॒नीय॑स्य च॒ वै स गार्ह॑पत्यस्य च दक्षिणा॒ग्नेश्च॑ य॒ज्ञस्य॑ च॒
यज॑मान॒स्य च पशू॒नां च॑ प्रि॒यं धाम॑ भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥१५॥ (५)
सो॑ऽना॑दि॒ष्टां दिश॒मनु॒ व्य॑चलत् ॥ १६ ॥
त॒मृ॒तव॑श्चार्त॒वाश्च॑ लो॒का॑श्च लौ॒क्याश्च॒ मासा॑श्चार्धमा॒साश्चा॑होरा॒त्रे
चा॑नु॒व्य॑चलन् ॥ १७ ॥
ऋ॒तूनां॑ च॒ वै स आ॑र्त॒वानां॑ च॒ लोका॑नां च लौ॒क्यानां॑ च॒ मासा॑नां
चार्धमा॒सानां॑ चाहोरा॒त्रयो॑श्च प्रि॒यं धाम॑ भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ।१८। (६)
सो॑ऽना॑वृ॒त्तां दिश॒मनु॒ व्य॑चलत् ततो॒ नाव॒र्त्स्यन्न॑मन्यत ॥ १९ ॥
तं दिति॒श्चादि॑ति॒श्चेडा॑ चेन्द्रा॒णी चा॑नु॒व्य॑चलन् ॥ २० ॥
दिते॑श्च॒ वै सोऽदि॑ते॒श्चेडा॑याश्चेन्द्रा॒ण्याश्च॑ प्रि॒यं धाम॑ भवति॒ य ए॒वं
वेद॑ ॥ २१ ॥ (७)
स दिशोऽनु॒ व्य॑चलत् तं वि॒राड॑नु॒ व्य॑चलत् सर्वे॑ च दे॒वाः सर्वा॑श्च
दे॒वताः॑ ॥ २२ ॥

वि॒राज॑श्च॒ वै स सर्वे॑षां च दे॒वाना॒ं सर्वा॑सां च दे॒वता॑नां प्रि॒यं धाम॑
भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ २३ ॥ (८)

स सर्वा॑नन्तर्दे॒शाननु॒ व्यऽचलत् ॥ २४ ॥

तं प्र॒जाप॑तिश्च परमे॒ष्ठी च॑ पि॒ता च॑ पिताम॒हश्चा॑नु॒व्यऽचलन् ॥२५॥

प्र॒जाप॑तेश्च॒ वै स प॑रमे॒ष्ठिन॑श्च पि॒तुश्च॑ पिताम॒हस्य॑ च प्रि॒यं धाम॑ भवति॒
य ए॒वं वेद॑ ॥ २६ ॥ (९) [१।६]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) ७

ऋषिः— **अथर्वा** ॥ देवता— **अध्यात्मम्, व्रात्यः** ॥ छन्दः—१ त्रिपदा निचृद् गायत्री; २ एकपदा विराड् बृहती; ३ विराडुष्णिक्; ४ एकपदा गायत्री; ५ पङ्क्तः ॥ मन्त्र ५ ।

स म॑हि॒मा सद्रु॑र्भू॒त्वान्तं॑ पृथि॒व्या अ॑गच्छ॒त् स स॑मु॒द्रोऽभवत् ॥ १ ॥

तं प्र॒जाप॑तिश्च परमे॒ष्ठी च॑ पि॒ता च॑ पिताम॒हश्चाप॑श्च श्र॒द्धा च॑ व॒र्षं
भू॒त्वानु॒व्यऽवर्तयन्त ॥ २ ॥

ऐन॒मापो॑ गच्छ॒त्यैनं॑ श्र॒द्धा ग॑च्छ॒त्यैनं॑ व॒र्षं ग॑च्छति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥३॥

तं श्र॒द्धा च॑ य॒ज्ञश्च॑ लो॒कश्चान्नं॑ चा॒न्नाद्यं॑ च भू॒त्वाभिप॒र्याव॑र्तन्त ॥४॥

ऐनं॑ श्र॒द्धा ग॑च्छ॒त्यैनं॑ य॒ज्ञो ग॑च्छ॒त्यैनं॑ लो॒को ग॑च्छ॒त्यैन॒मन्नं॑
गच्छ॒त्यैनं॑म॒न्नाद्यं॑ गच्छति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ५ ॥ [१।७]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) ८

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ साम्न्युष्णिक्; २ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ३ आर्ची पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ३ ।

सो॑ऽरज्यत॒ ततो॑ राज॒न्यो॑ऽजायत ॥ १ ॥
स विश॒ः सब॑न्धू॒नन्न॑म॒न्नाद्य॑म॒भ्युद॑तिष्ठत् ॥ २ ॥
वि॒शां च॒ वै स सब॑न्धूना॒ं चान्न॑स्य चा॒न्नाद्य॑स्य च प्रि॒यं धाम॑ भवति॒
य ए॒वं वेद॑ ॥ ३ ॥ [२।१]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) ९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम् व्रात्यः ॥ छन्दः—१ आसुरी जगती. आर्ची गायत्री; ३ आर्ची पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ३ ।

स विशोऽनु॒ व्य॑चलत् ॥ १ ॥
तं स॒भा च॒ समि॑तिश्च॒ सेना॑ च॒ सुरा॑ चानु॒व्य॑चलन् ॥ २ ॥
स॒भाया॑श्च॒ वै स समि॑तेश्च॒ सेना॑याश्च॒ सुरा॑याश्च प्रि॒यं धाम॑ भवति॒
य ए॒वं वेद॑ ॥ ३ ॥ [२।२]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) १०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ द्विपदा साम्नी बृहती; २ त्रिपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः; ३ द्विपदा प्राजापत्या पङ्क्तिः; ४ त्रिपदा वर्धमाना गायत्री; ५ त्रिपदा साम्नी बृहती; ६, ८, १० द्विपदाऽऽसुरी गायत्री; ७, ९ साम्न्युष्णिक्; ११ आसुरी बृहती ॥ मन्त्र ११ ।

तद् यस्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्यो॒ राज्ञोऽति॑थिर्गृ॒हाना॒गच्छे॑त् ॥ १ ॥
श्रेयाँ॑समेनमा॒त्मनो॑ मानये॒त् तथा॑ क्ष॒त्राय॒ ना वृ॑श्चते॒ तथा॑ रा॒ष्ट्राय॒
ना वृ॑श्चते ॥ २ ॥

अतो॒ वै ब्रह्म॑ च क्ष॒त्रं चोद॑तिष्ठतां॒ ते अ॑ब्रूतां॒ कं प्र वि॑शा॒वेति॑ ॥ ३ ॥
अतो॒ वै बृह॒स्पति॑मे॒व ब्रह्म॒ प्रावि॑श॒त्विन्द्रँ क्ष॒त्रं तथा॒ वा इति॑ ॥ ४ ॥
अतो॒ वै बृह॒स्पति॑मे॒व ब्रह्म॒ प्रावि॑श॒दिन्द्रँ क्ष॒त्रम् ॥ ५ ॥
इ॒यं वा उ॑ पृथि॒वी बृह॒स्पति॒र्द्यौरे॒वेन्द्रः॑ ॥ ६ ॥
अ॒यं वा उ॑ अ॒ग्निर्ब्र॒ह्मासावा॑दि॒त्यः क्ष॒त्रम् ॥ ७ ॥
ऐनं॒ ब्रह्म॑ गच्छति ब्रह्मवर्च॒सी भ॑वति ॥ ८ ॥
यः पृ॑थि॒वीं बृह॒स्पति॑म॒ग्निं ब्रह्म॒ वेद॑ ॥ ९ ॥
ऐन॑मिन्द्रि॒यं ग॑च्छतीन्द्रि॒यवा॑न् भवति ॥ १० ॥
य आ॑दि॒त्यं क्ष॒त्रं दिव॒मिन्द्र॒ं वेद॑ ॥ ११ ॥ [२।३]

—:०:—

सूक्त ११

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता —अध्यात्मम् व्रात्यः ॥ छन्दः— १ देवी पङ्क्तिः; २ द्विपदा पूर्वात्रिष्टुपतिशक्वरी; ३ – ६, ८ निचृदार्ची बृहती; ७,—९ द्विपदा प्राजापत्या बृहती; १० भुरिगार्ची बृहती, ११ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप ॥ मन्त्र ११ ।

तद् य॒स्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्यो॑ऽतिथिर्गृ॒हाना॒गच्छे॑त् ॥ १ ॥
स्व॒यमे॑नमभ्यु॒देत्य॑ ब्रू॒याद् व्रात्य॒ क्वा॑ऽवात्सी॒र्व्रात्यो॑द॒कं व्रात्य॑ त॒र्पय॑न्तु
व्रात्य॒ यथा॑ ते प्रि॒यं तथा॑स्तु व्रात्य॒ यथा॑ ते॒ वश॒स्तथा॑स्तु व्रात्य॒ यथा॑
ते निका॒मस्तथा॒स्त्विति॑ ॥ २ ॥
यदे॑न॒माह॒ व्रात्य॒ क्वा॑ऽवात्सी॒रिति॑ प॒थ ए॒व तेन॑ देव॒याना॒नव॑ रुन्द्धे ।३।
यदे॑न॒माह॒ व्रात्यो॑द॒कमित्य॒प ए॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ॥ ४ ॥
यदे॑न॒माह॒ व्रात्य॑ त॒र्पय॒न्त्विति॑ प्रा॒णमे॒व तेन॒ वर्षी॑यांसं कुरुते ॥ ५ ॥

यदे॑न॒माह॒ व्रात्य॒ यथा॑ ते प्रि॒यं तथा॒स्त्विति॑ प्रि॒यमे॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ।६।
ऐनँ॑ प्रि॒यं ग॑च्छति प्रि॒यः प्रि॒यस्य॑ भवति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥७ ॥
यदे॑न॒माह॒ व्रात्य॒ यथा॑ ते॒ वश॒स्तथा॒स्त्विति॒ वशं॑मे॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ॥८॥
ऐन॒ं वशी॑ गच्छति व॒शी व॒शिनाँ॑ भवति॒ य ए॒वं बेद॑ ॥ ९ ॥
यदे॑न॒माह॒ व्रात्य॒ यथा॑ ते निका॒मस्तथा॒स्त्विति॑ निका॒ममे॒व तेनाव॑
रुन्द्धे ॥ १० ॥ ऐनँ॑ निका॒मो ग॑च्छति निका॒मे निका॒मस्य॑ भवति॒ य
ए॒वं वेद॑ ॥ ११ ॥ [२।४]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) १२

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ त्रिपदा गायत्री; २ प्राजापत्या बृहती; ३, ४ भुरिक् प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ५, ६, ९, १० आसुरी गायत्री; ८ विराड् गायत्री; ७, ११ त्रिपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ११ ।

तद्॒ यस्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्य॒ उद्धृ॑तेष्व॒ग्निष्वधि॑श्रितेऽग्निहो॒त्रेऽति॑थिर्गृ॒हाना॒
गच्छे॑त् ॥१॥ स्व॒यमे॑नमभ्यु॒देत्य॑ ब्रू॒या॒द् व्रात्याति॑ सृज हो॒ष्यामीति॑ ।२।
स चा॑तिसृ॒जेज्जु॑हु॒यान्न चा॑तिसृ॒जेन्न जु॑हुयात् ॥ ३ ॥
स य ए॒व वि॒दुषा॒ व्रात्ये॒नाति॑सृष्टो जु॒होति॑ ॥ ४ ॥ प्र पि॑तृ॒याणं॒ पन्थाँ॑
जानाति॒ प्र दे॑व॒यानं॑म् ॥५॥ न दे॒वेष्वा वृ॑श्चते हु॒तम॑स्य भवति ॥६॥
पर्य॑स्या॒स्मिँल्लो॒क आ॒यत॑नं शिष्यते॒ य ए॒वं वि॒दुषा॒ व्रात्ये॒नाति॑सृष्टो
जु॒होति॑ ॥ ७ ॥
अथ य ए॒वं वि॒दुषा॒ व्रात्ये॒नान॑तिसृष्टो जु॒होति॑ ॥ ८ ॥ न पि॑तृ॒याणं॒
पन्थाँ॑ जानाति॒ न दे॑व॒यानं॑म् ॥ ९ ॥

आ दे॒वेषु॑ वृश्चते॑ अहुतम॑स्य भवति ।१०। नास्या॒स्मिँल्लो॒क आ॒यत॑नं शिष्यते॒ य ए॒वं वि॒दुषा॒ व्रात्ये॒नान॑तिसृष्टो जु॒होति॑ ॥ ११ ॥ [२।५]

—:o:—

सूक्त १३

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ साम्न्युष्णिक्; २, ६ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ३, ५, ७ आसुरी गायत्री; ४, ८ साम्नी बृहती; ९ द्विपदा निचृद् गायत्री; १० द्विपदा विराड् गायत्री; ११ प्राजापत्या पङ्क्तिः; १२ आसुरी जगती; १३ सतःपङ्क्तिः; १४ अक्षरपंक्तिः ॥ मन्त्र १४ ।

तद् य॒स्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्य॒ एका॒॑ रात्रि॒मति॑थिर्गृ॒हे वस॑ति ॥ १ ॥
ये पृ॑थि॒व्यां पुण्या॑ लो॒कास्ता॒ने॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ॥ २ ॥ (१)
तद् य॒स्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्यो॑ द्वि॒तीया॒ं रात्रि॒मति॑थिर्गृ॒हे वस॑ति ॥ ३ ॥
ये॒॑ऽन्तरि॑क्षे॒ पुण्या॑ लो॒कास्ता॒ने॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ॥ ४ ॥ (२)
तद् य॒स्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्य॑स्तृ॒तीया॒ं रात्रि॒मति॑थिर्गृ॒हे वस॑ति ॥ ५ ॥
ये दि॒वि पुण्या॑ लो॒कास्ता॒ने॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ॥ ६ ॥ (३)
तद् य॒स्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्य॑श्चतु॒र्थीं रात्रि॒मति॑थिर्गृ॒हे वस॑ति ॥ ७ ॥
ये पुण्या॑ना॒ं पुण्या॑ लो॒कास्ता॒ने॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ॥ ८ ॥ (४)
तद् य॒स्यै॒वं वि॒द्वान् व्रात्यो॒ऽप॑रिमिता॒ रात्री॒रति॑थिर्गृ॒हे वस॑ति ॥ ९ ॥
य ए॒वाप॑रिमिता॒ः पुण्या॑ लो॒कास्ता॒ने॒व तेनाव॑ रुन्द्धे ॥ १० ॥ (५)
अथ यस्याव्रा॑त्यो व्रात्यब्रु॒वो नाम॑बिभ्र॒त्यति॑थिर्गृ॒हाना॒गच्छे॑त् ।११। (६)
कर्षे॑देनं॒ न चैनं॒ कर्षे॑त् ॥ १२ ॥ (७)

अ॒स्यै दे॒वता॑या उद॒कं या॑चामी॒मां दे॒वतां॑ वासय इ॒मामि॒मां दे॒वतां॒
परि॑ वेवे॒ष्मीत्ये॑नं॒ परि॑ वेविष्यात् ॥ १३ ॥ (८)
तस्या॑मे॒वास्य॒ तद् दे॒वता॑यां हु॒तं भ॑वति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥१४॥ (९) [२।६]

—:०:—

सूक्त १४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ त्रिपदाऽनुष्टुप्; २, ४, ६, ८, १०, २०, २२, २४, आसुरी गायत्री; ३, ९ पुरउष्णिक्; ५ अनुष्टुप्; ७ प्रस्तारपङ्क्तिः; ११ स्वराड् गायत्री; १२, १४, १६, १८ भुरिक् प्राजापत्याऽनुष्टुप्; १३, १५ आर्ची पङ्क्तिः; (१७, २३ आर्ची त्रिष्टुप्;) १९ भुरिङ्नाम्नी गायत्री; २१ प्राजापत्या त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २४।

स यत् प्राची॒ं दिश॒मनु॒ व्य॑चल॒न्मारु॑तं॒ शर्धो॑ भू॒त्वानु॒व्य॑चल॒न्मनो॑ऽन्ना॒दं
कृ॒त्वा ॥ १ ॥ मन॑सान्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ २ ॥ (१)
स यद् दक्षि॑णा॒ं दिश॒मनु॒ व्य॑चल॒दिन्द्रो॑ भू॒त्वानु॒व्य॑चल॒द् बल॑मन्ना॒दं
कृ॒त्वा ॥ ३ ॥ बले॑नान्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ४ ॥ (२)
स यत् प्र॒तीची॒ं दिश॒मनु॒ व्य॑चल॒द् वरु॑णो राजा॑ भू॒त्वानु॒व्य॑चलद॒पो॑ऽन्ना॒दीः
कत्वा ॥५॥ अ॒द्भिर॑न्ना॒दीभि॒रन्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ६ ॥ (३)
स यदुदी॑ची॒ं दिश॒मनु॒ व्य॑चल॒त् सोमो॒ राजा॑ भू॒त्वानु॒व्य॑चलत् सप्त॒र्षिभि॑र्हु॒त
आहु॑तिमन्ना॒दीं कृ॒त्वा ॥ ७ ॥
आहु॑त्यान्ना॒द्यान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ ८ ॥ (४)
स यद् ध्रु॒वां दिश॒मनु॒ व्य॑चल॒द् विष्णु॑र्भू॒त्वानु॒व्य॑चलद् वि॒राज॑मन्ना॒दीं
कृ॒त्वा ॥ ९ ॥ वि॒राजा॑न्ना॒द्यान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ १० ॥ (५)

स यत् प॒शून॑नु॒ व्यच॑लद् रु॒द्रो भू॒त्वानु॒व्य॑चल॒दोष॑धीरन्ना॒दीः
कृ॒त्वा ।११। ओष॑धीभिरन्ना॒दीभि॒रन्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ १२ ॥ (६)
स यत् पि॒तॄननु॒ व्यच॑लद् य॒मो राजा॑ भू॒त्वानु॒व्य॑चलत् स्वधाका॒रम॑न्ना॒दं
कृ॒त्वा । १३ । स्व॒धा॒का॒रेणा॑न्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥१४॥ (७)
स यन्म॑नु॒ष्या॒३ननु॒ व्यच॑लद॒ग्निर्भू॒त्वानु॒व्य॑चलत् स्वाहाका॒रम॑न्ना॒दं
कृ॒त्वा ।१५। स्वा॒हा॒का॒रेणा॑न्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑॥ १६ ॥ (८)
स यदू॒र्ध्वां दिश॒मनु॒ व्यच॑ल॒द् बृह॒स्पति॑र्भू॒त्वानु॒व्य॑चलद् वषट्का॒रम॑न्ना॒दं कृ॒त्वा ।१७। व॒ष॒ट्का॒रेणा॑न्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥१८ (९)
स यद् दे॒वाननु॒ व्यच॑ल॒दीशा॑नो भू॒त्वानु॒व्य॑चलन्म॒न्युम॑न्ना॒दं
कृ॒त्वा ॥१९॥ म॒न्युना॑न्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ २० ॥ (१०)
स यत् प्र॒जा अनु॒ व्यच॑लत् प्र॒जाप॑तिर्भू॒त्वानु॒व्य॑चलत् प्रा॒णम॑न्ना॒दं
कृ॒त्वा ॥२१॥ प्रा॒णेना॑न्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥ २२ ॥ (११)
स यत् सर्वा॑नन्तर्दे॒शाननु॒ व्यच॑लत् परमे॒ष्ठी भू॒त्वानु॒व्य॑चल॒द् ब्रह्मा॑न्ना॒दं
कृ॒त्वा ।२३। ब्रह्म॑णान्ना॒देनान्न॑मत्ति॒ य ए॒वं वेद॑ ॥२४॥ (१२) [२।७]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) १५

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१ दैवी पङ्क्तिः; २ आसुरी बृहती; ३ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ४, ७, ८ भुरिक् प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ५, ६ द्विपदा साम्नी बृहती; ९ विराड् गायत्री; (३—९ तस्य व्रात्यस्येत्यस्योक्तम्) ॥ मन्त्र ९ ।

तस्य॒ व्रात्य॑स्य ॥ १ ॥ स॒प्त प्रा॒णाः स॒प्तापा॒नाः स॒प्त व्या॒नाः ॥ २ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य प्रथ॒मः प्रा॒ण ऊ॒र्ध्वो नामा॒यं सो अ॒ग्निः ॥३॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य द्वि॒तीयः॑ प्रा॒णः प्रौ॒ढो नामा॒सौ स आ॑दि॒त्यः ॥ ४ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य तृ॒तीयः॑ प्रा॒णो॒३॒॑भ्यू॒ऽढो नामा॒सौ स च॒न्द्रमाः॑ ।५। तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य च॒तु॒र्थः प्रा॒णो वि॒भूर्नामा॒यं स पव॑मानः ॥ ६ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य प॒ञ्च॒मः प्रा॒णो योनि॒र्नाम॒ ता इ॒मा आपः॑ ।७।

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य ष॒ष्ठः प्रा॒णः प्रि॒यो नाम॒ त इ॒मे प॒शवः॑ ॥८॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य स॒प्त॒मः प्रा॒णोऽप॑रिमितो॒ नाम॒ ता इ॒माः प्र॒जाः ॥ ९ ॥ [२।८]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) १६

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अध्यात्मम्, व्रात्यः ॥ छन्दः—१, ३ साम्न्युष्णिक्; २, ४, ५ प्राजापत्योष्णिक्; ६ याजुषी त्रिष्टुप्; ७ आसुरी गायत्री; (१—७ तस्य व्रात्यस्येत्यस्योक्तम्) ॥ मन्त्र ७ ।

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य प्रथ॒मोऽपा॒नः सा पौ॒र्णमा॒सी ॥ १ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य द्वि॒तीयो॑ऽपा॒नः साष्ट॑का ॥ २ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य तृ॒तीयो॑ऽपा॒नः सामा॑वा॒स्याऽ ॥ ३ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य च॒तु॒र्थोऽपा॒नः सा श्र॒द्धा ॥ ४ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य प॒ञ्च॒मोऽपा॒नः सा दी॒क्षा ॥ ५ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य ष॒ष्ठोऽपा॒नः स य॒ज्ञः ॥ ६ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य स॒प्त॒मोऽपा॒नस्ता इ॒मा दक्षि॑णाः ।७। (२।९)

—:०:—

सूक्त (पर्याय) १७

ऋषिः—अथर्वा । देवता—अध्यात्मम् व्रात्यः ॥ छन्दः—१, ५ प्राजापत्योष्णिक्; २, ७ आसुर्यनुष्टुप्; ३ याजुषी पङ्क्तिः; ४ साम्न्युष्णिक् ६ याजुषी त्रिष्टुप्; ८ प्रतिष्ठाऽऽर्ची पङ्क्तिः; ९ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप्; १० साम्न्यनुष्टुप्; (१—१० तस्य व्रात्यस्येत्यस्योक्तम) ॥ मन्त्र १० ।

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य प्रथमो व्या॒नः सेयं भूमि॑ः ॥ १ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य द्वितीयो॑ व्या॒नस्तद॒न्तरि॑क्षम् ॥ २ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य तृ॒तीयो॑ व्या॒नः सा द्यौः ॥ ३ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य च॒तु॒र्थो॑ व्या॒नस्तानि॒ नक्ष॑त्राणि ॥ ४ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य पञ्च॒मो व्या॒नस्त ऋ॒तवः॑ ॥ ५ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य ष॒ष्ठो व्या॒नस्त आ॑र्त॒वाः ॥ ६ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । योऽस्य स॒प्त॒मो व्या॒नः स सं॑वत्स॒रः ॥ ७ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । स॒मा॒नमर्थं॒ परि॑ यन्ति दे॒वाः सं॑वत्स॒रं वा ए॒तदृ॒तवो॑ऽनु॒परि॑यन्ति॒ व्रात्यं॑ च ॥ ८ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । यदा॑दि॒त्यम॑भिसं॑वि॒शन्त्य॑मा॒वास्यां॑ऽचै॒व तत् पौर्ण॑मा॒सीं च॑ ॥ ९ ॥

तस्य॒ व्रात्य॑स्य । एक॒ं तदे॑षाममृत॒त्वमित्याहु॑तिरे॒व ॥ १० ॥ [२।१०]

—:०:—

सूक्त (पर्याय) १८

ऋषि: अथर्वा ।। देवता —अध्यात्मम्, व्रात्यः ।। छन्दः—१ दैवी पङ्क्तिः; २, ३ आर्ची बृहती; ४ आर्च्यनुष्टुप्; ५ साम्न्युष्णिक् ।। मन्त्र ५ ।

त॒स्य व्रात्य॑स्य ॥ १ ॥

यद॑स्य॒ दक्षि॑णम॒क्ष्य॑सौ स आ॑दि॒त्यो यद॑स्य स॒व्यम॒क्ष्य॑सौ स च॒न्द्रमाः॑ ॥ २ ॥

यो॑ऽस्य॒ दक्षि॑णः॒ कर्णो॒ऽयं सो अ॒ग्निर्यो॑ऽस्य स॒व्यः कर्णो॒ऽयं स पव॑मानः ॥ ३ ॥

अ॒हो॒रा॒त्रे नासि॑के॒ दिति॒श्चादि॑तिश्च शीर्षकपा॒ले सं॑वत्स॒रः शिरः॑ ॥ ४ ॥

अह्ना॑ प्र॒त्यङ् व्रात्यो॒ रात्र्या॒ प्राङ् नमो॒ व्रात्या॑य ॥ ५ ॥ [२।११]

॥ पंचदशं काण्डम् समाप्तम् ॥

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ षोडशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः– अथर्वा ।। देवता – प्रजापतिः ।। छन्दः – १, ३ द्विपदा साम्नी बृहती; २,
१० याजुषी त्रिष्टुप्; ४ आसुरी गायत्री; ५, ८ द्विपदा साम्नी पङ्क्तिः; ६ साम्न्य-
नुष्टुप्; ७ निचृद् (द्विपदा) विराड् गायत्री; ९ आसुरी पङ्क्तिः; ११ साम्न्युष्णिक्;
१२, १३ (द्विपदा) आर्च्यनुष्टुप् ।। मन्त्र १३ ।

अति॑सृष्टो अ॒पां वृ॑ष॒भोऽति॑सृष्टा अ॒ग्नयो॑ दि॒व्याः ॥ १ ॥

रु॒जन् प॑रिरु॒जन् मृ॒णन् प्र॑मृ॒णन् ॥ २ ॥

म्रो॒को म॑नो॒हा ख॒नो नि॑र्दा॒ह आ॑त्म॒दूषि॑स्तनू॒दूषिः॑ ॥ ३ ॥

इ॒दं तमति॑ सृजामि॒ तं माभ्यव॑निक्षि ॥ ४ ॥

तेन॒ तम॒भ्यति॑सृजामो॒ यो॒३॑स्मा॒न् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः ॥ ५ ॥

अ॒पामग्र॑मसि समु॒द्रं वो॒ऽभ्यव॑सृजामि ॥ ६ ॥

यो॒३॑प्स्व॑१॒ग्निरति॒ तं सृ॑जामि म्रो॒कं ख॒निं त॑नू॒दूषि॑म् ॥ ७ ॥

यो व॑ आपो॒ऽग्निरा॑वि॒वेश॒ स ए॒ष यद् वो॑ घो॒रं तदे॒तत् ॥ ८ ॥

इन्द्र॑स्य व इन्द्रि॒येणा॒भि षि॑ञ्चेत् ॥ ९ ॥

अ॒रि॒प्रा आपो॒ अप॑ रि॒प्रम॒स्मत् ॥ १० ॥

प्रास्मदेनो॑ वहन्तु॒ प्र दुः॒ष्वप्न्यं॑ वहन्तु ॥ ११ ॥
शि॒वेन॑ मा॒ चत्तु॑षा पश्यतापः शि॒वया॑ त॒न्वोप॑ स्पृशत॒ त्वचं॑ मे ॥१२॥
शि॒वान॒ग्नीन॑प्सु॒षदो॑ हवामहे॒ मयि॑ क्ष॒त्रं वर्च॒ आ ध॑त्त देवीः ।१३[१।१]

—:०:—

[पर्याय] सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—वाक् ॥ छन्दः—१ आसुर्यनुष्टुप्; २ आसुर्युष्णिक्; ३ साम्न्युष्णिक्; ४ त्रिपदा साम्नी बृहती; ५ आर्च्यनुष्टुप्; ६ निचृद (द्विपदा) विराड गायत्री ॥ मन्त्र ६ ।

निर्दु॑रर्म॒ण्यऽऊ॒र्जा मधु॑मती॒ वाक् ॥ १ ॥
मधु॑मती स्थ॒ मधु॑मतीं॒ वाच॑मुदेयम् ॥ २ ॥
उप॑हूतो मे॒ गो॒पा उप॑हूतो गोपी॒थः ॥ ३ ॥
सु॒श्रु॒तौ॒ कर्णौ॑ भद्र॒श्रुतौ॒ कर्णौ॑ भ॒द्रं श्लोकं॑ श्रूयासम् ॥ ४ ॥
सुश्रु॑तिश्च॒ मोप॑श्रुतिश्च॒ मा हा॑सिष्टां॒ सौप॑र्णं॒ चत्तु॒रज॑स्रं॒ ज्योतिः॑ ॥ ५ ॥
ऋषी॑णां प्रस्त॒रोऽसि॒ नमो॑ऽस्तु॒ दैवा॑य प्रस्त॒राय॑ ॥ ६ ॥ [१।२]

—:०:—

[पर्याय] सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—ब्रह्मादित्यौ ॥ छन्दः—१ आसुरी गायत्री; २, ३ आर्च्यनुष्टुप्; ४ प्राजापत्या त्रिष्टुप्; ५ साम्न्युष्णिक्; ६ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

मू॒र्धाहं र॑यी॒णां मू॒र्धा स॑मा॒नानां॑ भूयासम् ॥ १ ॥
रु॒जश्च॑ मा वे॒नश्च॒ मा हा॑सिष्टां मू॒र्धा च॑ मा॒ विध॑र्मा च॒ मा हा॑सिष्टाम् ॥ २ ॥

उ॒र्वश्च॑ मा चम॒सश्च॒ मा हा॑सिष्टां ध॒र्ता च॑ मा ध॒रुण॑श्च॒ मा हा॑सिष्टाम्
वि॒मोक॑श्च॒ मा॒र्द्रप॑विश्च॒ मा हा॑सिष्टामा॒र्द्रदा॑नुश्च मा मा॒तरि॑श्वा च॒
मा हा॑सिष्टाम् ॥ ४ ॥
बृ॒ह॒स्पति॑र्म आ॒त्मा॑ नृ॒मणा॒ नाम॒ हृद्यः॑ ॥ ५ ॥
अ॒सं॒ता॒पं मे॒ हृद॑यमु॒र्वी गव्यू॑तिः समु॒द्रो अ॑स्मि॒ विध॑र्मणा ॥६॥ [१।३]

—:०:—

[पर्याय] सूक्त ४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता - ब्रह्मादित्यौ ॥ छन्दः—१, ३ साम्न्यनुष्टुप्; २ साम्न्युष्णिक्; ४ त्रिपदाऽनुष्टुप्; ५ आसुरी गायत्री; ६ आर्च्युष्णिक्; ७ त्रिपदा विराड्गर्भाऽनुष्टुप्; ॥ मंत्र ७ ।

नाभि॑र॒हं र॑यी॒णां नाभिः॑ समा॒नानां॑ भूयासम् ॥ १ ॥
स्वा॒सद॑सि सू॒षा अ॒मृतो॒ मर्त्ये॒ष्वा ॥ २ ॥
मा मां प्रा॒णो हा॑सी॒न्मो अ॑पा॒नो॑ऽव॒हाय॒ परा॑ गात् ॥ ३ ॥
सूर्यो॒ माह्नः॑ पात्व॒ग्निः पृ॑थि॒व्या वा॒युर॒न्तरि॑क्षाद् य॒मो म॑नु॒ष्ये॑ऽभ्यः॒
सर॑स्वती पार्थि॑वेभ्यः ॥ ४ ॥
प्रा॒णा॑पा॒नौ मा मा॑ हासिष्टं॒ मा जने॒ प्र मे॑षि ॥ ५ ॥
स्व॒स्त्य॑२द्योषसो॑ दो॒षस॑श्च॒ सर्व॑ आप॒ः सर्व॑गणो अशीय ॥ ६ ॥
शक्व॑री स्थ प॒शवो॒ मोप॑ स्थेषुर्मि॒त्राव॑रुणौ मे प्राणापा॒नाव॒ग्निर्मे॒ दक्षं॑
दधातु ॥ ७ ॥ [१।४]

—:०:—

[पर्याय] सूक्त ५

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—१, ४—६ (प्र०) विराड् गायत्री; २, ४—७ (द्वि०), ९ प्राजापत्या गायत्री; ३, ४—७ (तृ०), १० द्विपदा साम्नी बृहती; ७ (प्र०) भुरिग् विराड् गायत्री; ८ स्वराड् विराड् गायत्री ।मंत्र १०।

विद्म ते स्वप्न जनित्रं ग्राह्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥ १ ॥
अन्तकोऽसि मृत्युरसि ॥ २ ॥
तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्म स नः स्वप्न दुष्वप्न्यात् पाहि ।३। (१)
विद्म ते स्वप्न जनित्रं निर्ऋत्याः पुत्रोऽसि यमस्य करणः । अन्तकोऽसि० दुःष्वन्यात् पाहि ॥ ४ ॥ (२)
विद्म ते स्वप्न जनित्रमभूत्याः पुत्रोऽसि···पाहि ॥ ५ ॥ (३)
विद्म ते स्वप्न जनित्रं निर्भूत्याः पुत्रोऽसि···पाहि ॥ ६ ॥ (४)
विद्म ते स्वप्न जनित्रं पराभूत्याः पुत्रोऽसि···पाहि ॥ ७ ॥ (५)
विद्म ते स्वप्नजनित्रं देवजामीनां पुत्रोऽसि यमस्य करणः ॥ ८ ॥
अन्तकोऽसि मृत्युरसि ॥ ९ ॥ तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्म स नः स्वप्न दुःष्वप्न्यात् पाहि ॥ १० ॥ (६) [२।१]

—:०:—

[पर्याय] सूक्त ६

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम्, उषा ॥ छन्दः—१–४ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ५ साम्नी पङ्क्तिः; ६ निचृदार्ची बृहती; ७ द्विपदा साम्नी बृहती; ८ आसुरी जगती; ९ आसुरी बृहती; १० आर्च्युष्णिक्; ११ त्रिपदा यवमध्या गायत्री वा आर्च्यनुष्टुप् वा ॥ मन्त्र ११ ।

अजैष्माद्यासनामाद्याभूमानागसो वयम् ॥ १ ॥

उ॒षो यस्मा॑द् दु॒ःष्वप्न्या॒दभै॒ष्माप॒ तदु॑च्छतु ॥ २ ॥
द्वि॒ष॒ते तत् परा॑ वह॒ शप॑ते॒ तत् परा॑ वह ॥ ३ ॥
यं द्वि॒ष्मो यश्च॑ नो॒ द्वेष्टि॒ तस्मा॑ एनद् गमयामः ॥ ४ ॥
उ॒षा दे॒वी वा॒चा सँविदा॒ना वाग् दे॒व्यु॑१॒षसा॑ सविदा॒ना ॥ ५ ॥
उ॒षस्पति॑र्वा॒चस्पति॑ना संविदा॒नो वा॒चस्पति॑रु॒षस्पति॑ना संविदा॒नः ।६।
ते॒३॒मुष्मै॒ परा॑ वहन्त्व॒राया॑न् दु॒र्णाम्न॑ः स॒दान्वा॑ः ॥ ७ ॥
कु॒म्भोका॑ दू॒षीका॒ः पीय॑कान् ॥ ८ ॥
जा॒ग्र॒द्दु॒ःष्व॒प्न्यं स्व॑प्नेदुःष्व॒प्न्यम् ॥ ९ ॥
अना॑गमिष्यतो॒ वरा॒नवि॑त्तेः संक॒ल्पानमु॑च्या द्रु॒हः पाशा॑न् ॥ १० ॥
तद॒मुष्मा॑ अग्ने दे॒वाः परा॑ वहन्तु॒ वध्रि॒र्यथास॒द् विथु॑रो॒ न सा॒धुः ॥११॥
[२।२]

—:०:—

[पर्याय] सूक्त ७

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—१ पङ्क्तिः । २ साम्न्यनुष्टुप्; ३ आसुर्युष्णिक्; ४ प्राजापत्या गायत्री; ५ आर्च्युष्णिक्; ६, ९, ११ साम्नी बृहती; ७ याजुषी गायत्री; ८ प्राजापत्या बृहती; १० साम्नी गायत्री; १२ भुरिक् प्राजापत्याऽनुष्टुप्; १३ आसुरी त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १३ ।

तेनै॑नं वि॒ध्या॒म्यभू॑त्यैनं विध्यामि॒ निर्भू॑त्यैनं विध्यामि॒ । परा॑भूत्यैनं विध्यामि॒ ग्राह्यै॑नं विध्यामि॒ तम॑सैनं विध्यामि ॥ १ ॥
दे॒वाना॑मेनं घो॒रैः क्रू॒रैः प्रै॒षैर॑भि॒प्रेष्या॑मि ॥ २ ॥
वै॒श्वा॒न॒रस्यै॑नं॒ दंष्ट्र॑यो॒रपि॑ दधामि ॥ ३ ॥
ए॒वाने॒वाव॒ सा गर॑त् ॥ ४ ॥

यो॒३॑स्मान् द्वेष्टि॒ तमा॒त्मा द्वे॑ष्टु॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः स आ॒त्मानँ॑ द्वेष्टु ॥५॥
निर्द्वि॒षन्तँ॑ दि॒वो निः पृ॑थि॒व्या निर॒न्तरि॑क्षाद् भजाम ॥ ६ ॥
सुया॑मंश्चाक्षुष ॥ ७ ॥
इ॒दम॒हमा॑मुष्यायणे॒३॒मुष्याः॑ पु॒त्रे दु॒ःष्वप्न्यँ॑ मृजे ॥ ८ ॥
यद्॒दोअ॑दो अ॒भ्यग॑च्छन् यद् दो॒षा यत् पूर्वा॒ रात्रि॑म् ॥ ९ ॥
यज्जाग्र॒द् यत् सु॒प्तो यद् दिवा॒ यन्नक्त॑म् ॥ १० ॥
यद॑हरहरभि॒गच्छा॑मि॒ तस्मा॑दे॒नमव॑ दये ॥ ११ ॥
तं ज॑हि॒ तेन॑ मन्दस्व॒ तस्य॑ पृ॒ष्टीरपि॑ शृणीहि ॥ १२ ॥
स मा जी॑वी॒त् तं प्रा॒णो ज॑हातु ॥ १३ ॥ [२।३]

—:०:—

[पर्याय] सूक्त ८

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—१, ५—२९ (प्र०) ३० एकपदा यजुर्ब्राह्म्यनुष्टुप्; २, ५—२९ (द्वि०), ३१ त्रिपदा निचृद् गायत्री; ३ प्राजापत्या गायत्री; ४, ५—२९ (च०), ३३ त्रिपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप्; ५—७, १२, २०, २२, २७ (सर्वेषां तृ०) आसुरी जगती; ८, १०, ११, १३, १४, १६, २१ (सर्वेषां तृ०) आसुरी त्रिष्टुप्; ९, १५, १७—१९, २३—६ (सर्वेषां तृ०), ३२ आसुरी पङ्क्तिः; २८, २९ (द्वयोः तृ०) आसुरी बृहती ॥ मन्त्र ३३ ।

जि॒तम॒स्माक॒मुद्भि॑न्नम॒स्माक॑मृ॒तम॒स्माक॒ं तेजो॒ऽस्माक॒ं ब्रह्मा॒स्माक॒ं स्व१॒॑रस्माकँ॑ य॒ज्ञो॒३॒ऽस्माकँ॑ प॒शवो॒ऽस्माकँ॑ प्र॒जा अ॒स्माकँ॑ वी॒रा अ॒स्माक॑म् ॥ १ ॥
तस्मा॑दमुं निर्भ॑जामो॒ऽमुमा॑मुष्यायणम॒मुष्याः॑ पु॒त्रम॒सौ यः ॥ २ ॥
स ग्राह्या॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि ॥ ३ ॥

तस्ये॒दं व॒र्च॒स्तेजः॑ प्रा॒णमायु॒र्नि वे॑ष्टयामी॒दमे॑नमध॒राञ्चं॑ पादयामि ॥४॥
(१)

जि॒तम॒···स निर्ऋ॑त्या॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ ५ ॥ (२)
जि॒तम॒···सोऽभू॑त्या॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ ६ ॥ (३)
जि॒तम॒···स निर्भू॑त्या॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ ७ ॥ (४)
जि॒तम॒···स परा॑भूत्या॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ ८ ॥ (५)
जि॒तम॒···स दे॑वजामीनां पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ ९ ॥ (६)
जि॒तम॒···स बृह॒स्पते॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १० ॥ (७)
जि॒तम॒···स प्र॒जाप॑ते॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ ११ ॥ (८)
जि॒तम॒···स ऋषी॑णां पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १२ ॥ (९)
जि॒तम॒···स आ॑र्षे॒याणा॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १३ ॥ (१०)
जि॒तम॒···सोऽङ्गि॑रसा॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १४ ॥ (११)
जि॒तम॒···स आ॑ङ्गिर॒साना॒ं पाशान्मा मो॑चि० ॥ १५ ॥ (१२)
जि॒तम॒···सोऽथ॑र्वणा॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १६ ॥ (१३)
जि॒तम॒···स आ॑थर्व॒णानां पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १७ ॥ (१४)
जि॒तम॒···स वन॒स्पती॑ना॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १८ ॥ (१५)
जि॒तम॒···स वा॑नस्प॒त्याना॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ १९ ॥ (१६)
जि॒तम॒···स ऋ॑तू॒नां पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ २० ॥ (१७)
जि॒तम॒···स आ॑र्त॒वाना॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ २१ ॥ (१८)
जि॒तम॒···स मासा॑ना॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ २२ ॥ (१९)
जि॒तम॒···सो॑ऽर्धमा॒साना॒ं पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ २३ ॥ (२०)
जि॒तम॒···सो॑ऽहोरा॒त्रयो॒ः पाशा॒न्मा मो॑चि० ॥ २४ ॥ (२१)

जि॒तम्॒···सो॑ऽह्नोः सं॑य॒तोः पा॒शान्मा म चि॰ ॥ २५ ॥ (२२)

जि॒तम्॒···स द्यावा॑पृथि॒व्योः पा॒शान्मा मौचि॰ ॥ २६ ॥ (२३)

जि॒तम्॒···स इ॑न्द्रा॒ग्न्योः पा॒शान्मा मौचि॰ ॥ २७ ॥ २४)

जि॒तम्॒···स मि॒त्रावरु॑णयो॒ः पा॒शान्मा मौचि॰ ॥ २८ ॥ २५)

जि॒तम्॒···स रा॒ज्ञो वरु॑णस्य॒ पा॒शान्मा मौचि॰ ॥ २९ ॥ २६)

जि॒तम॒स्माक॒मुद्भि॑न्नम॒स्माक॑मृ॒तम॒स्माक॒ं तेजो॒ऽस्माक॒ं ब्रह्मा॒स्माक॒ं स्व∫॒रस्माकँ॑ य॒ज्ञो॒३॒ऽस्माकँ॑ प॒शवो॒ऽस्माकँ॑ प्र॒जा अ॒स्माकँ॑ वी॒रा अ॒स्माक॑म् ॥ ३० ॥

तस्मा॑द॒मुं निर्भ॑जामो॒ऽमुमा॑मुष्याय॒णम॒मुष्याः॑ पु॒त्रम॒सौ यः ॥ ३१ ॥

स मृ॒त्योः पड्वी॑शात् पा॒शान्मा मौचि॰ ॥ ३२ ॥ तस्ये॒दं वर्च॒स्तेजः॑ प्रा॒णमायु॒र्नि वे॑ष्टयामी॒दम॑नमध॒राञ्चँ॑ पादयामि ॥ ३३ (२७) [४।२]

—:०:—

पर्याय सूक्त ९

ऋषिः—यमः ॥ देवता —१ प्रजापतिः; २ मन्त्रोक्ताः; ३, ४ सूर्यः ॥ छन्दः—१ आर्च्यनुष्टुप्; २ आर्च्युष्णिक्; ३ साम्नी पङ्क्तिः; ४ परोष्णिक् ॥ मन्त्र ४

जि॒तम॒स्माक॒मुद्भि॑न्नम॒स्माक॑म॒भ्य∫ष्ठां॒ विश्वाः॒ पृत॑ना॒ अरा॑तीः ॥ १ ॥

तद॒ग्निरा॑ह॒ तदु॒ सोम॑ आह पू॒षा मा॑ धात् सुकृ॒तस्य॑ लो॒के ॥ २ ॥

अग॑न्म॒ स्व॒१॒ः स्व∫रगन्म॒ सं सूर्य॑स्य॒ ज्योति॒षाग॑न्म ॥ ३ ॥

वस्यो॒भूया॑य॒ वसु॑मान् य॒ज्ञो वसु॑ वंशि॒षीय॒ वसु॑मान् भूयास॒ं वसु॒ मयि धेहि ॥ ४ ॥ [२।५]

॥ षोडशं काण्डम् समाप्तम् ॥

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ सप्तदशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषि: ब्रह्मा ॥ देवता - आदित्यः ॥ छन्दः—१, २७, ३० जगती; २—५ अतिजगती; ६, ७, १९ अत्यष्टिः; ८, ११, १६, अतिधृतिः; ९, १४, १५ पञ्चपदा शक्वरी; १० अष्टपदा धृतिः; १२ कृतिः; १३ प्रकृतिः; १७ पञ्चपदा विराडतिशक्वरी; १८ भुरिगष्टिः २० ककुप् (?); २१ चतुष्पदोपरिष्टाद् बृहती; २२, २५, २६ अनुष्टुप्; २३ निचृद् बृहती; २४ विराडत्यष्टिः; २८, २९ त्रिष्टुप्; (१—५ षट्पदा: ११—१३, १६, १८, १९, २४ सप्तपदा) । मंत्र ३० ।

वि॒षा॒स॒हिं सह॑मानं सास॒हानं॑ सही॑यांसम् । सह॑मानं सहो॒जितँ॑ स्व॒र्जितँ॑
गोजितँ॑ संधना॒जित॑म् । ईड्यं॒ नाम॑ ह्व॒ इन्द्र॒मायु॑ष्मान् भूयासम् ॥ १ ॥
वि॒षा॒स॒हिं०···ईड्यं॒ नाम॑ ह्व॒ इन्द्रँ॑ प्रि॒यो दे॒वानाँ॑ भूयासम् ॥ २ ॥
वि॒षा॒स॒हिं०···ईड्यं॒ नाम॑ ह्व॒ इन्द्रँ॑ प्रि॒यः प्र॒जानाँ॑ भूयासम् ॥ ३ ॥
वि॒षा॒स॒हिं०···ईड्यं॒ नाम॑ ह्व॒ इन्द्रँ॑ प्रि॒यः प॑शू॒नां भू॑यासम् ॥ ४ ॥
विषा॒स॒हिं०···ईड्यं॒ नाम॑ ह्व॒ इन्द्रँ॑ प्रि॒यः स॑मा॒नानाँ॑ भू॒यासम् ॥ ५ ॥
उदि॒ह्युदि॑हि सूर्य॒ वर्च॑सा मा॒भ्युदि॑हि । द्वि॒षंश्च॒ मह्यं॒ रध्य॑तु॒ मा चा॒हं
द्वि॒ष॒ते र॑धं॒ तवेद् वि॑ष्णो बहुधा वी॒र्या॑णि । त्वं न॑ः पृणीहि प॒शुभि॑-
र्वि॒श्वरू॑पैः सु॒धायाँ॑ मा धेहि पर॒मे व्यो॑मन् ॥ ६ ॥

उदि॒ह्युदि॑हि सूर्य॒ वर्च॑सा मा॒भ्युदि॑हि । यांश्च॒ पश्या॑मि॒ यांश्च॒ न तेषु॑ मा
सु॒म॒तिं कृ॑धि॒ तवेद् विष्णो बहु॒धा वी॒र्या॑णि । त्वं नः॰···॥ ७ ॥
मा त्वा॑ दभन्त्सलि॒ले अ॒प्स्व१॒॑न्तर्ये॑ पा॒शिन॑ उप॒तिष्ठ॒न्त्यत्र॑ । हि॒त्वा-
श॑स्तिं॒ दिव॒मारु॑क्ष ए॒तां स नो॑ मृड सु॒मतौ॑ ते॑ स्याम॒ तवेद्...॥ ८ ॥
त्वं न॑ इन्द्र म॒हते सौभ॑गा॒याद॑ब्धेभिः॒ परि॑ पाह्य॒क्तुभि॒स्तवेद्॰···॥९॥
त्वं न॑ इन्द्रो॒तिभिः॑ शि॒वाभिः॒ शंत॑मो भव । आ॒रोहं॑स्त्रिदि॒वं दि॒वो
गृ॑णा॒नः सोम॑पीतये प्रि॒यधा॑मा स्व॒स्तये॒ तवेद्॰···॥ १० ॥ (१)
त्वमि॑न्द्रासि विश्व॒जित् स॑र्व॒वित् पु॑रुहू॒तस्त्वमि॑न्द्र । त्वमि॑न्द्रे॒मं सु॒हवं॒
स्तोम॒मेर॑यस्व॒ स नो॑ मृड सु॒मतौ॑ ते॑ स्याम॒ तवेद्॰···॥ ११ ॥
अद॑ब्धो दि॒वि पृ॑थि॒व्यामु॒तासि॒ न त॑ आपुर्महि॒मान॑म॒न्तरि॑क्षे । अद॑ब्धेन॒
ब्रह्म॑णा वावृ॒धानः॒ स त्वं न॑ इन्द्र दि॒वि षं॒छर्म॑ यच्छ॒ तवेद्॰···॥१२॥
या त॑ इन्द्र त॒नूर॒प्सु या पृ॑थि॒व्यां यान्तर॒ग्नौ या त॑ इन्द्र॒ पव॑माने
स्व॒र्विदि॑ । ययेन्द्र त॒न्वा॒३॒॑न्तरि॑क्षं व्यापि॒थ तया॑ न इन्द्र त॒न्वा॒३॒ शर्म॑
यच्छ॒ तवेद् विष्णो बहु॒धा वी॒र्या॑णि । त्वं नः॑ पृणीहि॰व्यो॑मन् ।१३।
त्वामि॑न्द्र॒ ब्रह्म॑णा व॒र्धय॑न्तः स॒त्रं नि षे॑दु॒र्ऋष॑यो॒ नाध॑माना॒स्तवेद्॰···१४
त्वं तृ॒तं त्वं पर्ये॒ष्युत्सं॑ स॒हस्र॑धारं वि॒दथं॑ स्व॒र्विदं॒ तवेद्॰···॥ १५ ॥
त्वं र॑क्षसे प्र॒दिश॒श्चत॑स्र॒स्त्वं शो॒चिषा॒ नभ॑सी॒ वि भा॑सि । त्वमि॒मा
विश्वा॒ भुव॒नानु॑ तिष्ठस ऋ॒तस्य॒ पन्था॒मन्वे॑षि वि॒द्वांस्तवेद्॰···॥१६॥
प॒ञ्चभिः॒ परा॒ङ् तप॒स्येक॑या॒र्वाङश॑स्तिमेषि सु॒दिने॒ बाध॑माना॒स्तवेद्॰।१७।

त्वमिन्द्रस्त्वं महेन्द्रस्त्वं लोकस्त्वं प्रजापतिः । तुभ्यँ यज्ञो वि तायते
तुभ्यँ जुह्वति जुह्वतस्तवेद् विष्णो बहुधा वीर्याणि । त्वं नः० ॥१८॥
असति सत् प्रतिष्ठितं सति भूतं प्रतिष्ठितम् । भूतं ह भव्य आहितं
भव्यँ भूते प्रतिष्ठितं तवेद् विष्णो बहुधा वीर्याणि । त्वं नः० ॥१९॥
शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि । स यथा त्वं भ्राजता भ्राजोऽस्येवाहं भ्राजता
भ्राज्यासम् ॥ २० ॥ (२)
रुचिरसि रोचोऽसि । स यथा त्वं रुच्या रोचोऽस्येवाहं पशुभिश्च
ब्राह्मणवर्चसेन च रुचिषीय ॥ २१ ॥
उद्यते नम उदायते नम उदिताय नमः । विराजे नमः स्वराजे नमः
सम्राजे नमः ॥ २२ ॥
अस्तंयते नमोऽस्तमेष्यते नमोऽस्तमिताय नमः । विराजे नमः स्वराजे
नमः सम्राजे नमः ॥ २३ ॥
उदगादयमादित्यो विश्वेन तपसा सह । सपत्नान् मह्यँ रन्धयन् मा
चाहं द्विषते रधं । तवेद् विष्णो बहुधा वीर्याणि । त्वं नः पृणीहि
पशुभिर्विश्वरूपैः सुधायाँ मा धेहि परमे व्योमन् ॥ २४ ॥
आदित्य नावमारुक्षः शतारित्रां स्वस्तये । अहर्मात्यपीपरो रात्रिं
सत्राति पारय ॥ २५ ॥
सूर्य नावमारुक्षः शतारित्रां स्वस्तये । रात्रिं मात्यपीपरोऽहः सत्राति
पारय ॥ २६ ॥

प्र॒जाप॑ते॒रावृ॑तो॒ ब्रह्म॑णा॒ वर्म॑णा॒हं क॒श्यप॑स्य॒ ज्योति॑षा॒ वर्च॑सा च।
ज॒रद॑ष्टिः कृ॒तवी॑र्यो॒ विहा॑याः स॒हस्रा॑यु॒ः सुकृ॑तश्चरेयम् ॥ २७ ॥
परी॑वृ॒तो ब्रह्म॑णा॒ वर्म॑णा॒हं क॒श्यप॑स्य॒ ज्योति॑षा॒ वर्च॑सा च। मा मा॒
प्राप॒न्निष॑वो॒ दैव्या॒ या मा मानु॑षी॒रव॑सृष्टा व॒धाय॑ ॥ २८ ॥
ऋ॒तेन॑ गु॒प्त ऋ॒तुभि॑श्च॒ सर्वै॑र्भू॒तेन॑ गु॒प्तो भव्ये॑न चा॒हम्। मा मा॒ प्राप॑त्
पा॒प्मा मोत मृ॒त्युर॒न्तर्द॑धे॒ऽहं स॑लि॒लेन॑ वा॒चः ॥ २९ ॥
अ॒ग्निर्मा॑ गो॒प्ता परि॑ पातु वि॒श्वत॑ उ॒द्यन्त्सूर्यो॑ नु॒दतां॑ मृत्युपा॒शान्।
व्यु॒च्छन्ती॑रु॒षसः॒ पर्व॑ता ध्रु॒वाः स॒हस्रं॑ प्रा॒णा मय्या यत॑न्ताम् ॥ ३० ॥
(३) [१।१]

॥ सप्तदशं काण्डम् समाप्तम् ॥

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथाष्टादशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—यमः, मन्त्रोक्ताः, ४० रुद्रः; ४१—४३ सरस्वती; ४४—४६, ५१, ५२ पितरः ॥ छन्दः—१—७, ६—१३, १६, १७, २४—३६, ३६—४८, ५१—५५, ५८, ६० त्रिष्टुप्; ८, १५ आर्षी पङ्क्तिः; १४, ४६, ५० भुरिक् त्रिष्टुप्; १८—२३ जगती; ३७, ३८ परोष्णिक्; ५६, ५७, ६१ अनुष्टुप्; ५६ पुरोबृहती ॥ मन्त्र ६१ ॥

ओ चि॒त् सखा॑यं स॒ख्या व॑वृत्यां ति॒रः पु॒रू चि॑दर्ण॒वं ज॑ग॒न्वान् ।
पि॒तुर्नपा॑त॒मा द॑धीत वे॒धा अधि॒ क्षमि॑ प्रत॒रं दीध्या॑नः ॥ १ ॥
न ते॒ सखा॑ स॒ख्यं व॑ष्ट्ये॒तत् सल॑क्ष्मा॒ यद् विषु॑रूपा॒ भवा॑ति ।
म॒हस्पु॒त्रासो॒ असु॑रस्य वी॒रा दि॒वो ध॒र्तार॑ उर्वि॒या परि॑ ख्यन् ॥ २ ॥
उ॒शन्ति॑ घा॒ ते अ॒मृता॑स ए॒तदेक॑स्य चित् त्य॒जसं॒ मर्त्य॑स्य । नि ते॒
मनो॒ मन॑सि धाय्य॒स्मे जन्युः॒ पति॑स्त॒न्व१॒मा वि॑विश्याः ॥ ३ ॥
न यत् पु॒रा च॑कृ॒मा कद्ध॑ नू॒नमृ॒तं वद॑न्तो॒ अनृ॑तं रपेम । ग॒न्ध॒र्वो
अ॒प्स्वप्या॑ च॒ योषा॒ सा नौ॒ नाभिः॑ पर॒मं जा॒मि तन्नौ॑ ॥ ४ ॥
गर्भे॒ नु नौ॑ जनि॒ता दम्प॑ती कर्दे॒वस्त्वष्टा॑ सवि॒ता वि॒श्वरू॑पः । नकि॑रस्य॒
प्र मि॑नन्ति व्र॒तानि॒ वेद॑ नाव॒स्य पृ॑थि॒वी उ॒त द्यौः ॥ ५ ॥

को अ॒द्य यु॑ङ्क्ते धु॒रि गा ऋ॒तस्य॒ शिमी॑वतो भा॒मिनो॑ दुर्हृ॒णायू॒न् ।
आ॒सन्नि॑षून् हृ॒त्स्वसो॑ मयो॒भून् य ए॑षां भृ॒त्यामृ॒णध॒त् स जी॑वात् ॥६॥
को अ॒स्य वे᳚द प्रथ॒मस्याह्नः॒ क ईं᳚ ददर्श॒ क इ॒ह प्र वो॑चत् । बृ॒हन्मि॒त्रस्य॒
वरु॑णस्य॒ धाम॒ कदु॑ ब्रव आहनो॒ वीच्या॒ नॄन् ॥ ७ ॥
य॒मस्य॑ मा य॒म्यं᳚१ काम॒ आग॑न्त्समा॒ने योनौ॑ सह॒शेय्या॑य । जा॒येव॒
पत्ये᳚ त॒न्वं∫ रिरिच्या॒ं वि चि॑द् वृहेव॒ रथ्ये᳚व च॒क्रा ॥ ८ ॥
न ति॑ष्ठन्ति॒ न नि मि॑षन्त्ये॒ते दे॒वानां॒ स्पश॑ इ॒ह ये चर॑न्ति । अ॒न्येन॒
मदा॑हनो याहि॒ तूयं॒ तेन॒ वि वृ॑ह॒ रथ्ये॑व च॒क्रा ॥ ९ ॥
रात्री॑भिरस्मा॒ अह॑भिर्दशस्ये॒त् सूर्य᳚स्य॒ चक्षु॒र्मुहु॒रुन्मि॑मीयात् । दि॒वा
पृ॑थि॒व्या मि॑थु॒ना सब॑न्धू य॒मीर्य॒मस्य॑ विवृहा॒दजा॑मि ॥ १० ॥ (१)
आ घा॒ ता ग॑च्छा॒नुत्त॑रा यु॒गानि॒ यत्र॑ जा॒मय॑ः कृ॒णव॒न्नजा॑मि । उप॑
बर्बृहि वृष॒भाय॑ बा॒हुम॒न्यमि॑च्छस्व सुभगे॒ पति॒ं मत् ॥ ११ ॥
किं भ्राता॑स॒द् यद॑ना॒थं भवा॑ति॒ किमु॒ स्वसा॒ यन्निर्ऋ॑तिर्नि॒गच्छा॑त् ।
काम॑मूता ब॒ह्वे॒३॒तद् र॑पामि त॒न्वा∫ मे त॒न्वं᳚१ सं पि॑पृग्धि ॥ १२ ॥
न ते᳚ ना॒थं य॒म्यत्रा॒हम॑स्मि॒ न ते᳚ त॒नूं त॒न्वा॒३ सं प॑पृच्याम् । अ॒न्येन॒
मत् प्र॒मुद॑ः कल्पयस्व॒ न ते॒ भ्राता॑ सुभगे वष्ट्ये॒तत् ॥ १३ ॥
न वा उ॑ ते त॒नूं त॒न्वा॒३ सं प॑पृच्यां पा॒पमा॑हु॒र्यः स्वसा॑रं नि॒गच्छा॑त् ।
अस᳚ंयदे॒तन्मन॑सो हृ॒दो मे॒ भ्राता॒ स्वसु॒ः शय॑ने॒ यच्छ॑यीय ॥ १४ ॥

ब॒तो ब॑तासि यम॒ नैव ते॒ मनो॒ हृद॑यं चाविदाम । अ॒न्या किल॒ त्वां
क॒च्ये॑]व यु॒क्तं परि॑ ष्वजातै॒ लिबु॑जेव वृ॒क्षम् ॥ १५ ॥
अ॒न्यमू॒ षु य॑म्य॒न्य उ॒ त्वां परि॑ ष्वजातै॒ लिबु॑जेव वृ॒क्षम् । तस्य॑ वा॒
त्व मन॑ इ॒च्छा स वा॒ तवाधा॑ कृणुष्व सं॒विद्॒ सुभ॑द्राम् ॥ १६ ॥
त्रीणि॒ च्छन्दां॑सि क॒वयो॒ वि ये॑तिरे पु॒रु॒रूपँ॑ द॒र्श॒तं वि॒श्वच॑क्षणम् ।
आपो॒ वाता॒ ओष॑धय॒स्तान्येक॑स्मि॒न् भुव॑न॒ आर्पि॑तानि ॥ १७ ॥
वृषा॒ वृष्णे॑ दुदु॒हे॒ दोह॑सा दि॒वः पयां॑सि य॒ह्वो अदि॑ते॒रदा॑भ्यः । विश्वं॒
स वे॑द॒ वरु॑णो॒ यथा॑ धि॒या स य॒ज्ञियो॑ यजति य॒ज्ञियाँ॑ ऋ॒तून् ।१८।
रप॑द्॒ गन्ध॒र्वीरप्या॑ च॒ योष॑णा न॒दस्य॑ ना॒दे परि॑ पातु नो॒ मन॑ः ।
इ॒ष्टस्य॒ मध्ये॒ अदि॑ति॒र्नि धा॑तु नो॒ भ्राता॑ नो ज्ये॒ष्ठः प्र॑थ॒मो वि
वो॑चति ॥ १९ ॥
सो चि॒न्नु भ॒द्रा क्षु॒मती॒ यश॑स्वत्यु॒षा उ॑वास॒ मन॑वे॒ स्व]र्वती । यदी॑-
मु॒शन्त॑मुश॒तामनु॒ क्रतु॑म॒ग्निं होता॑रं वि॒दथा॑य॒ जीज॑नन् ॥ २० ॥ (२)
अध॒ त्यं द्र॒प्सं वि॒भ्वं॑] विचक्ष॒णं विराभ॑रदिषि॒रः श्ये॒नो अ॑ध्व॒रे । यदु॒
विशो॑ वृ॒णते॑ द॒स्ममार्या॑ अ॒ग्निं होता॑र॒मध॒ धीर॑जायत ॥ २१ ॥
सदा॑सि र॒ण्वो यव॑सेव॒ पुष्य॑ते॒ होत्रा॑भिरग्ने॒ मनु॑षः स्वध्व॒रः । विप्र॑स्य
वा॒ यच्छ॑शमा॒न उ॒क्थ्यो॒३ वाजं॑ सस॒वाँ॑ उप॒यासि॒ भूरि॑भिः ॥ २२ ॥
उदी॑रय पि॒तरा॑ जा॒र आ भग॒मिय॑क्षति हर्य॒तो हृ॒त्त इ॑ष्यति । विव॑क्ति॒
वह्निः॑ स्वप॒स्यते॑ म॒खस्त॑वि॒ष्यते॒ असु॑रो॒ वेप॑ते म॒ती ॥ २३ ॥

यस्ते॑ अग्ने सुम॒तिं मर्तो॒ अख्य॒त् सह॑सः सूनो॒ अति॒ स प्र शृ॑ण्वे।
इषं॒ दधा॑नो॒ वह॑मानो॒ अश्वै॒रा स द्युमाँ अम॑वान् भूषति॒ द्यून् ॥ २४ ॥

श्रुधी नो॑ अग्ने॒ सद॑ने स॒धस्थे॑ युक्ष्वा रथ॑म॒मृत॑स्य द्रवि॒त्नुम्। आ नो॑
वह॒ रोद॑सी दे॒वपु॑त्रे॒ माकि॑र्दे॒वाना॒मप॑ भूरि॒ह स्याः॑ ॥ २५ ॥

यद॑ग्न ए॒षा समि॑ति॒र्भवा॑ति दे॒वी दे॒वेषु॑ यज॒ता य॑जत्र। रत्ना॑ च॒ यद्
वि॒भजा॑सि स्वधावो भा॒गं नो॒ अत्र॒ वसु॑मन्तं वीतात् ॥ २६ ॥

अन्व॒ग्निरु॒षसा॒मग्र॑मख्य॒दन्वहा॑नि प्रथ॒मो जा॒तवे॑दाः। अनु॒ सूर्य॑ उ॒षसो॒
अनु॑ र॒श्मीननु॒ द्यावा॑पृथि॒वी आ वि॑वेश ॥ २७ ॥

प्रत्य॒ग्निरु॒षसा॒मग्र॑मख्य॒त् प्रत्यहा॑नि प्रथ॒मो जा॒तवे॑दाः। प्रति॒ सूर्य॑स्य
पुरु॒धा च॑ र॒श्मीन् प्रति॒ द्यावा॑पृथि॒वी आ त॑तान ॥ २८ ॥

द्यावा॑ ह॒ क्षामा॑ प्रथ॒मे ऋ॒तेना॑भिश्रा॒वे भ॑वतः सत्य॒वाचा॑। दे॒वो
यन्मर्ता॑न् य॒जथा॑य कृ॒ण्वन्त्सीद॒द्धोता॑ प्र॒त्यङ् स्वमसुं॒ यन् ॥ २९ ॥

दे॒वो दे॒वान् प॑रि॒भूर्ऋ॒तेन॒ वहा॑ नो ह॒व्यं प्र॑थ॒मश्चि॑कि॒त्वान्। धू॒मके॑तुः
स॒मिधा॒ भाऋ॑जीको म॒न्द्रो होता॒ नित्यो॑ वा॒चा यजी॑यान् ॥ ३० ॥ (३)

अर्चा॑मि वां॒ वर्धा॒यापो॑ घृतस्नू॒ द्यावा॑भूमी शृणु॒तं रो॑दसी मे। अहा॒
यद् दे॒वा असु॑नीति॒माय॒न् मध्वा॑ नो॒ अत्र॑ पि॒तरा॑ शिशीताम् ॥ ३१ ॥

स्वावृ॑ग् दे॒वस्या॒मृतं॒ यदी॒ गोरतो॑ जा॒तासो॑ धारयन्त उ॒र्वी। विश्वे॑ दे॒वा
अनु॒ तत् ते॒ यजु॑र्गुर्दु॒हे यदेनी॑ दि॒व्यं घृतं॑ वाः ॥ ३२ ॥

किं स्वि॑न्नो॒ राजा॑ जगृहे॒ कद॒स्याति॑ व्र॒तं च॑कृमा॒ को वि वे॑द । मि॒त्र-
श्चि॒द्धि ष्मा॑ जुहुरा॒णो दे॒वांछ्लोको॒ न या॒ताम॑पि॒ वाजो॒ अस्ति ॥३३॥
दु॒र्मन्त्वत्रा॒मृत॑स्य॒ नाम॒ सल॑क्ष्मा॒ यद् विषु॑रूपा॒ भवा॑ति । य॒मस्य॒ यो
म॒नव॑ते सु॒मन्त्वग्ने॒ तमृ॑ष्व पा॒ह्यप्र॑युच्छन् ॥ ३४ ॥

यस्मि॑न् दे॒वा वि॒दथे॑ मा॒दय॑न्ते वि॒वस्व॑तः॒ सद॑ने धा॒रय॑न्ते । सूर्ये॒
ज्योति॒रद॑धुर्मा॒स्य॑१क्तून् परि॑ द्योत॒निं च॑रतो॒ अज॑स्रा ॥ ३५ ॥

यस्मि॑न् दे॒वा मन्म॑नि सं॒चर॑न्त्यपी॒च्ये॒३ न व॒यम॑स्य वि॒द्म । मि॒त्रो
नो॒ अत्रादि॑ति॒रना॑गान्त्सवि॒ता दे॒वो वरु॑णाय वोचत् ॥ ३६ ॥

सखा॑य॒ आ शि॑षामहे॒ ब्रह्मेन्द्रा॑य व॒ज्रिणे॑ । स्तुष॒ ऊ॒ षु नृत॑माय
धृ॒ष्णवे॑ ॥ ३७ ॥

शव॑सा॒ ह्यसि॑ श्रु॒तो वृ॑त्र॒हत्ये॑न वृत्र॒हा । म॒घैर्म॒घोनो॒ अति॑ शूर
दाशसि ॥ ३८ ॥

स्ते॒गो न क्षाम॒त्ये॑षि पृथि॒वीं म॒ही नो॒ वाता॑ इ॒ह वा॑न्तु॒ भूमौ॑ । मि॒त्रो
नो॒ अत्र॒ वरु॑णो यु॒ज्यमा॑नो अ॒ग्निर्वने॒ न व्यसृ॑ष्ट शोक॑म् ॥ ३९ ॥

स्तु॒हि श्रु॒तं ग॑र्त॒सदं॒ जना॑नां॒ राजा॑नं भी॒ममु॑पह॒त्नुमु॒ग्रम् । मृ॒डा ज॑रि॒त्रे
रु॑द्र॒ स्तवा॑नो अ॒न्यम॒स्मत् ते॒ नि व॑पन्तु॒ सेन्य॑म् ॥ ४० ॥ (४)

सर॑स्वतीं देव॒यन्तो॑ हवन्ते॒ सर॑स्वतीमध्व॒रे ता॒यमा॑ने । सर॑स्वतीं सु॒कृतो॑
हवन्ते॒ सर॑स्वती दा॒शुषे॒ वार्यं॑ दात् ॥ ४१ ॥

सरस्वतीं पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः । आसद्यास्मिन्
बर्हिषि मादयध्वमनमीवा इष आ धेह्यस्मे ॥ ४२ ॥
सरस्वति या सरथं ययाथोक्थैः स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती । सहस्रार्घमिडो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानाय धेहि ॥ ४३ ॥
उदीरतामवर उत् परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः । असुं य
ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥ ४४ ॥
आहं पितॄन्त्सुविदत्राँ अवित्सि नपातं च विक्रमणं च विष्णोः ।
बर्हिषदो ये स्वधया सुतस्य भजन्त पित्वस्त इहागमिष्ठाः ॥ ४५ ॥
इदं पितृभ्यो नमो अस्त्वद्य ये पूर्वासो ये अपरास ईयुः । ये पार्थिवे
रजस्या निषत्ता ये वा नूनं सुवृजनासु दिक्षु ॥ ४६ ॥
मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्वभिर्वावृधानः । यांश्च देवा
वावृधुर्ये च देवांस्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥ ४७ ॥
स्वादुष्किलायं मधुमाँ उतायं तीव्रः किलायं रसवाँ उतायम् । उतो
न्व१स्य पपिवांसमिन्द्रं न कश्चन सहत आहवेषु ॥ ४८ ॥
परेयिवांसं प्रवतो महीरिति बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम् । वैवस्वतं
संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा सपर्यत ॥ ४९ ॥
यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ । यत्रा नः
पूर्वे पितरः परेता एना जज्ञानाः पथ्या३ अनु स्वाः ॥ ५० ॥ (५)

ब॒र्हि॑षदः पितर ऊ॒त्य१॒र्वागि॒मा वो॑ ह॒व्या च॑कृमा जु॒षध्व॑म् । त आ
ग॒ताव॑सा॒ शंत॑मे॒नाधा॑ न॒ः शं योर॑र॒पो द॑धात ॥ ५१ ॥

आच्या॒ जानु॑ दक्षिण॒तो नि॒षद्ये॒दं नो॑ ह॒विर॒भि गृ॑णन्तु॒ विश्वे॑ । मा
हिं॑सिष्ट पितरः॒ केन॑ चिन्नो॒ यद्॒ व॒ आगः॑ पुरु॒षता॒ करा॑म ॥ ५२ ॥

त्वष्टा॑ दुहि॒त्रे व॑ह॒तुं कृ॑णोति॒ तेने॒दं विश्वं॒ भुव॑नं॒ समे॑ति । य॒मस्य॑ मा॒ता
प॒र्यु॒ह्यमा॑ना म॒हो जा॒या विव॑स्वतो ननाश ॥ ५३ ॥

प्रेहि॒ प्रेहि॑ प॒थिभिः॑ पू॒र्याणै॒र्येना॑ ते॒ पूर्वे॑ पि॒तरः॒ परे॑ताः । उ॒भा राजा॑नौ
स्व॒धया॒ मद॑न्तौ य॒मं प॑श्यासि॒ वरु॑णं च दे॒वम् ॥ ५४ ॥

अपे॑त॒ वी॑त॒ वि च॑ सर्प॑तातो॒ऽस्मा ए॒तं पि॒तरो॑ लो॒कम॑क्रन् । अहो॑भि-
र॒द्भिर॒क्तुभि॒र्व्य॑क्तं य॒मो द॑दात्यव॒सान॑मस्मै ॥ ५५ ॥

उ॒शन्त॑स्त्वेधीमह्यु॒शन्तः॒ समि॑धीमहि । उ॒शन्नु॑श॒त आ व॑ह पि॒तॄन्
ह॒विषे॒ अत्त॑वे ॥ ५६ ॥

द्यु॒मन्त॑स्त्वेधीमहि द्यु॒मन्तः॒ समि॑धीमहि । द्यु॒मान् द्यु॑म॒त आ व॑ह पि॒तॄन्
ह॒विषे॒ अत्त॑वे ॥ ५७ ॥

अङ्गि॑रसो नः पि॒तरो॒ नव॑ग्वा॒ अथ॑र्वाणो॒ भृग॑वः सो॒म्यासः॑ । तेषां॑ व॒यं
सु॑म॒तौ य॒ज्ञिया॑ना॒मपि॑ भ॒द्रे सौ॑मन॒से स्या॑म ॥ ५८ ॥

अङ्गि॑रोभिर्य॒ज्ञियै॒रा ग॑ही॒ह य॒मं वै॑रू॒पैरि॒ह मा॑दयस्व । विव॑स्वन्तं हुवे॒ यः
पि॒ता ते॒ऽस्मिन् ब॒र्हिष्या नि॒षद्य॑ ॥ ५९ ॥

इ॒मं य॑म प्रस्त॒रमा हि रोहाङ्गि॑रोभिः पि॒तृभि॑ः संवि॒दा॒नः । आ त्वा॒
मन्त्रा॑ः कविश॒स्ता व॑हन्त्वे॒ना रा॑जन् ह॒विषो॑ मादयस्व ॥ ६० ॥

इ॒त ए॒त उदारु॑हन् दि॒वस्पृ॒ष्ठान्यारु॑हन् । प्र भू॒र्जयो॒ यथा॑ प॒था
द्यामङ्गि॑रसो य॒युः ॥ ६१ ॥ [६] (१।१)

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—यमः; मन्त्रोक्ताः ४, ३४ अग्निः; ५ जातवेदाः; २९ पितरः ॥ छन्दः—१—३, ६, १४—१८, २०, २२, २३, २५, ३०, ३४, ३६, ६० त्रिष्टुप्; १९ त्रिपदा गायत्री; २४ त्रिपदा समविषमाऽऽर्षी गायत्री; ३७ विराड् जगती; ३८, ३९, ४१ आर्षी गायत्री; ४०, ४२—४४ भुरिगार्षी गायत्री; ४५ ककुम्मत्यनुष्टुप् ॥ मन्त्र ६० ।

(In print the lines run: ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—यमः; मन्त्रोक्ताः ४, ३४ अग्निः; ५ जातवेदाः; २९ / पितरः ॥ छन्दः—१—३, ६, १४—१८, २०, २२, २३, २५, ३०, ३४, ३६, / ४६, ४८, ५०—५२, ५६ अनुष्टुप्; ४, ७, ९, १३ जगती; २६, ४९, ५७ भुरिक् / त्रिष्टुप्; ८, १०—१२, २१, २७—२९, ३१—३३, ३५, ४७, ५३—५५, ५८— / ...)

य॒माय॒ सोम॑ः पवते य॒माय॑ क्रियते ह॒विः । य॒मं ह॑ य॒ज्ञो ग॑च्छत्य॒ग्नि-
दू॒तो अरं॑कृतः ॥ १ ॥

य॒माय॒ मधु॑मत्तमं जु॒होता॒ प्र च॑ तिष्ठत । इ॒दं नम॒ ऋषि॑भ्यः पूर्व॒जेभ्य॒ः
पूर्वे॑भ्यः पथि॒कृद्भ्य॑ः ॥ २ ॥

य॒माय॑ घृ॒तव॑त् पयो॒ राज्ञे॑ ह॒विर्जु॑होतन । स नो॑ जी॒वेष्वा य॑मेद्
दी॒र्घमायु॒ः प्र जी॒वसे॑ ॥ ३ ॥

मैन॑मग्ने॒ वि द॑हो॒ माभि शू॑शुचो॒ मास्य॒ त्वचं॑ चिक्षिपो॒ मा शरी॑रम् ।
शृ॒तं य॒दा कर॑सि जातवे॒दोऽथे॑मेनं॒ प्र हि॑णुतात् पि॒तॄँरुप॑ ॥ ४ ॥

य॒दा शृ॒तं कृ॒णवो॑ जातवे॒दोऽथे॒ममे॑नं॒ परि॑ दत्तात पि॒तृभ्यः॑ । य॒दो
गच्छा॒त्यसु॑नीतिमे॒तामथ॑ दे॒वानां॑ वश॒नीर्भ॑वाति ॥ ५ ॥
त्रिक॑द्रुकेभिः पवते॒ षडु॒र्वीरेक॒मिद् बृ॒हत् । त्रि॒ष्टुब् गा॑य॒त्री छन्दां॑सि॒
सर्वा॒ ता य॒म आर्पि॑ता ॥ ६ ॥
सूर्यं॒ चक्षु॑षा गच्छ॒ वात॑मा॒त्मना॒ दिवं॑ च॒ गच्छ॑ पृथि॒वीं च॒ धर्म॑भिः ।
अ॒पो वा॑ गच्छ॒ यदि॒ तत्र॑ ते हि॒तमोष॑धीषु॒ प्रति॑ तिष्ठा॒ शरी॑रैः ॥ ७ ॥
अ॒जो भा॒गस्तप॑स॒स्तं त॑पस्व॒ तं ते॑ शो॒चिस्त॑पतु॒ तं ते॑ अ॒र्चिः । यास्ते॑
शि॒वास्त॒न्वो॑ जातवेद॒स्ताभि॑र्वहैनं सु॒कृता॑मु लो॒कम् ॥ ८ ॥
यास्ते॑ शो॒चयो॒ रंह॑यो जातवेदो॒ याभि॑रापृ॒णासि॒ दिव॑म॒न्तरि॑क्षम् । अ॒जं
यन्त॒मनु॒ ताः समृ॑ण्वता॒मथेत॑राभिः शि॒वत॑माभिः शृ॒तं कृ॑धि ॥ ९ ॥
अव॑ सृज॒ पुन॑रग्ने पि॒तृभ्यो॒ यस्त॒ आहु॑त॒श्चर॑ति स्व॒धावा॑न् । आयु॒-
र्वसा॑न॒ उप॑ यातु॒ शेषः॑ सं ग॑च्छतां त॒न्वा॑ सु॒वर्चाः॑ ॥ १० ॥ (७)
अति॑ द्रव॒ श्वानौ॑ सारमे॒यौ च॑तुर॒क्षौ श॒बलौ॑ सा॒धुना॑ प॒था । अधा॑
पि॒तॄन्त्सु॑वि॒दत्रा॒ँ अपी॑हि य॒मेन॒ ये स॑ध॒मादं॒ मद॑न्ति ॥ ११ ॥
यौ ते॒ श्वानौ॑ यम रक्षि॒तारौ॑ चतुर॒क्षौ प॑थि॒षदी॑ नृ॒चक्ष॑सा । ताभ्यां॑
राज॒न् परि॑ धेह्येनं स्व॒स्त्य॑स्मा अनमी॒वं च॑ धेहि ॥ १२ ॥
उ॒रू॒ण॒साव॑सु॒तृपा॑वुदुम्ब॒लौ य॒मस्य॑ दू॒तौ च॑रतो॒ जना॒ँ अनु॑ । ताव॒स्मभ्यं॑
दृ॒शये॒ सूर्या॑य॒ पुन॑र्दाता॒मसु॑म॒द्येह भ॒द्रम् ॥ १३ ॥

सोम॒ एके॑भ्यः पवते घृ॒तमेक॒ उपा॑सते । येभ्यो॒ मधु॑ प्र॒धाव॑ति॒ तांश्चि॑दे॒वापि॑ गच्छतात् ॥ १४ ॥

ये चि॒त् पूर्व॑ ऋ॒तसा॑ता ऋ॒तजा॑ता ऋता॒वृधः॑ । ऋषी॒न् तप॑स्वतो यम तपो॒जाँ अपि॑ गच्छतात् ॥ १५ ॥

तप॑सा॒ ये अ॑नाधृ॒ष्यास्तप॑सा॒ ये स्व॑र्य॒युः । तपो॒ ये च॑क्रि॒रे मह॒स्तांश्चि॑दे॒वापि॑ गच्छतात् ॥ १६ ॥

ये यु॒ध्य॑न्ते प्र॒धने॑षु॒ शूरा॑सो॒ ये त॑नू॒त्यजः॑ । ये वा॑ स॒हस्र॑दक्षिणा॒स्तांश्चि॑दे॒वापि॑ गच्छतात् ॥ १७ ॥

स॒हस्र॑णीथाः क॒वयो॒ ये गो॑पा॒यन्ति॒ सूर्य॑म् । ऋषी॒न् तप॑स्वतो यम तपो॒जाँ अपि॑ गच्छतात् ॥ १८ ॥

स्यो॒नास्मै॑ भव पृथिव्यनृक्ष॒रा नि॒वेश॑नी । यच्छा॑स्मै॒ शर्म॑ स॒प्रथाः॑ ।१९।

अ॒सं॒बा॒धे पृ॑थि॒व्या उ॒रौ लो॒के नि धी॑यस्व । स्व॒धा याश्च॑कृ॒षे जीव॒न् तास्ते॑ सन्तु मधु॒श्चुतः॑ ॥ २० ॥ (८)

ह्वया॑मि ते॒ मन॑सा॒ मन॑ इ॒हेमान् गृ॒हाँ उप॑ जुजुषा॒ण एहि॑ । सं ग॑च्छस्व पि॒तृभि॒ः सं य॒मेन॑ स्यो॒नास्त्वा॒ वाता॒ उप॑ वा॑न्तु श॒ग्माः ॥ २१ ॥

उत् त्वा॑ वहन्तु म॒रुत॑ उदवा॒हा उ॑द॒प्रुतः॑ । अ॒जेन॑ कृ॒ण्वन्तः॑ शी॒तं व॒र्षेणौक्षन्तु॒ बालिति॑ ॥ २२ ॥

उद॑ह्व॒मायु॒रायु॑षे॒ क्रत्वे॒ दक्षा॑य जी॒वस । स्वान् ग॑च्छतु ते॒ मनो॒ अधा॑ पि॒तॄँरुप॑ द्रव ॥ २३ ॥

मा ते॒ मनो॒ मासो॒र्माङ्गा॑नां॒ मा रस॑स्य ते । मा ते॑ हास्त त॒न्व१॒ः किं च॒नेह ॥ २४ ॥

मा त्वा॑ वृ॒क्षः सं बा॑धिष्ट॒ मा दे॒वी पृ॑थि॒वी म॒ही । लो॒कं पि॒तृषु॑ वि॒त्त्वैध॑स्व य॒मरा॑जसु ॥ २५ ॥

यत् ते॒ अङ्ग॒मति॑हितं परा॒चैर॑पा॒नः प्रा॒णो य उ॑ वा ते॒ परे॑तः । तत् ते॑ सं॒गत्य॑ पि॒तरः॒ सनी॑डा घा॒साद् घा॒सं पु॒नरा वे॑शयन्तु ॥ २६ ॥

अपे॒मं जी॒वा अ॑रुधन् गृ॒हेभ्य॒स्तं निर्व॑हत॒ परि॒ ग्रामा॑दि॒तः । मृ॒त्युर्य॒मस्या॑सीद् दू॒तः प्रचे॑ता॒ असू॑न् पि॒तृभ्यो॑ गम॒यां च॑कार ॥ २७ ॥

ये दस्य॑वः पि॒तृषु॒ प्रवि॑ष्टा ज्ञा॒तिमु॑खा अ॑हुताद॒श्चर॑न्ति । प॒रा॒पुरो॑ नि॒पुरो॒ ये भर॑न्त्य॒ग्निष्टान॒स्मात् प्र ध॑माति य॒ज्ञात् ॥ २८ ॥

सं वि॑शन्त्वि॒ह पि॒तरः॒ स्वा नः॑ स्यो॒नं कृ॒ण्वन्तः॑ प्रति॒रन्त॒ आयुः॑ । तेभ्यः॑ शकेम ह॒विषा॒ नक्ष॑माणा॒ ज्योग् जीव॑न्तः श॒रदः॑ पुरू॒चीः ।२९।

यां ते॑ धे॒नुं नि॑पृ॒णामि॒ यमु॑ ते क्षी॒र ओ॑द॒नम् । तेना॒ जन॑स्यासो भ॒र्ता योऽत्रास॒दजी॑वनः ॥ ३० ॥ (९)

अश्वा॑वतीं॒ प्र त॑र॒ या सु॒शेवा॒र्क्षाकं॑ वा प्रत॒रं नवी॑यः । यस्त्वा॑ ज॒घान॒ वध्य॒ः सो अ॑स्तु॒ मा सो अ॒न्यद् वि॑दत भाग॒धेय॑म् ॥ ३१ ॥

य॒मः प॒रोऽव॑रो॒ विव॑स्वा॒न् तत॒ः प॒रं नाति॑ पश्यामि॒ किं च॒न । य॒मे अ॑ध्व॒रो अधि॑ मे॒ निवि॑ष्टो॒ भुवो॒ विव॑स्वान॒न्वात॑तान ॥ ३२ ॥

अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वा सवर्णामदधुर्विवस्वते । उताश्विनावभरद्
यत् तदासीदजहादु द्वा मिथुना सरण्यूः ॥ ३३ ॥
ये निखाता ये परोप्ता ये दग्धा ये चोद्धिताः । सर्वांस्तानग्न आ वह
पितॄन् हविषे अत्तवे ॥ ३४ ॥
ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते । त्वं
तान् वेत्थ यदि ते जातवेदः स्वधया यज्ञं स्वधितिं जुषन्ताम् ॥३५॥
शं तप माति तपो अग्ने मा तन्वं१ तपः । वनेषु शुष्मो अस्तु ते
पृथिव्यामस्तु यद्धरः ॥ ३६ ॥
ददाम्यस्मा अवसानमेतद् य एष आगन् मम चेदभूदिह । यम-
श्चिकित्वान् प्रत्येतदाह ममैष राय उप तिष्ठतामिह ॥ ३७ ॥
इमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा ।३८।
प्रेमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा ।३९।
अपेमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा ॥
वीमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा ४१
निरिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा ४२
उदिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा ४३
समिमां मात्रां मिमीमहे यथापरं न मासातै । शते शरत्सु नो पुरा ४४
अमासि मात्रां स्व∫रगामायुष्मान् भूयासम् । यथापरं न मासातै
शते शरत्सु नो पुरा ॥ ४५ ॥

प्रा॒णो अ॑पा॒नो व्या॒न आयु॒श्चक्षु॑र्दृ॒शये॒ सूर्या॑य । अप॑रिपरेण प॒था
य॒मरा॑ज्ञः पि॒तॄन् ग॑च्छ ॥ ४६ ॥
ये अग्र॑वः शशमा॒नाः प॑रे॒युर्हि॒त्वा द्वेषां॒स्यन॑पत्यवन्तः । ते द्यामु॒दित्या॑-
विदन्त लो॒कं नाक॑स्य पृ॒ष्ठे अधि॒ दीध्या॑नाः ॥ ४७ ॥
उ॒द॒न्वती॒ द्यौर॑व॒मा पी॒लुम॒तीति॑ मध्य॒मा । तृ॒तीया॑ ह प्र॒द्यौरिति॒ यस्यां॑
पि॒तर॒ आस॑ते ॥ ४८ ॥
ये नः॑ पि॒तुः पि॒तरो॒ ये पि॑तामहा॒ य आ॑विवि॒शुरु॒र्व॑न्तरि॑क्षम् । य
आ॑क्षि॒यन्ति॑ पृथि॒वीमु॒त द्यां तेभ्यः॑ पि॒तृभ्यो॒ नम॑सा विधेम ॥ ४९ ॥
इ॒दमिद्वा उ॒ नाप॑रं दि॒वि प॑श्यसि॒ सूर्य॑म् । मा॒ता पु॒त्रं यथा॑
सि॒चाभ्ये॑नं भूम ऊर्णुहि ॥ ५० ॥ (११)
इ॒दमिद्वा उ॒ नाप॑रं ज॒रस्य॒न्यदि॒तोऽप॑रम् । जा॒या पति॑मिव॒ वास॑-
सा॒भ्ये॑नं भूम ऊर्णुहि ॥ ५१ ॥
अ॒भि त्वो॑र्णोमि पृथि॒व्या मा॒तुर्वस्त्रे॑ण भ॒द्रया॑ । जी॒वेषु॑ भ॒द्रं तन्मयि॑
स्व॒धा पि॒तृषु॒ सा त्वयि॑ ॥ ५२ ॥
अग्नी॑षोमा॒ पथि॒कृता स्यो॒नं दे॒वेभ्यो॒ रत्नं॑ दधथु॒र्वि लो॒कम् । उप॒
प्रेष्य॑न्तं पू॒षणं॒ यो वहा॑त्यञ्जो॒यानैः॑ प॒थिभि॒स्तत्र॑ गच्छतम् ॥ ५३ ॥
पू॒षा त्वे॒तश्च्या॑वयतु॒ प्र वि॒द्वान॑नष्टपशु॒र्भुव॑नस्य गो॒पाः । स त्वै॒तेभ्यः॒
परि॑ ददत् पि॒तृभ्यो॒ऽग्निर्दे॒वेभ्यः॑ सुविद॒त्रिये॑भ्यः ॥ ५४ ॥

आयु॑र्वि॒श्वायुः॒ परि॑ पातु त्वा पू॒षा त्वा॑ पातु॒ प्रप॑थे पु॒रस्ता॑त्। यत्रास॑ते
सु॒कृतो॒ यत्र॒ त ई॒युस्तत्र॑ त्वा दे॒वः स॑वि॒ता द॑धातु ॥ ५५ ॥
इ॒मौ यु॑नज्मि ते॒ वह्नी॒ असु॑नीताय॒ वोढ॑वे। ताभ्याँ॑ य॒मस्य॒ साद॑नं॒
समि॑ती॒श्चाव॑ गच्छतात् ॥ ५६ ॥
ए॒तत् त्वा॒ वास॑ः प्रथ॒मं न्वाग॒न्नपै॒तदू॑ह॒ यदि॒हाबि॑भः पु॒रा। इ॒ष्टापू॒र्त-
म॑नु॒संक्रा॑म वि॒द्वान् यत्र॑ ते द॒त्तं ब॑हु॒धा विब॑न्धुषु ॥ ५७ ॥
अ॒ग्नेर्वर्म॒ परि॒ गोभि॑र्व्य॑यस्व॒ सं प्रोर्णु॑ष्व॒ मेद॑सा॒ पीव॑सा च। नेत् त्वा॑
धृ॒ष्णुर्हर॑सा॒ जर्हृ॑षाणो द॒धृग् वि॑ध॒क्षन् प॑री॒ङ्खया॑तै ॥ ५८ ॥
द॒ण्डं हस्ता॑दा॒ददा॑नो ग॒तासोः॑ स॒ह श्रोत्रे॑ण॒ वर्च॑सा॒ बले॑न। अत्रै॒व
त्वमि॒ह व॒यं सु॒वीरा॒ विश्वा॒ मृधो॑ अ॒भिमा॑तीर्जयेम ॥ ५९ ॥
धनु॒र्हस्ता॑दा॒ददा॑नो मृ॒तस्य॑ स॒ह क्ष॒त्रेण॒ वर्च॑सा॒ बले॑न। स॒मागृ॑भाय॒
वसु॒ भूरि॑ पु॒ष्टम॒र्वाङ् त्वमेह्युप॑ जीवलो॒कम् ॥ ६० ॥ [१२] (२।१)

—:o:—

सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—यमः; मन्त्रोक्ताः; ५, ६ अग्निः; ५० भूमिः; ५४ इन्द्रः; ५६ आपः ॥ छन्दः—१—३, ७, ९, १०, १२—१७, १९—२२, २४, ३८, ४०—४३, ४५, ४८, ५१, ५३, ५५, ५७, ५९, ६१—६३, ६५, ६६, ७३ त्रिष्टुप्; ४, ८, ११, २३ सतः पङ्क्तिः; ५ त्रिपदा निचृद् गायत्री; ६, ६८, ७०, ७२ अनुष्टुप्; १८ भुरिग्जगती; २५—२८, '४४, ४६ जगती २९ विराड् जगती; ३० पञ्चपदातिजगती; ३१ बिराट् शक्वरी; ३२—३५, ४७, ४९, ५२ भुरिक् त्रिष्टुप्; ३६ आसुर्यनुष्टुप् (एकावसाना); ३७ आसुरीगायत्री (एकावसाना); ३९ परात्रिष्टुप् पङ्क्तिः; ५० प्रस्तारङ्क्तिः; ५४ पुरोऽनुष्टुप्

त्रिष्टुप् ५६ आर्ष्यनुष्टुप्; ५८ विराट् त्रिष्टुप्; ६० षट्पदा जगती; ६४ भुरिक् पथ्यापङ्क्तिः; ६७ पथ्याबृहती; ६९, ७१ उपरिष्टाद् बृहती ॥ मन्त्र ७३ ।

इ॒यं नारी॑ पतिलो॒कं वृ॑णा॒ना नि प॑द्यत॒ उप॑ त्वा मर्त्य॒ प्रेत॑म् । धर्मं॑
पु॒रा॒णम॑नुपा॒लय॑न्ती॒ तस्यै॑ प्र॒जां द्रवि॑णं चे॒ह धे॑हि ॥ १ ॥

उदी॑र्ष्व ना॒र्य॑भि जी॑वलो॒कं ग॒तासु॑मे॒तमुप॑ शेष॒ एहि॑ । ह॒स्त॒ग्रा॒भस्य॑
दधि॒षोस्तवे॒दं पत्यु॑र्जनि॒त्वम॒भि सं ब॑भूथ ॥ २ ॥

अप॑श्यं युव॒तिं नी॒यमा॑नां जी॒वां मृ॒तेभ्यः॑ परिणी॒यमा॑नाम् । अ॒न्धेन॒
यत् तम॑सा प्रावृ॒तासी॑त् प्रा॒क्तो अपा॑चीमनयं॒ तदे॑नाम् ॥ ३ ॥

प्र॒जा॒न॒त्य᳚घ्न्ये जीवलो॒कं दे॒वानां॒ पन्था॑मनुसं॒चर॑न्ती । अ॒यं ते॒ गोप॑ति॒स्तं
जु॑षस्व स्व॒र्गं लो॒कमधि॑ रोहयैनम् ॥ ४ ॥

उप॒ द्यामुप॑ वेत॒सम॑वत्त॒रो न॒दीना॑म् । अग्ने॑ पि॒त्तम॒पाम॑सि ॥ ५ ॥

यं त्वम॑ग्ने स॒मद॑ह॒स्तमु॒ निर्वा॑पया॒ पुनः॑ । क्याम्बू॒रत्र॑ रोहतु शाण्डदू॒र्वा
व्य᳚ल्कशा ॥ ६ ॥

इ॒दं त॒ एकं॑ प॒र ऊ॑ त॒ एकं॑ तृ॒तीये॑न॒ ज्योति॑षा॒ सं वि॑शस्व । सं॒वेश॑ने
त॒न्वा॒३ चारु॑रेधि प्रि॒यो दे॒वानां॑ पर॒मे स॒धस्थे॑ ॥ ७ ॥

उत्ति॑ष्ठ॒ प्रेहि॒ प्र द्र॒वौकः॑ कृणुष्व सलि॒ले स॒धस्थे॑ । तत्र॒ त्वं पि॒तृभिः॑
संवि॒दा॒नः सं सोमे॑न॒ मद॑स्व॒ सं स्व॒धाभिः॑ ॥ ८ ॥

प्र च्य॑वस्व त॒न्वं॑१ सं भ॑रस्व॒ मा ते॒ गात्रा॒ वि हा॑यि॒ मो शरी॑रम् ।
मनो॒ निवि॑ष्टमनु॒संवि॑शस्व॒ यत्र॒ भूमे॒र्जुष॑से॒ तत्र॑ गच्छ ॥ ९ ॥

वर्च॑सा मां पि॒तर॑ः सो॒म्यासो॒ अञ्ज॑न्तु दे॒वा मधु॑ना घृ॒तेन॑। चक्षु॑षे मा
प्रत॒रं ता॒रय॑न्तो ज॒रसे॑ मा ज॒रद॑ष्टिं वर्ध॑न्तु ॥ १० ॥ [१३]

वर्च॑सा मां सम॑नक्त्व॒ग्निर्मे॒धां मे॒ विष्णु॒र्न्य॑नक्त्वा॒सन्। र॒यिं मे॒ विश्वे॒
नि य॑च्छन्तु दे॒वाः स्यो॒ना माप॒ः पव॑नैः पुनन्तु ॥ ११ ॥

मि॒त्रावरु॑णा॒ परि॒ माम॑धातामादि॒त्या मा॒ स्वर॑वो वर्धयन्तु। वर्चो॑ म
इन्द्रो॒ न्य॑नक्तु॒ हस्त॑योर्ज॒रद॑ष्टिं मा सवि॒ता कृ॑णोतु ॥ १२ ॥

यो म॒मार॑ प्रथ॒मो मर्त्या॑नां॒ यः प्रे॒याय॑ प्रथ॒मो लो॒कमे॒तम्। वै॒व॒स्व॒तं
सं॒गम॑नं॒ जना॑नां य॒मं राजा॑नं ह॒विषा॑ सपर्यत ॥ १३ ॥

परा॑ यात पितर॒ आ च॑ या॒ताय॑ं वो॑ य॒ज्ञो मधु॑ना॒ सम॑क्तः। द॒त्तो
अ॒स्मभ्य॒ं द्रवि॑णे॒ह भ॒द्रं र॒यिं च॑ नः॒ सर्व॑वीरं दधात ॥ १४ ॥

कण्व॑ः क॒क्षीवा॑न् पुरुमी॒ढो अ॒गस्त्य॑ः श्या॒वाश्व॒ः सोभ॑र्यर्च॒नानाः।
वि॒श्वामि॑त्रो॒ऽयं ज॒मद॑ग्नि॒रत्रि॒रव॑न्तु नः क॒श्यपो॑ वा॒मदे॑वः ॥ १५ ॥

विश्वा॑मित्र॒ जम॑दग्ने॒ वसि॑ष्ठ॒ भर॑द्वाज॒ गोत॑म॒ वाम॑देव। श॒र्दिर्नो॒
अत्रि॑रग्रभी॒न्नमो॑भिः॒ सुसं॑शास॒ः पित॑रो मृ॒डता॑ नः ॥ १६ ॥

क॒स्ये मृ॒जाना॒ अति॑ यन्ति रि॒प्रमायु॒र्दधा॑नाः प्रत॒रं नवी॑यः। आ॒प्याय॑-
मानाः प्र॒जया॒ धने॒नाध॑ स्याम सु॒रभयो॑ गृ॒हेषु॑ ॥ १७ ॥

अ॒ञ्जते॒ व्य॑ञ्जते॒ सम॑ञ्जते॒ क्रतु॑ं रिहन्ति॒ मधु॑ना॒भ्य॑ञ्जते। सिन्धो॑रुच्छ्-
वा॒से प॒तय॑न्तमु॒क्षणं॑ हिरण्यपा॒वाः प॒शुमा॑सु गृह्णते ॥ १८ ॥

यद् वो॑ भ॒द्रं पि॑तरः सो॒म्यं च॒ तेनो॑ सचध्व॒ं स्वय॑शसो॒ हि भू॒त । ते
अ॑र्वाणः कवय॒ आ शृ॑णोत सुविद॒त्रा वि॒दथे॑ हू॒यमा॑नाः ॥ १९ ॥
ये अत्र॑यो॒ अङ्गि॑रसो॒ नव॑ग्वा इ॒ष्टाव॑न्तो राति॒षाचो॒ दधा॑नाः । दक्षि॑णा-
वन्तः सु॒कृतो॒ य उ॒ स्थासद्या॒स्मिन् ब॒र्हिषि॑ मादयध्वम् ॥२०॥ [१४]
अध॒ा यथा॑ नः पि॒तर॒ः परा॑सः प्र॒त्नासो॑ अग्न ऋ॒तमा॑शशा॒नाः ।
शुचीद॑य॒न् दीध्य॑त उक्थ॒शास॒ः क्षामा॑ भि॒न्दन्तो॑ अरु॒णीरप॑ व्रन् ॥२१॥
सुकर्मा॑णः सु॒रुचो॑ देव॒यन्तो॒ अयो॒ न दे॒वा जनि॑मा॒ धम॑न्तः । शु॒चन्तो॑
अ॒ग्निं वा॑वृधन्त॒ इन्द्र॑मु॒र्वीं गव्यां॑ परि॒षदं॑ नो अक्रन् ॥ ॥ २२ ॥
आ यू॒थेव॑ क्षु॒मति॑ प॒श्वो अ॑ख्यद् दे॒वानां॒ जनि॒मान्त्यु॒ग्रः । मर्ता॑स-
श्चिदु॒र्वशी॑रकृप्रन् वृ॒धे चि॑द॒र्य उप॑रस्या॒योः ः ॥२३ ॥
अक॑र्म ते॒ स्वप॑सो अभम ऋ॒तम॑वस्रन्नु॒षसो॑ वि॒भातीः । विश्वं॒ तद् भ॒द्रं
यद॑वन्ति दे॒वा बृ॒हद् व॑देम वि॒दथे॑ सु॒वीरा॑ः ॥ २४ ॥
इन्द्रो॑ मा म॒रुत्वा॒न् प्राच्या॑ दि॒शः पा॑तु बाहु॒च्युता॑ पृथि॒वी द्यामि॑-
वो॒परि॑ । लो॒क॒कृत॑ः पथि॒कृतो॑ यजामहे॒ ये दे॒वानां॑ हु॒तभा॑गा इ॒ह
स्थ ॥ २५ ॥
धा॒ता मा॒ निरृ॑त्या॒ दक्षि॑णाया दि॒शः०··· ॥ २६ ॥
अदि॑तिर्मादि॒त्यैः प्र॒तीच्या॑ दि॒शः०··· ॥ २७ ॥
सोमो॑ मा॒ विश्वै॑र्दे॒वैरुदी॑च्या दि॒शः०··· ॥ २८ ॥

ध॒र्ता ह॑ त्वा ध॒रुणो॑ धारयाता ऊ॒र्ध्वं भा॒नुं स॑वि॒ता द्यामि॑वो॒परि॑ ।
लो॒क॒कृत॑ः पथि॒कृतो॑ यजामहे॒ ये दे॒वानाँ॑ हु॒तभा॑गा इ॒ह स्थ ॥ २९ ॥
प्राण्याँ॑ त्वा दि॒शि पु॒रा सं॒वृत॑ः स्व॒धाया॒मा द॑धामि बाहु॒च्युता॑ पृथि॒वी
द्यामि॑वो॒परि॑ । लो॒क॒कृत॑ः० ··· ॥ ३० ॥ [१५]
दक्षि॑णायां त्वा दि॒शि पु॒रा सं॒वृत॑ः० ··· ॥ ३१ ॥
प्र॒तीच्याँ॑ त्वा दि॒शि पु॒रा सं॒वृत॑ः० ··· ॥ ३२ ॥
उदी॑च्याँ त्वा दि॒शि पु॒रा सं॒वृत॑ः० ··· ॥ ३३ ॥
ध्रु॒वायाँ॑ त्वा दि॒शि पु॒रा सं॒वृत॑ः ० ··· ॥ ३४ ॥
ऊ॒र्ध्वायाँ॑ त्वा दि॒शि पु॒रा सं॒वृत॑ः० ··· ॥ ३५ ॥
ध॒र्तासि॑ ध॒रुणो॑ऽसि॒ वंस॑गोऽसि ॥ ३६ ॥
उ॒द॒पूर॑सि मधु॒पूर॑सि वा॒तपूर॑सि ॥ ३७ ॥
इ॒तश्च॑ मा॒मुत॑श्चावतां य॒मे इ॑व॒ यत॑माने॒ यदै॒तम् । प्र वाँ॑ भरन् मानु॑षा
देव॒यन्तो॒ आ सी॑दतां॒ स्वमु॑ लो॒कं विदा॑ने ॥ ३८ ॥
स्वासं॑स्थे भवत॒मिन्द॑वे नो यु॒जे वां॒ ब्रह्म॑ पू॒र्व्यं नमो॑भिः । वि श्लोक॑
एति प॒थ्ये᳚व सू॒रिः शृ॒ण्वन्तु॒ विश्वे॑ अ॒मृता॑स ए॒तत् ॥ ३९ ॥
त्रीणि॑ प॒दानि॑ रु॒पो अन्व॑रोह॒च्चतु॑ष्पदी॒मन्वै॑तद् व्र॒तेन॑ । अ॒क्षरे॑ण प्रति॑
मिमीते अ॒र्कमृ॒तस्य॒ नाभा॑व॒भि सं पु॑नाति ॥ ४० ॥ [१६]
दे॒वेभ्य॒ः कम॑वृणीत मृ॒त्युं प्र॒जायै॒ किम॒मृतं॒ नावृ॑णीत । बृह॒स्पति॑र्य॒ज्ञम॑तनुत॒ ऋषि॑ः प्रि॒यां य॒मस्त॒न्वं॒॑श्मा रि॑रेच ॥ ४१ ॥

त्वमग्न ईडितो जातवेदोऽवाड्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वा। प्रादाः
पितृभ्यः स्वधया ते अक्षन्नद्धि त्वं देव प्रयता हवींषि ॥ ४२ ॥
आसीनासो अरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय। पुत्रेभ्यः
पितरस्तस्य वस्वः प्र यच्छत त इहोर्जं दधात ॥ ४३ ॥
अग्निष्वात्ताः पितर एह गच्छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः। अत्तो
हवींषि प्रयतानि बर्हिषि रयिं च नः सर्ववीरं दधात ॥ ४४ ॥
उपहूता नः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु। त आ
गमन्तु त इह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥ ४५ ॥
ये नः पितुः पितरो ये पितामहा अनूजहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः।
तेभिर्यमः संरराणो हवींष्युशन्नुशद्भिः प्रतिकाममत्तु ॥ ४६ ॥
ये तातृषुर्देवत्रा जेहमाना होत्राविद् स्तोमतष्टासो अर्कैः। आग्ने याहि
सहस्रं देववन्दैः सत्यैः कविभिर्ऋषिभिर्घर्मसद्भिः ॥ ४७ ॥
ये सत्यासो हविरदो हविष्पा इन्द्रेण देवैः सरथं तुरेण। आग्ने याहि
सुविदत्रेभिर्वाङ् परैः पूर्वैर्ऋषिभिर्घर्मसद्भिः ॥ ४८ ॥
उप सर्प मातरं भूमिमेतामुरुव्यचसं पृथिवीं सुशेवाम्। ऊर्णम्रदाः
पृथिवी दक्षिणावत एषा त्वा पातु प्रपथे पुरस्तात् ॥ ४९ ॥
उच्छ्वञ्चस्व पृथिवी मा नि बाधथाः सूपयनास्मै भव सूपसर्पणा।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि ॥ ५० ॥ [१७]

उ॒च्छ्वञ्च॑माना पृथि॒वी सु ति॑ष्ठतु स॒हस्रं॒ मित॒ उप॒ हि श्रय॑न्ताम्। ते
गृ॒हासो॑ घृत॒श्चुतः॑ स्यो॒ना वि॒श्वाहा॑स्मै शर॒णाः स॒न्त्वत्र॑ ॥ ५१ ॥
उत् ते॑ स्तभ्नामि पृथि॒वीं त्वत् परी॒मं लो॒गं नि॒दध॒न्मो अ॒हं रि॑षम्। ए॒तां
स्थूणां॑ पि॒तरो॑ धारयन्ति ते॒ तत्र॑ य॒मः साद॑ना ते कृणोतु ॥ ५२ ॥
इ॒मम॑ग्ने चम॒सं मा वि जि॑ह्वरः प्रि॒यो दे॒वाना॑मु॒त सो॒म्याना॑म्। अ॒यं
यश्च॑म॒सो दे॑व॒पान॒स्तस्मि॑न् दे॒वा अ॒मृता॑ मादयन्ताम् ॥ ५३ ॥
अथ॑र्वा पू॒र्णं च॑म॒सं यमिन्द्रा॒याबि॑भर्वा॒जिनी॑वते। तस्मि॑न् कृणोति
सु॒कृत॑स्य भ॒क्षं तस्मि॒न्निन्दुः॑ पवते विश्व॒दानी॑म् ॥ ५४ ॥
यत् ते॑ कृ॒ष्णः श॑कु॒न आ॑तु॒तोद॑ पिपी॒लः स॒र्प उ॒त वा॒ श्वाप॑दः।
अ॒ग्निष्टद् वि॒श्वाद॑ग॒दं कृ॑णोतु॒ सोम॑श्च॒ यो ब्रा॑ह्म॒णाँ आ॑वि॒वेश॑ ॥ ५५ ॥
पय॑स्वती॒रोष॑धयः॒ पय॑स्वन्माम॒कं पयः॑। अ॒पां पय॑सो॒ यत् पय॒स्तेन॑ मा
स॒ह शु॑म्भतु ॥ ५६ ॥
इ॒मा नारी॑रविध॒वाः सु॒पत्नी॒राञ्ज॑नेन स॒र्पिषा॒ सं स्पृ॑शन्ताम्। अ॒न॒श्रवो॑
अनमी॒वाः सु॒रत्ना॒ आ रो॑हन्तु॒ जन॑यो॒ योनि॒मग्र॑ ॥ ५७ ॥
सं ग॑च्छस्व पि॒तृभि॒ः सं य॒मेने॑ष्टापू॒र्तेन॑ प॒रमे॒ व्यो᳚मन्। हि॒त्वाव॒द्यं
पु॒न॒रस्त॒मेहि॒ सं ग॑च्छतां त॒न्वा᳚ सु॒वर्चाः॑ ॥ ५८ ॥
ये नः॑ पि॒तुः पि॒तरो॒ ये पि॑ताम॒हा य आ॑विवि॒शुरु॒र्व१॒॑न्तरि॑क्षम्। तेभ्य॑ः
स्व॒राड॑सु॑नीतिर्नो॑ अ॒द्य य॑थाव॒शं त॒न्व᳚ः कल्पयाति ॥ ५९ ॥

शं ते नीहारो भवतु शं ते प्रुष्वाव शीयताम् । शीतिके शीतिकावति ह्लादिके ह्लादिकावति । मण्डूक्य१प्सु शं भुव इमं स्व१ग्निं शमय ।६०।

(१८)

विवस्वान् नो अभयं कृणोतु यः सुत्रामा जीरदानुः सुदानुः । इहेमे वीरा बहवो भवन्तु गोमदश्ववन्मय्यस्तु पुष्टम् ॥ ६१ ॥

विवस्वान् नो अमृतत्वे दधातु परैतु मृत्युरमृतं न ऐतु । इमान् रक्षतु पुरुषाना जरिम्णो मो ष्वेषामसवो यमं गुः ॥ ६२ ॥

यो दध्रे अन्तरिक्षे न मह्ना पितॄणां कविः प्रमतिर्मतीनाम् । तमर्चत विश्वमित्रा हविर्भिः स नो यमः प्रतरं जीवसे धात् ॥ ६३ ॥

आ रोहत दिवमुत्तमामृषयो मा बिभीतन । सोमपाः सोमपायिन इदं वः क्रियते हविरगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ ६४ ॥

प्र केतुना बृहता भात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति । दिवश्चिदन्तादुपमामुदानडपामुपस्थे महिषो ववर्ध ॥ ६५ ॥

नाके सुपर्णमुप यत् पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा । हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम् ॥ ६६ ॥

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा । शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥ ६७ ॥

अपूपापिहितान् कुम्भान् यांस्ते देवा अधारयन् । ते ते सन्तु स्वधावन्तो मधुमन्तो घृतश्चुतः ॥ ६८ ॥

यास्ते॑ धा॒ना अ॑नुकि॒रामि॑ ति॒लमि॑श्राः स्व॒धाव॑तीः । तास्ते॑ सन्तु
वि॒भ्वीः प्र॒भ्वीस्तास्ते॑ य॒मो राजानु॑ मन्यताम् ॥ ६९ ॥

पुन॑र्देहि वनस्पते॒ य ए॒ष निहि॑त॒स्त्वयि॑ । यथा॑ य॒मस्य॒ साद॑न॒ आसा॑तै
वि॒दथा॒ वद॑न् ॥ ७० ॥

आ र॑भस्व जातवेद॒स्तेज॑स्व॒द्धरो॑ अस्तु ते । शरी॑रमस्य॒ सं द॑हाथै॑नं
धेहि सु॒कृता॑मु लो॒के ॥ ७१ ॥

ये ते॒ पूर्वे॒ परा॑गता॒ अप॑रे पि॒तर॑श्च॒ ये । तेभ्यो॑ घृ॒तस्य॑ कु॒ल्यै॑तु श॒त-
धा॑रा व्यु॒न्द॒ती ॥ ७२ ॥

ए॒तदा रो॑ह॒ वय॑ उन्मृजा॒नः स्वा इ॒ह बृ॒हदु॑ दीदयन्ते । अ॒भि प्रेहि॑
मध्य॒तो माप॑ हास्थाः पितृ॒णां लो॒कं प्र॑थ॒मो यो अत्र॑ ॥ ७३ ॥ (१९)

—:०:—

सूक्त ४

ऋषिः— अथर्वा ॥ देवता — यमः मन्त्रोक्ताः; ८१-८७ पितरः; ८८ अग्निः; ८९
चन्द्रमाः ॥ छन्दः—१, ४, ७, १४, ३६, ६० भुरिक त्रिष्टुप्; २, ५, ११, २९, ५८
जगती; ३ पञ्चपदा भुरिगति जगती; ६, १३ पञ्चपदा शक्वरी; ८ पंचपदाऽति-
शक्वरी; ९ पचपदा भुरिक् शक्वरी; १०, १५, २८, ३०, ३४, ३५, ३७, ४०,
४४-४८, ५२. ५४, ६४, ६५, ६९, ७० त्रिष्टुप्; १२ महाबृहती; १६-२४ त्रिपदा
भुरिङ्महाबृहती; [२५], ३१, ३२, ३८, ४१, ४२, ५५, ५७, ५९, ६१ अनुष्टुप्;
२६, ३३, ४३ उपरिष्टाद् बृहती; २७ याजुषी गायत्री; ३९ पुरोविराडास्तार-
पङ्क्तः ४९ अनुष्टुब्गर्भा त्रिष्टुप्; ५०, ५१ पुरोविराड् सतःपङ्क्तः; (?,जगती);
[५३ सतःपङ्क्तः]; ५६ ककुम्मत्यनुष्टुप्; ६२ भूरिगास्तारपङ्क्तः; ६३ स्वरा-
डास्तारपङ्क्तः; ६६ त्रिपदा स्वराड् गायत्री; ६७ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप्; [६८, ७१

आसुर्यनुष्टुप्]; ७२-७४; [७१] आसुरी पङ्क्तः; ७५ आसुरी गायत्री; ७६ आसुर्युष्णिक्; ७७ दैवी जगती; [७८ आसुरी त्रिष्टुप्; ८० आसुरी जगती]; ८१ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ८२ साम्नी बृहती; ८३, ८४ साम्नी त्रिष्टुप्; ८५ आसुरी बृहती; ८६ चतुष्पदा ककुम्मत्युष्णिक् ८७ चतुष्पदा शङ्कुमत्युष्णिक्; ८८ पथ्या पङ्क्तः; ८९ पञ्चपदा पथ्या पङ्क्तः (६७, ६८, ७१, ८६ एकावसानाः) मन्त्र ८९ ।

आ रो॑हत॒ जनि॑त्रीं जा॒तवे॑दसः पितृ॒याणैः॒ सं व॒ आ रो॑हयामि । अवा॑ड्ढ॒व्येषि॒तो ह॑व्य॒वाह॑ ईजा॒नं यु॒क्ताः सु॒कृतां॑ धत्त लो॒के ॥ १ ॥

दे॒वा य॒ज्ञमृ॒तवः॑ कल्पयन्ति ह॒विः पु॑रो॒डाशं॑ स्रु॒चो य॑ज्ञायु॒धानि॑ । तेभि॑र्याहि प॒थिभि॑र्देव॒यानै॒र्यैरी॑जा॒नाः स्व॒र्गं यन्ति॑ लो॒कम् ॥ २ ॥

ऋ॒तस्य॒ पन्था॒मनु॑ पश्य सा॒ध्वङ्गि॑रसः सु॒कृतो॒ येन॒ यन्ति॑ । तेभि॑र्याहि प॒थिभिः॑ स्व॒र्गं यत्रा॑दि॒त्या मधु॑ भ॒क्षय॑न्ति तृ॒तीये॒ नाके॒ अधि॒ वि श्र॑यस्व ॥ ३ ॥

त्रयः॑ सुप॒र्णा उप॑रस्य मा॒यू नाक॑स्य पृ॒ष्ठे अधि॑ वि॒ष्टपि॑ श्रि॒ताः । स्व॒र्गा लो॒का अ॒मृते॑न वि॒ष्ठा इष॒मूर्जं॒ यज॑मानाय दुह्राम् ॥ ४ ॥

जु॒हूर्दा॑धार॒ द्यामु॑प॒भृद॒न्तरि॑क्षं ध्रु॒वा दा॑धार पृथि॒वीं प्र॑ति॒ष्ठाम् । प्रती॒मां लो॒का घृ॒तपृ॑ष्ठाः स्व॒र्गाः काम॑कामं॒ यज॑मानाय दुह्राम् ॥ ५ ॥

ध्रुव॒ आ रो॑ह पृथि॒वीं वि॒श्वभो॑जसम॒न्तरि॑क्षमुपभृ॒दा क्र॑मस्व । जुहु॒ द्यां ग॑च्छ॒ यज॑मानेन सा॒कं स्रु॒वेण॑ व॒त्सेन॒ दिशः॒ प्रपी॑नाः॒ सर्वा॑ धुक्ष्वाहृ॑णीयमानः ॥ ६ ॥

ती॒र्थैस्त॑रन्ति प्र॒वतो॑ म॒हीरिति॑ यज्ञ॒कृतः॑ सु॒कृतो॒ येन॒ यन्ति॑ । अत्रा॑दधु॒र्यज॑मानाय लो॒कं दिशो॑ भू॒तानि॒ यदक॑ल्पयन्त ॥ ७ ॥

अङ्गि॑रसा॒मय॑नं॒ पूर्वो॑ अ॒ग्निरा॑दि॒त्याना॒मय॑नं॒ गार्ह॑पत्यो॒ दक्षि॑णाना॒मय॑नं
द॒क्षिणा॒ग्निः। म॒हि॒मान॑म॒ग्नेर्विहि॑तस्य॒ ब्रह्म॑णा॒ सम॑ङ्गः॒ सर्व॒ उप॑ याहि
श॒ग्मः ॥ ८ ॥

पूर्वो॑ अ॒ग्निष्ट्वा॑ तपतु॒ शं पु॒रस्ता॒च्छं प॒श्चात् त॑पतु॒ गार्ह॑पत्यः। द॒क्षि॒णा॒ग्निष्टे॑
तपतु॒ शर्म॒ वर्मो॑त्तर॒तो म॑ध्य॒तो अ॒न्तरि॑क्षाद् दि॒शोदि॑शो अग्ने॒ परि॑
पाहि घो॒रात ॥ ९ ॥

यय॑मग्ने॒ शंत॑माभिस्त॒नूभि॑रीजा॒नम॒भि लो॒कं स्व॒र्गम्। अश्वा॑ भू॒त्वा
पृ॑ष्टि॒वाहो॑ वहाथ॒ यत्र॑ दे॒वैः स॑ध॒माद॒ं मद॑न्ति ॥ १० ॥ (२०)

शम॑ग्ने प॒श्चात् त॑प॒ शं पु॒रस्ता॒च्छमु॑त्त॒राच्छम॑ध॒रात् त॑पैनम्। एक॑स्त्रे॒धा
विहि॑तो जातवेदः स॒म्यगे॑नं धेहि सु॒कृता॑मु लो॒के ॥ ११ ॥

शम॒ग्नय॒ः समि॑द्धा॒ आ र॑भन्तां प्राजाप॒त्यं मेध्यं॑ जा॒तवे॑दसः। शृ॒तं
कृ॒ण्वन्त॑ इ॒ह माव॑ चिक्षिपन् ॥ १२ ॥

य॒ज्ञ ए॑ति॒ वित॑तः॒ कल्प॑मान ईजा॒नम॒भि लो॒कं स्व॒र्गम्। तम॒ग्नय॒ः सर्व॑हुतं
जुषन्तां प्राजाप॒त्यं मेध्यं॑ जा॒तवे॑दसः। शृ॒तं कृ॒ण्वन्त॑ इ॒ह माव॑
चिक्षिपन् ॥ १३ ॥

ई॒जा॒नश्चि॒तमारु॑क्षद॒ग्निं नाक॑स्य पृ॒ष्ठाद् दिव॑मुत्पति॒ष्यन्। तस्मै॒ प्र
भा॑ति॒ नभ॑सो ज्योतिषीमान्त्स्व॒र्गः पन्था॑ः सु॒कृते॑ दे॒वयान॑ः ॥ १४ ॥

अ॒ग्निर्होता॑ध्व॒र्युष्टे॒ बृह॒स्पति॒रिन्द्रो॑ ब्र॒ह्मा द॑क्षिण॒तस्ते॑ अस्तु। हु॒तोऽयं
संस्थि॑तो य॒ज्ञ ए॑ति॒ यत्र॑ पूर्व॒मय॑नं हु॒ताना॑म् ॥ १५ ॥

अ॒पू॒पवा॑न् क्षी॒रवां॑श्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः पथि॒कृतो॑ यजामहे॒ ये
दे॒वानां॑ हु॒तभा॑गा इ॒ह स्थ ॥ १६ ॥
अ॒पू॒पवा॒न् दधि॑वांश्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥ १७ ॥
अ॒पू॒पवा॑न् द्र॒प्सवां॑श्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥ १८ ॥
अ॒पू॒पवा॑न् घृ॒तवां॑श्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥ १९ ॥
अ॒पू॒पवा॑न् मां॒सवां॑श्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥२०॥ (२१)
अ॒पू॒पवा॒नन्न॑वांश्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥ २१ ॥
अ॒पू॒पवा॒न् मधु॑मांश्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥ २२ ॥
अ॒पू॒पवा॒न् रस॑वांश्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥ २३ ॥
अ॒पू॒पवा॒नप॑वांश्च॒रुरेह सी॑दतु । लो॒क॒कृत॑ः···इ॒ह स्थ ॥ २४ ॥
अ॒पू॒पापि॑हितान् कु॒म्भान् यांस्ते॑ दे॒वा अधा॑रयन् । ते ते॑ सन्तु स्व॒धा-
व॑न्तो॒ मधु॑मन्तो घृ॒त॒श्चुत॑ः ॥ २५ ॥
यास्ते॑ धा॒ना अ॑नुकि॒रामि॑ ति॒लमि॑श्राः स्व॒धाव॑तीः । तास्ते॑ सन्तू॒द्भ्वीः
प्र॒भ्वीस्तास्त य॒मो राजानु॑ मन्यताम् ॥ २६ ॥
अदि॑तिं॒ भूय॑सीम् ॥ २७ ॥
द्र॒प्सश्च॑स्कन्द पृथि॒वीमनु॒ द्यामि॒मं च॒ योनि॒मनु॒ यश्च॒ पूर्वः॑ । स॒मा॒नं
योनि॒मनु॑ सं॒चर॑न्तं द्र॒प्सं जु॑हो॒म्यनु॑ स॒प्त होत्राः॑ ॥ २८ ॥
श॒तधा॑रं वा॒युम॒र्कं स्व॒र्विदं॑ नृ॒चक्ष॑स॒स्ते अ॒भि च॑क्षते र॒यिम् । ये पृ॒णन्ति॒
प्र च॒ यच्छ॑न्ति सर्व॒दा ते दु॑ह्रते॒ दक्षि॑णां स॒प्तमा॑तरम् ॥ २९ ॥

कोशं दुहन्ति कलशं चतुर्बिलमिडां धेनुं मधुमतीं स्वस्तये । ऊर्जं
मदन्तीमदितिं जनेष्वग्ने मा हिंसीः परमे व्योमन् ॥ ३० ॥ (२२)

एतत् ते देवः सविता वासो ददाति भर्तवे । तत् त्वं यमस्य राज्ये
वसानस्तार्प्यं चर ॥ ३१ ॥

धाना धेनुरभवद् वत्सो अस्यास्तिलोऽभवत् । तां वै यमस्य राज्ये
अक्षितामुप जीवति ॥ ३२ ॥

एतास्ते असौ धेनवः कामदुवा भवन्तु । एनीः श्येनीः सरूपा विरू-
पास्तिलवत्सा उप तिष्ठन्तु त्वात्र ॥ ३३ ॥

एनीर्धाना हरिणीः श्येनीरस्य कृष्णा धाना रोहिणीर्धेनवस्ते । तिल-
वत्सा ऊर्जमस्मै दुहाना विश्वाहा सन्त्वनपस्फुरन्तीः ॥ ३४ ॥

वैश्वानरे हविरिदं जुहोमि साहस्रं शतधारमुत्सम् । स बिभर्ति पितरं
पितामहान् प्रपितामहान् बिभर्ति पिन्वमानः ॥ ३५ ॥

सहस्रधारं शतधारमुत्समक्षितं व्यच्यमानं सलिलस्य पृष्ठे । ऊर्जं
दुहानमनपस्फुरन्तमुपासते पितरः स्वधाभिः ॥ ३६ ॥

इदं कसाम्बु चयनेन चितं तत् सजाता अव पश्यतेत । मर्त्योऽयम-
मृतत्वमेति तस्मै गृहान् कृणुत यावत्सबन्धु ॥ ३७ ॥

इहैवैधि धनसनिरिहचित्त इहक्रतुः । इहैधि वीर्यवत्तरो वयोधा
अपराहत ॥ ३८ ॥

पुत्रं पौत्रमभितर्पयन्तीरापो मधुमतीरिमाः । स्वधां पितृभ्यो अमृतं
दुहाना आपो देवीरुभयांस्तर्पयन्त ॥ ३९ ॥

आपो॑ अ॒ग्निं प्र हि॑णुत पि॒तॄँरुपे॒मं य॒ज्ञं पि॒तरो॑ मे जुषन्ताम् । आसी॑ना॒मूर्ज॒मुप॒ ये सच॑न्ते॒ ते नो॑ र॒यिं सर्व॑वीरं॒ नि य॑च्छान् ॥ ४० ॥ (२३)

समि॑न्धते॒ अम॑र्त्यं हव्य॒वाहं॑ घृत॒प्रि॑यम् । स वे॑द॒ निहि॑तान् नि॒धीन् पि॒तॄन् प॑रा॒वतो॑ ग॒तान् ॥ ४१ ॥

यं ते॑ म॒न्थं यमो॑द॒नं यन्मा॒ंसं नि॑पृ॒णामि॑ ते । ते ते॑ सन्तु स्व॒धाव॑न्तो॒ मधु॑मन्तो घृत॒श्चुत॑ः ॥ ४२ ॥

यास्ते॑ धा॒ना अ॑नुकि॒रामि॑ ति॒लमि॑श्राः स्व॒धाव॑तीः । तास्ते॑ सन्तू॒द्भ्वीः प्रभ्वीस्तास्ते॑ य॒मो राजानु॑ मन्यताम् ॥ ४३ ॥

इ॒दं पूर्व॒मप॑रं नि॒यानं॒ येना॑ ते॒ पूर्वे॑ पि॒तरः॒ परे॑ताः । पु॒रो॒ग॒वा ये अ॑भि॒शाचो॑ अस्य ते त्वा॑ वहन्ति सु॒कृता॑मु लो॒कम् ॥ ४४ ॥

सर॑स्वतीं दे॒वयन्तो॑ हवन्ते॒ सर॑स्वतीमध्व॒रे ता॒यमा॑ने । सर॑स्वतीं सु॒कृतो॑ हवन्ते॒ सर॑स्वती दा॒शुषे॒ वार्यं॑ दात् ॥ ४५ ॥

सर॑स्वतीं पि॒तरो॑ हवन्ते दक्षि॒णा य॒ज्ञम॑भि॒नक्ष॑माणाः । आ॒सद्या॒स्मिन् ब॒र्हिषि॑ मादयध्वमनमी॒वा इष॒ आ धे॑ह्य॒स्मे ॥ ४६ ॥

सर॑स्वति॒ या स॒रथं॑ य॒याथो॒क्थैः स्व॒धाभि॑र्देवि पि॒तृभि॒र्मद॑न्ती । स॒ह॒स्रा॒र्घमि॒डो अत्र॑ भा॒गं रा॒यस्पोषं॒ यज॑मानाय धेहि ॥ ४७ ॥

पृ॒थि॒वीं त्वा॑ पृथि॒व्यामा वे॑शयामि दे॒वो नो॑ धा॒ता प्र ति॑रा॒त्यायु॑ः । परा॑परैता वसु॒विद् वो॑ अ॒स्त्वधा॑ मृ॒ताः पि॒तृषु॒ सं भ॑वन्तु ॥ ४८ ॥

आ प्र च्य॑वेथा॒मप॒ तन्मृ॑जेथां॒ यद् वा॑मभिभा अत्रो॒चुः । अ॒स्मादेत॑म॒घ्न्यौ तद् वशी॑यो दा॒तुः पि॒तृष्वि॒हभो॑जनौ॒ मम॑ ॥ ४९ ॥

एयमगन् दक्षिणा भद्रतो नो अनेन दत्ता सुदुघा वयोधाः । यौवने
जीवानुपपृञ्चती जरा पितृभ्य उपसंपराणयादिमान् ॥ ५० ॥ (२४)
इदं पितृभ्यः प्र भरामि बर्हिर्जीवं देवेभ्य उत्तरं स्तृणामि । तदा रोह
पुरुष मेध्यो भवन् प्रति त्वा जानन्तु पितरः परेतम् ॥ ५१ ॥
एदं बर्हिरसदो मेध्योऽभूः प्रति त्वा जानन्तु पितरः परेतम् । यथापरु
तन्वं सं भरस्व गात्राणि ते ब्रह्मणा कल्पयामि ॥ ५२ ॥
पर्णो राजापिधानं चरूणामूर्जो बलं सह ओजो न आगन् । आयुर्जीवेभ्यो विदधद् दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥ ५३ ॥
ऊर्जो भागो य इमं जजानाश्मान्नानामाधिपत्यं जगाम । तमर्चत
विश्वमित्रा हविर्भिः स नो यमः प्रतरं जीवसे धात् ॥ ५४ ॥
यथा यमाय हर्म्यमवपन् पञ्च मानवाः । एवा वपामि हर्म्यं यथा
म भूरयोऽसत ॥ ५५ ॥
इदं हिरण्यं बिभृहि यत् ते पिताबिभः पुरा । स्वर्गं यतः पितुर्हस्तं
निर्मृड्ढि दक्षिणम् ॥ ५६ ॥
ये च जीवा ये च मृता ये जाता ये च यज्ञियाः । तेभ्यो घृतस्य
कुल्यै‍तु मधुधारा व्युन्दती ॥ ५७ ॥
वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सूरो अह्नां प्रतरीतोषसां दिवः । प्राणः
सिन्धूनां कलशाँ अचिक्रददिन्द्रस्य हार्दिमाविशन्मनीषया ॥ ५८ ॥
त्वेषस्ते धूम ऊर्णोतु दिवि षंछुक्र आततः । सूरो न हि द्युता त्वं
कृपा पावक रोचसे ॥ ५९ ॥

प्र वा ए॒तीन्दु॒रिन्द्र॑स्य॒ निष्कृ॑तिं॒ सखा॒ सख्यु॒र्न प्र मि॑नाति सं॒गि॒रः॑ ।
मर्य॑᳚ इव॒ योषा॒ः सम॑र्षसे॒ सोम॑ः क॒लशे॑ श॒तया॑मना प॒था ॥६०॥ (२५)
अक्ष॒न्नमी॑मदन्त॒ ह्यव॑ प्रि॒याँ अ॑धूषत । अस्तो॑षत॒ स्वभा॑नवो॒ विप्रा॒
यवि॑ष्ठा ईमहे ॥ ६१ ॥
आ या॑त पितरः सो॒म्यासो॑ गम्भी॒रैः प॒थिभि॑ः पितृ॒याणै॑ः । आयु॑र॒स्मभ्यं॒
दध॑तः प्र॒जां च॑ रा॒यश्च॒ पोषै॑र॒भि न॑ः सचध्वम् ॥ ६२ ॥
परा॑ यात पितरः सो॒म्यासो॑ गम्भी॒रैः प॒थिभि॑ः पूर्या॒णै॑ः । अधा॑ मा॒सि
पुन॒रा या॑त नो गृ॒हान् ह॒विरत्तु॑᳚ सुप्र॒जस॑ः सु॒वीरा॑ः ॥ ६३ ॥
यद् वो॑ अ॒ग्निरज॑हादेक॒मङ्गं॑᳚ पितृ॒लोकं॑ ग॒मयं॑᳚ जा॒तवे॑दाः । तद् व॑
ए॒तत् पुन॒रा प्या॑ययामि सा॒ङ्गाः स्व॒र्गे पि॒तरो॑ मादयध्वम् ॥ ६४ ॥
अभू॑द् दू॒तः प्रहि॑तो जा॒तवे॑दाः सा॒यं न्यह्न॑ उप॒वन्द्यो॒ नृभि॑ः । प्रादा॑ः
पि॒तृभ्य॑ः स्व॒धया॒ ते अ॑क्षन्न॒द्धि त्वं दे॑᳚व॒ प्रय॑ता ह॒वींषि॑ ॥ ६५ ॥
अ॒सौ हा इ॒ह ते॒ मन॒ः ककु॑त्सलमिव जा॒मय॑ः । अ॒भ्ये॑नं भूम ऊर्णुहि ।
शुम्भ॑न्तां लो॒काः पि॑तृ॒षद॑नाः पितृ॒षद॑ने त्वा लो॒क आ सा॑दयामि ६७
ये॒३॒॑स्माकं᳚ पि॒तर॒स्तेषां᳚ ब॒र्हिर॑सि ॥ ६८ ॥
उदु॑त्त॒मं व॑रुण॒ पाश॑म॒स्मदवा॑ध॒मं वि म॑ध्य॒मं श्र॑थाय । अधा॑ व॒यमा-
दित्य व्र॒ते तवाना॑गसो॒ अदि॑तये स्याम ॥ ६९ ॥
प्रास्मत् पाशा॑न् वरुण मुञ्च॒ सर्वा॒न् यैः सं॑मा॒मे ब॒ध्यते॒ यैर्व्या॒मे ।
अधा॑ जीवेम श॒रदं᳚ श॒तानि॒ त्वया॑ राजन् गुपि॒ता रक्ष॑माणाः ॥ ७० ॥
(२६)

अ॒ग्नये॑ कव्य॒वाह॑नाय स्व॒धा नमः॑ ॥ ७१ ॥
सोमा॑य पि॒तृऽम॑ते स्व॒धा नमः॑ ॥ ७२ ॥
पि॒तृभ्य॒ः सोम॑वद्भ्यः स्व॒धा नमः॑ ॥ ७३ ॥
य॒माय॑ पि॒तृऽम॑ते स्व॒धा नमः॑ ॥ ७४ ॥
ए॒तत् ते॑ प्रततामह स्व॒धा ये च॒ त्वामनु॑ ॥ ७५ ॥
ए॒तत् ते॑ ततामह स्व॒धा ये च॒ त्वामनु॑ ॥ ७६ ॥
ए॒तत् ते॑ तत स्व॒धा ॥ ७७ ॥
स्व॒धा पि॒तृऽभ्यः॑ पृथिवि॒षद्भ्यः॑ ॥ ७८ ॥
स्व॒धा पि॒तृभ्यो॑ अन्तरिक्ष॒सद्भ्यः॑ ॥ ७९ ॥
स्व॒धा पि॒तृभ्यो॑ दिवि॒षद्भ्यः॑ ॥ ८० ॥ (२७)
नमो॑ वः पितर ऊ॒र्जे नमो॑ वः पितरो॒ रसा॑य ॥ ८१ ॥
नमो॑ वः पितरो॒ भामा॑य॒ नमो॑ वः पितरो म॒न्यवे॑ ॥ ८२ ॥
नमो॑ वः पितरो॒ यद् घो॒रं तस्मै॒ नमो॑ वः पितरो॒ यत् क्रू॒रं तस्मै॑ ।८३।
नमो॑ वः पितरो॒ यच्छि॒वं तस्मै॒ नमो॑ वः पितरो॒ यत् स्यो॒नं तस्मै॑ ।८४।
नमो॑ वः पितरः स्व॒धा वः॑ पितरः ॥ ८५ ॥
येऽत्र॑ पि॒तरः॑ पि॒तरो॒ येऽत्र॑ यू॒यं स्थ यु॒ष्मांस्तेऽनु॑ यू॒यं तेषां॒ श्रेष्ठा॑
भूयास्थ ॥ ८६ ॥
य इ॒ह पि॒तरो॑ जी॒वा इ॒ह व॒यं स्मः॑ । अ॒स्मांस्तेऽनु॑ व॒यं तेषां॒ श्रेष्ठा॑
भूयास्म ॥ ८७ ॥

आ त्वा॑ग्न इधीमहि द्यु॒मन्तं॑ देवा॒जर॑म् । यद् घ॒ सा ते॒ पनी॑यसी स॒मिद्
दी॒दय॑ति॒ द्यवि॑ । इषं॑ स्तो॒तृभ्य॒ आ भ॑र ॥ ८८ ॥
च॒न्द्रमा॑ अ॒प्स्व॑१॒न्तरा सु॑प॒र्णो धा॑वते दि॒वि । न वो॑ हिरण्यनेमयः प॒दं
वि॑न्दन्ति विद्युतो वि॒त्तं मे॑ अ॒स्य रो॑दसी ॥ ८९ ॥ (२८) [४।१]

* * *

॥ इत्यष्टादशं काण्डम् समाप्तम् ॥

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथैकोनविंशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—यज्ञः ॥ छन्दः—१, २ पथ्या बृहती; ३ पङ्क्तिः ॥ मंत्र ३ ।

सं सं स्र॑वन्तु न॒द्य॑१ः सं वाता॒ः सं प॑त॒त्रिण॑ः । य॒ज्ञमि॒मं व॑र्धयतागिरः
संस्रा॒व्ये॑ण ह॒विषा॑ जुहोमि ॥ १ ॥
इ॒मं होमा॑ य॒ज्ञम॑वते॒मं सँ॑स्रावणा उ॒त । य॒ज्ञमि॒मं व॑र्धयता गिरः संस्रा॒व्ये॑ण ह॒विषा॑ जुहोमि ॥ २ ॥
रू॒पंरू॑पं॒ वयो॑वयः सं॒रभ्यै॑नं॒ परि॑ ष्वजे । य॒ज्ञमि॒मं चत॑स्रः प्र॒दिशो॑ वर्ध॑यन्तु संस्रा॒व्ये॑ण ह॒विषा॑ जुहोमि ॥ ३ ॥ (१।१)

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः—सिन्धुद्वीपः ॥ देवता—आपः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ५ ।

शं त॒ आपो॑ हैमव॒तीः शमु॑ ते सन्तू॒त्स्या॑ः । शं ते॑ सनि॒ष्यदा॒ आप॒ः
शमु॑ ते सन्तु व॒र्ष्या॑ः ॥ १ ॥
शं त॒ आपो॑ धन्व॒न्या॒३ः शं ते॑ सन्त्वनू॒प्या॑ः । शं ते॑ खनि॒त्रिमा॒ आप॒ः
शं याः कु॒म्भेभि॒राभृ॑ताः ॥ २ ॥

अ॒न॒भ्रय॒ः खन॑माना॒ विप्रा॑ गम्भी॒रे अ॒पस॑ः । भि॒षग्भ्यो॑ भि॒षक्त॑रा॒
आ॒पो अच्छा॑ वदामसि ॥ ३ ॥
अ॒पाम॒हं॑ दि॒व्या∫नाम॒पां स्रो॑त॒स्या∫नाम् । अ॒पाम॒हं प्र॒णेज॒नेऽश्वा॑
भवथ वा॒जिन॑ः ॥ ४ ॥
ता अ॒पः शि॒वा अ॒पोऽय॑क्ष्मं॒कर॑णीर॒पः । यथै॒व तृ॑प्यते॒ मय॒स्तास्त॒ आ
द॑त्त भेष॒जीः ॥ ५ ॥ (१।२)

—:०:—

सूक्त ३

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१, ३, ४ त्रिष्टुप्; २ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ४ ।

दि॒वस्पृ॑थि॒व्याः पर्य॒न्तरि॑क्षा॒द् वन॒स्पति॑भ्यो॒ अध्योष॑धीभ्यः । यत्र॑यत्र॒
वि॒भृ॑तो जा॒तवे॑दा॒स्तत॑ स्तु॒तो जु॒षमा॑णो न॒ एहि॑ ॥ १ ॥
यस्ते॑ अ॒प्सु म॑हि॒मा यो वन॒षु य ओष॑धीषु प॒शुष्व॒प्स्व॑१न्तः । अग्ने॒
सर्वा॑स्त॒न्व॑१॒ः सं र॑भस्व॒ ताभि॑र्न॒ एहि॑ द्रविणो॒दा अज॑स्रः ॥ २ ॥
यस्ते॑ दे॒वेष॑ महि॒मा स्व॒र्गो या ते॑ त॒नूः पि॒तृष्वा॑वि॒वेश॑ । पु॒ष्टिर्या ते॑
मनु॒ष्ये॑∫षु पप्र॒थेऽग्ने॒ तया॑ र॒यिम॒स्मासु॑ धेहि ॥ ३ ॥
श्रु॒त्क॑र्णाय क॒वये॒ वेद्या॑य॒ वचो॑भिर्वा॒कैरुप॑ यामि रा॒तिम् । यतो॑ भ॒यम॑-
भ॑यं॒ तन्नो॑ अ॒स्त्वव॑ दे॒वानां॑ यज॒ हेडो॑ अग्ने ॥ ४ ॥ (१।३)

—:०:—

सूक्त ४

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ पञ्चपदा विराडतिजगती; २ जगती; ३, ४ त्रिष्टुप् ॥ मंत्र ४ ।

यामाहु॑तिं प्रथ॒मामथ॑र्वा॒ या जा॒ता या ह॒व्यमकृ॑णोज्जा॒तवे॑दाः । तां त॑ ए॒तां प्र॑थ॒मो जो॑हवीमि॒ ताभि॑ष्टु॒प्तो व॑हतु॒ ह॒व्यम॒ग्निर॒ग्नये॒ स्वाहा॑ ॥१॥

आ॑कूतिं दे॒वीं सु॒भगां॑ पु॒रो द॑धे चि॒त्तस्य॑ मा॒ता सु॒हवा॑ नो अस्तु । यामा॒शामे॑मि॒ केव॑ली॒ सा मे॑ अस्तु॒ विदे॑यमेना॒ं मन॑सि॒ प्रवि॑ष्टाम् ॥२॥

आ॑कूत्या नो बृहस्पत॒ आकू॑त्या न॒ उपा ग॑हि । अथो॒ भग॑स्य नो धे॒ह्यथो॑ नः सु॒हवो॑ भव ॥ ३ ॥

बृह॒स्पति॑र्म॒ आकू॑तिमाङ्गिर॒सः प्रति॑ जानातु॒ वाच॑मे॒ताम् । यस्य॑ दे॒वा दे॒वताः॑ संब॒भूवुः स सु॒प्रणी॑ता॒ः कामो॒ अन्वे॑त्व॒स्मान् ॥ ४ ॥ (१।४)

—:०:—

सूक्त ५

ऋषिः—अथर्वाङ्गिराः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

इन्द्रो॒ राजा॒ जग॑तश्चर्षणी॒नामधि॒ क्षमि॒ विषु॑रूपं॒ यदस्ति॑ । ततो॑ ददाति दा॒शुषे॒ वसू॑नि॒ चोद॒द् राध॒ उप॑स्तुतश्चिद॒र्वाक् ॥ १ ॥ (१।५)

—:०:—

सूक्त ६

ऋषिः—नारायणः ॥ देवता—पुरुषः । छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १६ ।

स॒हस्र॑बाहुः पुरु॑षः सहस्रा॒क्षः स॒हस्र॑पात् । स भूमिं॑ वि॒श्वतो॑ वृ॒त्वात्य॑तिष्ठद् दशाङ्गु॒लम् ॥ १ ॥

त्रि॒भिः प॒द्भिर्द्याम॑रोह॒त् पाद॑स्ये॒हाभ॑व॒त् पुन॑ः । तथा॒ व्य१क्राम॒द्
विष्व॑ङशनानश॒ने अनु॑ ॥ २ ॥
ताव॑न्तो अस्य महि॒मान॒स्ततो॒ ज्याया॑ँश्च॒ पूरु॑षः । पादो॑ऽस्य॒ विश्वा॑
भूतानि॑ त्रि॒पाद॑स्या॒भृतँ॑ दि॒वि ॥ ३ ॥
पुरु॑ष ए॒वेदं सर्वं॒ यद् भूतं यच्च॑ भा॒व्य१म् । उ॒ताम॑ृत॒त्वस्ये॑श्व॒रो यद॒न्येना॑-
भ॑वत् स॒ह ॥ ४ ॥
यत् पुरु॑षं॒ व्यद॑धुः कति॒धा व्य१कल्पयन् । मुखं॒ किम॑स्य॒ किं बा॒हू किमू॒रू
पादा॑ उच्येते ॥ ५ ॥
ब्रा॒ह्म॒णो१स्य॒ मुख॑मासीद् बा॒हू रा॑ज॒न्यो॑१भवत् । मध्यं॒ तद॑स्य॒ यद् वैश्य॑ः
प॒द्भ्यां॑ शू॒द्रो अ॑जायत ॥ ६ ॥
च॒न्द्रमा॒ मन॑सो जा॒तश्चक्षो॒ः सूर्यो॑ अजायत । मुखा॒दिन्द्र॑श्चा॒ग्निश्च॑ प्रा॒णाद्
वा॒युर॑जायत ॥ ७ ॥
नाभ्या॑ आसीद॒न्तरि॑क्षं शी॒र्ष्णो द्यौः सम॑वर्तत । प॒द्भ्यां भूमि॒र्दिश॒ः
श्रोत्रा॒त् तथा॑ लो॒काँ अ॑कल्पयन् ॥ ८ ॥
वि॒राडग्रे॒ सम॑भवद् वि॒राजो॒ अधि॒ पूरु॑षः । स जा॒तो अत्य॑रिच्यत
प॒श्चाद् भूमि॒मथो॑ पु॒रः ॥ ९ ॥
यत् पुरु॑षेण ह॒विषा॑ दे॒वा य॒ज्ञमत॑न्वत । व॒स॒न्तो अ॑स्यासी॒दाज्यं॑ ग्री॒ष्म
इ॒ध्मः श॒रद्ध॒विः ॥ १० ॥
तं य॒ज्ञं प्रा॒वृषा॒ प्रौक्ष॒न् पुरु॑षं जा॒तम॑ग्र॒शः । तेन॑ दे॒वा अ॑यजन्त सा॒ध्या
वस॑वश्च॒ ये ॥ ११ ॥

त॒स्मा॒दश्वा॑ अजायन्त॒ ये च॒ के चो॑भ॒याद॑तः । गावो॑ ह जज्ञिरे॒ तस्मा॒त्
तस्मा॑ज्जा॒ता अ॑जा॒वय॑ः ॥ १२ ॥
तस्मा॑द् य॒ज्ञात् स॑र्व॒हुत॒ ऋच॒ः सामा॑नि जज्ञिरे । छन्दो॑ ह जज्ञिरे॒
तस्मा॒द् यजु॒स्तस्मा॑दजायत ॥ १३ ॥
तस्मा॑द् य॒ज्ञात् स॑र्व॒हुत॒ः संभृ॑तं पृषदा॒ज्य॑म् । प॒शूँस्तांश्च॑क्रे वाय॒व्या-
नार॒ण्या ग्रा॒म्याश्च॒ ये ॥ १४ ॥
स॒प्तास्या॑सन् परि॒धय॒स्त्रिः स॒प्त स॒मिध॑ः कृ॒ताः । दे॒वा यद् य॒ज्ञं
त॑न्वा॒ना अब॑ध्नन् पुरु॑षं प॒शुम् ॥ १५ ॥
मू॒र्ध्नो दे॒वस्य॑ बृह॒तो अ॒ंशव॑ः स॒प्त स॑प्त॒तीः । रा॒ज्ञः सोम॑स्याजायन्त
जा॒तस्य॒ पुरु॑षा॒दधि॑ ॥ १६ ॥ (१।६)

—:०:—

सूक्त ७

ऋषिः—गार्ग्यः ।। देवता नक्षत्राणि ।। छन्दः—१–३, ५ त्रिष्टुप्; ४ भुरिक्त्रिष्टुप् ।
मन्त्र ५ ।

चि॒त्राणि॑ सा॒कं दि॒वि रो॑च॒नानि॑ सरीसृ॒पाणि॒ भुव॑ने ज॒वानि॑ । तु॒र्मिशं॑
सु॒म॒तिमि॒च्छमा॑नो॒ अहा॑नि गी॒र्भिः स॑प॒र्यामि॒ नाक॑म् ॥ १ ॥
सु॒हव॑मग्ने॒ कृत्ति॑का॒ रोहि॑णी॒ चास्तु॑ भ॒द्रं मृ॒गशि॑र॒ः शमा॒र्द्रा । पुन॑र्वसू
सू॒नृता॒ चारु॒ पुष्यो॑ भा॒नुरा॑श्ले॒षा अय॑नं म॒घा मे॑ ॥ २ ॥
पुण्यं॒ पूर्वा॒ फल्गु॑न्यौ॒ चात्र॒ हस्त॑श्चि॒त्रा शि॒वा स्वा॒ति सु॒खो मे॑ अस्तु ।
राधे॑ वि॒शाखे॑ सु॒हवा॑नुरा॒धा ज्येष्ठा॑ सु॒नक्ष॑त्र॒मरि॑ष्ट॒ मूल॑म् ॥ ३ ॥

अन्नं पूर्वा रासतां मे अषाढा ऊर्जं देव्युत्तरा आ वहन्तु । अभिजिन्मे
रासतां पुण्यमेव श्रवणः श्रविष्ठाः कुर्वतां सुपुष्टिम् ॥ ४ ॥
आ मे महच्छतभिषग् वरीय आ मे द्वया प्रोष्ठपदा सुशर्म । आ रेवती
चाश्वयुजौ भगं म आ मे रयिं भरण्य आ वहन्तु ॥ ५ ॥ (१।७)

—:०:—

सूक्त ८

ऋषिः—गार्ग्यः ॥ देवता—नक्षत्राणि ॥ छन्दः—१ विराड् जगती; २—७ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

यानि नक्षत्राणि दिव्य१न्तरिक्षे अप्सु भूमौ यानि नगेषु दिक्षु । प्रकल्प-
यंश्चन्द्रमा यान्येति सर्वाणि ममैतानि शिवानि सन्तु ॥ १ ॥
अष्टाविंशानि शिवानि शग्मानि सह योगं भजन्तु मे । योगं प्र पद्ये
क्षेमं च क्षेमं प्र पद्ये योगं च नमोऽहोरात्राभ्यामस्तु ॥ २ ॥
स्वस्तितं मे सुप्रातः सुसायं सुदिवं सुमृगं सुशकुनं मे अस्तु । सुहवमग्ने
स्वस्त्य१मर्त्यं गत्वा पुनरायाभिनन्दन् ॥ ३ ॥
अनुहवं परिहवं परिवादं परिक्षवम् । सर्वैर्मे रिक्तकुम्भान् परा तान्त्स-
वितः सुव ॥ ४ ॥
अपपापं परिक्षवं पुण्यं भक्षीमहि क्षवम् । शिवा ते पाप नासिकां
पुण्यगश्चाभि मेहताम् ॥ ४ ॥
इमा या ब्रह्मणस्पते विषूचीर्वात ईरते । सध्रीचीरिन्द्र ताः कृत्वा मह्यं
शिवतमास्कृधि ॥ ६ ॥

स्व॒स्ति नो॑ अ॒स्त्वभ॑यं नो अस्तु॒ नमो॑ऽहोरा॒त्राभ्या॑मस्तु ॥७॥ (१।८)

—:०:—

सूक्त ९

ऋषिः—शन्तातिः ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ विराडुरोबृहती; २—४, ६—८, १०, ११, १३ अनुष्टुप्; ५ पञ्चपदा पथ्यापङ्क्तिः; ९ पञ्चपदा ककुम्मती (?, त्रिष्टुप्); १२ सप्तपदाऽष्टिः; १४ चतुष्पदा (?) संकृति ॥ मन्त्र १४ ।

शा॒न्ता द्यौः शा॒न्ता पृ॑थि॒वी शा॒न्तमि॒दमु॒र्व॑१॒न्तरि॑क्षम् । शा॒न्ता उ॑द॒न्वती॒राप॑ः शा॒न्ता न॑ः स॒न्त्वोष॑धीः ॥ १ ॥

शा॒न्तानि॑ पू॒र्वरू॒पाणि॑ शा॒न्तं नो॑ अस्तु कृ॒ताकृ॒तम् । शा॒न्तं भू॒तं च॒ भव्यं॑ च॒ सर्व॑मे॒व शम॑स्तु नः ॥ २ ॥

इ॒यं या प॑रमे॒ष्ठिनी॒ वाग् दे॒वी ब्रह्म॑संशिता । यये॒व स॑सृ॒जे घो॒रं तये॒व शान्ति॑रस्तु नः ॥ ३ ॥

इ॒दं यत् प॑रमे॒ष्ठिनं॒ मनो॑ वां॒ ब्रह्म॑संशितम् । येनै॒व स॑सृ॒जे घो॒रं तेनै॒व शान्ति॑रस्तु नः ॥ ४ ॥

इ॒मानि॒ यानि॒ पञ्चे॑न्द्रि॒याणि॒ मनः॑षष्ठानि मे हृ॒दि ब्रह्म॑णा॒ संशि॑तानि । यैरे॒व स॑सृ॒जे घो॒रं तैरे॒व शान्ति॑रस्तु नः ॥ ५ ॥

शं नो॑ मि॒त्रः शं वरु॑णः॒ शं विष्णुः॒ शं प्र॒जाप॑तिः । शं न॒ इन्द्रो॒ बृह॒स्पतिः॒ शं नो॑ भवत्वर्य॒मा ॥ ६ ॥

शं नो॑ मि॒त्रः शं वरु॑णः॒ शं वि॒वस्वा॒ञ्छम॑न्त॒कः । उ॒त्पा॒ताः पार्थि॑वान्तरि॒क्षाः शं नो॑ दि॒विच॑रा ग्र॒हाः ॥ ७ ॥

शं नो॒ भूमि॑र्वे॒प्यमा॑ना॒ शमु॒ल्का निर्ह॑तं च॒ यत्। शं गावो॒ लोहि॑तक्षीरा॒ः शं भूमि॒रव॑ तीर्य॑तीः ॥ ८ ॥

नक्ष॑त्रमु॒ल्काभिह॑तं॒ शम॑स्तु नः॒ शं नो॑ऽभिचा॒राः शमु॑ सन्तु कृ॒त्याः। शं नो॒ निखा॑ता व॒ल्गाः शमु॒ल्का दे॑शोपस॒र्गाः शमु॑ नो भवन्तु ॥ ९ ॥

शं नो॒ ग्रहा॑श्चान्द्रम॒साः शमा॑दि॒त्यश्च॑ राहु॒णा। शं नो॑ मृ॒त्युर्धू॒मके॑तुः॒ शं रु॒द्रास्ति॒ग्मते॑जसः ॥ १० ॥

शं रु॒द्राः शं वस॑वः॒ शमा॑दि॒त्याः शम॒ग्नयः॑। शं नो॑ मह॒र्षयो॑ दे॒वाः शं दे॒वाः शं बृह॒स्पतिः॑ ॥ ११ ॥

ब्रह्म॑ प्र॒जाप॑तिर्धा॒ता लो॒का वे॒दाः स॑प्तऋ॒षयो॒ऽग्नयः॑। तैर्मे॑ कृ॒तं स्व॒स्त्यय॑नमिन्द्रो॑ मे॒ शर्म॑ यच्छतु ब्र॒ह्मा मे॒ शर्म॑ यच्छतु। विश्वे॑ मे दे॒वाः शर्म॑ यच्छन्तु सर्वे॑ मे दे॒वाः शर्म॑ यच्छन्तु ॥ १२ ॥

यानि॒ कानि॑ चिच्छा॒न्तानि॑ लो॒के स॑प्तऋ॒षयो॑ विदुः। सर्वा॑णि॒ शं भ॑वन्तु मे॒ शं मे॑ अ॒स्त्वभ॑यं मे अस्तु ॥ १३ ॥

पृ॒थि॒वी शान्ति॑र॒न्तरि॑क्षं॒ शान्ति॒र्द्यौः शान्ति॒रापः॒ शान्ति॒रोष॑धयः॒ शान्ति॒र्वन॒स्पत॑यः॒ शान्ति॒र्विश्वे॑ मे दे॒वाः शान्तिः॒ सर्वे॑ मे दे॒वाः शान्तिः॒ शान्तिः॒ शान्तिः॒ शान्तिभिः॑। ताभिः॑ शान्तिभिः॒ सर्व॒ शान्तिभिः॒ शम॑यामो॒ऽहं यदि॒ह घो॒रं यदि॒ह क्रू॒रं यदि॒ह पा॒पं तच्छा॒न्तं तच्छि॒वं सर्व॑मे॒व शम॑स्तु नः ॥ १४ ॥ (१।९)

—:o:—

सूक्त १०

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १० ।

शं न॑ इन्द्रा॒ग्नी भ॑वता॒मवो॑भि॒ः शं न॒ इन्द्रा॒वरु॑णा रा॒तह॑व्या । शमिन्द्रा॒सोमा॑ सुवि॒ताय॒ शं योः शं न॒ इन्द्रा॑पू॒षणा॒ वाज॑सातौ ॥ १ ॥
शं नो॒ भग॒ः शमु॑ न॒ः शंसो॑ अस्तु॒ शं न॒ः पुरं॑धि॒ः शमु॑ सन्तु॒ राय॑ः ।
शं न॑ः स॒त्यस्य॑ सु॒यम॑स्य॒ शंस॒ः शं नो॑ अर्य॒मा पु॑रुजा॒तो अ॑स्तु ॥ २ ॥
शं नो॑ धा॒ता शमु॑ ध॒र्ता नो॑ अस्तु॒ शं न॑ उरू॒ची भ॑वतु स्व॒धाभि॑ः ।
शं रोद॑सी बृह॒ती शं नो॒ अद्रि॒ः शं नो॑ दे॒वानां॑ सु॒हवा॑नि सन्तु ॥ ३ ॥
शं नो॑ अ॒ग्निर्ज्योति॑रनीको अस्तु शं नो॑ मि॒त्रावरु॑णाव॒श्विना॒ शम् ।
शं न॑ः सु॒कृतां॑ सु॒कृ॒तानि॑ सन्तु॒ शं न॑ इषि॒रो अ॒भि वा॑तु॒ वात॑ः ॥ ४ ॥
शं नो॒ द्यावा॑पृथि॒वी पू॒र्वहू॑तौ॒ शम॒न्तरि॑क्षं दृ॒शये॑ नो अस्तु । शं न॒ ओष॑धीर्व॒निनो॑ भवन्तु॒ शं नो॒ रज॑स॒स्पति॑रस्तु जि॒ष्णुः ॥ ५ ॥
शं न॒ इन्द्रो॒ वसु॑भिर्दे॒वो अ॑स्तु॒ शमा॑दि॒त्येभि॒र्वरु॑णः सु॒शंस॑ः । शं नो॑ रु॒द्रो रु॒द्रेभि॒र्जला॑ष॒ः शं न॒स्त्वष्टा॒ ग्नाभि॑रि॒ह शृ॑णोतु ॥ ६ ॥
शं न॒ः सोमो॑ भवतु॒ ब्रह्म॒ शं न॒ः शं नो॒ ग्रावा॑ण॒ः शमु॑ सन्तु य॒ज्ञाः ।
शं न॒ः स्वरू॑णां मि॒तयो॑ भवन्तु॒ शं न॑ः प्र॒स्व॑ः१ शम्व॑स्तु॒ वेदि॑ः ॥ ७ ॥
शं न॒ः सूर्य॑ उरु॒चक्षा॒ उदे॑तु॒ शं नो॑ भवन्तु प्र॒दिश॒श्चत॑स्रः । शं न॒ः पर्व॑ता ध्रु॒वयो॑ भवन्तु॒ शं न॒ः सिन्ध॑व॒ः शमु॑ स॒न्त्वाप॑ः ॥ ८ ॥
शं नो॒ अदि॑तिर्भवतु व्र॒तेभि॒ः शं नो॑ भवन्तु म॒रुत॑ः स्व॒र्काः । शं नो॒ विष्णु॒ः शमु॑ पू॒षा नो॑ अस्तु शं नो॑ भ॒वित्रं॒ शम्व॑स्तु वा॒युः ॥ ९ ॥

शं नो॑ दे॒वः स॑वि॒ता त्राय॑माण॒ः शं नो॑ भवन्तू॒षसो॑ विभा॒तीः । शं नः॑
प॒र्जन्यो॑ भवतु प्र॒जाभ्य॒ः शं न॒ः क्षेत्र॑स्य॒ पति॑रस्तु शं॒भुः ॥१०॥ (२।१)

—:०:—

सूक्त ११

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

शं नः॑ स॒त्यस्य॒ पत॑यो भवन्तु॒ शं नो॒ अर्व॑न्त॒ः शमु॑ सन्तु॒ गाव॑ः । शं
न॑ ऋ॒भव॑ः सु॒कृत॑ः सु॒हस्ता॒ः शं नो॑ भवन्तु पि॒तरो॒ हवे॑षु ॥ १ ॥
शं नो॑ दे॒वा वि॒श्वदे॑वा भवन्तु॒ शं सर॑स्वती स॒ह धी॒भिर॑स्तु । शम॑-
भि॒षाच॒ः शमु॑ राति॒षाच॒ः शं नो॑ दि॒व्याः पार्थि॑वा॒ः शं नो॒ अप्या॑ः ।२।
शं नो॑ अ॒ज एक॑पाद्दे॒वो अ॑स्तु॒ शमहि॑र्बु॒ध्न्य॑१॒ः श स॑मु॒द्रः । शं नो॑
अ॒पां नपा॑त् पे॒रुर॑स्तु॒ शं न॒ः पृश्नि॑र्भवतु दे॒वगो॑पा ॥ ३ ॥
आ॒दि॒त्या रु॒द्रा वस॑वो जुषन्तामि॒दं ब्रह्म॑ क्रि॒यमा॑णं॒ नवी॑यः । शृ॒ण्वन्तु॑
नो दि॒व्याः पार्थि॑वासो॒ गोजा॑ता उ॒त ये य॒ज्ञिया॑सः ॥ ४ ॥
ये दे॒वाना॑मृ॒त्विजो॑ य॒ज्ञिया॑सो॒ मनो॒र्यज॑त्रा अ॒मृता॑ ऋत॒ज्ञाः । ते नो॑
रासन्तामुरुगा॒यम॒द्य यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒ः सदा॑ नः ॥ ५ ॥
तद॑स्तु मित्रावरुणा॒ तद॑ग्ने॒ शं योर॒स्मभ्य॑मि॒दम॑स्तु श॒स्तम् । अ॒शी॒महि॑
गा॒धमु॒त प्र॑ति॒ष्ठां नमो॑ दि॒वे बृ॑ह॒ते साद॑नाय ॥ ६ ॥ (२।२)

—:०:—

सूक्त १२

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—उषा ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ १ ।

उ॒षा अप॒ स्वसु॒स्तम॒ः सं व॑र्तयति वर्त॒निं सु॑जा॒तता॑ । अ॒या वाजं॑ दे॒वहि॑तं सनेम॒ मदे॑म श॒तहि॑माःसु॒वीराः॑ ॥ १ ॥ (२।३)

—:०:—

सूक्त १३

ऋषिः—अप्रतिरथः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, २, ७—१० त्रिष्टुप्; ३—६, ११ भुरिक् त्रिष्टुप् ॥ ॥ मन्त्र ११ ।

इन्द्र॑स्य बा॒हू स्थवि॑रौ॒ वृषा॑णौ चि॒त्रा इ॒मा वृ॑ष॒भौ पा॑रयि॒ष्णू । तौ यो॑क्षे प्रथ॒मो योग॒ आग॑ते॒ याभ्यां॑ जि॒तमसु॑राणा॒ं स्व॑१॒र्यत् ॥ १ ॥

आ॒शुः शिशा॑नो वृष॒भो न भी॒मो घ॑नाघ॒नः क्षोभ॑णश्चर्षणी॒नाम् । सं॒क्रन्द॑नोऽनिमि॒ष ए॑कवी॒रः श॒तं सेना॑ अजयत् सा॒कमिन्द्रः॑ ॥ २ ॥

सं॒क्रन्द॑नेनानिमि॒षेण॑ जि॒ष्णुना॑ऽयो॒ध्येन॑ दुश्च्यव॒नेन॑ धृ॒ष्णुना॑ । तदिन्द्रे॑ण जयत॒ तत् स॑हध्वं॒ युधो॑ नर॒ इषु॑हस्तेन॒ वृष्णा॑ ॥ ३ ॥

स इषु॑हस्तैः॒ स नि॑ष॒ङ्गिभि॑र्व॒शी संस्र॑ष्टा॒ स युध॒ इन्द्रो॑ ग॒णेन॑ । सं॒सृ॒ष्ट॒जित् सो॑म॒पा बा॑हुश॒र्ध्यु१॒ग्रध॑न्वा॒ प्रति॑हिताभि॒रस्ता॑ ॥ ४ ॥

ब॒ल॒वि॒ज्ञा॒यः स्थवि॑रः॒ प्रवी॑रः॒ सह॑स्वान् वा॒जी सह॑मान उ॒ग्रः । अ॒भिवी॑रो अ॒भिष॑त्वा सहो॒जिज्जैत्र॑मिन्द्र॒ रथ॒मा ति॑ष्ठ गो॒विद॑न् ॥ ५ ॥

इ॒मं वी॒रमनु॑ हर्षध्वमु॒ग्रमिन्द्रं॑ सखायो॒ अनु॒ सं र॑भध्वम् । ग्रा॒म॒जितं॑ गो॒जितं॒ वज्र॑बाहुं॒ जय॑न्त॒मज्म॑ प्रमृ॒णन्त॒मोज॑सा ॥ ६ ॥

अ॒भि गो॒त्राणि॒ सह॑सा॒ गाह॑मानोऽदा॒य उ॒ग्रः श॒तम॑न्यु॒रिन्द्रः॑ । दु॒श्च्य॒व॒नः पृ॑तना॒षाड॑यो॒ध्यो॒३॒स्माकं॒ सेना॑ अवतु॒ प्र यु॒त्सु ॥ ७ ॥

बृह॑स्पते॒ परि॑ दीया॒ रथे॑न रक्षो॒हामित्राँ॑ अप॒बाध॑मानः । प्र॒भ॒ञ्जञ्छत्रू॑न् प्रमृ॒णन्न॒मित्रा॑न॒स्माक॑मेध्यवि॒ता त॒नूना॑म् ॥ ८ ॥

इन्द्र॑ एषां॑ ने॒ता बृह॒स्पति॒र्द॑क्षिणा य॒ज्ञः पु॒र ए॑तु॒ सोमः॑ । दे॒व॒से॒नाना॑मभिभञ्जती॒नां जय॑न्तीनां म॒रुतो॑ यन्तु॒ मध्ये॑ ॥ ९ ॥

इन्द्र॑स्य॒ वृष्णो॒ वरु॑णस्य॒ राज्ञ॑ आदि॒त्यानाँ॑ म॒रुता॒ं शर्ध॑ उ॒ग्रम् । म॒हाम॑नसां॑ भुवनच्य॒वाना॒ं घोषो॑ दे॒वाना॒ं जय॑ता॒मुद॑स्थात् ॥ १० ॥

अ॒स्माक॒मिन्द्र॒ः समृ॑तेषु ध्व॒जेष्व॒स्माक॒ं या इष॑व॒स्ता ज॑यन्तु । अ॒स्माकँ॑ वी॒रा उत्त॑रे भवन्त्व॒स्मान् देँ॑वासो॑ऽवता॒ हवे॑षु ॥ ११ ॥ (२।४)

—:०:—

सूक्त १४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—द्यावापृथिव्यौ ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मंत्र १ ।

इ॒दमु॒च्छ्रेयो॑ऽव॒सान॒मागाँ॑ शि॒वे मे॒ द्यावा॑पृथि॒वी अ॑भूताम् । अ॒स॒प॒त्नाः प्र॒दिशो॑ मे भवन्तु॒ न वै त्वा॑ द्विष्मो॒ अभ॑यं नो अस्तु ॥ १ ॥ (२।५)

—:०:—

सूक्त १५

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—१—४ इन्द्रः; ५, ६ मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ पथ्याबृहती; २,५ जगती; ३ विराड् पथ्या पङ्क्तिः; ४, ६ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

यत॑ इन्द्र॒ भया॑महे॒ ततो॑ नो॒ अभ॑यं कृधि । मघ॑वञ्छ॒ग्धि तव॒ त्वं न॑ ऊ॒तिभि॒र्वि॑ द्वि॒षो वि मृधो॑ जहि ॥ १ ॥

इन्द्रँ॑ व॒यम॑नूरा॒धं ह॑वाम॒हेऽनु॑ राध्यास्म द्वि॒पदा॒ चतु॑ष्पदा । मा न॒ः सेना॒ अर॑रुषी॒रुप॑ गु॒र्विषू॑चीरिन्द्र द्रु॒हो वि ना॑शय ॥ २ ॥

इन्द्र॑स्त्रा॒तोत वृ॑त्र॒हा प॑र॒स्फानो॒ वरे॑ण्यः । स र॑क्षि॒ता च॑रम॒तः स म॑ध्य॒तः
स प॒श्चात् स पु॒रस्ता॑न्नो अस्तु ॥ ३ ॥
उ॒रुं नो॑ लो॒कमनु॑ नेषि वि॒द्वान्त्स्व॑१॒यज्ज्योति॒रभ॑यं स्व॒स्ति । उ॒ग्रा त॑
इन्द्र॒ स्थवि॑रस्य बा॒हू उप॑ क्षयेम शर॒णा बृ॒हन्ता॑ ॥ ४ ॥
अभ॑यं नः करत्य॒न्तरि॑क्ष॒मभ॑यं॒ द्यावा॑पृथि॒वी उ॒भे इ॒मे । अभ॑यं प॒श्चाद-
भ॑यं पु॒रस्ता॑दुत्त॒राद॑ध॒राद॑भ॑यं नो॑ अस्तु ॥ ५ ॥
अभ॑यं मित्रादभ॑यम॒मित्रा॒दभ॑यं ज्ञा॒तादभ॑यं पु॒रो यः । अभ॑यं॒ नक्त॒-
मभ॑यं॒ दिवा॑ नः॒ सर्वा॒ आशा॒ मम॑ मि॒त्रं भव॑न्तु ॥ ६ ॥ (२।६)

—:०:—

सूक्त १६

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता - मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २ सप्तपदा बृहतीगर्भातिशक्वरी ॥ मन्त्र २ ।

अ॒स॒प॒त्नं पु॒रस्ता॑त् प॒श्चान्नो॒ अभ॑यं कृतम् । स॒वि॒ता मा॑ दक्षिण॒त
उ॑त्त॒रान्मा॒ शची॒पति॑ः ॥ १ ॥
दि॒वो मा॑दि॒त्या र॑क्षन्तु॒ भूम्या॑ रक्षन्त्व॒ग्नय॑ः । इ॒न्द्रा॒ग्नी र॑क्षतां मा पु॒रस्ता॑-
द॒श्विना॑व॒भित॒ः शर्म॑ यच्छताम् । ति॒र॒श्चीन॒घ्न्या र॑क्षतु जा॒तवे॑दा
भूत॒कृतो॑ मे स॒र्वत॑ः सन्तु॒ वर्म॑ ॥ २ ॥ (२।७)

—:०:—

सूक्त १७

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१—४, ८ जगते; ५, ७, १० जगती; ६ भुरिग् जगती; ९ पञ्चपदाऽतिशक्वरी ॥ मन्त्र १० ।

अ॒ग्निर्मा॑ पा॒तु वसु॑भिः पु॒रस्ता॒त् तस्मि॑न् क्रमे॒ तस्मि॑ञ्छ्रये॒ तां॑ पुरं॒ प्रैमि॑ ।
स मा॑ रक्षतु॒ स मा॑ गोपायतु॒ तस्मा॑ आ॒त्मानं॒ परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥ १ ॥

वा॒युर्मा॒न्तरि॑क्षेणै॒तस्या॑ दि॒शः पा॑तु॒ तस्मि॑न्···ददे॒ स्वाहा॑ ॥ २ ॥

सोमो॑ मा रु॒द्रैर्दक्षि॑णाया दि॒शः पा॑तु॒ तस्मि॑न्···परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥३॥

वरु॑णो मादि॒त्यैरे॒तस्या॑ दि॒शः पा॑तु॒ तस्मि॑न्···परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥४॥

सूर्यो॑ मा॒ द्यावा॑पृथि॒वीभ्यां॑ प्र॒तीच्या॑ दि॒शः पा॑तु॒ तस्मि॑न्···परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥ ५ ॥

आपो॒ मौष॑धीमतीरे॒तस्या॑ दि॒शः पा॑न्तु॒ तासु॑···परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥६॥

वि॒श्वक॑र्मा मा सप्तऋ॒षिभि॒रुदी॑च्या दि॒शः पा॑तु॒ तस्मि॑न्···परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥ ७ ॥

इन्द्रो॑ मा म॒रुत्वा॑ने॒तस्या॑ दि॒शः पा॑तु॒ तस्मि॑न्···परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥८॥

प्र॒जाप॑तिर्मा प्र॒जन॑नवान्त्स॒ह प्र॒तिष्ठा॑या ध्रु॒वाया॑ दि॒शः पा॑तु॒···परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥ ९ ॥

बृह॒स्पति॑र्मा॒ विश्वै॑र्दे॒वैरू॒र्ध्वाया॑ दि॒शः पा॑तु॒ तस्मि॑न्····परि॑ ददे॒ स्वाहा॑ ॥ १० ॥ (२।८)

—०—

सूक्त १८

ऋषिः— अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, ८ साम्नी त्रिष्टुप्; २—४, ६ आर्च्यनुष्टुप्; ५ सम्राड् (?, स्वराड्) आर्च्यनुष्टुप्; ७, ९, १० प्राजापत्या त्रिष्टुप्; (सर्वा द्विपदाः) ॥ मन्त्र १० ।

अ॒ग्निं ते वसु॑वन्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यवः॒ प्राच्या॑ दि॒शो॒ऽभि॒दासा॑त् ।१।

वा॒युं ते॒ऽन्तरि॑क्षवन्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यव॑ ए॒तस्या॑ दि॒शो॒ऽभि॒दासा॑त् ।२।

सोमं॒ ते रु॒द्रव॑न्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यवो॒ दक्षि॑णाया दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥३॥
वरु॑णं॒ त आ॑दि॒त्यव॑न्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यव॑ ए॒तस्यां॑ दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥ ४ ॥
सूर्यं॒ ते द्यावा॑पृथि॒वीव॑न्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यव॑ः प्र॒तीच्यां॑ दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥ ५ ॥
अ॒पस्त ओष॑धीमतीर्ऋच्छन्तु । ये मा॑घा॒यव॑ ए॒तस्यां॑ दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥ ६ ॥
वि॒श्वक॑र्माणं॒ ते स॑प्तऋ॒षिव॑न्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यव॒ उदी॑च्या दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥ ७ ॥
इन्द्रं॒ ते म॒रुत्व॑न्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यव॑ ए॒तस्यां॑ दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥८॥
प्र॒जाप॑तिं॒ ते प्र॒जन॑नवन्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यवो॑ ध्रु॒वायां॑ दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥ ९ ॥
बृह॒स्पतिं॒ ते वि॒श्वदे॑ववन्तमृच्छन्तु । ये मा॑घा॒यव॑ ऊ॒र्ध्वायां॑ दि॒शोऽभि॒दासा॑त् ॥ १० ॥ [२।९]

—:०:—

सूक्त १९

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, ३, ९ भुरिग्बृहती; २, ४–८, ११ अनुष्टुब्गर्भा पङ्क्तः; १० स्वराट् पङ्क्तः ॥ मन्त्र ११ ।

मि॒त्रः पृ॑थि॒व्योद॑क्राम॒त् तां पुरं॒ प्र ण॑यामि वः । तामा वि॑शत॒ तां प्र
वि॑शत॒ सा वः॒ शर्म॑ च॒ वर्म॑ च यच्छतु ॥ १ ॥

वायुरन्तरिक्षेणोदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ २ ॥
सूर्यो दिवोदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ३ ॥
चन्द्रमा नक्षत्रैरुदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ४ ॥
सोम ओषधीभिरुदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ५ ॥
यज्ञो दक्षिणाभिरुदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ६ ॥
समुद्रो नदीभिरुदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ७ ॥
ब्रह्म ब्रह्मचारिभिरुदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ८ ॥
इन्द्रो वीर्येणोदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ९ ॥
देवा अमृतेनोदक्रामंस्तां···यच्छतु ॥ १० ॥
प्रजापतिः प्रजाभिरुदक्रामत् तां···यच्छतु ॥ ११ ॥ (२।१०)

—:०:—

सूक्त २०

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ जगती; ३ पुरस्ताद् बृहती; ४ अनुष्टुब्गर्भा त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ४।

अप न्यधुः पौरुषेयं वधं यमिन्द्राग्नी धाता सविता बृहस्पतिः । सोमो
राजा वरुणो अश्विना यमः पूषास्मान् परि पातु मृत्योः ॥ १ ॥
यानि चकार भुवनस्य यस्पतिः प्रजापतिर्मातरिश्वा प्रजाभ्यः । प्रदिशो
यानि वसते दिशश्च तानि मे वर्माणि बहुलानि सन्तु ॥ २ ॥
यत् ते तनूष्वनह्यन्त देवा द्युराजयो देहिनः । इन्द्रो यच्चक्रे वर्म
तदस्मान् पातु विश्वतः ॥ ३ ॥

वर्म॑ मे॒ द्यावा॑पृथि॒वी वर्मा॑ह॒र्वर्म॒ सूर्यः॑ । वर्म॑ मे॒ विश्वे॑ दे॒वाः क्र॒न् मा
मा॒ प्राप॑त् प्रतीचि॒का ॥ ४ ॥ (२।११)

—:o:—

सूक्त २१

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—छन्दांसि ॥ छन्दः—द्विपदा साम्नी बृहती (एकावसाना) । मन्त्र १ ।

गा॒य॒त्र्यु॑१॒ष्णिग॑नु॒ष्टुब् बृ॑ह॒ती प॒ङ्क्तिस्त्रि॒ष्टुब् जग॑त्यै ॥ १ ॥ (३।१)

—:o:—

सूक्त २२

ऋषिः—अङ्गिरा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ साम्न्युष्णिक्; २, ६, १४—१६, २० दैवी पङ्क्तिः; ३, १९ प्राजापत्या गायत्री; ४, ७, ११, १७ दैवी जगती; ५, १२, १३ दैवी त्रिष्टुप्; ८—१० आसुरी जगती; १८ आसुर्यनुष्टुप्; २१ चतुष्पदा त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २१ ।

आ॒ङ्गि॒र॒साना॑मा॒द्यैः पञ्चा॑नुवा॒कैः स्वाहा॑ ॥ १ ॥
ष॒ष्ठाय॒ स्वाहा॑ ॥ २ ॥ स॒प्त॒मा॒ष्ट॒माभ्यां॒ स्वाहा॑ ॥ ३ ॥
नी॒ल॒न॒खेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ ४ ॥ ह॒रि॒तेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ ५ ॥
क्षु॒द्रेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ ६ ॥ प॒र्या॒यि॒केभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ ७ ॥
प्र॒थ॒मेभ्य॑ः श॒ङ्खेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥८॥ द्वि॒ती॒येभ्य॑ः श॒ङ्खेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥९॥
तृ॒ती॒येभ्य॑ः श॒ङ्खेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ १० ॥ उ॒पो॒त्त॒मेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ ११ ॥
उ॒त्त॒मेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ १२ ॥ उ॒त्त॒रेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ १३ ॥
ऋ॒षिभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ १४ ॥ शि॒खिभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ १५ ॥

ग॒णेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १६ ॥ म॒हा॒ग॒णेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १७ ॥

स॒र्वे॒भ्योऽङ्गिरोभ्यो विदग॒णेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १८ ॥

पृ॒थ॒क्स॒ह॒स्राभ्यां॒ स्वाहा॑ ॥ १९ ॥ ब्र॒ह्मणे॒ स्वाहा॑ ॥ २० ॥

ब्रह्म॑ज्येष्ठा॒ संभृ॑ता वी॒र्या॒ऽणि॒ ब्रह्माग्रे॒ ज्येष्ठं॒ दिव॒मा त॑तान । भू॒तानां॑
ब्र॒ह्मा प्र॑थ॒मोत ज॑ज्ञे॒ तेना॑र्हति॒ ब्रह्म॑णा॒ स्पर्धि॑तुं॒ कः ॥ २१ ॥ (३।२)

— :०:—

सूक्त २३

ऋषिः - अथर्वा ॥ देवता— मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१ आसुरी बृहती; २—७ २०, २३, २७ दैवी त्रिष्टुप्; ८, १०—१२, १४—१६ प्राजापत्या गायत्री, १७, १९, २१, २४, २५, २९ दैवी पङ्क्तिः; ९, [१३], १८, [२२,] २६, २८ दैवी जगती; [३० चतुष्पदा त्रिष्टुप्] ॥ मन्त्र ३० ।

आ॒थ॒र्व॒णाना॑ँ चतुर्ऋ॒चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १ ॥ प॒ञ्च॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ २ ॥

ष॒डृ॒चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ३ ॥ स॒प्त॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ४ ॥

अ॒ष्ट॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ५ ॥ न॒व॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ६ ॥

द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ७ ॥ ए॒का॒द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ८ ॥

द्वा॒द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ९ ॥ त्र॒यो॒द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १० ॥

च॒तु॒र्द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ ११ ॥ प॒ञ्च॒द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १२ ॥

षो॒ड॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १३ ॥ स॒प्त॒द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १४ ॥

अ॒ष्टा॒द॒श॒र्चेभ्यः॒ स्वाहा॑ ॥ १५ ॥ ए॒को॒न॒विं॒श॒तिः स्वाहा॑ ॥ १६ ॥

विं॒श॒तिः स्वाहा॑ ॥ १७ ॥ म॒ह॒त्का॒ण्डा॒य॒ स्वाहा॑ ॥ १८ ॥

तृ॒चेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ १९ ॥
ए॒क॒र्चेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ २० ॥
क्षु॒द्रेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ २१ ॥
ए॒का॒नृ॒चेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ २२ ॥
रो॒हि॒तेभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ २३ ॥
सू॒र्याभ्या॒ं स्वाहा॑ ॥ २४ ॥
व्रा॒त्याभ्या॒ं स्वाहा॑ ॥ २५ ॥
प्रा॒जा॒प॒त्याभ्या॒ं स्वाहा॑ ॥ २६ ॥
वि॒षा॒स॒ह्यै स्वाहा॑ ॥ २७ ॥
म॒ङ्ग॒लि॒केभ्य॒ः स्वाहा॑ ॥ २८ ॥
ब्र॒ह्मणे॒ स्वाहा॑ ॥ २९ ॥

ब्रह्म॑ज्येष्ठा॒ संभृ॑ता वी॒र्या॑णि॒ ब्रह्माग्रे॒ ज्येष्ठं॒ दिव॒मा त॑तान । भू॒तानां॒ ब्र॒ह्मा
प्र॑थ॒मोत ज॑ज्ञे॒ तेना॑र्हति॒ ब्रह्म॑णा॒ स्पर्धि॑तुं॒ कः ॥ ३० ॥ (३१३)

—:०:—

सूक्त २४

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१—३ अनुष्टुप्; ४—६, ८ त्रिष्टुप्; ७ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री ॥ मन्त्र ८ ।

येन॑ दे॒वं स॑वि॒तारं॒ परि॑ दे॒वा अधा॑रयन् । तेने॒मं ब्र॑ह्मणस्पते॒ परि॑
रा॒ष्ट्राय॑ धत्तन ॥ १ ॥
परी॒ममिन्द्र॒मायु॑षे म॒हे क्ष॒त्राय॑ धत्तन । यथै॑नं ज॒रसे॑ न॒यां ज्योक्
क्ष॒त्रेऽधि॑ जागरत् ॥ २ ॥
परी॒मं सोम॒मायु॑षे म॒हे श्रोत्रा॑य धत्तन । यथै॑नं ज॒रसे॑ न॒यां ज्योक्
श्रोत्रेऽधि॑ जागरत् ॥ ३ ॥
परि॑ धत्त ध॒त्त नो॒ वर्च॑से॒मं ज॒रामृ॑त्युं कृणुत दी॒र्घमायु॑ः । बृह॒स्पति॒ः
प्राय॑च्छ॒द् वास॑ ए॒तत् सोमा॑य॒ राज्ञे॒ परि॑धात॒वा उ॑ ॥ ४ ॥

जरां सु गच्छ परि धत्स्व वासो भवा गृष्टीनामभिशस्तिपा उ । शतं च जीव शरदः पुरूची रायश्च पोषमुपसंव्ययस्व ॥ ५ ॥

परीदं वासो अधिथाः स्वस्तयेऽभूर्वापीनामभिशस्तिपा उ । शतं च जीव शरदः पुरूचीर्वसूनि चारुर्वि भजासि जीवन् ॥ ६ ॥

योगेयोगे तवस्तरं वाजेवाजे हवामहे । सखाय इन्द्रमूतये ॥ ७ ॥

हिरण्यवर्णो अजरः सुवीरो जरामृत्युः प्रजया सं विशस्व । तदग्निराह तदु सोम आह बृहस्पतिः सविता तदिन्द्रः ॥ ८ ॥ (३।४)

—:o:—

सूक्त २५

ऋषिः—गोपथः ॥ देवता—वाजी ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

अश्रान्तस्य त्वा मनसा युनज्मि प्रथमस्य च । उत्कूलमुद्वहो भवोदुह्य प्रति धावतात् ॥ १ ॥ (३।४)

—:o:—

सूक्त २६

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः । हिरण्यम् ॥ छन्दः—१, २ त्रिष्टुप्; ३ अनुष्टुप्; ४ पथ्या पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ४ ।

अग्नेः प्रजातं परि यद्धिरण्यममृतं दध्रे अधि मर्त्येषु । य एनद् वेद स इदेनमर्हति जरामृत्युर्भवति यो बिभर्ति ॥ १ ॥

यद्धिरण्यं सूर्येण सुवर्णं प्रजावन्तो मनवः पूर्व ईषिरे । तत् त्वा चन्द्रं वर्चसा सं सृजत्यायुष्मान् भवति यो बिभर्ति ॥ २ ॥

आयु॑षे त्वा॒ वर्च॑से॒ त्वौज॑से च॒ बला॑य च । यथा॑ हिरण्य॒तेज॑सा वि॒भासा॑सि॒ जना॒ँ अनु॑ ॥ ३ ॥

यद् वेद॒ राजा॒ वरु॑णो॒ वेद॑ दे॒वो बृह॒स्पति॑ः । इन्द्रो॒ यद् वृ॑त्र॒हा वेद॒ तत् त॑ आयु॒ष्यं॑ भुव॒त् तत् ते॑ वर्च॒स्यं॑ भुवत् ॥ ४ ॥ [३।६]

—:०:—

सूक्त २७

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—त्रिवृत् चन्द्रमाश्च ॥ छन्दः—१, २, ४—८, १४ अनुष्टुप्; ३, ९ त्रिष्टुप्; १० जगती (?, त्रिष्टुप्) ११ आर्च्युष्णिक्; १२ आर्च्युनुष्टुप् १३ साम्नी त्रिष्टुप्; [१५ षट्पदाऽतिशक्वरी] ॥ मन्त्र १५ ।

गोभि॑ष्ट्वा पात्वृष॒भो वृषा॑ त्वा पातु वा॒जिभि॑ः । वा॒युष्ट्वा॒ ब्रह्म॑णा पा॒त्विन्द्र॑स्त्वा पात्विन्द्रि॒यै॑ः ॥ १ ॥

सोम॑स्त्वा पा॒त्वोष॑धीभि॒र्नक्ष॑त्रैः पातु॒ सूर्य॑ः । मा॒द्भ्यस्त्वा॑ च॒न्द्रो वृ॑त्र॒हा वात॑ः प्रा॒णेन॑ रक्षतु ॥ २ ॥

ति॒स्रो दिव॑स्ति॒स्रः पृ॑थि॒वीस्त्रीण्य॒न्तरि॑क्षाणि च॒तुर॑ः समु॒द्रान् । त्रि॒वृतं॑ स्तोम॑ं त्रि॒वृत॒ आप॑ आहु॒स्तास्त्वा॑ रक्षन्तु त्रि॒वृता॑ त्रि॒वृद्भि॑ः ॥ ३ ॥

त्रीन्ना॒कांस्त्रीन् स॑मु॒द्रांस्त्रीन् ब्र॒ध्नांस्त्रीन् वै॑ष्ट॒पान् । त्रीन् मा॑त॒रिश्व॑न॒स्त्रीन्त्सूर्या॑न् गो॒प्तॄन् क॑ल्पयामि ते ॥ ४ ॥

घृ॒तेन॑ त्वा॒ समु॑क्षा॒म्यग्न॒ आज्ये॑न व॒र्धय॑न् । अ॒ग्नेश्च॒न्द्रस्य॒ सूर्य॑स्य॒ मा प्रा॒णं मा॒यिनो॑ दभन् ॥ ५ ॥

मा व॑ः प्रा॒णं मा वो॑ऽपा॒नं मा हरो॑ मा॒यिनो॑ दभन् । भ्राज॑न्तो वि॒श्ववे॑दसो दे॒वा दैव्ये॑न धावत ॥ ६ ॥

प्रा॒णेना॒ग्निं सं सृ॑जति॒ वात॑ः प्रा॒णेन॒ संहि॑तः । प्रा॒णेन॑ वि॒श्वतो॑मुखं॒ सूर्यं॑
दे॒वा अ॑जनयन् ॥ ७ ॥
आयु॑षायु॒ःकृतां॑ जी॒वायु॑ष्मान् जीव॒ मा मृ॑थाः । प्रा॒णेना॑त्म॒न्वतां॑ जीव॒
मा मृ॒त्योरुद॑गा॒ वश॑म् ॥ ८ ॥
दे॒वाना॒ं निहि॑तं नि॒धिं यमिन्द्रो॒ऽन्ववि॑न्दत् प॒थिभि॑र्देव॒यानैः॑ । आपो॒
हिर॑ण्यं जुगुपुस्त्रि॒वृद्भि॒स्तास्त्वा॑ रक्षन्तु त्रि॒वृता॑ त्रि॒वृद्भिः॑ ॥ ९ ॥
त्रय॑स्त्रिंशद् दे॒वता॒स्त्रीणि॑ च वी॒र्या॑णि प्रिया॒यमा॑णा जुगुपुर॒प्स्व॑१॒न्तः ।
अ॒स्मिश्च॒न्द्रे अधि॒ यद्धिर॑ण्यं॒ तेना॒यं कृ॑णवद् वी॒र्या॑णि ॥ १० ॥
ये दे॑वा दि॒व्येका॑दश॒ स्थ ते दे॑वासो ह॒विरि॒दं जु॑षध्वम् ॥ ११ ॥
ये दे॑वा अ॒न्तरि॑क्ष॒ एका॑दश॒ स्थ ते दे॑वासो ह॒विरि॒दं जु॑षध्वम् ॥ १२ ॥
ये दे॑वा पृथि॒व्यामेका॑दश॒ स्थ ते दे॑वासो ह॒विरि॒दं जु॑षध्वम् ॥ १३ ॥
अ॒स॒प॒त्नं पु॒रस्ता॑त् प॒श्चान्नो॒ अभ॑यं कृतम् । स॒वि॒ता मा॑ दक्षिण॒त
उ॑त्त॒रान्मा॒ शची॒पतिः॑ ॥ १४ ॥
दि॒वो मा॑दि॒त्या र॑क्षन्तु॒ भूम्या॑ रक्षन्त्व॒ग्नय॑ः । इ॒न्द्रा॒ग्नी र॑क्षतां मा
पु॒रस्ता॑द॒श्विना॑व॒भित॒ः शर्म॑ यच्छताम् । ति॒र॒श्चीन॒घ्न्या र॑क्षतु जा॒तवे॑दा
भू॒तकृ॑तो मे स॒र्वत॑ः सन्तु॒ वर्म॑ ॥ १५ ॥ [४।१]

—:०:—

सूक्त २८

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—दर्भमणिः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १० ।

इमं बध्नामि ते मणिं दीर्घायुत्वाय तेजसे । दर्भं सपत्नदम्भनं
द्विषतस्तपनं हृदः ॥ १ ॥
द्विषतस्तापयन् हृदः शत्रूणां तापयन् मनः । दुर्हार्दः सर्वांस्त्वं दर्भ
घर्म इवाभीन्त्संतापयन् ॥ २ ॥
घर्म इवाभितपन् दर्भ द्विषतो नितपन् मणे । हृदः सपत्नानां
भिन्द्धीन्द्र इव विरुजं बलम् ॥ ३ ॥
भिन्द्धि दर्भ सपत्नानां हृदयं द्विषतां मणे । उद्यन् त्वचमिव भूम्याः
शिर एषां वि पातय ॥ ४ ॥
भिन्द्धि दर्भ सपत्नान् मे भिन्द्धि मे पृतनायतः । भिन्द्धि मे सर्वान्
दुर्हार्दो भिन्द्धि मे द्विषतो मणे ॥ ५ ॥
छिन्द्धि दर्भ सपत्नान् मे छिन्द्धि मे पृतनायतः । छिन्द्धि मे सर्वान्
दुर्हार्दान् छिन्द्धि मे द्विषतो मणे ॥ ६ ॥
वृश्च दर्भ सपत्नान् मे वृश्च मे पृतनायतः । वृश्च मे सर्वान् दुर्हार्दो वृश्च
मे द्विषतो मणे ॥ ७ ॥
कृन्त दर्भ सपत्नान् मे कृन्त मे पृतनायतः । कृन्त मे सर्वान् दुर्हार्दो
कृन्त मे द्विषतो मणे ॥ ८ ॥
पिंश दर्भ सपत्नान् मे पिंश मे पृतनायतः । पिंश मे सर्वान् दुर्हार्दः
पिंश मे द्विषतो मणे ॥ ९ ॥
विध्य दर्भ सपत्नान् मे विध्य मे पृतनायतः । विध्य मे सर्वान्
दुर्हार्दो विध्य मे द्विषतो मणे ॥ १० ॥ [४।२]

सूक्त २९

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—दर्भमणिः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ९।

निक्ष॑ दर्भ स॒पत्ना॑न् मे॒ निक्ष॑ मे पृतना॒यतः॑ । निक्ष॑ मे॒ सर्वा॑न् दु॒र्हार्दो॑
निक्ष॑ मे द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ १ ॥
तृ॒न्द्धि द॑र्भ स॒पत्ना॑न् मे तृ॒न्द्धि मे॑ पृतना॒यतः॑ । तृ॒न्द्धि मे॒ सर्वा॑न्
दु॒र्हार्द॑स्तृ॒न्द्धि मे॑ द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ २ ॥
रु॒न्द्धि द॑र्भ स॒पत्ना॑न् मे रु॒न्द्धि मे॑ पृतना॒यतः॑ । रु॒न्द्धि मे॒ सर्वा॑न् दु॒र्हार्दो॑
रु॒न्द्धि मे॑ द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ ३ ॥
मृ॒ण द॑र्भ स॒पत्ना॑न् मे मृ॒ण मे॑ पृतना॒यतः॑ । मृ॒ण मे॒ सर्वा॑न् दु॒र्हार्दो॑ मृ॒ण
मे॑ द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ ४ ॥
मन्थ॑ दर्भ स॒पत्ना॑न् मे॒ मन्थ॑ मे॑ पृतना॒यतः॑ । मन्थ॑ मे॒ सर्वा॑न् दु॒र्हार्दो॑
मन्थ॑ मे द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ ५ ॥
पि॒ण्ड्ढि द॑र्भ स॒पत्ना॑न् मे पि॒ण्ड्ढि मे॑ पृतना॒यतः॑ । पि॒ण्ड्ढि मे॒
सर्वा॑न् दु॒र्हार्दः॑ पि॒ण्ड्ढि मे॑ द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ ६ ॥
ओष॑ दर्भ स॒पत्ना॑न् मे॒ ओष॑ मे पृतना॒यतः॑ । ओष॑ मे॒ सर्वा॑न् दु॒र्हार्द॒
ओष॑ मे द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ ७ ॥
दह॑ दर्भ स॒पत्ना॑न् मे॒ दह॑ मे पृतना॒यतः॑ । दह॑ मे॒ सर्वा॑न् दु॒र्हार्दो॑ दह॑
मे द्वि॒षतो॒ म॑णे ॥ ८ ॥
ज॒हि द॑र्भ स॒पत्ना॑न् मे ज॒हि मे॑ पृतना॒यतः॑ । ज॒हि मे॒ सर्वा॑न् दु॒र्हार्दो॑
ज॒हि मे॑ द्वि॒षतो॒ म॒णे ॥ ९ ॥ [४।३]

सूक्त ३०

ऋषि—ब्रह्मा ।। देवता—दर्भमणिः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र ५ ।

यत् ते॑ दर्भ ज॒रामृ॑त्युः श॒तं वर्म॑सु॒ वर्म॑ ते । तेने॒मं व॒र्मिणं॑ कृ॒त्वा सपत्ना॑ञ्जहि वी॒र्यै᳚ः ॥ १ ॥

श॒तं ते॑ दर्भ॒ वर्मा॑णि स॒हस्रं॑ वी॒र्या᳚णि ते । तम॒स्मै विश्वे॒ त्वां दे॒वा ज॒रसे॒ भर्त॒वा अ॑दुः ॥ २ ॥

त्वामा॑हुर्दे॒ववर्म॒ त्वां द॑र्भ॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॑म् । त्वामिन्द्र॑स्याहु॒र्वर्म॒ त्वं रा॒ष्ट्राणि॑ रक्षसि ॥ ३ ॥

स॒प॒त्न॒क्षय॑णं दर्भ द्वि॒षत॒स्तप॑नं हृ॒दः । म॒णिं क्ष॒त्रस्य॒ वर्ध॑नं तनू॒पानं॑ कृणोमि ते ॥ ४ ॥

यत् स॑मु॒द्रो अ॒भ्यक्र॑न्दत् प॒र्जन्यो॑ वि॒द्युता॑ स॒ह । ततो॑ हिर॒ण्ययो॑ बि॒न्दुस्ततो॑ द॒र्भो अ॑जायत ॥ ५ ॥ [४।४]

—:०:—

सूक्त ३१

ऋषिः—सविता (पुष्टिकामः) ।। देवता—औदुम्बरमणिः ।। छन्दः—१—४, ७—१०, अनुष्टुप्; ५, १२ त्रिष्टुप्; ६ विराट् प्रस्तारपङ्क्तिः; ११, १३ पञ्चपदा शक्वरी; १४ विराडास्तारपङ्क्तिः ।। मन्त्र १४ ।।

औदु॑म्बरेण म॒णिना॒ पुष्टि॑कामाय वे॒धसा॑ । प॒शू॒नां सर्वे॑षां स्फा॒तिं गो॒ष्ठे मे॑ सवि॒ता क॑रत् ॥ १ ॥

यो नो॑ अ॒ग्निर्गार्ह॑पत्यः पशू॒नाम॑धि॒पा अस॑त् । औदु॑म्बरो॒ वृषा॑ म॒णिः स मा॑ सृजतु पु॒ष्ट्या ॥ २ ॥

क॒री॒षिणीं॒ फल॑वतीं स्व॒धामिरां॑ च नो गृ॒हे । औदु॑म्बरस्य॒ तेज॑सा धा॒ता
पु॒ष्टिं द॑धातु मे ॥ ३ ॥

यद् द्वि॒पाच्च॒ चतु॑ष्पाच्च॒ यान्यन्ना॑नि॒ ये रसाः॑ । गृ॒ह्णे॒३॒॑हं त्वे॑षां भू॒मानं॒
बिभ्र॒दौदु॑म्बरं म॒णिम् ॥ ४ ॥

पु॒ष्टिं प॑शू॒नां परि॑ जग्रभा॒हं चतु॑ष्पदां द्वि॒पदां॒ यच्च॑ धा॒न्य᳚म् । पयः॑
पशू॒नां रस॒मोष॑धीना॒ं बृह॒स्पतिः॑ सवि॒ता मे॒ नि य॑च्छात् ॥ ५ ॥

अ॒हं प॑शू॒नाम॑धि॒पा अ॑सानि॒ मयि॑ पु॒ष्टं पु॑ष्ट॒पति॑र्दधातु । मह्य॒मौदु॑म्बरो
म॒णिर्द्रवि॑णानि॒ नि य॑च्छतु ॥ ६ ॥

उप॒ मौदु॑म्बरो म॒णिः प्र॒जया॑ च॒ धने॑न च । इन्द्रे॑ण जिन्वि॒तो म॒णिरा
मा॑गन्त्स॒ह वर्च॑सा ॥ ७ ॥

दे॒वो म॒णिः स॑पत्न॒हा ध॑न॒सा धन॑सातये । पशोरन्न॑स्य भू॒मानं॒ गवां॑
स्फा॒तिं नि य॑च्छतु ॥ ८ ॥

यथाग्रे॒ त्वं व॑नस्पते पु॒ष्ट्या स॒ह ज॑ज्ञि॒षे । ए॒वा धन॑स्य मे स्फा॒तिमा
द॑धातु॒ सर॑स्वती ॥ ९ ॥

आ मे॒ धनं॒ सर॑स्वती॒ पय॑स्फातिं च धा॒न्य᳚म् । सि॒नी॒वा॒ल्युपा॑ वहाद॒यं
चौदु॑म्बरो मणिः ॥ १० ॥

त्वं म॑णी॒नाम॑धि॒पा वृषा॑सि॒ त्वयि॑ पु॒ष्टं पु॑ष्टपति॑र्जजान । त्वयी॒मे वाजा॒
द्रवि॑णानि सर्वौदु॑म्बरः॒ स त्वम॒स्मत् स॑हस्वा॒राद॒राति॒मम॑तिं॒ क्षुधं॑ च । ११ ।

ग्रा॒म॒णीर॑सि ग्राम॒णीरु॒त्थाया॒भिषि॑क्तो॒ऽभि मा॑ सिञ्च॒ वर्च॑सा ।
तेजो॑ऽसि॒ तेजो॒ मयि॑ धार॒याधि॑ र॒यिर॑सि र॒यिं मे॑ धेहि ॥ १२ ॥

पु॒ष्टिर॑सि पु॒ष्ट्या मा॒ सम॑ङ्ग्धि गृहमे॒धी गृ॒हप॑तिं मा कृणु । औदु॑म्बर॒ः
स त्वम॒स्मासु॑ धेहि र॒यिं च॑ नः॒ सर्व॑वीरं॒ नि य॑च्छ रा॒यस्पोषा॑य॒ प्रति॑
मुञ्चे अ॒हं त्वाम् ॥ १३ ॥

अ॒यमौदु॑म्बरो म॒णिर्वी॒रो वी॒राय॑ बध्यते । स नः॑ स॒निं मधु॑मतीं
कृणोतु र॒यिं च॑ नः॒ सर्व॑वीरं॒ नि य॑च्छात् ॥ १४ ॥ [४।५]

— :o: —

सूक्त ३२

ऋषिः—भृगुः (आयुष्कामः) ॥ देवता—दर्भः ॥ छन्दः—१—७ अनुष्टुप्; ८ पुरस्ताद् बृहती; ९ त्रिष्टुप्; १० जगती ॥ मन्त्र १० ।

श॒तका॑ण्डो दुश्च्यव॒नः स॒हस्र॑पर्ण उत्ति॒रः । द॒र्भो य उ॒ग्र ओष॑धि॒स्तं
तँ बध्ना॒म्यायु॑षे ॥ १ ॥

नास्य॒ केशा॒न् प्र व॑पन्ति॒ नोर॑सि॒ ताड॒मा घ्न॑ते । यस्मा॑ अच्छिन्नप॒र्णेन॑
द॒र्भेण॒ शर्म॑ यच्छति ॥ २ ॥

दि॒वि ते॒ तूल॑मोषधे पृथि॒व्याम॑सि॒ निष्ठि॑तः । त्वया॑ स॒हस्र॑काण्डे॒नायु॒ः
प्र व॑र्धयामहे ॥ ३ ॥

ति॒स्रो दि॒वो अत्य॑तृणत् ति॒स्र इ॒माः पृ॑थि॒वीरु॒त । त्वया॒हं दु॒र्हार्दो॑ जि॒ह्वां
नि तृ॑णद्मि॒ वचां॑सि ॥ ४ ॥

त्वम॑सि॒ सह॑मानो॒ऽहम॑स्मि॒ सह॑स्वान् । उ॒भौ सह॑स्वन्तौ भू॒त्वा स॒पत्ना॑न्
सहिषीमहि ॥ ५ ॥

सहस्व नो अभिमातिं सहस्व पृतनायतः । सहस्व सर्वान् दुर्हार्दः
सुहार्दो मे बहून् कृधि ॥ ६ ॥

दर्भेण देवजातेन दिवि ष्टम्भेन शश्वदित् । तेनाहं शश्वतो जनाँ असनं
सनवानि च ॥ ७ ॥

प्रियं मा दर्भ कृणु ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च । यस्मै च
कामयामहे सर्वस्मै च विपश्यते ॥ ८ ॥

यो जायमानः पृथिवीमदृंहद् यो अस्तभ्नादन्तरिक्षं दिवं च । यं
बिभ्रतं ननु पाप्मा विवेद स नोऽयं दर्भो वरुणो दिवा कः ॥ ९ ॥

सपत्नहा शतकाण्डः सहस्वानोषधीनां प्रथमः सं बभूव । स नोऽयं
दर्भः परि पातु विश्वतस्तेन साक्षीय पृतनाः पृतन्यतः ॥ १० ॥ [४।६]

—:०:—

सूक्त ३३

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—दर्भः ॥ छन्दः—१ जगती; २, ५ त्रिष्टुप्; ३ आर्षी
पङ्क्तिः; ४ आस्तारपङ्क्तिः ॥ मन्त्र ५ ।

सहस्रार्घः शतकाण्डः पयस्वानपामग्निर्वीरुधां राजसूयम् । स नोऽयं
दर्भः परि पातु विश्वतो देवो मणिरायुषा सं सृजाति नः ॥ १ ॥

घृतादुल्लुप्तो मधुमान् पयस्वान् भूमिदृंहोऽच्युतश्च्यावयिष्णुः । नुदन्त्सपत्नानधरांश्च
कृण्वन् दर्भा रोह महतामिन्द्रियेण ॥ २ ॥

त्वं भूमिमत्येष्योजसा त्वं वेद्यां सीदसि चारुरध्वरे । त्वां पवित्रमृषयो
ऽभरन्त त्वं पुनीहि दुरितान्यस्मत् ॥ ३ ॥

ती॒क्ष्णो राजा॑ विषास॒ही र॑क्षो॒हा वि॒श्वच॑र्षणिः । ओजो॑ दे॒वानां॒ बल॑-
मु॒ग्रमे॒तत् तं ते॑ बध्नामि ज॒रसे॑ स्व॒स्तये॑ ॥ ४ ॥
द॒र्भेण॒ त्वं कृ॑णवद् वी॒र्या॑ऽणि द॒र्भं बिभ्र॑दात्मना॒ मा व्य॑थिष्ठाः । अति-
ष्ठाया॒ वर्च॒साधा॒न्यान्त्सूर्य॑ इ॒वा भा॑हि प्र॒दिश॒श्चत॑स्रः ॥ ५ ॥ [४।७]

—:०:—

सूक्त ३४

ऋषिः—अङ्गिराः ॥ देवता—जङ्गिडो वनस्पतिः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १० ।

ज॒ङ्गि॒डो॑ऽसि जङ्गि॒डो रक्षि॑तासि जङ्गि॒डः । द्वि॒पाच्चतु॑ष्पाद॒स्माकं॒
सर्वं॑ रक्षतु जङ्गि॒डः ॥ १ ॥
या गृत्स्य॑स्त्रिपञ्चा॒शीः श॒तं कृ॑त्या॒कृत॑श्च॒ ये । सर्वा॑न् विनक्तु॒ तेज॑सो-
ऽर॒साञ्ज॑ङ्गि॒डस्क॑रत् ॥ २ ॥
अ॒र॒सं कृ॒त्रिमं॒ नाद॑मर॒साः स॒प्त वि॒स्रसः॑ । अपे॒तो ज॑ङ्गि॒डाम॑ति॒-
मिषु॑मस्ते॒व शातय ॥ ३ ॥
कृ॒त्या॒दूष॑ण ए॒वाय॑मथो॑ अरा॒ति॒दूष॑णः । अथो॑ सह॑स्वाञ्जङ्गि॒डः प्र ण॒
आयूं॑षि तारिषत् ॥ ४ ॥
स ज॑ङ्गि॒डस्य॑ महि॒मा परि॑ णः पातु वि॒श्वतः॑ । विष्क॑न्धं॒ येन॑ सा॒सह॒
संस्क॑न्ध॒मोज॒ ओज॑सा ॥ ५ ॥
त्रिष्ट्वा॑ दे॒वा अ॑जनय॒न् निष्ठि॑तं॒ भूम्या॒मधि॑ । तमु॒ त्वाङ्गि॑रा॒ इति॑
ब्राह्म॒णाः पू॒र्व्या वि॑दुः ॥ ६ ॥

न त्वा॒ पूर्वा॒ ओष॑धयो॒ न त्वा॑ तरन्ति॒ या नवा॑ः । विबा॑ध उ॒ग्रो
ज॑ङ्गि॒डः प॑रि॒पाण॑ः सुम॒ङ्गल॑ः ॥ ७ ॥

अथो॑पदान भगवो॒ जङ्गि॒डामि॑तवीर्य । पु॒रा त॑ उ॒ग्रा ग्र॑सत॒ उपेन्द्रो॑
वीर्यं॑ ददौ ॥ ८ ॥

उ॒ग्र इत् त॑ वनस्पत॒ इन्द्र॑ ओ॒ज्मान॒मा द॑धौ । अमी॑वा॒ः सर्वा॑श्चा॒तय॑ञ्ज॒हि
रक्षां॑स्योषधे ॥ ९ ॥

आश॑रीक॒ं विश॑रीकं ब॒लासं॑ पृष्ट्याम॒यम् । त॒क्मानं॑ वि॒श्वशा॑रदमर॒सां
ज॑ङ्गि॒डस्क॑रत् ॥ १० ॥ [५।१]

—:०:—

सूक्त ३५

ऋषिः—अङ्गिराः ॥ देवता—जङ्गिडो वनस्पतिः ॥ छन्दः—१, २, ५ अनुष्टुप्;
३ पथ्यापङ्क्तिः, ४ निचृत् त्रिष्टुप्; ॥ मन्त्र ५ ।

इन्द्र॑स्य॒ नाम॑ गृ॒ह्णन्त॒ ऋष॑यो जङ्गि॒डं द॑दुः । दे॒वा यं च॒क्रुर्भे॑ष॒जमग्रे॑
विष्कन्ध॒दूष॑णम् ॥ १ ॥

स नो॑ रक्षतु जङ्गिडो ध॑नपा॒लो धने॑व । दे॒वा यं च॒क्रुर्ब्रा॑ह्म॒णाः
प॑रि॒पाण॑मराति॒हम् ॥ २ ॥

दु॒र्हार्दः॒ संघो॑रं॒ चक्षु॑ः पाप॒कृत्वा॑न॒माग॑मम् । तांस्त्वं स॑हस्रचक्षो प्रती-
बो॒धेन॑ नाशय परि॒पाणो॑ऽसि जङ्गि॒डः ॥ ३ ॥

परि॑ मा दि॒वः परि॑ मा पृथि॒व्याः पर्य॒न्तरि॑क्षा॒त् परि॑ मा वी॒रुद्भ्य॑ः ।
परि॑ मा भूतात् परि॑ मो॒त भव्या॑द् दि॒शोदि॑शो जङ्गि॒डः पा॑त्व॒स्मान् ॥४।

य ऋ॒ष्णवो॑ दे॒वकृ॑ता॒ य उ॒तो व॑वृ॒तेऽन्यः। सर्वा॒ंस्तान् वि॒श्वभे॑षजोऽर॒सां

जङ्गि॒डस्क॑रत् ॥ ५ ॥ [५।२]

—:०:—

सूक्त ३६

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—शतवारः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मंत्र ६।

श॒तवा॑रो अनीनश॒द् यक्ष्मा॒न् रक्षां॑सि॒ तेज॑सा। आ॒रोह॒न् वर्च॑सा स॒ह

म॒णिर्दु॑र्णाम॒चात॑नः ॥ १ ॥

शृङ्गा॑भ्या॒ं रक्षो॑ नुदते॒ मूले॑न यातु॒धान्य॑ः। मध्ये॑न॒ यक्ष्मं॑ बाधते॒ नैनं॑

पा॒प्माति॑ तत्रति ॥ २ ॥

ये यक्ष्मा॑सो अर्भ॒का म॒हान्तो॒ ये च॑ श॒ब्दिन॑ः। सर्वा॑ दुर्णाम॒हा

म॒णिः श॒तवा॑रो अनीनशत् ॥ ३ ॥

श॒तं वी॒राने॑जनयच्छ॒तं यक्ष्मा॒नपा॑वपत्। दु॒र्णाम्न॒ः सर्वा॑न् ह॒त्वाव॒

रक्षां॑सि धूनुते ॥ ४ ॥

हिर॑ण्यशृङ्ग ऋष॒भः शा॑त्वा॒रो अ॒यं म॒णिः। दु॒र्णाम्न॒ः सर्वां॑स्तृ॒ड्ढ्वाव॒

रक्षां॑स्यक्रमीत् ॥ ५ ॥

श॒तम॒हं दु॒र्णाम्नी॑नां गन्धर्वाप्स॒रसां॑ श॒तम्। श॒तं श॑श्व॒न्वती॑नां श॒त-

वा॑रेण वारये ॥ ६ ॥ [५।३]

—:०:—

सूक्त ३७

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ त्रिष्टुप्; २ आस्तारपङ्क्तिः;
३ त्रिपदा महाबृहती; ४ पुर उष्णिक् ॥ मन्त्र ४।

इ॒दं वर्चो᳚ अ॒ग्निना॑ द॒त्तमाग॒न् भर्गो॒ यश॒ः सह॒ ओजो॒ वयो॒ बलं॑म् ।
त्रय॑स्त्रिंश॒द् यानि॑ च वी॒र्या॑णि॒ तान्य॒ग्निः प्र द॑दातु मे ॥ १ ॥
वर्च॒ आ धे᳚हि मे त॒न्वां॒३ सह॒ ओजो॒ वयो॒ बलं॑म् । इ॒न्द्रि॒याय॑ त्वा॒ कर्म॑णे
वी॒र्या॑य॒ प्रति॑ गृह्णामि श॒तशा॑रदाय ॥ २ ॥
ऊ॒र्जे त्वा॒ बला॑य॒ त्वौज॑से॒ सह॑से त्वा । अ॒भि॒भूया॑य त्वा रा॒ष्ट्रभृ॑त्याय॒
प॒र्यू᳚हामि श॒तशा॑रदाय ॥ ३ ॥
ऋ॒तुभ्य॑ष्ट्वार्त॒वेभ्यो᳚ मा॒द्भ्यः सं॑वत्स॒रेभ्यः॑ । धा॒त्रे वि॑धा॒त्रे स॒मृधे᳚ भू॒तस्य॒
पत॑ये यजे ॥ ४ ॥ [५।४]

—:o:—

सूक्त ३८

ऋषिः—अथर्वा ॥ देवता—गुल्गुलुः ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २ चतुष्पदोष्णिक्; ३ प्राजापत्याऽनुष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

न तं यक्ष्मा॒ अरु॑न्धते॒ नैनं᳚ श॒पथो᳚ अश्नुते । यं भे॑ष॒जस्य॑ गुल्गु॒लोः
सु॑र॒भिर्ग॒न्धो अ॑श्नु॒ते ॥ १ ॥
विष्व॑ञ्च॒स्तस्मा॒द् यक्ष्मा॑ मृ॒गा अश्वा॑ इवेरते । यद् गु॑ल्गु॒लु सैन्ध॒वं
यद् वा॒प्यासि॑ समु॒द्रिय॑म् ॥ २ ॥
उ॒भयो॑रग्रभं॒ नाम॒ास्मा अ॑रि॒ष्टता॑तये ॥ ३ ॥ [५।५]

—:o:—

सूक्त ३९

ऋषिः—भृग्वङ्गिराः ॥ देवता—कुष्ठः ॥ छन्दः—१, ९, १० अनुष्टुप्; २, ३ पञ्चपदा पथ्या पङ्क्तिः; ४ षट्पदा जगती; ५ सप्तपदा शक्वरी; ६–८ अष्टिः । मन्त्र १० ।

ऐतु देवस्त्रायमाणः कुष्ठो हिमवतस्परि । तक्मानं सर्वं नाशय सर्वाश्च
यातुधान्यः ॥ १ ॥
त्रीणि ते कुष्ठ नामानि नद्यमारो नद्यारिषः । नद्यायं पुरुषो रिषत् ।
यस्मै परिब्रवीमि त्वा सायंप्रातरथो दिवा ॥ २ ॥
जीवला नाम ते माता जीवन्तो नाम ते पिता ।···दिवा ॥ ३ ॥
उत्तमो अस्योषधीनामनड्वान् जगतामिव व्याघ्रः श्वपदामिव ।
नद्यायं···दिवा ॥ ४ ॥
त्रिः शाम्बुभ्यो अङ्गिरेभ्यस्त्रिरादित्येभ्यस्परि । त्रिर्जातो विश्वदेवेभ्यः ।
स कुष्ठो विश्वभेषजः । साकं सोमेन तिष्ठति । तक्मानं सर्वं नाशय
सर्वाश्च यातुधान्यः ॥ ५ ॥
अश्वत्थो देवसदनस्तृतीयस्यामितो दिवि । तत्रामृतस्य चक्षणं ततः
कुष्ठो अजायत । स कुष्ठो···यातुधान्यः ॥ ६ ॥
हिरण्ययी नौरचरद्धिरण्यबन्धना दिवि । तत्रामृतस्य चक्षणं ततः···
यातुधान्यः ॥ ७ ॥
यत्र नावप्रभ्रंशनं यत्र हिमवतः शिरः । तत्रामृतस्य चक्षणं ततः···
यातुधान्यः ॥ ८ ॥
यं त्वा वेद पूर्व इक्ष्वाको यं वा त्वा कुष्ठ काम्यः । यं वा वसो
यमात्स्यस्तेनासि विश्वभेषजः ॥ ९ ॥
शीर्षलोकं तृतीयकं सदन्दिर्यश्च हायनः । तक्मानं विश्वधावीर्याधराञ्चं
परा सुव ॥ १० ॥ [५।६]

सूक्त ४०

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—विश्वेदेवाः; बृहस्पतिः ॥ छन्दः—१ परानुष्टुप् त्रिष्टुप् २ पुराककुम्मत्युपरिष्टाद् बृहती; ३ बृहतीगर्भाऽनुष्टुप्; ४ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री ॥ मंत्र ४।

यन्मे॑ छि॒द्रं मन॑सो॒ यच्च॑ वा॒चः सर॑स्वती मन्यु॒मन्तँ॑ ज॒गाम॑। विश्वै॒स्तद्
दे॒वैः स॒ह सँ॑वि॒दा॒नः सं द॑धातु॒ बृह॒स्पतिः॑ ॥ १ ॥
मा न॒ आपो॑ मे॒धां मा ब्रह्म॒ प्र म॑थिष्टन। सु॒ष्य॒दा यू॒यं स्य॑न्दध्व॒
मुप॑ह्वतो॒ऽहं सु॒मेधा॑ वर्च॒स्वी ॥ २ ॥
मा नो॑ मे॒धां मा नो॑ दी॒क्षां मा नो॑ हिं॑सिष्टं॒ यत् तपः॑। शि॒वा नः॒ शं
स॒न्त्वायु॑षे शि॒वा भ॑वन्तु मा॒तरः॑ ॥ ३ ॥
या नः॒ पीप॑रद॒श्विना॒ ज्योति॑ष्मती॒ तम॑स्ति॒रः। ताम॒स्मे रा॑सता॒
मिष॑म् ॥ ४ ॥ [५।७]

—:०:—

सूक्त ४१

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—तपः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप्; ॥ मन्त्र १।

भ॒द्रमि॒च्छन्त॒ ऋष॑यः स्व॒र्विद॒स्तपो॑ दी॒क्षामु॑प॒निषे॑दु॒रग्रे॑। ततो॑ रा॒ष्ट्रं
बल॒मोज॑श्च जा॒तं तद॑स्मै दे॒वा उ॑प॒संन॑मन्तु ॥ १ ॥ [५।८]

—:०:—

सूक्त ४२

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—ब्रह्म ॥ छन्दः—अनुष्टुप्; २ ककुम्मती पथ्या पङ्क्तिः; ३ त्रिष्टुप्; ४ जगती ॥ मन्त्र ४।

ब्रह्म॒ होता॒ ब्रह्म॑ य॒ज्ञा ब्रह्म॑णा॒ स्वर॑वो मि॒ताः । अ॒ध्व॒र्युर्ब्रह्म॑णो जा॒तो
ब्रह्म॑णो॒ऽन्तर्हि॑तं ह॒विः ॥ १ ॥
ब्रह्म॒ स्रुचो॑ घृ॒तव॑ती॒र्ब्रह्म॑णा॒ वेदि॒रुद्धि॑ता । ब्रह्म॑ य॒ज्ञस्य॒ तत्त्वं॑ च ऋ॒त्विजो॒
ये ह॑वि॒ष्कृत॑ः । श॒मि॒ताय॒ स्वाहा॑ ॥ २ ॥
अं॒हो॒मुचे॒ प्र भ॑रे मनी॒षामा सु॒त्राव्णे॑ सुम॒तिमा॑वृणा॒नः । इ॒ममि॑न्द्र॒ प्रति॑
ह॒व्यं गृ॑भाय स॒त्याः स॑न्तु॒ यज॑मानस्य॒ कामा॑ः ॥ ३ ॥
अं॒हो॒मुचं॑ वृष॒भं य॒ज्ञिया॑नां वि॒राज॑न्तं प्रथ॒मम॑ध्व॒राणा॑म् । अ॒पां नपा॑तम॒श्विना॑ हुवे॒ धिय॑ इन्द्रि॒येण॑ त इन्द्रि॒यं द॑त्त॒मोज॑ः ॥ ४ ॥ [५।६]

—:०:—

सूक्त ४३

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—शङ्कुमती पथ्या पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ८ ।

यत्र॑ ब्रह्म॒विदो॒ यान्ति॑ दी॒क्षया॒ तप॑सा स॒ह । अ॒ग्निर्मा॒ तत्र॑ नयत्व॒ग्निर्मे॒धा द॑धातु मे । अ॒ग्नये॒ स्वाहा॑ ॥ १ ॥
यत्र॑······वा॒युर्मा॒ तत्र॑ नयतु वा॒युः प्रा॒णान् द॑धातु मे । वा॒यवे॒
स्वाहा॑ ॥ २ ॥
यत्र॑···सूर्यो॑ मा॒ तत्र॑ नयतु॒ चक्षु॒ः सूर्यो॑ दधातु मे । सूर्या॑य॒ स्वाहा॑ ।३।
यत्र॑···च॒न्द्रो मा॒ तत्र॑ नयतु॒ मन॑श्च॒न्द्रो द॑धातु मे । च॒न्द्राय॒ स्वाहा॑ ।४।
यत्र॑···सोमो॑ मा॒ तत्र॑ नयतु॒ पय॒ः सोमो॑ दधातु मे । सोमा॑य॒ स्वाहा॑ ।५।
यत्र॑···इन्द्रो॑ मा॒ तत्र॑ नयतु॒ बल॒मिन्द्रो॑ दधातु मे । इन्द्रा॑य॒ स्वाहा॑ ।६।

यत्र॑···आपो॑ मा॒ तत्र॑ नयत्व॒मृतं॒ मोप॑ तिष्ठतु । अ॒द्भ्यः स्वाहा॑ ॥७॥

यत्र॑ ब्रह्म॒विदो॑ यान्ति॑ दी॒क्षया॑ तप॑सा स॒ह । ब्र॒ह्मा मा॒ तत्र॑ नयतु ब्र॒ह्मा ब्रह्म॑ दधातु मे । ब्र॒ह्मणे॒ स्वाहा॑ ॥ ८ ॥ [५।१०]

—:o:—

सूक्त ४४

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—आञ्जनम्; ८, ९ वरुणः ॥ छन्दः—१, ३, ६—१० अनुष्टुप्; ४ चतुष्पदा शङ्कुमत्युष्णिक्; ५ त्रिपदा निचृद् विषमा गायत्री ॥ मन्त्र १० ।

आयु॑षोसि प्र॒तर॑णं॒ विप्रं॑ भेष॒जमु॑च्यसे । तदा॑ञ्जन॒ त्वं शं॑ताते॒ शमापो॒ अभ॑यं कृतम् ॥ १ ॥

यो ह॑रि॒मा जा॒यान्यो॑ऽङ्गभे॒दो वि॒सल्प॑कः । सर्वं॑ ते॒ यक्ष्म॒मङ्गे॑भ्यो ब॒हिर्निर्ह॒न्त्वाञ्ज॑नम् ॥ २ ॥

आञ्ज॑नं पृथि॒व्यां जा॒तं भ॒द्रं पु॑रुष॒जीव॑नम् । कृणोत्वप्र॑मायुकं॒ रथ॑जूति॒मना॑गसम् ॥ ३ ॥

प्राण॑ प्रा॒णं त्रा॑य॒स्वासो॒ अस॑वे मृड । निर्ऋ॑ते॒ निर्ऋ॑त्या नः॒ पाशे॑भ्यो मुञ्च ॥ ४ ॥

सिन्धो॒र्गर्भो॑ऽसि वि॒द्युतां॑ पुष्प॑म् । वातः॑ प्रा॒णः सूर्य॒श्चक्षु॑र्दि॒वस्पय॑ः ॥५॥

देवा॑ञ्जन॒ त्रैक॑कुदं॒ परि॑ मा पाहि वि॒श्वतः॑ । न त्वा॑ तर॒न्त्योष॑धयो॒ बाह्याः॑ पर्व॒तीया॑ उ॒त ॥ ६ ॥

वी॒३॒दं मध्य॒मवा॑सृपद् रक्षो॒हामी॑व॒चात॑नः । अमी॑वाः॒ सर्वा॑श्चा॒तय॑न् ना॒शय॑दभि॒भा इ॒तः ॥ ७ ॥

ब॒ह्वी॒३॒दं रा॑जन् वरु॒णानृ॑तमाह॒ पूरु॑षः । तस्मा॑त् सहस्रवीर्य मु॒ञ्च न॒ः
पर्यंह॑सः ॥ ८ ॥
यदापो॑ अ॒घ्न्या इति॒ वरु॒णेति॒ यदू॑चि॒म । तस्मा॑त् सहस्रवीर्य मु॒ञ्च
न॒ः पर्यंह॑सः ॥ ९ ॥
मि॒त्रश्च॑ त्वा॒ वरु॑णश्चानु॒प्रेय॑तुराञ्जन । तौ त्वा॑नु॒गत्य॑ दूरं भो॒गाय॒
पुन॒रोह॑तुः ॥ १० ॥ [५।११]

—:०:—

सूक्त ४५

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—१–५ आञ्जनम्; ६–१० अग्न्यादयो मन्त्रोक्ताः ॥
छन्दः—१,–२ अनुष्टुप्; ३–५ त्रिष्टुप्; ६ विराङ्महाबृहती; ७–१० निचृन्महा-
बृहती ॥ मत्र १० ।

ऋ॒णादृ॒णमि॑व सं॒नय॑न् कृ॒त्यां कृ॑त्या॒कृतो॑ गृ॒हम् । चक्षु॑र्मन्त्रस्य दु॒र्हार्द॑ः
पृ॒ष्टीरपि॑ शृणाञ्जन ॥ १ ॥
यद॒स्मासु॑ दु॒ःष्वप्न्य॒ं यद् गोषु॒ यच्च॑ नो गृ॒हे । अना॑मग॒स्तं च॑ दु॒र्हार्द॑ः
प्रि॒यः प्रति॑ मुञ्चताम् ॥ २ ॥
अ॒पामू॒र्ज ओज॑सो वावृ॒धान॑म॒ग्नेर्जा॒तमधि॑ जा॒तवे॑दसः । चतु॑र्वीरं पर्व॒तीय॒ं
यदाञ्ज॑न॒ं दिश॑ः प्र॒दिश॑ः कर॒दिच्छि॒वास्ते॑ ॥ ३ ॥
चतु॑र्वीरं बध्यत॒ आञ्ज॑नं ते॒ सर्वा॒ दिशो॒ अभ॑यास्ते भवन्तु । ध्रु॒व-
स्तिष्ठासि सवि॒तेव॒ चार्य॑ इ॒मा विशो॑ अ॒भि ह॑रन्तु ते ब॒लिम् ॥ ४ ॥
आश्चैक॑ं म॒णिमेक॑ं कृणुष्व स्ना॒ह्येके॒ना पि॒बैक॑मेषाम् । चतु॑र्वीरं नैर्ऋ॒ते-
भ्य॑श्च॒तुर्भ्यो॒ ग्राह्या॑ ब॒न्धेभ्य॒ः परि॑ पात्व॒स्मान् ॥ ५ ॥

अ॒ग्निर्मा॒ग्निना॑वतु प्रा॒णाया॑पा॒नाया॒युषे॒ वर्च॑स॒ ओज॑से॒ तेज॑से स्व॒स्तये॑
सु॒भूतये॒ स्वाहा॑ ॥ ६ ॥

इन्द्रो॑ मेन्द्रि॒येणा॑वतु प्रा॒णाया॑पा॒नाया॒युषे॒ वर्च॑स॒ ओज॑से॒ तेज॑से
स्व॒स्तये॑ सु॒भूतये॒ स्वाहा॑ ॥ ७ ॥

सोमो॑ मा॒ सौम्ये॑नावतु प्रा॒णाया॑पा॒नाया॒युषे॒ वर्च॑स॒ ओज॑से॒ तेज॑से
स्व॒स्तये॑ सु॒भूतये॒ स्वाहा॑ ॥ ८ ॥

भगो॑ मा॒ भगे॑नावतु प्रा॒णाया॑पा॒नाया॒युषे॒ वर्च॑स॒ ओज॑से॒ तेज॑से
स्व॒स्तये॑ सु॒भूतये॒ स्वाहा॑ ॥ ९ ॥

म॒रुतो॑ मा ग॒णैर॑वन्तु प्रा॒णाया॑पा॒नाया॒युषे॒ वर्च॑स॒ ओज॑से॒ तेज॑से
स्व॒स्तये॑ सु॒भूतये॒ स्वाहा॑ ॥ १० ॥ [५।१२]

—:०:—

सूक्त ४६

ऋषिः—प्रजापतिः ॥ देवता—अस्तृतमणिः ॥ छन्दः—१ पञ्चपदा ज्योतिष्मती त्रिष्टुप्; २ षट्पदा भुरिक् शक्वरी; ३, ७ पञ्चपदा पथ्या पङ्क्ति; ४ चतुष्पदा त्रिष्टुप्; ५ पञ्चपदा अतिशक्वरी; ६ पञ्चपदोष्णिग्गर्भा विराड् जगती। मन्त्र ७।

प्र॒जाप॑तिष्ट्वा बध्नात् प्रथ॒मम॒स्तृतं॑ वी॒र्या॑ऽय॒ कम्। तत् ते॑ बध्ना॒म्यायु॑षे॒
वर्च॑स॒ ओज॑से च॒ बला॑य॒ चास्तृत॑स्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ १ ॥

ऊ॒र्ध्वस्ति॑ष्ठतु रक्ष॒न्नप्र॑मादम॒स्तृते॒मं मा त्वा॑ दभन् प॒णयो॑ यातु॒धाना॑।
इन्द्र॑ इव॒ दस्यू॒नव॑ धूनुष्व पृतन्य॒तः सर्वा॒ञ्छत्रू॒न् वि ष॑हस्वा॒स्तृत॑स्त्वा॒भि
र॑क्षतु ॥ २ ॥

श॒तं च॒ न प्र॒हर॑न्तो नि॒घ्नन्तो॒ न त॑स्ति॒रे । तस्मि॒न्निन्द्रः॒ पर्य᳚दत्त॒
चक्षुः॑ प्राणमथो॒ बल॒मस्तृ॑तस्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ ३ ॥

इन्द्र॑स्य त्वा॒ वर्म᳚णा॒ परि॑ धापयामो॒ यो दे॒वाना॑मधि॒राजो॑ ब॒भूव॑ ।
पुन॑स्त्वा दे॒वाः प्र ण॑यन्तु॒ सर्वे᳚ऽस्तृ॑तस्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ ४ ॥

अ॒स्मिन् म॒णावेक॑शतं वी॒र्या᳚णि स॒हस्रं᳚ प्रा॒णा अ॑स्मि॒न्नस्तृ॑ते । व्या॒घ्रः
शत्र॑न॒भि तिष्ठ॒ सर्वा॒न् यस्त्वा॑ पृत॒न्यादध॑रः॒ सो अ॒स्त्वस्तृ॑तस्त्वा॒भि
र॑क्षतु ॥ ५ ॥

घृ॒तादुल्लु॑प्तो मधु॑मा॒न् पय॑स्वान्त्स॒हस्र॑प्राणः श॒तयो᳚निर्वयो॒धाः । शं॒भूश्च॑
म॒योभूश्चोर्ज᳚स्वांश्च॒ पय॑स्वा॒ंश्चास्तृ॑तस्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ ६ ॥

यथा॒ त्वमु॑त्त॒रोऽसो᳚ असप॒त्नः स॑पत्न॒हा । स॒जा॒ताना॑मसद् व॒शी तथा॑
त्वा सवि॒ता क॑र॒दस्तृ॑तस्त्वा॒भि र॑क्षतु ॥ ७ ॥ [६।१]

—:०:—

सूक्त ४७

ऋषिः—गोपथः ॥ देवता—रात्रिः ॥ छन्दः—१ पथ्या बृहती; २ पञ्चपदाऽनुष्टुब्गर्भा परातिजगती; ३–५, ८, ९ अनुष्टुप्; ६ पुरस्ताद बृहती; ७ षट्पदा जगती ॥
मन्त्र ९ ।

आ रा॑त्रि॒ पार्थि॑वं॒ रजः॑ पि॒तुर॑प्रायि॒ धाम॑भिः । दि॒वः सदां᳚सि बृह॒ती
वि ति॑ष्ठस॒ आ त्वे॒षं वर्त᳚ते॒ तमः॑ ॥ १ ॥

न यस्याः॑ पा॒रं द॒दृशे॒ न योयु॑वद् विश्व॑म॒स्यां नि वि॑शते॒ यदेज॑ति ।
अरि॑ष्टासस्त उर्वि तमस्वति॒ रात्रि॑ पा॒रम॑शीमहि॒ भद्रे᳚ पा॒रम॑शीमहि ।२।

ये ते रात्रि नृचक्षसो द्रष्टारो नवतिर्नव । अशीतिः सन्त्यष्टा उतो ते
सप्त सप्ततिः ॥ ३ ॥
षष्टिश्च षट् च रेवति पञ्चाशत् पञ्च सुम्नयि । चत्वारश्चत्वारिंशच्च
त्रयस्त्रिंशच्च वाजिनि ॥ ४ ॥
द्वौ च ते विंशतिश्च ते रात्र्येकादशावमाः । तेभिर्नो अद्य पायुभिर्नु
पाहि दुहितर्दिवः ॥ ५ ॥
रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत मा नो दुःशंस ईशत । मा नो अद्य
गवां स्तेनो मावीनां वृक ईशत ॥ ६ ॥
माश्वानां भद्रे तस्करो मा नृणां यातुधान्यः । परमेभिः पथिभि स्तेनो
धावतु तस्करः । परेण दत्वती रज्जुः परेणाघायुरर्षतु ॥ ७ ॥
अध रात्रि तृष्टधूममशीर्षाणमहिं कृणु । हनू वृकस्य जम्भयास्तेन तं
द्रुपदे जहि ॥ ८ ॥
त्वयि रात्रि वसामसि स्वपिष्यामसि जागृहि । गोभ्यो नः शर्म
यच्छाश्वेभ्यः पुरुषेभ्यः ॥ ९ ॥ [६।२]

—:०:—

सूक्त ४९

ऋषिः—गोपथः ॥ देवता—रात्रिः ॥ छन्दः—१ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री २ त्रिपदा विराडनुष्टुप्; बृहतीगर्भानुष्टुप्; ४, ५ अनुष्टुप्; ५ पथ्या पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ६ ।

अथो यानि च यस्मा ह यानि चान्तः परीणहि । तानि ते परि
दद्मसि ॥ १ ॥

रात्रि॒ मात॑रु॒षसे॑ नः॒ परि॑ देहि । उ॒षा नो॒ अह्ने॒ परि॑ द॒दा॒त्वह॒स्तुभ्यं॑ विभावरि ॥ २ ॥

यत् किं चे॒दं प॒तय॑ति॒ यत् किं चे॒दं स॑रीसृ॒पम् । यत् किं च॒ पर्व॑ताया॒सत्वं॒ तस्मा॒त् त्वं रा॑त्रि पाहि नः ॥ ३॥

सा प॒श्चात् पा॑हि॒ सा पु॒रः सोत्त॒राद॑ध॒राद॒त । गोपा॒य॑ नो विभावरि स्तो॒तार॑स्त इ॒ह स्म॑सि ॥ ४ ॥

ये रात्रि॑मनु॒तिष्ठ॑न्ति॒ ये च॑ भू॒तेषु॒ जाग्र॑ति । प॒शून् ये सर्वा॒न् रक्ष॑न्ति॒ ते न॑ आ॒त्मसु॑ जाग्रति॒ ते नः॑ प॒शुषु॑ जाग्रति ॥ ५ ॥

वेद॒ वै रात्रि॒ ते॒ नाम॑ घृता॒ची नाम॒ वा अ॑सि । तां त्वां भ॒रद्वा॑जो वेद॒ सा नो॑ वि॒त्तेऽधि॑ जाग्रति ॥ ६ ॥ [६।३]

—:०:—

सूक्त ४९

ऋषिः—गोपथः; १० भरद्वाजश्च ॥ देवता—रात्रिः ॥ छन्दः—१—५ ८ त्रिष्टुप्; ६ आस्तारपङ्क्तिः; ७ पथ्या पङ्क्तिः [९ अनुष्टुप्;] १० षट्पदा जगती ॥ मन्त्र १० ।

इ॒षि॒रा योषा॑ युव॒तिर्दमू॑ना॒ रात्री॑ दे॒वस्य॑ सवि॒तुर्भग॑स्य । अ॒श्व॒क्ष॒भा सु॒हवा॒ संभृ॑तश्री॒रा प॑प्रौ॒ द्यावा॑पृथि॒वी म॑हि॒त्वा ॥ १ ॥

अति॒ विश्वा॑न्यरुहद् ग॒म्भी॒रो वर्षि॑ष्ठमरुहन्त॒ श्रवि॑ष्ठाः । उ॒श॒ती रात्र्यनु॒ सा भ॒द्राभि तिष्ठते मि॒त्र इ॑व स्व॒धाभिः॑ ॥ २ ॥

वर्ये॒ वन्दे॒ सुभ॑गे॒ सुजा॑त॒ आज॑ग॒न् रात्रि॒ सुमना॑ इ॒ह स्या॑म् । अ॒स्मांस्त्रा॑यस्व॒ नर्या॑णि जा॒ता अथो॒ यानि॒ गव्या॑नि पु॒ष्ट्या ॥ ३ ॥

सिंहस्य रात्र्युशती पींषस्य व्याघ्रस्य द्वीपिनो वर्चं आ ददे । अश्वस्य
ब्रध्नं पुरुषस्य मायं पुरु रूपाणि कृणुषे विभाती ॥ ४ ॥

शिवां रात्रिमनुसूर्यं च हिमस्य माता सुहवा नो अस्तु । अस्य
स्तोमस्य सुभगे नि बोध येन त्वा वन्दे विश्वासु दिक्षु ॥ ५ ॥

स्तोमस्य नो विभावरि रात्रि राजेव जोषसे । असाम सर्ववीरा भवाम
सर्ववेदसो व्युच्छन्तीरनूषसः ॥ ६ ॥

शम्या ह नाम दधिषे मम दिप्सन्ति ये धना । रात्रीहि तानसुतपा य
स्तेनो न विद्यते यत् पुनर्न विद्यते ॥ ७ ॥

भद्रासि रात्रि चमसो न विष्टो विष्वङ् गोरूपं युवतिर्बिभर्षि । चक्षु-
ष्मती मे उशती वपूंषि प्रति त्वं दिव्या न क्षाममुक्थाः ॥ ८ ॥

यो अद्य स्तेन आयत्यघायुर्मर्त्यो रिपुः । रात्री तस्य प्रतीत्य प्र ग्रीवाः
प्र शिरो हनत् ॥ ९ ॥

प्र पादौ न यथायति प्र हस्तौ न यथाशिषत् । यो मलिम्लुरुपायति स
संपिष्टो अपायति । अपायति स्वपायति शुष्के स्थाणावपायति ॥१०॥
[६।४]

—:०:—

सूक्त ५०

ऋषिः—गोपथः ॥ देवता—रात्रिः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

अध रात्रि तृष्टधूममशीर्षाणमहिं कृणु । अक्षौ वृकस्य निर्जह्यास्तेन तं
द्रुपदे जहि ॥ १ ॥

ये ते॑ रा॒त्र्यन॒ड्वाहु॒स्तीक्ष्ण॑शृङ्गाः स्वा॒शवः॑ । तेभि॑र्नो अ॒द्य पा॑र॒याति॑ दु॒र्गाणि॑ वि॒श्वहा॑ ॥ २ ॥

रात्रिं॑रात्रि॒मरि॑ष्यन्त॒स्तरे॑म त॒न्वा∫ व॒यम् । ग॒म्भी॒रमप्ल॑वा इ॒व न त॑रेयु॒ररा॑तयः ॥ ३ ॥

यथा॑ शा॒म्याकः॑ प्र॒पत॑न्नप॒वान् नानु॑वि॒द्यते॑ । ए॒वा रा॑त्रि॒ प्र पा॑तय॒ यो अ॒स्माँ अ॑भ्यघा॒यति॑ ॥ ४ ॥

अप॑ स्ते॒नं वासो॑ गोअ॒जमु॒त तस्क॑रम् । अथो॒ यो अर्व॑तः॒ शिरो॑ऽभि॒धाय॒ निनी॑षति ॥ ५ ॥

यद॒द्या रा॑त्रि सुभगे वि॒भज॒न्त्ययो॒ वसु॑ । यदे॒तद॒स्मान् भोज॑य॒ यथे॒दन्यानु॒पाय॑सि ॥ ६ ॥

उ॒षसे॑ नः॒ परि॑ देहि॒ सर्वा॑न् रा॒त्र्य॑ना॒गसः॑ । उ॒षा नो॒ अह्ने॒ आ भ॑जा॒दह॒स्तुभ्यं॑ विभावरि ॥ ७ ॥ [६।५]

* * *

सूक्त ५१

ऋषिः—ब्रह्मा । देवता – १ आत्मा; २ सविता ॥ छन्दः—१ एकपदा (?) ब्राह्म्यनुष्टुप्; २ त्रिपदा यवमध्योष्णिक् ॥ मन्त्र २ ।

अयु॑तो॒ऽहमयु॑तो म आ॒त्मायु॑तं मे॒ चक्षु॒रयु॑तं मे॒ श्रोत्र॒मयु॑तो मे प्रा॒णोऽयु॑तो मेऽपा॒नोऽयु॑तो मे व्या॒नोऽयु॑तो॒ऽहं सर्वः॑ ॥ १ ॥

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वेऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ । पू॒ष्णो हस्ता॑भ्या॒ं प्रसू॑त॒ आ र॑भे ॥ २ ॥ [६।६]

* * *

सूक्त ५२

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—कामः ॥ छन्दः—१, २, ४ त्रिष्टुप्; ३ चतुष्पादुष्णिक्;
५ उपरिष्टाद् बृहती ॥ मन्त्र ५ ।

काम॒स्तदग्रे॒ सम॑वर्तत॒ मन॑सो॒ रेत॑ः प्रथ॒मं यदासी॑त् । स का॑म॒ कामे॑न
बृह॒ता सयो॑नी रा॒यस्योषं॒ यज॑मानाय धेहि ॥ १ ॥
त्वं का॑म॒ सह॑सासि॒ प्रति॑ष्ठितो वि॒भुर्वि॒भावा॑ सख॒ आ स॑खीय॒ते ।
त्वमु॒ग्रः पृत॑नासु सास॒हिः सह॒ ओजो॒ यज॑मानाय धेहि ॥ २ ॥
दु॒राच्चक॑मानाय प्रतिपा॒णायाक्ष॑ये । आस्मा॑ अशृण्व॒न्नाशा॒ः कामे॑ना-
जनय॒न्त्स्व[ः ॥ ३ ॥
कामे॑न मा॒ काम॒ आग॒न् हृद॑याद्धृद॑यं॒ परि॑ । यद॒मीषा॑म॒दो मन॒स्तदैतू॒प
मामि॒ह ॥ ४ ॥
यत्का॑म का॒मय॑माना इ॒दं कृ॒ण्मसि॑ ते ह॒विः । तन्न॒ः सर्वं॒ समृ॑ध्यता-
मथै॒तस्य॑ ह॒विषो॑ वीहि॒ स्वाहा॑ ॥ ५ ॥ [६।७]

—:०:—

सूक्त ५३

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—कालः ॥ छन्दः—१—४ त्रिष्टुप्; ५ निचृत् पुरस्ताद्
बृहती; ६—१० अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १० ।

का॒लो अश्वो॑ वहति स॒प्तर॑श्मिः सह॒स्राक्षो॑ अ॒जरो॒ भूरि॑रेताः । तमा
रो॑हन्ति क॒वयो॑ विप॒श्चित॒स्तस्य॑ च॒क्रा भुव॑नानि॒ विश्वा॑ ॥ १ ॥
स॒प्त च॒क्रान् व॑हति का॒ल ए॒ष स॒प्तास्य॒ नाभी॑र॒मृतं॒ न्वक्ष॑ः । स इ॒मा
विश्वा॒ भुव॑नान्यञ्जत् का॒लः स ई॑यते प्रथ॒मो नु दे॒वः ॥ २ ॥

पू॒र्णः कु॒म्भोऽधि॑ का॒ल आहि॑त॒स्तं वै पश्या॑मो बहु॒धा नु स॒न्तः । स
इ॒मा विश्वा॒ भुव॑नानि प्र॒त्यङ् का॒लं तमा॑हुः पर॒मे व्यो॑मन् ॥ ३ ॥
स ए॒व सं भुव॑ना॒न्याभ॑र॒त् स ए॒व सं भुव॑ना॒नि पर्यै॑त् । पि॒ता सन्न॑भवत्
पु॒त्र ए॑षा॒ं तस्मा॒द् वै नान्यत् पर॑मस्ति॒ तेजः॑ ॥ ४ ॥
का॒लोऽमूं दिव॑मजनयत् का॒ल इ॒माः पृ॑थि॒वीरु॒त । का॒ले ह॑ भू॒तं भव्यं॑
चेषि॒तं ह॒ वि ति॑ष्ठते ॥ ५ ॥
का॒लो भू॒तिम॑सृजत का॒ले तप॑ति॒ सूर्यः॑ । का॒ले ह॒ विश्वा॑ भू॒तानि॑ का॒ले
चक्षु॒र्वि प॑श्यति ॥ ६ ॥
का॒ले मनः॑ का॒ले प्रा॒णः का॒ले नाम॑ स॒माहि॑तम् । का॒लेन॒ सर्वा॑ नन्दु-
न्त्याग॑तेन प्र॒जा इ॒माः ॥ ७ ॥
का॒ले तपः॑ का॒ले ज्येष्ठं॑ का॒ले ब्रह्म॑ स॒माहि॑तम् । का॒लो ह॒ सर्व॑स्येश्व॒रो
यः पि॒तासी॑त् प्र॒जाप॑तेः ॥ ८ ॥
तेने॑षि॒तं तेन॑ जा॒तं तदु॒ तस्मि॒न् प्रति॑ष्ठितम् । का॒लो ह॒ ब्रह्म॑ भू॒त्वा
बिभ॑र्ति परमे॒ष्ठिन॑म् ॥ ९ ॥
का॒लः प्र॒जा अ॑सृजत का॒लो अग्रे॑ प्र॒जाप॑तिम् । स्व॒य॒म्भूः क॒श्यपः॑
का॒लात् तपः॑ का॒लाद॑जायत ॥ १० ॥ [६।८]

—:o:—

सूक्त ५४

ऋषिः—भृगुः ॥ देवता—कालः ॥ छन्दः—१, ३, ४ अनुष्टुप्; २ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; ५ षट्पदा विराडष्टिः ॥ मन्त्र ५ ।

का॒लादापः॒ सम॑भवन् का॒लाद् ब्रह्म॒ तपो॒ दिशः॑। का॒लेनोदे॑ति॒ सूर्यः॑ का॒ले नि वि॑शते॒ पुनः॑ ॥ १ ॥

का॒लेन॒ वातः॑ पवते का॒लेन॑ पृथि॒वी म॒ही। द्यौर्म॒ही का॒ल आहि॑ता ।२।

का॒लो ह॑ भू॒तं भव्यं॑ च पु॒त्रो अ॑जनय॒त् पु॒रा। का॒लादृचः॒ सम॑भव॒न् यजुः॑ का॒लाद॑जायत ॥ ३ ॥

का॒लो य॒ज्ञं समै॑रयद्दे॒वेभ्यो॑ भा॒गमक्षि॑तम्। का॒ले ग॑न्धर्वाप्स॒रसः॑ का॒ले लो॒काः प्रति॑ष्ठिताः ॥ ४ ॥

का॒लेऽयमङ्गि॑रा दे॒वोऽथ॑र्वा॒ चाधि॑ तिष्ठतः। इ॒मं च॑ लो॒कं प॑र॒मं च॑ लो॒कं पु॒ण्यांश्च॑ लो॒कान् विधृ॑तीश्च॒ पु॒ण्याः॑। सर्वा॑ल्ँलो॒कान॑भि॒जित्य॒ ब्रह्म॑णा का॒लः स ई॑यते पर॒मो नु दे॒वः ॥ ५ ॥ [६।८]

* * *

सूक्त ५५

ऋषिः— भृगुः ।। देवता—अग्निः ।। छन्दः—१, ३, ४, ६ त्रिष्टुप्; २ आस्तारपङ्क्तिः; ५ विराट् पुरउष्णिक्, ६ निचृदनुष्टुप् ।। मन्त्र ६ ।

रात्रिं॑रात्रि॒मप्र॑यातं॒ भर॒न्तोऽश्वा॑येव॒ तिष्ठ॑ते घा॒सम॒स्मै। रा॒यस्पोषे॑ण॒ समि॒षा मद॑न्तो॒ मा ते॑ अग्ने॒ प्रति॑वेशा रिषाम ॥ १ ॥

या ते॒ वसो॒र्वात॒ इषुः॒ सा त॑ ए॒षा तया॑ नो मृड। रा॒यस्पोषे॑ण॒ समि॒षा मद॑न्तो मा ते॑ अग्ने॒ प्रति॑वेशा रिषाम ॥ २ ॥

सा॒यंसा॑यं गृ॒हप॑तिर्नो अ॒ग्निः प्रा॒तःप्रा॑तः सौमन॒सस्य॑ दा॒ता। वसो॑र्वसो॑र्वसु॒दान॑ एधि व॒यं त्वेन्धा॑नास्त॒न्वं᳚ पुषेम ॥ ३ ॥

प्रा॒तःप्रा॑तर्गृ॒हप॑तिर्नो॑ अ॒ग्निः सा॒यंसा॑यं सौमन॒सस्य॑ दा॒ता । वसो॑र्व-
सोर्वसु॒दान॑ ए॒धीन्धा॑नास्त्वा श॒तंहि॑मा ऋधेम ॥ ४ ॥
अप॑श्चा दु॒ग्धान्न॑स्य भूयासम् । अ॒न्नादा॑यान्न॑पतये रु॒द्राय॒ नमो॑
अ॒ग्नये॑ । स॒भ्यः स॒भां मे॑ पाहि॒ ये च॒ स॒भ्याः स॑भा॒सद॑ः ॥ ५ ॥
त्वमि॑न्द्रा पुरुहूत॒ विश्व॒मायु॒र्व्य᳚श्नवत् । अह॑रहर्ब॒लिमि॒त्ते हर॒न्तोऽश्वा॑येव॒
तिष्ठ॑ते घा॒सम॑ग्ने । रा॒यस्पोषे॑ण॒ समि॒षा मद॑न्तो॒ मा ते॑ अग्ने॒ प्रति॑वेशा
रिषाम ॥ ६ ॥

—:०:—

सूक्त ५६

ऋषिः—यमः ॥ देवता—दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः— त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

य॒मस्य॑ लो॒कादध्या ब॑भूवि॒थ प्रम॑दा॒ मर्त्या॒न् प्र यु॑नक्षि॒ धीर॑ः । ए॒का॒-
किना॑ स॒रथं॑ यासि वि॒द्वान्त्स्वप्नं॒ मिमा॑नो॒ असु॑रस्य॒ योनौ॑ ॥ १ ॥
ब॒न्धस्त्वाग्रे॑ वि॒श्वच॑या अपश्यत् पु॒रा रात्र्या॒ जनि॑तो॒रेके॒ अह्नि॑ । तत॑ः
स्वप्ने॒दम॒ध्या ब॑भूविथ भि॒षग्भ्यो॑ रू॒पम॑प॒गूह॑मानः ॥ २ ॥
बृ॒ह॒द्गावासु॑रे॒भ्योऽधि॑ दे॒वानुपा॑वर्तत महि॒मान॑मि॒च्छन् । तस्मै॒
स्वप्ना॑य दधु॒राधि॑पत्यं त्रयस्त्रि॒ंशास॒ः स्व᳚रानशा॒नाः ॥ ३ ॥
नैतां॑ वि॑दुः पि॒तरो॒ नोत दे॒वा येषां॒ जल्पि॒श्चर॑त्यन्त॒रेदम् । त्रि॒ते स्वप्न॑-
मदधु॒राप्त्ये नर॒ आदि॑त्यासो॒ वरु॑णे॒नानु॑शिष्टाः ॥ ४ ॥
यस्य॑ क्रू॒रमभ॑जन्त दु॒ष्कृतो॒ऽस्वप्ने॑न सु॒कृत॒ः पुण्य॒मायु॑ः । स्व᳚र्म॑दसि
प॒र॒मेण॑ ब॒न्धुना॑ त॒प्यमा॑नस्य॒ मन॒सोऽधि॑ जज्ञिषे ॥ ५ ॥

विद्म ते सर्वाः परिजाः परस्ताद् विद्म स्वप्न यो अधिपा इहा ते ।
यशस्विनो नो यशसेह पाह्याराद् द्विषेभिरप याहि दूरम् ॥६॥ [७।२]

—:०:—

सूक्त ५७

ऋषिः—यम. ॥ देवता— दुःष्वप्ननाशनम् ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; [२ पङ्क्तः;] ३ चतुष्पदा (?, षट्पदा) त्रिष्टुप्; ४ षट्पदोष्णिग्बृहतीगर्भा बिराट् शक्वरी ५ पञ्चपदापरशाक्वरीऽतिजगती ॥ मन्त्र ५ ।

यथा कलां यथा शफं यथर्णं संनयन्ति । एवा दुष्वप्न्यं सर्वमप्रिये
सं नयामसि ॥ १ ॥
सं राजानो अगुः समृणान्यगुः सं कुष्ठा अगुः सं कला अगुः ।
समस्मासु यद् दुष्वप्न्यं निर्द्विषते दुष्वप्न्यं सुवाम ॥ २ ॥
देवानां पत्नीनां गर्भ यमस्य कर यो भद्रः स्वप्न । स मम यः
पापस्तद् द्विषते प्र हिण्मः । मा तृष्टानामसि कृष्णशकुनेर्मुखम् ॥३॥
तं त्वा स्वप्न तथा सं विद्म स त्वं स्वप्नाश्व इव कायमश्व इव नीनाहम् ।
अनास्माकं देवपीयुं पियारु वप यदस्मासु दुष्वप्न्यं यद् गोषु यच्च
नो गृहे ॥ ४ ॥
अनास्माकस्तद् देवपीयुः पियारुर्निष्कमिव प्रति मुञ्चताम् । नवा-
रत्नीनपमया अस्माकं ततः परि । दुष्वप्न्यं सर्वं द्विषते निर्दयामसि
॥ ५ ॥ [७।३]

—:०:—

सूक्त ५८

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—१, ४ त्रिष्टुप्; २ पुरोऽनुष्टुप्; ३ चतुष्पदाऽतिशक्वरी; ५ भुरिक् त्रिष्टुप्; ६ [स्वराट् त्रिष्टुप्] ॥ मन्त्र ६ ।

घृ॒तस्य॑ जू॒तिः सम॑ना॒ सदे॑वा सं॒वत्स॒रं ह॒विषा॑ व॒र्धय॑न्ती। श्रोत्रं॒ चक्षुः॑ प्रा॒णोऽच्छि॑न्नो नो अ॒स्त्वच्छि॑न्ना व॒यमायु॑षो॒ वर्च॑सः ॥ १ ॥

उ॒पास्मान् प्रा॒णो ह्व॑यता॒मुप॑ व॒यं प्रा॒णं ह॑वामहे। वर्चो॑ जग्राह पृथि॒व्य१॒॑न्तरि॑क्षं॒ वर्चः॒ सोमो॒ बृह॒स्पति॑र्विध॒त्ता ॥ २ ॥

वर्च॑सो॒ द्यावा॑पृथि॒वी सं॒ग्रह॑णी बभू॒वथु॒र्वर्चो॑ गृही॒त्वा पृ॑थि॒वीमन॒ सं च॑रेम। य॒शसं॒ गावो॒ गोप॑ति॒मुप॑ तिष्ठन्त्याय॒तीर्यशो॑ गृही॒त्वा पृ॑थि॒वीमनु॒ सं च॑रेम ॥ ३ ॥

व्र॒जं कृ॑णुध्वं॒ स हि वो॑ नृ॒पाणो॒ वर्मा॑ सीव्यध्वं बहु॒ला पृ॒थूनि॑। पुरः॑ कृणुध्व॒माय॑सी॒रधृ॑ष्टा॒ मा वः॑ सुस्रोच्चम॒सो दृंह॑ता॒ तम् ॥ ४ ॥

य॒ज्ञस्य॒ चक्षुः॒ प्रभृ॑ति॒र्मुखं॑ च वा॒चा श्रोत्रे॑ण॒ मन॑सा जुहोमि। इ॒मं य॒ज्ञं वित॑तं वि॒श्वक॑र्म॒णा दे॒वा य॑न्तु सुमन॒स्यमा॑नाः ॥ ५ ॥

ये दे॒वाना॑मृ॒त्विजो॒ ये च॑ य॒ज्ञिया॒ येभ्यो॑ ह॒व्यं क्रि॒यते॑ भाग॒धेय॑म्। इ॒मं य॒ज्ञं स॒ह पत्नी॑भि॒रेत्य॒ याव॑न्तो दे॒वास्त॑वि॒षा मा॑दयन्ताम् ॥६॥

[७।४]

—:०:—

सूक्त ५९

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१ गायत्री; २, ३ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

त्वम॑ग्ने व्रत॒पा अ॑सि दे॒व आ मर्त्ये॒ष्वा। त्वं य॒ज्ञेष्वीड्यः॑ ॥ १ ॥

यद् वो॑ व॒यं प्र॑मि॒नाम॑ व्र॒तानि॑ वि॒दुषां॑ देवा॒ अवि॑दुष्टरासः। अ॒ग्निष्टद् वि॒श्वादा पृ॑णातु वि॒द्वान्त्सोम॑स्य॒ यो ब्रा॑ह्म॒णाँ आ॑वि॒वेश॑ ॥ २ ॥

आ दे॒वाना॑मपि॒ पन्था॑मगन्म॒ यच्छ॒क्नवा॑म॒ तद॑नु॒प्रवो॑ढुम् । अ॒ग्निर्वि॒द्वान्त्स
य॑ज्ञात् स इद्धोता॑ सोऽध्व॒रान्त्स ऋ॒तून् क॑ल्पयाति ॥ ३ ॥ [७।५]

—:०:—

सूक्त ६०

ऋषिः - ब्रह्मा ।। देवता वागादिमन्त्रोक्ताः ।। छन्दः—१ पथ्या बृहती; २ ककुम्मती पुर उष्णिक् । मन्त्र २ ।

वा॒ङ्म॑ आ॒सन्न॒सोः प्रा॒णश्चक्षु॑र॒क्ष्णोः श्रोत्रं॒ कर्ण॑योः । अप॑लिता॒ः केशा॒
अशो॑णा॒ दन्ता॑ ब॒हु बा॒ह्वोर्बल॑म् ॥ १ ॥
ऊ॒र्वोरोजो॒ जङ्घ॑योर्ज॒वः पाद॑योः । प्र॒ति॒ष्ठा अरि॑ष्टानि मे॒ सर्वा॒त्मानि॑भृष्टः ॥ २ ॥ [७।६]

—:०:—

सूक्त ६१

ऋषिः—ब्रह्मा ।। देवता—ब्रह्मणस्पतिः ।। छन्दः—विराट् पथ्या बृहती ।। मन्त्र १ ।

त॒नूस्त॒न्वाऽमे सहे द॒तः सर्व॒मायु॑रशीय । स्यो॒नं मे॑ सीद पु॒रुः
पृ॑णस्व॒ पव॑मानः स्व॒र्गे ॥ १ ॥ [७।७]

—:०:—

सूक्त ६२

ऋषि—ब्रह्मा ।। देवता—ब्रह्मणस्पतिः ।। छन्दः—अनुष्टुप् ।। मन्त्र १ ।

प्रि॒यं मा॑ कृणु दे॒वेषु॑ प्रि॒यं राज॑सु मा कृणु । प्रि॒यं सर्व॑स्य॒ पश्य॑त उ॒त
शू॒द्र उ॒तार्ये॑ ॥ १ ॥ [७।८]

—:०:—

सूक्त ६३

ऋषिः —ब्रह्मा ।। देवता—ब्रह्मणस्पतिः ।। छन्दः—विराडुपरिष्टाद् बृहती ।। मन्त्र १ ।

उत् तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय। आयुः प्राणं प्रजां पशून्
कीर्तिं यजमानं च वर्धय ॥ १ ॥ [७।९]

—:०:—

सूक्त ६४

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ४।

अग्ने समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे। स मे श्रद्धां च मेधां च जात-
वेदाः प्र यच्छतु ॥ १ ॥
इध्मेन त्वा जातवेदः समिधा वर्धयामसि। तथा त्वमस्मान् वर्धय
प्रजया च धनेन च ॥ २ ॥
यदग्ने यानि कानि चिदा ते दारूणि दध्मसि। सर्वं तदस्तु मे शिवं
तज्जुषस्व यविष्ठ्य ॥ ३ ॥
एतास्ते अग्ने समिधस्त्वमिद्धः समिद् भव। आयुरस्मासु धेह्य-
मृतत्वमाचार्याय ॥ ४ ॥ [७।१०]

—:०:—

सूक्त ६५

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—सूर्यो जातवेदाः ॥ छन्दः—जगती ॥ मन्त्र १।

हरिः सुपर्णो दिवमारुहोऽर्चिषा ये त्वा दिप्सन्ति दिवमुत्पतन्तम्।
अव तां जहि हरसा जातवेदोऽबिभ्यदुग्रोऽर्चिषा दिवमा रोह
सूर्य ॥ १ ॥ [७।११]

—:०:—

सूक्त ६६

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—सूर्यो जातवेदा वज्रः ॥ छन्दः—अतिजगती ॥ मन्त्र १।

अयो॑जाला॒ असु॑रा मा॒यिनो॑ऽय॒स्मयैः॒ पाशै॑र॒ङ्किनो॒ ये चर॑न्ति ।
तांस्ते॑ रन्धयामि॒ हर॑सा जातवेदः स॒हस्र॑ऋष्टिः स॒पत्ना॑न् प्रमृ॒णन्
पा॑हि॒ वज्रः॑ ॥ १ ॥ [७।१२]

—:०:—

सूक्त ६७

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—सूर्यः ॥ छन्दः—प्राजापत्या गायत्री ॥ मन्त्र ८ ।

पश्ये॑म श॒रदः॑ श॒तम् ॥ १ ॥ जीवे॑म श॒रदः॑ श॒तम् ॥ २ ॥
बुध्ये॑म श॒रदः॑ श॒तम् ॥ ३ ॥ रोहे॑म श॒रदः॑ श॒तम् ॥ ४ ॥
पूषे॑म श॒रदः॑ श॒तम् ॥ ५ ॥ भवे॑म श॒रदः॑ श॒तम् ॥ ६ ॥
भूये॑म श॒रदः॑ श॒तम् ॥ ७ ॥
भूय॑सी श॒रदः॑ श॒तात् ॥ ८ ॥ [७।१३]

—:०:—

सूक्त ६८

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—मन्त्रोक्तं कर्म ॥ छन्दः—अनुष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

अऽव्य॑सश्च॒ ऽव्यच॑सश्च॒ बिलं॒ वि ष्या॑मि मा॒यया॑ । ताभ्या॑मु॒द्धृत्य॒ वेद॒मथ॒
कर्मा॑णि कृण्महे ॥ १ ॥ [७।१४]

—:०:—

सूक्त ६९

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—आपः ॥ छन्दः—१ आसुर्यनुष्टुप्; २ साम्न्यनुष्टुप्; ३ आसुरी गायत्री; ४ साम्न्युष्णिक् ॥ मन्त्र ४ ।

जी॒वा स्थ॑ जी॒ऽव्यास स॒र्वमायु॑र्जीऽव्यासम् ॥ १ ॥
उ॒प॒जी॒वा स्थोप॑ जीऽव्यासं॒ स॒र्वमायु॑र्जीऽव्यासम् ॥ २ ॥
सं॒जीवा स्थ॒ सं जीऽव्यासं॒ स॒र्वमायु॑र्जीऽव्यासम् ॥३॥

जी॒व॒ला स्थ॑ जी॒व्यास॒ं सर्व॒॑मायु॑र्जीव्यासम् ॥ ४ ॥ [७।१५]

—:०:—

सूक्त ७०

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—इन्द्रादयो मन्त्रोक्ताः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र १ ।

इन्द्र॒ जीव॒ सूर्य॒ जीव॒ देवा॒ जीवा॑ जी॒व्यास॑म॒हम् । सर्व॒मायु॑र्जीव्यासम्
॥ १ ॥ [७।१६]

—:०:—

सूक्त ७१

ऋषिः—ब्रह्मा ॥ देवता—गायत्री ॥ छन्दः—पञ्चपदाऽतिजगती ॥ मन्त्र १ ।

स्तु॒ता मया॑ वर॒दा वे॑दमा॒ता प्र चो॑दयन्तां पावमा॒नी द्वि॒जाना॑म् । आयु॑ः प्रा॒णं प्र॒जां प॒शुं की॒र्तिं द्रवि॑णं ब्रह्मवर्च॒सम् । मह्यं॑ द॒त्त्वा व्र॑जत ब्रह्मलो॒कम् ॥ १ ॥ [७।१७]

—:०:—

सूक्त ७२

ऋषिः—भृग्वङ्गिरा ब्रह्मा ॥ देवता—परमात्मा देवाश्च ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

यस्मा॒त् कोशा॑दु॒दभ॑राम॒ वेदं॒ तस्मि॑न्न॒न्तरव॑ दध्म एनम् । कृ॒तमि॒ष्टं ब्रह्म॑णो वी॒र्ये॑ण॒ तेन॑ मा देवा॒स्तप॑सावते॒ह ॥ १ ॥ [७।१८]

॥ इत्येकोनविंशं काण्डम् समाप्तम् ॥

ॐ

अथर्ववेद-संहिता

अथ विंशं काण्डम्

सूक्त १

ऋषिः—विश्वामित्रः; गोतमः ३ विरूपः ।। देवता—१ इन्द्रः; २ मरुतः; ३ अग्निः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ३ ।

इन्द्र॑ त्वा वृष॒भं व॒यं सु॒ते सोमे॑ हवामहे। स पा॑हि॒ मध्वो॒ अन्ध॑सः ।१।
मरु॑तो॒ यस्य॒ हि क्षये॑ पा॒था दि॒वो विम॑हसः। स सु॑गो॒पात॑मो॒ जनः॑ ।२।
उ॒क्षान्ना॑य व॒शान्ना॑य॒ सोम॑पृष्ठाय वे॒धसे॑। स्तोमै॑र्विधेमा॒ग्नये॑ ।३। (१।१)

—:०:—

सूक्त २

ऋषिः – गृत्समदो मेधातिथिर्वा ? ।। देवता—१ मरुतः; २ अग्निः; ३ इन्द्रः; ४ द्रविणोदाः ।। छन्दः—१, २ विराड् गायत्री; ३ आर्च्युष्णिक्; ४ साम्नी त्रिष्टुप् ।। मन्त्र ४ ।

म॒रुतः॑ पो॒त्रात् सु॒ष्टुभः॑ स्व॒र्का॑दृ॒तुना॒ सोमं॑ पिबतु ॥१॥
अ॒ग्निरा॑ग्नीध्रात् सु॒ष्टुभः॑ स्व॒र्का॑दृ॒तुना॒ सोमं॑ पिबतु ॥२॥
इन्द्रो॑ ब्र॒ह्मा ब्राह्म॑णात् सु॒ष्टुभः॑ स्व॒र्का॑दृ॒तुना॒ सोमं॑ पिबतु ॥३॥
दे॒वो द्र॑विणो॒दाः पो॒त्रात् सु॒ष्टुभः॑ स्व॒र्का॑दृ॒तुना॒ सोमं॑ पिबतु ॥४॥ (१।२)

—:०:—

सूक्त ३

ऋषिः—इरिम्बिठिः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। ।। मन्त्र ३ ।

आ या॑हि सु॒षु॒मा हि त॒ इन्द्र॒ सोमं॒ पिबा॑ इ॒मम् । एदं ब॒र्हिः स॑दो॒ मम॑ ॥ १ ॥
आ त्वा॑ ब्रह्म॒युजा॒ हरी॒ वह॑तामिन्द्र के॒शिना॑ । उप॒ ब्रह्मा॑णि नः शृणु ॥ २ ॥
ब्र॒ह्माण॑स्त्वा व॒यं यु॒जा सो॑म॒पामि॑न्द्र सो॒मिन॑ः । सु॒ताव॑न्तो हवामहे ॥ ३ ॥ (१।३)

—:०:—

सूक्त ४

ऋषिः—इरिम्बिठिः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ३ ।

आ नो॑ याहि सु॒ताव॑तो॒स्माकं॑ सुष्टु॒तिरुप॑ । पिबा॒ सु शि॑प्रि॒न्नन्ध॑सः । १ ।
आ ते॑ सिञ्चामि कद्योरनु॒ गात्रा॒ वि धा॑वतु । गृ॒भा॒य जि॒ह्वया॒ मधु॑ ॥ २ ॥
स्वा॒दुष्टे॑ अस्तु सं॒सुदे॒ मधु॑मान् त॒न्वे॒३॒॑ तव॑ । सोम॒ः शम॑स्तु ते हृ॒दे ॥३॥ (१।४)

—:०:—

सूक्त ५

ऋषिः— इरिम्बिठिः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ७ ।

अ॒यमु॑ त्वा विचर्षणे॒ जनी॑रिवा॒भि संवृ॑तः । प्र सोम॑ इन्द्र सर्प॑तु ॥ १ ॥
तु॒वि॒ग्रीवो॑ व॒पोद॑रः सु॒बा॒हुरन्ध॑सो॒ मदे॑ । इन्द्रो॑ वृ॒त्राणि॑ जिघ्नते ॥ २ ॥
इन्द्र॒ प्रेहि॑ पु॒रस्त्वं विश्व॒स्येशा॑न॒ ओज॑सा । वृ॒त्राणि॑ वृत्रहं जहि ॥ ३ ॥

दीर्घस्ते अस्त्वङ्कुशो येना वसु प्रयच्छसि । यजमानाय सुन्वते ॥ ४ ॥
अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि । एहीमस्य द्रवा पिब ॥५॥
शाचिगो शाचिपूजनायं रणाय ते सुतः । आखण्डल प्र हूयसे ॥ ६ ॥
यस्ते शृङ्गवृषो नपात् प्रणपात् कुण्डपाय्यः । न्यस्मिन् दध्र आ मनः ॥ ७ ॥ (११५)

—:o:—

सूक्त ६

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ९ ।

इन्द्र त्वा वृषभं वयं सुते सोमे हवामहे । स पाहि मध्वो अन्धसः ।१।
इन्द्र क्रतुविदं सुतं सोमं हर्य पुरुष्टुत । पिबा वृषस्व तातृपिम् ॥ २ ॥
इन्द्र प्र णो धितावानं यज्ञं विश्वेभिर्देवेभिः । तिर स्तवान विश्पते ।३।
इन्द्र सोमाः सुता इमे तव प्र यन्ति सत्पते । क्षयं चन्द्रास इन्दवः ।४।
दधिष्वा जठरे सुतं सोममिन्द्र वरेण्यम् । तव द्युक्षास इन्दवः ॥ ५ ॥
गिर्वणः पाहि नः सुतं मधोर्धाराभिरज्यसे । इन्द्र त्वादातमिद् यशः ।
अभि द्युम्नानि वनिन इन्द्रं सचन्ते अक्षिता । पीत्वी सोमस्य वावृधे ।
अर्वावतो न आ गहि परावतश्च वृत्रहन् । इमा जुषस्व नो गिरः ॥८॥
यदन्तरा परावतमर्वावतं च हूयसे । इन्द्रेह तत आ गहि ॥९॥ (११६)

—:o:—

सूक्त ७

ऋषिः—१—३ सुकक्षः; ४ विश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ४ ।

उदु घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम् । अस्तारमेषि सूर्य ॥ १ ॥

नव॒ यो न॑व॒तिं पुरो॑ बि॒भेद॑ बा॒ह्वो॑जसा । अहिं॑ च वृत्र॒हाव॑धीत् ॥२॥
स न॒ इन्द्रः॑ शि॒वः सखाश्वा॑व॒द् गोम॒द् यव॑मत् । उ॒रुधा॑रेव दोहते ।३।
इन्द्र॑ क्रतु॒विदं᳚ सु॒तं सोमं᳚ हर्य पुरुष्टुत । पिबा वृ॑षस्व॒ तातृ॑पिम् ॥४॥
[१।७]

—:०:—

सूक्त ८

ऋषिः—भरद्वाजः कुत्सः विश्वामित्रः ॥ देवता इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

ए॒वा पा॑हि प्र॒त्नथा॒ मन्द॑तु त्वा श्रु॒धि ब्रह्म॑ वावृ॒धस्वो॒त गी॒र्भिः । आ॒विः
सूर्यं᳚ कृणु॒हि पी॑पि॒हीषो॑ ज॒हि शत्रूँ᳚र॒भि गा इ॑न्द्र तृन्धि ॥ १ ॥
अ॒र्वाङे॑हि॒ सोम॑कामं त्वाहुर॒यं सु॒तस्तस्य॑ पिबा॒ मदा॑य । उ॒रु॒व्यचा॑
ज॒ठर॒ आ वृ॑षस्व पि॒तेव॑ नः शृणुहि हू॒यमा॑नः ॥ २ ॥
आपू॑र्णो अस्य क॒लशः॒ स्वाहा॒ सेक्ते॑व॒ कोशं᳚ सिसि॒च पिब॑ध्यै । समु॑
प्रि॒या आव॑वृत्र॒न् मदा॑य प्रदक्षि॒णिद॒भि सोमा॑स॒ इन्द्र॑म् ॥३॥ (१।८)

—:०:—

सूक्त ९

ऋषिः—१, २ नोधाः; ३, ४ मेधातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः १, २ त्रिष्टुप् (?); [१, २] ३, ४ बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती) ॥ मन्त्र ४ ।

तं वो॑ दुस्ममृ॑ती॒षहं॒ वसो᳚र्मन्दा॒नमन्ध॑सः । अ॒भि व॒त्सं न स्वस॑रेषु
धे॒नव॒ इन्द्रं᳚ गी॒र्भिर्न॑वामहे ॥ १ ॥
द्यु॒क्षं सु॒दानुं॒ तवि॑षीभि॒रावृ॑तं गि॒रिं न पु॑रु॒भोज॑सम् । क्षु॒मन्तं॒ वाजं᳚
श॒तिनं᳚ सह॒स्रिणं᳚ म॒क्षू गोम॑न्तमीमहे ॥ २ ॥
तत् त्वा॑ यामि सु॒वीर्यं॒ तद् ब्रह्म॑ पू॒र्वचि॑त्तये । येना॒ यति॑भ्यो॒ भृग॑वे॒
धने॑ हि॒ते येन॒ प्रस्क॑ण्व॒मावि॑थ ॥ ३ ॥

येना॑ समु॒द्रमसृ॑जो म॒हीर॒पस्तदि॑न्द्र॒ वृष्णि॑ ते॒ शव॑ः । स॒द्यः सो अ॑स्य
महि॒मा न सं॒नशे॒ यं क्षो॒णीर॑नुचक्र॒दे ॥ ४ ॥ (१।९)

—:०:—

सूक्त १०

ऋषिः—मेध्यातिथिः । देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः ॥ मन्त्र २ ।

उदु॒ त्ये मधु॑मत्तमा॒ गिर॒ स्तोमा॑स ईरते । स॒त्राजि॑तो धन॒सा अक्षि॑तोतयो वाज॒यन्तो॒ रथा॑ इव ॥ १ ॥

कण्वा॑ इव॒ भृग॑वः॒ सूर्या॑ इव॒ विश्व॒मिद् धी॒तमा॑नशुः । इन्द्रं॒ स्तोमे॑भिर्म॒हय॑न्त आ॒यव॑ः प्रि॒यमे॑धासो अस्वरन् ॥ २ ॥ (१।१०)

—:०:—

सूक्त ११

ऋषिः -विश्वामित्रः ॥ देवता इन्द्रः ॥ छन्द—त्रिष्टुप् ॥। मंत्र ११ ।

इन्द्र॑ः पू॒र्भिदाति॑र॒द् दास॑म॒र्कैर्वि॒दद्व॑सु॒र्दय॑माना॒ वि शत्रू॑न् । ब्रह्म॑जूतस्त॒न्वा॑ वावृधा॒नो भूरि॑दात्र॒ आपृ॑ण॒द् रोद॑सी उ॒भे ॥ १ ॥

म॒खस्य॑ ते तवि॒षस्य॒ प्र जू॒तिमिय॑र्मि॒ वाच॑म॒मृता॑य॒ भूष॑न् । इन्द्र॑ क्षिती॒नाम॑सि॒ मानु॑षीणां वि॒शां दैवी॑नामु॒त पू॑र्व॒यावा॑ ॥ २ ॥

इन्द्रो॑ वृ॒त्रम॑वृणो॒च्छर्ध॑नीतिः॒ प्र मा॒यिना॑ममिना॒द् वर्प॑णीतिः । अह॒न् व्यं॑ समु॒शध॒ग् वने॑ष्वा॒विर्धेना॑ अकृणोद् रा॒म्याणा॑म् ॥ ३ ॥

इन्द्र॑ः स्व॒र्षा ज॒नय॒न्नहा॑नि जि॒गायो॒शिग्भि॒ः पृत॑ना अ॒भिष्टि॑ः । प्रारो॑चय॒न्मन॑वे के॒तुमह्ना॒मवि॑न्द॒ज्ज्योति॑र्बृह॒ते रणा॑य ॥ ४ ॥

इन्द्रस्तुजो बर्हणा आ विवेश नृवद् दधानो नर्या पुरूणि । अचेतयद्
धिय इमा जरित्रे प्रेमं वर्णमतिरच्छुक्रमासाम् ॥ ५ ॥

महो महानि पनयन्त्यस्येन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि । वृजनेन वृजिनान्त्सं
पिपेष मायाभिर्दस्यूँरभिभूत्योजाः ॥ ६ ॥

युधेन्द्रो मह्ना वरिवश्चकार देवेभ्यः सत्पतिश्चर्षणिप्राः । विवस्वतः
सदने अस्य तानि विप्रा उक्थेभिः कवयो गृणन्ति ॥ ७ ॥

सत्रासाहं वरेण्यं सहोदां ससवांसं स्वरपश्च देवीः । ससान यः
पृथिवीं द्यामुतेमामिन्द्रं मदन्त्यनु धीरणासः ॥ ८ ॥

ससानात्याँ उत सूर्यं ससानेन्द्रः ससान पुरुभोजसं गाम् । हिरण्ययमुतभोगं
ससान हत्वी दस्यून् प्रार्यं वर्णमावत् ॥ ९ ॥

इन्द्र ओषधीरसनोदहानि वनस्पतीँरसनोदन्तरिक्षम् । बिभेद बलं
नुनुदे विवाचोऽथाभवद् दमिताभिक्रतूनाम् ॥ १० ॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ । शृण्वन्तमुग्रमूतये
समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥ ११ ॥ (१।११)

—:०:—

सूक्त १२

ऋषिः—१-६ वसिष्ठः; ७ अत्रिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ । आ यो विश्वानि
शवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि ॥ १ ॥

अयामि घोष इन्द्र देवजामिरिरज्यन्त यच्छुरुधो विवाचि । नहि
स्वमायुश्चिकिते जनेषु तानीदंहांस्यति पर्ष्यस्मान् ॥ २ ॥

यु॒जे रथं॑ ग॒वेष॑णं॒ हरि॑भ्या॒मुप॒ ब्रह्मा॑णि जुजुषा॒णम॑स्थुः । वि बा॑धिष्ट॒
स्य रोद॑सी महि॒त्वेन्द्रो॑ वृ॒त्राण्य॑प्र॒ती ज॑घ॒न्वान् ॥ ३ ॥
आप॑श्चित् पिप्यु स्त॒र्यो॒३ न गा॒वो नक्ष॑न्नृ॒तं ज॑रि॒तार॑स्त इन्द्र । या॒हि
वा॒युर्न नि॒युतो॑ नो॒ अच्छा॒ त्व हि धी॒भिर्दय॑से॒ वि वाजा॑न् ॥ ४ ॥
ते त्वा॒ मदा॑ इन्द्र मादयन्तु शु॒ष्मिणं॑ तुवि॒राध॑सं जरि॒त्रे । एको॑ देव॒त्रा
दय॑स हि मर्ता॑न॒स्मिन्छू॑र॒ सव॑ने मादयस्व ॥ ५ ॥
ए॒वेदिन्द्रं॒ वृष॑णं॒ वज्र॑बाहुं॒ वसि॑ष्ठासो अ॒भ्य॑र्चन्त्य॒र्कैः । स न॑ स्तु॒तो
वी॒रव॑द् धा॒तु गोम॑द् यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभिः॒ सदा॑ नः ॥ ६ ॥
ऋ॒जी॒षी व॒ज्री वृ॑ष॒भस्तु॑रा॒षाट्छु॒ष्मी राजा॑ वृत्र॒हा सो॑म॒पावा॑ । यु॒क्त्वा
हरि॑भ्या॒मुप॑ यासद॒र्वाङ् माध्यं॑दिने॒ सव॑ने मत्स॒दिन्द्रः॑ ॥ ७ ॥ (१।१२)

—:o:—

सूक्त १३

ऋषि— १ वामनवः; २ गोतमा; ३ कुत्सः; ४ विश्वामित्रः ।। देवता—इन्द्राबृहस्पती;
२ मरुतः; ३, ४ अग्निः ।। छन्दः—१–३ जगती, ४ त्रिष्टुप् ।। मन्त्र ४ ।

इन्द्र॑श्च॒ सोमं॑ पिबतं बृहस्पते॒ऽस्मिन् य॒ज्ञे म॑न्दसा॒ना वृ॑षण्वसू । आ वां॑
विश॒न्त्विन्द॑वः स्वा॒भुवो॒ऽस्मे र॒यिं सर्व॑वीरं॒ नि य॑च्छतम् ॥ १ ॥
आ वो॑ वहन्तु॒ सप्त॑यो रघु॒ष्यदो॑ रघु॒पत्वा॑नः॒ प्र जिगात बा॒हुभिः॑ ।
सीद॒ता ब॒र्हिरु॒रु वः॒ सद॑स्कृ॒तं मा॒दय॑ध्वं मरुतो॒ मध्वो॒ अन्ध॑सः ॥ २ ॥
इ॒मं स्तोम॒मर्ह॑ते जा॒तवे॑दसे॒ रथ॑मिव॒ सं म॑हेमा मनी॒षया॑ । भ॒द्रा हि नः॒
प्रम॑तिरस्य सं॒सद्यग्ने॑ स॒ख्ये मा रि॑षामा वयं तव॑ ॥ ३ ॥

ऐभि॑रग्ने स॒रथं॑ याह्य॒र्वाङ् नाना॑र॒थं वा॑ वि॒भवो॒ ह्यश्वाः॑ । पत्नी॑वतस्त्रिं॒शतं॒
त्रींश्च॑ दे॒वान॑नुष्व॒धमा व॑ह मा॒दय॑स्व ॥ ४ ॥ (१।१३)

—:०:—

सूक्त १४

ऋषिः— **सौभरिः॥** देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—काकुभः प्रगाथः (विषगा-ककुप् + समा-
सतोबृहती) ॥ मन्त्र ४ ।

व॒यमु॑ त्वाम॑पूर्व्य स्थू॒रं न कच्चि॒द् भर॑न्तोऽव॒स्यवः॑ । वाजे॑ चि॒त्रं
ह॑वामहे ॥ १ ॥

उप॑ त्वा॒ कर्म॑न्नू॒तये॒ स नो॒ युवो॒ग्रश्च॒क्राम॒ यो धृ॒षत् । त्वामिद्ध्य॑वि॒तारं॑ ववृ॒महे॒ सखा॑य इन्द्र सान॒सिम् ॥ २ ॥

यो न॑ इ॒दमि॑दं पु॒रा प्र वस्य॑ आनि॒नाय॒ तमु॑ व स्तुषे । सखा॑य॒ इन्द्र॑-
मू॒तये॑ ॥ ३ ॥

हर्य॑श्वं॒ सत्प॑तिं चर्षणी॒सहं॒ स हि ष्मा॒ यो अम॑न्दत । आ तु नः॒ स
व॑यति॒ गव्य॒मश्व्यं॑ स्तो॒तृभ्यो॑ म॒घवा॑ श॒तम् ॥ ४ ॥ (२।१)

—:०:—

सूक्त १५

ऋषिः - **गोतमः** ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

प्र मंहि॑ष्ठाय बृह॒ते बृ॒हद्र॑ये स॒त्यशु॑ष्माय त॒वसे॑ म॒तिं भ॑रे । अ॒पामि॑व
प्रव॒णे यस्य॑ दु॒र्धरं॒ राधो॑ वि॒श्वायु॒ शव॑से॒ अपा॑वृतम् ॥ १ ॥

अध॑ ते॒ विश्व॒मनु॑ हासदि॒ष्टय॒ आपो॑ नि॒म्नेव॒ सव॑ना ह॒विष्म॑तः । यत्
पर्व॑ते॒ न स॒मशी॑त हर्य॒त इन्द्र॑स्य॒ वज्रः॒ श्नथि॑ता हिर॒ण्ययः॑ ॥ २ ॥

अ॒स्मै भी॒माय॒ नम॑सा॒ सम॑ध्व॒र उषो॒ न शु॑भ्र॒ आ भ॑रा॒ पनी॑यसे । यस्य॒
धाम॒ श्रव॑से॒ नामे॑न्द्रि॒यं ज्योति॒रका॑रि ह॒रितो॒ नाय॑से ॥ ३ ॥

इ॒मे त॑ इन्द्र॒ ते व॒यं पु॑रुष्टुत॒ ये त्वा॒रभ्य॒ चरा॑मसि प्रभूवसो । न॒हि
त्वद॒न्यो गि॑र्वणो॒ गिरः॒ सघ॑त् क्षो॒णीरि॑व॒ प्रति॑ नो हर्य॒ तद्॒ वचः॑ ॥४॥

भूरि॑ त इन्द्र वी॒र्यँ॑ १॒ तव॑ स्मस्य॒स्य स्तो॒तुर्म॑घव॒न् काम॒मा पृ॑ण । अनु॑ ते॒
द्यौर्बृ॑ह॒ती वी॒र्यं॑ मम इ॒यं च॑ ते पृथि॒वी ने॑म॒ ओज॑से ॥ ५ ॥

त्वं तमि॑न्द्र॒ पर्व॑तं म॒हामु॒रुं वज्रे॑ण वज्रिन् पर्व॒शश्च॑कर्तिथ । अवा॑सृजो॒
निवृ॑ता॒ः सर्त॒वा अ॒पः स॒त्रा विश्वं॑ दधिषे॒ केव॑लं॒ सहः॑ ॥ ६ ॥ (२।२)

—:०:—

सूक्त १६

ऋषिः—अयास्यः ॥ देवता—बृहस्पतिः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १२ ।

उ॒द॒प्रुतो॒ न वयो॒ रक्ष॑माणा॒ वाव॑दतो अ॒भ्रिय॑स्येव॒ घोषाः॑ । गि॒रि॒भ्रजो॒
नोर्मयो॒ मद॑न्तो॒ बृह॒स्पति॑म॒भ्य॑१॒र्का अ॑नावन् ॥ १ ॥

सं गोभि॑राङ्गिर॒सो नक्ष॑माणो॒ भग॑ इ॒वेद॑र्य॒मणं॑ निनाय । जने॑ मि॒त्रो न
दम्प॑ती अनक्ति॒ बृह॑स्पते वा॒जया॒शूँरि॑वा॒जौ ॥ २ ॥

सा॒ध्व॒र्या अ॑ति॒थिनी॑रिषि॒रा स्पा॒र्हाः सु॒वर्णा॑ अनव॒द्यरू॑पाः । बृह॒स्पतिः॒
पर्व॑तेभ्यो वि॒तूर्या॒ निर्गा॑ ऊ॑पे॒ यव॑मिव स्थि॒विभ्यः॑ ॥ ३ ॥

आ॒प्रु॒षा॒यन् मधु॑न ऋ॒तस्य॒ योनि॑मवक्षि॒पन्न॒र्क उ॒ल्कामि॑व॒ द्योः ।
बृह॒स्पति॑रु॒द्धर॒न्नश्म॑नो॒ गा भूम्या॑ उ॒द्नेव॒ वि त्वचं॑ बिभेद ॥ ४ ॥

अप॒ ज्योति॑षा॒ तमो॑ अ॒न्तरि॑क्षादु॒द्नः शीपा॑लमिव॒ वात॑ आजत् ।
बृह॒स्पति॑रनु॒मृश्या॑ व॒लस्या॒भ्रमि॑व॒ वात॒ आ च॑क्र॒ आ गाः ॥ ५ ॥

यदा वलस्य पीयतो जसुं भेद् बृहस्पतिरग्नितपोभिरर्कैः । दद्भिर्न जिह्वा परिविष्टमाददाविर्निधीँरकृणोदुस्रियाणाम् ॥ ६ ॥

बृहस्पतिरमत हि त्यदासां नाम स्वरीणां सदने गुहा यत् । आण्डेव भित्त्वा शकुनस्य गर्भमुदुस्रियाः पर्वतस्य त्मनाजत् ॥ ७ ॥

अश्नापिनद्धं मधु पर्यपश्यन्मत्स्यं न दीन उदनि क्षियन्तम् । निष्टज्जभार चमसं न वृक्षाद् बृहस्पतिर्विरवेणा विकृत्य ॥ ८ ॥

सोषामविन्दत् स स्व१ः सो अग्निं सो अर्केण वि बबाधे तमांसि । बृहस्पतिर्गोवपुषो वलस्य निर्मज्जानं न पर्वणो जभार ॥ ९ ॥

हिमेव पर्णा मुषिता वनानि बृहस्पतिनाकृपयद् वलो गाः । अनानुकृत्यमपुनश्चकार यात् सूर्यामासा मिथ उच्चरातः ॥ १० ॥

अभि श्यावं न कृशनेभिरश्वं नक्षत्रेभिः पितरो द्यामपिंशन् । रात्र्यां तमो अदधुर्ज्योतिरहन् बृहस्पतिर्भिनदद्रिं विदद् गाः ॥ ११ ॥

इदमकर्म नमो अभ्रियाय यः पूर्वीरन्वानोनवीति । बृहस्पतिः स हि गोभिः सो अश्वैः स वीरेभिः स नृभिर्नो वयो धात् ॥ १२ ॥ (२।३)

—:०:—

सूक्त १७

ऋषिः—कृष्णः (१२ वसिष्ठः ?) ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१–१० जगती; ११, १२ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १२ ।

अच्छा म इन्द्रं मतयः स्वर्विदः सध्रीचीर्विश्वा उशतीरनूषत । परि ष्वजन्ते जनयो यथा पतिं मर्यं न शुन्ध्युं मघवानमूतये ॥ १ ॥

न घा त्वद्रिगप वेति मे मनस्त्वे इत् कामं पुरुहूत शिश्रय। राजेव
दस्म नि षदोऽधि बर्हिष्यस्मिन्त्सु सोमेवपानमस्तु ते॥ २ ॥
विषूवृदिन्द्रो अमतेरुत क्षुधः स इद्रायो मघवा वस्व ईशते। तस्येदिमे
प्रवणे सप्त सिन्धवो वयो वर्धन्ति वृषभस्य शुष्मिणः॥ ३ ॥
वयो न वृक्षं सुपलाशमासदन्त्सोमास इन्द्रं मन्दिनश्चमूषदः। प्रैषामनीकं
शवसा दविद्युतद् विदत् स्वर्मनवे ज्योतिरार्यम्॥ ४ ॥
कृतं न श्वघ्नी वि चिनोति देवने संवर्गं यन्मघवा सूर्यं जयत्। न तत
ते अन्यो अनु वीर्यं शकन्न पुराणो मघवन् नोत नूतनः॥ ५ ॥
विशंविशं मघवा पर्यशायत जनानां धेना अवचाकशद् वृषा। यस्याह
शक्रः सवनेषु रण्यति स तीव्रैः सोमैः सहते पृतन्यतः॥ ६ ॥
आपो न सिन्धुमभि यत् समक्षरन्त्सोमास इन्द्रं कुल्या इव ह्रदम्।
वर्धन्ति विप्रा महो अस्य सादने यवं न वृष्टिर्दिव्येन दानुना॥ ७ ॥
वृषा न क्रुद्धः पतयद् रजःस्वा यो अर्यपत्नीरकृणोदिमा अपः। स
सुन्वते मघवा जीरदानवेऽविन्दज्ज्योतिर्मनवे हविष्मते॥ ८ ॥
उज्जायतां परशुर्ज्योतिषा सह भूया ऋतस्य सुदुघा पुराणवत्। वि
रोचतामरुषो भानुना शुचिः स्वर्ण शुक्रं शुशुचीत सत्पतिः॥ ९ ॥
गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम्। वयं राजभिः
प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम॥ १० ॥
बृहस्पतिर्नः परि पातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघायोः। इन्द्रः परस्तादुत
मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु॥ ११ ॥

बृह॑स्पते यु॒वमिन्द्र॑श्च॒ वस्वो॑ दि॒व्यस्ये॑शाथे उ॒त पार्थि॑वस्य । ध॒त्तं र॒यि स्तु॑व॒ते की॒रये॑ चिद्यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒ः सदा॑ नः ॥ १२ ॥ (२।४)

—:०:—

सूक्त १८

ऋषिः—१–३ मेधातिथिः प्रियमेधश्च; ४–६ वसिष्ठः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ६ ।

व॒यमु॑ त्वा त॒दिद॑र्था॒ इन्द्र॑ त्वा॒यन्त॒ः सखा॑यः । कण्वा॑ उ॒क्थेभि॑र्जरन्ते ॥ १ ॥

न घे॑म॒न्यदा प॑पन॒ वज्रि॑न्न॒पसो॒ नवि॑ष्टौ । तवेदु॒ स्तोमं॑ चिकेत ॥२॥

इ॒च्छन्ति॑ दे॒वाः सु॒न्वन्तं॒ न स्वप्ना॑य स्पृहयन्ति । यन्ति॑ प्र॒माद॒मत॑न्द्राः ।

व॒यमि॑न्द्र त्वा॒यवो॒ऽभि प्र णो॑नुमो वृषन् । वि॒द्धी त्व॑१॒स्य नो॑ वसो ।४।

मा नो॑ नि॒दे च॒ वक्त॑वे॒ऽर्यो र॑न्धी॒रारा॑व्णे । त्वे अपि॒ क्रतु॒र्मम॑ ॥ ५ ॥

त्वं वर्मा॑सि स॒प्रथ॑ः पु॒रोयो॒धश्च॑ वृत्रहन् । त्वया॒ प्रति॑ ब्रुवे यु॒जा ६ (३।१)

—:०:—

सूक्त १९

ऋषिः—विश्वामित्रः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ७ ।

वा॒र्त्र॑हत्याय॒ शव॑से पृतना॒षाह्या॑य च । इन्द्र॒ त्वा व॑र्तयामसि ॥ १ ॥

अ॒र्वा॒चीनं॒ सु ते॒ मन॑ उ॒त चक्षु॑ः शतक्रतो । इन्द्र॑ कृ॒ण्वन्तु॑ वा॒घत॑ः ॥२॥

नामा॑नि ते शतक्रतो॒ विश्वा॑भिर्गी॒र्भिरी॑महे । इन्द्रा॑भिमाति॒षाह्ये॑ ॥ ३ ॥

पु॒रु॒ष्टु॒तस्य॒ धाम॑भिः श॒तेन॑ महयामसि । इन्द्र॑स्य चर्षणी॒धृत॑ः ॥ ४ ॥

इन्द्रं॑ वृ॒त्राय॒ हन्त॑वे पुरुहू॒तमुप॑ ब्रुवे । भरे॑षु॒ वाज॑सातये ॥ ५ ॥

वाजे॑षु सास॒हिर्भ॑व॒ त्वामी॑महे शतक्रतो । इन्द्र॑ वृ॒त्राय॒ हन्त॑वे ॥ ६ ॥

द्यु॒म्नेषु॑ पृत॒नाज्ये॑ पृत्सु॒तूर्षु॒ श्रवः॑सु च । इन्द्र॒ साद्वा॒भिमा॑तिषु ॥ ७ ॥
(३।२)

—:०:—

सूक्त २०

ऋषिः—विश्वामित्रः; ५—७ गृत्समदः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ [४ अनुष्टुप्] मन्त्र ७।

शु॒ष्मिन्त॑मं न ऊ॒तये॑ द्यु॒म्निनं॑ पाहि॒ जागृ॑विम् । इन्द्र॒ सोमं॑ शतक्रतो ।१।
इ॒न्द्रि॒याणि॑ शतक्र॒तो या ते॒ जने॑षु प॒ञ्चसु॑ । इन्द्र॒ तानि॑ त॒ आ वृ॑णे ।२।
अग॑न्निन्द्र॒ श्रवो॑ बृ॒हद् द्यु॒म्नं द॑धिष्व दु॒ष्टर॑म् । उत् ते॒ शुष्मं॑ तिरामसि।
अ॒र्वा॒वतो॑ न॒ आ ग॒ह्यथो॑ शक्र परा॒वतः॑ । उ॒ लो॒को यस्ते॑ अद्रिव॒ इन्द्रे॒ह तत॒ आ ग॑हि ॥ ४ ॥
इन्द्रो॑ अ॒ङ्ग म॒हद् भ॒यम॒भी षदप॑ चुच्यवत् । स हि स्थि॒रो विच॑र्षणिः ।५।
इन्द्र॑श्च मृ॒डया॑ति नो न नः॑ प॒श्चाद॒घं न॑शत् । भ॒द्रं भ॑वाति नः पु॒रः ।६।
इन्द्र॒ आशा॑भ्य॒स्परि॒ सर्वा॑भ्यो॒ अभ॑यं करत् । जेता॒ शत्रू॒न् विच॑र्षणिः ॥ ७ ॥ (३।३)

—:०:—

सूक्त २१

ऋषिः—सव्य आंगिरसः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१—९ जगती; १०, ११ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ११।

न्यू॒३॒षु वाचं॒ प्र म॒हे भ॑रामहे॒ गिर॒ इन्द्रा॑य॒ सद॑ने वि॒वस्व॑तः । नू चि॒द्धि रत्नं॑ सस॒तामि॒वावि॑दन्न दु॒ष्टु॒तिर्द्र॑विणो॒देषु॑ शस्यते ॥ १ ॥
दु॒रो अश्व॑स्य दु॒र इ॑न्द्र॒ गोर॑सि दु॒रो यव॑स्य॒ वसु॑न इ॒नस्पतिः॑ । शि॒क्षा॒न॒रः प्र॒दिवो॒ अका॑मकर्शनः॒ सखा॒ सखि॑भ्य॒स्तमि॒दं गृ॑णीमसि ॥ २ ॥

शची॑व इन्द्र पुरुकृद् द्युमत्तम॒ तवेदि॒दम॒भित॑श्चेकिते॒ वसु॑ । अतः॑ सं॒गृभ्या॑भिभूत॒ आ भ॑र॒ मा त्वा॑य॒तो ज॑रि॒तुः काम॑मूनयीः ॥ ३ ॥

ए॒भिर्द्युभिः॑ सु॒मना॑ ए॒भिरिन्दु॑भिर्निरुन्धा॒नो अम॑तिं॒ गोभि॑र॒श्विना॑ । इन्द्रे॑ण॒ दस्युं॑ द॒रय॑न्त॒ इन्दु॑भिर्यु॒तद्वे॑षसः॒ समि॒षा र॑भेमहि ॥ ४ ॥

समि॑न्द्र रा॒या समि॒षा र॑भेमहि॒ सं वाजे॑भिः पुरुश्च॒न्द्रैर॒भिद्यु॑भिः । सं दे॒व्या प्रम॑त्या वी॒रशु॑ष्मया॒ गोअ॑ग्रया॒श्वा॑वत्या रभेमहि ॥ ५ ॥

ते त्वा॒ मदा॑ अमद॒न् तानि॒ वृष्ण्या॒ ते सोमा॑सो वृत्र॒हत्ये॑षु सत्पते । यत् का॒रवे॒ दश॑ वृ॒त्राण्य॑प्र॒ति ब॒र्हिष्म॑ते॒ नि स॒हस्रा॑णि ब॒र्हय॑ः ॥ ६ ॥

यु॒धा युध॒मुप॒ घेदे॑षि धृष्णु॒या पु॒रा पुरं॒ समि॒दं हं॒स्योज॑सा । नम्या॒ यदि॑न्द्र॒ सख्या॑ परा॒वति॑ निब॒र्हयो॒ नमु॑चिं॒ नाम॑ मा॒यिन॑म् ॥ ७ ॥

त्वं कर॑ञ्जमु॒त प॒र्णयं॑ वधी॒स्तेजि॑ष्ठयातिथि॒ग्वस्य॑ वर्त॒नी । त्वं श॒ता वङ्गृ॑दस्याभिन॒त् पुरो॑ऽनानु॒दः परि॑षूता ऋ॒जिश्व॑ना ॥ ८ ॥

त्वमे॒ता॑ञ् ज॑नरा॒ज्ञो द्विर्दशा॑ब॒न्धुना॑ सु॒श्रव॑सोपज॒ग्मुष॑ः । ष॒ष्टिं स॒हस्रा॑ नव॒तिं नव॑ श्रु॒तो नि च॒क्रेण॒ रथ्या॑ दु॒ष्पदा॑वृणक् ॥ ९ ॥

त्वमा॑विथ सु॒श्रव॑सं॒ तवो॒तिभि॒स्तव॒ त्राम॑भिरिन्द्र॒ तूर्व॑याणम् । त्वम॑स्मै॒ कुत्स॑मतिथि॒ग्वमा॒युं म॒हे राज्ञे॒ यूने॑ अरन्धनायः ॥ १० ॥

य उ॒दृचीन्द्र दे॒वगो॑पाः॒ सखा॑यस्ते शि॒वत॑मा असाम । त्वां स्तो॑षाम॒ त्वया॑ सु॒वीरा॒ द्राघी॑य॒ आयु॑ः प्र॒तरं॒ दधा॑नाः ॥ ११ ॥ (३।४)

—:०:—

सूक्त २२

ऋषिः—१—३ त्रिशोकः; प्रियमेधः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ६ ।

अ॒भि त्वा॑ वृषभा सु॒ते सु॒तं सृ॑जामि पी॒तये॑। तृ॒म्पा व्य॑श्नुही॒ मद॑म् ॥
मा त्वा॑ मू॒रा अ॑वि॒ष्यवो॒ मोप॒हस्वा॑न॒ आ द॑भन्। माकीं॑ ब्रह्म॒द्विषो॑ वनः ॥
इ॒ह त्वा॒ गोप॑रीणसा म॒हे म॑न्दन्तु॒ राध॑से। सरो॑ गौ॒रो यथा॑ पिब ॥३॥
अ॒भि प्र गोप॑तिं गि॒रेन्द्र॑मर्च॒ यथा॑ वि॒दे। सू॒नुं स॒त्यस्य॒ सत्प॑तिम् ॥४॥
आ हर॑यः ससृज्रि॒रेऽरु॑षी॒रधि॑ ब॒र्हिषि॑। यत्रा॒भि सं॒नवा॑महे ॥ ५ ॥
इन्द्रा॑य॒ गाव॑ आ॒शिरं॑ दुदु॒हे व॒ज्रिणे॒ मधु॑। यत् सी॑मुपह्व॒रे वि॒दत् ॥६॥
(३।५)

—:०:—

सूक्त २३

ऋषिः—विश्वामित्रः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ९ ।

आ तू न॑ इन्द्र म॒द्र्य॑ग्घुवा॒नः सोम॑पीतये। हरि॑भ्यां याह्यद्रिवः ॥१॥
स॒त्तो होता॑ न ऋ॒त्विय॑स्तिस्ति॒रे ब॒र्हिरा॑नु॒षक्। अयु॑ज्रन् प्रा॒तरद्र॑यः ॥
इ॒मा ब्रह्म॑ ब्रह्मवाहः क्रि॒यन्त॒ आ ब॒र्हिः सी॑द। वी॒हि शू॑र पुरो॒लाश॑म् ।३।
रा॒र॒न्धि सव॑नेषु ण ए॒षु स्तोमे॑षु वृत्रहन्। उ॒क्थेष्वि॑न्द्र गिर्वणः ॥४॥
मत॑यः सोम॒पामु॒रुं रि॒हन्ति॒ शव॑स॒स्पति॑म्। इन्द्रं॑ व॒त्सं न मा॒तरः॑ ॥५॥
स म॑न्दस्वा॒ ह्यन्ध॑सो॒ राध॑से त॒न्वा॑ म॒हे। न स्तो॒तारं॑ नि॒दे करः॑ ॥६॥
व॒यमि॑न्द्र त्वा॒यवो॑ ह॒विष्म॑न्तो जरामहे। उ॒त त्वम॑स्म॒युर्व॑सो ॥ ७ ॥
मारे अ॒स्मद् वि मु॑मुचो॒ हरि॑प्रिया॒र्वाङ् या॑हि। इन्द्र॑ स्वधावो॒ मत्स्वे॒ह।

अ॒र्वाञ्चं॑ त्वा सु॒खे रथे॒ वह॑तामिन्द्र के॒शिना॑ । घृ॒तस्नू॑ ब॒र्हिरा॒सदे॑ ॥९॥
(३।६)

—:०:—

सूक्त २४

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ९ ।

उप॑ नः सु॒तमा ग॑हि॒ सोम॑मिन्द्र॒ गवा॑शिरम् । हरि॑भ्या॒ं यस्ते॑ अस्म॒युः ।१।
तमि॑न्द्र॒ मद॒मा ग॑हि बर्हि॒ष्ठां ग्राव॑भिः सु॒तम् । कु॒विन्न्व॑स्य तृ॒प्णव॑ः ।२।
इन्द्र॑मि॒त्था गिरो॒ ममाच्छा॑गुरिषि॒ता इ॒तः । आ॒वृते॒ सोम॑पीतये ॥३॥
इन्द्रं॒ सोम॑स्य पी॒तये॒ स्तोमै॑रि॒ह ह॑वामहे । उ॒क्थेभि॑ः कु॒विदा॒गम॑त् ॥४॥
इन्द्र॒ सोमा॑ः सु॒ता इ॒मे तान् द॑धिष्व शतक्रतो । ज॒ठरे॑ वाजिनीवसो ।५।
वि॒द्मा हि त्वा॑ धनंज॒यं वाजे॑षु दधृ॒षं क॑वे । अधा॑ ते सु॒म्नमी॑महे ॥६॥
इ॒ममि॑न्द्र॒ गवा॑शिरं॒ यवा॑शिरं च नः पिब । आ॒गत्या॒ वृष॑भिः सु॒तम् ।७।
तुभ्येदि॑न्द्र॒ स्व ओ॒क्ये॒३ सोमं॑ चोदामि पी॒तये॑ । ए॒ष रा॑रन्तु ते हृ॒दि ।८।
त्वां सु॒तस्य॑ पी॒तये॑ प्र॒त्नमि॑न्द्र हवामहे । कु॒शि॒कासो॑ अव॒स्यव॑ः ॥९॥
(३।७)

—:०:—

सूक्त २५

ऋषिः—१—६ गोतमः; ७ अष्टकः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१—६ जगती; ७ त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

अश्वा॑वति प्रथ॒मो गोषु॑ गच्छति सुप्रा॒वीरि॑न्द्र॒ मर्त्य॒स्तवो॒तिभि॑ः ।
तमित् पृ॑णक्षि॒ वसु॑ना॒ भवी॑यसा॒ सिन्धु॒मापो॒ यथा॒भितो॒ विचे॑तसः ।१।

आपो॒ न दे॒वीरुप॑ यन्ति हो॒त्रिय॑म॒वः प॑श्यन्ति॒ वित॑तं॒ यथा॒ रजः॑ ।
प्रा॒चैर्दे॒वासः॒ प्र ण॑यन्ति देव॒युं ब्र॑ह्मप्रियँ॑ जोषयन्ते व॒रा इ॑व ॥ २ ॥
अधि॒ द्वयो॑रदधा उ॒क्थ्यँ॑१॒ वचो॑ य॒तस्रु॑चा मिथु॒ना या स॑प॒र्यतः॑ ।
असँ॑यत्तो व्र॒ते ते॑ क्षेति॒ पुष्य॑ति भ॒द्रा श॒क्तिर्यज॑मानाय सुन्व॒ते ॥ ३ ॥
आदङ्गि॑राः प्रथ॒मं द॑धिरे॒ वय॑ इ॒द्धाग्न॑यः॒ शम्या॒ ये सु॑कृ॒त्यया॑ । सर्वं॑
प॒णेः सम॑विन्दन्त॒ भोज॑नमश्वा॑वन्तं॒ गोम॑न्त॒मा प॒शुं नरः॑ ॥ ४ ॥
य॒ज्ञैरथ॑र्वा प्रथ॒मः प॒थस्त॑ते॒ ततः॒ सूर्यो॑ व्रत॒पा वे॒न आज॑नि । आ गा
आ॑जदु॒शना॑ का॒व्यः सचा॑ य॒मस्य॑ जा॒तम॒मृतं॑ यजामहे ॥ ५ ॥
ब॒र्हिर्वा॒ यत् स्व॑प॒त्याय॑ वृ॒ज्यते॒ऽर्को॑ वा॒ श्लोक॑मा॒घोष॑ते दि॒वि । ग्रावा॒
यत्र॒ वद॑ति का॒रुरु॒क्थ्य॑१॒स्तस्येदिन्द्रो॑ अभिपि॒त्वेषु॑ रण्यति ॥ ६ ॥
प्रोग्रां पी॒तिं वृष्ण॑ इयर्मि स॒त्यां प्र॒यै सु॒तस्य॑ हर्यश्व॒ तुभ्य॑म् । इन्द्र॒
धेना॑भिरि॒ह मा॑दयस्व धी॒भिर्विश्वा॑भिः॒ शच्या॑ गृणा॒नः ॥ ७ ॥ (३।८)

—:०:—

सूक्त २६

ऋषिः—१–३ शुनःशेपः; ४–६ मधुच्छन्दाः ॥ देवता —इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ।
मन्त्र ६ ।

योगे॑योगे त॒वस्त॑रं॒ वाजे॑वाजे हवामहे । सखा॑य॒ इन्द्र॑मू॒तये॑ ॥ १ ॥
आ घा॑ गम॒द् यदि॒ श्रव॑त् सह॒स्रिणी॑भिरू॒तिभिः॑ । वाजे॑भि॒रुप॑ नो॒
हव॑म् ॥ २ ॥
अनु॑ प्र॒त्नस्यौक॑सो हुवे तु॑विप्र॒तिं नर॑म् । यं ते॒ पूर्वं॑ पि॒ता हु॒वे ॥३॥
यु॒ञ्जन्ति॑ ब्र॒ध्नम॑रु॒षं चर॑न्तं॒ परि॑ त॒स्थुषः॑ । रोच॑न्ते रोच॒ना दि॒वि ॥४॥

यु॒ञ्जन्त्य॑स्य॒ काम्या॒ हरी॒ विप॑क्षसा॒ रथे॑। शोणा॑ धृ॒ष्णू नृ॒बाह॑सा ॥५॥
के॒तुं कृ॒ण्वन्न॑के॒तवे॒ पेशो॑ मर्या॑ अपे॒शसे॑। समु॒षद्भि॑रजायथाः ।६। (३।९)

—:o:—

सूक्त २७

ऋषिः—गोसूक्त्यश्वसूक्तिनौ ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ६ ।

यदि॑न्द्रा॒हं यथा॒ त्वमीशी॑य॒ वस्व॒ एक॒ इत्। स्तो॒ता मे॒ गोष॑खा स्यात् ।
शिक्षे॑यमस्मै॒ दित्से॑यं॒ शची॑पते मनी॒षिणे॑। यद॒हं गोप॑ति॒ः स्याम् ॥२॥
धे॒नुष्ट॑ इन्द्र सू॒नृ॒ता॒ यज॑मानाय सुन्व॒ते । गामश्वं॑ पि॒प्युषी॑ दुहे ॥ ३ ॥
न ते॑ व॒र्तास्ति॒ राध॑स॒ इन्द्र॑ दे॒वो न मर्त्यः॑। यद् दित्स॑सि स्तु॒तो म॒घम्।
य॒ज्ञ इन्द्र॑मवर्धय॒द् यद् भूमि॒ व्यव॑र्तयत । च॒क्रा॒ण ओ॑प॒शं दि॒वि ।५।
वा॒वृ॒धा॒नस्य॑ ते व॒यं विश्वा॒ धना॑नि जि॒ग्युषः॑ । ऊ॒तिमि॒न्द्रा वृ॑णीमहे ।६।
(३।१०)

—:o:—

सूक्त २८

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ ।। देवता– इन्द्रः ।। छन्दः—१, २ गायत्री ३, ४ त्रिष्टुप् ।। मन्त्र ४ ।

व्य॑१॒न्तरि॑क्षमतिर॒न्मदे॒ सोम॑स्य रोच॒ना । इन्द्रो॒ यदभि॑नद् व॒लम् ॥१॥
उद्गा आ॑ज॒दङ्गि॑रोभ्य आ॒विष्कृ॒ण्वन् गुहा॑ स॒तीः । अ॒र्वाञ्चं॑ नुनुदे
व॒लम् ॥ २ ॥
इन्द्रे॑ण रोच॒ना दि॒वो दृ॒ह्ळानि॑ दृंहि॒तानि॑ च । स्थि॒राणि॒ न प॑रा॒णुदे॑ ।३।
अ॒पामू॒र्मिर्मद॑न्निव॒ स्तोम॑ इन्द्राजिरायते । वि ते॒ मदा॑ अराजिषुः ॥४॥
(३।११)

—:o:—

सूक्त २९

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ५ ।

त्वं हि स्तोम॑व॒र्धन॒ इन्द्रास्यु॑क्थ॒वर्ध॑नः । स्तो॒तॄ॒णामु॒त भ॑द्र॒कृत् ॥ १ ॥
इन्द्र॒मित् के॒शिना॒ हरी॑ सोम॒पेया॑य वक्षतः । उप॑ य॒ज्ञं सु॒राध॑सम् ॥२॥
अ॒पां फेने॑न॒ नमु॑चे॒ः शिर॑ इ॒न्द्रोद॑वर्तयः । विश्वा॒ यदज॑य॒ स्पृध॑ः ॥३॥
मा॒याभि॑रु॒त्सिसृ॑प्सत॒ इन्द्र॒ द्याम॒ारुरु॑क्षतः । अव॒ दस्यूँ॑रधूनुथाः ॥४॥
अ॒सु॒न्वामि॑न्द्र सं॒सदं॒ विषू॑ची॒ं व्य॑नाशयः । सो॒म॒पा उत्त॑रो॒ भव॑न् ॥५॥
(३।१२)

—:o:—

सूक्त ३०

ऋषिः—वरुः सर्वहरिर्वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—जगती ॥ मन्त्र ५ ।

प्र ते॑ म॒हे वि॒दथे॑ शंसि॒षं॒ हरी॒ प्र ते॑ वन्वे व॒नुषो॑ हर्य॒तं मद॑म् । घृ॒तं न
यो हरि॑भि॒श्चारु॒ सेच॑त॒ आ त्वा॑ विशन्तु॒ हरि॑वर्पसं॒ गिर॑ः ॥ १ ॥
हरिं॒ हि योनि॑म॒भि ये स॒मस्व॑रन् हि॒न्वन्तो॒ हरी॑ दि॒व्यं यथा॒ सद॑ः ।
आ यं पृ॒णन्ति॒ हरि॑भि॒र्न धे॒नव॒ इन्द्रा॑य शू॒षं हरि॑वन्तमर्चत ॥ २ ॥
सो अ॑स्य॒ वज्रो॒ हरि॑तो॒ य आ॑य॒सो हरि॒र्निका॑मो॒ हरि॒रा गभ॑स्त्योः ।
द्यु॒म्नी सु॑शि॒प्रो हरि॑मन्युसायक॒ इन्द्रे॒ नि रू॒पा हरि॑ता मिमिक्षिरे ॥३॥
दि॒वि न के॒तुरधि॑ धायि हर्य॒तो वि॒व्यच॒द् वज्रो॒ हरि॑तो॒ न रंह्या॑ ।
तु॒दद॒हिं॒ हरि॑शिप्रो॒ य आ॑य॒सः स॒हस्र॑शोका अभवद्धरिंभ॒रः ॥ ४ ॥
त्वंत्व॑महर्य॒था॒ उप॑स्तुत॒ः पूर्वे॑भिरिन्द्र हरि॑केश॒ यज्व॑भिः । त्वं ह॑र्यसि॒
तव॒ विश्व॑मु॒क्थ्य॑१मसा॑मि॒ राधो॑ हरिजात हर्य॒तम् ॥ ५ ॥ (३।१३)

—:o:—

सूक्त ३१

ऋषिः—बरुः सर्वहरिर्वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—जगती ॥ मन्त्र ५ ।

ता ब॒ज्रिणं॑ म॒न्दिनं॒ स्तोम्यं॒ मद॒ इन्द्रं॒ रथे॑ वहतो हर्य॒ता हरी॑ ।
पु॒रूण्य॑स्मै॒ सव॑नानि॒ हर्य॑त॒ इन्द्रा॑य॒ सोमा॒ हर॑यो दधन्विरे ॥ १ ॥
अरं॒ कामा॑य॒ हर॑यो दधन्विरे स्थि॒राय॑ हिन्व॒न् हर॑यो॒ हरी॑ तु॒रा ।
अर्व॑द्भि॒र्यो हरि॑भि॒र्जोष॒मीय॑ते॒ सो अ॑स्य॒ कामं॒ हरि॑वन्तमानशे ॥ २ ॥
हरि॑श्मशारु॒र्हरि॑केश आय॒सस्तु॑र॒स्पेये॒ यो ह॑रि॒पा अव॑र्धत । अर्व॑द्भि॒र्यो
हरि॑भिर्वा॒जिनी॑वसु॒रति॒ विश्वा॑ दुरि॒ता पारि॑ष॒द्धरी॑ ॥ ३ ॥
स्रुवे॑व॒ यस्य॒ हरि॑णी विपे॒ततुः॑ शिप्रे॒ वाजा॑य॒ हरि॑णी॒ दवि॑ध्वतः । प्र यत्
कृ॒ते च॑म॒से मर्मृ॑ज॒द्धरी॑ पी॒त्वा मद॑स्य हर्य॒तस्यान्ध॑सः ॥ ४ ॥
उ॒त स्म॒ सद्म॑ हर्य॒तस्य॑ प॒स्त्यो॒३॑रत्यो॒ न वाजं॒ हरि॑वाँ अचिक्रदत् । म॒ही
चि॒द्धि धि॒षणाह॑र्य॒दोज॑सा बृ॒हद् वयो॑ दधिषे हर्य॒तश्चि॒दा ॥५॥ (३।१४)

—:०:—

सूक्त ३२

ऋषिः—बरुः सर्वहरिर्वा ॥ देवता–इन्द्रः ॥ छन्दः–१ जगती ; २, ३ त्रिष्टुप् । मन्त्र ३ ।

आ रोद॑सी॒ हर्य॑माणो महि॒त्वा नव्यं॑नव्यं हर्यसि॒ मन्म॒ नु प्रि॒यम् ।
प्र पस्त्य[मसुर हर्य॒तं गोरा॒विष्कृ॑धि॒ हर॑ये॒ सूर्या॑य ॥ १ ॥
आ त्वा॑ ह॒र्यन्तं॑ प्र॒युजो॒ जना॑नां॒ रथे॑ वहन्तु॒ हरि॑शिप्रमिन्द्र । पिबा॒
यथा॑ प्रति॑भृतस्य॒ मध्वो॒ हर्य॑न् य॒ज्ञं स॑ध॒मादे॒ दशो॑णिम् ॥ २ ॥
अपाः॒ पूर्वे॑षां हरिवः सु॒ताना॒मथो॑ इ॒दं सव॑नं॒ केव॑लं ते । म॒म॒द्धि सोमं॒
मधु॑मन्तमिन्द्र स॒त्रा वृ॑षं ज॒ठर॒ आ वृ॑षस्व ॥ ३ ॥ [३।१५]

—:०:—

सूक्त ३३

ऋषिः—अष्टकः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—त्रिष्टुप् ।। मंत्र ३ ।

अ॒प्सु धू॒तस्य॑ हरिव॒ः पिबे॒ह नृ॒भि॑ः सु॒तस्य॑ ज॒ठरं॑ पृणस्व । मि॒मि॒क्षुर्य॑-
मद्र॑य इन्द्र॒ तुभ्यं॒ तेभि॑र्वर्धस्व॒ मद॑मुक्थवाहः ॥ १ ॥
प्रोग्रां पी॒तिं वृष्ण॑ इयर्मि स॒त्यां प्र॒यै सु॒तस्य॑ हर्यश्व॒ तुभ्य॑म् । इन्द्र॒
धेना॑भिरि॒ह मा॑दयस्व धी॒भिर्विश्वा॑भि॒ः शच्या॑ गृणा॒नः ॥ २ ॥
ऊ॒ती श॑चीव॒स्तव॑ वी॒र्ये॑ण वयो॒ दधा॑ना उ॒शिज॑ ऋतज्ञाः । प्र॒जाव॑दिन्द्र॒
मनु॑षो दुरो॒णे त॒स्थुर्गृ॒णन्त॑ः सध॒माद्या॑सः ॥ ३ ॥ [३।१६]

—:०:—

सूक्त ३४

ऋषिः—गृत्समदः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—त्रिष्टुप् ।। मन्त्र १८ ।

यो जा॒त ए॒व प्र॑थ॒मो मन॑स्वान् दे॒वो दे॒वान् क्रतु॑ना प॒र्यभू॑षत् । यस्य॒
शुष्मा॒द् रोद॑सी॒ अभ्य॑सेतां नृ॒म्णस्य॑ म॒ह्ना स ज॑नास॒ इन्द्र॑ः ॥ १ ॥
यः पृ॑थि॒वीं व्यथ॑माना॒मदृं॑ह॒द् यः पर्व॑ता॒न् प्रकु॑पिताँ॒ अर॑म्णात् । यो
अ॒न्तरि॑क्षं विम॒मे वरी॑यो॒ यो द्याम॑स्तभ्ना॒त् स ज॑नास॒ इन्द्र॑ः ॥ २ ॥
यो ह॒त्वाहि॒मरि॑णात् स॒प्त सिन्धू॒न् यो गा उ॒दाज॑दप॒धा व॒लस्य॑ । यो
अश्म॑नोर॒न्तर॒ग्निं ज॒जान॑ सं॒वृक् स॒मत्सु॒ स ज॑नास॒ इन्द्र॑ः ॥ ३ ॥
येने॒मा विश्वा॒ च्यव॑ना कृ॒तानि॒ यो दासं॒ वर्ण॒मध॑रं॒ गुहाक॑ः । श्व॒घ्नीव॒
यो जि॑गी॒वां ल॒क्षमाद॑द॒र्यः पु॒ष्टानि॒ स ज॑नास॒ इन्द्र॑ः ॥ ४ ॥
यं स्मा॑ पृ॒च्छन्ति॒ कुह॒ सेति॑ घो॒रमु॒तेमा॑हु॒र्नैषो अ॒स्तीत्ये॑नम् । सो अ॒र्यः
पु॒ष्टीर्विज॑ इ॒वा मि॑नाति॒ श्रद॑स्मै धत्त॒ स ज॑नास॒ इन्द्र॑ः ॥ ५ ॥

यो र॒ध्रस्य॑ चोदि॒ता यः कृ॒शस्य॒ यो ब्र॒ह्मणो॒ नाध॑मानस्य की॒रेः ।
यु॒क्तग्रा॑व्णो॒ यो॑ऽवि॒ता सु॑शि॒प्रः सु॒तसो॑मस्य॒ स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ ६ ॥
यस्याश्वा॑सः प्र॒दिशि॒ यस्य॒ गावो॒ यस्य॒ ग्रामा॒ यस्य॒ विश्वे॒ रथा॑सः ।
यः सूर्यं॒ य उ॒षसँ ज॒जान॒ यो अ॒पां॑ ने॒ता स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ ७ ॥
यं क्रन्द॑सी संय॒ती वि॒ह्वये॑ते॒ परेऽव॑र उ॒भया॑ अ॒मित्राः॑ । स॒मा॒नं चि॒द्र-
थ॑मातस्थि॒वांसा॒ नाना॑ हवेते॒ स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ ८ ॥
यस्मा॒न्न ऋ॒ते वि॒जय॑न्ते॒ जना॑सो॒ यं युध्य॑माना॒ अव॑से॒ हव॑न्ते । यो
विश्व॑स्य प्रति॒मानँ ब॒भूव॒ यो अ॑च्युत॒च्युत् स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ ९ ॥
यः शश्व॑तो॒ मह्ये॑नो॒ दधा॑ना॒नम॑न्यमाना॒ञ्छर्वा॑ ज॒घान॑ । यः शर्ध॑ते॒
नानु॒ददा॑ति शृ॒ध्यां यो दस्यो॑र्ह॒न्ता स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ १० ॥
यः शम्ब॑रं॒ पर्व॑तेषु क्षि॒यन्तँ चत्वारिं॒श्यां श॒रद्य॒न्ववि॑न्दत् । ओ॒जा॒यमा॑नं॒
यो अहिं॑ ज॒घान॒ दानुं॒ शया॑नं॒ स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ ११ ॥
यः शम्ब॑रं प॒र्यत॑र॒त् कसी॑भि॒र्यो॑ऽचा॑रुका॒स्नापि॑बत् सु॒तस्य॑ । अ॒न्तर्गि॒रौ
यज॑मानं ब॒हुं जनं॒ यस्मि॒न्नामू॑र्छ॒त् स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ १२ ॥
यः स॒प्तर॑श्मिर्वृष॒भस्तुवि॑ष्मानवा॒सृज॒त् सर्त॑वे स॒प्त सिन्धू॑न् । यो
रौहि॒णमस्फु॑र॒द् वज्र॑बाहु॒र्द्यामा॒रोह॑न्तं॒ स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ १३ ॥
द्यावा॑ चिदस्मै पृथि॒वी न॑मेते॒ शुष्मा॑च्चिदस्य॒ पर्व॑ता भयन्ते । यः
सोम॒पा नि॑चि॒तो वज्र॑बाहु॒र्यो वज्र॑हस्तः॒ स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ १४ ॥
यः सु॒न्वन्त॒मव॑ति॒ यः पच॑न्तं॒ यः शंस॑न्तं॒ यः श॑शमा॒नमू॒ती । यस्य॒
ब्रह्म॒ वर्ध॑नं॒ यस्य॒ सोमो॒ यस्ये॒दं राधः॒ स ज॑नास॒ इन्द्रः॑ ॥ १५ ॥

जा॒तो व्य॑ख्यत् पि॒त्रोरु॒पस्थे॒ भु॒वो न वे॑द जनि॒तुः पर॑स्य। स्त॒वि॒ष्यमा॑णो॒ नो यो अ॒स्मद् व्र॒ता दे॒वाना॒ं स ज॑नास॒ इन्द्र॑ः ॥ १६ ॥

यः सोम॑कामो॒ हर्य॑श्वः सू॒रिर्यस्मा॒द् रेज॑न्ते॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑। यो ज॒घान॒ शम्ब॑रं॒ यश्च॒ शुष्णं॒ य ए॑कवी॒रः स ज॑नास॒ इन्द्र॑ः ॥ १७ ॥

यः सु॑न्व॒ते पच॑ते दु॒ध्र आ चि॒द् वाजं॒ दर्द॑र्षि॒ स किला॑सि स॒त्यः। व॒यं त॑ इन्द्र वि॒श्वह॑ प्रि॒यास॑ः सु॒वीरा॑सो वि॒दथ॒मा व॑देम ॥१८॥ [४।१]

—:०:—

सूक्त ३५

ऋषिः—नोधाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १६ ॥

अ॒स्मा इदु॒ प्र त॒वसे॑ तु॒राय॒ प्रयो॒ न ह॑र्मि॒ स्तोमं॒ माहि॑नाय। ऋची॑षमा॒याध्रि॑गव॒ ओह॒मिन्द्रा॑य॒ ब्रह्मा॑णि रा॒तत॑मा ॥ १ ॥

अ॒स्मा इदु॒ प्रय॑ इव॒ प्र यं॑सि॒ भरा॑म्याङ्गू॒षं बाधे॑ सुवृ॒क्ति। इन्द्रा॑य हृ॒दा मन॑सा मनी॒षा प्र॒त्नाय॒ पत्ये॒ धियो॑ मर्जयन्त ॥ २ ॥

अ॒स्मा इदु॒ त्यमु॑प॒मं स्व॒र्षां भरा॑म्याङ्गू॒षमा॒स्ये॑न। मंहि॑ष्ठ॒मच्छो॑क्तिभिर्म॒तीनां॑ सुवृ॒क्तिभिः॑ सू॒रिं वा॑वृ॒धध्यै॑ ॥ ३ ॥

अ॒स्मा इदु॒ स्तोमं॒ सं हि॑नोमि॒ रथं॒ न तष्टे॑व॒ तत्सि॑नाय। गिर॑श्च॒ गिर्वा॑हसे सुवृ॒क्तीन्द्रा॑य विश्वमि॒न्वं मेधि॑राय ॥ ४ ॥

अ॒स्मा इदु॒ सप्ति॑मिव श्रव॒स्येन्द्रा॑या॒र्कं जु॒ह्वा॒३ सम॑ञ्जे। वी॒रं दा॒नौक॑सं व॒न्दध्यै॑ पु॒रां गू॒र्तश्र॑वसं द॒र्माण॑म् ॥ ५ ॥

अ॒स्मा इदु॒ त्वष्टा॑ तक्ष॒द् वज्रं॒ स्वप॑स्तमं स्व॒र्यँ१॒ रणा॑य। वृ॒त्रस्य॑ चि॒द् विद॒द् येन॒ मर्म॑ तु॒जन्नीशा॑नस्तुज॒ता कि॑ये॒धाः ॥ ६ ॥

अस्येदु मातुः सवनेषु सद्यो महः पितुं पपिवां चार्वन्ना । मुषायद्
विष्णुः पचतं सहीयान् विध्यद् वराहं तिरो अद्रिमस्ता ॥ ७ ॥
अस्मा इदु ग्नाश्चिद् देवपत्नीरिन्द्रायार्कमहिहत्य ऊवुः । परि द्यावा-
पृथिवी जभ्र उर्वी नास्य ते महिमानं परि ष्टः ॥ ८ ॥
अस्येदेव प्र रिरिचे महित्वं दिवस्पृथिव्याः पर्यन्तरिक्षात् । स्वरा-
ळिन्द्रो दम आ विश्वगूर्तः स्वरिरमत्रो ववक्ष रणाय ॥ ९ ॥
अस्येदेव शवसा शुषन्तं वि वृश्चद् वज्रेण वृत्रमिन्द्रः । गा न व्राणा
अवनीरमुञ्चदभि श्रवो दावने सचेताः ॥ १० ॥
अस्येदु त्वेषसा रन्त सिन्धवः परि यद् वज्रेण सीमयच्छत् । ईशानकृद्
दाशुषे दशस्यन् तुर्वीतये गाधं तर्वणिः कः ॥ ११ ॥
अस्मा इदु प्र भरा तूतुजानो वृत्राय वज्रमीशानः कियेधाः । गोर्न
पर्व वि रदा तिरश्चेष्यन्नर्णांस्यपां चरध्यै ॥ १२ ॥
अस्येदु प्र ब्रूहि पूर्व्याणि तुरस्य कर्माणि नव्य उक्थैः । युधे यदिष्णान
आयुधान्यृघायमाणो निरिणाति शत्रून् ॥ १३ ॥
अस्येदु भिया गिरयश्च दृढा द्यावा च भूमा जनुषस्तुजेते । उपो
वेनस्य जोगुवान ओणिं सद्यो भुवद् वीर्याऽय नोधाः ॥ १४ ॥
अस्मा इदु त्यदनु दाय्येषामेको यद् वव्ने भूरेरीशानः । प्रैतशं सूर्ये
पस्पृधानं सौवश्व्ये सुष्विमावदिन्द्रः ॥ १५ ॥
एवा ते हारियोजना सुवृक्तीन्द्र ब्रह्माणि गोतमासो अक्रन् । ऐषु
विश्वपेशसं धियं धाः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥१६॥ [४।२]

—:०:—

सूक्त ३६

ऋषिः— भरद्वाजः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ११ ।

य एक॒ इद्धव्य॑श्चर्षणी॒नामिन्द्रं॒ तं गी॒र्भिर॒भ्य॑र्च॑ आ॒भिः । यः पत्य॑ते
वृष॒भो वृष्ण्या॑वान्त्स॒त्यः सत्वा॑ पुरुमा॒यः सह॑स्वान् ॥ १ ॥
तमु॑ नः॒ पूर्वे॑ पि॒तरो॒ नव॑ग्वाः स॒प्त विप्रा॑सो अ॒भि वा॒जय॑न्तः ।
न॒क्ष॒द्दा॒भं ततु॑रिं पर्वते॒ष्ठामद्रो॑घवाचं म॒तिभिः॒ शवि॑ष्ठम् ॥ २ ॥
तमी॑मह॒ इन्द्र॑मस्य रा॒यः पु॑रु॒वीर॑स्य नृ॒वतः॑ पुरु॒क्षोः । यो अस्कृ॑धो-
युर॒जरः॒ स्व॑र्वा॒न्तमा भ॑र हरिवो माद॒यध्यै॑ ॥ ३ ॥
तन्नो॒ वि वो॑चो॒ यदि॑ ते पुरा चि॑ज्जरि॒तार॑ आन॒शुः सु॒म्नमि॑न्द्र ।
कस्ते॑ भा॒गः किं वयो॑ दुध्र खिद्वः॒ पुरु॑हूत पुरूवसोऽसुर॒घ्नः ॥ ४ ॥
तं पृ॒च्छन्ती॒ वज्र॑हस्तं रथे॒ष्ठामिन्द्रं॒ वेपी॒ वक्व॑री॒ यस्य॒ नू गीः । तु॒वि॒-
ग्रा॒भं तु॑विकू॒र्मिं र॑भो॒दां गा॒तुमि॑षे॒ नक्ष॑ते॒ तुम्र॒मच्छ॑ ॥ ५ ॥
अ॒या ह॒ त्यं मा॒यया॑ वावृधा॒नं म॑नो॒जुवा॑ स्वतवः॒ पर्व॑तेन । अच्यु॑ता
चिद् वीडि॒ता स्वो॑जो रु॒जो वि दृढा धृ॑ष॒ता वि॑रप्शिन् ॥६॥
तं वो॑ धि॒या नव्य॑स्या॒ शविष्ठं प्र॒त्नं प्र॑त्न॒वत् प॑रितंस॒यध्यै॑ । स नो॑
वक्षदनिमा॒नः सु॒वह्मेन्द्रो॒ विश्वा॒न्यति॑ दु॒र्गहा॑णि ॥ ७ ॥
आ जना॑य द्रुह्व॑णे॒ पार्थि॑वानि दि॒व्यानि॑ दीपयो॒ऽन्तरि॑क्षा । तपा॑
वृषन् वि॒श्वतः॑ शो॒चिषा॒ तान् ब्र॑ह्म॒द्विषे॑ शोचय॒ क्षाम॒पश्च॑ ॥ ८ ॥
भुवो॒ जन॑स्य दि॒व्यस्य॒ राजा॒ पार्थि॑वस्य॒ जग॑तस्त्वेषसंदृक् । धि॒ष्व
वज्रं॒ दक्षि॑ण इन्द्र॒ हस्ते॒ विश्वा॑ अजुर्य दयसे॒ वि मा॒याः ॥ ९ ॥

आ संयतमिन्द्र णः स्वस्तिं शत्रुतूर्याय बृहतीममृध्राम् । यया दासा-
न्यार्याणि वृत्रा करो वज्रिन्त्सतुका नाहुषाणि ॥ १० ॥
स नो नियुद्भिः पुरुहूत वेधो विश्ववाराभिरा गहि प्रयज्यो । न या
अदेवो वरते न देव आभिर्याहि तूयमा मद्र्यद्रिक् ॥ ११ ॥ [४।३]

—:०:—

सूक्त ३७

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ११ ।

यस्तिग्मशृङ्गो वृषभो न भीम एकः कृष्टीश्च्यावयति प्र विश्वाः ।
यः शश्वतो अदाशुषो गयस्य प्रयन्तासि सुष्वितराय वेदः ॥ १ ॥
त्वं ह त्यदिन्द्र कुत्समावः शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये । दासं यच्छुष्णं
कुयवं न्यस्मा अरन्धय आर्जुनेयाय शिक्षन् ॥ २ ॥
त्वं धृष्णो धृषता वीतहव्यं प्रावो विश्वाभिरूतिभिः सुदासम् । प्र
पौरुकुत्सिं त्रसदस्युमावः क्षेत्रसाता वृत्रहत्येषु पूरुम् ॥ ३ ॥
त्वं नृभिर्नृमणो देववीतौ भूरीणि वृत्रा हर्यश्व हंसि । त्वं नि दस्युं
चुमुरिं धुनिं चास्वापयो दभीतये सुहन्तु ॥ ४ ॥
तव च्यौत्नानि वज्रहस्त तानि नव यत् पुरो नवतिं च सद्यः ।
निवेशने शततमाविवेषीरहं च वृत्रं नमुचिमुताहन् ॥ ५ ॥
सना ता त इन्द्र भोजनानि रातहव्याय दाशुषे सुदासे । वृष्णे ते
हरी वृषणा युनज्मि व्यन्तु ब्रह्माणि पुरुशाक वाजम् ॥ ६ ॥
मा ते अस्यां सहसावन् परिष्टावघाय भूम हरिवः परादै । त्रायस्व
नोऽवृकेभिर्वरूथैस्तव प्रियासः सूरिषु स्याम ॥ ७ ॥

प्रि॒यास॒ इत् ते॑ मघवन्न॒भिष्टौ॒ नरो॑ मदेम शर॒णे सखा॑यः । नि तु॒र्वशं॒
नि याद्वं॑ शिशीह्यतिथि॒ग्वाय॒ शंस्यं॑ करि॒ष्यन् ॥ ८ ॥
स॒द्यश्चि॒न्नु ते॑ मघवन्न॒भिष्टौ॒ नरः॑ शंसन्त्युक्थ॒शास॑ उ॒क्था । ये त॒
हवे॑भि॒र्वि॑ प॒णीँ रदा॑शन्न॒स्मान् वृ॑णीष्व॒ युज्या॑य॒ तस्मै॑ ॥ ९ ॥
ए॒ते स्तोमा॑ न॒रां नृ॑तम॒ तुभ्य॑मस्म॒द्र्य॑ञ्चो॒ दद॑तो म॒घानि । तेषा॑मिन्द्र
वृ॒त्रह॒त्ये॑ शि॒वो भूः सखा॑ च॒ शूरो॑ऽवि॒ता च॑ नृ॒णाम् ॥ १० ॥
नू इ॑न्द्र शू॒र स्तव॑मान ऊ॒ती ब्रह्म॑जूतस्त॒न्वा॑ वावृधस्व । उप॑ नो॒
वाजा॑न् मिमी॒ह्युप॒ स्तीन् यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभिः॒ सदा॑ नः ॥११॥ [४।४]

—:०:—

सूक्त ३८

ऋषिः—१—३ इरिम्बिठिः; ४—६ मधुच्छन्दाः ॥ देवता—इन्द्र. ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ६ ।

आ या॑हि सु॒षुमा॒ हि त॒ इन्द्र॒ सोमं॒ पिबा॑ इ॒मम् । एदं ब॒र्हिः स॑दो॒
मम॑ ॥ १ ॥
आ त्वा॑ ब्रह्म॒युजा॒ हरी॒ वह॑तामिन्द्र के॒शिना॑ । उप॒ ब्रह्मा॑णि नः शृणु ।२।
ब्र॒ह्माण॑स्त्वा व॒यं यु॒जा सो॑म॒पामि॑न्द्र सो॒मिनः॑ सु॒ताव॑न्तो हवामहे ।३।
इन्द्र॒मिद् गा॒थिनो॑ बृ॒हदिन्द्र॑म॒र्केभि॑र॒र्किणः॑ । इन्द्रं॒ वाणी॑रनूषत ॥ ४ ॥
इन्द्र॒ इद्धर्यो॒ः सचा॒ संमि॑श्ल॒ आ व॑चो॒युजा॑ । इन्द्रो॑ व॒ज्री हि॑र॒ण्ययः॑ ।५।
इन्द्रो॑ दी॒र्घाय॒ चक्ष॑स॒ आ सूर्यं॑ रोहयद् दि॒वि । वि गोभि॒रद्रि॑मैरयत् ।६।
[५।१]

—:०:—

सूक्त ३९

ऋषिः—१ मधुच्छन्दाः; २—५ गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ५ ।

इन्द्रं वो विश्वतस्परि हवामहे जनेभ्यः । अस्माकमस्तु केवलः ॥ १ ॥
व्यन्तरिक्षमतिरन्मदे सोमस्य रोचना । इन्द्रो यदभिनद् वलम् ॥२॥
उद् गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन् गुहा सतीः । अर्वाञ्चं नुनुदे वलम् ॥ ३ ॥
इन्द्रेण रोचना दिवो दृढानि दृंहितानि च । स्थिराणि न पराणुदे ।४।
अपामूर्मिर्मदन्निव स्तोम इन्द्राजिरायते । वि ते मदा अराजिषुः ॥५॥
[५।२]

—:०:—

सूक्त ४०

ऋषिः—मधुच्छन्दा ॥ देवता—१, इन्द्रः मरुतश्च; २-३ मरुतः । छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

इन्द्रेण सं हि दृक्षसे संजग्मानो अबिभ्युषा । मन्दू समानवर्चसा ॥१॥
अनवद्यैरभिद्युभिर्मखः सहस्वदर्चति । गणैरिन्द्रस्य काम्यैः ॥ २ ॥
आदह स्वधामनु पुनर्गर्भत्वमेरिरे । दधाना नाम यज्ञियम् ॥३॥ [५।३]

—:०:—

सूक्त ४१

ऋषिः—गोतमः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुतः । जघान नवतीर्नव ॥ १ ॥
इच्छन्नश्वस्य यच्छिरः पर्वतेष्वपश्रितम् । तद् विदच्छर्यणावति ॥ २ ॥

अत्राह॒ गोर॑मन्वत॒ नाम॒ त्वष्टु॑रपी॒च्य∫म्। इ॒त्था च॒न्द्रम॑सो गृ॒हे ॥३॥
[५।४]

—:०:—

सूक्त ४२

ऋषिः—कुरुस्तुतिः (?, कुरुसुतिः) ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

वाचं॑म॒ष्टाप॑दीम॒हं नव॑स्रक्तिमृ॒तस्पृश॑म्। इन्द्रा॒त् परि॑ त॒न्वं∫ ममे ॥१॥
अनु॑ त्वा॒ रोद॑सी उ॒भे क्रक्ष॑माणमकृपेताम्। इन्द्र॒ यद्॒ द॑स्यु॒हाभ॑वः ।२।
उ॒त्तिष्ठ॒न्नोज॑सा स॒ह पी॒त्वी शिप्रे॑ अवेपयः। सोम॑मिन्द्र च॒मू सु॒तम् ॥३॥
[५।५]

—:०:—

सूक्त ४३

ऋषिः—त्रिशोकः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

भि॒न्धि विश्वा॒ अप॒ द्विषः॒ परि॒ बाधो॑ ज॒ही मृधः॑। वसु॑ स्पा॒र्हं तदा भ॑र ॥ १ ॥
यद् वी॒लावि॑न्द्र॒ यत् स्थि॒रे यत् पर्शा॑ने॒ परा॑भृतम्। वसु॑ स्पा॒र्हं तदा भ॑र ॥ २ ॥
यस्य॑ ते वि॒श्वमा॑नुषो॒ भूरे॑र्द॒त्तस्य॒ वेद॑ति। वसु॑ स्पा॒र्हं तदा भ॑र ॥३॥
[५।६]

—:०:—

सूक्त ४४

ऋषिः—इरिम्बिठिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

प्र स॒म्राजँ॑ चर्षणी॒नामिन्द्रँ॑ स्तोता॒ नव्यँ॑ गी॒र्भिः। नरँ॑ नृ॒षाहं॒ मंहि॑ष्ठम् ॥ १ ॥

यस्मि॑न्नु॒क्थानि॒ रण्य॑न्ति॒ विश्वा॑नि च श्र॒वस्या॑ । अ॒पाम॒वो न
स॑मु॒द्रे ॥ २ ॥
तं सु॑ष्टु॒त्या वि॑वासे ज्येष्ठ॒राजं॒ भरे॑ कृ॒त्नुम् । म॒हो वा॒जिनं᳚ स॒निभ्य॑ः
॥ ३ ॥ [५।७]

—:०:—

सूक्त ४५

ऋषिः—शुनःशेपो देवरातापरनामा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒यमु॑ ते॒ सम॑तसि क॒पोत॑ इव गर्भ॒धिम् । वच॒स्तच्चि॑न्न ओहसे ॥ १ ॥
स्तो॒त्रं॑ रा॑धानां॑ पते गिर्वा॑हो वीर॒ यस्य॑ ते । विभू॑तिरस्तु सू॒नृता॑ ॥२॥
ऊ॒र्ध्वस्ति॑ष्ठा न ऊ॒तयेऽस्मिन् वाजे॑ शतक्रतो । सम॒न्येषु॑ ब्रवावहै ॥ ३ ॥
[५।८]

—:०:—

सूक्त ४६

ऋषिः—इरिम्बिठिः देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

प्र॒णे॒तारं॒ वस्यो॒ अच्छा॒ कर्त्ता॑रं॒ ज्योति॑ः स॒मत्सु॑ । सा॒स॒हांसं᳚ यु॒धा-
मित्रा॑न् ॥ १ ॥
स न॒ः पप्रि॑ः पारयाति स्व॒स्ति ना॒वा पु॑रुहू॒तः । इन्द्रो॒ विश्वा॒ अति॒
द्विष॑ः ॥ २ ॥
स त्वं॑ न॑ इन्द्र॒ वाजे॑भिर्दश॒स्या च॑ गातु॒या च॑ । अच्छा॑ च नः सु॒म्नं
ने॑षि ॥ ३ ॥ [५।९]

—:०:—

सूक्त ४७

ऋषिः—१—३ सुकक्षः; ४—६, १०—१२ मधुच्छन्दाः; ७—९ इरिम्बिठिः; १३—२१ प्रस्कण्वः ॥ देवता—१—१२ इन्द्रः; १३—२१ सूर्यः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र २१ ।

तमिन्द्रं॑ वाजयामसि म॒हे वृ॒त्राय॒ हन्त॑वे। स वृषा॑ वृष॒भो भु॑वत् ॥ १ ॥
इन्द्र॒ः स दाम॑ने कृ॒त ओजि॑ष्ठ॒ः स मदे॑ हि॒तः। द्यु॒म्नी श्लो॒की स सो॒म्यः ॥ २ ॥
गि॒रा वज्रो॒ न संभृ॑त॒ः सब॑लो॒ अन॑पच्युतः। व॒वक्ष ऋ॒ष्वो अस्तृ॑तः ।३।
इन्द्र॒मिद् गाथिनो॑ बृ॒हदिन्द्र॑म॒र्केभि॑र॒र्किणः॑। इन्द्रं॒ वाणी॑रनूषत ॥ ४ ॥
इन्द्र॒ इद्धर्यो॒ः सचा॒ संमि॑श्ल॒ आ व॑चो॒युजा॑। इन्द्रो॑ व॒ज्री हि॑र॒ण्ययः॑ ।५।
इन्द्रो॑ दी॒र्घाय॒ चक्ष॑स॒ आ सूर्यं॑ रोहयद् दि॒वि। वि गोभि॒रद्रि॑मैरयत् ।६।
आ या॑हि सु॒षुमा हि त॒ इन्द्र॒ सोम॒ं पिबा॑ इ॒मम्। एदं ब॒र्हिः स॑दो॒ मम॑ ॥ ७ ॥
आ त्वा॑ ब्रह्म॒युजा हरी॒ वह॑तामिन्द्र के॒शिना॑। उप॒ब्रह्मा॑णि नः शृणु ।८।
ब्रह्माण॑स्त्वा व॒यं यु॒जा सो॑म॒पामि॑न्द्र सो॒मिन॑ः। सु॒ताव॑न्तो हवामहे ।९।
यु॒ञ्जन्ति॑ ब्र॒ध्नम॑रु॒षं चर॑न्त॒ं परि॑ त॒स्थुष॑ः। रोच॑न्ते रोच॒ना दि॒वि। १०।
यु॒ञ्जन्त्य॑स्य॒ काम्या॒ हरी॒ विप॑क्षसा॒ रथे॑। शोणा॑ धृ॒ष्णू नृ॒वाह॑सा ।११।
के॒तुं कृ॒ण्वन्न॑के॒तवे॒ पेशो॑ मर्या अपे॒शसे॑। समु॒षद्भि॑रजायथाः ॥ १२ ॥
उदु॒त्यं जा॒तवे॑दसं दे॒वं व॑हन्ति के॒तव॑ः। दृ॒शे विश्वा॑य॒ सूर्य॑म् ॥१३॥
अप॒ त्ये ता॒यवो॑ यथा॒ नक्ष॑त्रा यन्त्य॒क्तुभि॑ः। सूरा॑य वि॒श्वच॑क्षसे ।१४।
अदृ॑श्रन्नस्य के॒तवो॒ वि र॒श्मयो॒ जना॒ँ अनु॑। भ्राज॑न्तो अ॒ग्नयो॑ यथा ॥ १५ ॥

त॒रणि॑र्वि॒श्वद॑र्शतो ज्योति॒ष्कृद॑सि सूर्य । विश्व॒मा भा॑सि रोचन ॥१६॥
प्र॒त्यङ् दे॒वानां॒ विशः॑ प्र॒त्यङ्ङुदे॑षि॒ मानु॑षीः । प्र॒त्यङ् विश्वं॒ स्व१॑र्दृ॒शे ॥ १७ ॥
येना॑ पावक॒ चक्ष॑सा भुर॒ण्यन्तं॒ जनाँ॒ अनु॑ । त्वं व॑रुण॒ पश्य॑सि ॥ १८ ॥
वि द्यामे॑षि॒ रज॑स्पृ॒थ्वह॒र्मिमा॑नो अ॒क्तुभिः॑ । पश्य जन्मा॑नि सूर्य ।१९।
स॒प्त त्वा॑ ह॒रितो॒ रथे॒ वह॑न्ति देव सूर्य । शो॒चिष्के॑शं विच॒क्षणम् ॥२०॥
अयु॑क्त स॒प्त शु॒न्ध्युवः॒ सूरो॒ रथ॑स्य न॒प्त्य१॑ः । ताभि॑र्याति॒ स्वयु॑क्तिभिः ॥ २१ ॥ [५।१०]

—:०:—

सूक्त ४८

ऋषिः—१—३ खिलम् (?); ४—६ उपरिबभ्रवः सर्पराज्ञी वा ॥ देवता — १—३ सूर्यः (?); ४—६ गौः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ६ ।

अ॒भि त्वा॒ वर्च॑सा गिरः॒ सिञ्च॑न्ती॒राच॑र॒ण्यवः॑ । अ॒भि व॒त्सं न धे॒नवः॑ ।१।
ता अ॑र्षन्ति शु॒भ्रियः॒ पृञ्च॑न्ती॒र्वर्च॑सा प्रि॒यः । जा॒तं जा॒त्रीर्यथा॑ हृ॒दा ।२।
व॒ज्रापव॒साध्यः॑ की॒र्तिम्रि॒यमा॑ण॒माव॑हन् । मह्य॒मायु॑र्घृ॒तं पयः॑ ॥ ३ ॥
आयं गौः पृश्नि॑रक्रमी॒दस॑दन्मा॒तरं॑ पु॒रः । पि॒तरं॑ च प्र॒यन्त्स्व१॑ः ॥ ४ ॥
अ॒न्तश्च॑रति रोच॒ना अ॒स्य प्रा॒णाद॑पान॒तः । व्य॑ख्यन्महि॒षः स्व१॑ः ॥ ५ ॥
त्रिं॒शद् धामा॒ वि रा॑जति॒ वाक् प॑त॒ङ्गो अ॑शिश्रियत् । प्रति॒ वस्तो॒रह॒र्द्युभिः॑ ॥ ६ ॥ [५।११]

—:०:—

सूक्त ४९

ऋषिः—१—३ खिलम् (?); ४, ५ नोधाः; ६, ७ मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥

छन्दः —१ —३ गायत्री; ४ —७ बार्हतः प्रगाथः (समा —बृहती + विषमा —सतो-बृहती) ॥ मन्त्र ७।

यच्छ॒क्रा वाच॒मारु॑हन्न॒न्तरि॑क्षं सिषासथः । सं दे॒वा अ॑मद॒न् वृषा॑ ॥१॥

श॒क्रो वाच॒मधृ॑ष्टा॒योरु॑वाचो॒ अधृ॑ष्णुहि । मंहि॑ष्ठ॒ आ म॑द॒र्दिवि॑ ॥२॥

श॒क्रो वाच॒मधृ॑ष्णुहि॒ धाम॑धर्म॒न् वि रा॑जति । विम॑दन् ब॒र्हिरा॒सर॑न् ।३।

तं वो॑ द॒स्ममृ॑ती॒षहं॒ वसो॑र्मन्दा॒नमन्ध॑सः । अ॒भि व॒त्सं न स्वस॑रेषु
धे॒नव॒ इन्द्रं᳚ गी॒र्भिर्न॑वामहे ॥ ४ ॥

द्यु॒क्ष सु॒दानुं॒ तवि॑षीभि॒रावृ॑तं गि॒रिं न पु॑रु॒भोज॑सम् । क्षु॒मन्तं॒ वाजं᳚
श॒तिनं᳚ सह॒स्रिणं᳚ म॒क्षू गोम॑न्तमीमहे ॥ ५ ॥

तत् त्वा॑ यामि सु॒वीर्यं॒ तद् ब्रह्म॑ पू॒र्वचि॑त्तये । येना॒ यति॑भ्यो॒ भृग॑वे॒
धने॑ हि॒ते येन॒ प्रस्क॑ण्व॒मावि॑थ ॥ ६ ॥

येना॑ समु॒द्रमसृ॑जो म॒हीर॒पस्तदि॑न्द्र॒ वृष्णि॑ ते॒ शवः॑ । स॒द्यः सो अ॑स्य
महि॒मा न सं॒नशे॒ य क्षो॒णीर॑नुचक्र॒दे ॥ ७ ॥ [५।१२]

—:०:—

सूक्त ५०

ऋषिः— मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती + सतो-बृहती) ॥ मन्त्र २।

कन्न॒व्यो॑ अत॒सीनां॑ तु॒रो गृ॑णीत॒ मर्त्यः॑ । न॒ही न्व॑स्य महि॒मान॑मिन्द्रि॒यं
स्व॑र्गृ॒णन्त॑ आन॒शुः ॥ १ ॥

कदु॑ स्तु॒वन्त॑ ऋतयन्त दे॒वत॒ ऋषिः॒ को विप्र॑ ओहते । क॒दा हवं᳚
मघवन्निन्द्र सुन्व॒तः कदु॑ स्तुव॒त आ ग॑मः ॥ २ ॥ [५।१३]

—:०:—

सूक्त ५१

ऋषिः—१,—२ प्रस्कण्वः; ३, ४ पुष्टिगुः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (विषमा बृहती+समा सतोबृहती) ॥ मन्त्र ४ ।

अ॒भि प्र वः॑ सु॒राध॑स॒मिन्द्र॑मर्च॒ यथा॑ वि॒दे । यो ज॑रि॒तृभ्यो॑ म॒घवा॑
पुरू॒वसुः॑ स॒हस्रे॑णेव॒ शिक्ष॑ति ॥ १ ॥
श॒तानी॑केव॒ प्र जि॑गाति धृष्णु॒या हन्ति॑ वृ॒त्राणि॑ दा॒शुषे॑ । गि॒रेरि॑व प्र
रसा॑ अस्य पिन्विरे॒ दत्रा॑णि पुरु॒भोज॑सः ॥ २ ॥
प्र सु श्रु॒तं सु॒राध॑स॒मर्चा॑ श॒क्रम॒भिष्ट॑ये । यः सु॑न्व॒ते स्तु॑व॒ते काम्यं॒ वसु॑
स॒हस्रे॑णेव॒ मंह॑ते ॥ ३ ॥
श॒तानी॑का हे॒तयो॑ अस्य दु॒ष्टरा॒ इन्द्र॑स्य स॒मिषो॑ म॒हीः । गि॒रिर्न
भु॒ज्मा म॒घव॑त्सु पिन्वते॒ यदीं॑ सु॒ता अम॑न्दिषुः ॥ ४ ॥ [५।१४]

—:०:—

सूक्त ५२

ऋषिः—मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बृहती ॥ मन्त्र ३ ।

व॒यं घ॑ त्वा सु॒ताव॑न्त॒ आपो॒ न वृ॒क्तब॑र्हिषः । प॒वित्र॑स्य प्र॒स्रव॑णेषु
वृत्रह॒न् परि॑ स्तो॒तार॑ आसते ॥ १ ॥
स्वर॑न्ति त्वा सु॒ते नरो॒ वसो॑ निरे॒क उ॒क्थिनः॑ । क॒दा सु॒तं तृ॑षा॒ण
ओक॒ आ ग॑म॒ इन्द्र॑ स्व॒ब्दीव॒ वंस॑गः ॥ २ ॥
कण्वे॑भिर्धृष्ण॒वा धृ॒षद् वाजं॑ दर्षि सह॒स्रिण॑म् । पि॒शङ्ग॑रूपं मघवन्
विचर्षणे म॒क्षू गोम॑न्तमीमहे ॥ ३ ॥ [५।१५]

—:०:—

सूक्त ५३

ऋषिः—मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बृहती ॥ मन्त्र ३ ।

क ईं॑ वेद सु॒ते सचा॒ पिब॑न्तं॒ कद् वयो॑ दधे। अ॒यं यः पुरो॑ विभि॒नत्त्योज॑सा मन्दा॒नः शि॒प्र्य॑न्धसः ॥ १ ॥

दा॒ना मृ॒गो न वा॑र॒णः पु॑रु॒त्रा च॒रथं॑ दधे। नकि॑ष्ट्वा॒ नि य॑म॒दा सु॒ते ग॑मो म॒हांश्च॑र॒स्योज॑सा ॥ २ ॥

य उ॒ग्रः सन्ननि॑ष्टृत स्थि॒रो रणा॑य॒ संस्कृ॑तः। यदि॑ स्तो॒तुर्म॒घवा॑ शृ॒णव॒द्धवं॒ नेन्द्रो॑ योष॒त्या ग॑मत् ॥ ३ ॥ [५।१६]

—:०:—

सूक्त ५४

ऋषिः—रेभः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ अतिजगती; २, ३ उपरिष्टाद् बृहती ॥ मन्त्र ३ ।

विश्वा॒ः पृत॑ना अभि॒भूत॑रं॒ नरं॑ स॒जूस्त॑तक्षरिन्द्रं॑ जज॒नुश्च॑ रा॒जसे॑। क्रत्वा॒ वरि॑ष्ठं॒ वर॑ आ॒मुरि॑मु॒तोग्रमोजि॑ष्ठं त॒वसं॑ तर॒स्विन॑म् ॥ १ ॥

समीं॑ रे॒भासो॑ अस्वर॒न्निन्द्रं॒ सोम॑स्य पी॒तये॑। स्व॑र्पतिं॒ यदीं॑ वृ॒धे धृ॒तव्र॑तो॒ ह्योज॑सा॒ समू॒तिभिः॑ ॥ २ ॥

ने॒मिं न॑मन्ति॒ चक्ष॑सा मे॒षं विप्रा॑ अभि॒स्वरा॑। सु॒दी॒तयो॑ वो अ॒द्रुहोऽपि॒ कर्णे॑ तर॒स्विनः॒ समृक्व॑भिः ॥ ३ ॥ [५।१७]

—:०:—

सूक्त ५५

ऋषिः—रेभः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ अति जगति; २, ३ बृहती ॥ मन्त्र ३ ।

तमिन्द्रं॑ जोहवीमि म॒घवा॑नमु॒ग्रं स॒त्रा दधा॑न॒मप्र॑तिष्कुतं॒ शवां॑सि ।
मंहि॑ष्ठो गी॒र्भिरा च॑ य॒ज्ञियो॑ व॒वर्त॑द् रा॒ये नो॒ विश्वा॑ सु॒पथा॑ कृणोतु
व॒ज्री ॥ १ ॥
या इ॑न्द्र॒ भुज॒ आभ॑रः॒ स्व॑र्वाँ॒ असु॑रेभ्यः । स्तो॒तार॒मिन्म॑घवन्नस्य
वर्ध॑य॒ ये च॒ त्वे वृ॒क्तब॑र्हिषः ॥ २ ॥
यमि॑न्द्र दधि॒षे त्वमश्वं॒ गां भा॒गमव्य॑यम् । यज॑माने सुन्व॒ति दक्षि॑णावति॒
तस्मि॒न् तं धे॑हि॒ मा प॒णौ ॥ ३ ॥ [५।१८]

—:०:—

सूक्त ५६

ऋषिः—गोतमः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् (?; पङ्क्तिः) ॥ मन्त्र ६ ।

इन्द्रो॒ मदा॑य वावृधे॒ शव॑से वृत्र॒हा नृभिः॑ । तमिन्म॒हत्स्वा॒जिषू॒तेमर्भे॑
हवामहे॒ स वाजे॑षु॒ प्र नो॑ऽविषत् ॥ १ ॥
असि॒ हि वी॑र॒ सेन्यो॒ऽसि॒ भूरि॑ पराद॒दिः । असि॑ द॒भ्रस्य॑ चिद् वृ॒धो
यज॑मानाय शिक्षसि सुन्व॒ते भूरि॑ ते॒ वसु॑ ॥ २ ॥
यदु॒दीर॑त आ॒जयो॑ धृ॒ष्णवे॑ धीयते॒ धना॑ यु॒क्ष्वा म॑द॒च्युता॒ हरी॒ कं हनः॒
कं वसौ॑ दधो॒ऽस्माँ इ॑न्द्र॒ वसौ॑ दधः ॥ ३ ॥
मदे॑मदे॒ हि नो॑ द॒दिर्यू॒था गवा॑मृजु॒क्रतुः॑ । सं गृ॑भाय पु॒रू श॒तोभ॑याह॒स्त्या
वसु॑ शिशी॒हि रा॒य आ भ॑र ॥ ४ ॥
मा॒दय॑स्व सु॒ते सचा॒ शव॑से शूर॒ राध॑से । वि॒द्मा हि त्वा॑ पुरू॒वसु॒मुप॒
कामा॑न्त्ससृ॒ज्महे॒ऽथा॑ नो॒ऽवि॒ता भ॑व ॥ ५ ॥

ए॒ते त॑ इन्द्र ज॒न्तवो॒ विश्वं᳚ पुष्यन्ति॒ वार्य᳚म्। अ॒न्तर्हि᳚ ख्यो जना॑नाम॒र्यो वेदो॒ अदा॑शुषां॒ तेषां᳚ नो॒ वेद॒ आ भ॑र ॥ ६ ॥ [५।१६]

—:०:—

सूक्त ५७

ऋषिः—१—३ मधुच्छन्दाः; ४—७ विश्वामित्रः; ८—१० गृत्समदः; ११—१६ मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१—६, ८—१० गायत्री; ७ अनुष्टुप्; ११—१६ पथ्या पङ्क्तिः ॥ मन्त्र १६ ।

सु॒रू॒प॒कृ॒त्नुमू॒तये᳚ सु॒दुघा॑मिव गो॒दुहे᳚। जु॒हू॒मसि॒ द्यवि॑द्यवि ॥ १ ॥

उप॑ नः॒ सव॒ना ग॑हि॒ सोम॑स्य सोमपाः पिब। गो॒दा इद् रे॒वतो॒ मद॑ः ॥ २ ॥

अथा॑ ते॒ अन्त॑मानां वि॒द्याम॑ सुम॒तीना॑म्। मा नो॒ अति॑ ख्य॒ आ ग॑हि ॥ ३ ॥

शु॒ष्मिन्त॑मं न ऊ॒तये॑ द्यु॒म्निनं᳚ पाहि॒ जागृ॑विम्। इन्द्र॒ सोमं᳚ शतक्रतो ॥ ४ ॥

इ॒न्द्रि॒याणि॑ शतक्र॒तो या ते॒ जने᳚षु प॒ञ्चसु॑। इन्द्र॒ तानि॑ त॒ आ वृ॑णे ॥ ५ ॥

अग॑न्निन्द्र॒ श्रवो᳚ बृ॒हद् द्यु॒म्नं द॑धिष्व दु॒ष्टर॑म्। उत् ते॒ शुष्मं᳚ तिरामसि ॥ ६ ॥

अ॒र्वा॒वतो᳚ न॒ आ ग॒ह्यथो᳚ शक्र परा॒वत॑ः। उ॒ लो॒को यस्ते॑ अद्रिव॒ इन्द्रे॒ह तत॒ आ ग॑हि ॥ ७ ॥

इन्द्रो᳚ अ॒ङ्ग म॒हद् भ॒यम॒भी षदप॑ चुच्यवत्। स हि स्थि॒रो विच॑र्षणिः ८

इन्द्र॑श्च मृ॒लया॑ति नो॒ न नः॑ प॒श्चाद॒घं न॑शत् । भ॒द्रं भ॑वाति नः पु॒रः ।९।
इन्द्र॒ आशा॑भ्य॒स्परि॒ सर्वा॑भ्यो॒ अभ॑यं करत् । जेता॒ शत्रू॒न् विच॑र्षणिः ॥ १० ॥
क ईं॑ वेद सु॒ते सचा॒ पिब॑न्तं॒ कद् वयो॑ दधे । अ॒यं यः पुरो॑ विभि॒नत्त्योज॑सा मन्दा॒नः शि॒प्र्यन्ध॑सः ॥ ११ ॥
दा॒ना मृ॒गो न वा॑र॒णः पु॑रु॒त्रा च॒रथँ॑ दधे । नकि॑ष्ट्वा॒ नि य॑म॒दा सु॒ते ग॑मो म॒हांश्च॑र॒स्योज॑सा ॥ १२ ॥
य उ॒ग्रः सन्ननि॑ष्टृत स्थि॒रो रणा॑य॒ संस्कृ॑तः । यदि॑ स्तो॒तुर्म॒घवा॑ शृ॒णव॒द्धवं॒ नेन्द्रो॑ योष॒त्या ग॑मत् ॥ १३ ॥
व॒यं घ॑ त्वा सु॒ताव॑न्त॒ आपो॒ न वृ॒क्तब॑र्हिषः । प॒वित्र॑स्य प्र॒स्रव॑णेषु वृत्रह॒न् परि॑ स्तो॒तार॑ आसते ॥ १४ ॥
स्वर॑न्ति त्वा सु॒ते नरो॒ वसो॑ निरे॒क उ॒क्थिन॑ः । क॒दा सु॒तं तृ॑षा॒ण ओक॒ आ ग॑म॒ इन्द्र॑ स्व॒ब्दीव॒ वंस॑गः ॥ १५ ॥
कण्वे॑भिर्धृष्ण॒वा धृ॒षद् वाजँ॑ दर्षि सह॒स्रिण॑म् । पि॒शङ्ग॑रूपं मघवन् विचर्षणे म॒क्षू गोम॑न्तमीमहे ॥ १६ [५।२०]

—:०:—

सूक्त ५८

ऋषिः—१, २ नृमेधः; ३, ४ जमदग्निः ॥ देवता—१, २ इन्द्रः; ३, ४ सूर्यः ॥
छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (विषमा बृहती+समा सतोबृहती) ॥ मन्त्र ४ ।

आय॑न्त इ॒व सूर्यं॒ विश्वेदिन्द्र॑स्य भक्षत । वसू॑नि जा॒ते जन॑मान॒ ओज॑सा॒ प्रति॑ भा॒गं न दीधिम ॥ १ ॥

अन॑र्शरातिं वसु॒दामुप॑ स्तुहि भ॒द्रा इन्द्र॑स्य रा॒तय॑ः । सो अ॑स्य॒ कामं॑
विध॒तो न रोषति॒ मनो॑ दा॒नाय॑ चो॒दय॑न् ॥ २ ॥
बण्म॒हाँ अ॑सि सूर्य॒ बडा॑दित्य म॒हाँ अ॑सि । म॒हस्ते॑ स॒तो म॑हि॒मा
प॑नस्यते॒ऽद्धा दे॑व म॒हाँ अ॑सि ॥ ३ ॥
बट् सू॑र्य॒ श्रव॑सा म॒हाँ अ॑सि स॒त्रा दे॑व म॒हाँ अ॑सि । म॒ह्ना दे॒वाना॑म-
सु॒र्य॑ः पु॒रोहि॑तो वि॒भु ज्योति॒रदा॑भ्यम् ॥ ४ ॥ [५।२१]

सूक्त ५९

ऋषिः—१, २ मेध्यातिथिः; ३, ४ वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः ॥ (विषमा बृहती + समा सतोबृहती) ॥ मन्त्र ४ ।

उदु॒ त्ये मधु॑मत्तमा॒ गिर स्तोमा॑स ईरते । स॒त्रा॒जितो॑ धन॒सा अक्षि॑तोतयो
वाज॒यन्तो॒ रथा॑ इव ॥ १ ॥
कण्वा॑ इव॒ भृग॑व॒ः सूर्या॑ इव॒ विश्वा॒मिद्धी॒तमा॑नशुः । इन्द्रं॒ स्तोमे॑भि-
र्म॒हय॑न्त आ॒यव॑ः प्रि॒यमे॑धासो अस्वरन् ॥ २ ॥
उदिन्न्व॑स्य रिच्य॒ते॑ऽशो॒ धनं॒ न जि॒ग्युष॑ः । य इन्द्रो॒ हरि॑वा॒न्न द॑भन्ति॒
तं रि॒पो दक्षं॑ दधाति सो॒मिनि॑ ॥ ३ ॥
म॒न्त्रमख॑र्वं॒ सुधि॑तं सु॒पेश॑सं॒ दधा॑त य॒ज्ञिये॒ष्वा । पू॒र्वीश्च॒न प्रसि॑तयस्तरन्ति
तं य इन्द्रे॒ कर्म॑णा॒ भुव॑त् ॥ ४ ॥ [५।२२]

सूक्त ६०

ऋषिः—१—३ सुतकक्षः सुकक्षो वा; ४—६ मधुच्छन्दाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ६ ।

ए॒वा ह्यसि॑ वीर॒युरे॒वा शूर॑ उ॒त स्थि॒रः । ए॒वा ते॒ राध्यं॒ मनः॑ ॥ १ ॥
ए॒वा रा॒तिस्तु॑वीमघ॒ विश्वे॑भिर्धायि धा॒तृभिः॑ । अधा॑ चिदिन्द्र मे॒ सचा॑ ॥ २ ॥
मो षु ब्र॒ह्मेव॑ तन्द्र॒युर्भुवो॑ वाजानां॑ पते । मत्स्वा॑ सु॒तस्य॒ गोम॑तः ॥३॥
ए॒वा ह्य॑स्य सू॒नृता॑ विर॒प्शी गोम॑ती म॒ही । प॒क्वा शाखा॒ न दा॒शुषे॑ ॥४॥
ए॒वा हि ते॒ विभू॑तय ऊ॒तय॑ इन्द्र॒ माव॑ते । स॒द्यश्चि॒त् सन्ति दा॒शुषे॑ ।५।
ए॒वा ह्य॑स्य॒ काम्या॒ स्तोम॑ उ॒क्थं च॒ शंस्या॑ । इन्द्रा॑य॒ सोम॑पीतये ॥६॥
[५।२३]

—:o:—

सूक्त ६१

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ मन्त्र ६ ।

तं ते॒ मदं॑ गृणीमसि॒ वृष॑णं पृ॒त्सु सा॑स॒हिम् । उ॒ लो॒ककृ॒त्नुम॑द्रिवो हरि॒श्रिय॑म् ॥ १ ॥
येन॒ ज्योतीं॑ष्या॒यवे॒ मन॑वे च वि॒वेदि॑थ । म॒न्दा॒नो॑ अ॒स्य ब॒र्हिषो॒ वि रा॑जसि ॥ २ ॥
तद॒द्या चि॑त्त उ॒क्थिनोऽनु॑ ष्टु॒वन्ति पू॒र्वथा॑ । वृष॑पत्नीर॒पो ज॑या दि॒वेदि॑वे ॥ ३ ॥
त॒म्व॒भि प्र गा॑यत पुरुहू॒तं पु॑रुष्टु॒तम् । इन्द्रं॑ गी॒र्भिस्त॑वि॒षमा वि॑वासत् ४
यस्य॑ द्वि॒बर्ह॑सो बृ॒हत् सहो॑ दा॒धार॒ रोद॑सी । गि॒रीँरज्राँ॑ अ॒पः स्व॑र्वृषत्व॒ना ॥ ५ ॥

स रा॑जसि पुरुष्टुत॒ँ एको॑ वृ॒त्राणि॑ जिघ्नसे । इन्द्र॒ जैत्रा॑ श्रव॒स्या॑ च॒
यन्त॑वे ॥ ६ ॥ [५।२४]

—:०:—

सूक्त ६२

ऋषिः—१—४ सोभरिः; ५—७ नृमेधः; ८—१० गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१—४ काकुभः प्रगाथः (विषमा ककुप्+समा सतोबृहती); ५—१७ उष्णिक् ॥ मन्त्र १० ।

व॒यमु॒ त्वाम॑पूर्व्य स्थू॒रं न कच्चि॒द् भर॑न्तोऽव॒स्यवः॑ । वाजे॑ चि॒त्रं
ह॑वामहे ॥ १ ॥

उप॑ त्वा॒ कर्म॑न्नू॒तये॒ स नो॒ युवो॒ग्रश्च॑क्राम॒ यो धृ॒षत् । त्वामिद्ध्य॑वि॒तारं॑
ववृ॒महे॒ सखा॑य इन्द्र सान॒सिम् ॥ २ ॥

यो न॑ इ॒दमि॑दं पु॒रा प्र वस्य॑ आनि॒नाय॒ तमु॑ व स्तुषे । सखा॑य॒ इन्द्र॑-
मू॒तये॑ ॥ ३ ॥

हर्य॑श्वं॒ सत्प॑तिं चर्षणी॒सहं॒ स हि ष्मा॒ यो अम॑न्दत । आ तु नः॒ स
वं॑यति॒ गव्य॒मश्व्यँ॑ स्तो॒तृभ्यो॑ म॒घवा॑ श॒तम् ॥ ४ ॥

इन्द्रा॑य॒ साम॑ गायत॒ विप्रा॑य बृह॒ते बृ॒हत् । ध॒र्म॒कृते॑ विप॒श्चिते॑
पन॒स्यवे॑ ॥ ५ ॥

त्वमि॑न्द्राभि॒भूर॑सि॒ त्वं सूर्य॑मरोचयः । वि॒श्वक॑र्मा वि॒श्वदे॑वो म॒हाँ
अ॑सि ॥ ६ ॥

वि॒भ्राजं॒ ज्योति॑षा॒ स्व॒॑रग॑च्छो रोच॒नं दि॒वः । दे॒वास्त॑ इन्द्र स॒ख्याय॑
येमिरे ॥ ७ ॥

तम्व॒भि प्र गा॑यत पुरुहू॒तं पु॑रुष्टु॒तम् इन्द्रं॑ गी॒र्भिस्त॑वि॒षमा वि॑वासत ।८।
यस्य॑ द्वि॒बर्ह॑सो बृ॒हत् सहो॑ दा॒धार॒ रोद॑सी । गि॒रीँर॒ज्राँ अ॒पः स्व॑र्वृषत्व॒ना ॥ ९ ॥
स रा॑जसि पुरुष्टुतँ॒ एको॑ वृ॒त्राणि॑ जिघ्नसे । इन्द्र॒ जैत्रा॑ श्रव॒स्या॑ च॒
यन्त॑वे ॥ १० ॥ [५।२५]

—:०:—

सूक्त ६३

ऋषिः—१—२, ३ (पूर्वार्धस्य) भुवनः साधनो वा; ३ (उत्तरार्धस्य) भरद्वाजः; ४—६ गोतमः; ७—९ पर्वतः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१—३ त्रिष्टुप्; ४—९ उष्णिक् ॥

इ॒मा नु कं॒ भुव॑ना सीषधा॒मेन्द्र॑श्च॒ विश्वे॑ च दे॒वाः । य॒ज्ञं च॑ नस्त॒न्वं॑
च प्र॒जां चा॑दि॒त्यैरिन्द्रः॑ स॒ह ची॑क्लृपाति ॥ १ ॥
आ॒दि॒त्यैरिन्द्रः॒ सग॑णो म॒रुद्भि॑र॒स्माकं॑ भूत्ववि॒ता त॒नूना॑म् । ह॒त्वाय॑
दे॒वा असु॑रा॒न् यदाय॑न् दे॒वा दे॑व॒त्वम॑भि॒रक्ष॑माणाः ॥ २ ॥
प्र॒त्यञ्च॑म॒र्कम॑नयं॒ छची॑भि॒रादित् स्व॒धामि॑षि॒रां पर्य॑पश्यन् । अ॒या
वाजं॑ दे॒वहि॑तं सनेम॒ मदे॑म श॒तहि॑माः सु॒वीराः॑ ॥ ३ ॥
य एक॒ इद् वि॒दय॑ते॒ वसु॒ मर्ता॑य दा॒शुषे॑ । ईशा॑नो॒ अप्र॑तिष्कुत॒ इन्द्रो॑
अ॒ङ्ग ॥ ४ ॥
क॒दा मर्त॑मरा॒धसं॑ प॒दा क्षुम्प॑मिव स्फुरत् । क॒दा नः॑ शुश्रव॒द् गिर॒
इन्द्रो॑ अ॒ङ्ग ॥ ५ ॥
यश्चि॒द्धि त्वा॑ ब॒हुभ्य॒ आ सु॒तावाँ॑ आ॒विवा॑सति । उ॒ग्रं तत् प॑त्यते॒ शव॒
इन्द्रो॑ अ॒ङ्ग ॥ ६ ॥

य इ॑न्द्र सोम॒पात॑मो॒ मद॑ः शवि॒ष्ठ चेत॑ति । येना॒ हंसि॒ न्य॒॑त्रिणं॒ तमी॑महे ॥ ७ ॥

येना॒ दश॑ग्व॒मध्रि॑गुं वे॒पय॑न्तं॒ स्व॑र्णरम् । येना॑ समु॒द्रमावि॑था॒ तमी॑महे ॥ ८ ॥

येन॒ सिन्धुं॑ म॒हीर॒पो रथाँ॑ इव प्र॒चोदय॑ः । पन्था॑मृ॒तस्य॒ यात॑वे॒ तमी॑महे ॥ ९ ॥ [५।२६]

—:०:—

सूक्त ६४

ऋषि—१—३ नृमेधः; ४—६ विश्वमनाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ मन्त्र ६ ।

एन्द्र॑ नो गधि प्रि॒यः स॑त्रा॒जिद॑गो॑ह्यः । गि॒रिर्न वि॒श्वत॑स्पृ॒थुः पति॑र्दि॒वः ॥ १ ॥

अ॒भि हि स॑त्य सोमपा उ॒भे ब॒भूथ॒ रोद॑सी । इन्द्रासि॑ सुन्व॒तो वृ॒धः पति॑र्दि॒वः ॥ २ ॥

त्वं हि शश्व॑तोना॒मिन्द्र॑ दु॒र्ता पु॒राम॑सि । ह॒न्ता दस्यो॒र्मनो॑र्वृ॒धः पति॑र्दि॒वः ॥ ३ ॥

एदु॒ मध्वो॑ म॒दिन्त॑रं सि॒ञ्च वा॑ध्वर्यो॒ अन्ध॑सः । ए॒वा हि वी॒र स्तव॑ते स॒दावृ॑धः ॥ ४ ॥

इन्द्र॑ स्थातर्हरीणां॒ नकि॑ष्टे पू॒र्व्यस्तु॑तिम् । उदा॑नंश॒ शव॑सा॒ न भ॒न्दना॑ ॥ ५ ॥

तं वो॒ वाजा॑नां॒ पति॒महू॑महि श्रव॒स्यव॑ः । अप्रा॑युभिर्य॒ज्ञेभि॑र्वावृ॒धेन्य॑म्
॥ ६ ॥ [५।२७]

—:०:—

सूक्त ६५

ऋषिः—१—३ विश्वमनाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

एतो॒ न्विन्द्र॒ं स्तवा॑म॒ सखा॑य॒ स्तोम्य॒ं नर॑म् । कृ॒ष्टीर्यो विश्वा॑ अ॒भ्यस्त्येक॒
इत् ॥ १ ॥
अगो॑रुधाय ग॒विषे॑ द्यु॒क्षाय॒ दस्म्य॒ं वच॑ः । घृ॒तात् स्वादी॑यो॒ मधु॑नश्च
वोचत ॥ २ ॥
यस्यामि॑तानि वी॒र्या॒३ न राध॒ः पर्ये॑तवे । ज्योति॒र्न विश्व॑म॒भ्यस्ति॒
दक्षि॑णा ॥ ३ ॥ [५।२८]

—:०:—

सूक्त ६६

ऋषिः—१—३ विश्वमनाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् मन्त्र ३ ।

स्तु॒हीन्द्र॑ं व्यश्व॒वदनू॑र्मिं वा॒जिन॒ं यम॑म् । अ॒र्यो गयं मंह॑मान॒ं वि
दा॒शुषे॑ ॥ १ ॥
ए॒वा नू॒नमुप॑ स्तुहि॒ वैय॑श्व दश॒मं नव॑म् । सुवि॑द्वांसं च॒र्कृत्य॑ं च॒रणी॑
नाम् ॥ २ ॥
वेत्था॒ हि निर्ऋ॑तीना॒ं वज्र॑हस्त परि॒वृज॑म् । अह॑रहः शु॒न्ध्युः प॑रि
पदा॑मिव ॥ ३ ॥ [५।२९]

—:०:—

सूक्त ६७

ऋषिः—१—३ परुच्छेपः; ४—७ गृत्समदः ॥ देवता—१, ६ इन्द्रः; २, ४ मरुतः; ३, ५ अग्निः; ७ द्रविणोदाः ॥ छन्दः—१—३ अत्यष्टिः; ४–७ जगती ॥ मन्त्र ७ ।

वनोति हि सुन्वन् क्षयं परीणसः सुन्वानो हि ष्मा यजत्यव द्विषो देवानामव द्विषः । सुन्वान इत् सिषासति सहस्रा वाज्यवृतः । सुन्वानायेन्द्रो ददात्याभुवं रयिं ददात्याभुवम् ॥ १ ॥

मो षु वो अस्मदभि तानि पौंस्या सना भूवन् द्युम्नानि मोत जारिषुरस्मत् पुरोत जारिषुः । यद् वश्चित्रं युगेयुगे नव्यं घोषादमर्त्यम् । अस्मासु तन्मरुतो यच्च दुष्टरं दिधृता यच्च दुष्टरम् ॥ २ ॥

अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसुं सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न जातवेदसम् । य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा । घृतस्य विभ्राष्टिमनु वष्टि शोचिषाजुह्वानस्य सर्पिषः ॥ ३ ॥

यज्ञैः संमिश्लाः पृषतीभिर्ऋष्टिभिर्यामँ छुभ्रासो अञ्जिषु प्रिया उत । आसद्या बर्हिर्भरतस्य सूनवः पोत्रादा सोमं पिबता दिवो नरः ॥ ४ ॥

आ वक्षि देवाँ इह विप्र यक्षि चोशन् होतर्नि षदा योनिषु त्रिषु । प्रति वीहि प्रस्थितं सोम्यं मधु पिबाग्नीध्रात् तव भागस्य तृप्णुहि ॥ ५ ॥

एष स्य ते तन्वो नृम्णवर्धनः सह ओजः प्रदिवि बाह्वोर्हितः । तुभ्यं सुतो मघवन् तुभ्यमाभृतस्त्वमस्य ब्राह्मणादा तृपत् पिब ॥ ६ ॥

यमु पूर्वमहुवे तमिदं हुवे सेदु हव्यो ददिर्यो नाम पत्यते । अध्वर्युभिः प्रस्थितं सोम्यं मधु पोत्रात् सोमं द्रविणोदः पिब ऋतुभिः ॥ ७ ॥

[६।१]

—:०:—

सूक्त ६८

ऋषिः—मधुच्छन्दाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र १२ ।

सु॒रू॒प॒कृ॒त्नुमू॒तये॑ सु॒दुघा॑मिव गो॒दुहे॑। जु॒हू॒मसि॒ द्यवि॑द्यवि ॥ १ ॥

उप॑ः न॒ः सव॒ना ग॑हि॒ सोम॑स्य सोमपाः पिब । गो॒दा इद् रे॒वतो॒ मद॑ः ॥ २ ॥

अथा॑ ते॒ अन्त॑मानां वि॒द्याम॑ सुम॒तीनाम् । मा नो॒ अति॑ ख्य॒ आ ग॑हि ॥ ३ ॥

परे॑हि॒ विग्र॒मस्तृ॑त॒मिन्द्रं॑ पृच्छा विप॒श्चित॑म् । यस्ते॒ सखि॑भ्य॒ आ वर॑म् ॥ ४ ॥

उ॒त ब्रु॑वन्तु नो॒ निदो॒ निर॒न्यत॑श्चिदारत । दधा॑ना॒ इन्द्र॒ इद् दुव॑ः ॥५॥

उ॒त न॑ः सु॒भगाँ॑ अ॒रिर्वो॒चेयु॑र्दस्म कृ॒ष्टय॑ः । स्यामेदिन्द्र॑स्य॒ शर्म॑णि ॥६॥

एमा॒शुमा॒शवे॑ भर यज्ञ॒श्रियं॑ नृ॒माद॑नम् । प॒तयन्म॑न्द॒यत्स॑खम् ॥७॥

अ॒स्य पी॒त्वा श॑तक्रतो घ॒नो वृ॒त्राणा॑मभवः । प्रावो॒ वाजे॑षु वा॒जिन॑म् ।८।

तं त्वा॒ वाजे॑षु वा॒जिनं॑ वा॒जया॑मः शतक्रतो । धना॑नामिन्द्र सा॒तये॑ ।९।

यो रा॒यो॒३वनि॑र्म॒हान्त्सु॑पा॒रः सु॑न्व॒तः सखा॑ । तस्मा॒ इन्द्रा॑य गायत ।१०।

आ त्वेता॒ नि षी॑द॒तेन्द्र॑म॒भि प्र गा॑यत । सखा॑य॒ स्तोम॑वाहसः ॥११॥

पु॒रू॒तमं॑ पु॒रू॒णामीशा॑नं॒ वार्या॑णाम् । इन्द्रं॒ सोमे॒ सचा॑ सु॒ते ।१२। [६।२]

—:०:—

सूक्त ६९

ऋषिः—मधुच्छन्दाः ॥ देवता—१—११ इन्द्रः; १२ मरुतः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र १२ ।

स घा॑ नो॒ योग॒ आ भु॑व॒त् स रा॒ये स पुरं॑ध्याम् । गम॒द् वाजे॑भि॒रा स न॑ः ॥ १ ॥

यस्य॑ सं॒स्थे न॒ वृ॒ण्वते॒ हरी॑ समत्सु॒ शत्र॑वः । तस्मा॒ इन्द्रा॑य गायत ।२।
सु॒त॒पाव्ने॑ सु॒ता इ॒मे शुच॑यो यन्ति वी॒तये॑ । सोमा॑सो॒ दध्या॑शिरः ॥३॥
त्वं सु॒तस्य॑ पी॒तये॑ स॒द्यो वृ॒द्धो अ॑जायथाः । इन्द्र॒ ज्यैष्ठ्या॑य सुक्रतो ।४।
आ त्वा॑ विशन्त्वा॒शवः॒ सोमा॑स इन्द्र गिर्वणः । शं ते॑ सन्तु॒ प्रचे॑तसे ।५।
त्वां स्तोमा॑ अवीवृध॒न् त्वामु॒क्था श॑तक्रतो । त्वां व॑र्धन्तु नो॒ गिरः॑ ।६।
अक्षि॑तोतिः सनेदि॒मं वाज॒मिन्द्रः॑ सह॒स्रिण॑म् । यस्मि॒न् विश्वा॑नि॒
पौंस्या॑ ॥ ७ ॥
मा नो॒ मर्ता॑ अ॒भि द्रु॑हन् त॒नूना॑मिन्द्र गिर्वणः । ईशा॑नो यवया
व॒धम् ॥ ८ ॥
यु॒ञ्जन्ति॑ ब्र॒ध्नम॑रु॒षं चर॑न्तं॒ परि॑ त॒स्थुषः॑ । रोच॑न्ते रोच॒ना दि॒वि ॥९॥
यु॒ञ्जन्त्य॑स्य॒ काम्या॒ हरी॒ विप॑क्षसा॒ रथे॑ । शोणा॑ धृ॒ष्णू नृ॒वाह॑सा १०
के॒तुं कृ॒ण्वन्न॑के॒तवे॒ पेशो॑ मर्या अपे॒शसे॑ । समु॒षद्भि॑रजायथाः ॥११॥
आद॒ह स्व॒धामनु॒ पुन॑र्गर्भ॒त्वमे॑रि॒रे । दधा॑ना॒ नाम॑ य॒ज्ञिय॑म् ॥ १२ ॥
[६।३]

—:०:—

सूक्त ७०

ऋषिः—मधुच्छन्दाः ॥ देवता—१, २ इन्द्रमरुतः; ३—५ मरुतः; ६—२० इन्द्रमरुतः (?, इन्द्रः) ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र २० ।

वी॒लु चि॑दारु॒जत्नुभि॒र्गुहा॑ चिदिन्द्र॒ वह्नि॑भिः । अवि॑न्द उ॒स्रिया॒
अनु॑ ॥ १ ॥

दे॒व॒यन्तो॒ यथा॑ म॒तिमच्छा॑ वि॒दद् व॑सु॒ गिरः॑ । म॒हाम॑नूषत श्रु॒तम् ।२।
इन्द्रे॑ण॒ सं हि दृक्ष॑से संजग्मा॒नो अबि॑भ्युषा । म॒न्दू स॑मा॒नव॑र्चसा ।३।
अ॒न॒व॒द्यैर॒भिद्यु॑भिर्म॒खः सह॑स्वदर्च॑ति । ग॒णैरिन्द्र॑स्य॒ काम्यैः॑ ॥ ४ ॥
अतः॑ परिज्म॒न्ना ग॑हि दि॒वो वा॑ रोच॒नादधि॑ । सम॑स्मिन्नृञ्जते॒ गिरः॑ ५
इ॒तो॑ वा॑ सा॒तिमीम॑हे दि॒वो वा॒ पार्थि॑वा॒दधि॑ । इन्द्रँ॑ म॒हो वा रज॑सः ६
इन्द्र॒मिद् गा॒थिनो॑ बृ॒हदिन्द्र॑म॒र्केभि॑र॒र्किणः॑ । इन्द्रं॒ वाणी॑रनूषत ॥ ७ ॥
इन्द्र॒ इद्धर्योः॒ सचा॒ संमि॑श्ल॒ आ व॑चो॒युजा॑ । इन्द्रो॑ व॒ज्री हि॑र॒ण्ययः॑ ।८।
इन्द्रो॑ दी॒र्घाय॒ चक्ष॑स॒ आ सूर्यँ॑ रोहयद् दि॒वि । वि गोभि॒रद्रि॑मैरयत् ९
इन्द्र॒ वाजे॑षु नोऽव स॒हस्र॑प्रधनेषु च । उ॒ग्र उ॒ग्राभि॑रू॒तिभिः॑ ॥ १० ॥
इन्द्रँ॑ व॒यँ म॑हाध॒न इन्द्र॒मर्भँ॑ हवामहे । युजँ॑ वृ॒त्रेषु॑ व॒ज्रिण॑म् ॥ ११ ॥
स नो॑ वृषन्न॒मुं च॒रुं स॑त्रादाव॒न्नपा॑ वृधि । अ॒स्मभ्य॒मप्र॑तिष्कुतः ॥१२॥
तु॒ञ्जेतु॑ञ्जे॒ य उत्त॑रे॒ स्तोमा॒ इन्द्र॑स्य व॒ज्रिणः॑ । न वि॑न्धे अस्य
सु॒ष्टु॒तिम् ॥ १३ ॥
वृषा॑ यू॒थेव॒ वंस॑गः कृ॒ष्टीरि॑य॒र्त्योज॑सा । ईशा॑नो॒ अप्र॑तिष्कुतः ॥ १४ ॥
य एकँ॑श्चर्षणी॒नां वसू॑नामिर॒ज्यति॑ । इन्द्रः॒ पञ्च॑ क्षिती॒नाम् ॥ १५ ॥
इन्द्रँ॑ वो वि॒श्वत॒स्परि॒ हवा॑मह॒ जने॑भ्यः । अ॒स्माक॑मस्तु॒ केव॑लः ॥१६॥
एन्द्र॑ सान॒सिं र॒यिं स॒जित्वा॑नं सद॒ासह॑म् । वर्षि॑ष्ठमू॒तये॑ भर ॥ १७ ॥
नि येन॑ मुष्टिह॒त्यया॒ नि वृ॒त्रा रु॒णधा॑महै । त्वोता॑सो॒ न्यर्व॑ता ॥१८॥
इन्द्र॒ त्वोता॑स॒ आ व॒यं वज्रँ॑ घ॒ना द॑दीमहि । जये॑म॒ सं यु॒धि स्पृधः॑ १९
व॒यं शूरे॑भि॒रस्तृ॑भि॒रिन्द्र॒ त्वया॑ यु॒जा व॒यम् । सा॒स॒ह्याम॑ पृतन्य॒तः ॥२०॥
[६।४]

—:०:—

सूक्त ७१

ऋषिः—मधुच्छन्दाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र १६ ।

महाँ इन्द्रः परश्च नु महित्वमस्तु वज्रिणे । द्यौर्न प्रथिना शवः ॥१॥
समोहे वा य आशत नरस्तोकस्य सनितौ । विप्रासो वा धियायवः २
यः कुक्षिः सोमपातमः समुद्र इव पिन्वते । उर्वीरापो न काकुदः ।३।
एवा ह्यस्य सूनृता विरप्शी गोमती मही । पक्वा शाखा न दाशुषे ।४।
एवा हि ते विभूतय ऊतय इन्द्र मावते । सद्यश्चित् सन्ति दाशुषे ।५।
एवा ह्यस्य काम्या स्तोम उक्थं च शंस्या । इन्द्राय सोमपीतये ॥६॥
इन्द्रेहि मत्स्यन्धसो विश्वेभिः सोमपर्वभिः । महाँ अभिष्टिरोजसा ।७।
एमेनं सृजता सुते मन्दिमिन्द्राय मन्दिने । चक्रिं विश्वानि चक्रये ८
मत्स्वा सुशिप्र मन्दिभि स्तोमेभिर्विश्वचर्षणे । सचैषु सवनेष्वा ॥ ९ ॥
असृग्रमिन्द्र ते गिरः प्रतित्वामुदहासत । अजोषा वृषभं पतिम् ॥१०॥
सं चोदय चित्रमर्वाग् राध इन्द्र वरेण्यम् । असदित् ते विभु
प्रभु ॥ ११ ॥
अस्मान्त्सु तत्र चोदयेन्द्र राये रभस्वतः । तुविद्युम्न यशस्वतः ।१२।
सं गोमदिन्द्र वाजवदस्मे पृथु श्रवो बृहत् । विश्वायुर्धेह्यक्षितम् ॥१३॥
अस्मे धेहि श्रवो बृहद् द्युम्नं सहस्रसातमम् । इन्द्र ता रथिनीरिषः ।१४।
वसोरिन्द्रं वसुपतिं गीर्भिर्गृणन्त ऋग्मियम् । होम गन्तारमूतये ।१५।
सुतेसुते न्योकसे बृहद् बृहत एदरिः । इन्द्राय शूषमर्चति १६ [६।५]

—:०:—

सूक्त ७२

ऋषिः—परुच्छेपः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अत्यष्टिः ॥ मंत्र ३ ।

विश्वे॑षु॒ हि त्वा॒ सव॑नेषु तु॒ञ्जते॑ समा॒नमेकं॒ वृष॑मण्यव॒ः पृथ॒क् स्व॑ः
सनि॒ष्यव॒ः पृथ॑क् । तं त्वा॒ नावं॒ न प॒र्षणि॑ शू॒षस्य॑ धु॒रि धीमहि । इन्द्रं॒
न य॒ज्ञैश्चि॒तय॑न्त आ॒यव॒ स्तोमे॑भि॒रिन्द्र॑मा॒यव॑ः ॥ १ ॥
वि त्वा॑ ततस्रे मिथु॒ना अ॑व॒स्यवो॑ व्र॒जस्य॑ सा॒ता गव्य॑स्य नि॒ःसृज॒ः
सक्ष॑न्त इन्द्र नि॒ःसृज॑ः । यद् ग॒व्यन्ता॒ द्वा जना॒ स्व॑१॒र्यन्ता॑ स॒मूह॑सि ।
आ॒विष्करि॑क्र॒द् वृष॑णं सचा॒भुवं॒ वज्र॑मिन्द्र सचा॒भुव॑म् ॥ २ ॥
उ॒तो नो॑ अ॒स्या उ॒षसो॑ जु॒षेत॒ ह्य॑१॒र्कस्य॑ बोधि ह॒विषो॒ हवी॑मभि॒ः
स्व॑र्षाता॒ हवी॑मभिः । यदि॑न्द्र॒ हन्त॑वे॒ मृधो॒ वृषा॑ वज्रिं॒ चिके॑तसि ।
आ मे॑ अ॒स्य वे॒धसो॒ नवी॑यसो॒ मन्म॑ श्रु॒धि॒ नवी॑यसः ॥ ३ ॥ [७।१]

—:०:—

सूक्त ७३

ऋषिः—१—३ वसिष्ठः; ४—६ वसुक्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१—३ विराडनुष्टुप्; ४, ५ जगती; ६ अभिसारिणी त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

तुभ्येदि॒मा सव॑ना शूर॒ विश्वा॒ तुभ्यं॒ ब्रह्मा॑णि॒ वर्ध॑ना कृणोमि । त्वं
नृभि॒र्हव्यो॑ वि॒श्वधा॑सि ॥ १ ॥
नू चि॒न्नु ते॒ मन्य॑मानस्य द॒स्मोद॑श्नुवन्ति महि॒मान॑मुग्र । न वी॒र्य॑मिन्द्र ते॒ न राध॑ः ॥ २ ॥
प्र वो॑ म॒हे म॑हि॒वृधे॑ भरध्वं॒ प्रचे॑तसे॒ प्र सु॑म॒तिं कृणुध्वम् । विश॑ः पू॒र्वीः
प्र च॑रा चर्षणि॒प्राः ॥ ३ ॥

य॒दा वज्रं॒ हिर॑ण्य॒मिद॒था रथं॒ हरी॒ यम॑स्य॒ वह॑तो॒ वि सू॒रिभिः॑ । आ
ति॑ष्ठति म॒घवा॒ सन॑श्रुत॒ इन्द्रो॒ वाज॑स्य दी॒र्घश्र॑वस॒स्पतिः॑ ॥ ४ ॥
सो चि॒न्नु वृ॒ष्टिर्यू॒थ्या॒३॑ स्वा सचाँ॒ इन्द्रः॒ श्मश्रू॑णि॒ हरि॑ता॒भि प्रु॑ष्णुते ।
अव॑ वेति सु॒क्षयँ॑ सु॒ते मधू॒दिद्धू॑नोति॒ वातो॒ यथा॒ वन॑म् ॥ ५ ॥
यो वा॒चा विवा॑चो मृ॒ध्रवा॑चः पु॒रू स॒हस्राशि॑वा ज॒घान॑ । तत्त॒दिद॑स्य॒
पौंस्यँ॑ गृणीमसि पि॒तेव॒ यस्तवि॑षीं वावृ॒धे शवः॑ ॥ ६ ॥ [७।२]

—:०:—

सूक्त ७४

ऋषिः—शुनःशेपः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—पंक्तिः ॥ मन्त्र ७ ।

यच्चि॒द्धि सत्य॑ सोमपा अनाश॒स्ता इ॑व॒ स्मसि॑ । आ तू न॑ इन्द्र शंसय॒
गोष्वश्वे॑षु शु॒भ्रिषु॑ स॒हस्रे॑षु तुवीमघ ॥ १ ॥
शिप्रि॑न् वाजानां पते॒ शची॑व॒स्तव॑ द॒ंसना॑ । आ तू न॑···॥ २ ॥
नि ष्वा॑पया मिथू॒दृशा॑ स॒स्तामबु॑ध्यमाने । आ तू न॑०···॥ ३ ॥
स॒सन्तु॒ त्या अरा॑तयो॒ बोध॑न्तु शूर रा॒तयः॑ । आ तू न॑०···॥ ४ ॥
समि॑न्द्र गर्द॒भं मृ॑ण नु॒वन्तं॑ पा॒पया॑मु॒या । आ तू न॑०···॥ ५ ॥
पता॑ति कुण्डृ॒णाच्या॑ दू॒रं वातो॒ वना॒दधि॑ । आ तू न॑०···॥ ६ ॥
सर्वं॑ परिक्रो॒शं ज॑हि ज॒म्भया॑ कृकदा॒श्व[म् । आ तू न॑०···॥७॥ [७।३]

—:०:—

सूक्त ७५

ऋषिः—परुच्छेपः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—अत्यष्टिः ॥ मन्त्र ३ ।

वि त्वा॑ ततस्रे मिथु॒ना अ॑व॒स्यवो॑ व्र॒जस्य॑ सा॒ता गव्य॑स्य नि॒ःसृज॒ः
सक्ष॑न्त इन्द्र नि॒ः सृज॑ः । यद् ग॒व्यन्ता॒ द्वा जना॒ स्व॑१र्य॒न्ता॑ स॒मूह॑सि ।
आ॒विष्क॑रिक्र॒द् वृष॑णं सचा॒भुवं॒ वज्र॑मिन्द्र सचा॒भुव॑म् ॥ १ ॥
वि॒दुष्टे॑ अ॒स्य वी॒र्य॑स्य पू॒र्वः पु॒रो यदि॑न्द्र॒ शार॑दीरवा॒तिर॑ः सासहा॒नो
अ॒वातिर॑ः । शास॒स्तमि॑न्द्र॒ मर्त्य॒मय॑ज्युं शवसस्पते । म॒हीम॑मुष्णाः
पृथि॒वीमि॒मा अ॒पो म॑न्दसा॒न इ॒मा अ॒पः ॥ २ ॥
आदित् ते॑ अ॒स्य वी॒र्य॑स्य चर्कि॒रन्मदे॑षु वृषन्नु॒शिजो॒ यदावि॑थ
सखीय॒तो यदावि॑थ । च॒कर्थ॑ का॒रमे॑भ्य॒ः पृत॑नासु॒ प्रव॑न्तवे । ते
अ॒न्याम॑न्यां न॒द्य॑ं सनिष्णत श्रव॒स्यन्त॑ः सनिष्णत ॥ ३ ॥ [७।४]

—:०:—

सूक्त ७६

ऋषिः—वसुक्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् मन्त्र ८ ।

वने॒ न वा॒ यो न्य॑धायि चा॒कञ्छुचि॒र्वां स्तोमो॑ भुरणावजीगः ।
यस्येदिन्द्र॑ः पुरु॒दिने॑षु॒ होता॑ नृ॒णां नर्यो॒ नृत॑मः क्ष॒पावा॑न् ॥ १ ॥
प्र ते॑ अ॒स्या उ॒षस॒ः प्राप॑रस्या नृ॒तौ स्या॑म॒ नृत॑मस्य नृ॒णाम् । अनु॑
त्रि॒शोक॑ः श॒तमाव॑ह॒न्नॄन् कुत्से॑न॒ रथो॒ यो अस॑त् सस॒वान् ॥ २ ॥
कस्ते॒ मद॑ इन्द्र॒ रन्त्यो॑ भूद् दु॒रो गिरो॑ अ॒भ्यु१॒ग्रो वि धा॑व । कद्
वाहो॑ अ॒र्वागुप॑ मा मनी॒षा आ त्वा॑ शक्यामुप॒मं राधो॒ अन्नैः ॥ ३ ॥
कदु॑ द्यु॒म्नमि॑न्द्र॒ त्वाव॑तो॒ नॄन् कया॑ धि॒या क॑रसे॒ कन्न॒ आग॑न् । मि॒त्रो
न स॒त्य उ॑रुगाय भृ॒त्या अन्ने॑ समस्य॒ यदस॑न्मनी॒षाः ॥ ४ ॥

प्रेर॑य॒ सूरो॒ अर्थं॒ न पा॒रं ये अ॑स्य॒ कामं॑ जनि॒धा इ॑व॒ ग्मन्। गिर॑श्च॒
ये ते॑ तुविजात पू॒र्वीर्नर॑ इन्द्र प्रति॒शिक्ष॒न्त्यन्नैः॑ ॥ ५ ॥

मात्रे॒ नु ते॒ सुमि॑ते इन्द्र पू॒र्वी द्यौर्म॒ज्मना॑ पृथि॒वी काव्ये॑न। वरा॑य ते
घृ॒तव॑न्तः सु॒तासः॒ स्वाद्म॑न् भवन्तु पी॒तये॒ मधू॑नि ॥ ६ ॥

आ मध्वो॑ अस्मा असिच॒न्नम॑त्र॒मिन्द्रा॑य पू॒र्णं स हि स॒त्यरा॑धाः। स
वा॑वृधे॒ वरि॑म॒न्ना पृ॑थि॒व्या अ॒भि क्रत्वा॒ नर्यः॒ पौंस्यै॑श्च ॥ ७ ॥

व्या॑न॒लिन्द्रः॒ पृत॑नाः॒ स्वोजा॒ आस्मै॑ यतन्ते स॒ख्याय॑ पू॒र्वीः। आ स्मा॒
रथं॒ न पृत॑नासु तिष्ठ॒ यं भ॒द्रया॑ सुम॒त्या चो॒दया॑से ॥ ८ ॥ [७।५]

—:०:—

सूक्त ७७

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता— इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ८ ।

आ स॒त्यो या॑तु म॒घवाँ॑ ऋजी॒षी द्रव॑न्त्वस्य॒ हर॑य॒ उप॑ नः। तस्मा॒
इदन्धः॑ सुषुमा सु॒दक्ष॑मि॒हाभिपि॒त्वं क॑रते गृणा॒नः ॥ १ ॥

अव॑ स्य शूराध्व॑नो॒ नान्ते॒ऽस्मिन् नो॑ अ॒द्य सव॑ने म॒न्दध्यै॑। शंसा॑-
त्यु॒क्थमु॒शने॑व वे॒धाश्चि॑कि॒तुषे॑ असु॒र्या॑य॒ मन्म॑ ॥ २ ॥

क॒विर्न नि॒ण्यं वि॒दथा॑नि॒ साध॒न् वृषा॒ यत् सेकं॑ विपिपा॒नो अर्चा॑त्।
दि॒व इ॒त्था जी॑जनत् स॒प्त का॒रूनह्ना॑ चिच्चक्रु॒र्वयु॒ना गृ॒णन्तः॑ ॥ ३ ॥

स्व॒र्यद् वेदिं॑ सु॒दृशी॑कम॒र्कैर्महि॒ ज्योती॑ रुरुचु॒र्यद्ध॒ वस्तोः॑। अ॒न्धा
तमां॑सि॒ दुधि॑ता वि॒चक्षे॒ नृभ्य॑श्चकार॒ नृत॑मो अ॒भिष्टौ॑ ॥ ४ ॥

व॒व॒क्ष इन्द्रो॒ अमि॑तमृ॒जीष्यु॑१॒भे आ प॑प्रौ॒ रोद॑सी महि॒त्वा । अत॑श्चिदस्य
महि॒मा वि रे॑च्य॒भि यो विश्वा॒ भुव॑ना ब॒भूव॑ ॥ ५ ॥
विश्वा॑नि श॒क्रो नर्या॑णि वि॒द्वान॒पो रि॑रेच॒ सखि॑भि॒र्निका॑मैः । अश्मा॑नं
चि॒द् ये बि॑भि॒दुर्वचो॑भिर्व्र॒जं गोम॑न्तमु॒शिजो॒ वि व॑व्रुः ॥ ६ ॥
अ॒पो वृ॒त्रं व॑व्रि॒वांसं॒ परा॑ह॒न् प्राव॑त् ते॒ वज्रं॑ पृथि॒वी सचे॑ताः । प्रार्णां॑सि
समु॒द्रिया॑ण्यैन॒ोः पति॒र्भव॒ञ्छव॑सा शूर धृष्णो ॥ ७ ॥
अ॒पो यदद्रिं॑ पुरुहूत॒ दर्द॑रा॒विर्भु॑वत् स॒रमा॑ पू॒र्व्यं ते॑ । स नो॑ ने॒ता
वाज॒मा द॑र्षि॒ भूरिं॑ गो॒त्रा रु॒जन्नङ्गि॑रोभिर्गृणा॒नः ॥ ८ ॥ [७।६]

—:o:—

सूक्त ७८

ऋषिः—शंयुः ॥ देवता – इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

तद् वो॑ गाय सु॒ते सचा॑ पुरुहू॒ताय॒ सत्व॑ने । शं यद् गवे॒ न शा॒किने॑ ।१।
न घा॒ वसु॒र्नि य॑मते दा॒नं वाज॑स्य॒ गोम॑तः । यत् सी॒मुप॒ श्रव॒द्
गिरः॑ ॥ २ ॥
कु॒वित्सं॑स्य॒ प्र हि व्र॒जं गोम॑न्तं दस्यु॒हा गम॑त् । शची॑भि॒रप॑ नो वरत्
॥ ३ ॥ [७।७]

—:o:—

सूक्त ७९

ऋषिः—१ (पूर्वार्धस्य) शक्तिः; १ (उत्तरार्धस्य) वसिष्ठः, (शाठ्यायनके); १—२ वसिष्ठः (ताण्डके) ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती) ॥ मन्त्र २ ।

इन्द्र॒ क्रतुँ॑ न॒ आ भ॑र पि॒ता पु॒त्रेभ्यो॒ यथा॑। शिक्षा॑ णो अ॒स्मिन् पु॑रुहूत॒
याम॑नि जी॒वा ज्योति॑रशीमहि ॥ १ ॥
मा नो॒ अज्ञा॑ता वृ॒जना॑ दु॒राध्यो॒३॒॑ माशि॑वासो॒ अव॑ क्रमुः। त्वया॑ व॒यं
प्र॒वतः॒ शश्व॑तीर॒पोऽति॑ शू॒र तरामसि ॥ २ ॥ [७।८]

—:०:—

सूक्त ८०

ऋषिः—शंयुः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती) ॥
मन्त्र २।

इन्द्र॒ ज्येष्ठँ॑ न॒ आ भ॑रँ॒ ओजि॑ष्ठं॒ पपु॑रि॒ श्रवः॑। येने॒मे चि॑त्र वज्रहस्त॒
रोद॑सी॒ ओभे सु॑शिप्र॒ प्राः ॥ १ ॥
त्वामु॒ग्रमव॑से चर्ष॑णी॒सहं॒ राज॑न्दे॒वेषु॑ हूमहे। विश्वा॒ सु नो॑ विथु॒रा
पि॑ब्द॒ना व॑सो॒ऽमित्रा॑न् सु॒षहा॑न् कृधि ॥ २ ॥ [७।९]

—:०:—

सूक्त ८१

ऋषिः—पुरुहन्मा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती) ॥
मन्त्र २।

यद् द्याव॑ इन्द्र ते श॒तं श॒तं भूमी॑रु॒त स्युः। न त्वा॑ वज्रिन्त्स॒हस्र॒ं सूर्या॒
अनु॒ न जा॒तम॑ष्ट॒ रोद॑सी ॥ १ ॥
आ प॑प्राथ महि॒ना वृष्ण्या॑ वृष॒न् विश्वा॑ शविष्ठ॒ शव॑सा। अ॒स्माँ अ॑व
मघव॒न् गोम॑ति व्र॒जे वज्रि॑ञ्चि॒त्राभि॑रू॒तिभिः॑ ॥ २ ॥ [७।१०]

—:०:—

सूक्त ८२

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती + सतोबृहती) ॥ मन्त्र २ ।

यदि॑न्द्र॒ याव॑त॒स्त्वमे॒ताव॑द॒हमीशी॑य । स्तो॒तार॒मिद् दि॑धिषेय रदावसो॒
न पा॑प॒त्वाय॑ रासीय ॥ १ ॥
शिक्षे॑य॒मिन्म॑हय॒ते दि॒वेदि॑वे रा॒य आ कु॑हचि॒द्विदे॑ । न॒हि त्वद॒न्यन्म॑घवन्न॒
आप्यं॒ वस्यो॒ अस्ति॑ पि॒ता च॒न ॥ २ ॥ [७।११]

—:०:—

सूक्त ८३

ऋषिः—शंयुः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती + सतोबृहती) ॥ मन्त्र २ ।

इन्द्र॑ त्रि॒धातु॑ शर॒णं त्रि॒वरू॑थं स्वस्ति॒मत् । छ॒र्दिर्य॑च्छ म॒घव॑द्भ्यश्च॒ मह्यं॑
च या॒वया॑ दि॒द्युमे॑भ्यः ॥ १ ॥
ये ग॑व्य॒ता मन॑सा॒ शत्रु॑माद॒भुर॑भिप्र॒घ्नन्ति॑ धृष्णु॒या । अध॑ स्मा नो
मघवन्निन्द्र गिर्वणस्तनू॒पा अन्त॑मो भव ॥ २ ॥ [७।१२]

—:०:—

सूक्त ८४

ऋषिः—मधुच्छन्दाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

इन्द्रा या॑हि चित्रभानो सु॒ता इ॒मे त्वा॒यव॑ः । अण्वी॑भि॒स्तना॑ पू॒तास॑ः १
इन्द्रा या॑हि धि॒येषि॒तो विप्र॑जूतः सु॒ताव॑तः । उप॒ ब्रह्मा॑णि वा॒घत॑ः ।२।
इन्द्रा या॑हि तूतु॑जान॒ उप॒ ब्रह्मा॑णि हरिवः । सु॒ते द॑धिष्व न॒श्चन॑ः ॥३॥
[७।१३]

—:०:—

सूक्त ८५

ऋषिः--१, २ प्रगाथः; ३, ४ मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती ।) मन्त्र ४ ।

मा चि॑दु॒न्यद् वि शँ॑सत॒ सखा॑यो॒ मा रि॑षण्यत । इन्द्र॒मित् स्तो॑ता॒
वृष॑णं॒ सचा॑ सु॒ते मुहु॑रु॒क्था च॑ शंसत ॥ १ ॥
अ॒व॒क्र॒क्षिणँ॑ वृष॒भं य॑था॒जुरं॒ गां॑ न च॑र्षणी॒सह॑म् । वि॒द्वेष॑णं सं॒व-
न॑नोभयंक॒रं मंहि॑ष्ठमुभया॒विन॑म् ॥ २ ॥
यच्चि॒द्धि त्वा॒ जना॑ इ॒मे नाना॒ हव॑न्त ऊ॒तये॑ । अ॒स्माकं॒ ब्रह्मे॒दमि॑न्द्र
भू तु॒ तेऽहा॒ विश्वा॑ च॒ वर्धँ॑नम् ॥ ३ ॥
वि त॑र्तूर्य॑न्ते मघवन् विप॒श्चितो॒ऽर्यो विपो॒ जना॑नाम् । उप॑ क्रमस्व
पु॒रु॒रूप॒मा भ॑र॒ वाजं॒ नेदि॑ष्ठमू॒तये॑ ॥ ४ ॥ [७।१४]

—:०:—

सूक्त ८६

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १ ।

ब्रह्म॑णा ते ब्रह्म॒युजा॑ युनज्मि॒ हरी॒ सखा॑या सध॒माद॑ आ॒शू । स्थि॒रं
रथँ॑ सु॒खमि॑न्द्राधि॒तिष्ठ॑न् प्रजा॒नन् वि॒द्वाँ उप॑ याहि॒ सोम॑म् ॥ १ ॥
[७।१५]

—:०:—

सूक्त ८७

ऋषिः—वसिष्ठः ॥ देवता—१—६ इन्द्रः; ७ इन्द्राबृहस्पती ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

अध्व॑र्यवोऽरु॒णं दु॒ग्धमं॒शुं जु॒होत॑न वृष॒भाय॑ क्षि॒तीनाम् । गौ॒राद् वेदी॑याँ
अव॒पान॒मिन्द्रो॑ वि॒श्वाहेद्या॑ति सु॒तसो॑ममि॒च्छन् ॥ १ ॥

यद् द॑धि॒षे प्र॒दिवि॒ चार्व॑न्नं॑ दि॒वेदि॑वे पी॒तिमिद॑स्य वक्षि । उ॒त हृ॒दोत
मन॑सा जुषाण उ॒शन्नि॑न्द्र॒ प्रस्थि॑तान् पाहि॒ सोमा॑न् ॥ २ ॥
ज॒ज्ञा॒नः सोमं॒ सह॑से पपाथ॒ प्र ते॑ मा॒ता म॑हि॒मान॑मुवाच । एन्द्र॑
पप्रा॒थोर्व॑१॒न्तरि॑क्षं यु॒धा दे॒वेभ्यो॒ वरि॑वश्चकर्थ ॥ ३ ॥
यद् यो॒धया॑ मह॒तो मन्य॑माना॒न् साक्षा॑म॒ तान् बा॒हुभि॒ः शाश॑-
दानान् । यद्वा॒ नृभि॒र्वृ॑त इन्द्राभि॒युध्या॒स्तं त्वया॒जि सौश्र॒वसं॑ जयेम ४
प्रेन्द्र॑स्य वोचं प्रथ॒मा कृ॒तानि॒ प्र नूत॑ना म॒घवा॒ या च॒कार॑ । य॒देद-
दे॑वी॒रस॑हिष्ट मा॒या अथा॑भव॒त् केव॑ल॒ः सोमो॑ अस्य ॥ ५ ॥
त॒वेदं॑ विश्व॑म॒भित॑ः पश॒व्यं॑१॒ यत् पश्य॑सि॒ चक्ष॑सा॒ सूर्य॑स्य । गवा॑मसि॒
गोप॑ति॒रेक॑ इन्द्र भक्षी॒महि॑ ते॒ प्रय॑तस्य॒ वस्व॑ः ॥ ६ ॥
बृह॑स्पते यु॒वमिन्द्र॑श्च॒ वस्वो॑ दि॒व्यस्ये॑शाथे उ॒त पार्थि॑वस्य । ध॒त्तं र॒यिं
स्तु॑व॒ते की॒रये॑ चिद् यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒ः सदा॑ नः ॥ ७ ॥ [७।१६]

—:०:—

सूक्त ८८

ऋषिः—वामदेवः ॥ देवता—बृहस्पतिः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ६ ।

यस्त॒स्तम्भ॒ सह॑सा॒ वि ज्मो अन्ता॒न् बृह॒स्पति॑स्त्रिषध॒स्थो रवण । तं
प्र॒त्नास॒ ऋष॑यो॒ दीध्या॑नाः पु॒रो विप्रा॑ दधिरे म॒न्द्रजि॑ह्वम् ॥ १ ॥
धु॒नेत॑यः सुप्रके॒तं मद॑न्तो॒ बृह॑स्पते अ॒भि ये न॑स्तत॒स्रे । पृष॑न्तं सृ॒प्रम॑-
द॑ब्धमू॒र्वं बृह॑स्पते॒ रक्ष॑तादस्य॒ योनि॑म् ॥ २ ॥
बृह॑स्पते॒ या प॑र॒मा प॑रा॒वदत॒ आ त॑ ऋत॒स्पृशो॒ नि षे॑दुः । तुभ्यं॑
खा॒ता अ॑व॒ता अद्रि॑दुग्धा॒ मध्व॑ श्चोतन्त्य॒भितो॑ विर॒प्शम् ॥ ३ ॥

बृह॒स्पति॑ः प्रथ॒मं जाय॑मानो म॒हो ज्योति॑षः पर॒मे व्यो॑ऽमन्। स॒प्तास्य॑स्तुविजा॒तो रवे॑ण॒ वि स॒प्तर॑श्मिरधम॒त् तमां॑सि ॥ ४ ॥

स सु॒ष्टुभा॒ स ऋक्व॑ता ग॒णेन॑ व॒लं रु॑रोज फलि॒गं रवे॑ण। बृह॒स्पति॑रु॒स्रिया॑ हव्य॒सूदः कनि॑क्रद॒द् वाव॑शती॒रुदा॑जत् ॥ ५ ॥

ए॒वा पि॒त्रे वि॒श्वदे॑वाय॒ वृष्णे॑ य॒ज्ञैर्वि॑धेम॒ नम॑सा ह॒विर्भि॑ः। बृह॑स्पते सुप्र॒जा वी॒रव॑न्तो व॒यं स्या॑म॒ पत॑यो रयी॒णाम् ॥ ६ ॥ [७।१७]

—:०:—

सूक्त ८९

ऋषिः—कृष्णः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—त्रिष्टुप् ।। मन्त्र ११ ।

अस्ते॑व॒ सु प्र॑त॒रं लाय॒मस्य॒न् भूष॑न्निव॒ प्र भ॑रा॒ स्तोम॑मस्मै। वा॒चा विप्रा॑स्तरत॒ वाच॑म॒र्यो नि रा॑मय जरितः॒ सोम॒ इन्द्र॑म् ॥ १ ॥

दोहे॑न॒ गामुप॑ शिक्षा॒ सखा॑यं॒ प्र बो॑धय जरितर्जा॒रमिन्द्र॑म्। कोशं॒ न पू॒र्णं वसु॑ना॒ न्यृष्ट॒मा च्या॑वय मघ॒देया॑य॒ शूर॑म् ॥ २ ॥

किम॒ङ्ग त्वा॑ मघवन् भो॒जमा॑हुः शिशी॒हि मा॑ शिश॒यं त्वा॑ शृणोमि।
अप्न॑स्वती॒ मम॒ धीर॑स्तु शक्र वसु॒विदं॒ भग॑मि॒न्द्रा भ॑रा नः ॥ ३ ॥

त्वां जना॑ ममस॒त्येष्वि॑न्द्र संतस्था॒ना वि ह्व॑यन्ते समी॒के। अत्रा॒ युजं॑ कृणुते॒ यो ह॒विष्मा॒न्नासु॑न्वता स॒ख्यं व॑ष्टि॒ शूर॑ः ॥ ४ ॥

धनं॒ न स्प॒न्द्रं ब॑हु॒लं यो अ॑स्मै ती॒व्रान्त्सोमाँ॑ आसु॒नोति॒ प्रय॑स्वान्।
तस्मै॒ शत्रू॑न्त्सु॒तुका॑न् प्रा॒तरह्नो॒ नि स्वष्ट्रा॑न् यु॒वति॒ हन्ति॑ वृ॒त्रम् ॥५॥

यस्मि॑न् व॒यं द॑धि॒मा शंस॒मिन्द्रे॒ यः शि॒श्राय॑ म॒घवा॒ काम॑म॒स्मे।
आ॒रा॒च्चि॒त् सन् भ॑यतामस्य॒ शत्रु॒र्न्य॑ऽस्मै द्यु॒म्ना जन्या॑ नमन्ताम् ॥६॥

आरा॒च्छत्रु॒मप॑ बाधस्व दू॒रमु॒ग्रो यः शम्ब॑ः पुरुहूत॒ तेन॑ । अ॒स्मे धे॑हि॒
यव॑मद्॒ गोम॑दिन्द्र कृ॒धी धियँ॑ जरि॒त्रे वाज॑रत्नाम् ॥ ७ ॥
प्र यम॒न्तर्वृँषस॒वासो॒ अग्म॑न् ती॒व्राः सोमा॑ बहु॒लान्ता॑स॒ इन्द्र॑म् । नाह॑
दा॒मानँ॑ म॒घवा॒ नि यँ॑स॒न् नि सु॑न्व॒ते व॑हति॒ भूरि॑ वा॒मम् ॥ ८ ॥
उ॒त प्र॒हामति॑दीवा जयति कृ॒तमि॑व श्व॒घ्नी वि चि॑नोति का॒ले । यो
दे॒वका॑मो॒ न धनँ॑ रु॒णद्धि॒ समित् त॑ रा॒यः सृ॑जति स्व॒धाभि॑ः ॥ ९ ॥
गोभि॑ष्टरे॒माम॑तिं दु॒रेवा॒॑ यवँ॑न वा॒ क्षुधँ॑ पुरुहूत॒ विश्वे॑ । व॒यं राज॑सु
प्र॒थमा धना॒न्यरि॑ष्टासो वृ॒ज॒नीभि॑र्जयेम ॥ १० ॥
बृह॒स्पति॑र्नः॒ परि॑ पातु प॒श्चादु॒तोत्त॑रस्मा॒दध॑रादघा॒योः । इन्द्र॑ः पु॒रस्ता॑दु॒त
म॑ध्य॒तो नः॒ सखा॒ सखि॑भ्यो॒ वरी॑यः कृणोतु ॥११॥ [७।१८]

—:०:—

सूक्त ९०

ऋषिः—भरद्वाजः ॥ देवता—बृहस्पतिः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ३ ।

यो अ॑द्रि॒भित् प्र॑थम॒जा ऋ॒ताव॒ा बृह॒स्पति॑राङ्गिर॒सो ह॒विष्मा॑न् ।
द्वि॒बर्ह॑ज्मा प्रा॒घर्म॑सत् पि॒ता न॒ आ रोद॑सी वृष॒भो रो॑रवीति ॥ १ ॥
जना॑य चि॒द् य ईव॑त उ लो॒कं बृह॒स्पति॑र्दे॒वहू॑तौ च॒कार॑ । घ्नन् वृ॒त्राणि॒
वि पुरो॑ दर्दरीति॒ जय॒ञ्छत्रूँ॑र॒मित्रा॑न् पृ॒त्सु साह॑न् ॥ २ ॥
बृह॒स्पति॒ः सम॑जय॒द् वसू॑नि म॒हो व्र॒जान् गोम॑तो दे॒व ए॒षः । अ॒पः
सिषा॑स॒न्त्स्व॒॑२रप्र॑तीतो॒ बृह॒स्पति॒र्हन्त्य॒मित्र॑म॒र्कैः ॥ ३ ॥ [७।१९]

—:०:—

सूक्त ९१

ऋषिः—अयास्यः ॥ देवता—बृहस्पतिः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र १२ ।

इमां धियं सप्तशीर्ष्णीं पिता न ऋतप्रजातां बृहतीमविन्दत् । तुरीयं
स्विज्जनयद् विश्वजन्योऽयास्य उक्थमिन्द्राय शंसन् ॥ १ ॥
ऋतं शंसन्त ऋजु दीध्याना दिवस्पुत्रासो असुरस्य वीराः । विप्रं
पदमङ्गिरसो दधाना यज्ञस्य धाम प्रथमं मनन्त ॥ २ ॥
हंसैरिव सखिभिर्वावदद्भिरश्मन्मयानि नहना व्यस्यन् । बृहस्पतिरभिकनिक्रदद् गा उत प्रास्तौदुच्च विद्वाँ अगायत् ॥ ३ ॥
अवो द्वाभ्यां पर एकया गा गुहा तिष्ठन्तीरनृतस्य सेतौ । बृहस्पतिस्तमसि ज्योतिरिच्छन्नुदुस्रा आकर्विहितिस्र आवः ॥ ४ ॥
विभिद्या पुरं शयथेमपाचीं निस्त्रीणि साकमुदधेरकृन्तत् । बृहस्पतिरुषसं सूर्यं गामर्कं विवेद स्तनयन्निव द्यौः ॥ ५ ॥
इन्द्रो वलं रक्षितारं दुघानां करेणेव वि चकर्ता रवेण । स्वेदाञ्जिभिराशिरमिच्छमानोऽरौदयत् पणिमा गा अमुष्णात् ॥ ६ ॥
स ईं सत्येभिः सखिभिः शुचद्भिर्गोधायसं वि धनसैरदर्दः ।
ब्रह्मणस्पतिर्वृषभिर्वराहैर्घर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यानट् ॥७॥
ते सत्येन मनसा गोपतिं गा इयानास इषणयन्त धीभिः । बृहस्पतिर्मिथोअवद्यपेभिरुदुस्रिया असृजत स्वयुग्भिः ॥ ८ ॥
तं वर्धयन्तो मतिभिः शिवाभिः सिंहमिव नानदतं सधस्थे । बृहस्पतिं
वृषणं शूरसातौ भरेभरे अनु मदेम जिष्णुम् ॥ ९ ॥
यदा वाजमसनद् विश्वरूपमा द्यामरुक्षदुत्तराणि सद्म । बृहस्पतिं वृषणं
वर्धयन्तो नाना सन्तो बिभ्रतो ज्योतिरासा ॥ १० ॥

सत्यामाशिषं कृणुता वयोधै कीरिं चिद्ध्यवथ स्वेभिरेवैः । पश्चा
मृधो अप भवन्तु विश्वास्तद् रोदसी शृणुतं विश्वमिन्वे ॥ ११ ॥
इन्द्रो मह्ना महतो अर्णवस्य वि मूर्धानमभिनदर्बुदस्य । अहन्नहि-
मरिणात् सप्त सिन्धून् देवैर्द्यावापृथिवी प्रावतं नः ॥ १२ ॥ [८।१]

—:०:—

सूक्त ९२

ऋषिः—१—१२ प्रियमेधः; १६—२१ पुरुहन्मा ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—१—३ गायत्री; [४—७, ९—१२ अनुष्टुप्; ८, १३ पङ्क्तिः; १४, १५ बृहती]; १६—२१ बार्हतः प्रगाथः (समा—बृहती+विषमा—सतोबृहती) ।। मन्त्र २१ ।

अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ।१।
आ हरयः ससृज्रिरेऽरुषीरधि बर्हिषि । यत्राभि संनवामहे ॥ २ ॥
इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु । यत् सीमुपह्वरे विदत् ॥३॥
उद् यद् ब्रध्नस्य विष्टपं गृहमिन्द्रश्च गन्वहि । मध्वः पीत्वा सचेवहि
त्रिः सप्त सख्युः पदे ॥ ४ ॥
अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत । अर्चन्तु पुत्रका उत पुरं न
धृष्णवर्चत ॥ ५ ॥
अव स्वराति गर्गरो गोधा परि सनिष्वणत् । पिङ्गा परि चनिष्कद-
दिन्द्राय ब्रह्मोद्यतम् ॥ ६ ॥
आ यत् पतन्त्येन्यः सुदुघा अनपस्फुरः । अपस्फुरं गृभायत सोम-
मिन्द्राय पातवे ॥ ७ ॥
अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत । वरुण इदिह क्षयत तमापो
अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव ॥ ८ ॥

सु॒दे॒वो अ॑सि॒ वरु॑ण॒ यस्य॑ ते स॒प्त सिन्ध॑वः । अ॒नु॒क्षर॑न्ति का॒कुदं॑
सू॒र्म्यं⌈ सुषि॒रामि॑व ॥ ९ ॥
यो व्य॒तीँ॑रफा॑णय॒त् सुयु॑क्ताँ॒ उप॑ दा॒शुषे॑ । त॒क्वो ने॒ता तदिद् वपु॑रुप॒मा
यो अमु॑च्यत ॥ १० ॥
अती॑दु श॒क्र ओ॑हत॒ इन्द्रो॒ विश्वा॒ अति॒ द्विषः॑ । भि॒नत् क॒नीन॑ ओद॒नं
प॒च्यमा॑नं प॒रो गि॒रा ॥ ११ ॥
अ॒र्भ॒को न कु॑मार॒कोऽधि॑ तिष्ठ॒न्नवं॒ रथ॑म् । स प॑क्षन्महि॒षं मृ॒गं पि॒त्रे
मा॒त्रे वि॑भु॒क्रतु॑म् ॥ १२ ॥
आ तू सु॑शिप्र दं॑पते॒ रथं॑ तिष्ठा हिर॒ण्यय॑म् । अध॑ द्यु॒क्षं स॑चेवहि
स॒हस्र॑पाद्मरु॒षं स्व॑स्ति॒गाम॑ने॒हस॑म् ॥ १३ ॥
तं घे॑मि॒त्था न॑म॒स्विन॒ उप॑ स्व॒राज॑मासते । अर्थं॑ चि॒दस्य॒ सुधि॑तं॒
यदे॑तव आव॒र्तय॑न्ति दा॒वने॑ ॥ १४ ॥
अनु॑ प्र॒त्नस्यौक॑सः प्रि॒यमे॑धास एषाम् । पूर्वा॒मनु॒ प्रय॑तिं वृ॒क्तब॑र्हिषो
हि॒तप्र॑यस आशत ॥ १५ ॥
यो राजा॑ चर्षणी॒नां या॒ता रथे॑भि॒रध्रि॑गुः । विश्वा॑सां त॒रुता पृत॑नानां॒
ज्येष्ठो॒ यो वृ॑त्र॒हा गृ॒णे ॥ १६ ॥
इन्द्र॒ तं शु॑म्भ पुरुहन्म॒न्नव॑से॒ यस्य॑ द्वि॒ता वि॑ध॒र्तरि॑ । हस्ता॑य॒ वज्रः॒
प्रति॑ धायि दर्श॒तो म॒हो दि॒वे न सूर्यः॑ ॥ १७ ॥
नकि॒ष्टं कर्म॑णा नश॒द् यश्च॒कार॑ स॒दावृ॑धम् । इन्द्रं॒ न य॒ज्ञैर्वि॒श्वगू॑र्त॒-
ऋभ्व॑स॒मधृ॑ष्टं धृ॒ष्णवो⌈जसम् ॥ १८ ॥

अषा॑ढमु॒ग्रं पृत॑नासु सास॒हिं यस्मि॑न् म॒हीरु॑रु॒ज्रय॑ः । सं धे॒नवो॒ जाय॑माने
अनोनवु॒र्द्याव॒ः क्षामो॑ अनोनवुः ॥ १९ ॥
यद् द्याव॑ इन्द्र ते श॒तं श॒तं भूमी॑रु॒त स्युः । न त्वा॑ वज्रिन्त्स॒हस्रं॒ सूर्या॒
अनु॒ न जा॒तम॑ष्ट॒ रोद॑सी ॥ २० ॥
आ प॑प्राथ महि॒ना वृष्ण्या॑ वृष॒न् विश्वा॑ शविष्ठ॒ शव॑सा । अ॒स्माँ अ॑व
मघव॒न् गोम॑ति व्र॒जे वज्रि॑ञ्चि॒त्राभि॑रू॒तिभि॑ः ॥ २१ ॥ [८।२]

—:०:—

सूक्त ९३

ऋषिः—१—३ प्रगाथः; ४—८ देवजामयः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥
मन्त्र ८ ।

उत् त्वा॑ मन्दन्तु॒ स्तोमा॑ः कृणु॒ष्व राधो॑ अद्रिवः अव॑ ब्रह्म॒द्विषो॑
जहि ॥ १ ॥
प॒दा प॒णीँर॑रा॒धसो॒ नि बा॑धस्व म॒हाँ अ॑सि । न॒हि त्वा॒ कश्च॒न प्रति॑ ।२।
त्वमी॑शिषे सु॒ताना॒मिन्द्र॒ त्वमसु॑तानाम् । त्वं राजा॒ जना॑नाम् ॥ ३ ॥
ई॒ङ्खय॑न्तीरप॒स्युव॒ इन्द्रँ॑ जा॒तमुपा॑सते । भे॒जा॒नास॑ः सु॒वीर्य॑म् ॥ ४ ॥
त्वमि॑न्द्र॒ बला॒दधि॒ सह॑सो जा॒त ओज॑सः । त्वं वृ॑ष॒न् वृषेद॑सि ॥ ५ ॥
त्वमि॑न्द्रासि वृत्र॒हा व्य॑१न्तरि॑क्षमतिरः । उद् द्याम॑स्तभ्ना॒ ओज॑सा ।६।
त्वमि॑न्द्र स॒जोष॑सम॒र्कं बि॑भर्षि बा॒ह्वोः । वज्रं॒ शिशा॑न॒ ओज॑सा ॥ ७ ॥
त्वमि॑न्द्राभि॒भूर॑सि॒ विश्वा॑ जा॒तान्योज॑सा । स विश्वा॒ भुव॒ आभ॑वः ॥८॥
[८।३]

—:०:—

सूक्त ९४

ऋषिः—कृष्णः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१—३, १०, ११ त्रिष्टुप्; ४—९ जगती ॥ मन्त्र ११ ।

आ यात्विन्द्रः स्वपतिर्मदाय यो धर्मणा तूतुजानस्तुविष्मान् ।
प्रत्वक्षाणो अति विश्वा सहांस्यपारेण महता वृष्ण्येन ॥ १ ॥
सुष्ठामा रथः सुयमा हरी ते मिम्यक्ष वज्रो नृपते गभस्तौ । शीभं
राजन् सुपथा याह्यर्वाङ् वर्धाम ते पपुषो वृष्ण्यानि ॥ २ ॥
एन्द्रवाहो नृपतिं वज्रबाहुमुग्रमुग्रासस्तविषास एनम् । प्रत्वक्षसं वृषभं
सत्यशुष्ममेमस्मत्रा सधमादो वहन्तु ॥ ३ ॥
एवा पतिं द्रोणसाचं सचेतसमूर्ज स्कम्भं धरुण आ वृषायसे । ओजः
कृष्व सं गृभाय त्वे अप्यसो यथा केनिपानामिनो वृधे ॥ ४ ॥
गमन्नस्मे वसून्या हि शंसिषं स्वाशिषं भरमा याहि सोमिनः ।
त्वमीशिषे सास्मिन्ना सत्सि बर्हिष्यनाधृष्या तव पात्राणि धर्मणा ।५।
पृथक् प्रायन् प्रथमा देवहूतयोऽकृण्वत श्रवस्यानि दुष्टरा । न ये
शेकुर्यज्ञियां नावमारुहमीर्मैव ते न्यविशन्त केपयः ॥ ६ ॥
एवैवापागपरे सन्तु दूढ्योश्वा येषां दुर्युज आयुयुज्रे । इत्था ये प्रागुपरे
सन्ति दावने पुरूणि यत्र वयुनानि भोजना ॥ ७ ॥
गिरींरज्रान् रेजमानाँ अधारयद् द्यौः क्रन्ददन्तरिक्षाणि कोपयत् ।
समीचीने धिषणे वि ष्कभायति वृष्णः पीत्वा मद उक्थानि शंसति ८
इमं बिभर्मि सुकृतं ते अङ्कुशं येनारुजासि मघवञ्छफारुजः ।
अस्मिन्त्सु ते सवने अस्त्वोक्यं सुत इष्टौ मघवन् बोध्याभगः ॥९॥

गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम्। वयं राजभिः
प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम ॥ १० ॥
बृहस्पतिर्नः परि पातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघायोः। इन्द्रः
पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु ॥११॥ [८।४]

—:०:—

सूक्त ९५

ऋषिः—गृत्समदः; २—४ सुदाः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१ अष्टिः; २—४ शक्वरी ॥ मन्त्र ४।

त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरं तुविशुष्मस्तृपत् सोममपिबद् विष्णुना
सुतं यथावशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुं सैनं सश्चद्
देवो देवं सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दुः ॥ १ ॥
प्रो ष्वस्मै पुरोरथमिन्द्राय शूषमर्चत। अभीके चिदु लोककृत् संगे
समत्सु वृत्रहास्माकं बोधि चोदिता नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि
धन्वसु ॥ २ ॥
त्वं सिन्धूँरवासृजोऽधराचो अहन्नहिम्। अशत्रुरिन्द्र जज्ञिषे विश्वं
पुष्यसि वार्यं तं त्वा परि ष्वजामहे नभन्तामन्यकेषां० ॥ ३ ॥
वि षु विश्वा अरातयोऽर्यो नशन्त नो धियः। अस्तासि शत्रवे वधं
यो न इन्द्र जिघांसति या ते रातिर्ददिर्वसु नभन्तामन्यकेषां ज्याका
अधि धन्वसु ॥ ४ ॥ [८।५]

—:०:—

सूक्त ९६

ऋषिः—१—१० पूरणः ६—९ ब्रह्मा च, भृग्वङ्गिराश्च; १० ब्रह्मा च; ११—१६ रक्षोहाः; १७—२३ ब्रह्मा; २४ प्रचेताः ॥ देवता—१—५ इन्द्रः; ६—१०,

१७—२३ यक्ष्मनाशनम्, ११—१६ गर्भदोषनाशनम्; २४ दुःष्वप्ननाशनम् ॥
छन्दः –१—८ त्रिष्टुप्; ९ शक्वरीगर्भा जगती; १०—१८ अनुष्टुप्; १९ ककुम्मत्यनुष्टुप्; २० चतुष्पदा भुरिगुष्णिक्; २१ उपरिष्टाद् विराड् बृहती; २२ उष्णिग्गर्भा निचृदनुष्टुप् २३ पथ्यापङ्क्तिः; [२४ अनुष्टुप्] ॥ मन्त्र २४ ।

ती॒व्रस्या॒भिव॑यसो अ॒स्य पा॑हि सर्वर॒था वि हरी॑ इ॒ह मु॑ञ्च । इन्द्र॒ मा
त्वा॒ यज॑मानासो अ॒न्ये नि री॑रम॒न् तुभ्य॑मि॒मे सु॒तास॑ः ॥ १ ॥
तुभ्यँ॑ सु॒तास्तुभ्य॑मु॒ सोत्वा॑स॒स्त्वां गिर॒ः श्वात्र्या॒ आ ह्व॑यन्ति । इन्द्रे॒द-
म॒द्य सव॑नं जुषा॒णो विश्व॑स्य वि॒द्वाँ इ॒ह पा॑हि॒ सोम॑म् ॥ २ ॥
य उ॑श॒ता मन॑सा॒ सोम॑मस्मै सर्वहृ॒दा दे॒वका॑मः सनो॑ति । न गा
इन्द्र॒स्तस्य॒ परा॑ ददाति प्रश॒स्तमिच्चारु॑मस्मै कृणोति ॥ ३ ॥
अनु॑स्पष्टो भवत्ये॒षो अ॑स्य॒ यो अ॑स्मै रे॒वान् न सुनोति॒ सोम॑म् ।
निर॑र॒त्नौ म॒घवा॒ तं द॑धाति ब्रह्म॒द्विषो॑ ह॒न्त्यना॑नुदिष्टः ॥ ४ ॥
अ॒श्वा॒यन्तो॑ ग॒व्यन्तो॑ वा॒जय॑न्तो॒ हवा॑महे॒ त्वोप॑गन्त॒वा उ॑ । आ॒भूष॑न्तस्ते
सु॒म॒तौ नवा॑यां व॒यमि॑न्द्र त्वा शु॒नं हु॑वेम ॥ ५ ॥
मु॒ञ्चामि॑ त्वा ह॒विषा॒ जीव॑नाय॒ कम॑ज्ञातय॒क्ष्मादु॒त रा॑जय॒क्ष्मात् ।
ग्राहि॑र्ज॒ग्राह॒ यद्ये॒तदे॑नं॒ तस्या॑ इन्द्राग्नी॒ प्र मु॑मुक्तमेनम् ॥ ६ ॥
यदि॑ क्षि॒तायु॒र्यदि॑ वा॒ परे॑तो॒ यदि॑ मृ॒त्योर॑न्ति॒कं नी॑त ए॒व । तमा
ह॑रामि॒ निरृ॑तेरु॒पस्था॒दस्पा॑र्शमेनं श॒तशा॑रदाय ॥ ७ ॥
स॒ह॒स्रा॒क्षेण॑ श॒तवी॑र्येण श॒तायु॑षा ह॒विषाहा॑र्षमेनम् । इन्द्रो॒ यथै॑नं श॒रदो॑
नया॒त्यति॒ विश्व॑स्य दुरि॒तस्य॑ पा॒रम् ॥ ८ ॥

श॒तं जीव॑ श॒रदो॒ वर्ध॑मानः श॒तं हे॑म॒न्ताञ्छ॒तमु॑ वस॒न्तान् । श॒तं त॒ इन्द्रो॑ अ॒ग्निः स॑वि॒ता बृह॒स्पतिः॑ श॒तायु॑षा ह॒विषाहा॑र्षमेनम् ॥ ९ ॥

आहा॑र्ष॒मविं॑दं त्वा॒ पुन॒रागाः॒ पुन॑र्णवः । सर्वा॑ङ्ग॒ सर्वं॑ ते॒ चक्षुः॒ सर्व॒मायु॑श्च तेऽविदम् ॥ १० ॥

ब्रह्म॑णा॒ग्निः सं॑विदा॒नो र॑क्षो॒हा बा॑धतामि॒तः । अमी॑वा॒ यस्ते॒ गर्भं॑ दु॒र्णामा॒ योनि॑माश॒ये॑ ॥ ११ ॥

यस्ते॒ गर्भ॒ममी॑वा दु॒र्णामा॒ योनि॑मा॒शये॑ । अ॒ग्निष्टं ब्रह्म॑णा स॒ह निष्क्र॒व्याद॑मनीनशत् ॥ १२ ॥

यस्ते॒ हन्ति॑ प॒तय॑न्तं निष॒त्स्नुं यः स॑रीसपम् । जा॒तं यस्ते॒ जिघां॑सति॒ तमि॒तो ना॑शयामसि ॥ १३ ॥

यस्त॑ ऊ॒रू वि॒हर॑त्यन्त॒रा दम्प॑ती॒ शये॑ । योनिं॒ यो अ॒न्तरा॒रेह्लि॒ तमि॒तो ना॑शयाम॑सि ॥ १४ ॥

यस्त्वा॒ भ्राता॒ पति॑र्भू॒त्वा जा॒रो भू॒त्वा नि॒पद्य॑ते । प्र॒जां यस्ते॒ जिघां॑सति॒ तमि॒तो ना॑शयामसि ॥ १५ ॥

यस्त्वा॒ स्वप्ने॑न॒ तम॑सा मोहयि॒त्वा नि॒पद्य॑ते । प्र॒जां यस्ते॒ जिघां॑सति॒ तमि॒तो ना॑शयामसि ॥ १६ ॥

अ॒क्षीभ्यां॑ ते॒ नासि॑काभ्यां॒ कर्णा॑भ्यां॒ छुबु॑का॒दधि॑ । यक्ष्मं॑ शीर्ष॒ण्यं॑ म॒स्तिष्का॒ज्जिह्वा॑या॒ वि वृ॑हामि ते ॥ १७ ॥

ग्री॒वाभ्य॑स्त उ॒ष्णिहा॑भ्यः॒ कीक॑साभ्यो अनू॒क्या॑त् । यक्ष्मं॑ दोष॒ण्य१॒मंसा॑भ्यां बा॒हुभ्यां॒ वि वृ॑हामि ते ॥ १८ ॥

हृद॑यात् ते॒ परि॑ क्लो॒म्नो हली॑क्ष्णात् पा॒र्श्वाभ्या॑म्। यक्ष्म॒ं मत॑स्नाभ्यां प्ली॒ह्नो य॒क्नस्ते॒ वि वृ॑हामसि ॥ १९ ॥

आन्त्रेभ्य॑स्ते॒ गुदा॑भ्यो वनि॒ष्ठोरु॒दरा॒दधि॑ । यक्ष्मं॑ कु॒क्षिभ्यां॑ प्ला॒शेर्ना॑भ्या॒ वि वृ॑हामि ते ॥ २० ॥

ऊ॒रुभ्यां॑ ते अष्ठी॒वद्भ्यां॒ पार्ष्णि॑भ्यां॒ प्रप॑दाभ्याम् । यक्ष्मं॑ भस॒द्यं॒१॒ श्रोणि॑भ्यां॒ भास॑दं॒ भंस॑सो॒ वि वृ॑हामि ते ॥ २१ ॥

अ॒स्थिभ्य॑स्ते म॒ज्जभ्यः॒ स्नाव॑भ्यो ध॒मनि॑भ्यः । यक्ष्मं॑ पा॒णिभ्या॑म॒ङ्गुलि॑भ्यो न॒खेभ्यो॒ वि वृ॑हामि ते ॥ २२ ॥

अङ्गे॑अङ्गे॒ लोम्नि॑लोम्नि॒ यस्ते॒ पर्व॑णिपर्वणि । यक्ष्मं॑ त्वच॒स्यं॑ ते व॒यं क॒श्यप॑स्य वीब॒र्हेण॒ विष्व॑ञ्चं॒ वि वृ॑हामसि ॥ २३ ॥

अपे॑हि मनसस्प॒तेऽप॑ क्राम प॒रश्च॑र । परो॑ निर्ऋ॑त्या॒ आ च॑क्ष्व बहु॒धा जीव॑तो॒ मनः॑ ॥ २४ ॥ [८ ६]

—:o:—

सूक्त ९७

ऋषिः—कलिः । देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, २ बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती); ३ बृहती ॥मन्त्र ३ ।

व॒यमे॑नमि॒दा ह्योपी॑पेमे॒ह व॒ज्रिण॑म् । तस्मा॑ उ अ॒द्य सम॒ना सु॒तं भ॒रा नू॒नं भू॑षत श्रु॒ते ॥ १ ॥

वृक॑श्चिदस्य वार॒ण उ॑रा॒मथि॒रा व॒युने॑षु भूषति । सेमं न॒ः स्तोमं॑ जुजुषा॒ण आ ग॒हीन्द्र॒ प्र चि॒त्रया॑ धि॒या ॥ २ ॥

कदु॒ न्व॑श्॒स्याकृ॑त॒मिन्द्र॑स्यास्ति॒ पौंस्य॑म् । केनो॒ नु कं॒ श्रोम॑तेन॒ न
शुं॑श्रुवे ज॒नुषः॒ परि॑ वृत्र॒हा ॥ ३ ॥ [९।१]

* * *

सूक्त ९८

ऋषिः— शयुः ॥ देवता — इन्द्रः ॥ छन्दः— बार्हतः प्रगाथः बृ० + स० बृ० । मन्त्र २ ।

त्वामिद्धि हवा॑महे साता वाज॑स्य का॒रवः॑ । त्वां वृ॒त्रेष्वि॑न्द्र॒ सत्प॑तिं॒
नर॒स्त्वां काष्ठा॒स्वर्व॑तः ॥ १ ॥
स त्वं न॑श्चित्र वज्रहस्त धृष्णु॒या म॒ह स्तवा॒नो अ॑द्रिवः । गाम॑श्वं॑
र॒थ्य॑मिन्द्र॒ सं कि॑र स॒त्रा वाजं॒ न जि॒ग्युषे॑ ॥ २ ॥ [९।२]

—:o:—

सूक्त ९९

ऋषिः—मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः बृ० + स० बृ० ॥ मन्त्र २ ।

अ॒भि त्वा॑ पू॒र्वपी॑तय॒ इन्द्र॒ स्तोमे॑भिरा॒यवः॑ । स॒मी॒ची॒नास॑ ऋ॒भवः॒
समं॑स्वरन् रु॒द्रा गृ॑णन्त॒ पूर्व्य॑म् ॥ १ ॥
अ॒स्येदिन्द्रो॑ वावृधे॒ वृष्ण्यं॒ शवो॒ मदे॑ सु॒तस्य॒ विष्ण॑वि । अ॒द्या तम॑स्य
महि॒मान॑मा॒यवोऽनु॑ ष्टुवन्ति पू॒र्वथा॑ ॥ २ ॥ [९।३]

—:o:—

सूक्त १००

ऋषिः— नृमेधः ॥ देवता — इन्द्रः ॥ छन्दः— उष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

अधा॒ ही॑न्द्र गिर्वण॒ उप॑ त्वा॒ कामा॑न् म॒हः स॑मृ॒ज्महे॑ । उ॒देव॒ यन्त॑
उ॒दभिः॑ ॥ १ ॥
वार्ण॒ त्वा॑ य॒व्याभि॒र्वर्ध॑न्ति शूर॒ ब्रह्मा॑णि । वा॒वृ॒ध्वांसं॑ चिदद्रिवो
दि॒वेदि॑वे ॥ २ ॥

यु॒ञ्जन्ति॒ हरी॑ इषि॒रस्य॒ गाथ॑यो॒रौ रथ॑ उ॒रुयु॑गे । इ॒न्द्र॒वाहा॑ वचो॒युजा॑
॥ ३ ॥ [६।४]

—:o:—

सूक्त १०१

ऋषिः—मेध्यातिथिः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒ग्निं दू॒तं वृ॑णीमहे॒ होता॑रं वि॒श्ववे॑दसम् । अ॒स्य य॒ज्ञस्य॑ सु॒क्रतु॑म् ॥१॥
अ॒ग्निम॑ग्नि॒ हवी॑मभिः॒ सदा॑ हवन्त वि॒श्पति॑म् । ह॒व्य॒वाहं॑ पुरुप्रि॒यम् २
अग्ने॑ दे॒वाँ इ॒हा वह जज्ञा॒नो वृ॒क्तब॑र्हिषे । असि॒ होता॑ न॒ ईड्यः ॥३॥

—:o:—

सूक्त १०२

ऋषिः—विश्वामित्रः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

ई॒लेन्यो॑ नम॒स्य∫स्ति॒रस्तमाँ॑सि दर्श॒तः । सम॒ग्निरि॑ध्यते॒ वृषा॑ ॥ १ ॥
वृषो॑ अ॒ग्निः समि॑ध्य॒तेऽश्वो॒ न दे॑व॒वाह॑नः । तं ह॒विष्म॑न्त ईलते ॥ २ ॥
वृष॑णं त्वा व॒यं वृ॑षन् वृष॑णः॒ समि॑धीमहि । अग्ने॒ दीद्य॑तं बृ॒हत् ॥ ३ ॥
[६।६]

—:o:—

सूक्त १०३

ऋषिः—१ सुदीतिपुरुमीढौ; २, ३ भर्गः ॥ देवता—अग्निः ॥ छन्दः—१, २ बृहती
३ सतोबृहती ॥ मन्त्र ३ ।

अ॒ग्निमी॑लि॒ष्वाव॑से॒ गाथा॑भिः शी॒रशो॑चिषम् । अ॒ग्निं रा॒ये पु॑रुमीढ श्रु॒तं
नरो॒ऽग्निं सु॑दी॒तये॑ छ॒र्दिः ॥ १ ॥
अग्न॒ आ या॑ह्य॒ग्निभि॒र्होता॑रं त्वा वृणीमहे । आ त्वाम॑नक्तु॒ प्रय॑ता
ह॒विष्म॑ती॒ यजिष्ठं ब॒र्हिरा॒सदे॑ ॥ २ ॥

अच्छा॒ हि त्वा॑ सहसः सूनो अङ्गि॒रः स्रुच॒श्चर॑न्त्यध्व॒रे । ऊ॒र्जो नपा॑तं
घृ॒तके॑शमीमहे॒ऽग्निं य॒ज्ञेषु॑ पू॒र्व्यम् ॥ ३ ॥ [९।७]

—:०:—

सूक्त १०४

ऋषिः—१, २ मेध्यातिथिः, ३, ४ नृमेधः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः–वार्हतः प्रगाथः (विषमा—बृहती+समा—सतोबृहती) ॥ मन्त्र ४ ।

इ॒मा उ॑ त्वा पुरूवसो॒ गिरो॑ वर्धन्तु॒ या मम॑ । पा॒व॒कव॑र्णा॒ः शुच॑यो
विप॒श्चितो॒ऽभि स्तोमै॑रनूषत ॥ १ ॥
अ॒यं स॒हस्र॒मृषि॑भि॒ः सह॑स्कृतः समु॒द्र इ॑व पप्रथे । स॒त्यः सो अ॑स्य
महि॒मा गृ॑णे॒ शवो॑ य॒ज्ञेषु॑ विप्र॒राज्ये ॥ २ ॥
आ नो॒ विश्वा॑सु॒ हव्य॒ इन्द्रः॑ स॒मत्सु॑ भूषतु । उप॒ ब्रह्मा॑णि॒ सव॑नानि
वृ॒त्र॒हा प॑रम॒ज्या ऋची॑षमः ॥ ३ ॥
त्वं दा॒ता प्र॑थ॒मो राध॑साम॒स्यसि॑ स॒त्य ई॑शान॒कृत् । तु॒वि॒द्यु॒म्नस्य॒ युज्या
वृ॑णीमहे पु॒त्रस्य॒ शव॑सो म॒हः ॥ ४ ॥ [९ ८]

—:०:—

सूक्त १०५

ऋषिः— १, ३ नृमेधः; ४, ५ पुरुहन्मा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, २, ४, ५ बार्हतः प्रगाथः (१, ४ बृहती २, ५ सतोबृहती); ३ बृहती ॥ मन्त्र ५ ।

त्वमि॑न्द्र॒ प्रतू॑र्तिष्व॒भि विश्वा॑ असि॒ स्पृधः॑ । अ॒श॒स्ति॒हा ज॑नि॒ता
वि॑श्व॒तूर॑सि॒ त्वं तू॑र्य तरुष्य॒तः ॥ १ ॥
अनु॑ ते॒ शुष्मँ॑ तु॒रय॑न्तमीयतुः क्षो॒णी शिशु॒ं न मा॒तरा॑ । विश्वा॑स्ते॒
स्पृधः॑ श्नथयन्त म॒न्यवे॑ वृ॒त्रं यदि॑न्द्र॒ तूर्व॑सि ॥ २ ॥

इ॒त ऊ॒ती वो॑ अ॒जरं᳚ प्रहे॒तार॒मप्र॑हितम्। आ॒शुं जेता॑रं॒ हेता॑रं र॒थीत॑म॒मतू॑र्तं तुग्र्या॒वृध॑म् ॥ ३ ॥

यो राजा॑ चर्ष॑णी॒नां याता॒ रथे॑भि॒रध्रि॑गुः। विश्वा॑सां तरु॒ता पृत॑नानां॒ ज्येष्ठो॒ यो वृ॑त्र॒हा गृ॒णे ॥ ४ ॥

इन्द्र॒ तं शु॑म्भ पुरुहन्म॒न्नव॑से॒ यस्य॑ द्वि॒ता वि॑ध॒र्तरि॑। हस्ता॑य॒ वज्रः॒ प्रति॑ धायि दर्श॒तो म॒हो दि॒वे न सूर्य॑ः ॥ ५ ॥ [९।९]

—:o:—

सूक्त १०६

ऋषिः—गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

तव॒ त्यदि॑न्द्रि॒यं बृ॒हत् तव॒ शुष्म॑मु॒त क्रतु॑म्। वज्रं᳚ शिशाति धि॒षणा॒ वरे॑ण्यम् ॥ १ ॥

तव॒ द्यौरि॑न्द्र॒ पौंस्यं᳚ पृथि॒वी वर्ध॑ति॒ श्रव॑ः। त्वामा॒पः पर्व॑तासश्च हिन्विरे ॥ २ ॥

त्वां विष्णु॑र्बृ॒हन् क्षयो᳚ मि॒त्रो गृ॑णाति॒ वरु॑णः। त्वां शर्धो᳚ मद॒त्यनु॒ मारु॑तम् ॥ ३ ॥ [९।१०]

—:o:—

सूक्त १०७

ऋषिः—१—३ वत्सः; ४—१२ बृहद्दिवोऽथर्वा; १३, १४ ब्रह्मा; १५ कुत्सः ॥ देवता—१—१२ इन्द्रः; १३—१५ सूर्यः ॥ छन्दः—१—३ गायत्री; ४—१२ १४, १५ त्रिष्टुप्; १३ आर्षी पङ्क्तिः ॥ मन्त्र १५ ।

सम॑स्य म॒न्यवे॒ विशो॒ विश्वा॑ नमन्त कृ॒ष्टय॑ः। स॒मु॒द्राये॑व॒ सिन्ध॑वः ।१।

ओज॒स्तद॑स्य तित्विष उ॒भे यत् स॒मव॑र्तयत् । इन्द्र॒श्चर्मे॑व॒ रोद॑सी ॥ २ ॥

वि चि॑द् वृ॒त्रस्य॒ दोध॑तो॒ वज्रे॑ण श॒तप॑र्वणा । शिरो॑ बिभेद वृ॒ष्णिना॑ ।३।

तदिदा॑स॒ भुव॑नेषु॒ ज्येष्ठं॒ यतो॑ ज॒ज्ञ उ॒ग्रस्त्वे॒षनृ॑म्णः । स॒द्यो ज॑ज्ञा॒नो नि
रि॑णाति॒ शत्रू॒ननु॒ यदे॑नं॒ मद॑न्ति॒ विश्व॒ ऊमाः॑ ॥ ४ ॥

वा॒वृ॒धा॒नः शव॑सा॒ भूर्यो॑जाः॒ शत्रु॑र्दा॒साय॑ भि॒यसं॑ दधाति । अव्य॑नच्च
व्य॒नच्च॒ सस्नि॒ सं ते॑ नवन्त॒ प्रभृ॑ता॒ मदे॑षु ॥ ५ ॥

त्वे क्रतु॒मपि॑ पृञ्चन्ति॒ भूरि॒ द्विर्यदे॒ते त्रिर्भव॒न्त्यूमाः॑ । स्वा॒दोः
स्वादी॑यः स्वा॒दुना॑ सृजा॒ सम॒दः सु मधु॒ मधु॑ना॒भि यो॑धीः ॥ ६ ॥

यदि॑ चि॒न्नु त्वा॒ धना॒ जय॑न्तं॒ रणे॑रणे अनु॒मद॑न्ति॒ विप्राः॑ । ओजी॑यः
शुष्मिन्त्स्थ॒रमा त॑नुष्व॒ मा त्वा॑ दभन् दु॒रेवा॑सः क॒शोकाः॑ ॥ ७ ॥

त्वया॑ व॒यं शा॑शद्महे॒ रणे॑षु प्र॒पश्य॑न्तो यु॒धेन्या॑नि॒ भूरि॑ । चो॒दया॑मि त॒
आयु॑धा॒ वचो॑भिः॒ सं ते॑ शिशामि॒ ब्रह्म॑णा॒ वयां॑सि ॥ ८ ॥

नि तद् द॑धि॒षेऽव॑रे॒ परे॑ च॒ यस्मि॒न्नावि॒थाव॑सा दु॒रोणे॑ । आ स्था॑पयत
मा॒तरं॑ जिग॒त्नुमत॑ इन्वत॒ कर्व॑राणि॒ भूरि॑ ॥ ९ ॥

स्तुष्व॑ वर्ष्मन् पुरु॒वर्त्मा॑नं॒ समृभ्वा॑णमि॒नत॑ममा॒प्तमा॒प्त्याना॑म् । आ
द॑र्शति॒ शव॑सा॒ भूर्यो॑जाः॒ प्र स॑क्षति प्रति॒मानं॑ पृथि॒व्याः ॥ १० ॥

इ॒मा ब्रह्म॑ बृ॒हद्दि॑वः कृणव॒दिन्द्रा॑य शू॒षम॑ग्रि॒यः स्व॒र्षाः । म॒हो गो॒त्रस्य॑
क्षयति स्व॒राजा॒ तुर॑श्चि॒द् विश्व॑मर्णव॒त् तप॑स्वान् ॥ ११ ॥

ए॒वा म॒हान् बृ॒हद्दि॑वो॒ अथ॒र्वावो॑च॒त् स्वां त॒न्व॑१मिन्द्र॑मे॒व । स्वसा॑रौ मा॒तरि॒भ्व॑री अरि॒प्रे हि॒न्वन्ति॑ चैने॒ शव॑सा व॒र्धय॑न्ति च ॥ १२ ॥

चि॒त्रं दे॒वानां॑ के॒तुरनी॑कं॒ ज्योति॑ष्मान् प्र॒दिशः॒ सूर्य॑ उ॒द्यन् । दि॒वा॒क॒रोऽति॑ द्यु॒म्नैस्तमां॑सि॒ विश्वा॑तारीद् दुरि॒तानि॑ शु॒क्रः ॥ १३ ॥

चि॒त्रं दे॒वाना॒मुद॑गा॒दनी॑कं॒ चक्षु॑र्मि॒त्रस्य॒ वरु॑णस्या॒ग्नेः । आप्रा॒द् द्यावा॑पृथि॒वी अ॒न्तरि॑क्षं॒ सूर्य॑ आ॒त्मा जग॑तस्त॒स्थुष॑श्च ॥ १४ ॥

सूर्यो॑ दे॒वीमु॒षसं॒ रोच॑माना॒ं मर्यो॒ न योषा॑म॒भ्ये॑ति प॒श्चात् । यत्रा॒ नरो॑ देव॒यन्तो॑ यु॒गानि॑ वितन्व॒ते प्रति॑ भ॒द्राय॑ भ॒द्रम् ॥ १५ ॥ [६।११]

—:०:—

सूक्त १०८

ऋषिः—नृमेधः ॥ देवता— इन्द्रः ॥ छन्दः—१ गायत्री ॥ २ ककुबुष्णिक्, ३ पुरउष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

त्वं न॑ इन्द्रा भ॑रँ॒ ओजो॑ नृ॒म्णं श॑तक्रतो विचर्षणे । आ वी॒रं पृ॑तना॒षह॑म् ॥ १ ॥

त्व हि नः॑ पि॒ता व॑सो॒ त्वं मा॒ता श॑तक्रतो ब॒भूवि॑थ । अधा॑ ते सु॒म्नमी॑महे ॥ २ ॥

त्वां शु॑ष्मिन् पुरुहूत वाज॒यन्त॒मुप॑ ब्रुवे शतक्रतो । स नो॑ रास्व सु॒वीर्य॑म् ॥ ३ ॥ [६।१२]

—:०:—

सूक्त १०९

ऋषिः—गोतमः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—पङ्क्तिः ॥ मन्त्र ३ ।

स्वा॒दोरि॒त्था वि॑षू॒वतो॒ मध्वः॑ पिबन्ति गौ॒र्यः॑ । या इन्द्रे॑ण स॒याव॑री॒र्वृष्णा॒ मद॑न्ति शो॒भसे॒ वस्वी॒रनु॑ स्व॒राज्य॑म् ॥ १ ॥

ता अ॑स्य पृश॒नायु॑वः॒ सोम᳚ श्रीणन्ति॒ पृश्न॑यः । प्रि॒या इन्द्र॑स्य धे॒नवो॒ वज्र॑म् हिन्वन्ति॒ साय॑कं॒ बस्वी॒रनु॑ स्व॒राज्य॑म् ॥ २ ॥

ता अ॑स्य॒ नम॑सा॒ सहः॑ सप॒र्यन्ति॒ प्रचे॑तसः । व्र॒तान्य॑स्य सश्चिरे पु॒रूणि॑ पू॒र्वचि॑त्तये॒ वस्वी॒रनु॑ स्व॒राज्य॑म् ॥ ३ ॥ [९।१३]

—:०:—

सूक्त ११०

ऋषिः—श्रुतकक्षः सुकक्षो वा ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

इन्द्रा॑य॒ मद्व॑ने सु॒तं परि॑ ष्टोभन्तु नो॒ गिरः॑ । अ॒र्कम॑र्चन्तु का॒रवः॑ ॥१॥

यस्मि॒न् विश्वा॒ अधि॒ श्रियो॒ रण॑न्ति स॒प्त सं॒सदः॑ । इन्द्र᳚ सु॒ते ह॑वामहे ॥ २ ॥

त्रिक॑द्रुकेषु॒ चेत॑नं दे॒वासो॑ य॒ज्ञम॑त्न॒त । तमिद् व॑र्धन्तु नो॒ गिरः॑ ॥३॥ [९।१४]

—:०:—

सूक्त १११

ऋषिः—पर्वतः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—उष्णिक् ॥ मन्त्र ३ ।

यत् सोम॑मिन्द्र॒ विष्ण॑वि॒ यद्वा॑ घ त्रि॒त आ॒प्त्ये । यद्वा॑ म॒रुत्सु॒ मन्द॑से॒ समिन्दु॑भिः ॥ १ ॥

यद्वा॑ शक्र परा॒वति॑ समु॒द्रे अधि॒ मन्द॑से । अ॒स्माक॒मित् सु॒ते र॑णा॒ समिन्दु॑भिः ॥ २ ॥

यद्वासि॑ सुन्वतो वृ॒धो यज॑मानस्य सत्पते । उ॒क्थे वा॒ यस्य॒ रण्य॑सि॒
समिन्दु॑भिः ॥ ३ ॥ [९।१५]

—:०:—

सूक्त ११२

ऋषिः — सुकक्षः ॥ देवता — इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३।

यद्॒य कच्च॑ वृ॒त्रहन्नु॒दगा॑ अ॒भि सू॑र्य । सर्वँ॒ तदि॑न्द्र ते॒ वशे॑ ॥ १ ॥
यद्वा॑ प्रवृ॒द्ध सत्पते॒ न म॑रा॒ इति॒ मन्य॑से । उ॒तो तत् स॒त्यमित् तव॑ ।२।
ये सोमा॑सः परा॒वति॒ ये अ॑र्वा॒वति॑ सुन्वि॒रे । सर्वा॒ंस्ताँ इन्द्र गच्छसि
॥ ३ ॥ [९।१६]

—:०:—

सूक्त ११३

ऋषिः—भर्गः । देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती) ॥
मन्त्र २ ।

उभय॑ँ शृ॒णव॑च्च न॒ इन्द्रो॑ अ॒र्वागि॒दं वच॑ः । स॒त्राच्या॑ म॒घवा॒ सोम॑पीतये
धि॒या शवि॑ष्ठ॒ आ ग॑मत् ॥ १ ॥
तं हि स्व॒राज॑ँ वृ॒ष॒भं तमोज॑से धि॒षणे॑ निष्टत॒क्षतुः । उ॒तोप॒मानाँ॑ प्रथ॒मो
नि षी॑दसि॒ सोम॑कामं॒ हि ते॒ मन॑ः ॥ २ ॥ [९।१७]

—:०:—

सूक्त ११४

ऋषिः—सौभरिः ॥ देवता — इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र २ ।

अ॒भ्रा॒तृ॒व्यो अना॒ त्वमना॑पिरिन्द्र ज॒नुषा॑ स॒नाद॑सि । यु॒धेदा॑पि॒त्व-
मि॑च्छसे ॥ १ ॥

नकीं रे॒वन्तं॑ स॒ख्याय॑ विन्दसे॒ पीय॑न्ति ते सु॒राश्व॑: । य॒दा कृ॒णोषि
न॒दनुं॑ समू॑ह॒स्यादित् पि॒तेव॑ हूयसे ॥ २ ॥ [६।१८]

—:०:—

सूक्त ११५

ऋषिः—वत्सः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—गायत्री ।। मन्त्र ३ ।

अ॒हमिद्धि पि॒तुष्परि॑ मे॒धामृ॒तस्य॑ ज॒ग्रभ॑ । अ॒हं सूर्य॑ इवाजनि ॥ १ ॥
अ॒हं प्र॒त्नेन॒ मन्म॑ना॒ गिर॑: शुम्भामि कण्व॒वत् । येनेन्द्र॒: शुष्म॒मिद्
द॒धे ॥ २ ॥
ये त्वामि॑न्द्र॒ न तु॑ष्टु॒वुरृष॑यो॒ ये च॑ तुष्टु॒वुः । ममेद्व॑र्धस्व॒ सुष्टु॑तः ॥३॥
[६।१९]

—:०:—

सूक्त ११६

ऋषिः—मेध्यातिथिः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—बृहती ।। मन्त्र २ ।

मा भू॑म॒ निष्ट्या॑ इ॒वेन्द्र॒ त्वद॑रणा इव । वना॑नि॒ न प्र॑जहि॒तान्य॑द्रिवो
दुरोषा॑सो अमन्महि ॥ १ ॥
अम॑न्म॒हीद॑ना॒शवो॑ऽनु॒ग्रास॑श्च वृत्रहन् । स॒कृत् सु ते॑ मह॒ता शू॑र॒
राध॑सा॒नु स्तोम॑ मुदीमहि ॥ २ ॥ [६।२०]

—:०:—

सूक्त ११७

ऋषिः—वसिष्ठः ।। देवता—इन्द्रः ।। छन्दः—विराट् [त्रिपदा गायत्री] ।। मन्त्र ३ ।

पिबा॒ सोम॑मिन्द्र॒ मन्द॑तु त्वा॒ यं ते॑ सुषाव॑ हर्य॒श्वाद्रि॑: । सो॒तुर्बा॒हुभ्यां॒
सुय॑तो॒ नार्वा॑ ॥ १ ॥

यस्ते॒ मदो॒ युज्य॒श्चारु॒रस्ति॒ येन॑ वृ॒त्राणि॑ हर्यश्व॒ हंसि॑। स त्वामि॑न्द्र प्रभूवसो ममत्तु ॥ २ ॥

बोधा॒ सु मे॑ मघव॒न् वाच॒मेमां॑ यां॑ ते॒ वसि॑ष्ठो॒ अर्च॑ति॒ प्रश॑स्तिम्। इ॒मा ब्रह्म॑ सध॒मादे॑ जुषस्व ॥ ३ ॥ [९।२१]

—:०:—

सूक्त ११८

ऋषिः—१—२ भर्गः; ३, ४ मेध्यातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (विषमा—बृहती + समा – सतोबृहती) ॥ मन्त्र ४।

श॒ग्ध्यू॒३षु शची॑पत॒ इन्द्र॒ विश्वा॑भिरू॒तिभिः॑। भग॒ं न हि त्वा॑ य॒शसं॑ वसु॒विद॒मनु॑ शूर॒ चरा॑मसि ॥ १ ॥

पौ॒रो अश्व॑स्य पुरु॒कृद् गवा॑म॒स्युत्सो॑ देव हिर॒ण्ययः॑। नकि॒र्हि दानं॑ परि॒मर्धि॑ष॒त् त्वे यद्य॒द्यामि॒ तदा भ॑र ॥ २ ॥

इन्द्र॒मिद् दे॒वता॑तय॒ इन्द्रं॑ प्रय॒त्य॑ध्व॒रे। इन्द्रं॑ समी॒के व॒निनो॑ हवामह॒ इन्द्र॒ं धन॑स्य सा॒तये॑ ॥ ३ ॥

इन्द्रो॑ म॒ह्ना रोद॑सी पप्रथ॒च्छव॒ इन्द्र॒ः सूर्य॑मरोचयत्। इन्द्रे॑ ह॒ विश्वा॒ भुव॑नानि येमिर॒ इन्द्रे॑ सुवा॒नास॒ इन्द॑वः ॥ ४ ॥ [९।२२]

—:०:—

सूक्त ११९

ऋषिः—१ आयुः; २ श्रुष्टिगुः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती + सतोबृहती) ॥ मन्त्र २।

अस्ता॑वि॒ मन्म॑ पू॒र्व्यं ब्रह्मेन्द्रा॑य वोचत। पू॒र्वीर्ऋ॒तस्य॑ बृह॒तीर॑नूषत स्तो॒तुर्मे॒धा अ॑सृक्षत ॥ १ ॥

तु॒र॒ण्यवो॒ मधु॑मन्तं घृत॒श्चुतं॒ विप्रा॑सो अ॒र्कमा॑नृचुः । अ॒स्मे र॒यिः प॑प्रथे॒
वृष्ण्यं॒ शवो॒ऽस्मे सु॑वा॒नास॒ इन्द॑वः ॥ २ ॥ [६।२३]

—:०:—

सूक्त १२०

ऋषिः—देवातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती) ॥
मन्त्र २ ।

यदि॑न्द्र॒ प्रागपा॒गुद॒ङ्न्य॑ग्वा हू॒यसे॒ नृभिः॑ । सिमा॑ पु॒रू नृषू॑तो
अ॒स्यान॒वेऽसि॑ प्रशर्ध तु॒र्वशे॑ ॥ १ ॥
यद्वा॒ रुमे॒ रुश॑मे॒ श्याव॑के॒ कृप॒ इन्द्र॑ मा॒दय॑से॒ सचा॑ । कण्वा॑सस्त्वा॒
ब्रह्म॑भि॒ स्तोम॑वाहस॒ इन्द्रा य॑च्छ॒न्त्या ग॑हि ॥ २ ॥ [६।२४]

—:०:—

सूक्त १२१

ऋषिः—देवातिथिः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—बार्हतः प्रगाथः (बृहती+सतोबृहती ॥
मन्त्र २ ।

अ॒भि त्वा॑ शूर नोनु॒मोऽदु॑ग्धा इव धे॒नवः॑ । ईशा॑नम॒स्य जग॑तः स्व॒र्दृश॒मीशा॑नमिन्द्र त॒स्थुषः॑ ॥ १ ॥ (ऋ० ८।३२।२२)
न त्वावाँ॑ अ॒न्यो दि॒व्यो न पार्थि॑वो न जा॒तो न ज॑निष्यते । अ॒श्वा॒यन्तो॑ मघवन्निन्द्र वा॒जिनो॑ ग॒व्यन्त॑स्त्वा हवामहे ॥ २ ॥ [६।२५]

—:०:—

सूक्त १२२

ऋषिः—शुनःशेषः ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

रे॒वती॑र्नः सध॒माद॒ इन्द्रे॑ सन्तु तु॒विवा॑जाः । क्षु॒मन्तो॒ याभि॒र्मदे॑म ॥१॥
आ घ॒ त्वावा॒न् त्मना॒प्त स्तो॒तृभ्यो॑ धृष्णविया॒नः । ऋ॒णोरक्षं॑ न
च॒क्र्योः॑ ॥ २ ॥ (ऋ० १।३०।१३-१५)

आ य॑द् दुव॑ः शतक्रत॒वा का᳚मं जरितॄ॒णाम् । ऋ॒णोरक्ष॒ं न शची॑भिः ॥ ३ ॥ [६।२६]

—:०:—

सूक्त १२३

ऋषिः—कुत्सः ॥ देवता सूर्यः ॥ छन्दः—त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र २ ।

तत् सूर्य॑स्य देव॒त्वं तन्म॑हि॒त्वं म॒ध्या कर्तो॒र्वित॑तं॒ सं ज॑भार । य॒देदयु॑क्त ह॒रित॑ः स॒धस्था॒दाद्रात्री॒ वास॑स्तनुते सि॒मस्मै᳚ ॥१॥ (ऋ० १।११५।४)
तन्मि॒त्रस्य॒ वरु॑णस्याभि॒चक्षे॒ सूर्यो᳚ रू॒पं कृ॑णुते॒ द्योरु॒पस्थे᳚ । अ॒न॒न्तम॒न्यद् रुश॑दस्य॒ पाज॑ः कृ॒ष्णम॒न्यद्ध॒रित॒ः सं भ॑रन्ति ॥ २ ॥ [६।२७]

—:०:—

सूक्त १२४

ऋषिः—१—३ वामदेवः; [४—६ भुवनः] ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः—१, २ गायत्री; ३ पादनिचृद् गायत्री; [४—६ त्रिष्टुप्] मन्त्र ६ ।

कया॑ नश्चि॒त्र आ भु॑वदू॒ती स॒दावृ॑ध॒ः सखा॑ । कया॒ शचि॑ष्ठया वृ॒ता ।१।
कस्त्वा॑ स॒त्यो मदा॑नां॒ मंहि॑ष्ठो मत्स॒दन्ध॑सः । दृ॒ढा चि॑दा॒रुजे॒ वसु॑ ॥२॥
अभी षु ण॒ः सखी॑नामवि॒ता ज॑रितॄ॒णाम् । श॒तं भ॑वास्यू॒तिभि॑ः ॥ ३ ॥
इ॒मा नु कं॒ भुव॑ना सीषधा॒मेन्द्र॑श्च॒ विश्वे᳚ च दे॒वाः । य॒ज्ञं च॑ नस्त॒न्वं॑ च प्र॒जां चा॑दि॒त्यैरिन्द्र॑ः स॒ह ची॑क्लृपाति ॥ ४ ॥
आ॒दि॒त्यैरिन्द्र॒ः सग॑णो म॒रुद्भि॑र॒स्माकं᳚ भूत्ववि॒ता त॒नूना॑म् । ह॒त्वाय॑ दे॒वा असु॑रा॒न् यदाय॑न् दे॒वा दे॑व॒त्वम॑भि॒रक्ष॑माणाः ॥ ५ ॥
प्र॒त्यञ्च॑म॒र्कम॑नय॒ञ्छची॑भि॒रादित् स्व॒धामि॑षि॒रां पर्य॑पश्यन् । अ॒या वाजं᳚ दे॒वहि॑तं सनेम॒ मदम श॒तहि॑माः सु॒वीरा॑ः ॥ ६ ॥ [६।२८]

—:०:—

सूक्त १२५

ऋषिः—सुकीर्तिः ॥ देवता—१—३, ६, ७ इन्द्रः; ४, ५ अश्विनौ ॥ छन्दः—१—३, ५—७ त्रिष्टुप्; ४ अनुष्टुप् ॥ मन्त्र ७ ।

अपे॑न्द्र॒ प्राचो॑ मघवन्न॒मित्रा॒नपापा॑चो अभिभूते नुदस्व । अपोदी॑चो॒
अप॑ शूराध॒रा॑च उ॒रौ यथा॒ तव॒ शर्म॒न् मदे॑म ।१। (ऋ० १०।१३१।६-७)

कु॒विद॒ङ्ग यव॑मन्तो॒ यवं॑ चि॒द् यथा॒ दान्त्य॑नुपू॒र्वं वि॒यूय॑ । इ॒हेहै॑षां
कृणुहि॒ भोज॑नानि॒ ये ब॒र्हिषो॒ नमो॑वृक्ति॒ न ज॒ग्मुः ॥ २ ॥

न॒हि स्थूर्यृ॑तु॒था या॒तमस्ति॒ नोत श्रवो॑ विविदे संग॒मेषु॑ । ग॒व्यन्त॒ इन्द्रं॑
स॒ख्याय॒ विप्रा॑ अश्वा॒यन्तो॒ वृष॑णं वा॒जय॑न्तः ॥ ३ ॥

यु॒वं सु॒राम॑मश्विना॒ नमु॑चावासु॒रे सचा॑ । वि॒पि॒पा॒ना शु॑भस्पती॒ इन्द्रं॒
कर्म॑स्वावतम् ॥ ४ ॥

पु॒त्रमि॑व पि॒तरा॑व॒श्विनो॒भेन्द्रा॒वथुः॒ काव्यै॑र्द॒ंसना॑भिः । यत् सु॒राम॒ं
व्यपि॑बः॒ शची॑भिः॒ सर॑स्वती त्वा मघवन्नभिष्णक् ॥ ५ ॥

इन्द्रः॑ सु॒त्रामा॒ स्ववाँ॒ अवो॑भिः सुमृडी॒को भव॑तु वि॒श्ववे॑दाः । वाध॑तां॒
द्वेषो॒ अभ॑यं नः कृणोतु सु॒वीर्य॑स्य॒ पत॑यः स्याम ॥ ६ ॥

स सु॒त्रामा॒ स्ववाँ॒ इन्द्रो॑ अ॒स्मदा॒राच्चि॒द् द्वेषः॑ सनु॒तर्यु॑योतु । तस्य॑ व॒यं
सु॑म॒तौ य॒ज्ञिय॒स्यापि॑ भ॒द्रे सौ॑मन॒से स्या॑म ॥ ७ ॥ [९।२९]

—:o:—

सूक्त १२६

ऋषिः—वृषाकपिरिन्द्राणी च ॥ देवता—इन्द्रः ॥ छन्दः – पङ्क्तिः ॥ मन्त्र २३ ।

वि हि सोतो॒रसृ॑क्षत॒ नेन्द्रं॑ दे॒वमं॑मंसत । यत्राम॑दद् वृ॒षाक॑पिर॒र्यः पु॒ष्टेषु॒
मत्स॑खा॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १ ॥ (ऋ० १०।८६।१-२३)

प॒रा हीन्द्र॒ धाव॑सि वृ॒षाक॑पे॒रति॒ व्यथि॑ः । नो अह॒ प्र वि॑न्दस्य॒न्यत्र॒
सोम॑पीतये॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ २ ॥
किम॒यं त्वां वृ॒षाक॑पिश्च॒कार॒ हरि॑तो मृ॒गः । यस्मा॑ इर॒स्यसीदु॒ न्व॑र्यो
वा॑ पुष्टि॒मद्॒ वसु॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ३ ॥
यमि॒मं त्वं वृ॒षाक॑पिं प्रि॒यमि॑न्द्राभि॒रक्ष॑सि । श्वा न्व॑स्य जम्भिष॒दपि॒
कर्णे॑ वराह॒युर्विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ४ ॥
प्रि॒या त॒ष्टानि॑ मे क॒पिर्व्य॑क्ता॒ व्यऽदूदुषत् । शिरो॒ न्वऽस्य राविषं॒ न
सु॒गं दु॒ष्कृते॑ भुवं॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ५ ॥ ऋ० १०।८६।५)
न मत्स्त्री सु॑भ॒सत्त॑रा॒ न सु॒याशु॑तरा भुवत् । न मत् प्रति॑च्यवीयसी॒ न
सक्थ्युद्य॑मीयसी॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ६ ॥
उ॒वे अ॑म्ब सुलाभिके॒ यथे॑वा॒ङ्ग भ॑वि॒ष्यति॑ । भ॒सन्मे॑ अम्ब॒ सक्थि॑ मे॒
शिरो॑ मे॒ वीऽव हृष्यति॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ७ ॥
किं सु॑बाहो स्वङ्गुरे॒ पृथु॑ष्टो॒ पृथु॑जाघने । किं शू॑रपत्नि न॒स्त्वम॒भ्यऽ
मीषि वृ॒षाक॑पिं॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ८ ॥
अ॒वीरा॑मिव॒ माम॒यं श॒रारु॑र॒भि म॑न्यते । उ॒ताहम॑स्मि वी॒रिणीन्द्र॑पत्नी
म॒रुत्स॑खा॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ९ ॥ (ऋ० १०।८६।९)
सं॒हो॒त्रं स्म॑ पु॒रा नारी॒ सम॑नं॒ वाव॑ गच्छति । वे॒धा ऋ॒तस्य॑ वी॒रिणीन्द्र॑-
पत्नी महीयते॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १० ॥
इ॒न्द्रा॒णीमा॒सु नारि॑षु सु॒भगा॑म॒हम॑श्रवम् । न॒ह्यऽस्या अप॒रं च॒न ज॒रसा॒
मर॑ते॒ पति॒र्विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ ११ ॥ (ऋ० १०।८६।११)

ना॒हमि॑न्द्राणि रारण॒ सख्यु॑र्वृ॒षाक॑पेर्ऋ॒ते । यस्ये॒दमप्यँ॑ ह॒विः प्रि॒यं दे॒वेषु॒
गच्छ॑ति॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १२ ॥ (ऋ० १०।८६।१२)
वृषा॑कपायि॒ रेव॑ति॒ सुपु॑त्र॒ आदु॒ सुस्नु॑षे । घस॑त् त॒ इन्द्र॑ उ॒क्षणः॑ प्रि॒यं
का॑चित्क॒रं ह॒विर्विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १३ ॥ (ऋ० १०।८६।१३)
उ॒क्ष्णो हि मे॒ पञ्च॑दश सा॒कं पच॑न्ति विंश॒तिम् । उ॒ताहम॑द्मि॒ पीव॒
इदु॒भा कु॒क्षी पृ॑णन्ति मे॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १४ ॥
वृ॒ष॒भो न ति॒ग्मशृ॑ङ्गो॒ऽन्तर्यू॒थेषु॒ रोरु॑वत् । म॒न्थस्त॑ इन्द्र॒ शं हृ॒दे यं ते॑
सु॒नोति॑ भाव॒युर्विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥१५॥
न सेशे॒ यस्य॒ रम्ब॑तेऽन्त॒रा स॒क्थ्या॒३ कपृ॑त् । सेदी॑शे॒ यस्य॑ रोम॒शं
नि॑षे॒दुषो॑ वि॒जृम्भ॑ते॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १६ ॥
न सेशे॒ यस्य॑ रोम॒शं नि॑षे॒दुषो॑ वि॒जृम्भ॑ते॒ । सेदी॑शे॒ यस्य॒
रम्ब॑तेऽन्त॒रा स॒क्थ्या॒३ कपृ॒द् विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १७ ॥
अ॒यमि॑न्द्र वृ॒षाक॑पिः॒ पर॑स्वन्तं ह॒तं वि॑दत् । अ॒सिं सू॒नां नवँ॑ च॒रुमा-
देध॒स्यान॒ आचि॑तं॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १८ ॥
अ॒यमे॑मि वि॒चाक॑शद् विचि॒न्वन् दास॒मार्य॑म् । पिबा॑मि पाक॒सुत्व॑नो॒ऽभि
धीर॑मचाकशं॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ १९ ॥
धन्व॑ च॒ यत् कृ॒न्तत्रँ॑ च॒ कति॑ स्वि॒त् ता वि योज॑ना । नेदी॑यसो वृषा-
क॒पेऽस्त॒मेहि॑ गृ॒हाँ उप॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ २० ॥
पुन॒रेहि॑ वृषाकपे सु॒वि॒ता क॑ल्पयावहै । य ए॒ष स्व॑प्न॒नंश॒नोऽस्त॒मेषि॑
प॒था पुन॒र्विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ २१ ॥ (ऋ० १०।८६।२१)

यदुद॑ञ्चो वृषाकपे गृ॒हमि॒न्द्राज॑गन्तन । क्व॑ १॒ स्य पु॑ल्व॒घो मृगः कम॑गं
जन॒योप॑नो॒ विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑र ॥ २२ ॥ (ऋ० १०।८६।२२)

पर्शुर्ह॒ नाम॑ मान॒वी सा॒कं स॑सूव विंश॒तिम् । भ॒द्रं भ॑ल॒ त्यस्या॑ अभू॒द्
यस्या॑ उ॒दर॒माम॑य॒द् विश्व॑स्मा॒दिन्द्र॒ उत्त॑रः ॥ २३ ॥ [९।३०]

* * *

अथ कुन्ताप सूक्तानि (खिलानि)

(सूक्त १२७ - १३६ तक) तिस्रः नारा शंस्यः

सूक्त १२७

इ॒दं जना॒ उप॑ श्रुत॒ नरा॒शंस॒ स्तवि॑ष्यते । ष॒ष्टिं स॒हस्रा॑ नव॒तिं च॑
कौरम॒ आ रु॒शमे॑षु दद्महे ॥ १ ॥

उष्ट्रा॒ यस्य॑ प्रवा॒हणो॑ व॒धूम॑न्तो द्वि॒र्दश॑ । व॒र्ष्मा रथ॑स्य॒ नि जि॑हीडते
दि॒व ई॒षमा॑णा उप॒स्पृश॑ः ॥ २ ॥

ए॒ष इ॒षाय॑ मामहे श॒तं नि॒ष्कान् दश॒ स्रज॑ः । त्रीणि॑ श॒तान्यर्व॑तां
स॒हस्रा॒ दश॒ गोना॑म् ॥ ३ ॥ [१]

वच्य॑स्व॒ रेभ॑ वच्यस्व वृ॒क्षे न प॒क्वे श॒कुन॑ः । नष्टे॑ जि॒ह्वा च॑र्चरीति क्षु॒रो
न भु॒रिजो॑रिव ॥ ४ ॥

प्र रे॒भासो॑ मनी॒षा वृषा॒ गाव॑ इवेरते । अ॒मो॒त॒पुत्र॑का ए॒षाम॒मोत॑ गा॒
इवा॑सते ॥ ५ ॥

प्र रे॑भ॒ धीं भ॑रस्व गो॒विदं॑ वसु॒विद॑म् । दे॒व॒त्रेमां वाचं॑ श्रीणी॒हीषु॒र्नावीर॒स्तार॑म् ॥ ६ ॥ [२]

चतस्रः पारिक्षित्यः

राज्ञो॑ विश्व॒जनी॑नस्य॒ यो दे॒वोऽमर्त्याँ॒ अति॑ । वै॒श्वा॒न॒रस्य॒ सुष्टु॑ति॒मा
सु॒नोता॑ परि॒क्षित॑ः ॥ ७ ॥
प॒रि॒च्छि॒न्नः क्षेम॑मकरो॒त् तम॒ आस॑नमा॒चर॑न् । कु॒ला॑यन् कृ॒ण्वन्
कौर॑व्य॒ः पति॒र्वद॑ति जा॒यया॑ ॥ ८ ॥
क॒त॒रत् त॒ आ ह॑राणि॒ दधि॒ मन्थाँ॑ परि॒ श्रुत॑म् । जा॒याः पति॒ वि
पृ॑च्छति रा॒ष्ट्रे राज्ञ॑ः परि॒क्षित॑ः ॥ ९ ॥
अ॒भीव॒स्वः॑ प्र जि॑हीते॒ यव॑ः प॒क्वः प॒थो बिल॑म् । जन॒ः स भ॒द्रमेध॑ते [३]
रा॒ष्ट्रे राज्ञ॑ः परि॒क्षित॑ः ॥ १० ॥

चतस्रः कारव्यः

इन्द्र॑ः का॒रुम॑बूबुध॒दुत्ति॑ष्ठ॒ वि च॑रा॒ जन॑म् । ममेदु॒ग्रस्य॒ चर्कृ॑धि॒ सर्व॒ इत्
ते॑ पृणाद॒रिः ॥ ११ ॥
इ॒ह गाव॒ः प्रजा॑यध्वमि॒हाश्वा इ॒ह पूरु॑षाः । इ॒हो स॒हस्र॑दक्षि॒णोऽपि॑ पू॒षा
नि षी॑दति ॥ १२ ॥
नेमा इ॑न्द्र॒ गावो॑ रिष॒न् मो आ॒सां गोप॑रीरिषत् । मासा॑म॒मित्र॒युर्ज॑न॒
इन्द्र॒ मा स्ते॒न ई॑शत ॥ १३ ॥
उप॑ नो न रमसि॒ सू॒क्तेन॒ वच॑सा व॒यं भ॒द्रेण॒ वच॑सा व॒यम् । वना॑-
द॒धिध्व॒नो गि॒रो न रि॑ष्येम क॒दा च॒न ॥ १४ ॥ (४) [६।३१]

—:०:—

सूक्त १२८ अथ पञ्च क्लृप्तयः

यः स॒भेयो॑ विद॒थ्य॑ः सु॒त्वा य॒ज्वाथ॒ पूरु॑षः । सूर्यं॑ चा॒मु॑ रि॒शाद॑स॒स्तद्
दे॒वाः प्राग॑कल्पयन् ॥ १ ॥

यो जा॒म्या अप्र॑थय॒स्तद् यत् सखा॑यं॒ दुधू॑र्षति । ज्येष्ठो॒ यद॑प्रचेता॒-
स्तदा॑हु॒रध॑रा॒गिति॑ ॥ २ ॥

यद् भ॒द्रस्य॒ पुरु॑षस्य पु॒त्रो भ॑वति दाधृ॒षिः । तद् वि॒प्रो अब्र॑वीदु॒ तद्
ग॑न्ध॒र्वः काम्यं॒ वच॑ः ॥ ३ ॥

यश्च॑ प॒णि रघु॑जि॒ष्ठ्यो यश्च॑ दे॒वाँ अदा॑शुरिः । धीरा॑णां॒ शश्व॑ता॒म॒हं
तद॑पा॒गिति शुश्रुम ॥ ४ ॥

ये च॑ दे॒वा अय॑ज॒न्ताथो॒ ये च॑ परादु॒दिः । सूर्यो॒ दिव॑मिव ग॒त्वाय॑
म॒घवा॑ नो॒ वि र॑प्शते ॥ ५ ॥ (५)

योऽना॒क्ताक्षो॑ अनभ्य॒क्तो अम॑णि॒वो अहि॑र॒ण्यवः॑ । अब्र॑ह्मा॒ ब्रह्म॑णः
पु॒त्रस्तो॒ता कल्पे॑षु सं॒मिता॑ ॥ ६ ॥

य आ॒क्ताक्षः॑ सुभ्य॒क्तः सुम॑णिः॒ सुहि॑र॒ण्यवः॑ । सुब्र॑ह्मा॒ ब्रह्म॑णः
पु॒त्रस्तो॒ता कल्पे॑षु सं॒मिता॑ ॥ ७ ॥

अप्र॑पा॒णा च॑ वेश॒न्ता रे॒वाँ अप्र॑तिदिश्ययः । अय॑भ्या क॒न्याऽ कल्या॒णी
तो॒ता कल्पे॑षु सं॒मिता॑ ॥ ८ ॥

सुप्र॑पा॒णा च॑ वेश॒न्ता रे॒वान्त्सुप्रति॑दिश्ययः । सुय॑भ्या क॒न्याऽ कल्या॒णी
तो॒ता कल्पे॑षु सं॒मिता॑ ॥ ९ ॥

परि॑वृ॒क्ता च॒ महि॑षी स्व॒स्त्याऽ च यु॒धिं॑ग॒मः । अना॑शु॒रश्चाया॒मी
तो॒ता कल्पे॑षु सं॒मिता॑ ॥ १० ॥

वा॒वा॒ता च॒ महि॑षी स्व॒स्त्याऽ च यु॒धिं॑ग॒मः । श्वा॒शुर॑श्चाया॒मी तो॒ता
कल्पे॑षु सं॒मिता॑ ॥ ११ ॥

(६)

(१२-१६ गाथाएं) ।

यदि॑न्द्रा॒दो दा॑शरा॒ज्ञे मानु॑षं॒ वि गा॑हथाः । विरू॑पः॒ सर्व᳚स्मा आसीत्
स॒ह य॒ज्ञाय॒ कल्प॑ते ॥ १२ ॥
त्वं वृ॑षा॒क्षुं म॑घव॒न्नम्र᳚ं म॒र्याक॒रो रवि॑ः । त्व रौहि॒णं व्या॑स्यो॒ वि
वृ॒त्रस्या॑भिन॒च्छिर॑ः ॥ १३ ॥
यः पर्व᳚ता॒न् व्य॑दधा॒द् यो अ॒पो व्य॑गाहथाः । इन्द्रो॒ यो वृ॑त्र॒हान्म॒हं
तस्मा॑दिन्द्र॒ नमो॑ऽस्तु ते ॥ १४ ॥
पृ॒ष्ठं धाव॑न्तं ह॒र्यो᳚रौच्चैःश्रव॒सम॑ब्रुवन् । स्व॒स्त्यश्व॒ जैत्रा॒येन्द्र॒मा व॑ह
सु॒स्रज॑म् ॥ १५ ॥
ये॒ त्वा॑ श्वे॒ता अजै᳚श्रव॒सो हार्यो᳚ यु॒ञ्जन्ति॒ दक्षि॑णम् । पू॒र्वा नम॑स्य
दे॒वा॒नां॑ बिभ्र॑दिन्द्र᳚ महीयते ॥ १६ ॥ (७) [९।३२]

—:०:—

सूक्त १२९ (ऐतशःप्रलापाः)

ए॒ता अ॒श्वा आ प्ल॑वन्ते ॥ १ ॥ प्र॒ती॒पं प्राति॑ सु॒त्वन॑म् ॥ २ ॥
तासा॒मेका॒ हरि॑क्निका ॥ ३ ॥ हरि॑क्नि॒के किमि॑च्छसि ॥ ४ ॥
सा॒धुं पु॒त्रं हि॑र॒ण्यय॑म् ॥ ५ ॥ क्वाह॑तं॒ परा॑स्यः ॥ ६ ॥
यत्रा॒मूस्तिस्र॑ः शिंश॒पाः ॥ ७ ॥ परि॑ त्रयः ॥ ८ ॥
पृदा॑कवः ॥ ९ ॥ शृङ्ग᳚ं ध॒मन्त॑ आसते ॥ १० ॥
अ॒यन्म॒हा ते॑ अर्वा॒हः ॥ ११ ॥ स इच्छ॒कं सघा॑घते ॥ १२ ॥
सघा॑घते॒ गोमी॒द्या गोग॑ती॒रिति॑ ॥१३॥ पुमा᳚ कु॒स्ते निमि॑च्छसि ।१४।
पल्प॑ बद्ध॒ वयो इति॑ ॥ १५ ॥ बद्ध॑ वो॒ अघा॒ इति॑ ॥ १६ ॥

अजा॑गार॒ केवि॒का ॥ १७ ॥ अश्व॑स्य॒ वारो॑ गोशपद्य॒के ॥ १८ ॥
श्येनी॒पती॑ सा ॥ १९ ॥ अ॒ना॒म॒योप॑जि॒ह्विका॑ ॥ २० ॥ [९।३३]

—:०:—

सूक्त १३०

को अ॑र्य बहुलिमा॒ इषू॑नि ॥ १ ॥ को अ॑सि॒द्याः पय॑ः ॥ २ ॥
को अर्जु॑न्या॒ः पय॑ः ॥ ३ ॥ कः का॒र्ष्ण्याः पय॑ः ॥ ४ ॥
ए॒तं पृ॑च्छ॒ कुहं॑ पृच्छ ॥ ५ ॥ कुहा॑कं पक्व॒कं पृ॑च्छ ॥ ६ ॥
यवा॑नो यति॒स्वभि॑ः कुभिः ॥ ७ ॥ अकु॑प्यन्त॒ः कुपा॑यकुः ॥ ८ ॥
आमं॑णको॒ मण॑त्सकः ॥ ९ ॥ देव॑ त्वप्रतिसूर्य ॥ १० ॥
एन॑श्चिपङ्क्त॒का ह॒विः ॥ ११ ॥ प्रदु॑द्रुदो॒ मघा॑प्रति ॥ १२ ॥
शृङ्ग॑ उत्पन्न ॥ १३ ॥ मा त्वा॑भि॒ सखा॑ नो विदन् ॥ १४ ॥
व॒शाया॑ः पु॒त्रमा य॑न्ति ॥ १५ ॥ इरा॑वेदु॒मयं॑ दत ॥ १६ ॥
अथो॑ इ॒यन्नि॑य॒न्निति ॥ १७ ॥ अथो॑ इ॒यन्निति॑ ॥ १८ ॥
अथो॒ श्वा अस्थि॑रो भवन् ॥१९॥ उ॒यं य॒कांश॑लोकु॒का ॥२०॥ [९।३४]

—:०:—

सूक्त १३१

आमि नोनि॒ति भ॑द्यते ॥ १ ॥ तस्य॑ अनु॒ निभ॑ञ्जनम् ॥ २ ॥
वरु॑णो॒ याति॒ वस्व॑भिः ॥ ३ ॥ श॒तं वा॒ भार॑ती॒ शव॑ः ॥ ४ ॥
श॒तमा॒श्वा हि॑र॒ण्यया॑ः । श॒तं र॒थ्या हि॑र॒ण्यया॑ः ।
श॒तं कु॒था हिर॒ण्यया॑ः । श॒तं नि॒ष्का हि॑र॒ण्यया॑ः ॥ ५ ॥
अह॑ल कुश वर्त्तक ॥ ६ ॥ श॒फेन॑ इ॒व ओ॑हते ॥ ७ ॥
आय॑ व॒नेन॑ती॒ जनी॑ ॥ ८ ॥ वनि॑ष्ठा॒ नाव॑ गृ॒ह्यन्ति॑ ॥ ९ ॥

इ॒दं मह्य॒ं मदु॒रिति॑ ॥ १० ॥ ते वृ॒क्षाः स॒ह ति॑ष्ठति ॥ ११ ॥
पाक॑ ब॒लिः ॥ १२ ॥ शक॑ ब॒लिः ॥ १३ ॥
अश्व॑त्थ॒ खदि॑रो ध॒वः ॥ १४ ॥ अर॑दुपरम ॥ १५ ॥
शयो॑ ह॒त इ॑व ॥ १६ ॥ व्याप॒ पूरु॑षः ॥ १७ ॥
अदू॑हमि॒त्यां पूष॑कम् ॥ १८ ॥ अत्य॑र्ध॒र्च प॑र॒स्वतः॑ ॥ १९ ॥
दौव॑ ह॒स्तिनौ॑ दृ॒ती ॥ २० ॥ [९।३५]

—:०:—

सूक्त १३२

आदला॑बुक॒मेक॑कम् ॥ १ ॥ अला॑बुक॒ं निखा॑तकम् ॥ २ ॥
क॒र्क॒रि॒को निखा॑तकः ॥ ३ ॥ तद् वात॒ उन्म॑थायति ॥ ४ ॥
कुला॑यं कृणवा॒दिति॑ ॥ ५ ॥ उग्रं व॑निषदा॑ततम् ॥ ६ ॥
न व॑निष॒दना॑ततम् ॥ ७ ॥ क ए॑षा॒ं कर्क॑री लिखत् ॥ ८ ॥
क ए॑षां दु॒न्दु॒भिं॑ हनत् ॥ ९ ॥ यदी॒यं ह॑न॒त् कथं॑ हनत् ॥ १० ॥
दे॒वी ह॑न॒त् कुह॑नत् ॥ ११ ॥ पर्या॑गार॒ं पुनः॑पुनः ॥ १२ ॥
त्रीण्यु॒ष्ट्रस्य॒ नामा॑नि ॥ १३ ॥ हि॒र॒ण्य इत्ये॑के अब्रवीत् ॥ १४ ॥
द्वौ वा॑ ये शि॒शवः॑ ॥ १५ ॥ नील॑शिखण्ड॒वाह॑नः ॥ १६ ॥ [९।३६]

—:०:—

सूक्त १३३

वित॑तौ कि॒रणौ॒ द्वौ ताव॑ा पिनष्टि॒ पूरु॑षः । न वै कु॑मारि॒ तत् तथा॒ यथा॑
कुमारि॒ मन्य॑से ॥ १ ॥
मा॒तुष्टे॑ कि॒रणौ॒ द्वौ निवृ॑त्त॒ः पुरु॑षानृते । न वै०···॥ २ ॥
निगृ॑ह्य॒ कर्ण॑कौ॒ द्वौ निरा॑यच्छसि॒ मध्य॒मे । न वै०···॥ ३ ॥

उ॒त्ता॒नायै॑ श॒या॒नायै॑ तिष्ठ॑न्ती॒ वाव॑ गूहसि । न वै॰...॥ ४ ॥
श्लक्ष्णा॑या॒ं श्लक्ष्णि॒काया॒ं श्लक्ष्णा॑मे॒वाव॑ गूहसि । न वै॰...॥ ५ ॥
अव॑श्लक्ष्णमिव॑ भ्रंशद॒न्तर्लो॒॑ममति॑ हृ॒दे । न वै॰...॥ ६ ॥ [९।३७]

—:०:—

सूक्त १३४

इ॒हेत्थ प्रागपा॒गुद॑ग॒धरा॒ग्—अरा॑ला॒गुद॑भर्त्सथ ॥ १ ॥
इ॒हेत्थ प्रागपा॒गुद॑ग॒धरा॒ग्—व॒त्साः पुरु॑षन्त आसते ॥ २ ॥
इ॒हेत्थ प्रागपा॒गुद॑ग॒धरा॒ग्—स्थाली॑पा॒को वि ली॑यते ॥ ३ ॥
इ॒हेत्थ प्रागपा॒गुद॑ग॒धरा॒ग्—स वै पृ॒थु ली॑यते ॥ ४ ॥
इ॒हेत्थ प्रागपा॒गुद॑ग॒धरा॒ग्—आष्टे॑ लाहणि॒ लीशा॑थी ॥ ५ ॥
इ॒हेत्थ प्रागपा॒गुद॑ग॒धरा॒ग्—अक्षि॑लली॒ पुच्छि॑लीयते ॥ ६ ॥ [९।३८]

—:०:—

सूक्त १३५

भुगि॑त्य॒भिग॑तः॒ शलि॑त्य॒पक्रा॑न्तः॒ फलि॑त्य॒भिष्ठि॑तः । दु॒न्दुभिमाहनना॒भ्यां
जरितरोऽथा॑मो दै॒व ॥ १ ॥
को॒श॒बिले॑ रजनि॒ ग्रन्थे॑र्धा॒नमु॒पान॑हिं पा॒दम् । उत्त॑मा॒ं जनि॑मां ज॒न्यानुत्त॑मा॒ं जनी॒न् वर्त्म॑न्यात् ॥ २ ॥
अला॑बूनि पृ॒षात॑का॒न्यश्व॑त्थ॒पला॑शम् । पिपी॑लिका॒वट॒श्वसो॑ वि॒द्युत्स्वाप॑र्णश॒फो गोश॒फो जरित॒रोऽथामो॑ दै॒व ॥ ३ ॥
वीमे दे॒वा अक्रं॑सताध्व॒र्यो क्षि॒प्रं प्र॒चर॑ । सु॒स॒त्यमिद् गवा॑म॒स्यसि॑ प्रखु॒दसि॑ ॥ ४ ॥

प॒त्नी यदृ॑श्यते प॒त्नी यक्ष्य॑माणा जरित॒रोऽथामो॑ दे॒व । हो॒ता वि॑ष्टीमे॒न ज॑रित॒रोऽथामो॑ दे॒व ॥ ५ ॥

आदि॑त्या ह जरित॒रङ्गि॑रोभ्यो॒ दक्षि॑णाम॒नय॑न् । तां ह॑ जरितः॒ प्रत्या॑य॒ंस्तामु॒ ह॑ जरितः॒ प्रत्या॑यन् ॥ ६ ॥

तां ह॑ जरितर्नः॒ प्रत्य॑गृभ्ण॒ंस्तामु॒ ह॑ जरितर्नः॒ प्रत्य॑गृभ्णः । अहा॑नेतरसं न॒ वि चे॒तना॑नि य॒ज्ञानेत॑रसं न॒ पु॒रोगवा॑मः ॥ ७ ॥

उ॒त श्वेत॒ आशु॑पत्वा उ॒तो पद्या॑भि॒र्यवि॑ष्ठः । उ॒तेमाशु॒ मानँ॑ पिपर्ति ॥८॥

आदि॑त्या रु॒द्रा वस॑व॒स्त्वेनु॑ त इ॒दं राधः॒ प्रति॑ गृभ्णीह्यङ्गिरः । इ॒दं राधो॑ वि॒भु प्रभु॑ इ॒दं राधो॑ बृ॒हत् पृथु॑ ॥ ९ ॥

देवा॑ दद॒त्वासु॑र॒ं तद्वो॑ अस्तु॒ सुचे॑तनम् । युष्माँ॑ अस्तु॒ दिवे॑दिवे प्र॒त्येव॑ गृभायत ॥ १० ॥

त्वमि॑न्द्र श॒र्मरि॑णा ह॒व्यं पारा॑वतेभ्यः । विप्रा॑य स्तुव॒ते व॑सु॒वनिं॑ दुरश्रव॒से व॑ह ॥ ११ ॥

त्वमि॑न्द्र क॒पोता॑य च्छिन्नप॒क्षाय॒ वञ्च॑ते । श्यामा॑कं प॒क्वं पीलु॑ च॒ वार॑स्मा॒ अकृ॑णो॒र्ब॒हुः ॥ १२ ॥

अ॒र॒ङ्गरो॒ वा॑वदीति त्रे॒धा ब॒द्धो व॑र॒त्रया॑ । इरा॑मह॒ प्रशं॑स॒त्यनि॑रा॒मप॑ सेधति ॥ १३ ॥ [९।३९]

—:०:—

सूक्त १३६

यद॑स्या अंहु॒भेद्याः॑ कृ॒धु स्थू॒लमु॒पात॑सत् । मु॒ष्काविद॑स्या एज॒तो गो॑श॒फे श॑कु॒लावि॑व ॥ १ ॥

यदा॑ स्थू॒लेन॒ पस॑सा॒णौ मु॒ष्का उपा॑वधीत् । विष्व॑ञ्चा व॒स्या वर्ध॑त॒ः
सिक॑तास्वेव॒ गर्द॑भौ ॥ २ ॥
यद॑ल्पिका॒स्व॑ल्पिका॒ कर्क॑धूकेव॒पद्य॑ते । वास॑न्ति॒कमि॑व॒ तेज॑नं॒ यन्त्य॒-
वाता॑य॒ वित्प॑ति ॥ ३ ॥
यद् दे॒वासो॑ ललाम॑गुं॒ प्रवि॑ष्टी॒मिन॑माविषुः । स॒कु॒ला दे॑ दिश्यते॒ नारी॑
स॒त्यस्या॑क्षि॒भुवो॑ यथा ॥ ४ ॥
म॒हा॒न॒ग्न्य॑तृप्नद्वि॒ मोक्र॑दु॒दस्था॑नासरन् । शक्ति॑का॒नना स्व॑च॒मश॑कं
सक्तु॒ पद्य॑म ॥ ५ ॥
म॒हा॒न॒ग्न्यु॑लूखलमति॒क्राम॑न्त्यब्रवीत् यथा॒ तव॑ वनस्पते॒ निर॑घ्नन्ति॒
तथैवति ॥ ६ ॥
म॒हा॒न॒ग्न्युप॑ ब्रूते भ्र॒ष्टोऽथाप्य॑भूभुवः । यथै॒व ते॑ वनस्पते॒ पिप्प॑ति॒
तथै॒वेति ॥ ७ ॥
म॒हा॒न॒ग्न्युप॑ ब्रूते भ्रष्टोऽथाप्य॑भूभुवः । यथा॑ वयो॒ विदाह्य॑ स्व॒र्गे न॒मव-
दह्यते ॥ ८ ॥
म॒हा॒न॒ग्न्युप॑ ब्रूते स्वसा॒वेशि॑तं॒ पस॑ः । इ॒त्थं फल॑स्य॒ वृक्ष॑स्य॒ शूर्पे॑ शूर्प॒
भजे॑महि ॥ ९ ॥
म॒हा॒न॒ग्नी कृक॑वाकं॒ शम्य॑या॒ परि॑ धावति । अ॒यं न वि॒द्म यो॑ मृ॒गः
शी॒र्ष्णा हर॑ति॒ धाणि॑काम् ॥ १० ॥
म॒हा॒न॒ग्नी म॑हान॒ग्नं धाव॑न्त॒मनु॑ धावति । इ॒मास्तद॑स्य॒ गा रक्ष॒ यभ॒
माम॑द्ध्यौदु॒नम् ॥ ११ ॥

सुदेवस्त्वा महानग्नीर्बबाधते महतः साधु खोदनम् । कुसं पीवरो
नवत् ॥ १२ ॥
वशा दुग्धामिमाङ्गुरिं प्रसृजतोऽग्रतं परे । महान् वै भद्रो यभ
मामद्ध्यौदनम् ॥ १३ ॥
विदेवस्त्वा महानग्नीर्विबाधते महतः साधु खोदनम् । कुमारिका
पिङ्गलिका कार्द भस्मा कु धावति ॥ १४ ॥
महान् वै भद्रो बिल्वो महान् भद्र उदुम्बरः । महाँ अभिक्त बाधते
महतः साधु खोदनम् ॥ १५ ॥
यः कुमारी पिङ्गलिका वसन्तं पीवरी लभेत् । तैलकुण्डमिमाङ्गुष्ठं
रोदन्तं शुदमुद्धरेत् ॥ १६ ॥ [६।४०]

॥ इति कुन्ताप सूक्तानि समाप्तानि ॥

सूक्त १३७

ऋषिः— १ शिरिम्बिठिः; २ बुधः; [३ वामदेवः;] ४—६ ययातिः; ७—११ तिरश्ची [राङ्गिरसो] द्युतानो वा; १२—१४ सुकक्षः ॥ देवता—१ अलक्ष्मीनाशनम्; २ विश्वेदेवा ऋत्विक्स्तुतिर्वा; [३ दधिक्राः;] ४—६ सोमः पवमानः; ७, ८, १०-१४ इन्द्रः; ८ (चतुर्थः पादः) मरुतः; ९ इन्द्रो बृहस्पतिश्च ॥ छन्दः—१, ३, ४—६ अनुष्टुप्, २ जगती; ७—११ त्रिष्टुप्; १२—१४ गायत्री ॥ मन्त्र १४ ।

यद्ध प्राचीरजगन्तोरो मण्डूरधाणिकीः । हता इन्द्रस्य शत्रवः सर्वे
बुद्बुदयाशवः ॥ १ ॥
कपृन्नरः कपृथमुद् दधातन चोदयत खुदत वाजसातये । निष्टिग्र्यः
पुत्रमा च्यावयोतय इन्द्रं सबाध इह सोमपीतये ॥ २ ॥

द॒धि॒क्राव्णो॑ अकारिषं जि॒ष्णोरश्व॑स्य वा॒जिन॑ः । सु॒र॒भि नो॒ मुखा॑ कर॒त् प्र ण॒ आयूँ॑षि तारिषत् ॥ ३ ॥

सु॒तासो॒ मधु॑मत्तमा॒ः सोमा॒ इन्द्रा॑य म॒न्दिन॑ः । प॒वित्र॑वन्तो अक्षरन् दे॒वान् ग॑च्छन्तु वो॒ मदा॑ः ॥ ४ ॥

इन्दु॒रिन्द्रा॑य पवत॒ इति॑ दे॒वासो॑ अब्रुवन् । वा॒चस्पति॑र्मखस्यते॒ विश्व॒स्येशा॑न॒ ओज॑सा ॥ ५ ॥

स॒हस्र॑धारः पवते समु॒द्रो वा॑चमीङ्ख॒यः । सोम॒ः पती॑ र॒यीणां॑ सखेन्द्र॑स्य दि॒वेदि॑वे ॥ ६ ॥

अव॑ द्र॒प्सो अँशु॒मती॑मतिष्ठदिया॒नः कृ॒ष्णो द॒शभि॑ः स॒हस्रै॑ः । आव॒त् तमिन्द्र॒ः शच्या॒ धम॑न्त॒मप॒ स्नेहि॑तीर्नृ॒मणा॑ अधत्त ॥ ७ ॥

द्र॒प्सम॑पश्यं॒ विषु॑णे॒ चर॑न्तमुपह्व॒रे न॒द्यो॑ अंशु॒मत्या॑ः । नभो॒ न कृ॒ष्णम॑वतस्थि॒वांस॒मिष्या॑मि वो वृषणो॒ युध्य॑ता॒जौ ॥ ८ ॥

अध॑ द्र॒प्सो अँशु॒मत्या॑ उ॒पस्थेऽधा॑रयत् त॒न्वँ॑ तित्विषा॒णः । विशो॒ अदे॑वीर॒भ्या॒३चर॑न्ती॒र्बृह॒स्पति॑ना यु॒जेन्द्र॑ः ससाहे ॥ ९ ॥

त्वं ह॒ त्यत् स॒प्तभ्यो॒ जाय॑मानोऽश॒त्रुभ्यो॑ अभव॒ः शत्रु॑रिन्द्र । गूढे द्यावा॑पृथि॒वी अन्व॑विन्दो विभु॒मद्भ्यो॒ भुव॑नेभ्यो॒ रणँ॑ धाः ॥ १० ॥

त्वं ह॒ त्यद॑प्रतिमा॒नमोजो॒ वज्रे॑ण वज्रिन् धृषि॒तो ज॑घन्थ । त्वं शुष्ण॒स्यावा॑तिरो॒ वध॑त्रै॒स्त्वं गा इ॑न्द्र॒ शच्येद॑विन्दः ॥ ११ ॥

तमिन्द्रँ॑ वाजयामसि म॒हे वृ॒त्राय॒ हन्त॑वे । स वृषा॑ वृष॒भो भु॑वत् ।१२।

इन्द्र॒ः स दाम॑ने कृ॒त ओजि॑ष्ठ॒ः स मदे॑ हि॒तः । द्यु॒म्नी श्लो॒की स सो॒म्यः १३

गि॒रा वज्रो॒ न संभृ॑त॒ः सब॑लो॒ अन॑पच्युतः । व॒व॒क्ष ऋ॒ष्वो अस्तृ॑तः ॥
॥ १४ ॥ [६।४१]

—:०:—

सूक्त १३८

ऋषिः—वत्सः ॥ देवता— इन्द्रः ॥ छन्दः—गायत्री ॥ मन्त्र ३ ।

म॒हाँ इन्द्रो॒ य ओज॑सा प॒र्जन्यो॑ वृ॒ष्टि॒माँ इ॑व । स्तोमै॑र्व॒त्सस्य॑ वावृधे ।१।
प्र॒जामृ॒तस्य॒ पिप्र॑त॒ः प्र यद् भर॑न्त॒ वह्न॑यः । विप्रा॑ ऋ॒तस्य॒ वाह॑सा ।२।
कण्वा॒ इन्द्रं॒ यदक्र॑त॒ स्तोमै॑र्य॒ज्ञस्य॒ साध॑नम् । जा॒मि ब्रु॑वत॒ आयु॑धम् ।३।

—:०—

सूक्त १३९

ऋषिः—शशकर्णः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—१ अनुष्टुप्; २, ३ गायत्री; ४ बृहती; ५ ककुप् ॥ मन्त्र ५ ।

आ नू॒नम॑श्विना यु॒वं व॒त्सस्य॑ गन्त॒मव॑से । प्रास्मै॑ यच्छतमवृ॒कं पृ॒थु
च्छ॒र्दिर्यु॑यु॒तं या अरा॑तयः ॥ १ ॥
यद॒न्तरि॑क्षे॒ यद् दि॒वि यत् पञ्च॒ मानु॑षाँ॒ अनु॑ । नृ॒म्णं तद् ध॑त्तमश्विना ।२
ये वा॒ं दंसां॑स्यश्विना॒ विप्रा॑सः परिमामृ॒शुः । ए॒वेत् का॒ण्वस्य॑ बोधतम् ३
अ॒यं वां॑ घ॒र्मो अ॑श्विना॒ स्तोमे॑न॒ परि॑ षिच्यते । अ॒यं सोमो॒ मधु॑मान्
वाजिनीवसू॒ येन॑ वृ॒त्रं चिके॑तथः ॥ ४ ॥
यद॒प्सु यद् वन॒स्पतौ॒ यदोष॑धीषु पुरुदंससा कृ॒तम् । तेन॑ माविष्टमश्विना ॥ ५ ॥ [६।४३]

—:०:—

सूक्त १४०

ऋषिः—शशकर्णः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—१ बृहती; २—४ अनुष्टुप्; ५ त्रिष्टुप् । मन्त्र ५ ।

यन्नासत्या भुरण्यथो यद् वा देव भिषज्यथः। अयं वां वत्सो मतिभिर्न विन्धते हविष्मन्तं हि गच्छथः ॥ १ ॥

आ नूनमश्विनोर्ऋषि स्तोमं चिकेत वामया। आ सोमं मधुमत्तमं घर्मं सिञ्चादथर्वणि ॥ २ ॥

आ नूनं रघुवर्तनि रथं तिष्ठाथो अश्विना। आ वां स्तोमा इमे मम नभो न चुच्यवीरत ॥ ३ ॥

यदद्य वां नासत्योक्थैराचुच्युवीमहि। यद् वा वाणीभिरश्विनेवेत् काण्वस्य बोधतम् ॥ ४ ॥

यद् वां कक्षीवाँ उत यद् व्यश्व ऋषिर्यद् वां दीर्घतमा जुहाव। पृथी यद् वां वैन्यः सादनेष्वेवेदतो अश्विना चेतयेथाम् ॥ ५ ॥ [६।४४]

—:०:—

सूक्त १४१

ऋषिः—शशकर्णः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः—१ विराडनुष्टुप्; २ जगती; ३ अनुष्टुप्; ४, ५ बृहती ॥ मन्त्र ५ ।

यातं छर्दिष्पा उत नः परस्पा भूतं जगत्पा उत नस्तनूपा। वर्तिस्तोकाय तनयाय यातम् ॥ १ ॥

यदिन्द्रेण सरथं याथो अश्विना यद् वा वायुना भवथः समोकसा।
यदादित्येभिर्ऋभुभिः सजोषसा यद् वा विष्णोर्विक्रमणेषु तिष्ठथः ।२।

यदद्याश्विनावहं हुवेय वाजसातये। यत् पृत्सु तुर्वणे सहस्तच्छ्रेष्ठमश्विनोरवः ॥ ३ ॥

आ नूनं यातमश्विनेमा हव्यानि वां हिता। इमे सोमासो अधि तर्वशे यदाविमे कण्वेषु वामथ ॥४॥

यन्ना॑सत्या परा॒के अ॑र्वा॒के अस्ति॑ भेष॒जम् । तेन॑ नू॒नं वि॑म॒दाय॑ प्रचेतसा छ॒र्दिर्व॒त्साय॑ यच्छतम् ॥ ५ ॥ [९।४५]

—:०:—

सूक्त १४२

ऋषि–शशकर्णः ॥ देवता–अश्विनौ ॥ छन्दः–१–४ अनुष्टुप् ५, ६ गायत्री ॥ मन्त्र ६ ।

अभु॑त्स्यु॒ प्र दे॒व्या सा॒कं वा॒चाहम॒श्विनोः॑ । व्या॑वर्दे॒व्या म॒तिं वि रा॒तिं मर्त्ये॑भ्यः ॥ १ ॥

प्र बो॑धयोषो अ॒श्विना॒ प्र दे॑वि सूनृते महि । प्र य॑ज्ञहोतरानु॒षक् प्र मदा॑य॒ श्रवो॑ बृ॒हत् ॥ २ ॥

यदु॑षो॒ यासि॑ भा॒नुना॒ सं सूर्ये॑ण रोचसे । आ हा॒यम॒श्विनो॒ रथो॑ व॒र्तिर्या॑ति नृ॒पाय्य॑म् ॥ ३ ॥

यदापी॑तासो अं॒शवो॒ गावो॒ न दु॒ह्र ऊध॑भिः । यद्वा॒ वाणी॒रनू॑षत॒ प्र दे॑व॒यन्तो॑ अ॒श्विना॑ ॥ ४ ॥

प्र द्यु॒म्नाय॒ प्र शव॑से॒ प्र नृ॒षाह्या॑य॒ शर्म॑णे । प्र दक्षा॑य प्रचेतसा ॥ ५ ॥

यन्नू॒नं धी॒भिर॑श्विना पि॒तुर्योना॑ नि॒षीद॑थः । यद्वा॑ सु॒म्नेभि॑रुक्थ्या ॥६॥

—:०:—

सूक्त १४३

ऋषयः—१—७ पुरुमीढाजमीढौ; ८ वामदेवः; ९ मेध्यातिथिः ॥ देवता—अश्विनौ ॥ छन्दः – त्रिष्टुप् ॥ मन्त्र ९ ।

तं वां॒ रथं॑ व॒यम॒द्या हु॑वेम पृथु॒ज्रय॑मश्विना॒ संग॑ति॒ गोः । यः सू॒र्यां वह॑ति वन्धुरा॒युर्गिर्वा॑हसं पुरु॒तमं॑ वसू॒युम् ॥ १ ॥

यु॒वं श्रिय॑मश्विना दे॒वता॒ तां दिवो॑ नपाता वनथः॒ शची॑भिः । यु॒वोर्वपु॑र॒भि पृक्षः॑ सचन्ते॒ वह॑न्ति॒ यत् क॑कु॒हासो॒ रथे॑ वाम् ॥ २ ॥

को वामद्या करते रातहव्य ऊतये वा सुतपेयाय वार्कैः। ऋतस्य वा
वनुषे पूर्व्याय नमो येमानो अश्विना ववर्तत् ॥ ३ ॥
हिरण्ययेन पुरुभू रथेनेमं यज्ञं नासत्योप यातम्। पिबाथ इन्मधुनः
सोम्यस्य दधथो रत्नं विधते जनाय ॥ ४ ॥
आ नो यातं दिवो अच्छा पृथिव्या हिरण्ययेन सुवृता रथेन। मा
वामन्ये नि यमन् देवयन्तः सं यद् ददे नाभिः पूर्व्या वाम् ॥ ५ ॥
नू नो रयिं पुरुवीरं बृहन्तं दस्रा मिमाथामभयेष्वस्मे। नरो यद्
वामश्विना स्तोममावन्त्सधस्तुतिमाजमीढासो अग्मन् ॥ ६ ॥
इहेह यद् वां समना पपृक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वाजरत्ना। उरुष्यतं
जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक् ॥ ७ ॥
मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम्। क्षेत्रस्य पति-
र्मधुमान्नो अस्त्वरिष्यन्तो अन्वेनं चरेम ॥ ८ ॥
पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः। सहस्रं
शंसा उत ये गविष्टौ सर्वाँ इत् ताँ उप याता पिबध्यै ॥९॥ [९।४७]

अथर्ववेद-संहिताय
इति विंशं काण्डम् समाप्तम्।
सूक्तानि १४३, मन्त्राः ९४६।

॥ इति शौनकीया अथर्ववेदसंहिता संपूर्णा ॥

* * *

शुभ सूचना

हमारे यहां से चारों वेदों के शुद्ध प्रामाणिक, सस्वर मूलपाठ प्रकाशित हो रहे हैं। अथर्ववेद आपके हाथों में है। इसी प्रकार के नयनाभिराम मोटे अक्षरों में ऋग्वेदादि सब वेद प्रकाशित किये जा रहे है।

इसके अतिरिक्त वेद-वेदांग, कर्मकाण्डादि के ग्रन्थ भी हमारे यहां सुलभ हैं।

नोट : सूचीपत्र मुफ्त मंगायें।

देव वाणी प्रकाशन
१०३ ए०, कमला नगर, दिल्ली-७